बलिदानों की प्रशस्ति

या

शहीद पुराण

लेखक

कालीचरण घोष

अनुवादक

शङ्कर सहाय सक्सेना

बलिदानों की प्रशस्ति

(The Roll of Honour)

लेखक
कालीचरण घोष

अनुवादक
शंकर सहाय सक्सेना
भूतपूर्व निदेशक, कॉलिज शिक्षा, राजस्थान

प्रकाशक
मुक्तवाणी प्रकाशन
पुस्तक प्रकाशक
मॉडन मार्केट, बीकानेर
(भारत)

प्रथम संस्करण १९७८ ७९ मूल्य पचास रु

गहन श्रद्धा और भक्ति के साथ
यह पुस्तक
भारतीय स्वतन्त्रता सग्राम के उन अनजाने
और विस्मृत वीरों को
समर्पित है—

जिन्होंने मातृभूमि की बलिवेदी पर मूक रहकर अनिर्वचनीय वेदना को सहा और मौन रहकर मृत्यु का आलिंगन कर बलिदान एव त्याग को भी गौरवान्वित कर दिया ।

लेखक की प्रस्तावना

भारत मे ब्रिटिश शासन के विरुद्ध जो सशस्त्र विद्रोह हुआ उसके लेखनी बद्ध किये जाने की नितान्त आवश्यकता है परन्तु यह पुस्तक उसका इतिहास नही है। एकाकी लेखन कार्य करते हुए मेरा यह कभी भी विचार नही हो सकता था कि मैं इस विषय पर विस्तार से लिखू। परन्तु उस महान वेगवती हल्लोल जो इस देश मे प्रवाहित हुई और जिसने एक विदेशी सरकार द्वारा निन्यता पूर्वक उसके मार्ग मे जो भी बाधाए खड़ी करने का प्रयत्न किया उन्हें बहाकर दूर फेंक दिया उस प्रवाह के सम्बन्ध मे हुई प्रमुख घटनाओ का आकस्मिक वर्णन यथा स्थान कर दिया है।

जैसा कि पुस्तक के नाम 'बलिदानो की प्रशस्ति" से ही विदित होता है पुस्तक म उन देश भक्तो के सम्बन्ध म लिखा गया है कि (१) जिन्होने क्रान्तिकारी तथा विद्रोह के कार्यों म अथवा उसके परिणाम स्वरूप अपने प्राणो को उत्सर्ग कर दिया। (२) अथवा कानून के शिकजे म फसकर जिन पर कारागार मे अथवा अन्य किसी प्रकार के प्रतिबन्ध म रहकर समाधि की मिटटी चढा दी गई वे कब्र म मूक होकर दब गए। (३) अथवा जिनको सरकार ने देश से निर्वासित कर दिया और वे निर्वासन मे ही मरे। (४) अन्यथा जो अपने क्रान्तिकारी क्षेत्र म सदव के लिए अन्तर्ध्यान हो गए और अपने पीछे कोई चिन्ह नही छोड गए। एक अग्रेजी कहावत के सिद्धान्त का अनुसरण कर कि 'किसी व्यक्ति के जीवन की एक सत्य घटना एक वृहद जीवन चरित्र के समान मूल्यवान है" मेरा लक्ष्य उन घटनाओ अथवा घटनाओ की श्रृंखला का वर्णन करने का रहा है कि जिनके कारण किसी आदर्शवादी बलिदानी जिसके लिये निन्यता पूर्ण किए गए शारीरिक कष्ट तथा निर्दयता की पराकाष्ठा से होने वाली मृत्यु भी गौण थी तथा जिसके परिणाम स्वरूप उसके जीवन का सहसा अन्त हो गया।

पुस्तक लिखने मे जो कठिनाई उपस्थित हुई उसका समाधान होता दिखलाई नही देता। ऐसे बहुत से स्वतन्त्रता सग्राम के वीर योद्धा हैं जिनका योगदान किसी भी प्रकार से उन बलिदानियो स कम नही है वरन किसी किसी दशा म उनसे अधिक है कि जिन्होंने स्वतन्त्रता के नराश्य पथ को अपने मृत शवो से पाट दिया था। उनमें से जो कुछ जो कि जीवित है अथवा कारागार या नजरबन्दी के बाहर प्राकृतिक मृत्यु से मरे। बहुत करके उनको किसी न्यायालय से प्राण दण्ड की आज्ञा हुई और उच्च न्यायालय मे अपील के द्वारा उनकी प्राण रक्षा हो गई अथवा 'सम्राट की क्षमा से वे बच गए। ऐसी भी घटनाए कम नहीं हैं कि जब तत्परता चतुराई, विपत्ति के समय मस्तिष्क का सतुलन बनाए रखने के गुण, साहस और भाग्य के अनुकूल होने के कारण वास्तविक और प्रमुख वीर बच निकला और उसके साथी पकडे गए और उनको अवश्यम्भावी परिणाम मृत्यु को वरण करना पडा। वे लोग अपने स्वय की यश विभूति से आच्छादित होकर रह रहे हैं। उनके विषय मे बहुत कम लोगो को ज्ञात है।

इस प्रकार की घटनाओं की संख्या बहुत अधिक है । यद्यपि यह कार्य सरल नहीं है परन्तु अत्य न सकोच के साथ कहीं तो विभाजन रेखा को खींचना ही था, यद्यपि ऐसा करने में लेखक का घोर निराशा की भावना ने व्यथित किया है । पुस्तक के शीर्षक ने ही मुझे एक निश्चित परिधि में चलने मे सहायता पहुंचाई है ।

उन व्यक्तियों को छोडकर जिनमें तनिक भी हृदय की विशालता नहीं है वे उससे रहित है, जो मानव चरित्र की महानता और भव्यता से नितान्त अनभिज्ञ है और जो हिंसात्मक क्रान्तिकारी कार्यों तथा विग्रह से सम्बन्धित प्रत्येक कार्य को घृणा की दृष्टि से देखते हैं—अन्य प्रत्येक व्यक्ति जो अपने देश की स्वतन्त्रता से सच्चा प्रेम करता है वह उच्च स्वर से संसार के सामने घोषणा करेगा —

'उन वीर कृत्यों को भुलाया नहीं जाना चाहिए

उन नामों को मिटने नहीं देना चाहिए ।

उन व्यक्तियों के सम्बन्ध में यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति में उनकी महत्वपूर्ण देन है और राष्ट्र उनका ऋणी है । देश चिरऋणी रहेगा उन वीरों का जो कि अभिजात मस्तिष्क और वीर हृदय के थे । और यदि अहिंसा के वातावरण मे विचरण करने वाले उनके निन्दकों ने हमारे देश के राजनीतिक इतिहास में उनकी मूल्यवान सेवाओं को स्वीकार करने से सर्वथा इनकार कर दिया है तो भी मैं कहूँगा कि उन अहिंसा के पुजारियों की दृष्टि में घृणा योग्य बलिदानियों ने— उन विभूतिमान सद्गुणों की स्थापना की जिनके बिना धन और सत्ता मनुष्य को पशु मे परिणित कर देती है । जो आज स्वार्थपरता और नीचता विपुल मात्रा में पाई जाती है उसके मध्य उनके उदाहरण प्राचीन काल के उन रोमन और ग्रीक वीरों के समान हैं जिन्होंने अपने हेतु के लिए जो उनके हृदय से प्रिय था उसकी सेवा में अपने सर्वनाश को भी स्वीकार किया । ऐसे वीरों के वीरोचित कार्य ही इतिहास का प्राण हैं और जब तक मानव जाति इस प्रकार की उदात्त भावनाओं का अधिमूल्यन करती है और उनको प्राप्त करने का चेष्टा करती है उनकी स्मृति हमारी जाति की एक अत्यन्त मूल्यवान धरोहर बनी रहेगी ।'

(विलियम्स आर दी ग्रेट इंडियन्स प्रिफेस)

सभी न्याय प्रिय व्यक्तियों ने यह स्वीकार किया है कि इन निर्भीक और साहसी वीर योद्धाओं के व्यक्तिगत वीरोचित कार्यों ने दासता के गहन अन्धकार मे जो लगभग दस शताब्दियों तक छाया रहा बिजली की कौंध का काम दिया है । इन बलिदानी वीर शहीदों ने समय के रेत के कणों पर जो अपने चरण चिन्ह छोड़े हैं उन्हें जानबूझ कर मिटाने का प्रयत्न किया गया है । फिर भी उनके यह वीरोचित कार्य भारत के भावी इतिहासकारों को वह सामग्री उपलब्ध कर देंगे जिससे वे उन थोड़े से क्रान्तिकारी युवकों के त्याग और बलिदान का चित्र चित्रित कर सकें जो चाहे फिर अधूरा ही क्यों न हो जिन्होंने नाम, यश और भौतिक लाभों की परवाह किए बिना मातृ भूमि की बलिवेदी पर अपने प्राणों की आहुति दे दी ।

यह कहना कठिन नहीं है कि उन समस्त अभिलेखों की परिश्रम पूर्वक खोज बीन करने पर भी जिन्हें सरकार ने प्रकाशित करने की आज्ञा दे दी अथवा जो राज-

कीय पुस्तकालयों या निजी पुस्तकालयों में सुरक्षित है बहुत से क्रांतिकारियों के नाम छूट गए हैं। कुछ नाम उनके साथियों को केवल याद भर हैं जो कि अधिक आयु के कारण और लम्बा समय व्यतीत हो जाने के कारण उन वीरों के कार्यों का सही सिंहावलोकन नहीं कर सकते और जिनका स्वरूप उनकी स्मृति से ओझल हो चुका है। जबकि पुस्तक छपने के लिए प्रेस में जा रही है तब एक दो नाम प्रकाश में आए जिनके सम्बन्ध में पूर्व शोध में कुछ भी पता नहीं लग सका था।

मातृभूमि की बलिवेदी पर अपनी आहुति देने वाले इन वीरों के कृत्यों का अभिलेखन नितान्त आवश्यक है फिर चाहे वह कितना ही अधूरा क्यों न हो। जिससे कि भावी पीढ़ियाँ उन साहसी और अग्नि शिखा के समान प्रकाशवान यातना सहन करने, बलिदान देने तथा अन्य क्रान्तिकारी कृत्यों और उन गुणों के सम्बन्ध में जानने से वंचित न रह जावें जो कि किसी भी राष्ट्र या जाति के पौरुष को जिसके सामने भीतरी और बाहरी खतरे हों, दृढ़ और बलशाली बनाने के लिए आवश्यक है। सुदूर भूतकाल में घटित महाराणा प्रताप और शिवाजी महाराज की वीरोचित गाथा के बिना देश निम्न कोटि के बौनों का निवास स्थान बन कर रह जावेगा जिसमें शौर्यवान मानव अस्तित्व के चिह्न भी शेष नहीं रहेंगे। महानता इस तथ्य में समाहित है अधिकांश बलिदानियों ने कभी अपने पीछे अपना नाम छोड़ जाने का भी विचार नहीं किया। इसके विपरीत वे किंचित मात्र भी इस विचार को अपने अन्तर में लाए हुए कि उनके कृत्यों के सम्बन्ध में भविष्य में इस देश के इतिहास के कुछ पृष्ठ स्वर्ण अक्षरों में लिखे जावेंगे, महान कृत्य करने में गौरव अनुभव करते थे।

अवश्य ही मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि उन महान कार्यों और घटनाओं का यह एक अधूरा वर्णन है कि जो महान उदात्त भावनाओं से भावना मूक *रहकर किए गए, जिन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य की नींव को हिला दिया। लेकिन किसी दिन किसी को तो उन वीर कृत्यों की गाथा लिखने का शुभारम्भ करना ही चाहिए था नहीं तो फिर बहुत अधिक विलम्ब हो जाता। शहीदों की थोड़ी सी जीवनियाँ जो अधिक व्यापक और पूर्ण नहीं हैं बहुत कम शहीदों के सम्बन्ध में अभी तक लिखी गई हैं। बिना सरकार की सहायता तथा सहयोग के, तथा अन्य साधनों के, उन वीरों के कृत्यों का विवरण संग्रह करना तो दूर उनके नामों को भी इकट्ठा नहीं किया जा सकता। बहुत से मूल्यवान अभिलेख और सामग्री जैसा कि कहा जाता है नष्ट की जा चुकी है और जो कुछ बची है उसको छाँट कर अग्नि के समर्पित कर दिया जावेगा। इसका कारण यह है कि जो उस बहुमूल्य सामग्री को सुरक्षित रखने के उपाय कर सकते हैं उनमें उस सामग्री के महत्व का बोध ही नहीं है।

भारत की स्वतन्त्रता के समय में बरमा का जो भारत का अंग था वारावादी विद्रोह जो एक महाकाय विद्रोह था उसकी बहुधा उपमा की जाती है। यातना सहन करने, जीवन हानि और मिलने वाली सफलता की दृष्टि से वह १८५७ के महान विप्लव के बाद दूसरा बड़ा विद्रोह था -१८५७ के महान विप्लव में तो लगभग उन शृंखलाओं को तोड़ ही दिया था जिन्होंने भारत को दासता में जकड़ रखा था।

घटनाओं के वर्णन में कुछ पुलिस अधिकारियों के नाम मिलेंगे। यह सोचकर कि प्रत्येक राष्ट्र को ऐसे व्यक्तियों की सेवाओं की आवश्यकता होती है कि जो अपने

कर्तव्य की भावना के प्रति इतने अधिक दृढ निष्ठावान हो कि जो स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए गम्भीर से गम्भीर खतरे का सामना करने से न हिचके। उदाहरण देने की दृष्टि से कुछ के बारे मे लिखा गया है। ऐसे उदाहरण कम नही है जब तत्कालीन सरकार के प्रति जो कि यद्यपि विदेशी सरकार थी अपना कर्तव्य पालन करने मे राजकर्मचारियो ने अपने प्राणो को जोखिम म डाल दिया, जो कि अपने कर्तव्य के प्रति थोडे कम उत्साह या प्रेम स सरलता से बचाया जा सकता था। इस समय सद्भावी और कृत्रिम के मध्य आलोचनात्मक विश्लेषण को छोड देते हुए हम केवल यही कहना चाहते है कि स्वतन्त्र भारत की सेवाओ म जो लोग काय कर रहे हैं उनको उन राज कर्मचारियो के आचरण से पाठ पढ़ना चाहिए कि जिन्होने अपने निर्देशित कर्तव्य की उच्चतम प्रतिष्ठा रखने के लिए अपने प्राणो को निछावर कर दिया।

पुस्तक लिखने के लिये सामग्री इकठठी करने म लेखक को ६ वर्षों तक कलकत्ता और बाहर के पुस्तकालयो म कभी कभी अत्यन्त कठिन परिस्थितियो मे सतत परिश्रम करना पड़ा हैं। सैकडो पुस्तको और अभिलेखो की छान बीन करने के अतिरिक्त कम से कम दस दैनिक समाचार पत्रो—अमृत बाजार पत्रिका, बगाली, इंग्लिशमैन, स्टेटमैन पायनियर फारवर्ड, एडवास, इडियन डेली न्यूज, टाइम्स ऑव इण्डिया और आनन्द बाजार पत्रिका सम्बन्धित वर्षों के प्रत्येक अक के प्रत्येक पष्ठ को पढा है। देशी पत्रों सम्बन्धी रिपोर्टों की राष्ट्रीय अभिलेखागार देहली और कलकत्ते के अभिलेखागार मे सावधानी से जाच पडताल की गई है।

सबडा व्यक्ति जो जीवित हैं और जो स्वतन्त्रता संग्राम में अग्रिम पक्ति में रहे थे और जिनकी शहीदो से गहरी व्यक्तिगत जान पहचान थी—ने भी मुझे वह जानकारी देकर जो अन्य कही उपलब्ध नही हो सकती थी, सहायता पहुचाई। मेरा विश्वास है कि इनके अतिरिक्त अन्य स्रोत भी है जिनकी छान बीन नही की जा सकी थी और यदि उनकी छान बीन की जा सकती तो अच्छा होता परन्तु मेरी बढ़ी अवस्था और आर्थिक कठिनाई तथा अन्य प्रकार की सुविधाओ का अभाव मुझे मेरी स्वय की योजना को पूरी तरह से कार्यान्वित करने मे बाधक हुआ।

अन्तिम अध्याय को छोड कर अन्तिम दो अध्याय प्रतिशोध के शिकार और दुबारा रोपित बेडियो म बाद को जोडा गया जिससे कि भारतीय क्रान्ति के सभी पक्षो का पूरा चित्र उपस्थित किया जा सके। अन्तिम अध्याय अर्थात 'बलिदानो की प्रशस्ति' 'आजाद हिंद सेना' जांच और सहायता समिति (आई एन ए रिलीफ कमेटी देहली) की उदारता का परिणाम है।

परिस्थिति वश मैं किसी को भी व्यक्तिगत रूप से धन्यवाद म देने का असाधारण मार्ग अपनाता हू क्योकि यदि मैं ऐसा करने का प्रयत्न करता तो सूची इतनी लम्बी होता कि उसका अन्त ही नही होता और इस भूल से बचना असम्भव होता कि ऐसे मूल्यवान मित्रो के नाम छूट जाते जिन्होने बिना यह आशा किए कि बहुत बडी सख्या मे मुझे सहायता पहुचाने वालो में से उनके काय की सराहना करने के लिए उनको छांटा जावेगा मुझे सहायता दी। मैं उन सभी को अपने हृदय के कोमलतम स्थान से धन्यवाद देता हू जिन्होने इस पुस्तक के प्रकाशन को सम्भव बनाया। यदि मैं उन लोगों का अनुगृहीत हूँ जिन्होन मुझे बहुमूल्य सामग्री उपलब्ध कर दी तो मैं उनका

भी आभारी हूं कि इन्होंने मेरी वृद्धावस्था और इतने महान लेखन कार्य के लिए आवश्यक बौद्धिक क्षमता के सम्बन्ध में आत्मसंशय होने के कारण जब इस लेखन कार्य को बीच में ही अधूरा छोड़ देने का विचार उठता तो मुझे उत्साहित किया।

मैं इस बात का दावा नहीं करता कि जो कुछ मैंने लिखा है उसमें कोई त्रुटि नहीं है। अवश्य ही कहीं न कहीं कोई गलती हो गई होगी। कई बार ऐसा होता था कि सरकार उन व्यक्तियों के बारे में जो नजरबन्द किए जाते थे वे कहां ले जाए गए अथवा वे कहां रखे गए गए हैं और बहुधा जिनको फांसी दी जाती थी उनकी फांसी किस तारीख को होगी इसका समाचार छपने नहीं देती थी। ऐसे मामलों में मुझे महीनों साहसी समाचार पत्रों के पृष्ठों की छान बीन करनी पड़ती थी कि सम्भव है कि आवश्यक जानकारी मिल जावे और असफल होने पर उनके सम्बन्धियों से सम्पर्क स्थापित करना पड़ता था जिनका बहुत परिश्रम करने पर ही पता लग पाता था। और इस प्रकार की घटनाएं संख्या में कम नहीं थीं।

इस महान कार्य में जिनके पुत्रों का बलिदान हुआ उन जीवित अथवा मृत माताओं को मैं अपनी गहनतम श्रद्धा अर्पित करता हूं। मैं वीर बलिदानी शहीदों के जीवित कुटुम्बियों को अपना श्रद्धा युक्त गहन आभार अर्पित करता हूं कि जिनके भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में अमूल्य योगदान ने भारत को संसार के स्वतन्त्र राष्ट्रों में सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान की, यह एक ऐसा स्वप्न और भ्रम था कि जो गत कई शताब्दियों में वास्तविकता की पकड़ से बचता रहा था।

वन्दे मातरम्! जयहिंद!

—कालीचरण घोष

प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता श्री जदुगोपाल मुखर्जी द्वारा लिखित 'रोल ग्राफ ग्रानर' अंग्रेजी पुस्तक की प्रस्तावना

यह पुस्तक एक वीर द्वारा वीर पूजा का इलाघनीय प्रयास है ।

यदि क्रान्तिकारी विचारों के स्वतन्त्रता के योद्धाओ की जो इस पुण्य देश के अतुलनीय वीर थे-जीवनियो और उनके क्रान्तिकारी कार्यो का विशद इतिहास लिखने का कभी प्रयास किया जाता जिससे कि उनके प्रेरणादायक जीवन को यथार्थ रूप म अंकित किया जा सके तो एक एसे लेखक को आवश्यकता पडती कि जो उन वीरो की काय पद्धति और जीवन यापन के साधनो से पूणतया परिचित होता और उसका हृदय उनका पूरी तरह समझ सकने की क्षमता रखता ।

देव कृपा से इस पुस्तक के लेखक म यह वांछित मेल बैठ गया । क्योंकि इस पुस्तक के लेखक श्री कालीचरण घोष बगाल के क्रान्तिकारी दल की श्रेष्ठ परम्पराओ म प्रशिक्षित हुए है उसके साथ ही जन आन्दोलन म भी उनका गहन आस्था और विश्वास है ।

सौभाग्य वश उनकी लेखनी अत्यन्त सशक्त और सक्षम है । लेखक ने उन महान जीवनियो को लिखा और चित्रित किया है जो आज जीवित नहीं हैं वरन जो क्षितिज म खो गए हैं ।

वे अनमोल दुलभ जाति के अत्यन्त सुन्दर पुष्प थे जिनको उनके यौवन काल म जब कि वे खिलने वाले थे और ताजे थे मसल दिया गया परन्तु जिनकी सुरभि आज भी विद्यमान है ।

वे कल्पना जगत म विचरण करने वाले थे, हा-पर उनकी कल्पना स्थिर और दृढ थी । वे समस्त मानव जाति के कल्याण के इच्छुक थे और उनकी स्नेहसिक्त भावना और विश्वास यह था कि मानव जाति का कल्याण बिना भारत देश म सक्रिय अंशदान के नही हो सकता । अतएव उसको उठना चाहिए । उसके बंधनो को टुकडे टुकडे करके तोड देना चाहिए । उसके दुखो और कष्टो को छिन्न भिन्न कर देना चाहिए । अपने इस उदात्त एवम मधुर स्वप्न को चरितार्थ करन के लिए कोई भी त्याग या बलिदान उनके लिए अधिक बडा नही था । इसी भावना न उन्हे अपना बलिदान करने, अनन्त कष्ट सहन, और मृत्यु का आलिंगन करने के लिए सक्षम बना दिया था ।

वास्तव म उनकी मृत्यु नही हुई वरन वे आगे चले गए। वे नियति के हृदय में प्रतिष्ठित हैं ।

मैं इस महान ग्रन्थ का हार्दिक स्वागत करता हू और कामना करता हू कि यह अप्रत्याशित रूप से लोकप्रिय हो ।

जदुगोपाल मुखर्जी

रांची
११ फरवरी, १९६५

बलिदानो की प्रशस्ति की
प्रस्तावना

बलिदानो की प्रशस्ति
या
शहीद - पुराण

हमारे देश को स्वाधानता मिलन क बाद जो नवीन पीढी सामने आइ वह उन बलिदानी से प्राय अपरिचित ही रही है जो उसके पूवजा का स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए करने पडे। त्याग तथा तपस्या के दृष्टान्तो के बजाय सत्ता का मोह अर्थात् पद लोलुपता की मिसालें हा उस दाख पडी, और उसका दुष्परिणाम हमारे सम्मुख उपस्थित है। यद्यपि आपात कालीन अनुशासनो स उसकी उच्छृखलता पर कुछ अकुश लग गया है पर वह चिरस्थायी तभी हो सकता है जबकि साथ साथ साहित्य और सस्कृति के क्षेत्रो म भी नवीन पीढ़ी को दीक्षित किया जाय।

बन्धुवर शकर सहाय सक्सेना द्वारा अनुवादित यह ग्रन्थ 'बलिदानो की प्रशस्ति' इस महान यज्ञ म बहुत कुछ सहायता दे सकता है। मूल अग्रेजी पुस्तक 'Roll of Honour" के लेखक महोदय श्री कालीचरण घोष मुझ से दिल्ली में कभी मिले थे, पर मैं इस बात को बिलकुल भूल चुका था। जब पुस्तक मैंने वी पी द्वारा मगवा कर पढी और उनम पत्र व्यवहार किया तो उन्होंने ही मुझे याद दिलाई जिससे मैं लज्जित हो गया। जब वे मुझ से मिले थे मैंने इस बात की कल्पना भी न की थी कि आगे चल कर व ऐसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना करेंगे। दर असल उनकी पुस्तक को शहीद पुराण नाम देना चाहिए।

उनके इस महान ग्रन्थ क सामन हम लोगा की रचनाएं बहुत मामूली चीज हैं-प्राय नगण्य। बन्धुवर सक्सेना जी को उनकी पुस्तक क अनुवाद करने में जो घोर परिश्रम करना पड़ा होगा उसकी कल्पना मैं कुछ कुछ कर सकता हूँ, क्योंकि मुझे भी कभी कभी अनुवाद काय करना पडा है।

निसदेह सक्सेना जी के ग्रन्थ के पूव भी बहुत सा साहित्य इस विषय पर प्रकाशित हो चुका है पर मुश्किल यही है कि कही पर भी वह इकठ्ठा देखने को नहीं मिल सकता। हम लोग कहा भी बडे पमाने पर शहीद तथा क्रान्तिकारी सग्रहालय की स्थापना नही कर सके। नासिक मे स्वातत्र वीर सावरकर जी का सग्रहालय जालधर म सिक्खो का सग्रहालय, तथा कलकत्ते म इस विषय का सग्रह-यह काम अलग अलग किए गए हैं। उनके महत्व को कम नही माना जा सकता, पर दिल्ली जसे केन्द्रीय स्थान म ऐसा कोई प्रयत्न नही किया गया। स्वर्गीय जोगेश च चटर्जी ने इस दिशा म भरपूर कोशिश की थी पर वे सफल नही हो सके। एक बार हमने

इस विषय की चर्चा श्री अशोक सेन (तत्कालीन केन्द्रीय मन्त्री महोदय) से की तो उन्होंने सलाह दी कि जब तक केन्द्रीय संग्रहालय कायम न हो तब तक शहीदों सम्बन्धी सामग्री तथा महत्वपूर्ण कागजात राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आरकाइव्ज) में रक्खे जा सकते हैं। जब मैंने श्री अशोक सेन का यह परामर्श श्रद्धेय जोगेश बाबू को सुनाया तो उन्होंने साफ इनकार कर दिया। वे बोले "मुझे तो वर्तमान सरकार पर विश्वास नहीं है, वह इन महत्वपूर्ण दस्तावेजों - प्रलेखों (documents) को नष्ट भी कर सकती है" मैं तब भी उनकी आशंका को निर्मूल तथा अनुचित मानता था और आज भी मैं उसे निराधार ही समझता हूं। मेरे पास शहीदों तथा क्रान्तिकारियों के सम्बन्धी जो सामग्री थी उसका एक अच्छा अंश मैंने दिल्ली के राष्ट्रीय अभिलेखागार में जमा कर दिया था और शेष भी शीघ्र ही उसे समर्पित कर दूंगा।

अभी शहीद संग्रहालय के बनने में कुछ वर्षों की देर लग सकती है। इस लिए फिलहाल उपयोगी सामग्री की सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय अभिलेखागार की शरण लेने में कोई बुराई नहीं है।

नेत्र ज्योति मन्द हो जाने के कारण मैं इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ— 'बलिदानों की प्रशस्ति" को इधर उधर से ही देख पाया हूं। पर जितना भी मैंने उसे पढ़ा है उतना ही श्री घोष महोदय की अनुवेदना शक्ति तथा परिश्रम शक्ति का कायल हो गया हूं। एक बात मुझे बराबर खटकती रही है कि शहीदों तथा क्रान्तिकारियों पर लेख तथा ग्रन्थ लिखने वालों को मिलाने के लिए किसी कड़ी का निर्माण हम लोग क्यों नहीं कर सके? पिछले तीस वर्षों से मेरा इस विषय से निरन्तर सम्पर्क रहा है और इस ग्रन्थ में वर्णित कितने ही व्यक्तियों से सम्पर्क में आने का सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ है।

स्वर्गीय भूपन बाबू और श्रद्धेय बारीन्द्रकुमार घोष के दर्शन मैंने प्रथम क्रान्तिकारी कान्फ्रेंस पर किए थे यद्यपि बारीन्द्र बाबू से कलकत्ते में भी मुलाकात हो चुकी थी और पंडित परमानन्द जी तथा बाबा पृथ्वीसिंह जी आजाद से तो घनिष्ट सम्बन्ध रहा ही है। भाई मन्मथनाथ गुप्त, सर्वश्री विजयकुमार सिन्हा, भगवानदास माहौर, सदाशिव, शिव वर्मा, काशीराम, यशपाल, शचीन्द्र बख्शी जी प्रभृति से कई बार मिलना हुआ है। राजा महेन्द्र प्रताप जी से १९२२ से ही पत्र व्यवहार रहा है और उनका मैं कृपा पात्र भी हूं। प्रयाग के क्रान्तिकारी उर्दू पत्र 'स्वराज्य' के संस्थापक शान्ति नारायण भटनागर, लद्धाराम, नन्दगोपाल तथा अमीरचन्द (बम्ब वाले) से मेरा सम्बन्ध रहा है। लाला हनुवन्त सहाय जी की सेवा में बहुत बार उपस्थित हुआ था। अमर शहीद आजाद की माताजी, अशफाक के बड़े भाई, तथा बिस्मिल की बहिन की कुछ सेवा भी मुझ से बन पड़ी थी। इस विषय पर २२-२३ ग्रन्थ तथा विशेषांक भी निकालने का अवसर मुझे मिल चुका है। इन सब कारणों से यह 'शहीद पुराण" मेरे लिए तो स्वाध्याय का धार्मिक ग्रन्थ ही बन गया है।

'बलिदानों की प्रशस्ति के जिस पृष्ठ को भी खोलिए त्याग और बलिदान के अद्भुत दृष्टान्त उसमें पढ़ने को मिल जायगे।

अकस्मात १९३ वां पृष्ठ खुल गया तो उसमें आण्डमन के शहीद 'इन्दुभूषण राय" का वृतान्त पढ़ने को मिला। १९१२ के 'माडर्न रिव्यू' में मैं पहले उस पढ़

चुका था फिर स्वर्गीय लट्टाराम जी से उस घटना का वृत्तान्त सुन भी चुका था और तत्पश्चात रामचरण लाल जी 'आण्डमन यात्रा' सम्बन्धी पुस्तक में उसे छपा भी चुका था। उस शहीद का चित्र मुझे घोष महोदय की पुस्तक में ही मिला।

मेरा सुझाव है—वह यह कि बन्धुवर शंकर सहाय सक्सेना एक ग्रन्थ और भी तयार करदें—पृथ्वी पर साक्षात नरक (तत्कालीन आण्डमन) काला पानी। अभी भी कितने ही व्यक्ति हमारे बीच में विद्यमान है जो वहां के मुक्त भोगी रह चुके हैं—

बाबा पृथ्वीसिंह, पंडित परमानन्द शम्भूनाथ आजाद, श्री विजय बाबू शिव वर्मा इत्यादि। और विजय बाबू की तो अण्डमान विषयक पुस्तक काफी प्रसिद्ध हो चुका है। बंगाल में भी कितने ही मुक्त भोगी अब भी विद्यमान होंगे। आवश्यकता इस बात की है कि कोई व्यक्ति उनसे सम्पर्क स्थापित करके उस ग्रंथ की प्रमाणिक रचना करे। स्वर्गीय लट्टाराम जी के कुछ संस्मरण मैंने लिख लिए थे और स्वर्गीय रामचरण लाल जी की सम्पूर्ण पुस्तक ही मैंने एटा के बाय इंटर कालेज मैगजीन (पत्रिका) में छपवादी थी।

एक अन्य बात भी मुझे इस ग्रंथ को पढ़ते हुए सूझा है—वह यह कि इस महान ग्रंथ का पूरक एक अन्य ग्रंथ भी तयार होना चाहिए जिसमें सत्याग्रहियों के बलिदान की गाथा विस्तार पूर्वक वर्णित हो। शहीदों में हम भेद भाव कदापि नहीं करना चाहिए। वे सभी व्यक्ति जिन्होंने किसी प्रगतिशील विचारधारा के लिए अपने प्राणों का बलिदान किया हो—चाहे सशस्त्र क्रान्ति में अथवा निशस्त्र क्रान्ति में—हमारे लिए वन्दनीय है।

हमें स्वयं दो बार लेनिनग्राड में उस महान तीर्थ की तीर्थ यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था जहां करीब पांच लाख रूसी युवक फासिस्ट लोगों के विरुद्ध युद्ध करते हुए शहीद हुए थे और जहां उनकी समाधि बनी हुई है। सत्याग्रह या अहिंसात्मक युद्ध करने वाला में अमरिका के विलियम लायड गरीसन का शुभनाम सबसे ऊपर आयेगा जिन्होंने महात्मा गांधी से बहुत वर्षों पहले अहिंसा अस्त्र का सार्वजनिक प्रयोग किया था। भारत की स्वाधीनता की प्राप्ति में अहिंसात्मक आन्दोलन का प्रमुख हाथ रहा है। इस लिए बलिदानों की प्रशस्ति का पूरक ग्रंथ अवश्य ही निकलना चाहिए।

उसके सिवाय एक बात और भी है। दोनों प्रकार के बलिदानों के विषय में यदि जिलवार ग्रंथ तयार कर दिया जाय तो साधारण जनता में उसकी स्मृति ताजा रक्खी जा सकती है। आगरे में एक ऐसा ग्रंथ निकला भी है। शहीदों की समाधि पर वार्षिक मेले भी लगने चाहिए।

यद्यपि यह कविता—

> शहीदों के मजारों पर जुड़ेंगे हर बरस मेले,
> वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा।'

अब भी लोगों की जबान पर है पर इस प्रकार के मेले बहुत कम लगाए गए है। हां आगरा जिले के चमरौला नामक स्थान में जहां १९४२ में चार शहीद हुए थे, ऐसा मेला अवश्य लगता है।

शहीदों तथा क्रान्तिकारियों के विषय में प्रामाणिक इतिहास लिखने के लिए कच्चा मसाला (सामग्री) (raw material) तो बहुत कुछ इकट्ठा हो गया है, फिर भी बहुत सी सामग्री अब भी बिखरी पड़ी है। आज कल ग्रन्थों का प्रकाशित करना दिनों दिन कठिन होता जा रहा है इसलिए हमें हस्त लिखित ग्रन्थ ही तयार कर लेना चाहिए। स्थानीय विद्यालयों की वार्षिक पत्रिकाओं के विशेषांक भी निकाले जा सकते हैं। हमारे सौभाग्य से जो भी क्रान्तिकारी हमारे बीच में अब भी विद्यमान हों उनसे बातचीत करके उनके अनुभव लिपि बद्ध कर लेने चाहिए।

इस प्रसंग में हम श्री जगदीशचन्द्र जी माथुर आई सी एस की याद आती है जिन्होंने कितने ही क्रान्तिकारियों की अनुभूतियों को रेडियो द्वारा प्रसारित कर दिया था।

इस अनुवादित ग्रन्थ के रचयिता श्री शंकर सहाय जी से मेरा परिचय 'विशाल भारत' के दिनों से रहा है। यद्यपि उनके निकट सम्पर्क में आने का मौका मुझे नहीं मिला। निस्सन्देह यह बड़े सौभाग्य की बात हुई कि उन्हें अपने जीवन के यौवन काल में ही राजस्थान में नौकरी मिल गई जहां योग्यतापूर्वक काम करते हुए वे उच्च से उच्च पदों पर पहुँचे। इससे भी अधिक सौभाग्य की बात यह हुई कि उन्होंने अपने अवकाश का समय साहित्य सृजन में लगा दिया। उन्होंने बहुत काफी लिखा है पर मेरी समझ में उनका सबसे महत्वपूर्ण कार्य है—स्वर्गीय विजय सिंह पथिक की स्मृति रक्षा का। यद्यपि यह ग्रन्थ १९६३ में ही प्रकाशित हो गया था तथापि यह मुझे बारह वर्ष बाद ही देखने को मिला है। यदि पहले मिल गया होता तो पिछले बारह वर्षों में मैं उनकी कुछ सेवा कर सकता। अब चौरासवीं वर्ष में मुझमें इतनी शक्ति नहीं रही कि उनको विशेष सहयोग दे सकूं। इस अवसर पर मेरा सिर्फ इतना ही निवेदन है कि इस विषय पर काम करने वाले लेखकों तथा प्रकाशकों से सम्पर्क स्थापित करें और पारस्परिक सहायता से इस मिशन को आगे बढ़ावें। यदि श्री सक्सेना जी ने केवल पथिक जी का जीवन चरित्र ही लिखा होता तो भी वे अक्षय कीर्ति के भागी होते पर उन्होंने तो उसके सिवाय और भी अनेक कार्य किए हैं और अनेक क्रान्तिकारियों की कीर्ति रक्षा की है।

इन पंक्तियों के साथ मैं मूल अंग्रेजी पुस्तक के लेखक श्री कालीचरण घोष तथा उसके अनुवादक श्री शंकर सहाय सक्सेना का अभिनन्दन करता हूं और विनम्रतापूर्वक यह विश्वास भी दिलाता हूं कि भविष्य में मुझसे जो भी उनकी सेवा बन पड़ेगी, अवश्य करूंगा। श्री कालीचरण घोष ने इस महान प्रेरणा दायक पुस्तक को लिख कर देशवासियों के लिए देश भक्ति और प्रेरणा का अद्भुत और चिरंतन स्रोत उपस्थित कर दिया है। उन्होंने यह पुस्तक लिखकर देश की महान सेवा की है। प्रत्येक हिन्दी भाषी को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए।

कोट द्वार-गढ़वाल
१६.१२.१९७५

बनारसीदास चतुर्वेदी

लेखक श्री कालीचरण घोष

भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन के इतिहास लेखकों ने उन क्रान्तिकारी वीरों की घोर उपेक्षा की है जिन्होंने १८५७ के सशस्त्र विद्रोह के बाद जब ब्रिटिश सरकार के अमानवीय और क्रूरता को भी कपा देने वाले दमन के परिणाम स्वरूप देश मे मानो मृत्यु की जसी निस्तब्धता छा गई थी और सब साधारण वृटिश शासन के विरुद्ध एक शब्द भी बोलने मे भयभीत होते थे, तब उन वीर क्रान्तिकारियों ने मातृभूमि के स्वतन्त्रता यज्ञ म अपना आहुति देकर वन्दे मातरम का जयघोस कर फाँसी के तख्त पर चढ कर और अडमान की नरक यातना सहकर भी वृटिश साम्राज्य को चुनौती दी थी और देशवासियो मे स्वतन्त्रता की भावना को जीवित रक्खा था। उन पागल देश भक्तो के आत्म बलिदान से सम्पूर्ण देश मानो सोते से जाग पडता था। एक वीर क्रान्तिकारी के फासी लगने पर देश पर जसा मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता था, देश म जसी प्रबल और गहन देश भक्ति की तीव्र लहर उत्पन्न होती थी, जो जन साधारण के अन्तर को झकझोर कर उसे देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने राष्ट्रीय कर्तव्य की याद दिलाती थी, वसी गहन तीव्र देश भक्ति की भावना एक लाख राज नीतिक सम्मेलन करने पर भी उत्पन्न नही की जा सकती थी। यह उन बलिदानियो के आत्म बलिदान का ही परिणाम था कि देश शौर्यहीन होकर मृत प्राय नहीं हो गया और उसम स्वतन्त्र होने की भावना मरी नही। जो गहन और तीव्र देश भक्ति की भावना उन शहीदों ने अपने आत्मो सग से देश मे उत्पन्न कर दी थी उसी भावना के परिणाम स्वरूप राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के नेतृत्व मे देश स्वतन्त्र हुआ। पर खेद और लज्जा की बात है कि देश की स्वतन्त्रता का यह भवन जिन वीरो के शवो की नीव पर खडा हुआ, देश उनको भूल गया। हमारी इस कृतघ्नता को देखकर स्वय कृतघ्नता भी लज्जित और कु ठित होती होगी।

वीर बलिदानियो के प्रति इस घोर उपेक्षा के वातावरण म जब मैंने श्री कालीचरण घोष की महान कृति 'रोल आफ आनर' को पढ़ा तो आत्म विभोर हो उठा। देश के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने वाले उन वीर बलिदानियो के सम्बन्ध मे इतनी खोज पूर्ण पुस्तक मैंने नही पढ़ी थी। तभी मैंने निश्चय किया कि उसका अनुवाद करू गा उसके महान लेखक श्री कालीचरण का परिचय लिखूगा। पर इस धुआधार आत्म विज्ञापन के युग मे भी श्री घोष नव विवाहिता वधू की भान्ति इतने सकोची जीव हैं कि अपने विषय मे कुछ भी कहना अक्षम्य अपराध मानते हैं और वीर बलिदानियो के साथ इस महान ग्रन्थ म उनका परिचय दिया जाना महान पातक समझते हैं। अस्तु मुझे उनके सम्बन्ध मे उनसे जानकारी नही मिल सकी जो थोडी सी जानकारी प्राप्त हो सकी उसी के आधार पर उनका सक्षिप्त परिचय दे रहा हू।

श्री कालीचरण घोष ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से "कलचर आफ सौ"

(कानून का स्नातक) की उपाधि प्राप्त की। यदि वे चाहते तो वकालत कर यथेष्ट धन यश, और ऐश्वर्य प्राप्त कर सकते थे परन्तु उनके हृदय मे जो देश सेवा की गहन भावना विद्यार्थी काल से ही उत्पन्न हो गई थी अतएव वकालत न कर उन्होंने देश सेवा को अपनाया। उन्होंने सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक सगठनो के द्वारा अपनी अभिलाषा को पूरा करने का प्रयत्न किया। वह काल बगाल मे नव जागृत का काल था। बगाल में सभी क्षेत्रो मे नव चैतन्य का उदय हो रहा था। युवक कालीचरण घोष ने जिस निष्ठा, सच्चाई, और ईमानदारी से विभिन्न सगठनो मे कार्य किया उससे वह बगाल के प्रत्येक क्षेत्र के शीर्ष नेताओ के विश्वास भाजन और प्रिय पात्र बन गए। उनकी लगन और उत्कट सेवा की भावना को देखकर प्रत्येक यह चाहता था कि वे उसके सगठन मे सेवा कार्य करें।

जब लार्ड कर्जन ने बगाल की उग्र क्रान्तिकारी समितियो और क्रांतिकारी आन्दोलन की शक्ति को क्षीण करने और देश की राजनीति मे साम्प्रदायिक भावना उत्पन्न करने की दृष्टि से बगाल का विभाजन कर दिया तो समस्त देश मे और विशेषकर बगाल मे राजनीतिक ज्वालामुखी फूट पडा। देश भक्त भारतीयो का मन रोष और क्षोभ से भर गया। श्री घोष उससे अलग न रह सके उन्होने १९०५ मे राजनीति में प्रवेश किया। बृटिश साम्राज्य शाही ने भारतीय राष्ट्रीयता को चुनौती दी थी उसका उत्तर भारतीय देश भक्तो ने क्रान्तिकारी कार्यवाहियो को और अधिक तेज करके दिया। श्री कालीचरण घोष भी क्रांतिकारी दल और क्रांतिकारी आन्दोलन में सक्रिय हो गए।

जब तीव्र राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर क्रांतिकारी युवक बन्दे मातरम का जयघोष करते हुए जुलूस निकालते हडतालें करते और अग्रेज तथा देशद्रोही भारतीयो को गोली का शिकार बनाते तो यह स्वाभाविक था कि सरकार का दमन चक्र ा प्रचंड रूप धारण करें। उस भयंकर दमन का सृष्टा और सचालक बगाल पुलिस का उच्च अधिकारी 'सी टेग्राट' था। क्रान्तिकारियो ने उसको समाप्त कर देने का निश्चय किया। जो दल उसकी हत्या करने के लिए चुना गया उसमे श्री कालीचरण ोष भी थे। उन पर 'सी टग्राट' की हत्या का प्रयत्न करने का आरोप लगाया गया ौर अभियोग चला और जब महान क्रांतिकारी सूर्यसेन के नेतृत्व में चीटागांव के स्त्रागार को क्रान्तिकारियों ने लूट लिया, चीटागांव का तार और टेलीफोन का म्बन्ध काट दिया चीटागांव को जोडने वाली रेलों की पटरियां उखाड़ दी और नियन जैक को उतार कर राष्ट्रीय ध्वज फहरा कर स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी र तीन दिनों तक चीटागांव पर बृटिश सत्ता समाप्त कर दी तो उन क्रान्तिकारियो सहायता देने के आरोप मे उन पर अभियोग चलाया गया। पर श्री कालीचरण पर रोप सिद्ध नही हो सके। अस्तु कालेपानी आदि का दण्ड तो नही दिया जा सका सरकार ने उनको ६ वर्षों के लिये नजरबन्द कर दिया।

अब वे क्रान्ति यज्ञ मे दीक्षित हो चुके थे उन्होने अपना समस्त जीवन भारत देश की दासता की श्रृंखलाओ को काट कर उसको स्वतन्त्र करने के अनुष्ठान मे ा दिया था, अस्तु वे तब से सतत क्रांतिकारी दल में सक्रिय रहे। कारावास तथा नजरबन्दी से मुक्त होने पर भी वे राष्ट्रीय आन्दोलन और उग्र राजनीति मे सक्रिय

रहे। क्रान्तिकारी दल में वही क्रान्तिकारी सक्रिय रह सकते थे जो सर पर कफन बां
कर दल में सम्मिलित होते थे। श्री कालीचरण घोष को उनके क्रान्तिकारी दल
अत्यन्त जोखिम भरे कार्यों की जिम्मेदारी दी जिसे उन्होंने साहस और दृढ़ता से पू
किया। यह देश का सौभाग्य था कि श्री कालीचरण घोष उन अत्यन्त जोखिम भ
क्रान्तिकारी कार्यों को करते हुए भी उन वीर बलिदानियों की स्फूर्तिदायक पाव
कहानी सुनाने के लिए हमारे मध्य हैं। उन वीर आत्माओं के आदर्शों, उनकी हृद
की मनोभावनाओं उनके कार्य कलापों को और उनकी कार्य पद्धति को जो न जानता
वह उनके शौर्य पूर्ण पावन चरित्र को नहीं लिख सकता था। नियति ने श्री कालीचर
घोष को इस कार्य के लिए सुरक्षित रखा। नहीं तो ऐसा ग्रन्थ नहीं लिखा जा सकत
था। वे केवल एक क्रान्तिकारी ही नहीं हैं, बल्कि वे ओजस्वी और शक्तिशाली लेखनी
भी धनी हैं-हैल्थ एण्ड हैपीनेस (अंग्रेजी) स्वास्थ्य समाचार (बंगाली) मासिक पत्रि
और प्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक अमृत बाजार पत्रिका के वाणिज्य सम्पादक के रू
उन्होंने पत्रकारिता में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया। जीवन के संध्याकाल में
आप साहित्य सृजन के द्वारा देश को उद्बोधित करने का महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं
(१) फमीन्स इन बंगाल, (२) इकोनामिक रिसोर्सेज ऑफ इण्डिया एण्ड पाकिस्ता
(३) रोल आफ आनर। अंग्रेजी में तथा (१) भारतेर पाप्या (तीन भाग) औ
(२) जागरन औ विस्फारन बंगाली की उनकी प्रसिद्ध पुस्तकें हैं। फैमीन्स इन बंगा
का रूसी भाषा में अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। श्री कालीचरण की नवीनतम पुस्त
फुट प्रिन्टस आन दी रोड टू इण्डियन इण्डिपेण्डेन्स" भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन
इतिहास के विद्यार्थी तथा लेखक के लिए जानकारी का एक अमूल्य कोष है।

'रोल आफ आनर" जिसका हिन्दी अनुवाद 'बलिदानों की प्रशस्ति"
लिख कर श्री कालीचरण घोष ने देश की अमूल्य सेवा की है। उनके पास एक क्रान्ति
कारी बलिदानी का हृदय है और एक शक्तिशाली लेखनी है। यह विरल संयोग है
कोई बड़े से बड़े लेखक भी ऐसी प्रेरणादायक और मातृभूमि के लिये अपने प्राण
की आहुति देने वाले वीर बलिदानियों के प्रति न्याय कर सकने वाली पुस्तक न
लिख सकता था।

—शंकर सहाय सक्सेना

अनुवादक की प्रस्तावना

'बलिदानो की प्रशस्ति' पुस्तक को हिंदी जगत के समक्ष उपस्थित करते हुए लेखक को अनिर्वचनीय हर्ष है। यह पुस्तक श्री कालीचरण घोष की प्रसिद्ध पुस्तक 'रोल आव आनर' का हिंदी अनुवाद है। जब अंग्रेजी की यह पुस्तक प्रकाशित हुई और मैंने उसे पढा तो मैं बहुत अधिक प्रभावित हुआ। जिन क्रांतिकारी शहीदों ने देश की स्वतंत्रता के लिए कठोर यातनाए सही और हसते हसते मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने प्राणो की आहुति चढा दी, कृतघ्न देश उन्हे भूलता जा रहा है। आज जो सत्ता मे है अथवा स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त जो सत्ता मे आए उनके सम्बन्ध मे विपुल साहित्य लिखा गया है और लिखा जा रहा है। परन्तु जिनकी हड्डियो पर भारत की स्वतंत्रता का यह भव्य भवन खडा है उनको देश भूलता जा रहा है। चारण और भाटों की परम्परा मे विचरण करने वाले देश के इतिहासकार देश को स्वतंत्र बनाने मे क्रांतिकारी बलिदानियो का जो गौरवपूर्ण योगदान रहा है उसको स्वीकार करने के लिए भी तयार नही हैं। जो आज सत्ता मे है उनकी विरुदावलि का गान करने मे ही वे अपना हित और अहोभाग्य समझते है।

प्रकाशको को भी सत्तारूढ राजनीतिज्ञो की यशोगाथा प्रकाशित करना सुविधा जनक और लाभदायक प्रतीत होता है। एक और भी राजनीतिक कारण है जिसके परिणामस्वरूप भारत मे क्रांतिकारी बलिदानियो की उपेक्षा की गई। भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति में जो उनका गौरवपूर्ण स्थान है उसको स्वीकार नही किया गया। क्रांतिकारी देशभक्त देश को स्वतन्त्र करने मे हिंसा का उपयोग त्याज्य नही मानते थे। उनका मानना था कि विदेशी सत्ता की दासता के जूए को उतार फेंकने के लिए यदि हिंसा की आवश्यकता हो तो वह भी करना चाहिए। यदि देश सशस्त्र क्रांति के द्वारा स्वतन्त्र हो सके तो हथियार उठाने मे उन्हे सकोच नही था। क्रान्तिकारी वीर यह भली भांति जानते थे कि इस मार्ग पर चलना मृत्यु से खेलना है। परन्तु फिर भी वे प्राणो की बाजी लगा कर क्रान्तिकारी सगठनो के सदस्य बनते थे, भारतीय सेनाओ मे क्रांतिकारी साहित्य बाटते, सशस्त्र क्रांति के लिए उन्हे तयार करने का प्रयत्न करते, और ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध जो भी राष्ट्र थे उनसे अस्त्र शस्त्रो की सहायता प्राप्त करने का प्रयत्न करते थे। जब प्रातःस्मरणीय नेताजी सुभाष चद्र बोस ने ब्रिटेन के शत्रु धुरी राष्ट्रो की सहायता से आजाद हिंद सेना का गठन किया और अस्थायी आजाद हिन्द सरकार का निर्माण किया तो उनके विरुद्ध ब्रिटेन ने प्रचार किया था और कतिपय नेताओ ने विदेशियो की सहायता से भारत को आजाद करने के इस प्रयत्न की आलोचना की थी। उस समय नेताजी ने ब्रिटेन के इस घृणित प्रचार का उत्तर देते हुए कहा था—'इतिहास साक्षी है कि कोई भी राष्ट्र जो कि परतन्त्र था और भारतवर्ष तो केवल दासता मे ही जकड़ा नही है निःशस्त्र भी है—उसने अपनी स्वतन्त्रता को बिना बाहरी शक्तियो की सहायता के प्राप्त नही किया।

बगला देश का उदाहरण हमारे सामने है । भारत की सैनिक सहायता के बिना बगला देश की स्वतन्त्रता सम्भव नही थी। परन्तु भारत में कतिपय राजनीतिक नेता हिंसा और विदेशो से सहायता लेने के पक्ष में नही थे । स्वतन्त्र भारत मे इसी विचार धारा के अहिंसा के पुजारियो तथा बृटेन के प्रशासक राजनीतिज्ञो का वर्चस्व स्थापित हो गया इस कारण क्रांतिकारी देशभक्त बलिदानी वीरो की ओर भी अधिक उपेक्षा की गई। मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने प्राणो की आहुति चढाने वाले क्रांतिकारियो की इतिहास लेखको ने उपेक्षा की भारत के स्वतन्त्रता सग्राम मे जो उनका गौरव पूर्ण स्थान था उसको स्वीकार नही किया उसे अधकार में रखने की उपेक्षा करने का सतत प्रयत्न किया गया। जहां इतिहासकारो, बुद्धिजीवियो, सत्तावान राजनीतिज्ञो ने उन बलिदानियो की उपेक्षा की वहा सर्व साधारण जनता ने उनके बलिदानो की सराहना की उनसे प्रेरणा ली यही कारण है कि उनको पूरी तरह से भुलाया नही जा सका। जन साधारण ने उनकी पावन स्मृति को बनाए रखने का प्रयत्न किया। जन साधारण के हृदय के गहन तल मे इन बलिदानियो के लिए कसी अटूट श्रद्धा थी इसका दिग्दर्शन उस समय हुआ जब कि लाल किले मे आजाद हिंद सैनिको पर अभियोग चलाया गया। चतुर और कूटनीति मे पारगत बृटिश अधिकारियों ने विशेष सैनिक अदालत में आजाद हिंद सेना के सैनिको पर खुले रूप मे अभियोग इस उद्देश्य से चलाया था कि सर्व साधारण मे उनके प्रति घृणा उत्पन्न की जा सके परन्तु उस एतिहासिक अभियोग मे जैसे जैसे प्रातः स्मरणीय नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के चमत्कारी व्यक्तित्व और उनके द्वारा किए गए मातृभूमि को स्वतन्त्र करने का विवरण प्रथम बार भारतीय जनता को सुनने को मिला तो देश में अभूतपूर्व जागृति उत्पन्न हो गई। केवल जन साधारण ही नही भारतीय सेनाएं भी उससे प्रभावित हुए बिना नही रही उस समय देश पर नेताजी के महान व्यक्तित्व का तेजोमय प्रकाश छा गया। जो कार्य इम्फाल के युद्ध मे नही हो सका वह कार्य नेताजी के व्यक्तित्व ने आजाद हिंद सेना की रणभूमि मे पराजय होने के पश्चात कर दिखलाया। बृटिश साम्राज्य की शक्ति की आधारशिला भारतीय सेना विद्रोही हो उठी। बृटिश साम्राज्य की शक्ति की नींव हिल गई। चतुर अंग्रेजो ने देख लिया कि व अब भारत मे नहीं टिक सकते। अन्तु उन्होने भारत को छोड़ने का निश्चय कर लिया। सत्य तो यह है कि यदि क्रांतिकारी बलिदानियो और लोक शक्ति को जागृत करने वाले राष्ट्रीय आन्दोलन एक दूसरे के पूरक बनते तो देश अविभाजित स्वतन्त्र होता—देश के विभाजन का विष हमे नही पीना पडता। यह देश का दुर्भाग्य था कि राष्ट्रीय आदोलन की दोनो धाराओ का सगम नही हुआ।

'रोल आव आनर' को जब लेखक ने पढ़ा तो उसकी प्रसन्नता और हर्ष की सीमा नही रही। श्री कालीचरण घोष स्वय क्रांतिकारी रहे है। उनके हृदय मे उन वीर बलिदानियो के लिए असीम श्रद्धा होना स्वाभाविक था कि जिन्होने मातृभूमि को स्वतन्त्र बनाने के लिए हसते हसते 'वन्दे मातरम्' के जयघोष के साथ अपने प्राणो को उत्सर्ग किया था। ६ वर्षों के एकाकी परिश्रम और साधना के उपरात उन्होने उन वीर बलिदानियो का विवरण पहली बार जनता के समक्ष उपस्थित किया था। पढकर मेरा हृदय कृतज्ञता और उल्लास से आत्मविभोर हो उठा। अभी तक

लिदानियो के सम्बन्ध मे ऐसी प्रामाणिक पुस्तक प्रकाशित नही हुई थी। उसे पढ़ने पर रे हृदय म यह उत्कट भावना तीव्र हो उठी कि पुस्तक का अनुवाद हिन्दी मे प्रकाशित किया जावे। मैंने श्री कालीचरण घोष को लिखा। उन्होंने तुरन्त मुझे उसके अनुवाद करने की अनुमति दे दी। अनेक कार्यों म व्यस्त रहने के कारण मुझे उसका अनुवाद करने मे आवश्यकता से अधिक समय लग गया। अंतत पुस्तक तयार हो गई और मैं उसे हिन्दी जगत के सामने रख सका यह मेरे लिए विशेष हर्ष का कारण है।

यद्यपि देश आज स्वतन्त्र है परन्तु देश के सामने भीतरी और बाहरी खतरे भयानक रूप मे उपस्थित है। अस्तु देश के जन-जन मे गहन देश भक्ति की उद्दाम भावना को दृढ करने की बहुत बड़ी आवश्यकता है। भारतवासियो को यह भूल नही जाना चाहिए कि भारतवर्ष को जो स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है वह अगणित भारतीयो के बलिदान के परिणामस्वरूप ही प्राप्त हुई है। उन बलिदानो की कहानी और उन देशभक्त क्रान्तिकारियो की जीवनगाथा कायर व्यक्ति के हृदय में भी साहस, शौर्य और मातृभूमि के लिए अपने प्राणो की आहुति दे देने की भावना उत्पन्न करती है। इसलिए भी यह आवश्यक है कि उन बलिदानी वीरो की यशोगाथा सब साधारण तक पहुचाई जाय। इसी उद्देश्य से यह पुस्तक लिखी गई है। जो राष्ट्र अपने उन वीरों को भूल जाता है कि जिनके त्याग और बलिदान के परिणामस्वरूप राष्ट्र स्वतन्त्र हुआ वह केवल कृतघ्नता के पाप का ही भागी नहीं होता वरन लाखो देशभक्त बलिदानियों के आत्म उत्सर्ग की आधारशिला पर जो स्वतन्त्रता का भवन खड़ा है उसकी रक्षा भी नही कर सकता। देशवासी और भावी पीढिया उन बलिदानी वीरो द्वारा देश के लिए आत्मोत्सर्ग की इस पावन गाथा को जो हमारे हृदयो म गहन देशभक्ति की भावना उत्पन्न करती है जान सकें इसी उद्देश्य स यह पुस्तक लिखी गई है और हिन्दी भाषा भाषी जनसख्या के लिए हिन्दी म इसका अनुवाद लेकर मैं उपस्थित हुआ हू।

मूल पुस्तक म उन बलिदानी वीरों के चित्र भी दिए गए है। पुस्तक का मूल्य बहुत अधिक न हो जावे इस कारण हिन्दी अनुवाद म चित्रो को देने का लोभ छोड़ दिया गया है। लेखक की अनुमति लेकर मैंने राजस्थान के एक महान क्रान्तिकारी श्री जोरावरसिंह बारहट जो महाविप्लवी नायक श्री रासबिहारी बोस के साथी थे उनकी यशोगाथा को जोड़ दिया है जो अभी तक अज्ञात थे।

भारतीय क्रान्तिकारियो के बलिदान और त्याग की अद्भुत कहानी को पढ़कर मन में सहसा यह विचार उठता है कि कैसे साहसी थे व वीर जो यह जानते हुए कि उनका या तो फासी के तख्त पर अथवा गोली के निशाने से अन्त होगा सहर्ष इस बलिदान पथ म अपनी आहुति देने के लिए आते थे और मातृभूमि की दासता की शृखलाओं

को काटने के लिए वन्दे मातरम् का जयघोष करते हुए प्रसन्न वदन फांसी के तख्त पर चढ जाते थे। उन बलिदानी वीरो के साहस और शौर्य को देख कर ही कवि की वाणी से निकला था —

"शहीदों की चिताओं पर
लगेंगे हर बरस मैले,
वतन पर मरने वालों का
यही बाकी निशां होगा"

परन्तु उसको क्या मालूम था कि देश के स्वतन्त्र हो जाने के उपरान्त कृतघ्न देश उन बलिदानी वीरो को भुला देगा जिनकी हड्डियों पर भारत की स्वतन्त्रता का यह भव्य भवन खड़ा हुआ है उन्हें यह देश भूल गया।

बलिदानों की प्रशस्ति हिन्दी भाषी जनता में देशभक्ति की गहन भावना तथा नेताजी के "शब्दों में मातृभूमि के लिए करो सब निछावर बनो तुम फकीर" के पावन विचार को हृदय में पोषित कर सके इसी उद्देश्य से पुस्तक हिन्दी में प्रकाशित की जा रही है।

जयपुर

शंकर सहाय सक्सेना

अध्याय प्रथम

प्रतिरोध और पुनरोत्थान (१७५७–१७७५)

प्रतिरोध प्लासी का युद्ध और उसके पश्चात्—अठारहवीं शताब्दी के मध्य में देहली के सिंहासन के लिए शाही मुगल वंश में निरन्तर पारिवारिक संघर्ष तथा मराठा और अन्य दक्षिणी सैनिक नेताओं के कठोर प्रहारों के कारण महान मुगल सम्राटों का अधिकार यद्यपि औपचारिक रूप से भारत में मान्य अवश्य था परन्तु वास्तविकता यह थी कि मुगल सम्राटों की शक्ति और प्रतिष्ठा तेजी से समाप्त होती जा रही थी।

योरोप में २१ मई १७४४ में इंगलैंड और फ्रांस में युद्ध की घोषणा की जा चुकी थी, और भारत में उन दोनों देशों की कम्पनियों के अधिकारी भारत के विभिन्न शासकों और नरेशों से संधि करके ही अपने देश के स्वार्थों की रक्षा कर सकते थे। अतएव इन दोनों देशों की कम्पनियों के अधिकारी एक दूसरे की व्यापारिक बस्तियों को घेर कर तथा बहुधा एक दूसरे से युद्ध करके भारत भूमि पर अपना अधिकार करने और अपने व्यापारिक तथा राजनीतिक स्वार्थों को अक्षुण्ण बनाने का भागीरथ प्रयत्न कर रहे थे।

उस समय नियति बंगाल के राजनीतिक मंच पर ऐसी महत्वपूर्ण घटनाओं का सृजन कर रही थी जिनके परिणाम भारत के लिए अत्यन्त दूरगामी होने वाले थे। १० अप्रैल १७५६ को बंगाल के नवाब अलीवर्दी खां की मृत्यु हो गई। बीस वर्ष का अनुभवशून्य नवाब अलीवर्दी खां का दौहित्र सिराजुद्दौला उसका उत्तराधिकारी और बंगाल का नवाब बना। सिराजुद्दौला उन अनुभवी और कूटनीतिज्ञ हिन्दू और मुस्लिम दरबारियों को दबा कर रख सकने में बौद्धिक और नैतिक दृष्टि से अक्षम था जो बंगाल में अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए और सिराजुद्दौला को अपना मोहरा बनाने के लिए प्रयत्नशील थे, और जो विदेशी व्यापारियों से गहरी मित्रता का हाथ बढ़ा रहे थे। ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारियों ने इस आन्तरिक संकट की स्थिति का पूरा लाभ उठाने में तनिक भी संकोच नहीं किया और वे उन दरबारियों के साथ जो उनकी दुरभिसंधि में सम्मिलित हो सकते थे दलबंदी और कुचक्र में सम्मिलित हो कर अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षा को चरितार्थ करने के लिए सक्रिय हो गए। रिश्वत, धोखा, विश्वासघात, और चालाकी से काम लिया और परिस्थिति अनुकूल देख कर उन्होंने नवाब सिराजुद्दौला से रणभूमि में खुलकर युद्ध किया। २३ जून १७५७ के दुर्भाग्यपूर्ण दिवस को प्लासी की रणभूमि में उन्हें निर्णायक सफलता प्राप्त हुई और भारत की स्वतन्त्रता का सूर्य डूब गया भारत पराधीन हो गया।

जब विश्वासघाती मीरजाफर युद्ध में तटस्थ हो गया तो मीर मदन के सेनापतित्व में स्वामिभक्त और देशभक्त वीरों ने युद्ध किया और हजारों की संख्या में वे देश के लिए रणभूमि पर सो गए। मीर मदन तोप के गोले से बुरी तरह घायल हो गया। उसे शीघ्रता से नवाब के शिविर में ले जाया गया जहां नवाब सिराजुद्दौला के सामने उसने प्राण त्याग दिए। बंगाल से अंग्रेजों को निकाल बाहर करने के लिए सबसे पहिला

बलिदान मीर मदन का था अतएव बलिदानों की प्रशस्ति में उसका नाम सर्व प्रथम लिखा जावेगा।

प्रशस्ति में दूसरा स्थान नवाब के एक दूसरे सेनापति मोहनलाल का है। जब मोहनलाल को उस विनाशकारी आज्ञा का बोध हुआ जो कि नवाब के नाम से प्रसारित की गई थी कि नवाब की सेना शिविर में चली जावे तो वह शंकित हो उठा सतर्क मोहनलाल को यह जानने में देर नहीं लगी कि किसने यह घातक सलाह दी है और उसके भयंकर परिणाम क्या होंगे। उसने निर्भय होकर उस आज्ञा के विरुद्ध घोषणा की कि सेना के वापस लौटने का परिणाम यह होगा कि सेना में घबराहट और भगदड़ फैल जावेगी परन्तु उसके विरोध का कोई परिणाम नहीं निकला। एक स्वामिभक्त और देशभक्त वीर सैनिक की भांति वह युद्ध भूमि से नहीं हटा और अकेले अपने कुछ वीर सैनिकों के साथ डट कर शत्रु से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ। देश की स्वतंत्रता के लिए रणभूमि में वीरता का अद्भुत प्रदर्शन कर मोहनलाल धराशायी हुआ।

२ जुलाई १७५७ को नवाब सिराजुद्दौला की निर्दयतापूर्वक हत्या कर दी गई।

अब पलासी के विजेताओं ने अत्यन्त धूर्तता के साथ बंगाल की मसनद पर एक के बाद दूसरे नवाब को बैठाना प्रारम्भ किया। अंग्रेजों ने बंगाल में जिस धूर्तता का परिचय दिया वह उनकी ईमानदारी और मानवीय व्यवहार पर एक अमिट कलंक बन कर रहेगा। विजित बंगाल के अभिजात और सामान्य जन एक रात्रि में ही स्वतन्त्रता खोकर दास बन गए उनका उन घटनाओं को प्रभावित करने का अधिकार छीन लिया गया जो देश में उस समय घट रही थीं और जिनके परिणाम स्वरूप विदेशियों का भारत पर अधिकार स्थापित होता जा रहा था।

जो लोग इस धूर्तता के जाल से ढकी हुई यथार्थता को देखने की क्षमता रखते थे और कुचक्रपूर्ण राजनीतिक चाल को समझ सकते थे उन्हें यह समझने में अधिक देर नहीं लगी कि अंग्रेजों का अंतिम और वास्तविक उद्देश्य क्या है।

२२ जनवरी १७६० को वांडीवाश के दक्षिण में अंग्रेजों और फ्रांसीसियों में जो युद्ध हुआ उसके फलस्वरूप भारत में अंग्रेजों का कोई योरोपियन प्रतिद्वन्दी नहीं रहा जो उनको चुनौती दे सकता। यह विचार वास्तव में अत्यन्त साहस का था कि जब युद्धों में अंग्रेजों की विजय निश्चित सी थी तब कोई यह कल्पना अपने मन में पोषित करता कि अंग्रेजों से युद्ध करके उनका पराभव किया जा सकता है। ऐसी विपरीत परिस्थिति में थोड़े से ही सही ऐसे साहसी व्यक्ति थे कि जिन्होंने विदेशियों के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने के लिए युद्ध करने का सकल्प किया।

पलासी के रणक्षेत्र में तोपों की गोलाबारी की भयंकर गर्जना की गूंज पूरी तरह समाप्त नहीं हुई थी जबकि वायु में सुदूर सैनिक तैयारियों की धीमी गूंज सुनाई देने लगी। इस प्रकार अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध चलता रहा। कभी कभी यह स्वतंत्रता का युद्ध रुक जाता था। इस युद्ध को छोटे बड़े समूह विभिन्न क्षेत्रों में उत्तर से दक्षिण तक और पूर्व से पश्चिम तक जिसमें बर्मा भी सम्मिलित था लड़ते रहे। यद्यपि यह स्वतंत्रता के फुटकर युद्ध एक दूसरे से स्थान और काल की दृष्टि से बहुत समीप नहीं थे परन्तु वे १५ अगस्त १९४७ तक चलते रहे। यह युद्ध दो सौ वर्षों तक श्वेतांगों की दासता से मुक्ति

फूट पड़ा। जब मुनरो बम्बई से वापस लौटा तो उसने योरोपियन और देशी सिपाहियों को घोर विद्रोही पाया। वे सेना से भाग कर शत्रु से मिल रहे थे और अपने अफसरों को पकड़ कर ले जाने की धमकी देते और अधिक वेतन की माग करते थे। मुनरो ने देखा कि देशी सिपाहियों का एक सम्पूर्ण बटलियन अपने शस्त्रों तथा अन्य सैनिक सामग्री सहित शत्रु के साथ मिल गया। इन सैनिकों का जो सेना से भाग गए थे पीछा किया गया और उनमें से कुछ को बन्दी के रूप में पकड़ कर वापस लाया गया।

मुनरो ने उन सैनिकों के विरुद्ध तुरन्त सैनिक न्यायालय में न्याय किए जाने की आज्ञा दे दी। सैनिक न्यायालय ने बन्दियों को सैनिक विद्रोह का तथा भगोड़े होने का दोषी घोषित कर दिया और उनको प्रधान सेनापति जिस प्रकार चाहे मृत्यु दण्ड देने की आज्ञा सुना दी। मुनरो ने उन सभी सैनिकों को तोप के मुंह पर बंधवा कर गोले से उड़वा दिया और उनकी धज्जियां वायु में उड़कर बिखर गईं (दी हिस्टरी आव आफ ब्रिटिश इंडिया १८५८ भाग ३ पृष्ठ २४६ जे० मिल० तथा एच एच विल्सन)

सैनिक विद्रोह — बंगाल १७६५ में सेना की पद्रहवीं बटालियन के विद्रोह ने गम्भीर रूप धारण कर लिया। उस बटालियन को तामलुक मिदनापुर जाने की आज्ञा दी गई जहां से उन्हें एक समुद्री जहाज के द्वारा एक अपरिचित और अनजाने स्थान को डच सेना से युद्ध करने के लिए जाना था। उस समय एक अफवाह इस आशय की फैल गई कि उन्हें फ्रेंच सेना से युद्ध करना है। ३ सितम्बर १७६५ को नेताओं और सिपाहियों ने अधिकारियों की आज्ञा मानने से इनकार कर दिया परिणाम स्वरूप रघुनाथसिंह उमरावगिर और यूसुफ खां को तोप के मुंह से बांध कर उड़ा दिया गया और उस सेना का पूर्ण विघटन कर दिया गया।

सन्यासी विद्रोह— सन्यासी विद्रोह (१७६३ ७४) सन्यासियों और मुस्लिम फकीरों का सम्मिलित विद्रोह था जिन्हें हेस्टिंग्ज "हिन्दुस्तान का जिप्सी" कहता था और जो असीम कठोर, साहसी और उत्साही थे। कम से कम कुछ समय के लिए ही सही उन्हें भारत में सबसे अधिक बलवान और क्रियाशील व्यक्ति माना जाता था। सरकारी लेख के अनुसार 'तिब्बत की पर्वतश्रेणी के दक्षिण में काबुल से चीन तक का देश उनके अधिकार में था और वे वहां रहते थे।'

१७६३ में वे बाकरगंज के समीपवर्ती ग्रामीण क्षेत्र में फैल गए और ढाका की अंग्रेजों की फैक्टरी पर उन्होंने अधिकार कर लिया। १७६८ में बिहार के सारन जिले में उनका अंग्रेजों से भयानक युद्ध हुआ। १७७० में वे दीनाजपुर में प्रकट हुए और उसके उपरान्त वे ढाका और राजशाही के उत्तरी भाग में सक्रिय हो उठे। वे विस्तृत क्षेत्र में दूर दूर तक लूट मार करते थे और उन्होंने प्रशासनिक अधिकारियों लिए एक कठिन और गम्भीर संकट उपस्थित कर दिया था।

उन्होंने बंगाल में पुर्निया तथा दीनाजपुर तक घुस कर और रंगपुर में ब्रिटिश तथा मुसल्मानों की सम्मिलित सेनाओं पर १७७२ में उल्लेखनीय विजय प्राप्त की परन्तु उस सैनिक सफलता की पुनरावृत्ति नहीं हुई।

सन्यासी अंग्रेजों के लिए एक भयंकर भय और घबराहट का कारण बन गए थे। ऐसा कहा जाता है कि यदि उनके नेताओं के दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं आता तो वे अंग्रेजों के विस्तृत प्रदेश पर अपना अधिकार और प्रभाव बनाए रख सकते थे।

मराठा—मराठा (१७६५ १८१८) अपने पड़ोसी शत्रुओं से लड़ने में लगे हुए

थे इस कारण विदेशियों की बढती हुई शक्ति की ओर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। फिर भी ३ मई १७६५ को उन्होंने अंग्रेजों से एक बडा युद्ध लडा जो अनिर्णीत रहा।

उसके उपरान्त ६ जनवरी १७७६ को उन्होंने ब्रिटिश सेना पर बडगाव के पास भीम वेग से आक्रमण किया। अगले वर्ष १७८० को उन्होंने दाभोई पर आक्रमण किया और अकलेश्वर तथा कतिपय अन्य महत्वहीन स्थानों पर अधिकार कर लिया। परन्तु १९ अप्रेल १७८० को उन्हें उन स्थानों से पीछे हटना पडा।

८ फरवरी १७८१ को मराठों ने खण्डाला के ब्रिटिश शिविर पर आक्रमण किया और ब्रिटिश सेनापति को शीघ्रता से वहां से भागना पडा।

७ अप्रेल १७८३ को विजय दुर्ग के पास मराठों के जहाजी बेडे ने ब्रिटिश सेनापति कर्नल मैकलियाड, दो अन्य अधिकारियों तथा कुछ अंग्रेज सैनिकों को कैद कर लिया और उन सबों को मरवा दिया।

इसके उपरान्त २८ अगस्त १८०३ को अलीगढ के समीप कोली में और २३ सितम्बर १८०३ को असाई में, मराठा सेनाओं को पराजय का मुख देखना पडा। अंतिम युद्ध १० जनवरी १८१८ को हुआ।

इस पराजय के उपरान्त महान शिवाजी के प्रदेश में ऐसी कोई शक्ति नहीं रही जो ब्रिटिश सेनापतियों और प्रशासकों के लिए सिरदर्द होती।

हैदरअली और टीपू सुल्तान—हैदरअली अंग्रेजों के बढते हुए प्रभाव और सैनिक शक्ति से चौकन्ना हो गया था। सर्वप्रथम ११ जून १७६० को दक्षिण आरकट के तियागर में उसने ब्रिटिश सेनाओं से युद्ध किया। ३१ अक्टूबर १७८० को हैदरअली ने आरकट पर अपना अधिकार जमा लिया। अंग्रेजी जहाजी बेडे ने हैदरअली के नव निर्मित जहाजी बेडे पर आक्रमण किया और अक्टोबर १७८१ में मंगरोल तथा कालीकट में उसका विध्वंस कर दिया। १ जुलाई १७८१ को हैदरअली ने पोर्टो नोवो पर अंग्रेजी सेना से विशाल पैमाने पर युद्ध की जोखिम ली परन्तु वह बुरी तरह पराजित हुआ और आरकट चला गया। मई १७८२ में हैदरअली ने परमाकोइल ले लिया और २ जून १७८२ को उसने ब्रिटिश सेनापति पर आक्रमण कर उसे भागने पर विवश कर दिया।

निरन्तर युद्ध करते रहने के कारण युद्ध श्रमित हैदर अली का ७ दिसम्बर १७८२ को चित्तूर के सैनिक शिविर में स्वर्गवास हो गया।

टीपू ने अंग्रेजों के विरुद्ध फ्रेंच सेना की सहायता से युद्ध जारी रखा किन्तु नवम्बर १७८२ को पनियानी में उसे पराजित होना पडा। उसे विवश होकर आरकट खाली करना पडा और वह बेदनोर की ओर बढा। १९ फरवरी १७८३ को बेदनोर पर भी शत्रुओं का अधिकार हो गया। १८ अप्रेल १७८२ को वह बेदनोर के समीप प्रगट हुआ और शत्रुओं को पराजित कर तीन समीपवर्ती स्थानों पर उसने अधिकार कर लिया और ४ मई को मंगरोल पर आक्रमण कर दिया।

१७८९ के जुलाई मास में टीपू को निजाम पेशवा और अंग्रेजों की सम्मिलित सेनाओं का सामना करना पडा। १७९० में उसने इन सेनाओं से युद्ध किया। अक्टोबर १७९० में उसने दरोह और धरमपुर पर पुनः कब्जा कर लिया पर १० दिसम्बर १७९० को उसके सेनापतियों को अंग्रेजों ने परास्त कर दिया। १७ दिसम्बर को अंग्रेजी सेनाओं ने मालाबार समुद्र तट के प्रदेश को टीपू की सेनाओं से मुक्त कर लिया और ५ अप्रेल १७९९ को उसके शक्तिकेन्द्र श्रीरंगपाटम को अंग्रेजी सेनाओं ने घेर लिया। श्रीरंगपाटम का ४

मई १७६६ को पतन हो गया। इस युद्ध मे टीपू घायल हो गया और अ त मे एक तोपची के गोले से रणभूमि म धराशायी हो गया।

चेतसिह— इस बीच मे बनारस के राजा चेतसिह विशेषकर उस राज्य की प्रजा वारन हेस्टिग्ज क विरुद्ध उठ खडे हुए। अग्रेजो द्वारा खिराज की बढी हुई रकम को देना अस्वीकार करने सिपाहियो की तीन टुकडिया न देने, और ब्रिटिश अधिकारियो का अनुचित अपमान करने के परिणाम स्वरूप अग्रेजो ने उसके विरुद्ध सनिक कार्यवाही की।

अग्रेज इतिहासकारो ने चेतसिह की कहानी को जो १७७४ म घटी सक्षेप मे इस प्रकार लिखा है। (ज मिल तथा यच यच विलसन भाग ३ पृष्ठ ३६८) मानो बिल कम्पनी की काऊसिल ने बनारस म चेतसिह का स्वतन्त्र शासन स्वीकार किया। चेतसिह को स्वतन्त्र शासन स्वीकार करते समय कोई शर्त नही लगाई गई केवल उसे एक निश्चित अपरिवर्तनशील खिराज की रकम देनी थी। आगे उससे और कोई मांग नही की जावेगी और किसी बहाने भी उसके प्रशासन मे किसी भी व्यक्ति को हस्तक्षेप नही करने दिया जावेगा।"

१७७८ मे चेतसिह स सिपाहियो की तीन बटेलियनो का व्यय उठाने के लिए कहा गया जो पाच लाख रुपए वार्षिक था। हेस्टिग्ज न अपने गोपनीय एजन्टो के द्वारा राजा से कीमती भेंटें मागी और गुप्त रूप से राजा को भेंट देने पर विवश किया। किन्तु इन भेंटो से भी हेस्टिग्ज को सतोष नही हुआ। उसका लालच नकद बडी रकम के लिए बढ गया। हेस्टिग्ज के श दो म मैंने दृढ निश्चय कर लिया था कि उसे क्षमा प्रदान करने के बदले एक बडी रकम देने पर विवश करूगा अथवा उसकी पिछली भूल के लिए उससे कडा प्रतिशोध लूगा।' निष्पक्ष इतिहासकारो के अनुसार राजा चेतसिह की भूल केवल यह थी कि वह उस भयकर आर्थिक भार से बचना चाहता था जो कि उस पर बलपूर्वक और अन्यायपूर्वक लादा जा रहा था और वह उससे मुक्त होने के उपाय सोचता था।

चेतसिह न इसम बचने के बहुत स उपाय सोचे पर तु गवरनर जनरल किसी भी प्रकार सन्तुष्ट नही हुआ। ७ जुलाई १७८१ को कलकत्ते से हेस्टिग्ज ने बनारस के लिए प्रस्थान किया। उसका उद्देश्य और इच्छा राजा पर कठोर प्रतिशोध लादना था। वह १४ अगस्त १७८१ को बनारस पहुचा। राजा चेतसिह न मिलना चाहा तो गवरनर जनरल ने मिलना अस्वीकार कर दिया। उसन चेतसिह के विरुद्ध औपचारिक रूप से अपराधो की सूची भेज दी और साथ ही अपनी मांगें भी भेज दी तथा साथ ही साथ १५ अगस्त को अपने सनिको द्वारा राजा को महल म ही उसको कैद कर लिया।

राजा चेतसिह क बद किए जाने को भयकर अपमान और मर्मान्तक पीडा के रूप मे लिया गया और सभी ने उसे न्याय और मानवता के विरुद्ध आवश्यकता से अधिक अतिरंजित कठोर दड माना।

अपने राजा के बद किए जाने को राजा के आदमियो ने नृशस अत्याचार माना और सिपाहियो की दो कम्पनिया जो राजा के महल म उसको घेरे हुए पहरा दे रही थी उन्हें क्षणिक सी देर म राजा के आदमियो न आतकित कर दिया, उनकी सहायता के लिए दो और कम्पनिया भेजी गई और अग्रजो सना के सिपाहियो और क्रुद्ध जनता में भयकर सघर्ष छिड गया। उस लडाई म सभी सिपाही और उनके अग्रेज अधिकारी मारे गए।

बनारस की विद्रोही जनता का दमन करने के लिए और अधिक सेना भेजी गई परन्तु जनता बहुत बड़ी संख्या में रामनगर महल पर आक्रमण करने के लिए बढ़ी। रामनगर में भयंकर युद्ध हुआ। अंग्रेजी सेना ने प्रत्याक्रमण किया उसका कमांडिंग आफिसर पोफाम मारा गया और कम्पनी की सेना को बहुत भयंकर क्षति हुई।

चेतसिंह को जब उसके आदमियों ने छुड़ा लिया तो वह गंगा के पार कर दूसरी ओर चला गया। उस प्रदेश के सभी लोग अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा और क्रोध से भर गए और उनके विरुद्ध उठ खड़े हुए। क्रांति की अग्नि और अंग्रेजों के विरुद्ध विद्वेष आश्चर्यजनक तीव्रता से समस्त प्रदेश में फैल गया। अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा और रोष केवल चेतसिंह के राज्य में ही नहीं वरन आधा अवध का सूबा भी उतना ही विद्रोही हो गया जितना कि बनारस का राज्य था।

हेस्टिंग्ज ने स्थिति की गम्भीर भयानकता को समझ लिया और रात्रि के अन्धकार में गुप्त रूप से भागकर वह चुनार पहुंचा। अपनी पीछे वह बड़ा संख्या में घायल सैनिकों को बिना किसी सेवा सुश्रूषा की व्यवस्था किए ही छोड़ गया।

चेतसिंह के आदमियों ने कम्पनी के सिपाहियों से कई स्थानों पर युद्ध किया परन्तु भाग्य ने हेस्टिंग्ज का साथ दिया और अगले तीन महीनों में उस विद्रोह को भयंकर क्रूरता के साथ दबा दिया गया।

मालाबार में क्षोभ और उत्तेजना—मालाबार में भीषण क्षोभ और उत्तेजना फैल गई। पाइयो राजा (केरल वर्मा राजा) ने १७९२ में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया।

वजीर अली—अवध में वजीर अली ने अत्यन्त भयंकर रास्ता अपनाया। १४ जनवरी १७९९ को उसने बनारस में ब्रिटिश रेजीडेंट श्रीयुत चेरी पर घातक आक्रमण किया। असन्तुष्ट जमींदारों द्वारा इकट्ठा की हुई सेना को लेकर वह अवध में घुसा और अंग्रेजी सेना पर आक्रमण किया।

धूंदियावाघ—मसोर के बेदनार के राजा धूंदियावाघ ने जो जन्म से मराठा था टीपू की सेना के सैनिकों को भर्ती करके एक बड़ी सेना इकट्ठी की और सफलतापूर्वक करनाटक को पदाक्रान्त कर लूटा। करनाटक की रक्षा अंग्रेज तथा मराठे सैनिक कर रहे थे। इस समय में धूंदियावाघ के हाथ से धोधू पन्त गोखले मारा गया। बहुत समय तक धूंदियावाघ अंग्रेजों के लिए एक महान आतंक बना रहा परन्तु मालप्रभा नदी के दाहिने किनारे पर होनेवाले युद्ध में वह पराजित हो गया और अन्त में वह पकड़ लिया गया और ६ सितम्बर १८०० को कोगाल में मार डाला गया।

सैनिक विद्रोह—दो सैनिक विद्रोह और हुए। पहला मद्रास (वेलोर) में १८०६ में और दूसरा सत्तालीस बंगाल नेटिव इन्फैंटरी का विद्रोह जिसने बर्मा को प्रस्थान करने से इंकार कर दिया। इससे यह पता चलता है कि भारतीय सेना में कितना क्षोभ था। विद्रोह की यह भावना मरी नहीं और १८५७ के महान विप्लव के पूर्व अन्तिम सैनिक विद्रोह बंगाल की सेना का था जिसमें सात बटालियन के सैनिक खुले रूप में नये विजित प्रदेशों में छावनियों में रखे जाने वाले सैनिकों के भत्ते के प्रश्न को लेकर विद्रोही हो उठे।

वहाबी आंदोलन—प्रसिद्ध वहाबी आंदोलन के जन्मदाता रायबरेली के सयद अहमद थे। उनका मुख्य उद्देश्य पुनः मुस्लिम शासन की स्थापना था। क्रमशः इस

आंदोलन का लक्ष्य विदेशी शासन को उखाड़ फेंकना बन गया। किन्तु कालान्तर में ज उसका राष्ट्रीय स्वरूप समाप्त हो गया तो वह हिंदू और सिक्ख विरोधी हो गया वहाबी गुप्त रूप से पटना में सगठित होने लगे। उनका मुख्य केन्द्र उत्तर पश्चिमी सीम प्रान्त म स्थित सिताना में था और उनके शाखा केन्द्र दूर दूर फैले हुए थ। १८६३ उ होने एक बडी सेना इकट्ठी की और स्वात प्रदेश म ब्रिटिश सेना स मोर्चा लिया इस भयकर युद्ध में उनको पराजय का मुख देखना पडा परन्तु उन्होंने अपनी विद्रो गतिविधियों को ढीला नहीं किया।

वहाबियों के एक सबमान्य नेता अमीर खां के मुकदमे की सुनवाई के सम जिसे १८१८ के नियम ३ के अ तगत पकड लिया गया था २० सितम्बर १८७१ क कलकत्ता उच्च न्यायालय (हाइ कोर्ट) के मुख्य न्यायाधीश को अब्दुल्ला नामक वहाब ने छुरा भोंक कर मार डाला। ८ फरवरी १८७२ को शेरअली वहाबी ने लार्ड मेय तत्कालीन वायसराय की अण्डमन द्वीप में हत्या कर दी। ऐसा कहा जाता है कि य हत्या अमीर खां के मुकदमे म उसके विरुद्ध निर्णय के प्रतिशोध के रूप मे थी। पर वहाबी आंदोलन के साम्प्रदायिक स्वरूप ने उनके ब्रिटिश विरोधी कार्यों पर एक आवर डाल दिया जिनसे उन्हें राजनीतिक सत्ता छीनने के लिए मुख्यत सघर्ष करना था।

तितू-मीर—उन साहसी व्यक्तियों में जिन्होंने अंग्रेजों की सत्ता के विरु विद्रोह करने का साहस किया तितू मीर का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वह अमी शारीरिक शक्ति का धनी था। उसने अपने आसपास बहुत बडी सख्या म विद्रोहि को इकट्ठा कर लिया और उनकी सहायता से कलकत्ता के उत्तर पूर्व के सम्पूर्ण चौबी परगना नदिया और फरीदपुर पर अपना अधिकार और प्रभुत्व स्थापित कर लिया था चौबीस परगने के नरकेलबारिया को उसने एक दुर्ग में परिणत कर लिया था जहा वह दूर दूर तक धावे करता था।

आदिवासियों के अन्य विद्रोह—गम्भीर और साधारण फुटकर विद्रोह जग जगह पर बहुत होते रहते थ। आदिवासियों के अनेक विद्रोह हुए। उनम १७७ और १७७६ का धुमार विद्रोह। (धालभूम और बाराभूम के प्रदेश म निवास कर वाले आदिवासी)। खासी विद्रोह(१७८३) विद्रोह गजाम (१७६८)नयर बटलियम विद्रो (१८०४) फरादी आन्दोलन (१८०४-१८३८)त्रावणकोर के दीवान वेलु-ताम्पी के नेतृत्व खानदेश के आदिवासियों का विद्रोह (१८०८) जाटों का विद्रोह (१८०६) सहारनपु का गूजर विद्रोह (१८१३)खानदेश के भीलो का विद्रोह १८१८ गोपालसिंह और दिवाकर दीक्षित के नेतृत्व में बुंदेलखड की जाति का विद्रोह (१८२४) कित्तूर (बेलगाव) का विद्रोह (१८२४) कोल विद्रोह (१८३१ ३२) मातृभूमि के भूमियो का विद्रोह (१८३२)विजयानगरम के नेताओं का विद्रोह (१७६४ १८३४)नागा विद्रोह(१८३६)अप्पा साहिब के नेतृत्व मे कोल्हापुर विद्रोह (१८४४) उडीसा के खाडो का विद्रोह (१८४६) सिधु कान्हू चाद और भरव के नेतृत्व म सब विद्रोहों स अधिक तीव्र और शक्तिवान विद्रोह (१८५५) और मुडा विद्रोह (१८५७) उल्लेखनीय और महत्वपूर्ण थे। इनके अतिरिक्त और बहुत से छोटे मोटे विद्रोह हुए।

उन व्यक्तियों मे से जो कि अधिक प्रसिद्ध नहीं हैं और जिन्होंने ब्रिटिश के विरुद्ध विद्रोह किया और उठ खड़े हुए धालभूम का राजा (१७६६ ६७) बलारी अन्य जिला के पोलगिर (१८०२) निजाम राज्य के नरसिंह दत्तात्रय और विजयानगरम

राजा (१७६४) आसाम का एक विद्रोही सरदार, तालुकदार बरेली (१८६६) इत्यादि मुख्य थे।

जिसे मृत्यु का भय नहीं था—जबकि अधिक आधुनिक घटनाओं की स्मृति विस्मृति के गर्भ में डूबती जा रही है महाराज नन्दकुमार (अंग्रेजों के रेकर्ड में उन्हें नुनकोमार लिखा गया है) की घटना आधुनिक युग के करोड़ों भारतीयों के मस्तिष्कों को विदीर्ण करनेवाली स्मृति से भर देती है जिनके अलिखित मस्तिष्क को इतिहास के पृष्ठों में अपनी बहुमूल्य सामग्री से प्रकाशवान बनाने के लिए उन्हें कभी नहीं खोला।

महाराजा (यह उपाधि सम्राट शाह आलम ने मई १७६४ को उन्हें प्रदान की थी) ने वारेन हेस्टिंग्ज के विरुद्ध ईस्ट इण्डिया कम्पनी के निदेशक मंडल (बोर्ड आव डायरेक्टर्स) के समक्ष आरोप लगाए थे और उनकी जांच करने की प्रार्थना की थी। अपने पर दोषारोपण करनेवाले का सामना करने के बजाय जैसा कि जे मिल तथा एच एच, विल्सन ने (दी हिस्टरी आव ब्रिटिश इंडिया १८५८ भाग ३ पृष्ठ ४४६) लिखा है और अपने ऊपर झूठे दोषारोपण को सुनने और उसको चुनौती देकर अपनी निर्दोषता को स्थापित करने के बजाय वारेन हेस्टिंग्ज ने अत्यन्त धूर्तता और होशियारी से अपने विरुद्ध समस्त जांच को टालने और उसको किसी भी प्रकार रुकवाने और न होने देने का षड्यन्त्र किया।

अपनी प्रतिष्ठा को बचाने के लिए हेस्टिंग्ज ने अपने पर दोषारोपण करनेवाले व्यक्ति पर मुकदमा चलाने का असाधारण निश्चय किया। और अपने ऊंचे पद और अधिकार का दुरुपयोग किया। नन्दकुमार के विरुद्ध यह दोषारोपण किया गया कि नन्दकुमार उस षड्यन्त्र में सम्मिलित था जिसमें मार्च १७७० को वारेन हेस्टिंग्ज तथा उसके उन साथियों जो कि उसके दाहिने हाथ थे— के विरुद्ध याचिका देने के लिए एक व्यक्ति को विवश किया। बाद को याचिका में लगाए गए आरोप जांच के उपरान्त असत्य सिद्ध हुए। महाराजा पर जालसाजी का आरोप लगाकर मुकदमा चलाया गया और उनसे जमानत ली गई।

महाराजा नन्दकुमार को दोषी मानकर उन्हें ६ मई १७७५ को बन्द कर लिया गया और उन्हें साधारण जेल में ठूंस दिया गया। उनका मुकदमा ६ जून से १८ जून तक चला जिसका परिणाम क्या होने वाला है यह सभी जानते थे। ५ अगस्त १७७५ को नन्दकुमार को फांसी की सजा सुना दी गई।

सारे देश में आतंक और क्षोभ छा गया। विलसन ने १८५८ में इस सम्बन्ध में लिखा था।

इस सम्पूर्ण प्रशासन के किसी भी कार्य ने हेस्टिंग्ज के यश को इतना गहरा धूमिल नहीं किया जितना कि 'नूनकोमार' की दुखान्त घटना ने किया। जिस क्षण उसने गवरनर जनरल पर दोषारोपण किया उस समय उस पर उस अपराध का आरोप लगाया गया जो ऐसा कहा जाता है कि उसने पांच वर्ष पूर्व किया था। पांच वर्ष पूर्व के कथित अपराध के लिए उस पर अभियोग चलाया गया और उसे फांसी दी गई। यह ऐसा कार्य था जिससे यह शंका होना स्वाभाविक था कि हेस्टिंग्ज अपराधी था और वह नन्दकुमार के पास जो उसके दोषी होने के प्रमाण थे उनका सामना करने की क्षमता नहीं रखता था। यह तथ्य कि हेस्टिंग्ज यह अच्छी तरह जानता था "नूनकमार" जैसे महान प्रतिष्ठित दोषारोपण करने वाले व्यक्ति का विनाश करने का गलत अर्थ लगाया जावेगा और उसके

विरुद्ध वातावरण बनेगा फिर भी ऐसा जघन्य कार्य करने से वह नही हिचका इससे निष्कर्ष निकालना सही होगा कि वह नन्दकुमार' के आरोपों से भयभीत था और समाप्त करने में जो उसके विरुद्ध सदेह का वातावरण उत्पन्न होता उससे भी भयकर परिणाम निकलने की उसे सम्भावना थी।

महान इतिहासज्ञ श्री बेवरिज का मत था कि सम्भवत यह अभियोग सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्र के बाहर था। ए कम्प्रिहेंसिव हिस्ट्री आव इंडिया भाग-२ १७६१) श्री विल्सन का मत था कि नन्दकुमार को जिस अपराध के लिए दंडित किया गया वह हिन्दुस्तान के कानून के अनुसार प्राणदण्ड का अपराध नही था। यह ध्यान मे रखने की बात है कि यह निर्मम निर्णय और प्राणदण्ड घटनोत्तर विधि के आधार पर दिया गया। क्योंकि जिस परिनियम के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय और उसके अधिकारों को जन्म दिया गया, व १७७४ तक प्रकाशित नही किए गए और उस सम्भावित जालसाजी की तिथि १७७० मे थी। साथ ही जो भी साक्षी उपस्थित की गई अभियुक्त को दंडित करने के लिए पर्याप्त नही थी।

यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि कानून मे जो अत्यन्त हितकर प्रावधान है कि उस समय तक प्राणदण्ड रोक दिया जावे जबतक कि प्रिवी काउंसिल अभियोग के सम्बन्ध मे अपना निर्णय न दे दे उसकी भी इस अभियोग मे पूर्ण अवहेलना की गई।

नन्दकुमार को अपने मार्ग से हटा देने से हेस्टिंग्ज ने जनता के आरोपों से अपनी शान्ति की रक्षा की। फ्रांसिस ने हाउस आव कामन्स मे इस सम्बन्ध में कहा था — इस फासी ने भारतियो को भयभीत और आतंकित कर दिया जिससे कि उच्च अधिकारियो के विरुद्ध आरोप लगाने से भयभीत हो। वे (दोषारोपण करने वाले तथा उनके समर्थक) अपने को उस भयंकर खतरे मे डालने के लिए तैयार नही थे कि एक उच्चपदस्थ अधिकारी के विरुद्ध आरोप लगाने से होता।

तत्कालीन राजकीय कुचक्रों मे बाधित रूप से सम्मिलित होते हुए भी अभि... के समय महाराजा नन्दकुमार की बंगाल मे उस समय सामाजिक तथा आर्थिक ... वित्तीय दृष्टि से बहुत ऊंची स्थिति थी। बस्टीड के अनुसार —

यद्यपि महाराजा नन्दकुमार का जीवन प्रतिकूल विपत्तियो से मुक्त नही था। उनकी प्रतिभा और अनुभव से उन्होंने अथाह सम्पत्ति अर्जित की और मुर्शिदाबाद दरबार तथा कलकत्ता मे कम्पनी की सेवाओ के फलस्वरूप बंगाल मे उनका व्यक्तित्व बहुत ऊंचा हो गया।

अपने मस्तिष्क तथा हृदय के गुणो के कारण व अपने देशवासियो के ... वर्गों के लिए विशेष श्रद्धा के पात्र थे। उन्हे अपने मित्रो का तो विश्वास प्राप्त था परन्तु उनके कुछ विरोधी भी जिन्हे उनसे विभिन्न मोर्चों पर सामना करना पड़ता था उनमे विश्वास रखते थे। सामाजिक परम्पराओ और रूढियो मे दृढ आस्था, और स... ऊपर भगवान की इच्छा के प्रति पूर्ण समर्पण के कारण, उनको जो समाज मे प्रतिष्ठा और आदर प्राप्त था वह उनके पहले और बाद बहुत कम लोगो को मिला। इसके अतिरिक्त जब हेस्टिंग्ज और इम्पे की कुदृष्टि उन पर पड़ी तब उनकी आयु ... वर्ष की थी। ऐसी अवस्था मे जो उन्हे अन्यायपूर्ण ढंग से मृत्यु दंड दिया गया उसके का... तत्कालीन करोड़ों समकालीन देशवासियो का और देश की भावी पीढ़ियो की विरास...

सहानुभूति उनके साथ हो गई।

यदि अपने जीवनकाल में नन्दकुमार महान थे तो मृत्यु में उन्होंने अपने यश की ऐसी गरिमामय विरासत छोड़ी जो कभी भी धूमिल नहीं होगी और न समाप्त होगी। उन्होंने अन्त समय अपने अन्तर की शक्ति और दृढ़ता का मृत्यु की भयावह विभीषिका की नितान्त अवहेलना कर जो परिचय दिया उसने उन्हें मानव समाज में बहुत ऊंचे स्तर तक उठा दिया।

उस समय जो परिस्थितियां विद्यमान थीं उनमें रहकर नन्दकुमार ने अपनी शक्ति भर संघर्ष किया और अन्त में वे फांसी के तख्ते पर इस प्रकार चढ़ गए जिससे समस्त संसार चकित रह गया। सम्भवत उनकी आत्मा को उन घटनाओं से जो उनके देश में सौ वर्षों के बाद घटित हुई कुछ सतोष हुआ होगा।

उनके पीछे आनेवाले और फांसी के तख्ते पर चढ़नेवालों ने कुछ दशाओं में उनको भी पीछे छोड़ दिया।

महाराजा ने मनुष्य की प्राकृतिक जीवन सीमा को पार कर लिया था—कहावत के अनुसार तीन बीसी और दस वर्ष—और उन्हें यह भी ज्ञात नहीं था कि वे जो कुछ प्रयत्न कर रहे हैं उसका उनके लिए ऐसा भयानक परिणाम होगा। उनका मृत्यु को असाधारण साहस और शांति तथा सम्पूर्ण उदासीनता से वरण करना एक ऐसा उदाहरण था जिसे उनके बाद उनसे बहुत कम आयु के युवकों ने अपनाया। यही नहीं उन्होंने मृत्यु की जैसी घोर अवहेलना की उससे उन्होंने महाराजा नन्दकुमार को भी पीछे छोड़ दिया।

नन्दकुमार का अभियोग वास्तव में जानबूझकर पैशाचिक न्यायिक हत्या थी जो राज्य के नाम में की गई। भारत में अंग्रेजी शासन के अंतिम दिनों तक नन्दकुमार के देशवासी, प्रशासनिक अधिकारियों और सम्भवत न्यायपालिका के भी उससे भी अधिक नीचे दर्जे के षड्यन्त्र के शिकार हुए थे। उन हत्यारों को वारेन हेस्टिंग्ज' और 'इम्पे की भांति महाभियोग का सामना भी नहीं करना पड़ा। उनको बड़ी सरलता से दण्डित कर दिया जाता था जिसका परिणाम या तो मृत्यु होती थी अथवा भारत के सुदूर काले पानी अण्डमान में अथवा अन्य स्थानों पर आजीवन जेल में बंदी रहना होता था। नन्दकुमार की भावना ने भावी पीढ़ियों को उच्च लक्ष्य के लिए गम्भीर साहस की भावना से ओतप्रोत कर दिया। उन निर्भय देशभक्त योद्धाओं के सम्बन्ध में कि वे फांसी या गोली को किस प्रकार देखते थे—बवेरिज (पृष्ठ ३८३) ने लिखा है 'भीषण कष्ट को सहज सहन करना जो यूनानियों में केवल सिद्धान्त तक ही सीमित था हिन्दुओं ने उसको व्यवहार और कार्य रूप में परिणित कर दिया।

जब उन्हें विश्वास हो जाता था कि अवश्यम्भावी क्षण आ गया है उनमें ऐसा परिवर्तन दिखलाई पड़ता है मानो उनमें एक नई आत्मा का प्रवेश हो गया हो और वे मृत्यु के बीभत्स स्वरूप के प्रति इतने अप्रत्याशित रूप से उदासीन हो जाते यदि उदासीनता नहीं तो अत्यन्त उच्च कोटि की वीरता है।"

नन्दकुमार और उनके देशवासियों की ऐसी उत्कट शौर्य की भावना थी जो १८६७ में चापेकर बन्धुओं से आरम्भ हुई और १९४० में लन्दन में ऊधम सिंह में उसका अन्त हुआ। उनकी अशान्त भावनाएं यह सोचकर अब न शांति का सुख अनुभव करेंगी कि भारत ने स्वतन्त्रता के लक्ष्य तक जाने के मार्ग में उनकी सर्वत्र बिखरी हुई हड्डियों पर

चली। उसी दिन लखनऊ की सेनाएं विद्रोही हो गईं। ३० मई को एक विद्रोही ... पर गाजीउद्दीननगर पर अंग्रेजी सेना ने आक्रमण और उसे पराजित किया। देहली विद्रोहियों का केन्द्र बन गया जहां देश के सभी भागों से विद्रोही आकर इकट्ठे हो गए। मथुरा के सैनिकों ने भी अपने अंग्रेज अधिकारियों को मार कर दिल्ली की ओर कूच कर दिया।

४ जून को अंग्रेजों ने बनारस में सतीसवीं इन्फैंट्री से हथियार ले लिए।

उस समय तक नाना साहब सक्रिय हो चुके थे। ४ जून को उन्होंने लगभग १६० यूरोपियनों को जो फतेहगढ़ से भाग रहे थे बन्द कर लिया और निहत्थे सिपाहियों पर जो जघन्य और निर्मम अत्याचार किए गए थे उनका बदला लेने के उद्देश्य से उन्हें मरवा दिया। कानपुर का राजकोष पूरी तरह से लूट लिया गया।

रानी लक्ष्मीबाई ने अपने राज्य में क्रान्ति का नेतृत्व किया। वहां विद्रोहियों ने जो की बारहवीं इन्फैंटरी के सैनिक थे अपने योरोपियन अधिकारियों पर ५ जून को आक्रमण कर दिया और लगभग सभी को मार डाला। अब क्रान्ति और विद्रोह की अग्नि इन क्षेत्रों में भी भभक उठी जो अब तक उससे अछूते थे। इलाहाबाद में ६ जून को क्रान्ति की ज्वाला प्रज्ज्वलित हुई। अनेक योरोपियन अधिकारियों पर आक्रमण कर दिया गया सभी को मार डाला गया।

७ जून को जालंधर में की पदाति सेना (इन्फैंटरी) तथा अश्वसेना (कैवेलरी) डिवीजन विद्रोही हो गई उन्होंने लुधियाना को पूरी तरह लूटा और दिल्ली की ओर चल पड़ीं।

जून १२ को पांचवीं अनियमित अश्वसेना विद्रोह हो उठी और उसको कड़ाई के साथ बलपूर्वक दबाया गया।

१४ जून को ग्वालियर की सेना भी विद्रोही हो गई। वह क्रान्तिकारियों के साथ मिल गई और उसने अनेक योरोपियनों को मृत्यु के घाट उतार दिया, दसवीं देशी पदाति सेना ने फर्रुखाबाद में १८ जून को विद्रोह किया। १७ से ३० जून तक ब्रिटिश सेनाओं ने विद्रोहियों के अनेक महत्वपूर्ण स्थानों पर आक्रमण किया और उल्लेखनीय सफलता मिली।

कानपुर में रहनेवाले अंग्रेजों को भयंकर विपत्ति का सामना करना पड़ा। ६ जून से २७ जून तक वहां बहुत से अंग्रेज मारे गए। एक जुलाई को लखनऊ की रजीडेंसी पर विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया और उसकी रक्षा करनेवाला ब्रिटिश जनरल मारा गया।

१ जुलाई को होल्कर की सेना में भी क्रान्ति की लहर फूट पड़ी और इन्दौर में अनेक ब्रिटिश सैनिक तथा नागरिक मारे गए। महू की सेना भी विद्रोही हो गई और विद्रोहियों के साथ हो गई।

अब विद्रोह की अग्नि इतनी बलवती हो उठी कि वह सुदूर प्रदेशों में भी फैल गई और देश का बहुत बड़ा भाग उसकी लपटों में आ गया। विद्रोहियों ने आगरा, अम्बाला, मऊ, शीमगंज बाराबंकी बदायूं मथुरा बांदा बेगमगंज, नजफगढ़, महाराजपुर, धार, मन्दसौर, सिहोरा राहटगढ़ (?)शुम्कोग्ग दुर्ग मनवर आदि पर भीषण आक्रमण कर दिया। कोटा की सेना ने ८ जुलाई को विद्रोह किया। सैनिक छावनी

विद्रोहियों ने देहली की ब्रिटिश सेना पर आक्रमण कर दिया परन्तु उन्हें अधिक सफलता नहीं मिली। ९ जुलाई को सियालकोट में नवी देशी पदाति सेना तथा छटी अश्व सेना विद्रोही होगई परन्तु अंग्रेज सैनिकों ने उन्हें भगा दिया वे अधिक क्षति न पहुँचा सके।

नाना की सेना विद्रोही सेनाओं में सबसे अधिक साहसी प्रमाणित हुई। उसने १२ जुलाई को ३५०० ब्रिटिश सैनिकों पर भीषण आक्रमण कर दिया और ब्रिटिश सेना को बुरी तरह परास्त किया।

परन्तु १६ जुलाई के युद्ध में नाना की पराजय हुई और १९ जुलाई को उसे रणक्षेत्र छोड़ देना पड़ा। अंग्रेजों ने बिठूर में उसके महल को जलाकर भस्म कर दिया।

१४ जुलाई तक देहली आक्रमण तथा प्रत्याक्रमण का केन्द्र बन गया था। और जुलाई के अन्त तक विद्रोहियों को बहुत अधिक क्षति उठानी पड़ी थी। परन्तु देश के विभिन्न अंचलों से आए हुए विद्रोही इस युद्ध में सम्मिलित हो गए। जुलाई २५ को तीन रैजीमेंटों ने दीनापुर से देहली की ओर प्रस्थान किया। सिगोली में बारहवीं अनियमित अश्वसेना ने विद्रोह कर दिया। वहां के खजाने पर आक्रमण कर दिया गया। उसकी रक्षा करनेवाली ब्रिटिश सेना को बहुत क्षति उठानी पड़ी और बहुत से ब्रिटिश सैनिक मारे गए। ब्रिटिश जनरल भी धराशायी हो गया।

३१ जुलाई तक दक्षिण में भी घोर अशान्ति के चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगे। अहमदाबाद हैदराबाद आदि स्थानों पर क्रान्ति भड़क उठी। परन्तु उत्तर की तुलना में दक्षिण भारत में विद्रोह का विध्वंस नगण्य था।

जुलाई ३१ के उपरान्त युद्ध की स्थिति में विद्रोहियों के प्रतिकूल परिवर्तन हुआ। उनकी स्थिति निर्बल होने लगी। देहली लखनऊ कानपुर पेशावर बुंदेलखंड फतहपुर, आरा फर्रुखाबाद तथा कुछ अन्य स्थानों पर विद्रोहियों के अधिक संख्या में विद्रोही सैनिक टुकड़ियों के मारे जाने तथा तोपों के छिन जाने से भारी क्षति उठानी पड़ी। केवल गया ही ऐसा स्थान था जहां अंग्रेजों को भारी क्षति उठानी पड़ी और आत्म समर्पण करना पड़ा। वहां जो भी देशी सिपाही कैद थे उन्हें विद्रोहियों ने छुड़ा लिया और अंग्रेज नागरिक किसी प्रकार जान बचाकर भाग गये। जो सेनाएं देवघर, हजारीबाग और संथाल परगना में थी वे भी विद्रोही हो उठीं और उन्होंने अपने अफसरों की आज्ञा को मानने से इनकार कर दिया।

देहली पर विद्रोहियों ने पुनः आक्रमण कर दिया उस पर उनका अधिकार हो गया। परन्तु कुछ ही समय के उपरान्त पांसा पलट गया। अंग्रेजों ने देहली पर फिर अधिकार कर लिया। दोनों ओर के बहुत से सैनिक मारे गए। विद्रोहियों की अधिक क्षति हुई। सम्राट के महल पर अधिकार कर लिया गया बहादुरशाह उनकी बेगम और एक पुत्र को कैद कर लिया गया। वृद्ध मुगल सम्राट के दो पुत्रों और एक पौत्र को कैद कर लिया गया और निर्दयतापूर्वक मार डाला गया।

जबलपुर में १८ सितम्बर १८५७ को गोंड राजा शंकर शाह और उसके पुत्र को फांसी दे दी गई। छोटानागपुर में जुलाई मास में रामगढ़ में १ अगस्त को लोहारदागा में, २ अगस्त को, जालामऊ में २१ अक्टोबर को सम्बलपुर तथा अन्य कई स्थानों पर गम्भीर अशान्ति फूट पड़ी जिसे कठोरता पूर्वक दबाना पड़ा।

विद्रोह नवम्बर मास में अपने अन्तिम चरण में पहुँच कर समाप्ति के समीप था

यद्यपि बुझती हुई विद्रोहाग्नि की चिनगारियां जहां तहां चमक उठती थीं। १८ नव
बर को चीटागांव में चौंतीसवीं पदाति सेना विद्रोही हो उठी। उसी के साथ २२ नवम्ब
को ढाका में भी विद्रोह हो गया। दोनों स्थानों पर विद्रोही सैनिक पराजित हो ग
और जलपाई गुड़ी की ओर भागने पर विवश हुए।

अंतिम युद्ध जिसका पृथक रूप से उल्लेख करना आवश्यक है वह अफ्रोसी विद्रोही तालुकदार मुहम्मद हुसैन और अंग्रेजों के बीच २६ दिसम्बर को हुआ। इ में यद्यपि मुहम्मद हुसैन बहुत वीरता से लड़े परन्तु विजयश्री अंग्रेजों को मिली स्मरणीय १८५७ के वर्ष के अन्तिम दिनों में विद्रोह के उपरान्त विद्रोही नेताओं त उनके बचे हुए साथियों के विरुद्ध जिस निर्ममता निर्दयता पाशविकता और अत्याचा से युक्त बदला लिया गया उसकी रक्त रंजित निर्दयता को भी कंपा देने वाली क्रूरत की कहानी अंग्रेजों के चरित्र पर एक स्थायी कालिमा बनी रहेगी। कैनिंग के आने प ही इस क्रूरता का अन्त हुआ और नीति में परिवर्तन हुआ।

हमें यह स्वीकार करना होगा कि अधिकांश विद्रोही सैनिकों की मांग औ प्रयत्न यह था कि वे एक ऐसे वैकल्पिक प्रशासनिक प्राधिकार की खोज में थे जि देश ब्रिटिश सरकार के प्रशासन के विरुद्ध चुनौती के रूप में स्वीकार कर लेता। कि भी मूल्य पर राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने की भावना इस विद्रोह में कूटकूट क भरी हुई थी। जनवरी २७ से मार्च ९ तक अन्तिम मुगल सम्राट का मुकदमा हुआ और अदालत ने उन्हें सिपाही विद्रोह का पक्ष लेने तथा विद्रोहियों की अपसहाय्य करने का दोषी करार दिया। साथ ही उन्हें ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध युद्ध में अनेक व्यक्तिय को सहायता देने और उन्हें ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध युद्ध करने के लिए प्रोत्साहि करने जिससे कि वे हिंदुस्तान की प्रभुसत्ता को पुनः प्राप्त कर सकें—उस अपराध क भी दोषी घोषित कर दिया गया। उन्हें विद्रोह में सम्मिलित होने का भी दोषी घोषित कर दिया गया और दिसम्बर १८५८ में उन्हें कलकत्ता के मार्ग से रंगून ले जाया गया जहां उनकी ७ नवम्बर १८६२ को मृत्यु हो गई।

विद्रोह को आरम्भ करने का श्रेय भारतीय सैनिकों को था इसमें संदेह नहीं। बहुत से राजे भूस्वामी सरदार ठाकुर तालुकदार तथा किसान उसमें सम्मिलित हो गए और उन्होंने उसको दूसरा रूप दे दिया वह देश की स्वतन्त्रता के लिए प्रथम सशस्त्र क्रांति थी।

रानी लक्ष्मी बाई (झांसी) कुंवरसिंह अमरसिंह (शाहाबाद) राजा अलोखा, हैदर अली खां (राजगिर) ज्योधरसिंह (बिहार) पीर अली खां अशफाक हुसैन (पटना) सुरेन्द्र साही (सम्बलपुर) बिश्वनाथ शाही (लोहार डागा) अर्जुन सिंह (सिंहभूमि), नीलमोनीसिंह (बांकुरा) बिन्दावन तिवारी (मिदनापुर) राव भोपालसिंह, अहमद खां (मुल्तान) महताबसिंह (अलीगढ़) नानीरामदत्त (आसाम) मानसिंह (शाहगंज) मुहम्मद बख्तखां (रोहतक), मुहम्मद खां (बिजनौर) शाहजादा फीरोजशाह (देहली) राजा सतासी और बेगम हजरत महल (रुहेलखण्ड लखनऊ) मुहम्मद हसन (गोरखपुर) हैदर अली खां (गया) सूबेदार अलीबख्श (हमीरपुर) बानपुरा के राजा, राजा शंकर शाह (जबलपुर), वारिस अली (पटना) नीलाम्बर और पीताम्बर शाही (पालामऊ) मौलवी सरफराज अली (शाहजहांपुर) मुहम्मद अहमद उल्ला (लखनऊ) नरपतसिंह (रुइया) खान बहादुरखां (बरेली) मितौली और सेल के राजा (सीतापुर अवध) राजा साहब

झाँसी, कानपुर और शाहगढ़ (सागर तथा नरबदा प्रदेश) नाना साहब, सेनापति तांत्या टोपे जिन्हें १८ अप्रैल १८५६ को फाँसी दी गई बख्तावर खाँ, ज्वाला प्रसाद अजीम उल्ला (कानपुर) इत्यादि इत्यादि उन असंख्य व्यक्तियों में कतिपय प्रमुख व्यक्ति थे जिन्होंने उस महान क्रान्ति में भाग लिया और देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने को बलिदान कर दिया।

वासुदेव बलवन्त फड़के— १८५७ के विद्रोह को अत्यन्त निर्दयता और निर्भयता के साथ पाशविक बदले की भावना से दबाया गया उसके कारण कुछ समय के लिए शान्ति छा गई। परन्तु विद्रोह तथा विरोध की भावना पूर्णरूप से मरी नहीं। उस समय देश की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय हो उठी थी और आर्थिक संकट तथा लगातार पड़ने वाले दुर्भिक्षों के कारण विद्रोह की अग्नि पूरी तरह बुझी नहीं। साधारण जन निराश और हताश हो गए और वे हिंसात्मक कार्यवाही करने के लिए सोचने पर विवश हो गए।

महाराष्ट्र अभी अपनी स्वतन्त्रता के दिनों को भूला नहीं था। उसमें स्वतन्त्रता की स्मृति लुप्त नहीं हुई थी वहाँ असन्तोष की अग्नि धधक रही थी और वैडरबर्न के शब्दों में वहाँ की स्थिति असन्तोषपूर्ण और संकटमय थी।

"महाराष्ट्र में असन्तोष ने फुटकर डकैतियों का रूप ले लिया। डाकुओं के समूह पहले तो फुटकर डकैतियाँ डालते थे और साहूकारों के घरों पर आक्रमण करते थे परन्तु बाद को यह डाकुओं के फुटकर गिरोह मिल गए और वे इतने शक्तिमान हो गए। अतएव पूना स्थित समस्त सेना पदाति अश्वारोही, तोपखाने को उनका सामना करना पड़ा। यह डाकुओं के गिरोह पश्चिमी घाट के जंगली प्रदेश में घूमते और जब सेना आती तो बिखर जाते और फिर किसी सुविधाजनक स्थान पर पुन मिल जाते।

इस शक्तिवान गिरोह और संगठन का सेनापति और नेता एक तरुण वासुदेव बलवन्त फड़के था। उसी पद्धति से आरम्भ में मराठा राज्यशक्ति स्थापित की गई थी उसने उन्हीं पद चिन्हों पर राष्ट्रीय विद्रोह का संगठन करने का प्रयत्न किया। देशवासियों की दयनीय स्थिति उनकी विपत्ति, और कष्टमय जीवन उसके लिए असहय्य हो उठा और उसने निश्चय किया कि यदि सम्भव हो तो शिक्षित वर्ग की सहायता से और यदि आवश्यक ही हो जावे तो उनके बिना देश को सशस्त्र विद्रोह के लिए तैयार किया जावे। शिक्षित वर्ग को अपने इस सशस्त्र क्रान्ति के संगठन में आकर्षित करने में वह असफल रहा अतएव उसने अपना ध्यान अशिक्षित वर्गों की ओर फेरा। उसने रमोशी वन जाति के लोगों को जो एक समय मराठा सेना में महत्वपूर्ण स्थान रखते थे और जिन्होंने १८२६ में ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध विद्रोह किया था— की ओर ध्यान दिया और उन्हें अपने संगठन में लाने का प्रयत्न किया। वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ और शीघ्र ही उसने अपने आसपास वीर देशभक्त साथी इकट्ठे कर लिए।

जब उसके पास निस्वार्थी बलिदानी और वीर सैनिक इकट्ठे हो गए तो उसने तरुणों की एक गुप्त समिति का संगठन करने की ओर ध्यान दिया जिसमें सभी क्षेत्रों और वर्गों से तरुणों को भर्ती किया जाता था और वह उन्हें अपने तेजस्वी भाषणों और निज के कष्टमय जीवन और आत्मबलिदान के द्वारा उत्साहित और अनुप्राणित करता था। इन देशभक्त वीर तरुणों को फायसन तथा गुलटेकड़ी की पहाड़ियों के समीप अधिक

यद्यपि बुझती हुई विद्रोहाग्नि की चिनगारियां जहां तहां चमक उठती थीं। १८ नवम्बर को चीटागांव में चौंतीसवीं पदाति सेना विद्रोही हो उठी। उसी के साथ २२ नवम्बर को ढाका में भी विद्रोह हो गया। दोनों स्थानों पर विद्रोही सैनिक पराजित हो गये और जलपाई गुरी की ओर भागने पर विवश हुए।

अंतिम युद्ध जिसका पृथक रूप से उल्लेख करना आवश्यक है वह मझौली के विद्रोही तालुकदार मुहम्मद हुसेन और अंग्रेजों के बीच २६ दिसम्बर को हुआ। इस में यद्यपि मुहम्मद हुसेन बहुत वीरता से लड़े परन्तु विजयश्री अंग्रेजों को मिली। स्मरणीय १८५७ के वर्ष के अंतिम दिनों में विद्रोह के उपरान्त विद्रोही नेताओं तथा उनके बचे हुए साथियों के विरुद्ध जिस निर्ममता निर्दयता पाशविकता और अत्याचार से युक्त बदला लिया गया उसकी रक्त रंजित निर्दयता को भी लजा देने वाली क्रूरता की कहानी अंग्रेजों के चरित्र पर एक स्थायी कालिमा बनी रहेगी। कैनिंग के आने पर ही इस क्रूरता का अन्त हुआ और नीति में परिवर्तन हुआ।

हमें यह स्वीकार करना होगा कि अधिकांश विद्रोही सैनिकों की मांग और प्रयत्न यह था कि वे एक ऐसे वैकल्पिक प्रामाणिक प्राधिकार की खोज में थे जिसे देश ब्रिटिश सरकार के प्रशासन के विरुद्ध चुनौती के रूप में स्वीकार कर लेता। किसी भी मूल्य पर राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने की भावना इस विद्रोह में कूटकूट कर भरी हुई थी। जनवरी २७ से मार्च ९ तक अंतिम मुगल सम्राट का मुकदमा हुआ और अदालत ने उन्हें सिपाही विद्रोह का पक्ष लेने तथा विद्रोहियों की अपसहाय्य करने का दोषी करार दिया। साथ ही उन्हें ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध युद्ध में अनेक व्यक्तियों को सहायता देने और उन्हें ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध युद्ध करने के लिए प्रोत्साहित करने जिससे कि वे हिंदुस्तान की प्रभुसत्ता को पुनः प्राप्त कर सकें—उस अपराध का भी दोषी घोषित कर दिया गया। उन्हें विद्रोह में सम्मिलित होने का भी दोषी घोषित कर दिया गया और दिसम्बर १८५८ में उन्हें कलकत्ता के मार्ग से रंगून ले जाया गया जहां उनकी ७ नवम्बर १८६२ को मृत्यु हो गई।

विद्रोह को आरम्भ करने का श्रेय भारतीय सैनिकों को था इसमें संदेह नहीं। बहुत से राजे भूस्वामी सरदार ठाकुर तालुकदार तथा किसान उसमें सम्मिलित हो गए और उन्होंने उसको दूसरा रूप दे दिया वह देश की स्वतन्त्रता के लिए प्रथम सशस्त्र क्रांति थी।

रानी लक्ष्मी बाई (झांसी) कुंवरसिंह, उमेरसिंह (शाहाबाद) राजा अलीखां हैदर अली खां (राजीगर) ज्योधरसिंह (बिहार) पीर अली खां मोशाफ हुसेन (पटना) *सुरेन्द्र शाही (सम्बलपुर) विश्वनाथ शाही (छोटा नागपुर) अर्जुन सिंह (सिंहभूमि)*, नीलमोनीसिंह (बांकुरा) बिन्दावन तिवारी (मिदनापुर) राव गोपालसिंह, अहमद खां (मुल्तान) महताबसिंह (अलीगढ़) मानीरामदत्त (आसाम) मानसिंह (शाहगंज) मुहम्मद बख्तखां (रोहतक), मुहम्मद खां (बिजनौर) शाहजादा फीरोजशाह (देहली) राजा सतासी और बेगम हजरत महल (रुहेलखण्ड लखनऊ) मुहम्मद हासान (गोरखपुर) हैदर अली खां (गया) सूबेदार अलीबख्श (हमीरपुर) बानपुरा के राजा, राजा शंकर शाह (जबलपुर), वारिस अली (पटना) नीलाम्बर और पीताम्बर शाही (पालामऊ) मौलवी सरफराज अली (शाहजहांपुर) मुहम्मद अहमद उल्ला (लखनऊ) नरपतसिंह (रुइया) बहादुरखां (बरेली) मिताली और सेल के राजा (सीतापुर अवध) राजा साहब

ब्यापुर और शाहगढ़ (सागर तथा नरबदा प्रदेश) नाना साहब, सेनापति तांत्या टोपे जिन्हें १८ अप्रेल १८५६ को फांसी दी गई बख्तावर खां, ज्वाला प्रसाद अजीम उल्ला (कानपुर) इत्यादि इत्यादि उन असंख्य व्यक्तियों में कतिपय प्रमुख व्यक्ति थे जिन्होंने उस महान क्रान्ति में भाग लिया और देश को स्वतन्त्रता के लिए अपने को बलिदान कर दिया।

वासुदेव बलवंत फड़के— १८५७ के विद्रोह को अत्यन्त निर्दयता और निर्भयता के साथ पाशविक बदले की भावना से दबाया गया उसके कारण कुछ समय के लिए शान्ति छा गई। परन्तु विद्रोह तथा विरोध की भावना पूर्णरूप से मरी नहीं। उस समय देश की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय हो उठी थी और आर्थिक संकट तथा लगातार पड़ने वाले दुर्भिक्षों के कारण विद्रोह की अग्नि पूरी तरह बुझी नहीं। साधारण जन निराश और हताश हो गए और वे हिंसात्मक कार्यवाही करने के लिए सोचने पर विवश हो गए।

महाराष्ट्र अभी अपनी स्वतन्त्रता के दिनों को भूला नहीं था। उसमें स्वतन्त्रता की स्मृति लुप्त नहीं हुई थी वहां असन्तोष की अग्नि धधक रही थी और वैडरबर्न के शब्दों में वहां की स्थिति असन्तोषपूर्ण और संकटमय थी।

"महाराष्ट्र में अशान्ति ने फुटकर डकैतियों का रूप ले लिया। डाकुओं के समूह पहले तो फुटकर डकैतियां डालते थे और साहूकारों के घरों पर आक्रमण करते थे परन्तु बाद को यह डाकुओं के फुटकर गिरोह मिलगए और वे इतने शक्तिमान हो गए। अतएव पूना स्थित समस्त सेना पदाति अश्वारोही, तोपखाने को उनका सामना करना पड़ा। यह डाकुओं के गिरोह पश्चिमी घाट के जंगली प्रदेश में घूमने और जब सेना आती तो बिखर जाते और फिर किसी सुविधाजनक स्थान पर पुनः मिल जाते।

इस शक्तिवान गिरोह और संगठन का सेनापति और नेता एक तरुण वासुदेव बलवन्त फड़के था। उसी पद्धति से आरम्भ में मराठा राज्यशक्ति स्थापित की गई थी उसने उन्हीं पद चिन्हों पर राष्ट्रीय विद्रोह का संगठन करने का प्रयत्न किया। देशवासियों की दयनीय स्थिति, उनकी विपत्ति, और कष्टमय जीवन उसके लिए असह्य हो उठा और उसने निश्चय किया कि यदि सम्भव हो तो शिक्षित वर्ग की सहायता से और यदि आवश्यक हो हो जावे तो उनके बिना देश को सशस्त्र विद्रोह के लिए तयार किया जावे। शिक्षित वर्ग को अपने इस सशस्त्र क्रान्ति के संगठन में आकर्षित करने में वह असफल रहा अतएव उसने अपना ध्यान अशिक्षित वर्गों की ओर फेरा। उसने रमोशी वन जाति के लोगों को जो एक समय मराठा सेना में महत्वपूर्ण स्थान रखते थे और जिन्होंने १८२६ में ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध विद्रोह किया था— की ओर ध्यान दिया और उन्हें अपने संगठन में लाने का प्रयत्न किया। वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ और शीघ्र ही उसने अपने आसपास वीर देशभक्त साथी इकट्ठे कर लिए।

जब उसके पास निस्वार्थी बलिदानी और वीर सैनिक इकट्ठे हो गए तो उसने तरुणों की एक गुप्त समिति का संगठन करने की ओर ध्यान दिया जिसमें सभी क्षेत्रों और वर्गों से तरुणों को भर्ती किया जाता था और वह उन्हें अपने तेजस्वी भाषणों और निज के कष्टमय जीवन और आत्मबलिदान के द्वारा उत्साहित और अनुप्राणित करता था। इन देशभक्त वीर तरुणों को फाग्युसन तथा गुलटेकडी की पहाड़ियों के समीप सैनिक

प्रशिक्षण दिया जाता था। वह सभाएं करता और साधारण जनता में अग्नि बरसाते हु भाषण देता। जब भी सम्भव होता वह सर्वसाधारण में अंग्रेजों के विरुद्ध उठ खड़े हो के लिए सर्वसाधारण का आह्वान करता। उसने अपनी दैनन्दिनी (डायरी) में लिख था "प्रातःकाल से सायंकाल तक स्नान करते भोजन करते और सोते। मैं सदैव इस बा को सोचता– अंग्रेजों का सर्वनाश किया जावे— और मुझे तनिक भी चैन और विश्रा नहीं मिलता।" फड़के का देश को स्वतन्त्र करने तथा ब्रिटिश शक्ति का सर्वनाश कर का तीव्र विचार उसके मस्तिष्क में इतना अधिक भर गया था कि जब वह भाषण देता श्रोताओं के मन में भी क्रांतिकारी विचार भर जाते वह अपने भाषणों में अग्नि उगलता था।

जब उसके संगठन का विस्तार हो गया और बड़ी संख्या में युवक उसके संगठ के अन्तर्गत आ गए तो उसे आर्थिक चिंता सताने लगी। उस बड़े सैनिक संगठन को चला के लिए धन की कमी का अनुभव होने लगा। प्रारम्भ में वह धनी लोगों के पास गया उनसे धन देने की प्रार्थना की और उनसे कहा कि देश के स्वतन्त्र हो जाने पर उनक धनराशि वापस लौटा दी जावेगी परन्तु धनिकों ने उसकी बात की ओर ध्यान न दिया। वे उसे सनकी और विक्षिप्त समझते थे। विवश होकर उसने लूटपाट कर ध एकत्रित करना प्रारंभ किया। वह केवल धनिकों को ही नहीं लूटता था वरन् सरकार सम्पत्ति तथा धन को विशेष रूप से लूटता था।

क्रमशः उसकी सेना आकार संख्या और शक्ति में बढ़ती गई। सेना में रमोश को भर्ती करने में उसके अनन्य भक्त और मित्र दौलतराव रमोशी से उसे बहुत सहायत मिली जिसका रमोशी वनजाति पर अपरिमित प्रभाव था। गोविन्दराव दवारे दूस व्यक्ति थे जो कि फड़के के लिए बहुत सहायक और संगठन के लिए शक्ति का स्रोत थे संगठन में दवारे सेनापति (जनरल) और फड़के शिव जी द्वितीय के नाम से प्रसिद्ध थे।

फड़के ने एक साथ शत्रु पर बहुत से स्थानों पर आक्रमण करने का निश्च किया उसका विचार था कि ऐसा करने से लोग यह सोचने लगेंगे कि फड़के का सामने करना कठिन है और उसके पास बहुत बड़ी सेना है। अतएव वह पोस्ट आफिस रेल्वे तारघर आदि यातायात और संदेश वाहन के साधनों पर आक्रमण करने लगा। बा सरकारी खजानों को लूट लेना और जेलों को तोड़ कर कैदियों को मुक्त कर देना जं प्रसन्नतापूर्वक उसकी सेना में भर्ती हो जाते। इसी बीच उसने निजाम के राज्य में से रुहेलों और पठानों को अपनी सेना में भर्ती करने की कोशिश की। वह यथेष्ठ कोष *जमा करना चाहता था जिससे कि एक नियमित और प्रशिक्षित बड़ी सेना खड़ी कर सके।* वह पहला भारतीय था जिसने भारत में गणतंत्र की स्थापना करने का विचार किया था।

वह अब विस्तृत क्षेत्र में आक्रमण और लूटपाट करने लगा। ब्रिटिश सरकार को उसे गिरफ्तार करना असम्भव हो गया। यहां तक कि उसकी गतिविधियों की सरकार को सूचना भी नहीं मिल पाती थी। उसने सर रिचार्ड टेम्पिल बम्बई के गवरनर के सिर पर ५०० रुपए के पारितोषिक की घोषणा कर दी। फड़के का सर्वत्र आतंक फैल गया।

१८७६ में धमारी गांव पर आक्रमण किया और उसको लूटने के उपरान्त वालेह, पलासपे आदि पर चढ़ाई करदी। पूना जिले के क्षेत्र में फड़के की सेना के रमोशी वीरों ने आतंक उपस्थित कर दिया वह उनकी क्रीड़ास्थली बन गई। १० मई १८७६

को फड़के की सेना ने 'दौलतराव रामोशी' के नेतृत्व में दिरर को लूट कर कोनकरण में पानेवाल के समीप नेरी में वह प्रगट हुआ और वहां से बहुत अधिक सम्पत्ति लूटकर ले गया। पलासपे मे उसे अधिक सफलता मिली वहा उसे सात हजार रुपयों की धनराशि प्राप्त हुई। दुर्भाग्यवश इन युद्धों मे दौलतराव मारा गया जिससे रमोशी वनजाति के साहस व नैतिक स्तर को गहरा धक्का लगा। २० जुलाई १८७९ को बीजापुर जिले मे दावर नयादगी के मंदिर मे फड़के गिरफ्तार कर लिया गया और उस पर इण्डियन पेनल कोड की १२१ १२४ और ३९५ धाराओं के अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया। उसको आजीवन देश निकाले और कैद का दंड दिया गया। उसको अदन के एक कारागृह मे हथकड़ी और बेड़ी डालकर रक्खा गया। सरकार ने भारत के किसी जेल मे यहां तक कि अंडमन के जेल मे भी उस जैसे साहसी क्रान्तिकारी व्यक्ति को रखना खतरे से खाली नही समझा। इतनी कठोरता और सावधानी रखने पर भी वह अदन के कारागृह से १२ अक्टोबर १८८० को निकल भागा परन्तु कुछ समय के उपरान्त वह पुन पकड़ लिया गया और उस पर और अधिक कड़ा नियंत्रण और पहरा बिठा दिया गया। १८५७ की सशस्त्र क्रान्ति के कतिपय स्वतन्त्रता के लिए बलिदान होने वाले वीरों के पश्चात भारत की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने वाले उस महान स्वातन्त्र्य वीर की अदन के जेल में १७ फरवरी १८८३ को मृत्यु होगई।

कूका विद्रोह— १८७१ में कूकाओं के नेता रामसिंह कूका ने ११ जनवरी को लुधियाना के समीप मलेर कोठला म विद्रोह कर दिया और २७ जनवरी १८८२ को उसने अंग्रेजी सेना से मुठभेड़ की। इस भयकर युद्ध में रामसिंह कूका पराजित हुआ और उसे कैद कर बरमा में भेज दिया गया। जहां उसकी १८८५ में मृत्यु होगई।

रामसिंह कूका के अनुयायियो ने १५ से १७ जनवरी १८७२ के बीच सरहिंद मे मालोदा दुर्ग को अपने अधिकार मे करने तथा मलेर काटला पर अधिकार कर वहां के खजाने को लूट लेने का प्रयत्न किया। दुर्भाग्यवश दोनो ही प्रयत्न असफल रहे। बहुत बड़ी सख्या मे रामसिंह कूका के अनुयायी कैद हो गए उनमे से ४९ को तोपो के मुह से बाध कर उड़ा दिया गया। शेष को फासी दे दी गई तथा कूका आदोलन को अत्यन्त कठोरता तथा निर्दयतापूर्वक दबा दिया गया।

मणीपुर विद्रोह— १८५७ में ब्रिटिश सरकार ने जिस प्रकार दोषी और निर्दोष व्यक्तियों का हत्याकांड किया था उसका आतंक कुछ वर्षों तक बना रहा अतएव अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध संगठित विद्रोह बहुत कम हुए।

यह शान्ति भारत के उत्तरी पूर्वी किनारे में स्थित मणीपुर की जनता के विद्रोह से भंग होगई। सितम्बर १८९० मे सेनापति तिकेन्द्रजीत सिंह के नेतृत्व मे वहा की जनता मे विद्रोह कर दिया। मार्च १८९१ में ब्रिटिश सेनाएं मणीपुर पहुँची और ब्रिटिश ने तिकेन्द्रजीतसिंह स आत्मसमर्पण करने को कहा परन्तु उस साहसी वीर ने आत्मसमर्पण करना अस्वीकार कर दिया। इसके विपरीत सेनापति तिकेन्द्रजीत सिंह ने युक्तिपूर्वक तीन अंग्रेज जनरलों को उससे वार्तालाप करने के लिए बुलाया और उन्हें पकड़ लिया। मणीपुर के विद्रोही योद्धाओं को मार डालने क प्रतिशोध स्वरूप उसने उन तीनों अंग्रेज जनरलों को मरवा दिया। ब्रिटिश सेना ने मणीपुर दुर्ग पर भयकर आक्रमण किया परन्तु सेनापति तिकेन्द्रजीत सिंह ने ब्रिटिश सेना को पीछे खदेड़ दिया।

अंग्रेजी सेना ने मध्यरात्रि को दुर्ग पर दूसरा भीषण आक्रमण किया परन्तु वह

बुरी तरह असफल हुई और उसे पीछे हटना पडा। सेनापति तिकेन्द्रसिंह के साहस वीरता और नेतृत्व के फलस्वरूप अग्रेज असफल होगए। लोग सेनापति को मणिपुर का रक्षक मानने लगे। अब बरमा से सहायता के लिए और सेना बुलाई गई और उस सम्मिलित सेना ने दुग पर भीषण आक्रमण किया किन्तु वह भी असफल हुआ। हताश होकर अग्रेजी सेना ने बहुत बड़ी बडी तोपें मगवाई और उनसे निरन्तर गोलाबारी कर दुग को ध्वस्त किया, परन्तु सेनापति तिकेन्द्रजित सिंह हाथ नही आया वह निकल गया। दुर्भाग्यवश उसका अभिन्न मित्र और सहायक जनरल थेनगाल शत्रुओ के हाथ मे पड गया (८ मई १८६१) दुग पर अधिकार करने के उपरान्त ब्रिटिश सेना ने सेनापति तिकेन्द्रजीत सिंह का पीछा किया और भयकर युद्ध के उपरान्त सेनापति को बदी बना लिया गया।

सेनापति तिकेन्द्रजीत सिंह उसके छोटे भाई अगनेस सना, और जनरल थेनगाल का मुकदमा हुआ वह एक तमाशा था। उन पर यह दोपारोपण किया गया कि उन्होने अपनी मातृभूमि को विदेशियों के अधिकार से छुड़ाने का प्रयत्न किया और उन तीनों को प्राणदण्ड की सजा दे दी। १३ अगस्त १८६१ को मणीपुर के सम्मान और स्वतन्त्रता की रक्षा करनेवाले महान् वीरो को अपनी मातृभूमि म ही फासी द दी गई।

मुडा विद्रोह— शताब्दी का अन्तिम वीरोचित काय अपने नेता इक्कीस वर्षीय बिरसा' के नेतृत्व म मुडा लोगो न किया (१८६६ १६००)। यह सघर्ष राची के खुन्ती सबडिवीजन में हुआ था। बिरसा के नेतृत्व में मुडा लोगो न दुमारी पवत पर अग्रेजी सेना से जमकर घमासान युद्ध किया। वह युद्ध अत्यन्त लोमहर्षक था। मुडा योद्धाओ ने वीरतापूण इस युद्ध मे अद्भुत शौय प्रदर्शित किया था। वह युद्ध एसा भयानक था और मुडा वीरो ने एसा अद्भुत पराक्रम दिखलाया कि आज भी उस युद्ध की वीरता की कहानिया मुडा परिवारो म गौरव के साथ कही और सुनी जाती हैं। दुर्भाग्यवश विजयश्री बिरसा को नही मिली वह पराजित हुआ और वहा स निकल गया। परन्तु कुछ समय के उपरान्त वीरभूमि मे वह गिरफ्तार कर लिया गया। जब वीर बिरसा गिरफ्तार हुआ तो उसन घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार के पास उसे फासी दे सकने की शक्ति ही नही है। बिरसा पर युद्ध करने तथा राजद्रोह का अभियोग चलाया गया और उसको प्राणदड की सजा द दी गई। जिस दिन वीर बिरसा को फासी देना निश्चित किया गया उसस एक दिन पूव वह अपनी सल म मरा हुआ पाया गया। डाक्टरो न परीक्षा करने क उपरान्त घोषित किया कि उसकी मृत्यु प्राकृतिक रूप से हुई है उसने आत्महत्या नहीं की है।

बिरसा के वीर और योग्य सहायक गनपतराय और विश्वनाथ साही अभी तक पकडे नही गए थे उ होने भी घनघोर युद्ध किया। उस भयानक युद्ध मे वे पकड गए और उनको फासी द दी गई। इस प्रकार मुडा विद्रोह दबा दिया गया परन्तु उस विद्रोह की स्मृति दीघकाल तक बनी रही।

क्रान्ति की प्रतिध्वनि— पिछली शताब्दी के अन्तिम वर्षों म पश्चिमी भारत म अग्रेजो के विरुद्ध कृत निश्चयात्मक हिंसक कायवाहियो की बहुत सी घटनाए हुई। वे घटनाए राजनीतिक हत्याए थी और जिन थोडे से अगुलियो पर गिने जा सकनेवाले साहसी वीरो ने व हत्याए की वे उसके परिणामो से भली भाति अवगत थ। परन्तु वे होन वाल भयकर परिणामों का चिन्ता किए बिना वह जोखिम भरा काम करते थे। उस समय की माग न क्रान्तिकारी देशभक्तो को जन्म दिया जो "उस समय के

निश्चेष्ट समाज द्वारा उत्पन्न और उनके द्वारा उत्पन्न की जाने वाली कठोर परिस्थितियो के विरुद्ध तेजी से टकराते थे। उस टकराने की प्रक्रिया मे उनकी धज्जी धज्जी उड जाना प्राय निश्चित था और उनका काय उत्तरजीवित रहता है या नहीं रहता परन्तु इस बात की तो तनिक भी सम्भावना नही थी कि वे स्वय सवनाश से बच सकते।"

इससे बहुत पूव कि भारतीय भावनाओ के विरुद्ध बलात्कार करने के विरोध मे हिंसात्मक काण्डो का प्रादुर्भाव हुआ, क्राति के बीज इस भावना से ओत प्रोत देशभक्ति के विचारो से बोय गए जो कतिपय कवियो और लेखको की लेखनियो से निकले थे। यह उचित और न्यायपूण है कि हम उन कवियो और लेखको को सशस्त्र स्वतन्त्रता समय का माग दिखाने वाला के रूप मे याद करें और स्वीकार करें। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य से यह महान् लेखक देश की स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए सर्वोच्च बलिदान देने के विचार का प्रचार और उपदेश देने लगे थ।

रगलाल— जहा तक अनुसधान से पता चलता है कवि रगलाल बधोपाध्याय ने १८५८ में जो लगभग प्रथम सशस्त्र क्रान्ति के समकालीन थे जनता को अपनी कविताओ द्वारा यह कह कर उत्साहित किया कि दासता से मृत्यु कही श्रेष्ठ है। और लोगों को उद्बोधन करत हुए पूछा —

"क्या कोई एसा मूख मनुष्य है जो दासता के बधन और कडिया स्वय अपनी गदन या पैरो म जकडेगा। दास बन कर लाखो वप जीवित रहना नारकीय यातना से भी बढ कर है। एक क्षण की स्वतन्त्रता भी अन त काल तक के लिए स्वर्गीय आनन्द के तुल्य है। जो व्यक्ति आत्मबलिदान के द्वारा अपनी मातृभूमि को विदेशियो की पराधीनता से मुक्त करता ह उसका ही जीवन साथक है, वही वास्तव में मूल्यवान जीवन व्यतीत करता है। चलो आगे बढो प्यारे साथियो जल्दी करो, रणक्षेत्र में जावो, क्योंकि उस व्यक्ति की तुलना कोई नही कर सकता जिसने मातृभूमि के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया है।"

हेमचन्द्र— जब तक कि रगलाल के प्रेरणादायक विचारो की ऊष्णता ठडी नही हुई एक दूसरे कवि ने १८७२ म देश को प्रेरणादायक सदेश दिया। हेमचन्द्र बधोपाध्याय न लागो म वीरतापूण सानक भावना का विकास करने, उनक ही अनुरूप शारीरिक शक्ति और बुद्धि बल का विकसित करन का प्रेरणा दी। उन्होने कहा

"मत्रा का उच्चारण करत रहना। माला के मनको को भगवान का नाम लेकर फेरते रहना। तपस्या, याग, प्राथना देवताओ को भोग और प्रसाद चढाना, हवन करना, यज्ञ करना, मूर्ति पूजा आज के समय कोई काम आने वाली नहीं हैं। इसके विपरीत शक्ति की अचना करा, तीर और तलवार की पूजा करो। लक्ष्य की ओर आगे बढो, निभय हो जोखिम का स्वागत करो। पवतो की चोटियो पर चढ कर उनकी खोज करो, आकाश और स्वग म जो भी नक्षत्र हैं उनके गुप्त रहस्यो को खोज निकालो। अधडो, टूटते हुए सितारो के वग और विद्युत की भयकर कोप की परवाह न करो, इनसे विचलित न हो। तभी तुम शत्रु का सवनाश कर सकोग उसको नष्ट कर सकोगे। उनको चुनौती देने योग्य बनो जिससे तुम्हारा सर जो आज विदेशी प्रभुओ के जूतो के भार को ढो रहा है उस पर स्वतन्त्रता का गौरवपूण मुकुट रक्खा जा सके।'

यह सत्य है कि प्राचीन भूतकाल में तपस्या और साधना के द्वारा मनुष्य अपनी

इच्छा पूरी कर सकता था और भगवान पृथ्वी पर उतर कर अपने भक्तों की रक्षा के लिए रण क्षेत्र में स्वयं उतर कर युद्ध करते थे।

ये निर्जीव देवताओं को भेंट चढ़ाने और उनकी आराधना करने से भारत की स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती सम्भवतः कभी नहीं आवेंगे। तलवार निवासी स्वयं लड़ो। यह राक्षस उन प्राचीन समय के दानवों से बहुत भिन्न हैं।

हथियारों से युद्ध करने की शक्ति और निपुणता प्राप्त करो। युद्ध के लिए आनन्द और हर्ष की भावना से अपने को भर लो। केवल इन्हीं साधनों की सहायता से तुम संसार में अपने अस्तित्व की रक्षा कर सकते हो। भारत की मुक्ति का और दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

१८७४ में ज्योतिन्द्रनाथ टैगोर ने अपने प्रसिद्ध नाटक 'पुरुविक्रम' में उन्हीं भावनाओं को व्यक्त किया जिन्होंने रंगलाल को प्रेरित किया था। ज्योतीन्द्रनाथ ने पुनः गद्य में लिखा

"जो व्यक्ति मातृभूमि को दासता से मुक्त करने में अपने जीवन के लिए भयभीत होता है वह घोर लज्जा का पात्र है। उन व्यक्तियों को अनन्तकाल तक दासता की अपमान जनक यातना सहने दो। स्वतन्त्रता के मूल्य पर बचाए हुए जीवन का उपयोग ही क्या है? वह व्यक्ति लज्जास्पद है जो ऐसे गर्हित जीवन को बचा रखकर जीवित रहना चाहता है।"

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस प्रकार के प्रेरणादायक और शक्तिमान साहित्य और भावना का बंगाल के तरुणों के मन पर बहुत अधिक प्रभाव हुआ। यद्यपि अभी प्रकाश में उसके परिणाम आना शेष थे।

वातावरण में क्षोभ — इस समय प्रकाशित साहित्य समाचार-पत्रों तथा पुस्तकों में देश की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में लिखते हुए लेखक क्रमशः अधिक प्रगतिशील और राष्ट्रीय विचारधारा और मांगें उपस्थित करने लगे। कहीं कहीं इधर उधर क्रान्तिकारी राजद्रोहपूर्ण लेख भी कोई कोई पत्र छापते थे परन्तु सरकार तुरन्त उनके विरुद्ध कार्यवाही करती और सरकार के प्रति आदर और भक्ति को कम करने के अपराध में उन्हें दण्ड देती थी। परन्तु बढ़ती हुई अशान्ति के चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगे थे और समाचार पत्रों का एक वर्ग कभी कभी खुले रूप में अथवा छोटे और पतले आवरण के अन्दर हिंसा का अपने लेखों में समर्थन करने लगा था। जैसे जैसे क्रान्तिकारी आंदोलन का वेग बढ़ता गया उसे समाचार पत्रों का समर्थन भी अधिक मिलने लगा।

प्रशासन के उन कार्यों का जो राष्ट्र के हितों के विरुद्ध और निन्दनीय प्रतीत होते समाचार पत्र तीव्र आलोचना करते और उनके विरुद्ध क्षोभ व्यक्त करने लगे। उग्रतर क्रान्तिकारी राष्ट्रीय आन्दोलन के निश्चित रूप से प्रकट होने के बहुत पहले एक घटना को लेकर एक समाचार पत्र ने अपने सम्पादकीय लेख में परोक्ष रूप से प्रतिशोध के उस कार्य का समर्थन किया जिससे एक वरिष्ठ राज्य कर्मचारी की मृत्यु हो गई थी। उदाहरण के लिए बड़ौदा के गायकवाड़ का मामला प्रस्तुत किया जा सकता है।

भारत सरकार ने यह घोषणा की कि बड़ौदा के रेज़ीडेंट कर्नल फायेर को ९ नवम्बर १८७४ को विष देने का प्रयत्न किया गया। भारत सरकार का कहना था कि रेज़ीडेंट को विष दिलाने में बड़ौदा के महाराजा गायकवाड़ मल्हारराव (मल्हार राव)

का हाथ था। कनल फायरे को अवकाश लेकर ब्रिटेन जाने दिया गया और सर लियूइस पल्ली को १४ जनवरी १८७५ को बडोदा का विशेष कमिश्नर नियुक्त किया गया। ल्यूइस पैली की फायरे के उत्तराधिकारी के रूप मे इसलिए नियुक्ति की गई कि वह गायकवाड माधव राव के आचरण की तथा उसके प्रशासन की जाच करें और अपनी रिपोर्ट दें। माधव राव को उसी महीने में उन पर मुकदमा चलाने के लिए कलकत्ता ले जाया गया। ११ फरवरी १८७५ को गायकवाड अभ्यारोप आरम्भ हुआ और उस गोपनीय जाच का निर्णय और परिणाम ब्रिटिश सरकार को आवश्यक कार्यवाही के लिए भेज दिया गया। लार्ड सैलिसबरी ने माधव राव को उनके निन्दनीय आचरण तथा राज्य के बुरे प्रशासन के कारण सिंहासन से हटा देने की सिफारिश की।

२३ एप्रिल १८७५ को वायसराय ने घोषणा के द्वारा गायकवाड को गद्दी से हटा दिया और उन्हें मद्रास मे निर्वासित कर दिया। बेचारा निस्सहाय गायकवाड उस अपमानजनक दयनीय स्थिति म रहता रहा। १८८२ में मृत्यु ने उसे उस कष्ट और अपमान से मुक्त कर दिया।

इस काण्ड को लेकर भारत के प्रत्येक भाग म शिक्षित वग म बहुत उत्तेजना फैली एक बडे भारतीय नरेश को जिसका बहुत बडा राज्य था और जिसका वश शिवाजी तथा वीर मराठों से सबधित था उसका इस प्रकार गद्दी से उतारा जाना उत्तेजना का कारण बने यह स्वाभाविक ही था। पली की नियक्ति पर अमृत बाजार पत्रिका को सदेह हुआ कि ब्रिटिश सरकार बडौदा को ब्रिटिश राज्य म मिला लेना चाहती है। अमृत बाजार पत्रिका को इस सम्भावना से इतनी निराशा और आक्रोष हुआ कि वह अपने उस आक्रोष को छिपा नहीं सकी और उसने अपने सपादकीय लेखो मे इस विचाराधीन प्रस्ताव की त्यन्त कडे शब्दों म निन्दा और आलोचना की। १४ जनवरी १८७५ के अक मे पादकीय में उसने लिखा कि भावी इतिहासकार को यह स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जायेगा कि

'सरकार ने गायकवाड माधवराव को इस अपराध को करने पर विवश कर दया। इस बात के बडी सख्या मे प्रमाण मिल सकते हैं कि कनल फायरे निरन्तर गायकवाड से घृणापूर्ण व्यवहार करता रहा और प्रत्येक अवसर पर उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचाता रहा। यही नहीं कि कनल ने गायकवाड पर अत्याचार किए और उनके प्रशासन के माग में बाधायें डाली वरन् उसकी सलाह ने प्रजा को विद्रोही बना दिया और जब महाराजा गायकवाड ने विद्रोही प्रजा को दण्ड दना चाहा तो रेजीडेंट ने उनके विरुद्ध भारत सरकार को यह रिपोर्ट भेजी कि वह अत्याचारी नरेश है। यदि कर्नल फायरे को बडौदा में रेजीडेंट नियुक्त न किया जाता तो सम्भवत बडौदा की ऐसी दशा नहीं होती।"

उसी लेख में आग चल कर लिखा था मानव स्वभाव के लिए एसी परिस्थिति में चुप रहना असम्भव था।" लेख म एक प्रश्न पूछा गया। 'अंग्रेज उस दशा में क्या करते यदि उदाहरण के लिए रूस का सम्राट कनल फायर जैसा अधिकारी इगलैंड म वहाँ की सरकार की कार्यवाहियों पर निगाह रखने के लिए उनके सभी कार्यों म हस्तक्षेप करने, लोगों को अनुशासनहीनता सिखलाने, कानून को तोड़ने, और इगलैंड की महारानी की बदनामी करने के लिए भेज देता।"

पत्रिका ने लिखा कि इगलैंड के निवासी उस दशा म दो मार्गों का अवलम्बन

करते।

'यदि उन्हें अपनी शक्ति में विश्वास होता और वे शक्तिवान होते तो उस अधिकारी को सब प्रकार से अपमानित कर इग्लण्ड से निकाल बाहर करते अथवा विकल्प स्वरूप उसको ऐसे ही साधनों से समाप्त करने का प्रयत्न करते जो गायकवाड़ ने किया।"

गायकवाड के कार्य का खुले रूप में समर्थन करते हुए उसने लिखा —

'यह स्पष्ट है कि रजीडेन्ट के समस्त अत्याचारों से मुक्ति पाने के लिए उसके सामने इस नृशंस उपाय के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं था। यदि सही अर्थों में रजीडेन्ट फायर के आचरण की न्यायिक जांच की जाय और जांच के परिणामों को प्रकाशित किया जावे तो इंगलैंड के साधारण जन का सर लज्जा से झुक जावेगा।

यह आश्चर्य की बात है कि ऐसी घटनाएं अधिक नहीं हुई।"

इस समय ब्रिटिश सरकार और उनके भारतीय अधीनस्थ देशी नरेशों के जैसे अप्राकृतिक सम्बन्ध हैं उनको ध्यान में रखते हुए यह वास्तव में आश्चर्यजनक है कि विष देने के मामले इतने कम हुए। यदि भारतीय जन चरम सीमा के धैर्यवान, निर्बल और निस्सहाय न होते तो ब्रिटिश रजीडेन्टों के देशी नरेशों पर होनेवाले अत्याचारों के कारण देश में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखना सरकार के लिए असम्भव हो जाता।

अमृत बाजार पत्रिका के उक्त लेख ने भारतीय नौकरशाही में हड़कम्प उत्पन्न कर दी। उसकी प्रतिध्वनि और लहर सात सात समुद्र पार कर संयुक्त राज्य ब्रिटेन के समुद्र तट से जाकर टकराई जो सारी शक्ति का केन्द्र था। कुछ अधिकारियों ने अमृत बाजार पत्रिका के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करने का सुझाव दिया। परन्तु गम्भीर सलाहकारों ने भारत सरकार को परामर्श दिया कि उस समय चुप रहा जावे परन्तु उस पर कड़ी निगाह रखी जाय। यदि आग वह किसी भी अंक में कोई राजद्रोहात्मक लेख प्रकाशित करे तो उसको तुरन्त दबोच लिया जावे।

गम्भीर देशभक्त — अन्य प्रदेशों की अपेक्षा बंगाल भारत को स्वतन्त्र करने के लिए गुप्त संगठन खड़े करने और भूमिगत क्रांतिकारी कार्यवाहियों की बात कुछ पहले सोचने लगा था। जीवनियों सम्बन्धी साहित्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि श्री राजनारायन बोस, ज्योतीन्द्रनाथ टगोर, शिवनाथ शास्त्री, विपिनचन्द्र पाल, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, सरला बालादेवी, और अन्य श्रद्धास्पद तथा गम्भीर व्यक्तियों ने अत्यन्त श्रद्धा सहित आन्दोलन चलाने की प्रतिज्ञा ली थी। कुछ ने अपने रुधिर से प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर किए थे। यह गत शताब्दी की सत्तरवीं की बात है।

इस समिति में किसी भी सदस्य द्वारा कोई हिंसक कार्य प्रकाश में करते हुए किसी ने नहीं सुना। परन्तु उन्होंने अपने कार्यों द्वारा स्वराज्य की मांग को ऐसे खतरनाक तरीके से क्रियात्मक करने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया कि जिसका समर्थन करनेवाले और अपनाने वाले उस समय बहुत कम लोग थे। उस समय की परिस्थिति को देखते हुए उन्होंने एक ऐसे आंदोलन को जन्म दिया कि जिसने उस मांग को सैद्धांतिक समर्थन दिया जिसने ऐसे संगठनों को उत्पन्न कर दिया जो वैधानिक आंदोलनों की परिधि को तोड़कर बहुत आगे बढ़ गए। वास्तव में यह उन लोगों का प्रशंसनीय साहसपूर्ण कार्य था।

जो गुप्त समितियां शताब्दी के अन्त में बनी, उनका किसी प्रकार के हिंसक कार्यों से कोई सम्बन्ध नही था। उन समितियों का लक्ष्य जनता के मस्तिष्क को विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार, देशी उद्योग धंधों की स्थापना, स्वराज्य की मांग का जोरदार समर्थन करने के लिए तैयार करना था।

इसके अतिरिक्त यह गुप्त समितियां उन कानूनों का विरोध करती थीं जो देश के हितों के विरुद्ध थे अथवा जो स्वराज्य की भावना के प्रचार में बाधक होते थे। इन समितियों का अंतिम ध्येय यह भी था कि आगे चलकर जनमत को एक ऐसी विदेशी सरकार को मानने से इनकार करने के लिए तैयार करना था कि जिसने देश की स्वतन्त्रता का अपहरण कर लिया था।

यह वह उपाय थे जिन्हें कांग्रेस अपनाने के लिए तैयार नहीं थी क्योंकि उसकी नीति दूसरी थी। यही कारण था कि लोकमान्य तिलक और अरविन्द कांग्रेस को व्यर्थ का प्रार्थनापत्र तथा विरोधपत्र देने वाली संस्था के रूप में देखते थे। उन्होंने जनता में स्वावलम्बन तथा असहयोग की भावना जागृत करने का प्रयत्न किया और राष्ट्र की समस्त शक्तियों को एक साथ लेकर राज-सत्ताधारियों से संघर्ष लेने की तैयारी की।

विवेकानन्द— ऊपर लिखे क्रांतिकारी कार्यों को करने के विचार सर्व प्रथम महाराष्ट्र में चितपावन ब्राह्मणों में उत्पन्न हुए। बंगाल में यह विचार सबसे पहले स्वामी विवेकानन्द के मस्तिष्क में आया। उन्होंने पहले कुछ देशी राज्यों को प्रभावित करने का प्रयत्न किया कि वे देश को स्वतन्त्र करने के लिए अपना संगठन खड़ा करें। जब वे ब्रिटेन गए तो वे सरहिराम मैक्सम से भी मिले (भूपेन्द्रनाथ दत्त लिखित– स्वामी विवेकानन्द पेट्रियट प्राफेट– पृष्ठ ८ और ६) कि आवश्यकता पड़ने पर उनसे सहायता मिल सके। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने इस विचार को फैलाया कि वे व्यक्ति जिनके भुजदण्ड बलवान और शक्तिवाली हैं फुटबाल के खेल के द्वारा भगवान के समीप गीता की अपेक्षा शीघ्र पहुँच सकते हैं।"

स्वामी विवेकानन्द सम्पूर्ण भारत में ऐसे तरुणों को जो शारीरिक और नैतिक दृष्टि से बलवान हों समूहों में संगठित करना चाहते थे। ऐसे युवक जो स्वेच्छा से पीड़ित मानवता की सेवा करने के लिए अपने आराम का परित्याग कर दें जो किसी भी ऊंचे आदर्श के लिए कष्ट सहने के लिए तैयार हों और देश को एक ऊंची सभ्यता और आध्यात्मिकता के शिखर पर ले जाने का प्रयत्न करें। स्वामी विवेकानन्द की देन के तरुणों के मन को उद्वेलित करनेवाली अपील देश भर में प्रतिध्वनित हो उठी।

विवेकानन्द ने अपने गुरु परमहंस रामकृष्ण के पदचिन्हों पर चलकर देश के सामने मां काली का स्वरूप रखा जो शक्ति और विध्वंस की देवी थी। १८६८ में अपनी रचना में मां काली का चित्र खींचते हुए उन्होंने घोषणा की कि

जो दुख और कष्ट को प्यार करता है और मृत्यु का आलिंगन करता है मां उसी के पास आती है।

स्वामी विवेकानन्द का उद्बोधन केवल सामाजिक, बौद्धिक और नैतिक उन्नति से ही संबंधित नहीं था वरन् उस अपमानजनक कायरता के विरुद्ध था जो भारतीयों को स्वतन्त्रता प्राप्त करने से रोकती थी। उन्होंने गम्भीर गर्जना के द्वारा कहा कि वीरता और शौर्य के धनी ही स्वतन्त्र होने के योग्य होते हैं।

स्वामी जी के संदेश ने तरुणों के मस्तिष्कों को प्रभावित किया, उनमे देशभक्ति की अग्नि प्रज्जवलित कर दी और उनम से कुछ में कठोर राजनतिक कार्यों की उत्कंठा उत्पन्न करदी। जब स्वामी विवेकानन्द ने तरुणों से सयासी बन रामकृष्ण मिशन में आने का आह्वान किया तो मिशन म जो आए उनमें कम ऐसे नही थे जिनको गुप्त पुलिस बहुत सदेह की दृष्टि स देखती थी। क्रमश स्थिति बिगड़ती गई। गुप्त पुलिस का सदेह घनीभूत होता गया। स्थिति ऐसी तनावपूर्ण होगई कि उसको सुधारने के लिए बगाल के गवनर जिनको रामकृष्ण मिशन के प्रति गहरी सहानुभूति थी—हस्तक्षेप की आवश्यकता अनुभव हुई तभी स्थिति सुधरी।

विवेकानन्द के स्वगवास के पूव ही देश म इस प्रकार के सगठनो का महत्व स्वीकार किया जाने लगा जो शारीरिक उन्नति खेलकूद तलवार छुरा और लाठी चलाने की शिक्षा देने और समाजसेवा तथा रोग, बाढ़ तथा दुर्भिक्ष निवारण के लिए सामूहिक प्रयत्न करने की ओर ध्यान दें।

इसका परिणाम यह हुआ कि १९०२ मे सतीश मुकर्जी तथा पी मित्रा के नेतृत्व म 'अनुशीलन समिति' जसी सस्थाओ का जन्म हुआ। सतीश मुकर्जी तथा पी मित्रा अत्य त उग्र राष्ट्रवादी होने के अतिरिक्त आध्यात्मिक जीवन तथा आकाक्षाओं वाले व्यक्ति थे और उनमे धार्मिक भावना कूट कूट कर भरी थी। अनुशीलन समिति की बहुत सी शाखाए थी विशेषकर पूर्वी बगाल (अब बगला देश) म उसकी बहुत शाखाए थी और उसके सदस्यो मे ऐसे व्यक्ति थे जिन्होने बगाल के ही नही भारत के क्रांतिकारी आंदोलन को गौरव प्रदान किया।

कांग्रस दूसरी ओर उदार राजनीति की ओर झुकती गई। अन्त में १९०७ में सूरत मे वह उग्र राजनीति की अग्नि से परिष्कृत होकर निकली। रोमा रोल ड ने उस सक्रांतिकाल काल का चित्र खीचते हुए लिखा (दी प्रोफेट्स आफ यू इडिया पृ ४६७) 'भारत में राष्ट्रीय आंदोलन की अग्नि धीरे धीरे दीघ काल तक सुलगती रही जबकि विवेकानन्द की श्वास ने कोयलो में ज्वाला उत्पन्न कर दी और वह उनकी मृत्यु के तीन वष उपरान्त ज्वालामुखी पवत के समान भभक उठा।

स्वामी विवेकानन्द न भारत को और विशेषकर बगाल को पुनर्जीवित करने मे जो योगदान दिया और लोकमान्य तिलक, अरविन्द तथा अन्यो के लिए क्रांति का बीज बोने के लिए जो उपयुक्त भूमि तयार कर दी उसको ससार भलीभांति जानता है। कालान्तर में वह क्रांति का छोटा सा पौधा एक विशाल वट वृक्ष के समान बढ़ा हुआ और उसकी शक्तिशाली शाखाए दूर दूर फल गई जो भारत के शासकों को भय से कपा देती थी।

उस क्रांति वृक्ष के फलरूपी बम और गोलियो से ब्रिटिश शासक केवल भारत ही नहीं सुदुर उनके पितृ देश इग्लड म भी आतंकित और भयभीत थे।

रोमा रोलण्ड के शब्दो मे स्वत त्रता के युद्ध का ज्वार बड़े वेग से चल पड़ा था।

'दूसरा व्यक्तित्व जो उनके बाद सबसे महान था और जो स्वतन्त्रता आन्दोलन में प्रकाश म आया वह उनके तरुण मित्र अरविन्द घोष थे। वह विवेकानन्द के वास्तविक बौद्धिक उत्तराधिकारी थे।"

भारतीय अशांति के जनक (१८९३ १९०८)

बगाल में जो आदोलन चल रहा था उससे सर्वथा स्वतन्त्र महाराष्ट्र प्रदेश में जाज्वल्यमान देशभक्ति की भावना प्रवाहित हो रही थी और उसने उस स्वरूप को धारण किया जो उस समय बहुत सुविधाजनक था।

डेढ सौ वर्षों के विदेशी प्रभुत्व के अवेध्यगहन अधकार में उस व्यक्ति की सचित प्रतिभा से एक प्रकाश की रेखा उद्भूत हुई जिस विभिन्न विचारवालो ने असन्तोष उत्पन्न करने वालों में सबसे खतरनाक अगुआ', 'प्रसिद्ध आदोलनकर्ता' 'सच्चे अर्थों में भारतीय अशान्ति का जनक' के नाम से याद किया है और जो व्यक्ति प्रकाण्ड पाडित्य अद्भुत विद्वता और असीम गतिशील कार्य शक्ति का धनी था।

वह व्यक्ति एक महान महर्षि और कोई नही लोकमान्य बालगंगाधर तिलक थे। उनका मानना था कि देश की स्वतन्त्रता प्राप्त करने में ध्येय साधन का औचित्य स्थापित करता है और वह प्रत्येक साधन जो मातृभूमि को राजनीतिक स्वतंत्रता दिलाने मे सहायक हो यथोचित है। श्री अरविन्द ने उनके सम्बन्ध में कहा था (बकिम तिलक, दयानन्द पृष्ठ ३६) ;' कि उनका नाम उस समय तक कृतज्ञता के साथ लिया जायेगा जब तक देश को भूतकाल के प्रति गौरव की भावना है और भविष्य के प्रति आशा है।" मातृभूमि के लिए कष्ट उठाने के सबध मे अरविन्द ने तिलक के सम्बन्ध मे कहा था "तिलक बिना आवश्यकता के उपयोगिता रहित शौर्य प्रदर्शित करने के लिए नही वरन जब बलिदान देने और कष्ट उठाने का अवसर आता तो उसको कठोर साहस के साथ सहते और उसकी तनिक भी परवाह न कर मानो कुछ हुआ ही न हो पुन देश के कार्य मे लग जाते।

तिलक के सबध मे वन्देमातरम् ने अपने २९ दिसम्बर १९०६ के अक मे "भूत और भविष्य का पुरुष' शीर्षक लेख मे लिखा था 'तिलक शक्ति और साहस के भीम हैं वह एक ऐसे पुरुष हैं जो यह जानते हैं कि क्या करना चाहिए और उसे करते हैं। कैसा और किसका सगठन करना चाहिए और उस सगठन को करते हैं। किसका विरोध तथा प्रतिरोध करना चाहिए और उसका प्रतिरोध करते हैं। वे मूलत क्रियाशील व्यक्ति हैं और हमारी भावी राजनीतिक गतिविधियों का स्वरूप क्रियाशीलता होना चाहिए।"

शिवाराम महादेव पराजपे तिलक के अन्यतम विश्वसनीय मित्र तथा सहयोगी थे। उन दोनो ने मिलकर शताब्दियो की दासता के भयानक समुद्र को पार करने के लिए उस छोटी सी निर्बल नाव के मस्तूल और डांड को पकड़े रक्खा और उसको स्वतत्रता के प्रकाशवान तट पर ले आए।

१८९३ के बम्बई में हुए हिन्दू मुस्लिम दगे की पृष्ठभूमि में कुछ लोग यह अनुभव करने लगे कि सख्या में अधिक होने पर भी आवश्यकता एकता की है और उस भावना को उत्पन्न करने की आवश्यकता है जो आज नही है कि दगो मे प्रतिद्वन्दी जिस निर्ममता से आक्रमण करते हैं उतनी ही निर्ममता से प्रत्याक्रमण किया जावे।

अतएव यह अत्यन्त आवश्यक था कि लोग अपने को उस गतिहीन जीवन से निकाल बाहर करने के लिए सगठित करें तथा विस्तृत क्षेत्र में क्रियाशील हों। इस सम्बन्ध में सबसे पहली और सबसे महत्वपूर्ण शर्त जो पूरी करनी थी यह थी कि जहां तक सभव हो धन, शिक्षा, जाति, धर्म आयु और लिंग के भेद जो एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से पृथक कर देते हैं मिटा दिए जावें।

गणपति उत्सव—यदि मुसलमानों का मुहरम है तो हिंदुओं का भी उस प्रकार का कोई उत्सव होना चाहिए। तिलक की प्रतिभा ने तुरन्त खोज निकाला कि यदि गणपति उत्सव को सभी लोगों के लिए बड़े पैमाने पर पुनर्जीवित किया जावे तो बहुत बड़ी शक्ति उत्पन्न की जा सकती है। गणेश उत्सव को तरुणों का बहुत सहयोग मिला और थोड़े ही समय में वह सभी वर्गों में फैल गया, शीघ्र ही उस उत्सव ने एक राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप ले लिया। गणेश भगवान द्वारा गजासुर का वध अत्याचार के ऊपर विजय का चिन्ह बन गया।

दूरदर्शी लोग इस जनउत्साह की सम्भावनाओं को देख रहे थे और वे निस्संकोच उसको राजनैतिक रूप देना चाहते थे। वे उसको राष्ट्रीय एकता का आधार बनाना चाहते थे। १८९६ में ३१ जुलाई के अंक में प्रभाकर ने लिखा

"क्या ब्राह्मणों का यह कर्तव्य नहीं है कि इन मेलों को आज की अपेक्षा अधिक उपयोगी बनाया जावे। गणपति उत्सव के दिनों में एक भाषण माला का आयोजन कर उत्सव का उपयोग राजनीतिक उद्देश्य के लिए क्यों न किया जावे। तत्कालीन राजनीतिक प्रश्नों पर गीतों की रचना क्यों न की जावे?

गणपति उत्सव के समय पर सभाओं और जलूसों में जो श्लोक बोले जाते या गीत गाए जाते थे वे ऐसे होते जिनमें राष्ट्रीय विचार और भावनाएं छिपी रहतीं और अर्थपूर्ण प्रस्तावों की ओर संकेत होता। उनमें से एक नीचे लिखे अनुसार था—

"शोक है कि तुमको दास बने रहने में लज्जा नहीं आती। ऐसी दशा में आत्महत्या करने का प्रयत्न करो। खेद है कि कसाइयों की भांति दुष्ट अपने नृशंस अत्याचारों के द्वारा गाय और बछड़ों का वध करते हैं। माता को उसके कष्टों से मुक्त करो, मर जाओ लेकिन अंग्रेज को मारो।'

स्पष्ट है कि ऊपर लिखे श्लोक में सर्वसाधारण का ध्यान उनकी दासता की ओर दिलाया गया है और उन्हें प्रोत्साहित किया गया है कि वे उसे समाप्त कर दें। वे मरेंगे परन्तु मरने में उन्हें अंग्रेजों को मारना चाहिए। वास्तव में यह राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए सर्वसाधारण को हिंसा का मार्ग अपनाने के लिए खुला हुआ आह्वान था।

जब गणपति उत्सव अपने उद्देश्य में सफल हो गया तो लोगों ने लोकमान्य तिलक का ध्यान शिवाजी की छतरी (समाधि) की जर्जर दशा की ओर दिलाया जिनकी मृत्यु १४ अप्रेल १६८० को रायगढ़ के किले में हुई थी। तिलक ने उस कार्य को अपने आंदोलन में अधिक तेज उत्पन्न करने के लिए एक औजार के रूप में काम में लिया और शिवाजी की छतरी की मरम्मत करना शुरू करदी। उन्होंने सर्वसाधारण के सामने इस प्रश्न को इस भावना सहित रक्खा कि महाराजा शिवाजी का उसी दुर्ग में १६७४ में राज्याभिषेक हुआ और जालना के युद्ध के उपरान्त उनके पार्थिव अवशेष अर्थात शरीर उसी दुर्ग में चिरनिद्रा में सो गया। सर्वसाधारण ने लोकमान्य तिलक की इस अपील का उत्साह के साथ समर्थन किया। उनकी अपील ने सर्वसाधारण की आधुनिक समय में उस महान वीर के प्रति श्रद्धा को पुनर्जागृत कर दिया जिसने मुस्लिम साम्राज्य के मध्य में हिन्दू राज्य की स्थापना की थी। इस प्रयत्न के फलस्वरूप रायगढ़ में पहली बार १७ मार्च १८९५ को प्रथम शिवाजी उत्सव मनाया गया।

शिवाजी उत्सव —यही तर्क संगत था कि शिवाजी की स्मृति को पुनः जागृत करने के लिए उत्सव का सम्बन्ध उनके राज्याभिषेक से जोड़ा जावे और उनकी स्मृति के उत्सव को शान से मनाया जावे। इस प्रयत्न का परिणाम यह हुआ कि शिवाजी उत्सव समस्त देश में बड़ी धूमधाम और स्वेच्छा से मनाया जाने लगा। इस उत्सव से देश में ऐसा उत्साह उत्पन्न हुआ जो कि उसको चलानेवालों की आशा से बहुत अधिक था। 'मुम्बई वभव' पत्र ने अपने ६ अप्रेल १८९६ के अंक में लिखा "कि शिवाजी उत्सव देश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर छूत के रोग की तरह तेजी से फैल रहा है।"

इस आंदोलन के साथ साथ महाराष्ट्र और एक सीमा तक बंगाल के तरुणों में व्यायाम और शारीरिक विकास के लिए संगठन स्थापित किए और उनके माध्यम से शारीरिक विकास की ओर विशेष ध्यान दिया। परिणाम स्वरूप 'मित्र मेला' जैसे संगठन बम्बई में स्थापित हुए जिसका नाम बाद में बदल कर 'अभिनव भारत समिति' कर दिया गया।

अतः शिवाजी के जीवन की अन्य घटनाएं पीछे छोड़ दी गईं शिवाजी के मुस्लिम शक्ति को परास्त कर एक स्वतन्त्र हिन्दू राज्य की दृढ़ स्थापना के साहसिक कार्य को आगे लाया गया। भारतीयों में एक वर्ग यह प्रश्न करने लगा कि 'एक स्वतन्त्र भारत क्यों नहीं' एक राज्य की स्थापना का नमूना और उस लक्ष्य को प्राप्त करने का तरीका उसके सामने था दोनों का ही सही प्रतिनिधित्व महाराज शिवाजी के व्यक्तित्व में होता था।

११ अप्रेल १८९६ के "सुधाकर" ने लिखा कि इस अनोखी घटना का क्या कारण है देश में शिवाजी उत्सव के लिए जो अपूर्व उत्साह है इसका कारण है

'स्पष्ट है कि आज का समय शिवाजी के समय के ही समान है। शिवाजी का प्रादुर्भाव उस समय हुआ जबकि हिन्दू धर्म असहिष्णु मुस्लिम शक्ति के कारण भयकर खतरे में था और शिवाजी के जीवन का लक्ष्य था राष्ट्र के धर्म की रक्षा करना और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता को पुनःस्थापित करना। आज हमें दूसरे शिवाजी की ओर आवश्यकता है। परन्तु उसका लक्ष्य पहले से थोड़ा भिन्न होगा। आज हमारी शिकायत यह नहीं है कि हमारे धर्म पर आघात किया जाता है परन्तु हमारा कष्ट है प्रतिदिन महारानी विक्टोरिया के सनकी अधिकारियों के बढ़ते हुए अत्याचार।"

१६ अप्रेल, १८९६ के "पूना वभव" ने इसी बात को इन शब्दों में दोहराया 'जनता उन्हीं कटु अत्याचारों की शिकार हो रही है।"

शिवाजी ने जिस प्रकार अफजल खां को मारा उसके सम्बन्ध में एक कटु विवाद उठ खड़ा हुआ। शिवाजी ने जो किया क्या यह दुष्कृत्य या पाप था या नहीं। यह विवाद बहुत तेजी से उठा और प्रति वर्ष यह उसी तेजी से उठता था। शिवाजी उत्सव के सम्बन्ध में जो सभाएं होतीं उनमें जो भाषण होते उनमें आक्रमणकारी राष्ट्रवाद की ध्वनि गूंजती और इस बात पर खेद प्रकट किया जाता कि देश पर विदेशियों का प्रभुत्व है।

१५ जून १८९७ के 'केसरी' में लोकमान्य तिलक के भाषण का जो सारांश प्रकाशित हुआ वह नीचे लिखे अनुसार था।

'हम यह मानकर चलें कि शिवाजी ने 'अफजलखां' को एक पूर्वसुनियोजित

योजना के अनुसार मारा। प्रश्न यह है कि महाराजा का यह कृत्य अच्छा था या बुरा था। इस प्रश्न को पेनेल कोड (दण्ड संहिता) के दृष्टिकोण अथवा मनु और याज्ञवल्क्य की स्मृतियों की मान्यताओं के आधार पर अथवा उन नैतिक सिद्धान्तों के दृष्टिकोण से नहीं देखना चाहिए जो कि पूर्वी या पश्चिम की दर्शन प्रणालियों द्वारा उद्घोषित हुए हैं। समाज को नियंत्रित करने के लिए जो नियम बनाए जाते हैं वे हम जैसे साधारण जनों द्वारा आचरण के लिए होते हैं। किसी भी व्यक्ति ने आज तक ऋषियों के वंश परिचय अथवा उनके वंश के इतिहास को खोजने की चिंता नहीं की और न कोई व्यक्ति राजा को दोषी ठहराने का प्रयत्न करता है। महापुरुष शास्त्रों के साधारण नियमों के ऊपर होते हैं। इन सिद्धांतों की दृष्टि उस स्तर या ऊंचाई तक नहीं पहुंच सकती जहां कि महापुरुष खड़े होते हैं।

'अफजल खां को मारने में क्या उन्होंने पाप किया। उसका उत्तर महाभारत में मौजूद है। भगवत गीता में भगवान कृष्ण ने अपने बड़ों और बधिर बांधवों को भी मारने का परामर्श दिया है। जब तुम कोई काम उसके फल को चाहे बिना करो तो उसका कोई पाप नहीं होता। शिवाजी महाराज ने अपने स्वार्थ के लिए अफजलखां' को नहीं मारा। उन्होंने अफजलखां को जनहित के न्यायपूर्ण उद्देश्य से मारा। यदि चोर किसी के मकान में घुस आवें और उसकी कलाइयों में उन्हें मार भगाने की शक्ति न हो तो उसे बिना आत्मिक ग्लानि के उन्हें मकान में बन्द कर देना चाहिए और खड़े खड़े जला देना चाहिए।

सब शक्तिमान भगवान ने म्लेच्छों को नामपत्र लिख कर भारत पर शासन करने का कोई राजलेख नहीं दे दिया था।

महाराजा शिवाजी ने उन्हें अपनी पितृभूमि से निकाल बाहर करने का प्रयत्न किया था और उसमें कोई व्यक्तिगत लोभ का पाप नहीं था। अपनी दृष्टि को कुएं के मेंढक की भांति सीमित मत करो। पेनेल कोड को नीचे छोड़ दो और भगवतगीता के वातावरण के उच्चतम शिखर पर चढ़ो।

उसी सभा में अन्यों के द्वारा जो भाषण दिए गए उसका सार नीचे लिखा था

"प्रत्येक हिन्दू प्रत्येक मराठा को फिर वह किसी भी दल का क्यों न हो शिवाजी उत्सव पर प्रसन्न होना चाहिए। हम अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं और यह भयानक बोझ हम सब मिल कर ही अपने ऊपर से हटा सकते हैं। यह कभी उचित नहीं होगा कि हम किसी भी व्यक्ति के मार्ग में रुकावट डालें जो कि सच्चे हृदय से उस भयंकर बोझ को उठाने का प्रयत्न कर रहा हो और जो तरीका वह ठीक समझता है उस काम को सम्पन्न करने के लिए अपना रहा हो। यदि कोई देश को ऊपर से पीस रहा हो तो उसे काट डालो लेकिन दूसरों के मार्ग में रोड़े न अटकावो

दूसरे व्यक्ति ने लगभग इन्हीं शब्दों में कहा जिन लोगों ने फ्रांस की राज क्रांति में भाग लिया उन्होंने इस बात को अस्वीकार किया कि उन्होंने हत्याएं की उन्होंने दावा किया कि वे अपने मार्ग के केवल कांटों को हटा रहे हैं। यही तर्क महाराष्ट्र के सम्बन्ध में क्यों लागू नहीं किया जाता।

शिवाजी सम्बन्धी श्लोकों में नीचे लिखे अनुसार कार्य करने के लिए लोगों का

आह्वान किया गया।

'शिवाजी की कथा को तोते की भांति रटते रहने से स्वतन्त्रता प्राप्त नही होगी। शिवाजी और बाजीराव की भांति साहसिक कार्यों को करना होगा। यह जानकर तुम सभी भद्र लोगो को तलवार और ढाल उठानी होगी। हम शत्रु के अगिणत शीशो को काटेंगे। सुनो हम राष्ट्रीय सग्राम म रणभूमि म अपने जीवन को खतरे में डालकर लड़ेंगे। हम पृथ्वी पर अपने उन शत्रुओ का रुधिर बहायेंगे जो हमारे धर्म को नष्ट करते हैं हम मार कर ही मरेंगे।"

इन सभाओं का आरम्भ और समाप्ति शिवाजी सम्बन्धी श्लोको से होती थी। सड़को पर जलूस बनाकर लोग इस प्रकार के गीतो को गाते चलते थे और सवसाधारण के उत्साह की कोई सीमा नही थी। महाराष्ट्र के लोगो म चितपावन ब्राह्मण तरुण विशेष रूप से इस भावना से अभिभूत थे।

राष्ट्रीय एकता का विचार जो समान शत्रु के विरुद्ध सम्मिलित कार्यवाही करने के लिए अत्यन्त आवश्यक था उस पर भी उचित और आवश्यक बल दिया जाता था। २८ अप्रैल १८९६ को केसरी' ने लिखा —

"राष्ट्रीय एकता की प्रक्रिया जिसके बीच से हम इस समय निकल रहे हैं शिवाजी उत्सव को मनाने से और अधिक विकसित होगी। जिसम सभी भारतीय फिर वे किसी भी जाति और धम के क्यो न हो भाग ले सकते हैं।

२५ जून १८९६ के 'महाराष्ट्र मित्र' ने भी अपने लेख में लगभग इसी विचार को प्रतिध्वनित किया था।

' सभी सच्चे मराठों को एक सूत्र बध जाना चाहिए यदि वे चाहते हैं कि मातृभूमि विदेशियो की दासता के जुये के निमम अत्याचारों से मुक्त हो।"

गणपति और शिवाजी उत्सव उस नई भावना के पूर्वाभास थे जो भारत के अन्य भागों में विशेषकर बगाल म फल रही थी। शिवाजी उत्सव ५ जून १९०६ को कलकत्ता में मनाया गया और उस सम्बन्ध मे कलकत्ता मैदान में एक बहुत बडी सभा हुई। आगे के वर्षों मे इन उत्सवो का बढता हुआ प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगा। इसका प्रभाव साधारण जन पर भी पडा जिन्होने सगठन शक्ति विदेशी कुशासन के विरुद्ध प्रतिरोध और स्वतन्त्रता के लिए आत्मत्याग और बलिदान की अद्भुत क्षमता का प्रदशन किया।

पूना का प्लेग और उसके पश्चात (१८९५-९७)

जबकि गणपति तथा शिवाजी उत्सव अपना जागरण काय कर रहे थे दिसम्बर १८९६ में अत्यन्त भयकर रूप में प्लेग के फूट पडने से बम्बई म राजनीतिक स्थिति मे अप्रत्याशित मोड आ गया। वह छूत का रोग वन की अग्नि की भांति एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलता गया और बहुत थोडे समय मे ही बम्बई प्रात का अधिकाश भाग उस रोग से आक्रान्त हो गया। सरकार ने अन्य छूत के रोगो को रोकने के लिए जो साधारण कदम उठाये जाते थे इसको रोकने के लिए भी उठाए परन्तु वे इस भयकर दानव (प्लेग) को रोकने मे पूर्णत असफल रहे और बहुत बडे क्षेत्रफल में उसके कारण विध्वस और विनाश का दृश्य उपस्थित हो गया।

अपने प्रयत्नों म नितात असफल हो जाने पर सरकार ने ४ फरवरी १८९७ को पारित छूत के रोगो सम्बन्धी अधिनियम के अन्तगत विशेष अधिकारो का उपयोग कर

प्लेग को फैलने से रोकने के लिए कदम उठाए। स्वय में सरकार का यह काय अपत्ति जनक नही था और तिलक जी के अनुयायियो ने भगवान के कोप के रूप में उस भयंक प्लेग को देखा।

सरकार ने सबसे पहला कदम प्लेग को फैलने मे रोकने के लिए प्लेग से पीडि व्यक्तियो को घरों से पृथक करने का उठाया। परन्तु उस अधिनियम को जिस तर लागू किया गया वह उसका अत्यन्त वीभत्स रूप था। उसको इतनी निममता औ हृदयहीनता से लागू किया गया कि लोग उसको प्लेग के रोग से भी अधिक खतरना तथा भयानक समझने लगे। लोगो के कष्टो में और अधिक वृद्धि हो गई। जब 'र नाम के अधिकारी को जो सतारा म सहायक जिलाधीश के रूप में निदयी औ अत्याचारी अधिकारी के रूप में विख्यात था उस अधिनियम को लागू करने के लि नियुक्त कर दिया गया।

इस सम्ब ध मे रैंड के पूव इतिहास के बारे मे सक्षेप मे यहा लिख देना अनुप युक्त नही होगा —२७ सितम्बर १८९४ को तेरह नेता जो सब ब्राह्मण थे सतारा जिल की वाई तहसील में जेल में भेजे गए जहा रैंड सहायक जिलाधीश था। उन तेरह में तीन बैंकर थे एक नगरपालिका के अध्यक्ष थे दूसरे लोकल बोड के अध्यक्ष थे। उ सबों पर यह दोषारोपण था कि उ होंने जिलाधीश की आज्ञा की अवहेलना कर बा बजाए। यद्यपि वहा इसके फलस्वरूप न कोई अशाति हुई और न दगा ही हुआ कोई सर नही फूटे या हाथ नहीं टूटे। वह आज्ञा स्वय में गरकानूनी थी और उ मुकदमें में रैंड का फैसला उसके वास्तविक स्वरूप को प्रगट करता है। उसी के शब्द म सुनिए— यह मुझ से छिपा नही है कि यह सभी लोग ऊची जाति के सम्भ्रा परिवारो के हैं औरो की अपेक्षा कारावास के कष्टो और होनेवाली अधोगति को अधिक अनुभव करेगे इसलिए उन पर जुरमाना करना में पर्याप्त दण्ड नही मानता औ मैं इस निणय पर पहुँचा हूँ कि उनको थोडे समय के कारावास का दण्ड देना ठीक रहेग और सभी आवश्यकताओं को पूरा कर देगा।"

जिस प्रकार इस अधिकारी ने अपनी कायवाही आरम्भ की उससे प्लेग प्रभावित क्षेत्रों के निवासियों म भय और आतक छा गया। २२ फरवरी १८९७ क 'दनयान प्रकाश' ने पूना के अस्पताल में असतोष और अपर्याप्त प्रबध तथा कठोर नियम के विरुद्ध असतोष व्यक्त किया जिससे जनता के मस्तिष्क मे अशाति की भावना उत्पन्न हो गई। उस पत्र ने १५ माच १८९७ को लोगो द्वारा जो कष्ट और कठिनाई उठानी पडी उसका चित्र इस प्रकार दिया— 'सडकें रोक दी गई उन पर किसी को भी नहीं चलने दिया जाता था 'रैंड की उपस्थिति म दूकानो को तोडकर खोला गया।" 'सारी कायवाही इस प्रकार की गई मानो किसी विजित नगर को भ्रष्ट भ्रष्ट किया जा रहा हो। जिन व्यक्तियो पर सदेह हो गया उ हें अथवा दिखते हुए स्वस्थ व्यक्तियो को भी सेना के कठोर घेरे में पृथक्करण शिविर मे इस प्रकार ले जाया गया मानो वे युद्ध के ब दी हो।'

'देश मित्र' के अनुसार (११ माच १८९७) 'एक क्षेत्र' 'बद्धवार पैठ' और सुखराव' को दो सौ पदल सनिकों और एक सौ अश्वारोही सनिको द्वारा घेर लिया गया। १५ माच १८९७ दनयान सागर' ने लिखा 'पुरुषो, स्त्रियो और बच्चा को सनिक रक्षकों की निगरानी में शिविर मे ले जाया जाता। उनके आगे और पीछे

सिपाही चलते। उनको नंगे सिर और नंगे पैर ले जाया जाता मानो, वे डाकू या चोर हो।" यह ठीक ही था कि लोगों ने पानी में डूब कर मरना प्लेग के अस्पताल में ले जाए जाने की अपेक्षा अधिक पसंद किया।

"स्त्रियों और पुरुषों की तलाशी लेने का तरीका अत्यन्त घृणात्मक और अपमानजनक था। पुरुषों को दूसरों के सामने बिलकुल नग्न कर दिया जाता है और देर तक नंगे खड़े रक्खा जाता है। स्त्रियों से अपनी चोली को खोल देने और अपने वस्त्रों को ऊपर उठाने के लिए कहा जाता है"

इस कार्यवाही का सभी ओर से घोर विरोध हुआ और 'दनयान प्रकाश' १२ अप्रैल १८९७ के अनुसार 'रैंड' से एक प्रतिनिधिमंडल मिला और उसको बतलाया कि स्त्रियों की इस प्रकार प्रस्तावित जांच से भारतीयों की भावनाओं को गहरा धक्का लगेगा। रैंड ने कहा कि पर्दानशीन स्त्रियों के प्रति इस नियम को लागू नहीं किया जावेगा परन्तु उसने तुरंत प्रतिनिधि मंडल को चेतावनी दे दी कि पर्दानशीन स्त्रियों से उसका अर्थ केवल मुस्लिम स्त्रियों से है। भारतीयों के घरों का निरीक्षण दिन के समय ही किया जावेगा, अतएव उसने हिंदू तथा अन्य जातियों की स्त्रियों को इस नियम से छूट देना अस्वीकार कर दिया, क्योंकि उसका कहना था मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य जातियों के मकानों में जांच के लिए पर्याप्त प्रकाश नहीं होता।

'अमृत बाजार पत्रिका' ने २० अप्रैल १८९७ के अंक में लिखा—अनेक व्यक्ति प्लेग के अस्पताल में इस संदेह में ले जाए जाते हैं कि उन्हें प्लेग है अथवा प्लेग के चिन्ह प्रगट हो गए हैं और उनके संबंधियों को तुरंत पृथक्करण शिविर में भेज दिया जाता है। उनके बिस्तरे और कपड़े जला दिए जाते हैं। मकानों को धुयें और गैस से शुद्ध किया जाता है और उनकी सफेदी कराई जाती है। इसके अतिरिक्त कानून के अन्तर्गत जितनी भी कठोरता बरती जा सकती है बरती जाती है। जब यकायक एक या दो दिन के कारावास के बाद यह ज्ञात होता है कि बिना यथेष्ठ कारण के ही उन्हें अस्पताल में ले जाया गया है तो उन्हें 'रोग मुक्त हो गए' कहकर छोड़ दिया जाता है। सच तो यह है उन अभागे व्यक्तियों को उनके बुरे ग्रहों अर्थात् अस्पताल से छुटकारा मिलता है। परन्तु उनके संबंधी नहीं बच सकते क्योंकि वह रोग-ग्रस्त गृह से ले जाया गया था।

कठिन स्थिति का सामना करने में उत्साहपूर्ण सरकार ने सभी विरोध पत्रों वैकल्पिक सुझावों तथा प्रतिवेदनों की अवहेलना करदी और दुराचरण पर संतोष व्यक्त करती रही। लोकमान्य तिलक तथा अन्यों ने उन सरकारी प्रयत्नों को अत्यन्त निम्न श्रेणी के भयानक जुल्म या अत्याचार की संज्ञा दी जिन्हें रैंड अत्यंत नरमी और दया का व्यवहार] मानता था। लोकमान्य तिलक तथा अन्य नेताओं ने ४ मई १८९७ को खुले आम कहा कि 'प्लेग के नियंत्रण के लिए आज्ञा को कार्यान्वित करने के लिए एक संदेहशील, क्रोधी और अत्याचारी रैंड को चुन कर सरकार ने उन आज्ञा की कठोरता को बहुत अधिक बढ़ा दिया है।'

सिंह के समान हृदय वाले लोकमान्य तिलक के लिए यह सारा प्लेग कांड देश वासियों के लिए अत्यन्त दुर्भाग्य के समान था। जहां एक ओर उन्होंने सरकार की नीति और उसके क्रियान्वय पर कठोर आक्रमण किया वहीं उन्होंने अपने देशवासियों और विशेषकर धनी व्यक्तियों और स्वयंभू नेताओं पर भी कठोर प्रहार किया। ४ मई १८९७ को उन्होंने केसरी में लिखा, "क्या भारतीय समाज के नेताओं का यह कर्तव्य

नहीं था कि वे सनिकों द्वारा किए गए अवधानिक और गैरकानूनी कार्यों के विरुद्ध कोई उपाय निकालने जिससे कि उनके साथी नागरिक प्लेग और घर घर योरोपियन सनिक रूपी रोग के पहुँचने से बचाए जा सकते। क्या वे अपने आपद्ग्रस्त भाइयों की व्यावहारिक सहायता करने के लिए कम से कम अपने स्थान पर डटे रहे?" उसने स्वय ही उत्तर दिया नहीं उन्होंने नगर से भागकर अपनी रक्षा करने का प्रयत्न किया और दूर से ही पूना के नागरिकों को सनिकों के अत्याचारों को सहन करने के लिए प्रोत्साहित करते रहे।

तिलक को इस बात का गहरा क्षोभ था कि जब सरकार अत्याचारी हो उठी तो भी जनता में उसे दण्डित करने की क्षमता और योग्यता नहीं थी। पूना के समाचार पत्रों ने लोगों का आह्वान किया कि कम से कम तुमको अपनी सम्पत्ति की रक्षा करने तथा स्वय को तथा अपने भाई बहिनों को अपमान से रक्षा करने के लिए आन्दोलन खड़ा करना चाहिए। ३ मई और पुन १६ मई १८६७ को 'सुधारक' ने खेद के साथ लिखा, 'लज्जा की बात है कि पृथ्वी पर एक भी ऐसा देश नहीं है जिसके निवासी हमारे जसे नपुसक हों' पत्र ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि जो कानून की अवहेलना करते हैं उन्हें कानून की शिक्षा दो' और यदि सनिक गैरकानूनी काम करते हैं तो उनका विरोध करने में सकोच मत करो। पत्र ने लिखा कि पूनावासियों को अत्याचार का विरोध करने में महाराष्ट्र के सामने एक उदाहरण रखना चाहिए और ग्रामीणों को 'अपनी स्त्रियों की अपमान से तथा अपनी सम्पत्ति के लूटे जाने से रक्षा करने के लिए आत्मरक्षा करने की तयारी करना चाहिए।

महाराष्ट्र मित्र ने २९ अप्रल १८६७ के अक में लिखते हुए जहां मराठों के उन वीरोचित कार्यों की याद की और सराहना की जिन्होंने मुगल साम्राज्य के मध्य भारत में हिंदू साम्राज्य की स्थापना की वहां इस बात पर खेद प्रकट किया " कि उनके पतित वशज आज उन सनिकों के सामने भयभीत होकर भागते हैं जबकि वे घरों का निरीक्षण करने आते हैं और उनके अत्याचारों का तनिक भी विरोध नहीं करते।"

यह स्पष्ट हो गया था कि भारत के क्रांतिकारी इतिहास में वह क्षण आ गया था जब कि शांतिप्रिय भारतीय खुले रूप से बिना भय के आत्मरक्षा के लिए सरकार के कुकृत्यों के विरुद्ध प्रतिरोध और प्रतिशोध की बात करने लगे।

सावधान विदेशी पत्रकारों को इस सुझाव में जो राजनीतिक आन्दोलन को मोड़ देने की शक्ति थी उसको देख लेने में देर नहीं लगी। उन्होंने खुले रूप में कहा कि तिलक के परामर्श का परिणाम होगा शांतिभग और सिरों का टूटना। लोकमान्य तिलक ने स्पष्ट शब्दों में इन शरारत भरे सकेतों को चुनौती दी और कहा " मैं जो ईमानदारी से विश्वास करता हूं वह यह है कि प्लेग के सबध में जो पग उठाए गए हैं उनकी कठोरता इस जन असतोष के लिए उत्तरदायी है न कि वे लेख जो समाचारपत्र में छपे हैं। सरकार ने लोगों की शिकायतों की जाच के लिए जो आयोग बठाया उसकी रिपोर्ट इस प्रकार थी— " घर घर जाकर प्लेग के रोग से पीड़ितों के निरीक्षण करने की पद्धति लोगों के लिए नितान्त असहनीय थी। प्लेग को रोकने के उपायों को वे प्लेग से भी अधिक भयकर मानते थे।"

उनका एक दूसरा बुरा रूप यह था कि ऊचे और नीचे सभी लोगों को एक साथ अविवेकपूर्ण तरीके से एक ही शिविर में रक्खा गया। बम्बई के देशभक्तों ने

रड के नृशंस अत्याचारी कुकृत्यों के प्रति अपने क्षोभ की भावना को प्रदर्शित करने मे देरी नही की। उन अत्याचारो के जनक को शीघ्र ही दण्डित किया गया। २२ जून १८६७ को उसको दण्ड देने का दिन आया। उस दिन पूना मे महारानी विक्टोरिया के राज्याभिषेक के साठवें वार्षिक उत्सव पर रड तथा एक दूसरा अग्रेज किसी की गोली के शिकार हो गए।

रड की हत्या को भारत में लोगो ने एक छुटकारे और सतोष की भावना के साथ सुना। २७ जून १८६७ के अक में 'रास्त गोफ्तार' ने लिखा—'यह दिन के प्रकाश की भाति स्पष्ट है कि हत्यारा ने उन व्यक्तियो का रुधिर बहाया जिन्होंने नगर में अत्याचारपूर्ण कठोरता से पृथक्करण की नीति को लागू किया था।" रैड की हत्या पर पूना के अग्रेजो के क्रोध और आतक की भावना का १ जुलाई १८६७ के 'जामए जमशेद' के नीचे लिखे वाक्य मे प्रतिबिम्ब झलकता है पूना के अग्रेज पागल हो उठे हैं। अब उन्हें इस बात का अनुभव हुआ है कि अपने जाति भाई का रुधिर बहाया जाता है तो हृदय को कैसी गहरी चोट लगती है।"

यह विशेष रूप से ध्यान देने की बात है कि १८६७ के मध्य से १८६६ के पूर्वार्ध भाग मे जो घटनाए घटी उन्होने विशेषकर उन दुष्ट अधिकारियो और गुप्तचरो के विरुद्ध प्रतिशोध के युग का शुभारम्भ किया कि जो अपना बलिदान देकर भी देश द्रोहियो और अत्याचारियो को एक पाठ पढाना चाहते थे। १८६६ मे मित्र मेला ने भारत की स्वतत्रता को प्राप्त करने के लिए सशस्त्र क्राति और खुला विद्रोह करने की नीति को स्वीकार किया। १६०४ मे उसका नाम परिवर्तन कर 'अभिनव-भारत" कर दिया गया। उसका दृष्टिकोण विस्तृत और उसका कार्यक्षेत्र केवल नासिक और बम्बई ही नही उसके बाहर विस्तृत क्षेत्र अर्थात सम्पूर्ण भारत स्वीकार किया गया।

गौरवपूर्ण प्रतिशोध (१८६७ ६६)

जनता द्वारा विरोध करने और चेतावनी देने के बावजूद उसकी घोर उपेक्षा कर निशस्त्र जन सख्या पर अत्याचार करने का कठोर प्रतिशोध लिया गया यह उसकी कहानी है। जिस ओर से प्रतिशोध का यह कार्य हुआ वह तो नितान्त अनापेक्षित नहीं था परन्तु जिस प्रकार प्रतिशोध लिया गया वह अत्याचार करनेवालो और अत्याचार से पीडितो दोनो की कल्पना से बाहर था, और उन्हें उसका स्वप्न मे भी भान नही था। उसने प्रतिशोध लेने के लिए जिस प्रविधि का राजनीतिक क्रातिकारी क्षेत्र मे समावेश किया वह घातक रूप से प्रभावकारी और द्रुत था। यद्यपि भारत में ब्रिटिश शासनकाल मे यह प्रथम क्रातिकारी प्रतिशोध था परन्तु उसके निष्पादन की श्रेष्ठता मे वह अत्यन्त श्रेष्ठ उदाहरणो में से एक था।

दामोदर चापेकर—दामोदर हरी चापेकर दक्षिणी चितपावन ब्राह्मण पूना का निवासी था। वह कुशल खिलाडी था और खेलकूद मे उसकी गहरी रुचि थी। व्यायाम तथा शारीरिक प्रशिक्षण द्वारा उसने अटूट सहनशक्ति अर्जित करली थी। सैनिक प्रशिक्षण के लिए उसकी रुचि थी, दो बार उसने सेना मे प्रवेश पाने की चेष्टा की किन्तु वह दोनो बार असफल रहा। उग्र राष्ट्रवादी होने के साथ साथ उसका अन्तर देशभक्ति की भावना से ओत प्रोत था। एक बार फरग्यूसन कालेज के मदान में उसने युवको को सम्बोधित करते हुए भाषण दिया कि फुटबाल और क्रिकेट

खेलना छोड़कर तलवार चलाना, पत्थर से निशाना लगाना सीखना चाहिए और अस्त्र शस्त्र चलाने में निपुणता प्राप्त करनी चाहिए। उसने विद्यार्थियों और अन्य तरुणों को कवायद, तथा सैनिक क्रीडा तथा सैनिक शिक्षण देने के लिए एक संगठन खड़ा कर लिया जहां तरुण उसके निर्देशन में सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त करते थे।

रैंड के अत्याचारों के कारण जो जनता को अत्यंत पीड़ा और अपमान का जीवन व्यतीत करना पड़ रहा था उससे उसका अंतर मर्म तक पीड़ा से भर गया। इस अत्याचार से पीड़ित जनता को छुटकारा दिलाने के सभी उपाय निष्फल हो चुके थे उसके धैर्य का बांध टूट चुका था अतएव उसने रैंड का प्लेग सम्बन्धी कार्य का संचालन करने के काल में ही वध कर देने का विचार किया। १८९७ के मई मास के अन्तिम दिनों में वह बम्बई से पूना आया। उसने एक लाइसेंसदार दूकानदार से बारूद और छर्रे खरीदे। २५ मई तक वह अपने लक्ष्य को पूरा करने के प्रयत्नों में लगा रहा और उस ऐतिहासिक दिवस पर उसने उन वस्तुओं का लाभदायक उपयोग किया। सौभाग्यवश उसकी योजना को अनुकूल परिस्थिति भी सहज ही सुलभ हो गई। लायकदिपुल के महादेवी के मन्दिर का पुजारी प्लेग के भय से मन्दिर छोड़कर *भाग गया था अतएव दामोदर ने स्थानापन्न पुजारी का कार्य स्वीकार कर वहां डेरा* जमा दिया। चौन्हवी बम्बई देशी घुड़सवारोंही सेना वहां मन्दिर की सुरक्षा के लिए नियुक्त थी। जबकि संतरी एक शवदाह क्रिया में सम्मिलित होने के लिए गए और वहां कोई नहीं रहा तो दामोदर दो मार्टिनी हैनरी राइफिल (क्रम संख्या ४६८ और ५३२) तथा एक तलवार उठाकर चलता बना। उसने उन राइफलों के उपयुक्त कारतूस प्राप्त करने का प्रयत्न किया परन्तु असफल रहा तब उसने अपना ध्यान पिस्तौल तथा अन्य अस्त्र शस्त्रों की ओर केंद्रित किया कि जिन्हें उसने अन्य स्थानों से प्राप्त किया था।

जब रैंड पूना पहुंचा तो दामोदर और उसके साथी उसको अच्छी तरह से पहचानने के लिए उनमें से एक न एक लगातार रैंड का एक स्थान से दूसरे पर पीछा करता रहा। जहां रैंड जाता दामोदर का कोई न कोई साथी वहां अवश्य पहुंचता। दामोदर के सबसे छोटे भाई वासुदेव ने रैंड की आदतों और वह कहां जाता है उसका ध्यानपूर्वक अध्ययन किया। घटना के चार पांच सप्ताह पूर्व दामोदर रैंड की गाड़ी के साईस के पास गया और उससे प्रार्थना की वह रैंड से उसका साक्षात्कार करादे जिससे कि वह उसे नौकरी के लिए प्रार्थनापत्र दे सके। वह दो तीन बार इसी बहाने रैंड के बंगले गया। उसने दो बार वहां के डाकिए से रैंड के निवासस्थान का पता पूछा और जब उसको निश्चय हो गया कि वही रैंड का निवास स्थान है तब दामोदर और उसके दल ने अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिए विस्तार से उस पर विचार करना प्रारम्भ किया। महारानी विक्टोरिया के जुबली समारोह के दिन रैंड को एक पत्र मिला उसमें लिखा था 'आज तुम मार दिए जाओगे' परन्तु रैंड ने उस पत्र की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। जुबली समारोह का कार्यक्रम समाचारपत्रों में प्रकाशित किया गया था। दल के प्रत्येक व्यक्ति को उसके जिम्मे निर्धारित काम सौंप कर उसे यथास्थान नियुक्त कर दिया गया था। उस दिन की पिछली रात्रि को रैंड की गतिविधियों के ऊपर बहुत समीप से दृष्टि रखी गई थी। भवितव्यता वाले उस दिन २२ जून १८९७ को दल रैंड की खोज में कौन्सिल हाउस गया। दल ने रैंड की गाड़ी

की खोज की परन्तु उसकी गाडी वहा नहीं थी अन्य अधिकारियो की गाडियां वहा थी जो वहां आए थे। उसके उपरान्त वे सत मेरी के गिरजाघर गए और वहा उन्होंने रड को देखा। क्योंकि वहा बहुत अधिक भीड थी तथा अन्य परिस्थितिया भी अनुकूल नहीं थी अतएव उस क्षण कोई कार्यवाही नहीं की गई। इसके उपरान्त दल के सदस्य सायकाल साढे सात बजे राजकीय भवन के समीप गनशखड आए और उन्होने रैंड को अपनी गाडी म अन्दर जाते देखा परन्तु वहा की तेज रोशनी की चमक उनके लिए सुविधाजनक नहीं थी।

रात्रि के ११ ३० पर दामोदर राजकीय भवन के फाटक पर डट गया। बालकृष्ण को सडक के एक किनारे कुछ दूर पर जमा दिया गया। उन लोगो के पास दामोदर और माधव विनायक रानाडे द्वारा लाए हुए पिस्तौल तथा तलवारें थी। हथियारो को उन्होंने अपने वस्त्रो मे सावधानी स छिपा रखा था। तलवारो पर पुरानी पगडी को लपेट लिया गया था।

राजकीय भवन से जो भी योरोपियन बाहर निकलता दामोदर उसके मुख को ध्यान से देखता। जब रड बाहर निकला तो उसने उसे थोडी दूर सडक पर कुछ गज की दूरी तक जाने दिया। उसके पीछे पीछे थोडे अन्तर पर आयरस्ट की गाडी थी। जब रड की घोडा गाडी दामोदर से दस कदम आगे बढ गई तो वह गाडी के पीछे दौडने लगा और उसने अपने और गाडी के अन्तर को बढने नहीं दिया। वह दाड और दौड रहा था जब वह एक स्थान पर पहुँचा जो 'जमशेदजी जीजीभाइ' के पीले रगे हुए मकान के सामने था, बालकृष्ण ने सकेत दिया और चिल्लाया 'मारया-मारया" तब दामोदर सडक पर तेजी स दौड़ा और उसने रड की गाड़ी स अपने दस कदम के अन्तर को समाप्त कर दिया। गाड़ी का हुड चढ़ा हुआ था और पीछे का पल्ला नीचे बधा हुआ था वह कुछ समय तक गाडी के साथ दौडा और उसके पीछे चढ गया। उसने पल्ले को खोल लिया। उसने तुरन्त अपनी पिस्तौल निकाली तानी और पिस्तौल लगभग रैंड की पीठ से छू रही थी तभी उसने पिस्तौल दाग दी। आयरस्ट पति पत्नी लगभग सडक पर चौथाई मील की दूरी पार कर आए होगे, जबकि उन्होंने ठीक अपने सामने पिस्तौल की आवाज सुनी। एक फुर्तीला व्यक्ति रड की बग्घी क पीछे से कूदते हुए और दाई ओर भागते हुए दिखलाई दिया। श्रीमती आयरस्ट अपन पति से उस घटना का उल्लेख कर ही रही थी कि उनकी गाड़ी के पीछे से उसी समय रानाडे की पिस्तौल की गोली चलने की आवाज हुई और आयरस्ट मर कर श्रीमती आयरस्ट की गोदी में गिर पडा।

दल के आदमियो ने तलवारो को समीप ही एक पुलिया म फेंक दिया। वे बडी तेजी से खेता म से होकर भागे और बिना किसी के द्वारा देखे गए शहर मे पहुँच गए। उन्होंने सभी हथियारो को समीप के एक कुए में डाल दिया। दोनो व्यक्तियो को पकडने के लिए बडी तेजी से खोज की जाने लगी। दामोदर को ९ अगस्त को पकड लिया गया। अपने बयान में उसने कहा कि उसने सुधारवादी दल के कुछ गण्यमान्य व्यक्तियो के उत्साह को कम करने का प्रयत्न किया था। विशेषकर (१) गाडगिल का उत्साह भग कर दिया (२) 'सोदारक' एक मराठी दैनिक के सम्पादक को उसने पीटा था जिसने तिलक के विरुद्ध लिखा था (३) उसने कुलकर्णी एक अन्य सपादक को भी पीटा जिसने तिलक को गाली दी। उसने यह भी स्वीकार किया कि उसी

महारानी विक्टोरिया की मूर्ति पर कोलतार पोत दिया और उसके गले में जूतों की माला पहनाई। इसके अतिरिक्त उसने बम्बई विश्वविद्यालय द्वारा बोड हाउस ब्रिज के निकट मैट्रिक्युलेशन परीक्षा के लिए खड़े किए गए विशाल मंडप को आग लगाकर नष्ट कर दिया तथा पूना में सरकार द्वारा सरकारी अफसरों के मनोरंजन के लिए खड़े किए मंडप में आग लगाई।

रंड ३ जुलाई १८९७ को प्रातः ३-१८ पर मर गया और आयर्स्ट की तो तुरन्त ही मृत्यु हो गई थी। ९ अगस्त को दो व्यक्ति और पूना की इस दोहरी हत्या के संदेह में पकड़े गए और उन्हें बन्दीगृह में रख दिया गया। १४ अगस्त १८९७ को दामोदर को मजिस्ट्रेट के सामने उपस्थित किया गया।

दामोदर की गिरफ्तारी से मिलनेवाली जानकारी के परिणाम स्वरूप कई स्थानों की तलाशी हुई जिससे उनकी हत्या के लिए की गई तैयारी और उन्होंने जो हथियार इकट्ठे किए थे उनका पता चला। उस तलाशी में दो मार्टिनी हेनरी राइफलें, एक तलवार की बेंत, पांच बरल का एक रिवाल्वर दो भालों के फल, एक पिस्तौल, दो पीतल के कारतूस, चार चांदी की मूठवाली और दो सोने की मूठवाली तलवारें, एक बड़ा चाकू तथा चार गुप्तियां प्राप्त हुईं। प्रारम्भिक न्यायिक जांच के उपरांत दामोदर को धारा ३०२ ३०९ इंडियन पेनल कोड तथा ३१४ क्रिमिनल प्रोसीजर कोड के अन्तर्गत पूना फौजदारी सेशन अदालत के सुपुर्द कर दिया गया। सेशन अदालत ने २४ जनवरी १८९८ को मुकदमे की सुनवाई प्रारम्भ की इस बीच में ३१ जनवरी १८९८ को बालकृष्ण पकड़ा गया और उसके भाई पर भी उसके साथ दोषी होने का आरोप लगाया गया।

३ फरवरी १८९८ को जब जज ने ज्यूरी को अपनी राय बतला दी तो ज्यूरी के सदस्य अदालत छोड़कर परस्पर परामर्श करने के लिए चले गए। आपस में बातचीत करने के उपरान्त ज्यूरी ने अपना मत घोषित किया कि अभियुक्त हत्या के अपराधी नहीं हैं अपसहाय्य के दोषी हैं। उसके उपरांत एक असाधारण पद्धति अपनाई गई (अमृत बाजार पत्रिका ४ फरवरी १८९८) सेशन अदालत ने ज्यूरी से जिरह की और जिरह के बाद ज्यूरी ने अपनी राय बदली और कहा "सम्भवतः अभियुक्त हत्या के स्थान पर मौजूद था। कुछ और अधिक समय के उपरान्त और सम्भवतः और अधिक जिरह के बाद ज्यूरी ने उसके दोषी होने की घोषणा करदी।

दामोदर को मृत्यु दण्ड दिया गया। जब उसे जेल ले जाया जा रहा था तो वह प्रसन्न था उसने पूछा कि क्या इससे भी कोई ऊंचा दण्ड होता है। अपील करने पर उच्च न्यायालय ने २ मार्च १८९८ को मृत्यु दण्ड की पुष्टि कर दी।

जब वह फांसी के तख्ते पर ले जाया जा रहा था तो वह नारायण जय गोपाल हरी आदि देवताओं और भगवान के नाम का जाप करता जा रहा था। उसने जेल के अधिकारियों से प्रार्थना कर तिलक की भगवतगीता की एक प्रति मंगवा ली थी जिसे वह अपने हाथ में लिए हुए था।

दामोदर उस समय मृत्यु के सामने खड़ा था प्रातःकाल का समय था देर हो रही थी, समय हो गया था मजिस्ट्रेट को आने में देर हो गई तो दामोदर ने व्यंग में कहा कि मेरी अभी तक यह मान्यता थी कि ब्रिटिश राज्य में सदैव समय की पाबन्दी ... है क्योंकि उसके अधिकारियों को समय के पाबन्द होने के लिए वेतन दिया जाता है।

उस सारे समय बन्दी दामोदर अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में था, और योरोपियनों की समय की पाबन्दी के बारे में उसका व्यंग भरा कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वह साहस के साथ निधड़क होकर फांसी के तख्ते पर चढ़ गया। जब उससे पूछा गया कि उसे कुछ कहना है तो उसने कहा कि उसे कुछ नहीं कहना है। मृत्यु के सम्बन्ध में उसने कहा कि रैंड की पिस्तौल की गोली से मृत्यु हुई, अन्य लोग घोड़ों पर से गिर कर मरते हैं और मेरे भाग्य में फांसी से मृत्यु लिखी थी। उसने प्रसन्नतापूर्वक मृत्यु का आलिंगन किया। यह मृत्यु वास्तव में भारत के क्रांतिकारी आन्दोलन की सबसे पहली आहुति थी जो सर्वथा उसके गौरव के अनुकूल थी। वह अपने परिवार को सदेश देकर मृत्यु की चिर निद्रा में हंसते हंसते सो गया।

मृत्यु के आघात से भी दामोदर के हाथ से भगवतगीता की पुस्तक नहीं छूटी जिसे उसे फांसी के समय ले जाने की आज्ञा दे दी गई थी। वह मजबूती से पुस्तक को हाथ में पकड़े हुए थे जो कि ज्यों की त्यों उसके हाथ में थी। शव को इसी दशा में पुस्तक सहित दाह स्थल पर ले जाया गया। इससे पूर्व दामोदर ने कहा कि वह पिछली रात्रि को गहरी नींद सोया और वह सबा के हित के लिए शांति से मरना चाहता है।

दामोदर हरी छापेकर को यरवदा सेंट्रल जेल में १८ अप्रेल १८९८ को ६ बज कर ४० मिनट पर प्रात काल फांसी दे दी गई। उस भव्य आत्माहुति के दिन को समस्त राष्ट्र को अत्यन्त कृतज्ञतापूर्वक याद करना चाहिए था, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। कृतघ्न राष्ट्र उसे भूल गया।

बालकृष्ण— गनेशखिंड की घटना के उपरान्त बालकृष्ण पूना से निकल गया और भूमिगत होगया। सरकार ने दामोदर छापेकर के साथियों की गिरफ्तारी के लिए बीस हजार रुपए के पुरस्कार की घोषणा की। पुलिस का सदेह यह था कि वे बालकृष्ण के अलावा अन्य व्यक्ति भी थे। बालकृष्ण बड़े दिनों में हैदराबाद में गिरफ्तार होगया किन्तु ब्रिटिश न्यायालय में उसका मुकदमा हो सके इसमें थोड़ी कठिनाई हुई। निजाम सरकार ने १८६८ की प्रत्यार्पण-संधि की धारा ५ के आधार पर यह दावा किया कि ब्रिटिश अधिकारियों ने बालकृष्ण को उन्हें सुपुर्द करने के लिए जो प्रार्थनापत्र दिया है उसके समर्थन में केवल एक सह अपराधी द्वारा अपराध स्वीकरण मात्र उपलब्ध है जिसकी अन्य किसी प्रमाण से पुष्टि नहीं होती, अतएव बालकृष्ण का प्रत्यार्पण न्यायोचित नहीं है।

अन्त में यह मामला निजाम के सामने ले जाया गया और सर्व शक्तिमान रैजीडैंट ने हिज हाइनस निजाम से इस सबंध में बात की और इस मामले के महत्व और आवश्यकता को बतलाया। विशेष परिस्थितिवश निजाम सरकार को झुकना पड़ा उसके लिए दूसरा और कोई चारा न था। रजीडेंट ने बम्बई सरकार से प्रार्थना की कि वह घोषित पुरस्कार की आधी रकम अर्थात् दस हजार रुपए निजाम सरकार की पुलिस में वितरित करने के लिए दे दें।

बालकृष्ण के विरुद्ध १० फरवरी १८९९ को नगर दण्डनायक की अदालत में अभियोग आरम्भ हुआ। उस पर २२ जून की रात्रि को रैंड और आयर्स्ट को मारने का आरोप लगाया गया। नगर दण्डनायक ने मुकदमे को २२ फरवरी के लिए स्थगित कर दिया। अदालत में उसका भाई वासुदेव हरी छापेकर मिला जो अदालत में मौजूद था वह भाई को देखकर भावावेश के कारण द्रवित हो उठा। उसके भाई

को गले लगाना चाहा किन्तु उसे भाई से मिलने नहीं दिया गया। १८ मार्च १८९९ को जज ने बालकृष्ण को मृत्यु की सजा सुना दी। मृत्यु दण्ड की आज्ञा सुनकर बालकृष्ण ने प्रतिक्रिया स्वरूप कहा "बहुत अच्छा"।

रेंड और आयर्स्ट की हत्या से वासुदेव और रानाडे का सम्बन्ध स्थापित करने मे पुलिस को अपेक्षाकृत बहुत लम्बा समय लगा। समय समय पर वासुदेव को फर्राशखान पुलिस स्टेशन पर उन दो हत्याओ के बारे मे पूछताछ के लिए बुलाया जाता था। क्रमश उसे ज्ञात हो गया कि उसको दूसरे भाई के विरुद्ध गवाही देनी होगी। यह उसकी अपने भाई के प्रति अगाध स्नेह की भावना के विरुद्ध कठोर आघात था। उसका भाई उसके लिये एक मित्र, दार्शनिक ज्ञानदाता और गुरु तीनो ही था।

उसे यह ज्ञात हो गया था कि पुलिस के दो मुखबिर द्राविड़बन्धु उसके बड़े भाई दामोदर को पकड़वाने और उसे दंड दिलाने के लिए उत्तरदायी थे। वासुदेव यद्यपि आयु में बहुत छोटा किशोर था परन्तु उसने उन लोगो से जिन्होंने उसका सर्वनाश किया बदला लेने का निश्चय कर लिया। उसने दृढ़ निश्चयपूर्वक अपने कार्य को पूरा करने के लिए तैयारी शुरू करदी। सतर्कता और सावधानी को उसने त्याग दिया।

पुलिस का एक हैड कान्स्टेबिल रामा पाडू था। उसने इस मामले की छानबीन करने में बहुत उत्साह दिखलाया था और दामोदर की गिरफ्तारी में उसका बहुत बड़ा हाथ था। वासुदेव का ध्यान रामा की ओर था। वह उसको अपने कार्यक्षेत्र से सदैव के लिए हटा देना चाहता था। यह याद रखने की बात थी कि बालकृष्ण का भाग्य अधर में झूल रहा था और वह हैड कांस्टेबिल उस मुकदमे मे एक महत्वपूर्ण घटक था। ३ फरवरी १८९९ को जब कांस्टबिल अपने घर आ रहा था तो वासुदेव ने उस पर गोली चलाई परन्तु गोली घोडा दबाने से पहले ही अकस्मात बाहर निकल कर गिर गई और कान्स्टेबिल बच गया।

वासुदेव ने अपने एक निकट सम्बन्धी से कहा क्योकि उसे अपने भाई के विरुद्ध गवाही देनी होगी अतएव उसने उस रात्रि मे किसी को मारने का दृढ़ निश्चय कर लिया है। जो कुछ भी अभी तक किया गया उससे वे सतुष्ट नही थे। अतएव वे रामा पाडू की खोज मे निकले कि जिससे उसके जीवन का अन्त कर दिया जाय।

मुखबिर को उसका उचित देय— जैसा कि पिछली कई रातो मे हुआ वैसा ही ८ फरवरी १८९९ की रात्रि को हुआ जब कि द्राविड़बन्धु मारे गए। वासुदेव अपने मित्र के साथ रामजी के अपने प्रतिदिन के रास्ते पर गुजरने की प्रतीक्षा में खड़ा रहा परन्तु वह नही आया और उसको मारने की योजना को तिलाजलि देनी पड़ी। तब उनके मस्तिष्क मे विचार उठा कि द्राविड़ बन्धुओ को देखा जाये। जब ९ और १० बजे रात्रि के बीच वे द्राविड़ो के मकान पर पहुँचे तो द्राविड़ बन्धु ताश खेल रहे थे। उनसे दो व्यक्ति जो पंजाबी वेषभूषा मे थे मिले और उन्होने उनसे कहा कि सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस गणपति राव गणेश और रामचन्द्र से एक अत्यन्त गम्भीर आवश्यक तथा महत्वपूर्ण मामले पर बात करना चाहते हैं। गणेश ने उन दोनो से कहा कि वे आगे चलें वह खेल खतम कर आ ही रहे है।

दोनो व्यक्ति अपने चेहरे पर मुखौटा पहिनकर एक दीवार के पीछे द्राविड़ बन्धुओ की प्रतीक्षा कर रहे थे। अन्त में दोनो भाई नीचे उतरे और उन लोगो की ओर चले जो उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वे बहुत आगे नही बढ़े होंगे जबकि पिस्तौल

की गोली चलने की आवाजें सुनसान रात्रि में गूंज उठी। द्राविडो की माता जो कि पहले से ही अपने मन मे बहुत सशयशील और भयभीत थी बहुत जोर से चिल्लाई कि मेरे पुत्रो को मार डाला गया। द्राविडो के दो छोटे भाइ तुरत घटनास्थल पर पहुँच गए और उन्होंने देखा कि गणेश और रामचद्रराव बहुत गम्भीरता से जख्मी होगए हैं। गणेश घटना स्थल पर ही मर गया और रामचन्द्र दूसरे दिन मर गया।

गणेश शकर द्राविड सरकार का छापेकर बन्धुओ को पकडवाने, उनको दण्ड दिलाने और उनको फांसी दिलाने का मुख्य अवलम्बन था। उसका जीवन अपराधो से भरा हुआ था। वास्तव में उसका एक विश्व खलित अपराधी का जीवन था। २० वष की आयु म गणेश इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस पूना के कार्यालय में नौकर हुआ, अनुशासनहीनता के अपराध में उसके वेतन म दस रुपए मासिक की कमी करदी गई थी। अपनी इस हानि को पूरा कराने के लिए और बदला लेने की भावना से वह अपने वरिष्ठ अधिकारी के हस्ताक्षरों का जाल बनाकर अपने वेतन बिल का नकद रुपया बम्बई के महालेखापाल कार्यालय से लेने मे सफल हो गया। परन्तु शीघ्र ही उसकी जालसाजी पकडी गई और उसे तीन वष की कडी कैद की सजा दे दी गई। उसने जेल के अधिकारियो से साठ गाठ करके लेखक का काय प्राप्त कर लिया और उसको कदियो के टिकटो के लिखने और भरने का सरल काय दे दिया गया। कुछ समय मे उसने स्वय अपने और एक साथी कैदी के कद से छुटकारे की जाली आज्ञा बनाली। वे दोनो कद से छोड दिए गए। लेकिन पुलिस ने पीछा करके फिर उसे पकड लिया और हाईकोट सेशन के न्यायालय मे उपस्थित किया। न्यायालय ने उसे ढीठ अपराधी घोषित कर दो वर्ष का कठोर कारावास प्रदान किया। इसी बीच गणेश दामोदर को पकडवाने मे वह पुलिस का सबसे बडा सहायक सिद्ध हुआ और २४ जुलाई १८६६ को उस सेवा के उपलक्ष में उसे क्षमा प्रदान करदी गइ और वह छूट गया।

उसे घोषित पुरस्कार की रकम का एक भाग ही मिला। पुरस्कार की रकम पूरी नही मिली। अतएव अपने पुरस्कार के लिए उसने पुलिस से झगड़ा किया और उसकी खुले आम निन्दा की। दुर्भाग्यवश उसने जो कुछ रकम पुरस्कार के रूप में प्राप्त की थी उसका बहुत थोडा भाग ही अपने आनन्द भोग पर व्यय कर सका। उसकी हत्या कर दी गई जिससे कि आगे अपने पुरस्कार की माग को सरकार द्वारा पूरी कराने के लिए वह प्रयत्न न कर सका।

द्राविड बन्धुओ ने जो जानकारी और सूचनाए पुलिस को दी उनके आधार पर पुलिस को यह सदेह हो गया था कि रैंड की हत्या उस क्लब के सदस्यो का काम था जिसे दामोदर ने स्थापित किया था। रानाडे, वासुदेव और एक अन्य सदस्य १० फरवरी को फराशखाना बुलाए गए। वासुदेव ने रानाडे से कहा कि वह अपने साथ एक भरी हुई पिस्तौल ले जावे और रामा या अन्य जो भी उसको अपनी योजना को पूरा करने में बाधा पहुँचाए गोली मार दे। यह उनके लिए बहुत आसान था वे लोग सफेद कपडे की थैली म पिस्तौल रखते और कपडो के अन्दर कधे से लटकाए रहते थ। जब वे लोग फराशखाना पुलिस स्टेशन पहुँचे तो उन्हें सायकाल तक इतजार कराया गया। पुलिस बाहर जाच पडताल करने मे व्यस्त थी। सायकाल होने पर पुलिस अधिकारियों ने उन तरुणो से पूछताछ आरम्भ की और सुपरिटेण्डट ने स्वय वासुदेव से पिछली रात्रि को उसकी गतिविधियो के बारे मे

थी। मै शायलाक की भांति अपने एक पौंड मास के लिए भूखा बनना नही चाहता, परन्तु सरकार ने जो राशि पुरस्कार के रूप में घोषित की थी उसको मागने का मेरा अधिकार है। यह कहा गया कि आधा पुरस्कार इसलिए सुरक्षित है कि बालकृष्ण अभी तक पुलिस के कब्जे मे नही आया है।

मैं इस व्यक्ति की सूझ की तो प्रशसा करता हू परन्तु उसके तर्क के सम्बन्ध म वसा नही कह सकता। यदि बालकृष्ण अत्यन्त सतर्क और सावधान है और पुलिस उतनी ही अकर्मण्य और निकम्मी है तो मैं उसके लिए हानि क्यो उठाऊ? जब पुलिस को यह सूत्र मिल गया कि दामोदर और उसके भाई उस दुखद कांड के लिए जिम्मेदार हैं तो प्रत्येक व्यक्ति जिसमे तनिक भी बुद्धि है यह स्वीकार करेगा कि पुलिस ने दामोदर को गिरफ्तार करने और बालकृष्ण को छोड देने मे केवल भूल ही नहीं भयकर भूल की। इसमे मेरा क्या दोष है कि जो अफसर इस काड की खोजबीन कर रहे थे उनमे बुद्धि की कमी थी और उसके लिए मुझे हानि उठानी पड रही है। यह अजीब न्याय है।

अच्छा अब तो बालकृष्ण पुलिस के कब्जे में है और मेरे विचार से पुरस्कार की शेष आधी राशि को मै मांगने का हकदार हू। अपने एक देशवासी को अभिशापित करने (दोषी होने की घोषणा करने) और देशवासियो की दृष्टि में देशद्रोही बनने के लिए चरित्र की दृढता और शक्ति चाहिए। अधिकाश भारतीय मेरे इस काय को इसी दृष्टि से देखेंगे। फिर भी मने इस बात का सामना करके अधिकारियो की इस मामले में जो थोडी बहुत सहायता कर सकता था की। अब सरकार द्वारा घोषित पूरे पुरस्कार से मै वचित रक्खा जाऊ यह केवल अ यायपूर्ण ही नहीं वरन निदयतापूर्ण भी है। अवश्य ही मेरे जसे निधन व्यक्ति के लिए अधिकारियो के विरुद्ध रस्साकशी मे जीतना असम्भव है परन्तु मैं आशा करता हू ब्रिटिश जाति में जो न्यायप्रियता की जातीय भावना है वह मेरे प्रति इस अन्याय को नही होने देगी।

पूना ३१ जनवरी १८९९ गणेश शकर द्राविड

बोयर युद्ध —पिछली शताब्दी के अन्तिम चरण में देश के बुद्धिवादी वग में भीषण अशान्ति की एक अप्रकट धारा प्रवाहित हो रही थी। किन्तु ऐसा प्रतीत होता था कि ब्रिटिश शक्ति भारत में इतनी मजबूती के साथ जम गई कि स्थिति ऐसी नहीं है कि भारतीय स्वय अपने किसी प्रयत्न या विरोध से उसकी प्रतिष्ठा और शक्ति को नीचा दिखा सकें। बुद्धिजीवी वग यह मानता था कि सोते हुए भारत राष्ट्र को जगाने और उसमें साहस उत्पन्न करने के लिए बाहरी सहायता की आवश्यकता है।

इस पृष्ठभूमि में जबकि बोयर युद्ध छिडा तो भारतीय बुद्धिजीवी वग उसकी प्रगति को आशा और उत्साह से देख रहा था वह बाहर से प्रेरणा और साहस प्राप्त करना चाहता था। ११ अक्टूबर १८९९ से ३१ मई १९०२ तक युद्ध चलता रहा। ३० अक्टूबर को निकलसन नेक और १६ दिसम्बर को कोलेन्सो म ब्रिटिश सेनाओ को भारी पराजय का मुख देखना पडा और जो अन्य कुछ स्थानो पर ब्रिटिश सेनाओं को छोटी मोटी पराजय हुई उस पर भारत में प्रसन्नता की लहर दौड गई। बोयर लोगों की पराजय पर किसी ने ध्यान नहीं दिया, परन्तु बोयर लोगो की विजय के बारे में भारतीय बडी प्रसन्नता उत्साह और गौरव से बात केवल इसलिए करते क्योंकि मुट्ठीभर बोयर लोगो ने महा शक्तिशाली ब्रिटिश सेना को पराजित कर लाछित किया था।

रूस जापान युद्ध— जापान का रूस से युद्ध भारत के अधिक समीप था। अतएव उसकी प्रगति को भारत में अत्यन्त उत्सुकता और अभिरुचि के साथ देखा जा रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो भारत स्वयं जीवन मरण के संघर्ष से निकल रहा है। यह एक आश्चर्यजनक घटना थी कि जब एक एशियाई देश ने जो संसार में भौगोलिक विस्तार तथा राजनीतिक महत्व की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण नहीं था पश्चिम के महान शक्तिशाली विशाल देश को चुनौती देने का साहस किया। जापान द्वारा रूस को दी जाने वाली इस चुनौती से एशिया में जो राष्ट्रीयता का उद्रेक हुआ उसका अनुभव भारत में तेजी से हुआ।

जबकि रूस जापान का यह युद्ध पूर्व के क्षितिज पर आरम्भ ही हुआ था। भारत में यह आम धारणा बन गई कि एशिया का भविष्य रूस जापान युद्ध में निर्धारित होगा। १२ नवम्बर १९०३ को ट्रिब्यून ने इस संबंध में ये विचार प्रगट किए। "छोटे से जापान ने विशालकाय रूस से युद्ध करने के लिए अपनी कमर कस ली है। इस युद्ध के परिणाम पर एशिया का भाग्य निर्भर करता है। यदि वह विजयी होकर सफलता प्राप्त करता है तो एशिया की रक्षा होगी वह बच जावेगा उसका भविष्य आशामय होगा उसकी प्रतिष्ठा ऊंची उठेगी और योरोप की राजनीति भी इस घटना से प्रभावित होने से नहीं बचेगी। छोटा सा जापान सुदूरपूर्व में ऊषा के नक्षत्र की भांति अपने अक्षत सौन्दर्य और गरिमा को लेकर चमक रहा है मानो वह ऐशिया के जागरण की घोषणा कर रहा हो।" इसी प्रकार १५ फरवरी १९०४ के कर्जन-गजट ने लिखा, "यह केवल भारत का ही प्रश्न नहीं है जापान की जय और पराजय के साथ एशिया पर्शिया, चीन अफगानिस्तान और एशियाटिक टर्की का भाग्य जुड़ा हुआ है। आगे पत्र ने लिखा 'यदि जापान इस युद्ध में पराजित हुआ तो सम्पूर्ण एशिया योरोपियनों के अधिकार में चला जावेगा। यदि इसके विपरीत रूस का पराभव हुआ तो एशिया में नव-जीवन का संचार होगा और उसकी स्थायी विनाश से रक्षा हो जावेगी।" रूस जापान युद्ध की औपचारिक रूप से ८ फरवरी १९०४ को घोषणा हुई और ९ फरवरी को जापानी पनडुब्बियों ने रूसी युद्ध पोतों पर पोर्ट आर्थर में आक्रमण किया और न पोर्ट आर्थर के बन्दरगाह पर भीषण बमवर्षा की। १६ फरवरी १९०४ के अंक में 'काल' ने लिखा 'जापान पहला देश है जिसने एशिया में योरोपियन कूटनीति और शक्ति को आगे बढ़ने से रोक दिया। परिणामस्वरूप प्रत्येक भारतीय का हृदय उल्लास और उत्तेजना से भर गया है।" २४ अप्रेल १९०४ के 'गुजराती' ने लिखा "ऐसा प्रतीत होता है कि भारत के सभी वर्ग वीर जापानियों के माध्यम से प्रतिनिधि रूप में रूस से युद्ध कर रहे हैं। आगे पत्र ने लिखा—'जापान की विजय की खबर उन्हें हर्ष से इतना भर देती है और जापान की असफलता की अफवाह उनमें इतना विषाद भर देती है मानो यदि यह उत्तर की महाशक्ति पराभूत हुई तो उस विजय के फल उनको ही मिलने वाले हैं। ट्रिब्यून १२ मार्च १९०४ 'जापानियों के बारे में १३ फरवरी १९०४ के बंगवासी ने लिखा कि वे कद में छोटे हैं परन्तु प्रकृति ने उन्हें लोहे जैसा बलिष्ठ शरीर दिया है यद्यपि वे नौसिखये हैं परन्तु रणकौशल में पारंगत हैं। वे सब कुछ यहां तक कि अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए अपने जीवन को भी बलिदान कर देना जानते हैं। और इससे अधिक क्या जो अपने जीवन को देना जानता है वह अपने शत्रु पर प्रहार भी करना जानता है।"

जापान का रूस के विरुद्ध संघर्ष विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा गया और गहरी उत्सुकता के साथ उसके परिणाम की प्रतीक्षा की गई यह कहा गया कि उसने पूर्व में एशिया की स्वतन्त्रता के झण्डे को फहराया है और वह परतन्त्र भारत की जनसंख्या के हृदय में आशा की रेखा खींचने के लिए पर्याप्त है (काल ८ मार्च १९०४)। प्रत्येक देशभक्त भारतीय यह सोचने लगा है कि एशियायी राष्ट्रों का अब भविष्य में जैसा कि अभी तक योरोपियनों द्वारा शोषण होता रहा है अब नहीं किया जा सकता। उसी लेख में 'काल' ने एशिया के लोगों का इन शब्दों में आह्वान किया। "तुम्हारे दुःख और कष्ट की काली अंधेरी रात्रि समाप्त होने को है। आलस्य छोड़ो, अपने हृदय को पवित्र बनाओ और भगवान को याद कर अपना कर्तव्य करना आरम्भ कर दो।" ३ जून १९०४ के अंक में 'प्रतिदण्ड का दिवस' शीर्षक लेख में उसने सर्व साधारण का नीचे लिखे शब्दों में आह्वान किया —'स्वतन्त्रता के आगमन का स्वागत करने की तैयारी करो। उद्धार के दिन का प्रभात होने वाला है और पूर्वीय क्षितिज पर एशिया के वैभव और गौरव का सूर्य उदय होने वाला है।'

पत्र ने लिखा कि हम भगवान से प्रार्थना करें सभी एशियावासी, भारतीय और बंगाली आकाश की ओर देखकर सत्यनिष्ठा और हृदय से प्रार्थना करें "जापान विजयी हो" (बंगवासी १३ फरवरी १९०४) जापान की सफलता के प्रति सच्ची सद्भावना व्यक्त करने के अतिरिक्त भारतीयों ने अपने विनम्र तरीके से जितनी सम्भव थी उतनी सक्रिय सहानुभूति भी प्रदर्शित की। बम्बई और कलकत्ते में जापानी रोगियों और जख्मी सैनिकों की सहायता के लिये और उन जापानी सैनिकों की विधवा पत्नियों और अनाथ बच्चों की आर्थिक सहायता के लिए कोष इकट्ठा करने के लिए समितियां स्थापित की गईं जो कि रणक्षेत्र में युद्ध करते हुए धराशायी हुए हों। (ट्रिब्यून १६ मार्च, १९०४)। ८ अप्रैल १९०४ को बंगाली ने नीचे लिखे आशय की कविता प्रकाशित की। 'पूर्व में प्रभात' जिसे सर्टरैंड शाइबल ने लिखा और उसमें उस भावना और उत्साह को व्यक्त किया जो जापान की सफलता पर भारतीयों के मस्तिष्क में उठे थे।

'जागो एशिया जागो—लाल सूर्य तेजी से आकाश से उदय हो रहा है।"

यानि शस्त्र उठाओ अपने करोड़ों जन को शस्त्र धारण करने दो महान दीवार पर तयार रहो।

शताब्दियों की शान्त निद्रा भग्न में आकस्मिक रण दुन्दुभी के नाद से टूट गई है।"

"एशिया खड़े हो अपने महाद्वीप की रक्षा के लिये खड़े हो। अपने दुर्गों की रक्षा करने के लिये अपनी तलवार बांध लो। अपनी सीमाओं पर आगे बढ़ो अब कब तक के लिये योरोप के दास बनकर रहने में संतोष करो।"

"पूर्व में प्रभात हो रहा है। रक्तिम सूर्य की किरणें प्रकाशमान हैं। अपने अधिकार की रक्षा के लिए आक्रमण करो और बुराई का विरोध करो। अब जबकि डाकू कुत्सित और मजबूत पूर्वीय तलवार के आघात से धराशायी होकर छटपटा रहा है।"

युद्ध जापानियों की सफलता के साथ आगे बढ़ रहा था। भारतीयों के मस्तिष्क में ज्यों ज्यों दिन व्यतीत होते गए आशा और भय की भावना तिरोहित होती गई। १० अगस्त १९०४ को जापानी नौसेना ने पोर्ट आर्थर के रूसी जहाजी बेड़े को मार

भगाया। १४ अगस्त को महाशक्तिशाली [illegible] जापानी बेड़े का सम्पूर्ण विध्वंस कर दिया गया। १० अक्टोबर को रूसी सेना के अधिकांश भाग को भीषण आघात लगा जापानी सेनाओं ने उसे बुरी तरह झकझोर दिया और उसे पीछे हट कर मकडन में शरण लेनी पड़ी। २ जनवरी १९०५ को ऐशियाई राष्ट्रों का इतिहास पुनः लिखा गया जबकि रूस को, पोर्ट आर्थर को जापान के सुपुर्द कर हटना पड़ा।

कुछ समय के उपरान्त विजयी जापानी सेनाओं ने भयंकर युद्ध के उपरान्त मकडन में प्रवेश किया। इस भयंकर युद्ध में तीस हजार रूसी सैनिक रण क्षेत्र में धराशायी हो गए और चालीस हजार रूसी सैनिक जापानियों के कैदी हो गए। इसके विपरीत १० मार्च १९०५ की इस विजय के लिए जापानी सेना को कम से कम पचास हजार जापानी सैनिकों का बलिदान करना पड़ा।

ऐडमिरल टोगो ने बचे हुए रूसी जहाजी बेड़े को २७ मई १९०५ को जापान समुद्र के युद्ध में परास्त कर दिया और लगभग चार महीने शान्ति संधि पर हस्ताक्षर होने में लग गए। ५ सितम्बर १९०५ को पोर्टस माउथ (संयुक्त राज्य अमेरिका) में संधि पर हस्ताक्षर हुए। १६ जून १९०५ के अंक में 'इन्दुप्रकाश' ने लिखा "इस प्रकार उगते हुए सूर्य वाले राष्ट्र ने विश्व में पड़े हुए पूर्व के समक्ष एक अनुपम उदाहरण उपस्थित किया और अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से यह प्रदर्शित कर दिया कि पूर्वीय देशों के चरित्र में ऐसा कोई जन्मजात दोष नहीं है कि जो उसे प्रगतिशील-पश्चिम के समान ऊंचा उठने के लिए किसी भी मानवीय कार्यकलाप के लिए अयोग्य या अशक्त बना देता हो।"

अन्य पत्रों ने भी इसी प्रवाह में अपना मत एक साथ व्यक्त किया और १९ जून १९०५ के अंक में 'पंजाबी' ने लिखा—"रूसियों को पर्वतों की ऊंचाई पर और घाटियों की गहराई में बुरी तरह पराजित करके, उन्हें स्थल और समुद्र में बार बार हरा कर जापान ने एशिया की प्रतिष्ठा को बढ़ाया उसके अपने घर में सर्वोपरि होने के अधिकार की रक्षा की है और विदेशी साहसिकों की दुरभिसंधि का शिकार बनने से बच गया है। इस साहसिक कार्य से उसका गौरव और प्रसिद्धि में वृद्धि हुई है। इसमें तनिक भी आश्चर्य नहीं कि जापान के गौरव से समस्त एशिया अपने को गौरवान्वित हुआ मानता है और यह अनुभव करता है कि दुर्भाग्य और दरिद्र की अंध रात्रि जो अभी तक उसके ऊपर छाई हुई थी। हटकर एक प्रकाशवान और गौरवशाली प्रभात उतरने वाला है।" प्रत्येक देश जिस पर किसी विदेशी का प्रभुत्व है उसको जापान को बधाई देनी चाहिए क्योंकि जैसा ४ जनवरी १९०५ के 'जामए जमशेद' ने लिखा 'कम से कम एशिया ने योरोप पर एक भयानक युद्ध में विजय प्राप्त की है।"

कुछ विदेशियों ने रूस जापान युद्ध के परिणाम का अपने ही दृष्टिकोण से विश्लेषण किया। प्रत्येक योरोपीय राष्ट्र के चतुर कूटनीतिज्ञ ने अपने विवेक का उपयोग कर चुप रहना ही उचित समझा। 'अमृत बाजार पत्रिका' ने २६ फरवरी १९०६ को प्रोवोस्ट वेंटसवे का मत प्रकाशित करते हुए भारतीय मानस का सही चित्रण किया था। समाचार पत्र के अनुसार — "जापान की सफलताओं ने मानो महत्वाकांक्षा की एक अग्नि शिखा प्रज्ज्वलित कर दी है। जो उनके दिमाग

संदिग्ध रूप से धीरे धीरे सुलगती रहती।"

श्री लीच ने 'दैनिक क्रानिकल" में लिखा जिसे १० जुलाई १९०५ को 'पंजाबी' पत्र ने उद्धृत किया 'यह पश्चिम के अत्याचार के विरुद्ध पूर्व के विद्रोह का संकेत है।"

'पालमाल गजट' में श्री स्क्रिने ने अपने भय को इन शब्दों में व्यक्त किया "जापान की विजय का प्रभाव यह होगा कि भारत की युद्ध प्रिय जातियां क्षुब्ध हो उठेंगी और वे जान जावेंगी कि अन्ततः एक एशियाई राष्ट्र के लिए योरोपियनों को पराजित करना सम्भव है।" उसकी गणना थोड़ी गलत हो गई। युद्धप्रिय जातियां नहीं सम्पूर्ण बुद्धिजीवी मध्यवर्ग ब्रिटिश शासन के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ।

समस्त भारत और विशेषकर महाराष्ट्र बंगाल और पंजाब ने मिलकर देश को पश्चिम की दासता से मुक्त करने का प्रयत्न किया।

विदेश में प्रयत्न १८९७–१९०६

जून १८९७ में पूना बम-कांड के उपरान्त जो पुलिस ने सर्वत्र घर पकड़ और अत्याचार आरम्भ किया उसमें काठियावाड़ निवासी श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा सशंकित हो उठे। वे पहले १८८४ में इंग्लैंड गए थे और १८८५ में वापस आए थे। गिरफ्तारी से बचने के लिए १८९७ में वे चुपचाप बम्बई से लंदन चले गए।

श्याम कृष्ण वर्मा उन लोगों में से नहीं थे जो कि चुपचाप निष्क्रिय बैठे रहें और विवशता के साथ उन सरकारी प्रयत्नों को देखते रहें जो कठोरतापूर्वक सब राजनीतिक गतिविधियों को कुचलना चाहते थे। उन्होंने सोचा कि एक ऐसा संगठन खड़ा किया जावे जो कि भारतीयों के प्रतिनिधि के रूप में ब्रिटेन की जनता को यह बतला सके कि ब्रिटिश शासन में भारतीय जनता कैसा अनुभव करती है। अपने इस विचार को क्रियान्वित करने के लिए उन्होंने जनवरी १९०५ से एक अंग्रेजी मासिक "दी इण्डियन सोशयोलाजिस्ट' पत्र प्रकाशित करना आरम्भ किया जिसका मूल्य एक प्रति का एक पैसा था। यह पत्र स्वतंत्रता तथा राजनीतिक सामाजिक और धार्मिक सुधार का समर्थक था। यह पत्र मुख्यतः इण्डियन नेशनल कांग्रेस के कार्यक्रम का समर्थन करता था परन्तु वर्मा ने कांग्रेस से भी आगे बढ़कर हरबर्ट स्पेंसर के विचारों पर आधारित एक नया राजनीतिक सिद्धान्त प्रतिपादित किया। 'अत्याचार का प्रतिरोध केवल उचित ही नहीं अनिवार्य और अलंघनीय है" अप्रतिरोध पदार्थ और स्वार्थ दोनों को हानि पहुँचाता है।" (इण्डियन सोशियोलाजिस्ट जनवरी १९०५)

सम्पादन के क्षेत्र में पदार्पण करने के उपरान्त उन्होंने १८ फरवरी १९०५ को इण्डियन होम रूल सोसायटी की स्थापना की। उसका उद्देश्य था प्रचार द्वारा भारत के लिए स्वशासन के आन्दोलन को आगे बढ़ाना भारतीय जन में स्वतंत्रता के अपहरण के विरुद्ध गहरी जागृति उत्पन्न करना और राष्ट्रीय एकता की भावना को दृढ़ करना था—श्याम कृष्ण वर्मा किसी भी कार्य को अधूरा नहीं छोड़ते थे अतएव वे उतने से ही केवल सन्तुष्ट रहने वाले नहीं थे जो कि उन्होंने अब तक किया था। उन्होंने इण्डियन सोशयोलाजिस्ट के मई अंक में घोषणा की कि अगली जुलाई से वे लंदन में एक छात्रावास खोलेंगे 'इण्डिया हाउस' जिसमें वे भारतीय जो कि छात्रवृत्ति पर इंगलैंड में पढ़ने आवेंगे या अन्य भारतीय जिन्हें उसमें रहने के लिए उपयुक्त समझा

जावेगा रह सकेंगे। १ जुलाई १९०५ को इंडिया हाउस की स्थापना हुई और २३ फरवरी १९०७ को श्यामजी ने दस हजार रुपए के दान की घोषणा की जिसका उद्देश्य भारत में राजनीतिक मिशनरियों का एक संगठन खड़ा करना था। वे मिशनरी किस प्रकार के होंगे इसकी व्याख्या हरदयाल ने इस प्रकार की जो कि एक तरुण युवक था और सरकारी छात्रवृत्ति पर इंगलैंड में पढ़ने आया था— "उन्हें उद्देश्य के अतिरिक्त और किसी से भी प्रेम नहीं होना चाहिए उनके लिए उद्देश्य ही पिता, माता, भाई, मित्र का स्थान लेगा। और आज्ञता का परामर्श छद्म वेष के समान प्राज्ञता जिसे चक्र ने अभिशाप कहा है फिर वह चाहे अपने प्रिय से प्रिय और निकटस्थ सम्बंधी द्वारा दिया जावे उसे वह अस्वीकार करेगा। उन्हें अपना कार्य धार्मिक भावना के साथ करना होगा। उत्साह और स्वार्थ त्याग उनका मार्गदर्शक सिद्धान्त होगा। उन्हें जापान के कमाण्डर होरोज की भांति इस बात का खेद होना चाहिए कि अपनी मातृभूमि के लिए बलिदान करने के लिए उनके पास केवल एक ही जीवन है" और श्यामजी ने स्वयं अपना विश्वास लगभग उन्हीं शब्दों में व्यक्त किया जिनमें आइरिश देशभक्त फिन्टन लेलर ने किया था (सर जेम्स ओ कोनर दी हिस्टरी ऑफ आयरलैंड भाग १ पृष्ठ २६२–६३) 'देश का सम्पूर्ण नैतिक और भौतिक स्वामित्व ऊपर सूर्य से लेकर नीचे पृथ्वी के मध्य तक अपने जन्म सिद्ध अधिकार के रूप में केवल भारतवासियों में सन्निहित है। वे और एक मात्र केवल वे ही अपने देश की भूमि के स्वामी और विधि निर्माता हैं। जो कानून उन्होंने नहीं बनाए हैं वे शून्य और प्रवृत्तिहीन हैं और इस स्वामित्व के पूर्ण अधिकार को उन सभी साधनों से जो कि दैवी शक्ति ने मनुष्य की शक्ति और अधिकार में दिए हैं दृढ़ निश्चयपूर्वक लागू करना चाहिए।"

जैसे ही हरदयाल भारतीय राष्ट्रवाद के धर्म में दीक्षित होगए और ब्रिटेन की इंडियन होमरूल सोसायटी से संबंधित हुए उन्होंने उस सरकारी छात्रवृत्ति को लेना अस्वीकार कर दिया जिसकी सहायता से वे ऑक्सफोर्ड में पढ़ते थे। वे इंडियन होम रूल सोसायटी के कार्यों में सक्रिय भाग लेने लगे और उसके विभिन्न विभागों को सुसंगठित और सयोजित करने में सहायक होकर वे जनवरी १९०८ में अपनी तरुण पत्नी को लेकर भारत की ओर चल पड़े।

इसी बीच श्यामजी ने छात्र वृत्ति देने की अपनी योजना और किस प्रकार उसका उपयोग अंग्रेजी तथा भारत की अन्य मुख्य भाषाओं में साहित्य निर्मित किया जाय तत्संबंधी योजना की घोषणा की। इंडियन सोसोलाजिस्ट में रात दिन वे पूर्ण असहयोग और ब्रिटिश शासन को अपनी सक्रिय सहायता देना बन्द कर देने और हड़तालें करवाने का प्रचार करते थे। उन्होंने देशवासियों से अपील की कि वे विदेशी सत्ता द्वारा भारत पर अपना प्रभुत्व जमाए रखने में सम्पूर्ण असहयोग करें साथ ही वे उन संस्थाओं से भी जो सरकार की सहायता करती रही हैं जैसे बैंक नागरिक और सैनिक सेवा न्यायालय शैक्षणिक संस्थाएं उनसे भी असहयोग करें। ऐंग्लो इंडियन समाचार पत्रों का बहिष्कार किया जावे और सबसे ऊपर हड़तालें की जावें जो कि क्रान्ति करने का आधुनिक अस्त्र हैं।

श्यामजी कृष्ण वर्मा उन शान्तिपूर्ण उपायों से संतुष्ट नहीं थे जो केवल दासता की गहन पीड़ा को और लम्बा करते। उनका विचार था कि स्वतन्त्रता की ओर प्रगति को अधिक तीव्र बनाने के लिए किसी प्रकार के कठोर [illegible]

अपनाए जाने वाले उपाय को अपनाना चाहिए।

अपने पत्र के एक अंक में उन्होंने यह सुझाव दिया कि भारत में सब प्रकार के संगठित आन्दोलन को दबाने के लिए ब्रिटिश सरकार ने जो कठोर अत्याचारपूर्ण कदम उठाए हैं उनका प्रतिकार करने के लिए स्थिति अनुसार भारतीयों को भी शक्ति का उपयोग करना चाहिए। क्योंकि सभी संवैधानिक आन्दोलन असफल हो गए उनका कोई प्रभाव नहीं हुआ अतएव भारतीयों को अपने प्राणों और सम्पत्ति की रक्षा करने के लिए अपने शत्रु के विरुद्ध बल का प्रयोग करना चाहिए। दिसम्बर १९०७ में उन्होंने लिखा — "ऐसा प्रतीत होता है अब भारत में जो भी आन्दोलन किया जाय गुप्त रूप से होना चाहिए और ब्रिटिश सरकार के दिमाग को ठीक करने का एक मात्र उपाय रूसी उपायों को निरन्तर और तेजी के साथ काम में लाना है। जब तक कि अंग्रेज अपने अत्याचारों को छोड़ने पर विवश न हो जावें और देश से निकाल बाहर न कर दिए जावें तब तक उन उपायों को काम में लाना होगा। यह सम्भव है कि सिद्धान्त रूप से रूसी तरीकों का प्रारम्भ अंग्रेज अधिकारियों के बजाय भारतीय अधिकारियों से किया जाय 'इण्डियन सोशियोलाजिस्ट' की प्रतियां नियमित भारत पहुँचती रहती थीं और उन्हें वहां बड़े चाव और आतुरता से पढ़ा जाता था। इंगलैंड में ब्रिटिश प्रेस बहुत चौंका और वहां के समाचार पत्रों ने उस पत्र के तथा 'इण्डिया हाउस' की गतिविधियों के विरुद्ध विष उगलना आरम्भ कर दिया। अपनी सुरक्षा के लिए श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा को अपना मुख्य कार्यालय पेरिस ले जाना पड़ा यद्यपि पत्र इंगलैंड में ही छपता रहा।

जो लोग श्यामजी कृष्ण वर्मा के चारों ओर एकत्रित हुए उनमें विनायक दामोदर सावरकर थे जो जून १९०६ में भारत से लन्दन गए थे। उस समय तक विनायक दामोदर सावरकर ने देश की स्वतन्त्रता के महान उद्देश्य के लिए होने वाले संघर्ष में अपने को पूर्ण रूप से झोंक देने का निश्चय कर लिया था। उन्होंने अपने अनुयायियों से उस लक्ष्य की प्राप्ति में जो भी कष्ट हो उनसे भयभीत न होने के लिए आह्वान किया। उन्होंने अपने अधूरे काम को अपने योग्य बड़े भाई गणेश दामोदर को सौंप दिया जिन्होंने 'अभिनव भारत समिति' की स्थापना की थी और जिसने भावी वर्षों में भारत की स्वतन्त्रता के आन्दोलन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण काम किया।

शान्ति भंग की चेतावनी (१९०० १९०५)

हिंसा का समर्थन— स्वतन्त्रता के आन्दोलन में लोकमान्य तिलक के पत्र 'केसरी' ने जो महत्त्वपूर्ण भाग लिया था वह सब विदित था। उसके पश्चात् उसका अनुसरण 'काल' एक मराठी साप्ताहिक ने किया। 'काल' सर्वप्रथम १८९८ में पूना से श्री शिवराम महादेव परांजपे ने प्रकाशित किया था। परांजपे को १९०० १९०४, १९०५ और १९०७ में सरकार ने राजद्रोहात्मक लेख लिखने के लिए चेतावनी दी थी। १९०८ में उन पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें जेल में बन्द कर दिया गया 'काल' अन्य पत्रों की अपेक्षा कहीं अधिक आगे बढ़ कर खुले शब्दों में हिंसा का समर्थन करता था। उसकी मान्यता थी कि विदेशी लोग केवल हिंसात्मक तरीकों का ही अधिमूल्यन करेंगे और उनको आतंक और भय से देखेंगे। उसने अपनी युक्ति को क्रमशः एक विचार बिन्दु से दूसरे बिन्दु से मिलाकर विकसित किया आरम्भ में उसने भारत की दयनीय और निस्सहाय स्थिति को सामने रक्खा और उसके पश्चात् उसने जनता को देश की मुक्ति के लिए दृढ़ संकल्प होने के लिए प्रोत्साहित किया और कहा

कि यदि आवश्यकता हो तो हिंसा को अपनाया जावे।

'काल' ने मानो कविता में एक सम्वाददाता द्वारा लिखे पत्र पर टिप्पणी करते हुए २५ मार्च १९०४ को हिन्दू नव वर्ष के दिन प्रत्येक हिन्दू गृह के सामने विजयपताका स्थापित करने की रीति पर 'क्या तुमने अफजल खां को मारा' शीर्षक से लिखा जिसका सारांश आगे दिया जाता है। 'तुम विजयपताका क्यों गाड़ते हो? यह किस साफल्य की स्मृति को ताजा करने के लिए गाड़ी जाती है? क्या उसको स्थापित करने में तुम केवल एक स्मरणातीत परम्परा को निबाहते हो? क्या तुमने आर्यों को उनकी दुर्दशा से छुटकारा दिला दिया, और उनको स्वतन्त्रता का वरदान दे दिया? क्या तुमने रणक्षेत्र में युद्ध में विजय प्राप्त की है? क्या तुमने उन लोगों को निकाल बाहर किया कि जो भारतीयों को ठोकर मारते हैं और जिन्होंने उनकी स्वतन्त्रता का अपहरण कर लिया है? क्या तुमने अफजलखां को मार दिया या दुर्रानी को देश से निकाल बाहर किया है? क्या तुमने रामी झांसी के जैसे वारोचित कार्य कर यश अर्जित किया है? यदि तुमने इनमें से कुछ नहीं किया तो व्यर्थ में पताका क्यों गाड़ते हो। पहले विजय प्राप्त करो उसके उपरान्त विजयपताका अपने मकान के सामने खड़ी करो।'

समाचार पत्र प्रतिरोध और आत्मनिर्भरता के महत्व के विचार को देश में फैला रहे थे। २१ अप्रैल १९०४ को बारीसाल हितैषी ने लिखा—"चाटुकारिता और लल्लो चप्पो करने से हम अंग्रेजों का अनुग्रह प्राप्त कर सकेंगे इसकी कोई आशा नहीं है। दैवी शक्ति के अटल मार्ग को बचाकर कौन काल के प्रवाह को रोक सकता है।" बंगाली या तो इस संघर्ष में विजयी होंगे या फिर इस पृथ्वी पर से उनका अस्तित्व ही मिट जावेगा। अधिकारियों की ओर उस प्यासी चिड़िया की तरह अनुग्रह के लिए मत ताको जो एक बूंद के लिए मेघों की ओर टकटकी लगाए रहती है। अपने ऊपर भरोसा करना सीखो, अपने पैरों पर खड़े हो। सावधान रहो व दृढ़ता और साहस के साथ सरकार के प्रत्येक कार्य का जो अत्याचार के पाप से पंकिल है विरोध करो।"

१७ जून १९०४ को 'काल' ने अपने पाठकों को योरोपीय जातियों के अनिवार्य भावी विनाश की ओर ध्यान देने को कहा 'वे अभी तक अगणित व्यक्तियों की क्रूर हत्या को तथा अन्य अनुचित अधर्म कार्यों के दोषी रहे हैं। अब उनको अपने कुकर्मों का दण्ड भोगना पड़ेगा।"

सर्वत्र विजित राष्ट्रों में विद्रोह की भावना जागृत हो गई है और "हमें इसमें छिपे दैवी संकेत को पहचानना चाहिए और याद रखना चाहिए कि "जो भगवान की इच्छा है उसको देर तक रोका नहीं जा सकता।"

१२ अगस्त १९०४ के अंक में 'काल' ने लिखा 'भारत की दयनीय दशा का मुख्य कारण भारत में अंग्रेजों की अप्राकृतिक उपस्थिति है। भारतीयों को ब्रिटिश शासकों के साथ अपने सम्बन्ध के स्वरूप को जानना चाहिए। पत्र ने याद दिलाया 'कि यह सम्बन्ध शेक्सपियर के नाटक में हेमलेट की मां का उसके चाचा के साथ जैसा सम्बन्ध था उसके समान है। चाचा राजकुमार को कोई गम्भीर हानि नहीं पहुँचाना चाहता था, वह केवल उसकी मां को प्राप्त करना चाहता था और चाहता था कि हेमलेट को उससे सन्तुष्ट रहना चाहिए। परन्तु डेनमार्क की

राजधानी में यह अन्याय देर तक सहन नहीं किया गया। यह प्रकृति का एक स्वस्थ नियम है कि कोई भी अन्याय देर तक नहीं चलने दिया जाता। हैमलेट का चाचा राजकुमार के प्रति अपना स्नेह प्रदर्शित करता था और राजकुमार भी बाहरी तौर पर उसकी आज्ञा पालन करता था। ठीक वही संबंध अंग्रेजों और भारतीयों के बीच है। दोनों के बीच का संबंध नितांत अप्राकृतिक और असद्भावी है— जब कि राजकुमार अनिश्चयकारी और संदेह की स्थिति में होता तो उसके पिता का प्रेम प्रगट होता और उससे डेनमार्क की महानता और उसके पिता अर्थात राजा की हत्या को याद रखने को कहता। ठीक यही बात भारत की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति के बारे में लागू है उस प्रकार की बुराई का निराकरण करने को हैमलेट ने एक उत्तेजनापूर्ण भाषण में वचन दिया था। हम सबों को उसी प्रकार कार्य करने का प्रयत्न करना चाहिए और अपने मन में वैसे ही दृढ़ धारणा करली चाहिए जैसी कि धारणा हैमलेट ने प्रेत के अंतिम शब्दों को सुनने के बाद बनाई थी।"

विदेशों में राजनीतिक हत्याएं— सरविया (योरोप में) देश के निरंकुश शासक अलकजेंडर प्रथम की ११ जून १९०३ को क्रांतिकारियों द्वारा हत्या करदी गई। उसके साथ रानी प्रधान मंत्री युद्ध मंत्री तथा बादशाह के दो भाई भी मार दिए गए।

रूस का उदाहरण— २६ अगस्त १९०४ को 'काल' ने प्रकाशित किया कि 'रूसी सरकार के एक उच्च अधिकारी की निहिलिस्ट दल ने हत्या कर दी। जब हत्यारा पकड़ा गया तो उसने दृढ़तापूर्वक कहा कि एम डी प्लेव की हत्या करके उसने उचित कार्य किया है जिसके लिए उसको स्वर्ग में पुरस्कार मिलेगा।' उसकी मांगें थी — जनता की पार्लियामेंट, प्रेस की स्वतंत्रता, दमनकारी कानूनों को उठा लिया जाय, जापान के साथ युद्ध बन्द किया जाय दुर्भिक्ष को रोकने के उपाय किए जाय, राजनीतिक कैदी छोड़ दिए जाय।

'निहिलिस्टों की इन मांगों को पढ़ कर प्रत्येक व्यक्ति को अत्यंत आश्चर्य होगा। भारत में प्रतिदिन दुर्भिक्ष पड़ते हैं और सरकार पिछले कुछ दिनों से तिब्बत से युद्ध कर रही है परन्तु भारत ने दुर्भिक्षों और युद्ध को रोकने के लिए किन्हीं निहिलिस्टों को पैदा नहीं किया।'

"हत्या का लाक्षणिक महत्व' शीर्षक के अंतर्गत सम्पादक ने २ सितम्बर १९०४ के अंक में इस प्रकार की हत्याओं के महत्व और अत्याचारियों के लिए उससे शिक्षा लेने की आवश्यकता पर अपने विचार की व्याख्या की। काल ने इस प्रकार की हत्याओं के प्रयोजन की प्रशंसा करते हुए कहा कि 'वे किसी व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं किए जाते अतएव वे सर्वथा उचित हैं। यह राजनीतिक हत्यायें उन सामान्य हत्याओं की भांति नहीं हैं जिनके अपराधियों पर प्रतिदिन न्यायालयों में मुकदमे चलते रहते हैं। जबकि एक राजा अथवा एक उच्च राज्याधिकारी की हत्या होती है तो संसार एक क्षण के लिए ठहर कर उसके महत्व पर विचार करता है। इस प्रकार की हत्यायें मनुष्य के सामने उसी प्रकार चकाचौंध उत्पन्न कर देती हैं और उसके मस्तिष्क को भ्रमित कर देती हैं, जिस प्रकार टूटता हुआ तारा अथवा सुप्त ज्वालामुखी जब प्रज्वलित हो फूट उठता है तो मनुष्य भौचक्का और भ्रमित हो जाता है। लोग एक दूसरे से पूछते हैं कि इन हत्याओं का अर्थ क्या है और जो व्यक्ति अन्तरमुखी मन के हैं वे प्रभु द्वारा इन घटनाओं को घटने देने का क्या उद्देश्य है इस सम्बन्ध में अपने निज के

परिणाम निकालते हैं। यह हत्याएं जिस उद्देश्य से की जाती हैं उनका लक्ष्य घृणित व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करना अथवा ईर्षा या शत्रुता की भावना को तृप्त करना नहीं होता है। इनके पीछे जो प्रशंसा योग्य लक्ष्य होता है वह यह है कि वह शरीर के उस विषाक्त भाग को काटकर फेंक देना चाहते हैं जो अन्यथा सम्पूर्ण विश्व में अपने विष को फैला देता। ये हत्याएं इसलिए एक प्रकार चीरफाड का उपचार हैं जो कि राज्य रूपी शरीर को बचाने के लिए उसके सड़े हुए अंग को काटकर फेंक देती हैं। यदि उपमा को बदल दें तो हम कह सकते हैं कि वे उन अत्याचार से पीड़ित जनसमूह का कानों को बहरा कर देने वाला भयानक चीत्कार है जब कि धनी और ऐश्वर्यशाली व्यक्ति अपने रासरंग में इतने बेहोश हो जाते हैं कि उन्हें निर्धनों के कष्टों और दुख गाथा को सुनने का समय ही नहीं मिलता। इन हत्याओं के सम्बन्ध में कोई गोपनीयता या छिपाने का प्रश्न नहीं उठता। वे संसार के हित के लिए की जाती हैं यद्यपि वे मुख्यतः गोपनीयता से सम्बन्धित होती हैं। परन्तु अन्ततः समस्त संसार को उनके संबंध में विश्वास में लिया जाता है।"

'काल' ने इस हत्या के तत्कालीन कारण के संबंध में लिखते हुए कहा कि उसका कारण प्लेहेव का समस्त देश पर अत्याचार था। अमानवीय यातनाएं और दानवी संताप जिनकी उसने रूस पर वर्षा की थी वही उसके दारुण अन्त का कारण बन गए। यह घटना संसार भर के अत्याचारियों के लिए एक चेतावनी होनी चाहिए परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं होता। पत्र हत्या को अत्याचार का तार्किक परिणाम स्वीकार करता है—'संक्षेप में श्री एम डी प्लेहेव के बर्बर अत्याचार ने उसकी हत्या को अवश्यम्भावी बना दिया था। इस प्रकार की हत्या एक स्वतंत्र देश में अवाच्छनीय है परन्तु रूस जैसे निरंकुश शासित देश के लिए क्रान्तिकारी प्रचार उसकी परिस्थितियों के अनुकूल है जहां राजनीतिक प्रश्नों पर सार्वजनिक आलोचना हो और जनता की शिकायतों को हल न किया जाता हो और देश भर में भयंकर दमन का चक्र चलता रहता हो। लेखक ने प्लेहेव के शासन की लार्ड कर्जन से तुलना की और लिखा यहां शिकायतों की सूची अवश्य ही प्लेहेव के दुष्कृत्यों से कहीं अधिक लम्बी है। इतना कह कर पाठक को स्वयं अपना निर्णय करने और यदि सम्भव हो तो देश पर जो दमन का चक्र चल रहा है उसका निवारण करने के लिए अपने कर्तव्य को सूझने के लिए लेखक ने स्वतंत्र छोड़ दिया।

अन्य प्रांतों में भी समाचार पत्रों ने निहलिस्ट घोषणा पत्र पर भारतीय परिस्थितियों की पृष्ठ भूमि के आधार पर इसी प्रकार की टिप्पणियां लिखीं। १३ अप्रेल १९०५ के अंक में 'पंजाबी' ने जार को उद्बोधन करने के उद्देश्य से लिखा कि स्वतंत्र दल की आकांक्षाओं को बल और हिंसा से दबाने का प्रयत्न करना व्यर्थ है। इस प्रकार की कार्यवाही सर्वदा क्रान्तिकारियों की शक्ति को बढ़ाती है और जो खतरे उन्हें उठाने पड़ते हैं उन्हें अधिक सावधान और सुसंगठित बना देते हैं।

उसने इस विचार का समर्थन करते हुए आगे लिखा—"यह कैसी सरकार है जो इस व्यवस्था को बनाए रखती है? क्या यह वास्तव में सत्ता हड़पने वालों का एक गिरोह नहीं है? यही कारण है कि रूस में सरकार का जनता पर कोई नैतिक प्रभाव नहीं है और यही कारण है कि रूस इतने अधिक क्रान्तिकारियों को उत्पन्न करता है। यही कारण है कि जार की हत्या जैसी घटना भी अधिकांश

जनता के मन में सहानुभूति उत्पन्न नहीं करती। राजा की हत्या कर देना रूस में बहुत लोकप्रिय है। ऐसी स्थिति से बाहर निकलने के दो ही मार्ग हैं या तो क्रान्ति हो जो क्रांतिकारियों को प्राण दण्ड देने से न तो टाली जा सकती है और न रोकी जा सकती है अथवा सरकार को चलाने में सहायक होने के लिए सर्वोच्च अधिकार स्वतः जनता को सौंप दिए जायं।'

भारत के विषय में लिखते हुए 'पंजाबी' (२८ अगस्त १९०५) ने सरकार को इंगित किया कि राष्ट्र को पूर्व निश्चित लक्ष्य की ओर बढ़ने से रोकने का प्रयत्न करना अब निष्फल होगा। यह इस प्रकार था — हमारे देश के शासक सर्वशक्तिमान दल के व्यक्ति हैं। जगन्नाथ के रथ की भांति इस निरकुंश और स्वच्छाचारी शासन की गाड़ी प्रसन्नतापूर्वक उन सभी को अपने पहियों के नीचे कुचलती और विक्षत मग्न करती लुढ़कती चली जाती है जिनका दुर्भाग्य होता है कि वे उसके मार्ग को पार करते हैं। उन्नति पूर्व निश्चित है, हमें आगे बढ़ना चाहिए और उन सभी रुकावटों और बाधाओं को तोड़ कर साफ कर देना चाहिए जो कि मूर्ख नौकरशाही हमारे मार्ग में उपस्थित करे।"

स्पष्ट है कि निहलिस्टों की विजय हुई जिससे भारतीयों की स्वतन्त्रता की आकांक्षा को और अधिक आशा और बल मिला। १७ अक्टूबर १९०५ को सम्पूर्ण रूस के महान जार ने अपनी जनता को प्रतिनिधात्मक धारा सभा और बहुत कुछ स्वतन्त्रता प्रदान करदी जिसके अभाव में जैसा कि उन्होंने कहा ड्यूमा केवल एक तमाशा मात्र बन कर रह जाती। इस प्रकार नौकरशाही की अविवाद्य शक्ति को अत्यन्त अनिच्छापूर्वक जनमत के दबाव के सामने झुकना पड़ा जिसकी अभिव्यक्ति हिंसात्मक घटनाओं के द्वारा हो चुकी थी और सम्राट निकोलस ने रूसियों के लिए एक नए युग का प्रभात शुभारम्भ किया। सम्राट ने राजधानी में तथा देश के अनेक भागों में हुई अशान्ति तथा गड़बड़ के लिए दुःख प्रगट किया क्योंकि जैसा सम्राट ने अनुभव किया कि रूस के सम्पूर्ण सत्ताधारी शासक का हित और कल्याण वहां की जनता के हित और कल्याण से इस प्रकार जुड़ा हुआ है कि वह कभी भी टूट नहीं सकता और जनता का दुःख उसका निज का दुःख है। अतएव उनका दृढ़ निश्चय था कि उन कष्टों और दुःखों को जो राज्य के लिए इतने खतरनाक हैं उनको शीघ्रातिशीघ्र समाप्त किया जाय अतएव उन्होंने विभिन्न अधिकारियों को आज्ञा प्रसारित की कि अशान्ति, हिंसा, और गड़बड़ी की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए कदम उठाए जायें। साथ ही उन्होंने यह जान लिया कि सार्वजनिक जीवन में शान्ति का प्रवेश करने के लिए यह अनिवार्य है कि उच्च सरकार के कार्य का एकीकरण किया जावे।

इस प्रशंसनीय उद्देश्य को ध्यान में रखकर सम्राट ने नीचे लिखी घोषणा की (अमृत–बाजार पत्रिका ३० नवम्बर १९०५) प्रथम जन संस्था को सार्वजनिक स्वतन्त्रता का दृढ़ आधार प्रदान किया जो व्यक्ति की वास्तविक अनतिक्रम्यता के सिद्धान्त पर आधारित था और जो व्यक्ति को अन्तःकरण, भाषण, संगठन और सहयोग करने की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। दूसरे ड्यूमा के जो क्रमबद्ध चुनाव, हो गए हैं उनमें बिना हस्तक्षेप किए ड्यूमा में भाग लेने की आज्ञा देकर सम्राट की घोषणा में नई व्यवस्थापिका की स्थापना को साधारण चुनाव अधिकार के सिद्धान्त के विकास की छूट दी गई। तीसरे— यह अपरिवर्तनशील कानून बना दिया

गया कि कोई भी कानून बिना ड्यूमा की स्वीकृति के लागू नहीं किया जा सकता। हम सभी निष्ठावान रूस के पुत्रों का आह्वान करते हैं कि वे अपने देश के प्रति अपने कर्तव्य को याद रक्खें और अपने सम्पूर्ण देश में शान्ति और अक्षुब्ध वातावरण पुनर्स्थापित करने का प्रयत्न करें। हमारे शासन के ग्यारहवें वर्ष मे १७ अक्टोबर १९०५ को पीटरहोफ में की गई घोषणा।" —निकोलस

यह खेद की बात है कि हिंसा और उसकी प्रतिक्रियाओं से उस समय के सबसे शक्तिवान राष्ट्र (शासन) ने जो शिक्षा ग्रहण की उससे ब्रिटेन में और भारत में ब्रिटिश सरकार ने कोई शिक्षा नहीं ली। सरकार उससे अछूती रही अथवा यह कहा जाय कि अशान्ति और हिंसा इतनी तीव्र और प्रबल नहीं हुई कि जो सरकार को उदारता, सतर्कता और समझौते की बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह को मानने पर विवश कर सकती।

'प्रतिज्ञा' ने २६ जुलाई १९०८ को एक कविता प्रकाशित की जिसमें गुरु रामदास स्वामी और शिवाजी का साक्षात्कार का चित्र खींचा गया था जो इस प्रकार था —

'रात्रि अत्यन्त अन्धकार पूर्ण है, आकाश मेघाच्छन्न है— जिसमें कभी कभी विद्युत की कौंध होती है।" शिवाजी अपने गुरु से राष्ट्रीय और व्यक्तिगत हितों और स्वार्थों को कैसे बढ़ाया जावे इसका उत्तर माग रहे थे। गुरु रामदास ने उनसे कहा ऊपर देखो। उन्होंने देखा कि भारत माता की मूर्ति एक अत्यन्त भयानक तलवार अपने हाथ में लिए खड़ी है और अपने अधरों पर मुस्कराहट के साथ कह रही है कि यही पृथ्वी पर एक मात्र मार्ग है।"

१ दिसम्बर १९०५ के अंक में 'दलपोलेजक' ने चेतावनी देते हुए कहा कि पीड़ितों के धैर्य की सीमा पहुंच गई है। उसने जन संख्या की हाथी से राजा की कहावत से उपमा देते हुए कहा—"जब तक यह भीमकाय पशु उचित नियन्त्रण मे रक्खा जाता है सब ठीक रहता है परन्तु जब वह क्रोधित हो उठता है तो वह महावत को अपने पैरों के नीचे कुचल डालता है। जब तक कि जनता अपने शासकों के अत्याचारों को पालतू पशु की भांति सहन करती रहती है तब तक उसे उसके उचित कानूनी अधिकार नहीं मिलते। देश अब एक अदृष्ट पूर्व संकट की ओर अग्रसर हो रहा है। अकस्मात संकट के चिन्हों के प्रगट होने से भारत के भाग्य के प्रशासकों की बुद्धि मंद हो गई है। अब वैधानिक तरीकों का विरोध सुनाई देने लगा है। ट्रिब्यून (१६ सितम्बर १९०५) ने जनता से भीख मांगने की नीति को छोड़ देने के लिए नीचे लिखे शब्दों में कहा —

एक ऐसे देश में जो अवैधानिक सरकार द्वारा शासित होता हो वैधानिक आन्दोलन दूसरे शब्दों में ऐसे लोगों द्वारा वैधानिक आंदोलन जिनको कोई ऐसा वैधानिक साधन या माध्यम प्राप्त नहीं है कि वे अपनी इच्छा को जो लोग सत्ता मे हैं उस पर आरोपित कर सकें— एक क्रूर व्यंग है। वह सर्वोच्च क्षण अब आ गया है जब कि हमें वर्तमान भीख मांगने जिसे हम मोहवश वैधानिक तरीके कहते हैं और उन तरीकों के बीच किसको अपनाए यह तय करना होगा जो आज की स्थिति की मांग है और उस स्थिति को देखते उचित हैं। कांग्रेस के नेता इस पर ध्यान दें।"

अब आंदोलन एक नया रूप धारण कर रहा था।

विचार और कार्य (१९०२-१९०८)

अरविन्द १— इंगलैंड से लौटने के उपरान्त अरविन्द बड़ौदा

राज्य की सेवा में रहे। भारत में किन्हीं राजनीतिक हलचलों से विशेष रूप से सबंधित नहीं थे। वे मानो घटनाओं का अध्ययन कर रहे थे और अपने अगले कदम की तयारी कर रहे थे। वे समय समय पर बगाल जाते, स्थिति का स्वय अध्ययन करते और उन लोगों से सम्बध स्थापित करते जो इस क्षेत्र म पहले से काय कर रहे थे। उन्होने सारी परिस्थिति का भली भाति अध्ययन करने के उपरान्त यह निष्कष निकाला कि गुप्त तयारी का काय स्वय म उस समय तक प्रभावकारी नही हो सकता जब तक कि एक विस्तृत सावजनिक आन्दोलन न हो जो कि सभी म देश भक्ति की भावना को भरदे और जो भारतीय राजनीति के सम्बन्ध म अपने विचार और लक्ष्य अर्थात् स्वतन्त्रता के विचार को लोकप्रिय बनाने में सहायक हो।

उन्होने आन्दोलन मे असहयोग, जहां सम्भव हो अधिकारियो का प्रतिरोध करने, और सभी क्रान्तिकारी शक्तियों को क्रान्ति के लिए एकत्रित करने के कायक्रमो का समावेश करके आन्दोलन को नया रूप देने का विचार किया।

ऐसा प्रतीत होता है कि बगाल के कायकर्ताओं से स्वतन्त्र श्री अरविन्द का पूना के ठाकुर साहब से घनिष्ठ सम्पक था। ठाकुर साहब उदयपुर राज्य के सामन्त थे। (श्री अरविन्द श्री अरविन्दु आन हिम सेल्फ एण्ड मदर १९५३ पृष्ठ २८) वे एक गुप्त समिति के नेता और अध्यक्ष थे जो चुपचाप बम्बई में काम करती थी। कुछ और भी लोग थे जो इतने अधिक प्रसिद्ध नही थ परन्तु उनका लक्ष्य वही था, और ठाकुर साहब यद्यपि किसी भी सगठन के सदस्य नही थे पर वे उन सगठनो की कडी के समान उनको मिलाने का काम करते थे। उन्होने अपना ध्यान महाराष्ट्र पर केन्द्रित किया और महाराष्ट्र उस समय असन्तोष से सुलग रहा था। उनकी दीघ दृष्टि ने उन्हे यह अनुभव करा दिया था कि जब तक सेना मे एक बडा समूह ऐसा न हो जो क्रान्ति को सहायता पहुँचाये तब तक आन्दोलन उतना शक्तिवान नही हो सकता जो कि परिस्थिति को देखते आवश्यक है। इस मान्यता के आधार पर उन्होने अपने गुप्त प्रयत्नो की दिशा उस ओर मोड दी। और भारतीय सेना की दो या तीन रजीमैंटो को अपनी ओर मिला लेने मे वे सफल होगए। यद्यपि वे कभी भी अधिक प्रकाश म नही आए परन्तु वे गुप्त सगठनो की धुरी माने जाते थे। उन्होने श्री अरविन्द के मस्तिष्क मे अपना एक स्थायी स्थान बना लिया था। वे उस अधकार से आच्छादित भाग मे तेज प्रकाश के समान थे जो सशस्त्र क्रान्ति की सफलता का माग बतलाता है।

भगिनी निवेदिता की सलाह से जब अरविन्द भ्रात मे बगाल गए उससे पहले उन्होंने एक ओजस्वी तरुण को जो बडोदा की सेना में था। बगाल इस उद्देश्य से भेजा कि वह क्रान्तिकारी कार्यों के उपयुक्त क्षेत्रों की खोज करे और उन लोगों से सम्पक स्थापित करे जिन्होंने पहले से गुप्त समितिया बगाल मे स्थापित कर रक्खी थीं जिनके कायक्रम मे अवश्य ही उस समय तक आतकवाद का समावेश नहीं हुआ था।

जतीन बनर्जी जो बाद के जीवन म 'निरालम्बन स्वामी' के नाम से प्रसिद्ध हुए — को यह काय करने के लिए भेजा गया कि तयारी करने और कायवाही करने का कायक्रम जो अरविन्द के विचार के अनुसार तीस वष ले लेगा तब जाकर कहीं सफलता प्राप्त होने की सम्भावना होगी। विचार यह था कि गुप्त समितिया स्थापित की जावें और विभिन्न बहानो और आवरण के अन्दर जो भी दिखते हुए कार्य

किए जा सकें किए जावें। सम्पूर्ण बगाल मे क्रान्तिकारी विचार का प्रचार करना और क्रान्तिकारी समितियों के लिए लोगों को भर्ती करना उनका मुख्य उद्देश्य था।

प्रोग्राम बहुत विस्तृत और महत्वाकांक्षा पूर्ण था। उसके अन्तगत लक्ष्य यह था कि एसी सस्थाएं स्थापित की जावें जो सांस्कृतिक बौद्धिक और नैतिक विकास के काय करें और ऐसे युवकों को अपनी ओर आकर्षित करें जो सावजनिक कार्यों में अथवा क्रांतिकारी कार्यों में रुचि रखते हों। अन्तत सैनिक कार्यवाही के लिए तैयारी करनी थी। उसके लिए सेन्‌ यूद्ध आक्रमण और बचाव की सैनिक शिक्षा, घुड़सवारी साहसिक काय करना, सनिक कवायद तथा सगठित रूप से एक स्थान से दूसरे को जाने आदि का अभ्यास था— जतीन बनर्जी अपने मिशन में सफल हुए और उन्होंने कलकत्ते मे एक मुख्य केन्द्र यथोचित समय म स्थापित कर लिया उनको श्री पी मित्रा ने सब सम्भव सहायता दी। पी मित्रा ने एक यूनिट पहले से ही सगठित कर रक्खा था। जतीन बनर्जी श्री अरविन्द के पास काय की सफलता के आशाजनक समाचार ले गए। श्री अरविन्द प्रत्येक और घटना को बड़ी पैनी दीर्घ दृष्टि से देख रहे थे क्योंकि वे आगे चलकर प्रत्यक्ष कार्यवाही की योजना को कार्यान्वित करना चाहते थे।

श्री अरविन्द ने अपने अनुयायियों के कानों में मजिनी के निम्नलिखित गुरु की भावना को फूंक दिया था। " स्वतन्त्रता प्रत्येक व्यक्ति का सहज अधिकार है। प्रत्येक व्यक्ति का यह नसर्गिक अधिकार है कि वह अपनी शक्तियों का अपने विशेष मिशन को पूरा करने के लिए बिना अवरोध या बन्धन के उपयोग कर सके और उन साधनों को चुन सके जो उसको पूरा करने के लिए सबसे अधिक उपयुक्त हैं।"

यदि उद्देश्य की पूर्ति के लिए सविनय अवज्ञा अपर्याप्त प्रतीत हो तो जिन साधनों को उन्होंने अपनाया " ये खुले विद्रोह की तयारी थी " उनका सिद्धान्त वाक्य जिसका वे अनुसरण करते थे यह था कि देश मे एक गुप्त सगठन होना चाहिए जिसका एक मात्र उद्देश्य सशस्त्र क्रांति करना हो।"

बगाल में अरविन्द और महाराष्ट्र मे बाल गगाधर तिलक जिन्हें श्री अरविन्द क्रांतिकारी दल का एक सम्भावित नेता स्वीकार करते थे—के आगे आने पर दूसरों ने जिनके प्रगतिशील विचार थे अपने को पीछे कर लिया। यह दोनों राजनतिक चिन्तक के रूप म देखे जाने लगे जो एसा रास्ता खोज निकाल सकते थे जो उस रास्ते से जिस पर अभी तक देश चलता रहा था भिन्न होना था बाद की घटनाओं से यह अनुमान लगाया जाता है कि श्री अरविन्द ने अपने उत्तरदायित्व को अन्य नेताओं के साथ बाट लिया जो उस समय के लिए यथेष्ट प्रगतिशील थे। उदाहरण के लिए राजा सुबोध मलिक, सखाराम गणेश देयुस्कर ब्रह्म बान्धव उपाध्याय, चित्तरंजनदास, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी भगिनी निवेदिता तथा एक दो अन्य। परन्तु जहा तक प्रत्यक्ष कार्यवाही का प्रश्न था वे उन अत्यन्त साहसी युवकों पर भरोसा करते थे जो कि फटते बमों और चलती हुई पिस्तौलों की चमक के साथ अखाड़े मे प्रगट हुए थे। यह अपने अन्तिम लक्ष्य की ओर बढ़ने की एक नई प्रविधि और नया अस्त्र था।

शीघ्र ही सभी ओर से सावधानी बरतने क परामर्श आने लगे पर तु इडा ए टेलर की भाषा में (श्री रिवल्युशनरी टाइप) "एक सच्चा क्रान्तिकारी अपने जोखिम भरे साहसिक सघर्ष मे उसमे आने वाले खतरे को भली भांति जानते हुए कूदता है।"

केवल बुद्धिमान व्यक्तियों को चेतावनी ही नहीं उसके सामने इतिहास के पृष्ठों की भी यह चेतावनी रहती है कि इस क्षेत्र में प्रत्येक दुर्भाग्य या विनाश के भविष्य वक्ता ने अपनी खोज की है और वह उसकी घोषणा करता रहा है। वह इस रास्ते पर चलने के इच्छुक व्यक्तियों को भिड़क कर कहता है कि इस रास्ते में मृत्यु है इसम सवनाश है। और क्योंकि लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रत्येक ग्राम रास्ता जो खोजा गया अंत में वह पहले से जाकर मिला या दूसरे तक पहुँचा जो पहले से कुछ अधिक कम खतरनाक नहीं था। स्पष्ट है कि इस वक्तव्य का विरोध करना अथवा उसे गलत बताना व्यर्थ है।

इन व्यक्तियों को उतावला आदर्शवादी या स्वप्न देखने वाला कहा जा सकता है कि वे जीवन की वास्तविकता को नहीं जानते। उनके पक्ष में टेलर कहता है संसार में कुछ स्वप्न ऐसे होते हैं जो मनुष्य को खतरे के प्रति उदासीन बना देते है और ऐसे लक्ष्य होते हैं जो कि शांति और सुख के मार्ग के आकर्षण से मनुष्य को ऊपर उठा देते हैं। यह आशा करना कि साहसी व्यक्ति अपने लक्ष्य से इसलिए मुंह मोड़ लेगा कि किसी ने दुर्भाग्य की भविष्यवाणी की है मानव स्वभाव की विनम्रता में अविश्वास व्यक्त करना है जो कि कभी वास्तविकता से प्रमाणित नही हुआ"।

साहित्य की बाढ़— थोड़े से व्यक्तियों से आरम्भ होकर क्रांतिकारी विचार अर्थात् प्रत्यक्ष कार्यवाही के विचार ने अधिकाधिक लोगों के मस्तिष्क पर अपना अधिकार जमा किया। दक्षिण से लेकर उत्तर भारत के समाचार पत्र गधक और अग्नि उगलने लगे और उसके परिणाम स्वरूप अधिकारियों के कोप भाजन बने। 'पूना वभव' (१८९७) मदावृता (१८९७), केसरी' काल विहारी वन्देमातरम् (११०६) युगान्तर (१९०६) सध्या नवशक्ति कर्मयोगिन प्रातोदा (बम्बई) सहायक (लाहौर) पेशावल (लाहौर), हुँकार स्वराज्य, देश सेवक और उसी प्रकार के अनेक दूसरे पत्र एक के बाद दूसरे जल्दी जल्दी निकले और बन्द हो गए।

पुस्तकें तथा अन्य साहित्य की तेजी से जब्ती होने लगी। इस प्रकार के क्रान्तिकारी साहित्य की जब्ती मे केवल इतनी ही देर लगती जितनी कि अधिकारियों द्वारा आज्ञा पर हस्ताक्षर करने में लगती थी। लघु अभिनव भारत गाथा (गणेश दामोदर सावरकर की मराठी कविताए) मुक्ति कौन पाथे, वतमान रणनीति, भवानि मंदिर स्वाधीनतार इतिहास गरी बाल्डो, और मजिनी के जीवनचरित्र, देशेर कथा (बगाली) पर सरकार की विशेष कृपा हुई। उसी प्रकार के अन्य प्रकाशन शुम्भ निशुम्भ वध लघु नाटक, मनल प्रभा, नव उद्दीपन, रानाजीतेर जीवन जाना, इत्यादि भी सरकार की दृष्टि से नहीं बचा। भगवत् गीता को पुलिस ने भयकर राजद्रोहात्मक साहित्य की सूची मे रखा। बहुत बार ऐसा हुआ कि पुलिस जब भयानक अस्त्र शस्त्रों और राजद्रोहात्मक साहित्य की खोज म छापे मारती तो हिन्दुओ को इस महत्व पूर्ण धार्मिक पुस्तक को भी ले जाती। बाद के वर्षों में सेडिशन कमेटी की रिपोर्ट जो १६१८ में बगाल सरकार द्वारा प्रकाशित की गई थी उसको भी राजद्रोहात्मक साहित्य माना जाने लगा। वस्तुत सरकार ने उसको दबा दिया। यद्यपि खुले रूप मे यह घोषणा तो नहीं की कि उसकी प्रति जहाँ पाई जावें, जब्त करली जावे।

सरकार दमन और प्रतिरोध के उपायो को दिन प्रतिदिन कड़ा करती गई। किन्तु ऐसा लगता था कि वह एक भयकर और बढ़ती हुई बाढ़ को रोकने के लिए रेत के बांध पर अटूट विश्वास रखती है।

अध्याय दूसरा

चिनगारी

बग भग (१९०३ १९०८) —लार्ड कर्जन का वायसराय काल शिक्षित भारतियों के एक बहुत बड़े भाग में रोष की भावना उत्पन्न करने वाला सिद्ध हुआ। उसके सम्बन्ध में भारतीयों का मानना यह था कि वह भारतीयों की प्रकांक्षाओं के प्रति असहानुभूति रखता है और वह जनमत से प्रभावित न होकर केवल अपनी तरंग और इच्छा के अनुसार काम करता है। उसके विश्वविद्यालय सम्बन्धी विधेयक ने भारतीयों में संशय को अधिक गहरा तथा घना कर दिया। उसका कलकत्ता कारपोरेशन को सरकार के आधीन लाने और समाचार पत्रों का अधिकारी गोपनीयता अधिनियम के अन्तर्गत मुह बन्द कर देने तथा ऊपर नियन्त्रण स्थापित करने के प्रयत्नों का कड़ा विरोध हुआ। १९०४ में कांग्रेस के प्रतिनिधि मण्डल से मिलने से इन्कार करके उसने देश के प्रमुख राजनीतिक नेताओं के प्रति जो अभद्र व्यवहार किया उसको भारतीयों ने भारत के स्वाभिमान के प्रति घोर अपमान के रूप में देखा। बग भग का विचार उस उदार लार्ड का कोई नया काल्पनिक उत्साह नहीं था। परन्तु वह एक पुराने सुझाव को केवल मन्त्र धमालियों को जिन्होंने उसके कार्यों का पूरी तरह समर्थन नहीं किया था पाठ पढ़ाने का प्रयास था।

१८६८ में सर स्टफर्ड नाथकोट ने बगाल के सुदूर स्थित भागों के द्वारा उन अधिकारियों के समय और शक्ति के नष्ट होने की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित किया था जो प्रान्त का शासन कार्य करते थे। परन्तु उसके सम्बन्ध मे कोई कदम नहीं उठाया गया और वह सरकारी फाइलों में दबा पड़ा रहा। इस प्रश्न की दूसरी अवस्था चार्ल्स इलियट के साथ प्रारम्भ हुई। वह लफ्टीनेन्ट गवर्नर था और उसने इस पद पर नियुक्त होने के पूर्व कभी बगाल की भूमि पर पैर भी नहीं रखा था। १८९६ में इस नितान्त अनुभवहीन व्यक्ति ने पूर्वीय बगाल के भाग को पृथक करके असम के साथ उसको मिलाने के विचार को पुर्जीवित कर दिया।

इलियट ने अपने प्रस्तावित उपाय पर जनमत जानना चाहा। जैसे ही यह प्रस्ताव को जनता के सामने रक्खा गया उसकी सब ओर से घोर और कठोर निन्दा हुई और उसको वहीं छोड़ दिया गया। इलियट ने बगाल मे फोर्ट विलियम में स्थित उच्च न्यायालय से इस प्रश्न पर उनकी निर्भीक और स्पष्ट सम्मति मांगी। विद्वान न्यायाधीशों ने अपनी सम्मति को केवल इस प्रश्न तक सीमित रक्खा कि यदि यह परिवर्तन किया गया तो उसका व्यवहार न्याय तथा फौजदारी न्याय के प्रशासन पर क्या प्रभाव पड़ेगा। जो प्रशासन का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य है। यह न्यायालय के लिए अत्यन्त प्रशंसा की बात है कि उन्होंने नीचे लिखी स्पष्ट सम्मति दी— यह प्रस्ताव गलत दिशा में एक कदम है। उन जिलों को स्थानान्तरित करना जो उस समय से जबकि ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने उनका प्रशासन अपने अधिकार में लिया था और जो तब से 'विनियमन प्रदेश' का एक भाग रहे हैं एक प्रतिगामी कदम के अतिरिक्त और कुछ नहीं

होगा। अतएव चीटागांव डिवीजन का आसाम सरकार को जसी कि वह इस समय बनी हुई है स्थानांतरित करना प्रतिगामी और कुचेष्टाकारी कदम के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा।

"यायाधीशों के उस प्रस्ताव के बारे में उक्त कथन के उपरांत उसे बिना अधिक छान बीन किए ही भूमिगत कर दिया गया।

१६०२ में ही लार्ड कर्जन ने लार्ड जार्ज हेमिल्टन से अपने विचाराधीन प्रश्न अर्थात बरार को मध्य प्रान्त के प्रशासन में रखने के सम्बन्ध में तथा बंगाल के विभाजन के सम्बन्ध में अपने विचार प्रगट किए थे। उनका विचार था कि बंगाल नि सन्देह किसी एक व्यक्ति द्वारा कुशल प्रशासन के लिए बहुत बड़ा है। कुछ समय के लिये उनका यह प्रिय विचार उनके ध्यान से हट गया। १२ दिसम्बर १६०३ को गजट आफ इण्डिया में एच एच रिसले सक्रेटरी भारत सरकार को बंगाल सरकार के मुख्य सचिव के नाम पत्र प्रकाशित हुआ जिसमें यह प्रस्ताव था कि बंगाल के कुछ भागों को समीपवर्ती प्रांतों में स्थानांतरित करके उसके क्षेत्राधिकार को कम कर दिया जाय। इसके लिए तर्क दिया गया था कि जन सख्या की वृद्धि व्यापारिक तथा औद्योगिक सस्थाना का विस्तार तथा प्रशासन की बढ़ती हुई उलझनों के कारण बंगाल की सरकार पर जो अत्याधिक भार है उसको कम करने के उद्देश्य से बंगाल के लफ्टीनेन्ट गवरनर की वांछनीयता के आधार पर यह प्रस्ताव रखा गया है।

रिजले स्वय इस बात को जानता था कि यह प्रस्ताव जनता के मस्तिष्क में विरोधी प्रतिक्रिया उत्पन्न करेगा क्योंकि इस विज्ञप्ति में स्पष्ट शब्दों मे यह उल्लेख किया गया था कि सपरिषद गवरनर जनरल का विचार है कि जो प्रस्ताव रखा गया है उसकी तीव्र आलोचना हो सकती है और सम्भवत उसका बड़ा विरोध हो सकता है।

विभाजन से प्रशासन में कुशलता आवेगी या नहीं यह किसी ने जानने की परवाह नहीं की। लेकिन उसने उसके प्रस्तावकों के भय को सही सिद्ध कर दिया। कर्जन ने फरवरी १६०५ में अपने अन्तिम सुझाव ब्रिटिश सरकार को भेजे और उसी वर्ष जून में भारत मन्त्री की स्वीकृति प्राप्त करली। इस योजना ने समाचार पत्रों और जनता को क्षोभ से पागल बना दिया। अमृत बाजार पत्रिका ने १४ दिसम्बर १६०३ को उसके सम्बन्ध में लिखते हुए कहा यह प्रबन्ध में क्रांतिकारी और अनावश्यक प्रयत्न है जो देश में भीषण हड़कम्प उत्पन्न करेगा। अमृत बाजार पत्रिका ने यह स्पष्ट चेतावनी दे दी थी कि सरकार की यह कार्यवाही ऐसी उत्तेजना की भावना को उत्पन्न करेगी कि बहुत बड़ी सख्या में उसके कारण लोग पागलों जैसी दशा में हो जावेंगे। सभी प्रमुख समाचार पत्रों में विरोध की बाढ़ आ गई। विशेषकर बंगाल के पत्र तो बौखला उठे। बहुतों में से कुछ मुख्य पत्र ये इण्डियन मिरर (१३ १२ १६०३) बंगाली (१५ १२ ०३), इण्डियन एम्पायर (१५ १२ ०३), हिन्दू पेट्रियट (१५ १२ ०३) चारु मिहिर (१५ १२ ०३) विद्नुप्रिया अमृत बाजार पत्रिका (१६ १२ ०३), ज्योति (१७ १२ ०३) सञ्जीवनी (१७ १२ ०३) प्रतिनिधि (२६ १२ ०३) इत्यादि इत्यादि। १७ दिसम्बर १६०३ को ट्रिब्यून ने इस प्रस्ताव के अनेक दोषों को बतलाते हुए उसकी कड़ी निन्दा की। 'चारु मित्र' के अनुसार उसे दुष्ट वैद्य में वरदान मानना चाहिए। क्योंकि उसने विभिन्न पेशों और विभिन्न विचार और मान्यता के लोगों को एक साथ

निकट ला दिया। १२ जनवरी १९०४ को पत्र ने लिखा—इस प्रस्ताव ने असम्भव बातों को भी सम्भव बना दिया। उसने निरक्षर ग्रामीण को वाणी प्रदान करदी। मूक को सोचने की शक्ति दे दी, जमींदार जिसकी एकमात्र महत्वाकांक्षा जिलाधीश को प्रसन्न करना रहती थी उसके विरुद्ध खड़ा कर दिया। संक्षेप में उसने समस्त देश को एक विचार और एक उद्देश्य से प्रेरित कर एक सूत्र में बांध दिया।

१६ जनवरी १९०४ के अंक में ट्रिब्यून ने बंग भंग के प्रस्ताव ने जिस आंदोलन को जन्म दिया उसकी गहनता और विशालता पर संतोष प्रकट करते हुए लिखा—'पूर्वीय बंगाल के उन जिलों में जिन्हें स्थानांतरित किया जा रहा है प्रदेश के पुनर्वितरण के विरुद्ध जैसा क्रमबद्ध सद्भावी और सुसंगठित आंदोलन चलाया जा रहा है भारत में शायद ही कभी देखने में आया हो। यह देखते हुए कि विचाराधीन परिवर्तन से किसी को भी लाभ नहीं पहुँचेगा परन्तु उससे कभी भी न अन्त होने वाला भ्रम फल जावेगा और वह सम्राट की कोटि कोटि प्रजा की गहरी भावना को ठेस पहुँचावेगा, यह विश्वास नहीं किया जा सकता कि वह कभी भी कार्य रूप में परिणित किया जा सकेगा। बंगाली (२० जनवरी १९०४) ने सरकार के प्रस्ताव की बुद्धिमानी पर संदेह प्रकट करते हुए अपने राजनीतिक दर्शन को नीचे लिखे शब्दों में प्रकट किया। 'जो सरकार शांतप्रिय नागरिकों को आंदोलनकारी बना दे उसे अपनी राजनीतिक बुद्धिमत्ता के लिए कम से कम बधाई नहीं दी जा सकती। २३ जनवरी १९०४ को इंग्लिशमन ने अपने संपादकीय लेख में लिखा—' बंगाल प्रांत की काट छांट करने के अपने प्रस्ताव की लोकप्रियता के सम्बन्ध में सरकार को अब शायद ही कोई संदेह हो। विभाजन के प्रस्ताव का प्रत्येक महत्वपूर्ण क्षेत्र में तथा प्रत्येक भाषा में कटु आलोचना हुई है। यह प्रस्ताव भावना तथा बुद्धि दोनों के लिए घृणास्पद है। प्रत्येक समुदाय ने तथा प्रत्येक समुदाय के प्रत्येक उपवर्ग ने उनका घोर विरोध किया है। उनके कारण अत्यन्त आवेशपूर्ण विरोध का एक तूफान फूट पड़ा है जिसने इस प्रस्ताव के विरोधियों को भी चकित कर दिया है। अभी तक सरकारी पक्ष के समर्थन में कोई क्षीण स्वर भी सुनाई नहीं दिया। यदि ऐसा होता तो वह केवल विरोध करने वाले स्वार्थों के कान को बहरा कर देने वाले शोर के महत्व को ही बढ़ाता। सच तो यह है कि आकस्मिक पर्यवेक्षक यही सोचेगा कि सरकार ने बंगाल में अपनी प्रजा को विचलित करने का सोच समझ कर सर्वोत्तम उपाय ढूंढ निकाला है और उसको प्रान्त की जनता को उत्तेजित कर देने के लिए एक अत्यन्त दीर्घगामी और हास्यास्पद साधन के रूप में चुना है।"

एक मास उपरांत उसने एक दूसरे लेख में लिखा—"विभाजन के समर्थकों, को उनके नाम अवश्य ही संख्या में अधिक नहीं हैं—को अपने विरोधियों की सद्भावना पर कीचड़ उछालने का व्यर्थ प्रयत्न करने की अपेक्षा और कोई और हथियार या उपाय काम में लाना चाहिए।' इंडियन डेली न्यूज (जनवरी २९, १९०४) ने इस सम्बन्ध में टिप्पणी लिखते हुए अत्यन्त व्यंग शब्दों में कहा—"हमने बहुत सुना है कि सरकारी तौर पर कहा जाता है कि भारत सरकार संसार में सबसे अधिक प्रगतिशील सरकार है। प्रगतिशील का यदि यही अर्थ है कि जनमत का विरोध होते हुए भी वर्तमान स्थिति में अनावश्यक गड़बड़ी उत्पन्न की जावे और अनावश्यक असंतोष फैलाया जावे तो अवश्य ही भारत सरकार के लिए प्रगतिशीलता की उपाधि सही है।"

लार्ड कर्जन की सरकार ने यह घोषणा की थी कि उस योजना को मुसलमानों

महत्वपूर्ण घटक हैं जिन्होंने अपने देश की भावी आशा और नियति के प्रति लोगों को प्रेरणा दी है। "सब साधारण की इस तीव्र चेतना और गहन विश्वास, कि देश में बंगाली प्रभाव को कम करने के लिए बंगाल का विभाजन किया गया है जनता में और भी अधिक क्षोभ उत्पन्न कर दिया है।" जीवन के एक दूसरे क्षेत्र से इस सम्बन्ध में जो सम्मति आई वह एक चिकित्सक की थी। सरजन जनरल सी वी इवाट ने भी सर हैनरी काटन के विचारों का समर्थन किया। इवाट ने कहा "जो भी कोई भारत में धरातल के नीचे देखता है वह अवश्य ही इस बात को देख सकेगा कि असंतुष्ट बंगाली की भारत में शक्ति और जन कल्याण के विरुद्ध प्रतिक्रिया होती है क्योंकि उसके पुत्र समस्त भारतीय साम्राज्य में सर्वत्र फैले हुए हैं और ऐसे पदों पर हैं जहां से वे प्रशासन और जनमत को बहुत बड़ी सीमा तक प्रभावित कर सकते हैं। मैं जानता हूं कि बंगाल में असंतोष का प्रभाव अभी भी उस प्रांत से बहुत दूरी पर स्थित जिलों में फैल रहा है अतएव इस बात की आवश्यकता है कि इस विषय पर और अधिक विचार किया जाय। फिर इण्डिया आफिस चाहे जो कहता हो।" (अमृत बाजार पत्रिका—२१, जुलाई १९०६)

इन महानुभावों ने अपने तरीके से सर सैयद अहमद की सम्मति को ही प्रतिध्वनित किया जो कि उन्नीसवीं शताब्दी के भारत के सबसे अधिक विशिष्ट मुसलमान थे। १८८४ में उन्होंने लाहौर में कहा था कि मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि बंगाली ही हमारे देश में ऐसे व्यक्ति हैं जिनके लिए हमें उचित रूप से गौरव हो सकता है। यह केवल उन्हीं के कारण है कि हमारे देश में ज्ञान स्वतंत्रता की भावना और देश भक्ति का विकास हो रहा है। मैं सच्चे हृदय से कह सकता हूं कि वे हिंदुस्तान के सभी समुदायों के सरताज हैं।

परन्तु कर्जन और उसी की जैसी विचारधारा के लोगों के लिए लंदन के एक सन्ध्याकालीन अनुदार समाचार पत्र की सम्मति अधिक वजनदार थी। उसका मत था "कि बंगाली भारत की अन्य तेजस्वी जातियों की तुलना में अनादर और घृणा का पात्र है।" ओडानल ने उसके उपरोक्त कथन का मुंह तोड़ उत्तर देते हुए कहा 'यह उन तथ्यों में से एक है जो कि बंगालियों की भावनाओं को चोट पहुँचाने के कारण राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त खतरनाक है। सम्पूर्ण भारत के हिंदुओं की सहानुभूति उनके साथ है।"

१९०५ में जून और अक्टोबर के मध्य में विभाजन को समाप्त करने के लिए तीव्र आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। उसकी तीव्रता गहनता, और विशालता ने उसके नेताओं को आशा को भी बहुत पीछे छोड़ दिया। उनको कल्पना भी नहीं थी कि आन्दोलन इतना सर्वव्यापी और तीव्र होगा। विभाजन की घोषणा को लोगों ने कहा कि यह खेद और प्रसन्नता दोनों की ही बात है। आनन्द मोहन बोस ने कहा—'लार्ड कर्जन ने वास्तव में हमारी अत्यन्त महत्वपूर्ण सेवा की है। उसने हमें नवीन राष्ट्रीय जीवन की बहुमूल्य नींव डालने के योग्य बना दिया। जनवाणी का सारांश यह था कि कर्जन ने बंगाल के लोगों के प्रति अपनी दुर्भावना के कारण देश में राष्ट्रीय जीवन के बीज बो दिए। उसने अपनी सनक अर्थात् बंगाल के लोगों को राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से क्षीण करना— को संतुष्ट करने के लिए जनमत की नितान्त अवहेलना की जिससे राष्ट्रीय क्षोभ फूट पड़ा। सब बंगालियों को अनुभव

हुआ कि शताब्दियों की निद्रा से जगाने के लिए उन्हें झकझोरे जाने की आवश्यकता थी।

पूर्व और पश्चिमी बंगाल में हजारों की संख्या में विरोध प्रगट करने के लिए सभाएं हुईं जिनमें श्रोताओं की संख्या एक हजार से चालीस हजार के मध्य थी। प्रत्येक सभा में जनता ने इस प्रकार का विरोध करने के लिए गम्भीर और दृढ़ निश्चय, और अभूतपूर्व उत्साह प्रकट किया। इन सभाओं में अत्यन्त ओजस्वी और गरम भाषण होते और जो भी व्यक्ति इन सभाओं में उपस्थित होते वे उन प्रस्तावों की भावना और आत्मा को सुदूर गावों तक पहुंचाने का जिम्मा लेते। विरोध प्रगट करने का कार्यक्रम 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' स्वीकार किया गया। इस कार्यक्रम में कानून को तोड़े या वैधानिक अधिकार की अवज्ञा किए बिना बहिष्कार को अपनाया गया। केवल विदेशी वस्तुओं का ही बहिष्कार नहीं वरन उन व्यक्तियों का भी बहिष्कार इसके अन्तर्गत सम्मिलित था जो कि राष्ट्रीय हितों के प्रति विश्वासघात करते थे। कांग्रेस जो उस समय का देश का सबसे बड़ा शक्तिशाली राजनीतिक संगठन था उसको भी भिक्षा मांगने की नीति को छोड़ना चाहिए, जो वैधानिक आंदोलन की रीढ़ प्रतीत होती थी। उपाधि धारियों को अपनी उपाधियों को त्याग देना था जो दासता के चिन्ह थे। अन्त में जहां तक सम्भव हो राजनीतिक मुकदमों में न्यायालयों द्वारा न्याय करने की क्षमता की उपेक्षा करना इत्यादि कार्यक्रम सम्मिलित थे। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा इस बात की प्रतिज्ञा ली जाती कि हम प्रत्येक तरीके से अपनी आवाज को ब्रिटिश जनता तक पहुंचाने की शपथ लेते हैं उसमें ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम था।

१६ अक्टूबर १९०५ को फेडरेशन हाल के शिलान्यास के अवसर पर जो विशाल सभा हुई उसमें जनमत को प्रतिध्वनित करते हुए नीचे लिखी घोषणा को स्वीकार किया गया। "जहां सरकार ने बंगाल का विभाजन बंगालियों के एक स्वर से विरोध करने पर भी करने का निश्चय किया है। वहां हम यह शपथ लेते हैं और घोषणा करते हैं कि हम सब लोग अपनी शक्ति भर अपने प्रान्त के अंग भंग के दुष्परिणामों को दूर करने का प्रयत्न करेंगे और अपनी जाति की एकता को बनाए रखेंगे भगवान हमारे सहायक हों।" ए एम बोस १६ १० १९०५

जो लोग कि राजनीतिक दृष्टि से अधिक चेतनाशील थे उन्होंने ब्रिटिश वस्तुओं के बहिष्कार से होने वाले अभाव की पूर्ति स्वदेशी वस्तुओं के निर्माण से करने की बात सोची। जिससे कि आंदोलन समाप्त होने के उपरांत भी आयात की हुई विदेशी वस्तुओं की आवश्यकता न पड़े। राजनीतिक दृष्टि से उग्र मतवालों ने बंगाल द्वारा इस कठोर अपमान को निष्क्रिय होकर चुपचाप सहन कर लेने की तुलना जापान द्वारा श्वेत राष्ट्रों में सबसे अधिक अहंकारी राष्ट्र रूस के विरुद्ध शत्रुता की भावना के प्रदर्शन से की। उनके कथन का सारांश यह था कि 'क्या बंगालियों का कोई धर्म नहीं है उनमें क्या देशभक्ति की भावना नहीं है? उन्हें मां काली शक्ति की देवी की याद करना चाहिए। उन्हें मराठा वीर शिवाजी के महान वीरोचित कार्यों को याद करना चाहिए उन्हें प्रत्येक प्रकार से विदेशी सरकार से बदला लेना चाहिए। विशेषकर बहिष्कार को इतना प्रभावशाली बना देना चाहिए कि हमारे पवित्र देश के तट पर एक भी विदेशी वस्तु न आ सके।"

इस आन्दोलन में लोगों ने चीनियों का अनुकरण किया। जिन्होंने मई १९०५ में अमेरिकन वस्तुओं का विरोध स्वरूप इसलिए बहिष्कार आरम्भ किया था क्योंकि अमेरिका ने एक अन्याय पूर्ण अनय सधि का प्रस्ताव किया था। ३० जून १९०५ को दनिक हितवादी ने लिखा " आखिरकार सयुक्त राज्य अमेरिका ने यह निश्चय किया कि चीनी यात्रियो और व्यापारियो के साथ ब्रिटेन के प्रवास अधिकारी दुर्व्यवहार नहीं करेंगे। यह चीनियो के इस आग्रह का परिणाम था कि वे अमेरिका की वस्तुए नही खरीदेंगे।

अन्तिम रूप में लार्ड रोनाल्डशे (लाइफ ऑफ लार्ड कर्जन पृष्ठ ३२६) ने स्थिति का विवरण इस प्रकार किया है " बगाल वास्तव में उस प्रकार के अनुचित आवेश के तूफान से निकल रहा है जो कभी भी यहां की भावुक जनता को बहा ही ले जा सकता था। लार्ड कर्जन द्वारा उनकी उसी भावना को जिसकी उसने साधारण समझ कर उपेक्षा की थी छेड़ने से उनके स्नायु भीमकाय सितार के तारों की तरह झकृत हो उठे थे।

सी जे ओडानल ने विरोध के मनोवैज्ञानिक विकास का नीचे लिखे अनुसार चित्रण किया है—'लार्ड कर्जन के हाथों जनता ने बहुत कुछ सहन किया परन्तु उसने धय और व्यवस्था को बनाए रक्खा। उन्होंने सोचा कि अच्छा समय आ रहा है। परन्तु जब उन्होने देखा कि उनकी प्रार्थनाओं को अन्यायपूर्ण और अराजनीतिज्ञतापूर्ण सिद्धांत " यह ध्रुव सत्य है' के द्वारा अस्वीकार कर दिया जाता है तो उससे लोगों में वह निराशापूर्ण क्षोभ उत्पन्न हो गया जो सभी देशों में लोगों को आवेशपूर्ण निराशा की सीमा पर ले जाता है।"

नवम्बर १९०५ के प्रथम सप्ताह से ही लोग स्वय अपने से पूछने लगे " आगे कैसे बढ़ा जावे "। आइरिश लोगो का उदाहरण उनके सामने था। आइरिश लोग सातसौ वर्षो तक अपनी स्वतत्रता के लिए सघर्ष करते रहे परन्तु उसका ब्रिटेन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसका एक मात्र कारण यह था कि आयरलैंड आक्रामक और सुरक्षात्मक दोनों कार्यों के लिए अपनी शक्तियो को एकत्रित और केन्द्रित करने में असफल रहा। सब साधारण की माग थी कि ' हमें चलाने के लिए एक सम्मत लक्ष्य या ध्येय चाहिए। हमें एक नेता चाहिए जो हमारा मार्ग निर्देशन करे। हमे युद्ध के साधन चाहिए जिससे हम शक्तिवान बनें।"

इसके उपरान्त नव निर्मित पूर्वीय बगाल के प्रान्त में ऐसा घोर दमन आरम्भ हुआ जो कि इतिहास में किसी भी सभ्य देश में नहीं हुआ था। कुछ अर्थो में उस भयकर दमन ने जार की उन निरकुश आज्ञाओं को भी अधकार में फेंक दिया जो कि रूसी जनता को भयभीत कर आधीनता स्वीकार कराने के लिए निकाली गई थी। उस स्थिति का एक चित्र फिर वह चाहे जितना अधूरा ही क्यों न हो आज के पाठक को रुचि कर होगा। क्योकि जो क्रूर अत्याचार सरकार ने निशस्त्र शान्तिपूर्ण किन्तु दृढ़ जनता पर किए उसका परिणाम यह हुआ कि बगालियों ने सगठित हिंसा को अपनाया वे बगाली जिन्हें भीरु और शारीरिक स्वास्थ्य और शक्ति की दृष्टि से निर्बल कह कर चिढ़ाया जाता था क्रान्तिकारी हो उठे। इस आन्दोलन ने बगाल के तरुण वर्ग की कल्पना को पकड़ लिया और जैसा कि अन्य सभी देशों में हुआ जो कि किसी महान परिवर्तन के लिए सघर्ष कर रहे थे विद्यार्थी उस आंदोलन को शक्ति प्रदान करने के लिए उसमें सम्मिलित हो गए।

स्वदेशी विरोध पत्र—आंदोलन को दबा देने के लिए सरकार ने पहला कदम

विद्यार्थियों तथा शिक्षण संस्थाओं के विरुद्ध उठाया जो छात्र राजनैतिक आंदोलन में भाग लें अथवा उनका राजनीतिक कार्य के लिए उपयोग किया जावे तथा शिक्षण संस्थाएं जो उनसे सम्बंधित थीं और सरकारी सहायता तथा अनुदान पाती थीं उन्हें दंडित किया जाय। प्रत्येक जिले के दण्डनायक तथा जिलाधीश को एक गोपनीय परिपत्र १६७६ पी ही दिनांक १० अक्टूबर १६०५ जो बंगाल सरकार के मुख्य सचिव द्वारा दार्जिलिंग से भेजा गया था उसमें निर्देश था कि उन्हें इन अपराधों की ओर ध्यान देना चाहिए 'बहिष्कार, धरना देना, तथा अन्य दुर्व्यवहार जो तथाकथित स्वदेशी आन्दोलन से सम्बंधित हों उनके सम्बन्ध में जो भी जन आंदोलन हों यदि यह आवश्यक लगे तो ऐसी संस्थाओं को सरकारी अनुदान बन्द कर देना चाहिए और ऐसे छात्रों को छात्रवृत्ति के लिए प्रतिस्पर्धा करने का अधिकार समाप्त कर देना चाहिए।' और उन छात्रों की छात्रवृत्ति को रोक देना चाहिए और विश्वविद्यालय को उन संस्थाओं को अपने से असम्बद्ध कर देने के लिए कहना चाहिए' यदि विद्यार्थियों को उनकी स्वदेशी आंदोलन सम्बन्धी कार्यवाही को रोकने या नियन्त्रित करने में असफल रहने पर राजभक्त संस्था को उन छात्रों के नाम उचित अधिकारियों के पास आवश्यक कार्यवाही के लिए भेज देना चाहिए। "इसके अतिरिक्त दण्डनायक तथा जिलाधीशों से कहा गया कि वे सभी श्रेणियों के अध्यापकों तथा शिक्षण संस्थाओं के प्रबंधकों से कहें कि वे विशेष सिपाहियों की भांति शांति बनाए रखने में अधिकारियों की सहायता करें। इस बात पर बहुत बल दिया गया कि ऐसे व्यक्तियों को नियुक्त किया जावे "जिन्हें छात्रों का आदर प्राप्त हो और जो ऐसे छात्रों को पहचान सकें जो दोषी हों।"

इस परिपत्र को सार रूप में तथा तथ्य का निवचन करते हुए सभी शिक्षण संस्थाओं को भेजा गया कि वे उसके प्रावधानों को लागू करें।

पूर्वीय बंगाल सरकार तथा असम के मुख्य सचिव भी पीछे नहीं रहे। जिन्होंने ८ नवम्बर १६०५ को एक परिपत्र निकाला जो कि दूसरे वाले बंगाल के समान ही था केवल उसमें एक धारा और जोड़ दी गई थी कि "वे उन छात्रों को राज्य के हित में संस्था से निकालने के प्रश्न पर विचार करेंगे जिनका लालन पालन उस प्रभाव के अन्तर्गत हुआ हो जो राज्य विरोधी हो।"

यह इस मान्यता पर आधारित था कि ऐसे छात्र सरकार को राजभक्ति के साथ सेवा नहीं कर सकते। स्वदेशी विरोधी परिपत्र की भाषा और ध्वनि से यह स्पष्ट हो गया कि सरकार ने छात्रों को पुलिस की दया पर छोड़ने के इसी तरीके का अनुसरण करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है।

२५ अक्टूबर १६२५ को दार्जिलिंग से शिक्षा निदेशक ने पत्रसंख्या टी २६२ निकाला जिसमें पुलिस द्वारा दिए गए दोषी छात्र का नाम रहता था और जो प्रत्येक शिक्षण संस्था के मुख्य अधिकारी को भेजा जाता था और उससे पूछा जाता था 'कारण बतलाइये कि उक्त छात्र को आपकी संस्था से निष्कासित क्यों न कर दिया जाय?'

प्रान्तीय सरकारों ने जब अपना दुर्वह कर्तव्य पूरा कर लिया तो भारत सरकार के लिए इस सम्बन्ध में कुछ करना शेष रह गया। ६ मई १६०७ को गृह विभाग से एक परिपत्र उसी विषय पर था जिस पर दो वर्ष पूर्व स्वदेशी विरोधी परिपत्रों द्वारा प्रांतीय सरकारों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयत्न किया गया था। इस सम्बन्ध में

गहरी चिन्ता प्रगट की गई थी— " उच्च शिक्षा की रक्षा की जाय जिसके लिए शिक्षकों और छात्रों में राजनैतिक आन्दोलनों में भाग लेने की प्रवृत्ति से खतरा पैदा हो गया है। "

इस प्रवृत्ति पर इस मान्यता के आधार पर खेद प्रगट किया गया क्योंकि उसके कारण नीचे लिखे दोष उत्पन्न होते हैं। ' अधिकार के विरुद्ध इससे प्रतिरोध और विधिहीनता की भावना उत्पन्न होती है। जिसका अवश्यम्भावी परिणाम वास्तविक शिक्षा के विकास को पीछे ढकेलना, छात्र की भौतिक समृद्धि को हानि पहुँचाने तथा भारतीय सार्वजनिक जीवन की परम्परागत आधार शिला को उलटना होगा। "

परिपत्र में कहा गया कि इससे केवल उच्च शिक्षा में हस्तक्षेप होने का ही गम्भीर खतरा नहीं है वरन् स्कूल तथा कालेजों की कार्यकुशलता के क्षीण होने का अवश्यम्भावी परिणाम आयेगा। जब विद्यार्थियों का मस्तिष्क अपने उचित कार्य से विचलित होगा तो उसका अवश्यम्भावी परिणाम होगा अनुशासन में शिथिलता "। अतएव भारत सरकार ने यह आवश्यक समझा कि विभिन्न श्रेणी की शिक्षण संस्थाओं के अध्यापकों तथा छात्रों के उत्साह पर रोक लगाई जावे। जो दंड देने थे वे वही थे जो कि पिछले परिपत्रों में सुझाए गए थे। उदाहरण के लिए सरकारी सहायता को बंद कर देना छात्रवृत्ति के लिए प्रतिस्पर्द्धा में बैठने के अधिकार को छीन लेना तथा जिन्हें छात्रवृत्ति मिलती है उनकी छात्रवृत्ति को बंद कर देना तथा विश्वविद्यालय द्वारा उनको अपने से असम्बद्ध कर देना आदि।

कुछ विदेशी पत्रकारों की गम्भीर और सबल सम्मति यह थी कि इन परिपत्रों से ब्रिटिश सरकार के यश को धब्बा लगेगा। ' कपिटल ' में ' मावस ' ने लिखा (जिसे ४ नवम्बर १९०५ के अंक में अमृतबाजार पत्रिका ने उद्धृत किया— ' यह मूर्खतापूर्ण परिपत्र रूस के जार के आज्ञा पत्र जैसा दिखता है जो भय के कारण लिखा गया है। वह ब्रिटिश प्रलेख जैसा बिलकुल भी नहीं दिखता। इसके अतिरिक्त यह भारतीय प्रजा की स्वतन्त्रता से हस्तक्षेप करने का प्रत्यक्ष प्रयत्न है, और यह बंगाल के विधि पालक तरुण विद्यार्थियों को इसके लिए भयभीत और आतंकित किया करना है कि वे अपनी आत्मा की आवाज को दबाएं और उन्हें इसके विरुद्ध धमकाना है कि वे अपनी किसी हानि रहित राजनैतिक राय को कभी कभी प्रकट करके आत्म सुख को प्राप्त न कर सकें। यह परिपत्र एक अत्यन्त उपहासप्रद चिथड़ा है जिसके लिए बंगाल की सरकार को घोर लज्जा आनी चाहिए। उसको तुरन्त वापस लेना चाहिए। यह कुछ दशाओं में बंगाल में प्रत्येक शिक्षा अधिकारी पदावनति का वारंट है जो *प्रत्येक प्रिंसिपल (आचार्य) को पुलिसमैन और प्रत्येक शिक्षक को गुप्तचर बना डालना* चाहता है। यह बंगाल का रूस जैसा बना डालने का प्रयत्न है। इसको केवल इसलिए बतलाना आवश्यक है जिससे कि वह उपहास का पात्र बन जावे।

छात्रों में अशान्ति पर बहुत अधिक ध्यान देकर सरकार ने अपनी निर्बलता को स्पष्ट कर दिया जो कि ' बिहारी ' पत्र की दृष्टि से नहीं बची। पंद्रह अप्रैल को उसने ' तरुणों की शक्ति ' शीर्षक लेख में लिखा ' बंगाल की सरकार युवकों से नाराज है और एक के बाद दूसरा परिपत्र निकाल कर उन्हें दबा रही है। इससे हमें विश्वास होता है कि बंगाल के युवक अपने देश के प्रति शुद्ध रूप में भक्ति रखते हैं और स्वदेशी आन्दोलन को प्रबल वेग से चला रहे हैं क्योंकि जब तक अग्रज सम्बंधी

देशभक्ति को नहीं देखते वे कभी नाराज होने वाले नहीं हैं। स्वदेशी आदोलन में इस बार युवकों की वास्तविक शक्ति जागृत हुई है।"

उसी समय लदन के एक पत्र ने 'लदन ट्रेड्स एण्ड लेबर गजट' ने लिखा—'ऐसा दिखता है कि सैनिक तत्व अधिक शक्तिशाली होता जा रहा है और भविष्य म भारत सनिक निरकुश शासन से शासित होगा।" यह केवल एक पक्ष का चित्र है। जो समाचार पत्र अग्रेजो द्वारा निकाले गए थे और उनके स्वामित्व में थ व उन परिपत्रो से बहुत प्रसन्न थे क्योकि उनमें उनकी इच्छा की पूर्ति समाहित थी।

वन्देमातरम (१६०५ १६०७)—पूर्वीय बगाल के अधिकारियो को दो साधारण शब्दों अर्थात 'वन्देमातरम से विशेष रूप से चिढ हो गई थी। अधिकारी उन दो शब्दो को ऐसा मानते थे मानो भारत म ब्रिटिश साम्राज्यवाद की मृत्यु की घोषणा की वह आवाज हो। अतः वन्देमातरम को उच्चारण करने पर सब सम्भव उपायों से रोक लगाने का प्रयत्न किया गया। इस प्रयत्न में सरकार ने जिन उपायो को काम में लिया वे अत्य त सदूर भूत की बर्बरता की याद दिलाते थे। सम्पूर्ण विद्यार्थी समुदाय इस दमन का शिकार हो गया। नवबर १६०५ म रगपुर जिला स्कूल के दो सौ छात्रो पर प्रत्येक पर पाच रुपये जुर्माना किया गया क्योंकि उन्होंने एक राजनीतिक सभा में भाग लिया और वन्देमातरम् गीत गाया। ११ नवम्बर, १६०५ को ढाका शिविर से मुख्य सचिव का एक आदेश निकाला कि ऐसी कोई सभा सावजनिक स्थान पर नहीं होनी चाहिए और ऐसे किसी जलूस को सावजनिक मार्गों पर निकलने की आज्ञा नहीं देनी चाहिए जहा 'वन्देमातरम' के नारे लगाए जाने की सम्भावना हो। यह इस प्रकार के प्रतिबन्ध बारीसाल, मैमनसिंह, रगपुर और नोआखाली जिलो में विशेष रूप से लगाए गए।

घरों में रहने वाले वृद्ध और लडकों म सात आठ वर्ष के सुकुमार बच्चों को भी नहीं छोडा गया। बहुत बडी सख्या में शिक्षण सस्थाओ के सभी छात्रो को जुर्माना स्कूल से निष्कासन और बेंतो की सजा दी गई। बारीसाल में दण्डनायक की अदालत के बाहर एक पत्र के समाचार के अनुसार कोडे का त्रिकोण खडा कर दिया गया था। यदि कोई वन्देमातरम् का घोष करता तो पुलिस उसको कोड मारने की धमकी देती थी। यह समाचार अमृत बाजार पत्रिका के बारीसाल के सवाददाता ने २५ नवम्बर १६०५ को लिख कर भेजा। १० नवम्बर १६०५ को रगपुर जिला स्कूल के तीन लडकों को प्रत्येक पर तीन रुपये जुर्माना इसलिए किया गया क्योंकि उन्होंने 'वन्देमातरम' का घोष किया था। चौकीदारों को यह आदेश था कि यदि लडके वन्देमातरम् का नारा लगायें तो उनके जोडो पर कठोर प्रहार करो। यदि इस अपराध अथवा समान अपराध के लिए उन्हें दडित किया गया हो और स्कूल से निकाल दिया गया हो तो जिले के किसी भी स्कूल मे उनको प्रवेश न दिया जाय। स्कूल के अधिकारियो को जिलाधीशो ने आज्ञा दे दी कि जब पुलिस अधिकारी उन छात्रों को पहचानने और जाच करने आवें जो सभाओ में सम्मिलित हुए अथवा जो स्वदेशी आदोलन मे सम्मिलित हुए थे, तो वे उपस्थित रजिस्टर उन्हें दिखावें। कालेज के आचार्यों को आदेश दिया गया कि वे अपने छात्रों को क्षेत्र विशेष जिसे जिलाधीश चुनें या निर्धारित करें आने से रोकें। (उस समय वे क्षेत्र बाघ बाजार ममनसिंह थे)। उसके साथ ही यह भी कहा गया था 'कि सरकार के हितों की उपेक्षा तथा इस सबध में अनुशासनहीनता के दण्डस्वरूप

उन छात्रों को जो उसके दोषी होंगे सरकारी नौकरियों के अयोग्य घोषित कर दिया जायेगा।"

"१८ जनवरी १६०६ को ढाका कमिश्नर के स्कूलों के इंस्पेक्टर ने किशोरगंज स्कूल के हैड मास्टर को आज्ञा दी कि वह प्रथम और द्वितीय कक्षाओं के सभी छात्रों को पांच सौ बार यह लिखने को कहे कि वन्देमातरम चिल्लाने में समय को व्यर्थ नष्ट करना मूर्खता और अशिष्टता है। यह वाक्य सुन्दर लेख की तरह लिखे जाने चाहिए और वे सब लेख एक प्रमाण पत्र के साथ इंस्पेक्टर को भेजे जायें कि यह उसी छात्र का लेख है जिसका उस पर नाम है।"

हैडमास्टर को इसके अतिरिक्त यह भी चेतावनी दी गई कि जब तक शिकायत के सभी कारण को समाप्त नहीं कर दिया जाता सब प्रकार के सरकारी अनुदान जो स्कूल को मिलते हैं समाप्त कर दिए जा सकते हैं।

कलकत्ता के मध्य श्यामपुकुर थाना क्षेत्र में (तथा कुछ अन्य स्थानों पर) कुछ युवकों ने अपने युवकोचित उत्साह का प्रदर्शन किया और २८ नवम्बर १६०६ को उन्होंने आक्षेप योग्य शब्दों 'वन्देमातरम' का नारा लगाया। जैसा कि बहुधा होता है वे 'वन्देमातरम' का नारा लगा कर वहां से अन्तर्धान हो गये। किसी ने पुलिस को खबर कर दी, एक समाचार पत्र ने लिखा कि सब इंस्पेक्टर पुलिस बहुत बड़ी संख्या में सिपाहियों को लेकर घटनास्थल पर पहुँचा और वहां के रहने वालों को पीटा। यहां तक कि घरों में रहने वाली स्त्रियां भी नहीं बचीं। २८ अप्रैल १६०६ को बंगवासी ने लिखा कि 'वन्देमातरम' बंगालियों के लिए कितना महत्वपूर्ण है।

'वन्देमातरम' शब्द में देशभक्ति की भावना का द्योतक है न कि राजद्रोह का। इसके अन्दर स्वदेशी के प्रति प्रेम निहित है न कि सम्राट के प्रति घृणा। इसमें प्रकाश है अन्धकार नहीं उसमें अमृत भरा है विष नहीं है। यह कमल नाल है जिसमें कांटे नहीं हैं यह बिना मृत्यु वाला जीवन है। यह अपनी मातृभूमि की प्रशंसा का गीत है न कि युद्ध का नारा।

'वन्देमातरम' शब्द देश भर में दूर दूर फैल गया। ट्रिब्यून में २५ नवम्बर १६०५ को लिखा कि सुदूर पंजाब में भी यह शब्द परस्पर अभिवादन करने के शब्द बन गए हैं। इस सम्बन्ध में लिखते हुए ट्रिब्यून ने लिखा—भारतीयों ने अपनी प्रसन्नता को व्यक्त करने का नारा वन्देमातरम स्वीकार किया है। उसके कोई भीषण अर्थ नहीं हैं। उसका अर्थ केवल यही है कि अपनी मातृभूमि की जय बोलना। क्या आतंक द्वारा वन्देमातरम को हटाया जा सकता है? पंजाब में भी जबकि शिक्षित लोग एक दूसरे से मिलते हैं तो आजकल बहुधा उनका अभिवादन का शब्द वन्देमातरम होता है। भारत के करोड़ों मनुष्यों के अगणित होंठों को 'वन्देमातरम' कहने से रोकने के लिए सरकार को लाखों की संख्या में सिपाही रखने होंगे। पूर्वीय बंगाल के लोगों से संपूर्ण भारत की सहानुभूति है। १३ अक्टूबर, १६०५ को कलकत्ते के शिक्षित युवकों द्वारा एक संस्था का संगठन किया गया जिसका नाम 'वन्देमातरम सम्प्रदाय' था और उसका उद्देश्य कलकत्ता नगर में वन्देमातरम की भावना को जलूस निकाल कर वन्देमातरम राष्ट्रीय गान गाकर फैलाना था।

अपमान—प्रतिष्ठा और अधिकतर बड़ी आयु के राष्ट्रीय विचारों के व्यक्तियों का घोर अपमान किया जाता था। रंगपुर में १५ नवम्बर १६०५ को बहुत बड़ी

सख्या मे जो समाज में उत्तरदायी पदो पर थे और जो कि आन्दोलन के लोकप्रिय नेता थे उन्हें विशेष कान्स्टेबिल नियुक्त कर दिया गया। उनमें से कुछ को प्रात काल पुलिस लाइन में आने और घटो कवायद करने के लिए विवश किया जाता था। शेष को साधारण कान्स्टेबिलो की भांति नगर में गश्त लगाना पड़ता था। जब उनको पेटी बाध कर और डडे के साथ आने को कहा गया तो कुछ ने उस आज्ञा को मानने से इनकार कर दिया इस पर उन्हें कानून की अवज्ञा करने के अपराध मे दण्डित करने के लिए उन पर मुकदमा चलाने की आज्ञा दे दी गई।

सामान्य रूप से सभी दडनायक और विशेषकर रगपुर और बारीसाल में निरकुशतापूर्ण आचरण करने लगे जिन्हे कानून के प्रति कोई श्रद्धा न थी। बारीसाल के मजीस्ट्रेट ने कुछ भद्र लोगों को अपने बगले पर बुलाया और उनमें से एक या दो को उन्होंने विशेष गौरव प्रदान किया और कहा कि वे " भडकाने वाले वक्ता हैं" और उनको धमकी दी कि मैंने तुम्हारा नाम गुरखो को दे दिया है मैं तुम्हें सलाह देता हू कि कम से कम पद्रह दिनो के लिए तुम नगर के बाहर चले जावो और ध्यान रखो कि यदि नगर में कुछ भी हुआ, फिर चाहे तुम उस स्थान पर उपस्थित हो या न हो गुरखा जैसा चाहेंगे तुम्हारे साथ व्यवहार करेंगे यदि वे तुम्हारे साथ कोई बहुत बुरा व्यवहार करें तो मैं उसके लिए उत्तरदायी नहीं होऊंगा।

बारीसाल जैसे छोटे नगर में ११० गुरखा सैनिक बुलाए गए जिनका मुख्य काम लडकों के पीछे दौडना और दीवारों पर चिपकाए गए कागज या विज्ञापन जिन पर 'वन्देमातरम' शब्द लिखा हो फाडना था। बनोरीपारा, मधावपासा, और एक दो अन्य स्थानो पर विशेष पुलिस की टोली नियुक्त करदी गई और वहां के रहने वालों से उसका व्यय वसूल किया गया। पुलिस की रिपोर्ट पर एक आनरेरी मजिस्ट्रेट को निलम्बित कर दिया गया और उससे पूछा गया कि क्या यह सच है कि उन्होने २४ नवम्बर १९०५ को मैमनसिंह की सभा मे भाग लिया और बोले जिसमें बारीसाल, मदारीपुर और रगपुर के लोगो को सरकार के प्रति उनके रूख के लिए धन्यवाद दिया गया था।

यदि तनिक भी इस बात का सदेह हो कि किसी भी रूप में राष्ट्रीय भावना के व्यक्त होने की सम्भावना है तो बिना कुछ जांच किए सामाजिक समारोहों में हस्तक्षेप किया जाता था। पूर्वीय बगाल के जिलों मे ऐसे व्यक्तियों को भी जिन पर कोई सदेह नहीं होता, निर्दयतापूर्वक बिना विभेद के पीटा जाता। ऐसी घटनाए बहुत सामान्य हो गई थी। एक गैर जिम्मेदार व्यक्ति द्वारा रिपोर्ट करने पर एकाएक एक बड़ा अधिकारी बहुत बडी सख्या मे सिपाहियो को लेकर आया और मैमनसिंह के बडे बाजार में जिसको भी पाया उसको पीटा। जो लोग निजी मकानो के बराडो मे खडे थे उन्हे खीच कर गिरा लिया गया। जिला सुपरिटेडट ने स्वय कई लडकों और निर्दोष व्यक्तियो को पीटा।

पूर्वीय-बगाल के मुख्य नगरो मे जिला स्थानीय पुलिस के सर्वोच्च अधिकारी से लाइसैंस लिए कोई भी जलूस नहा निकाला जा सकता था। जलूस निकालने का एक लाइसस (सख्या ४३१ दिनाक १०-१२-१९०५) इस बात पर दिया गया---कि जब जलूस निकल रहा हो तो कोई भी ऐसा शब्द नहीं बोला जायगा या कार्य किया जावेगा जिसका सम्बध स्वदेशी आदोलन से हो।

राजशाही में सर्वोपरि वकील डिप्टी सुपरिटेंडेंट पुलिस के पास एक सार्वजनिक सभा करने की आज्ञा प्राप्त करने गये। इससे पूर्व कि वे अपनी पूरी बात कह पाते पुलिस अधिकारी ने अत्यन्त अभद्रतापूर्वक चिल्लाकर कहा—अपनी जबान बन्द करो। वे सज्जन अत्यन्त अपमानित होकर वापस लौट गए। जलपाईगुरी में अन्य वर्षों की भांति सरस्वती पूजा हुई। ३१ जनवरी को देवी की मूर्ति को जलमग्न करने के सम्बन्ध में जो समारोह होता है वह इस आधार पर बंद कर दिया गया कि वहां लड़के रास्ते में 'वन्देमातरम चिल्लाएंगे—यह उन अनेक घटनाओं में से कुछ घटनाएं तथा आदेश हैं जो कि व्यक्तिगत और राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के लिए घोर अपमानजनक थीं। वे स्थिति को शांत करने के लिए स्थान पर क्रांति का मार्ग प्रशस्त कर रही थीं। 'पंजाबी' ने सरकार की नीति की आलोचना करते हुए गम्भीरतापूर्वक पूछा। (२२ नवम्बर १९०५) 'क्या सरकार के लिए यह हितकर है कि वह शिक्षित वर्ग की मानवीय सहनशक्ति की सीमा के बाहर क्षुब्ध करदे और उनकी राज्यभक्ति को टूटने के बिन्दु तक खींचे। बंगाल और बंगाल के बाहर जनता के ऊपर जैसा भयंकर दमन किया जा रहा है वह मानव की सहनशक्ति के बाहर है। परमात्मा ने कहा 'प्रतिशोध मेरा है मैं उसको चुकाऊंगा। किन्तु 'प्रतिशोध हमारा भी है" यह वे पीड़ित राष्ट्र भी कह सकते हैं जो कि आज नीचे गिरे हुए हैं। धूल में पड़े हैं। मानव जाति के इतिहास ने इसकी बार बार साक्षी की है और जैसा कि हम जानते हैं इतिहास की पुनरावृत्ति होती है।"

धरना और बहिष्कार — केवल विद्यार्थियों द्वारा ही नहीं किसी भी व्यक्ति द्वारा धरना यद्यपि खुले रूप में अपराध घोषित नहीं किया गया परन्तु प्रत्येक उपाय से उसको रोकने का प्रयत्न किया गया। उसके लिए विशेष रूप से परोक्ष रूप में आदेश दिए जाते थे जिनके अन्दर धमकी छिपी रहती थी — 'कोई भी जो किसी अन्य व्यक्ति को देश में बनी हुई वस्तुओं को खरीदने पर विवश करता है वह कानून की दृष्टि में अपराधी है।"

एक आदेश इस प्रकार था ' विदेशी वस्तु का बहिष्कार करने का आवाहन इस आधार पर आपत्तिजनक है कि वह एक प्रकार से एक राजकीय घोषणा है जो कि सम्राट अथवा उसका प्रतिनिधि ही कर सकता है।" अधिकारी लोगों को उदाहरण के लिए मदारीपुर के एस डी ओ को स्वदेशी वस्तुओं के खरीदने का आग्रह करना लोगों की स्वतन्त्र इच्छा में हस्तक्षेप करने के समान प्रतीत होता था। इसके विपरीत लोगों को धमकाकर विदेशी वस्तुएं खरीदने के लिए दबाना स्वतन्त्र इच्छा में हस्तक्षेप नहीं था यदि वह सरकारी कर्मचारी करे। बंगाल के पूर्वीय तथा उत्तरीय जिलों में यह एक साधारण दृश्य था कि योरोपियन अधिकारी पुलिस तथा प्रशासनिक बाजारों तथा मंडियों में जाते और लोगों को इंगलिश वस्तु लिवरपूल नमक, तथा ऐसी ही अन्य ब्रिटेन की वस्तुओं का कारबार करने के लिए प्रोत्साहित करते। भोला और बारीसाल में कुछ वकीलों (२३ नवम्बर १९०५) और अनेक अन्य लोगों पर एक साथ एक ही स्थान पर तथा अन्य स्थानों पर केवल इस अपराध के लिए मुकदमा चलाया गया कि वे लोगों से विदेशी नमक खरीदने के लिए मना करते थे।

शासकों को जिस बात से सबसे अधिक आक्रोश था वह विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार था क्योंकि उससे भारतीय बाजार में इंग्लैंड के औद्योगिक तथा व्यापारिक

हितों के लिए खतरा पन्न हो गया था, जो कि युनाइटेडकिंगडम की आय का मुख्य मात्र था। विजित जाति के लोगों के अन्तर को फौलाद के समान कठोर बनाने वाली अन्य बातें तथा उनका म जो खुले रूप में संघर्ष करने का दृढ़ निश्चय उत्पन्न हो गया उसको शासक वग जो शक्ति के कारण मदान्ध हो गया था समझ नही पा रहा था। परन्तु भारतीयो को इस आन्दोलन में कुछ ऐसी वस्तु मिली जो पावन थी और जिसके गर्भ में क्रान्ति की अग्नि की चिनगारी छिपी हुई थी। 'वन्देमातरम्' ने ६ अगस्त १९०७ बहिष्कार की वषगांठ' शीषक के अन्तगत लिखा — 'सात अगस्त भारतीय राष्ट्रीयता का ज म दिवस है। भारतीय राष्ट्रीयता का अर्थ है दो बातें — स्वय को राष्ट्र की स्वतत्रता के लिए समर्पित कर देना और स्वतत्रता को व्यवहार म लाना। बहिष्कार स्वतत्रता का आचरण है उसका व्यवहार है अतएव जब हमने सात अगस्त को बहिष्कार की घोषणा की तो हम केवल मात्र आर्थिक विद्रोह का आरम्भ ही नहीं कर रहे थे परन्तु राष्ट्रीय स्वतत्रता के आचरण का शुभारम्भ कर रहे थे। आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनने त राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र म स्वावलम्बी बनने के प्रयत्न आरम्भ होंगे क्योंकि यह काय एक दूसरे पर निभर होते हैं। अतएव सात अगस्त वह दिन है जब कि भारतीय राष्ट्रवाद का ज म हुआ जबकि भारत ने अपनी आत्मा के लिए अपनी स्वतत्रता की खोज निकाला, यह वह दिन था जबकि हमने कभी न हटने वाला कदम राष्ट्रीय एकता के पथ पर रखा जो अपने को जानने का एक मात्र माग है। उस दिन भारत की राष्ट्रीयता का शिलान्यास हुआ।"

इसके उपरान्त इस महान घटना को उसकी महत्ता के अनुरूप मानने के लिए पत्र ने निर्देशन दिया — 'हमे इस दिन को उस भावना और स्वरूप से मनाना चाहिए कि जो उसके महान और गौरवमय अर्थों के अनुरूप हो। उस दिन समस्त बगाल को उस नई भावना और नए जीवन के प्रति पुन अपने को समर्पित करना चाहिए। अपने हृदय और मस्तिष्क को शुद्ध और पवित्र बनाना चाहिए जिससे कि वह मातृभूमि रूपी माता के निवास क लिए उपयुक्त मदिर बन सके। उस दिन हमें शान्त गम्भीर, वीरतापूवक पुरुषोचित शब्दों म अपने स्वतत्र अस्तित्व का दृढ निश्चय दोहराना चाहिए। नौकरशाही न हमारे राष्ट्रीय जीवन की नवीन गति विधियो और कार्यों के विरुद्ध क्रूर आक्रोश व्यक्त किया है। उसने अपने अस्त्र शस्त्रों और सशस्त्र घोर दमन के द्वारा हमारे आर्थिक बहिष्कार को चकनाचूर और नष्ट कर देने का प्रयत्न किया है। उसने युवकों द्वारा मातृभूमि की सेवा को दण्डनीय अपराध बना दिया है। बड़ी आयु के प्रौढ़ों और वृद्धो द्वारा राष्ट्रीयता के प्रचार के लिए उन्हे कारावास और देश निकाले का दड दिया गया है। सात अगस्त इन निषेध आज्ञाओ और उत्पीडन का प्रभावशाली उत्तर होना चाहिए। बहिष्कार का पुन निश्चय करना चाहिए। इस बार बहिष्कार को दृढ़ता और सादगी से राष्ट्रीय नीति के रूप से स्वीकार करना चाहिए और सभी को उस नीति के प्रति आस्थावान और दृढ़ रहना चाहिए।"

२३ नवम्बर १९०५ को 'डेली न्यूज' के कलकत्ता के सम्वाददाता न बगाल में पुलिस के शासन के चिन्ताजनक स्वरूप के सम्बन्ध में लिखा — 'भारतीय प्रशासनिक अधिकारियो की नीति में आरम्भ से अन्त तक भयकर भूलो और दुष्कार्यों की एक श्रृखला है। सब तरह से वे निकृष्ट और अथहीन हैं, और बगालियो क

सूम्कर (१) कर उगाह कर।

'वन्देमातरम' (जून १६०७) ने अपना लक्ष्य 'एक स्वतंत्र और संयुक्त भारत' बतलाया और भारतीय जनता को उसकी सम्भावनाओं के संबंध में प्रशिक्षित करना अपना मिशन घोषित किया १२ अगस्त १६०७ के लेख में उसने अपने दृढ़ विश्वास को नीचे लिखी भाषा में 'एक अपवाद और कुछ भ्रम' शीर्षक के अन्तर्गत व्यक्त किया — 'भारतीयों के उद्देश्य उतने ही ऊंचे हैं जितने कि मैजनी या गरीबाल्डी के थे। उनका लक्ष्य है कि अन्य राष्ट्रों में हम अपने देश का स्वतंत्र और पृथक अस्तित्व चाहते हैं। वह महान शक्तिवान वभवशाली शोभावान देश बने और वह अपनी प्राचीन गौरवश्री को भी पीछे छोड़ दे। यह उसके प्रयत्नों का उद्देश्य है और हमने यह कठिन काम अपने ऊपर लिया है जिसके लिए व्यक्तिगत रूप से हम सब कुछ दाव पर लगा देंगे— आराम का जीवन, धन स्वतन्त्रता और यदि आवश्यकता हो तो प्राण भी— यह हम अन्य राष्ट्रों के विरुद्ध घृणा अथवा शत्रुता के कारण नहीं वरन इस दृढ़ विश्वास के साथ कि हम ऐसा करके सम्पूर्ण मानवता जिसमें इंगलैंड भी सम्मिलित है— के हित के लिए और अपनी भावी पीढ़ियों और राष्ट्र के हितों के लिए काम करेंगे।"

दूसरे दिन (१३ अगस्त १६०७) 'सन्ध्या' ने ऐसी उद्दाम्त भावनाओं से स ओतप्रोत, लेख प्रकाशित किया कि जिसकी प्रत्येक पंक्ति में देशभक्ति भरी थी। हमारी महत्त्वकांक्षाएं हिमालय पर्वत से भी ऊंची है— हमारी वेदना इतनी गहन है मानो हमारे अन्दर एक ज्वालामुखी हो— हम स्वर्ग नहीं चाहते, हम मुक्ति भी नहीं चाहते। यों मां हम बार बार भारत में जन्म लें जब तक कि उसकी दासता की श्रृंखलाएं टूट न जायें। पहले मातृभूमि स्वतंत्र हो उसके बाद ही मृत्युलोक [illegible] बन्धनों से मुक्ति का अवसर आवेगा।

'युगान्तर' (२ सितम्बर १६०) के अनुसार भारतीय जनता का स्वतंत्र होने का दृढ़ निश्चय प्रबल लोकशक्ति को उत्पन्न करेगा। वह शक्ति जिसने एक दिन भयानक रूप में फ्रांस में क्रान्ति की अग्नि को प्रज्वलित किया, उस समाज और प्रभुता को छिन्न भिन्न कर डाला जो सैकड़ों वर्षों से चल रही थी और जिसने एक नए जीवन को स्फूर्ति दी है जो प्रचंड छिन्नमस्ता (देवी काली का शीष रहित स्वरूप) की भांति स्वयं अपना मस्तक काटकर स्वयं अपना रक्त पीकर नृत्य में मग्न होगई। और जिसने अपने भयंकर अट्टहास से समस्त योरोप को कम्पित कर दिया। वह समय आ रहा है जब कि वह शक्ति भारत में भी उदय होगी। भारत को भी उस खेल को देखना चाहिए जिसने आज रूस में अपनी गर्जना से प्रत्येक अत्याचारी के जीवन को सशंकित और कष्ट प्रद बना दिया है और जो प्रत्येक युग में प्रगट होती और देश को रुधिर की नदी बहाकर शुद्ध और परिष्कृत कर देती है। शताब्दियों के अत्याचार और अन्याय उस रुधिर की नदी में बह जाते हैं।

इस प्रकार देश क्रांति के लिए तैयार होगा। जो प्रक्रिया इसको देश में ल सकती है उसका युगान्तर ने ७ अप्रेल १६०७ को इस प्रकार वर्णन किया है —

'लगभग सभी देशों में क्रांति के पूर्व जनता तीन दलों में बंट जाती है एक दल उन देशद्रोहियों का होता है जो स्थापित सरकार की सहायता करता है। दूसरा दल उन लोगों का होता है और वह देश की जन संख्या का बहुमत होता है जो कि स्वतन्त्रता की उत्कट कामना करते हैं और उसको प्राप्त करने के लिए थोड़ा त्याग भी

करने को तयार रहते हैं। परन्तु वे उसके लिए युद्ध मे कूदने के लिए तैयार नही होते। तीसरा दल उन लोगो का होता है जिनके लिए स्वतन्त्रता के बिना जीवन भार बन जाता है और जो अपने आदर्श के लिए स्वय अपना बलिदान कर देने के लिए भी अतिच्छुक नही होते। यह क्रमश आवश्यक होता जा रहा है कि इस तरह का तीसरा दल प्रत्येक नगर और ग्राम में बनाया जावे और उनको एक दूसरे से जोड दिया जावे।"

पुनर्यौवन के लिए दमन —अंग्रेजो के स्वामित्व में प्रकाशित होने वाले पत्रों ने शालीनता और शिष्टता को भी तिलाजलि दे दी इसके कारण उनकी दृष्टि ही जाती रही। जैसा कि अगस्त १६०६ के 'पायनियर' की नीचे लिखी बौखलाहट से स्पष्ट है। 'यदि बगालियो ने उस सलाह के अनुसार काम किया जो उन्हे दी जा रही है तो हम उन पर तोप की अग्नि और तलवार से आक्रमण करेंगे और बिना पछतावे के जसा कि हमने १८५७ में किया था वैसे ही लोगो को गोली से उडा देंगे और फासी पर लटका देंगे। शायद हम उससे भी अधिक कठोरता का व्यवहार करें। साम्राज्यवादी जाति की शेर की प्रवृत्ति मर नही गई है केवल सोती है।"

भारतीयों की ओर से हिंद स्वराज्य' ने (२ माच १६०७) उस चुनौती को स्वीकार कर लिया। उसने घोषणा की कि भारत को अपने स्वतन्त्रता के लक्ष्य को अवश्य प्राप्त करना है 'यदि हम इस जीवन मे स्वतन्त्रता प्राप्त नही कर सके तो दूसरे जीवन में करेंगे भारतीय मृत्यु का सामना करने से नही डरेंगे। 'यदि हम अपने जीवनकाल म दासता की बेडियां को नही काट सके, तो हमारे लिए बलिदान का पुरस्कार तयार है।" उसने आगे लिखा—यदि अपनी वतमान दुदशा से बचने के प्रयत्न में हमारी मृत्यु हो गई तो स्वग के द्वार हमारे लिए खुले रहेंगे। पवत शिखर से जब वेगवती जलधारा नीचे की ओर तेजी से उतरती है तो उन रोडों और पत्थरो को झटका कर तोड देती है जो उसके वेग को रोकने और उसे वापस अपने उद्गम स्थान पर भेज देने की बात सोचते हैं। अंग्रेजी समाचार पत्रों और ब्रिटिश कूटनीतिज्ञो की बौखलाहट को भारतीयों ने अत्यन्त उपहास के साथ सुना और उससे भयभीत होकर चुप हो जाने और मृत्यु की शांति को स्वीकार करने के स्थान पर उन्होंने दमन के द्वारा पागल बना देने वाले प्रभाव का स्वागत किया जिससे कि वे देश मे से आलस्य, आत्मतुष्टि और भय को भगा सकें।

युगान्तर' (७ माच १६०७) ने लिखा "हम शांति नहीं चाहते। ऐ अंग्रेजों हम शांति नही चाहते जिसकी स्थापना को तुम अपना दवी कतव्य मानते हो। हम अब अत्याचार और अन्याय चाहते हैं। जो भयकर अशाति और अव्यवस्था आरम्भ हो गई है उसे चलने दो। वह दुर्भिक्ष की अग्नि जिसमें प्रति दिन अगणित जीवन भस्म हो जाते हैं—उस अग्नि शाखा को इसी तरह कुछ और अधिक समय तक जलने दो। इस मृत्यु में भारतीयों को अमृत प्राप्त होगा—तुम अपने स्वभाव के अनुकूल दमन और अत्याचार के पथ पर चलते चलो। सब दिशाओ में अराजकता और अशाति बिखेरते हुए आगे बढ़ो। भारतीय उसके साथ ही उचित अवसर पर शांति के बीज बोदेंगे और आवश्यक परिवतन और चुनाव कर लेंगे।"

एक ही देश में दो विरोधी शक्तियो के शान्तिपूवक एक साथ रहने के लिए स्थान नहीं है। और इसम यो तनिक सदेह नहीं है कि पुनर्जीवित भारतीय राष्ट्रवाद

अन्त में ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर विजयी होगा।

'वन्देमातरम' (१४ मई १९०७) ने असंदिग्ध भाषा में इस सम्बन्ध में अपना नीचे लिखा निर्णय घोषित कर दिया—"भारत में राजनीति सिद्धान्तों का संघर्ष है। नौकरशाही का संघर्ष जनतन्त्र के सिद्धान्त से है जो परस्पर एक दूसरे के विरोधी हैं तथा देशी राष्ट्रीयता की शक्ति का संघर्ष विजातीय साम्राज्यवाद की शक्ति से है। हमारे शासकों के साथ हमारा सम्बन्ध रक्षक और रक्षित का नहीं है वरन् भक्षक और भक्ष्य का है। एक मनुष्य और एक चीता एक ही मकान में साथ साथ नहीं रह सकते। अतएव भारतीय राष्ट्रवाद और नौकरशाही का निरंकुशवाद भारत को अपने आपस में न तो बांट ही सकता है और न साथ साथ शान्ति से रह ही सकता है। उनमें से एक को जाना ही होगा।"

'वन्देमातरम' ने बहुत से उदाहरण देकर यह सिद्ध करना चाहा (८ जून १९०७) कि विचारों और भावनाओं की जीवन शक्ति बहुत अधिक होती है और उसने इस बात की ओर संकेत किया कि सभी निरंकुशता के आधार पर संगठित राज्य निश्चित रूप से शारीरिक और पाशविक बल प्रयोग की शक्ति को आवश्यकता से अधिक महत्व देते हैं और विचार की शक्ति को अवमानित करते हैं। शक्ति से मदांध राष्ट्र इस अकाट्य और अटूट नियम को भूल जाते हैं — "कि राष्ट्रवाद जनतन्त्र तथा स्वतन्त्रता की आकांक्षा का आरम्भ तो दुर्बल होता है परन्तु अन्त अत्यन्त शक्तिशाली होता है। जबकि निरंकुश राजशक्ति द्वारा दमन का प्रारम्भ महा शक्तिशाली किन्तु अन्त दुर्बल होता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि निरंकुश शासन का सदैव विनाशकारी ढंग से अन्त होता है। यह सब होते हुए भी प्रत्येक पीछे आने वाला निरंकुश शासक अपने को धोखा देता रहता है कि उसे कभी हानि नहीं उठानी पड़ेगी। ब्रिटिश सरकार पर यह ऐतिहासिक पागलपन सवार होगया है क्योंकि आज वह संसार की सब शक्तिमान और आर्थिक दृष्टि से महान समृद्धिशाली देश है। इजिप्ट (मिस्र) भारत और आयरलैंड में वह दमन की तयारी कर रही है। उसे उन नवीन विचारों की तनिक भी चिन्ता नहीं है कि जिनकी मुख्य विरोधी ब्रिटिश निरंकुशता है। जो भवितव्यता है नियति उसी निश्चित मार्ग पर आगे बढ़ेगी केवल देखना यह है कि इङ्गलैंड इन विचारों को मनमाने और बलात कानूनों के द्वारा दबा देता है अथवा मशीनगन अथवा तोपों से समाप्त कर देता है।"

एक शक्तिशाली राष्ट्र का विकास करने के लिए जो गुण चाहिए वह विदेशी शासन में नहीं पनप सकते। 'युगान्तर' (१ जुलाई १९०७) ने विरोध में अपनी वाणी को प्रखर किया और कहा —

"चाहे जिस क्षेत्र में लें क्या हमें स्थायी रूप से दूसरों के प्रति वफादार रहना होगा। ऐसी दशा में हमारी मानसिक संकीर्णता का कभी अन्त नहीं होगा। क्या विजातियों द्वारा हमारे राष्ट्रीय जीवन का सदैव इसी प्रकार नियंत्रण होता रहेगा तो हम कभी अपने वास्तविक स्वरूप को प्रगट नहीं कर सकेंगे। उस देश में जहां शिवाजी और बालाजी ने जन्म लिया था केवल ऐसे राजभक्त राजनीतिज्ञ उत्पन्न होंगे जो याचना के लिए प्रार्थना पत्र लिखने में पटु होंगे।"

जो राष्ट्र दासता के अन्धकार में पड़े हुए हैं उन्हें दमन के लाभदायक प्रभाव इसलिए नहीं दिखलाई पड़ते क्योंकि दमन का बाह्य रूप अत्यन्त वीभत्स और कुरूप

होता है। दमन के वास्तविक मूल्य को समझने के लिए धरातल के नीचे जाकर देखना होगा। वास्तव में भगवान जो सब कुछ देने वाला है यह उसका अनुग्रह और कृपा है। उसी पत्र ने २२ जुलाई १९०७ को लिखा — केवले यही बात नही है कि ब्रिटिश लोग तुम्हें पीस डालने के लिए दमन का सगठन कर रहे हैं। यह इसलिए है कि तुम्हारे लिए शुभ दिन निकट आ रहा है। यही कारण है कि कल्याणकारी मा ने यह तेज उपचार किया है। भगवान की तुम पर अवश्य ही कृपादृष्टि है कि उसने तुम्हारे लिए यह महान तयारिया की हैं जिससे कि तुम शताब्दियो के अपने भयकर पापो का परिशोध कर सको। आओ हम हसते हुए अपने को कभी न समाप्त होने वाले दमन को सहन करने के लिए तयार करना चाहिए। दुनिया को यह बतलादो कि हिन्दू मरने से नहीं डरता क्योकि मर कर ही वह जीवित रहेगा।"

यह समय आ गया है कि जबकि झूठे भय की भावना को हृदय से निकाल दो। मजबूती से खडे होने पर झूठी शक्ति का आवरण फट जावेगा। 'युगान्तर' (३० जुलाई १९०७) अत्यन्त सरल भाषा में सारी बात को इस प्रकार रख देता है— 'जिस दिन भारत के लोग यह जान लेंगे कि यह ताश के पत्तो का मकान समस्त भारतीयो की एक फूक का सामना भी नहीं कर सकता उसी दिन से ब्रिटिश शासन के अन्त का प्रारम्भ हो जावेगा।" 'डरो मत लम्बी नीद के उपरान्त पुनर्जागरण के चिन्ह प्रगट होने लगे हैं। क्या तुम यह अनुभव नही करते कि मा का क्रन्दन भगवान तक पहुँच गया है ?"

यह एक ध्रुव सत्य है ('बन्देमातरम' १ अगस्त १९०७) जो राष्ट्र स्वतन्त्रता की पुन प्राप्ति के लिए दृढ सकल्प है वह निबलता के वातावरण मे भी शक्ति का स्रोत खोज लेगा। 'निरकुश शासन की भृकुटि चढाई परन्तु अमेरिका स्वतन्त्र है, और अंग्रेजो ने क्रोध किया परन्तु अमेरिकन उपनिवेशो के लोग स्वतन्त्र हैं। परतन्त्र लोगो की रखती हुई निबलता प्रेरणादायक स्वतन्त्रता के आदर्श से अजेय शक्ति म परिणत हो जाती है। यदि यह अत्याचार थोडे समय के लिए अस्थाई रूप से जनता के साहस को कमजोर करदे तो भी हमें हताश नहीं होना चाहिए। कभी पराजय कभी जय प्राप्त करते हुए हम अपने लक्ष्य की ओर बढते जावेंगे।" अरविन्द ने कहा 'दमन प्रभु के अग के अतिरिक्त कुछ नही है—त्याग और बलिदान के बिना किसी भी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती।

नवीन मत —अशाति के चिन्ह यहा वहा देश म सवत्र दृष्टि गोचर होने लगे थे। आकाश में गरजते हुए बादल घिर आए थे यह एक ऐसा दृश्य था जो कि उस महान शक्ति की झाकी दिए बिना नही रहता था जो उसके गर्भ में छिपी हुई थी।

उस नवीन मत के सिद्धात 'युगान्तर ने रस्किन की भाषा म उनका समथन करते हुए प्रकाशित किए थे — (१) गडरियो में कोई कला नहीं है यदि वे शाति से रहते हैं, यदि कृषक शातिपूर्वक रहत हैं तो उसमें कोई कला नही है। (२) यह सब विनाशकारी शाति थी जिसने रोम का विध्वस किया। इस समय यह उस प्रेतसाधक के आधीन है जिसने उसे मत्र से मूर्छित कर रक्खा है और भारत को नपुसक बना दिया है। (३) हम शाति और गान भजन की बात करते हैं, शाति और बाहुल्य की बात करते हैं, शाति और सभ्यता की बात करते हैं, परन्तु मैंने देखा कि इतिहास ने

इन शब्दों का गठबंधन नहीं किया। उसके अधरों पर शब्द यह थे शांति और ऐन्द्रिय सुख, शांति और स्वार्थपरता, शांति और मृत्यु। मुझे ज्ञात हुआ कि संक्षेप में सभी बड़े राष्ट्रों ने शब्द की सत्यता और विचारों की शक्ति को युद्ध में सीखा। युद्ध में वे पनपे और शांति ने उन्हें नष्ट कर दिया। युद्ध ने उन्हें सिखाया और शांति ने धोखा दिया, युद्ध ने उन्हें प्रशिक्षित किया और शांति ने उन्हें छोड़ दिया। एक शब्द में वे युद्ध में जन्मे और शांति से नष्ट हो गए।

लोगों को भूतकाल की गौरवश्री को याद करने और उसको प्राप्त करने के लिए आह्वान किया गया। 'हिन्दू स्वराज्य' (२ मार्च १६०७) लोगों को हमारे पूर्वजों की तलवार को इन शब्दों में याद दिलाता है "ऐ प्रिय तलवार ... तू वीर पुरुष के हाथ में चमकती है और उसकी कमर से लटकती है ... तू ही हमारे पूर्वजों की अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने में एकमात्र सहायक थी।"

'आर्यावर्त' (२ मार्च १६०७) यह आशा थी कि नवीन विचार जनता के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित करेगा। सेना भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहेगी। और वे यह समझ जायेंगे कि अपने देशवासियों पर गोली चलाना और विदेशियों को उनका गला काटने में सहायता पहुँचाना जघन्य पाप है।

उत्तरदायी समाचार पत्रों ने एक स्वर बिना किसी हिचक के कहा कि सरकार भविष्य को पढ़े और समय रहते सावधान हो जाये। 'गुजराती' ने (२६ दिसम्बर १६०७) को लिखा— "यदि समय रहते सरकार जनता की इच्छा के सामने नहीं झुकती तो उन्हें आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि यदि जनता कानून की सीमा को पार कर अवधानिक तरीके से व्यवहार करे।"

लोगों का ब्रिटिश शासन पर से विश्वास उठता जा रहा है और सच तो यह है "कि फिरंगियों का साम्राज्य पृथ्वी पर नरक के समान है" ('बिहारी' २८ जनवरी १६०८) उसी अंक में उसने पुनः लिखा कि विभिन्न देशों में देशभक्ति के विभिन्न अर्थ हैं। "न्यू साउथ वेल्स में देशभक्ति का सबसे अधिक प्राथमिक अर्थ है 'सीधी गोली चलाने की योग्यता'"। यह उल्लेखनीय है कि वहां प्रत्येक स्कूल के भवन के द्वार पर यह आदर्श वाक्य खुदा रहता है। 'बिहारी' पूछता है—देशभक्ति की यह परिभाषा क्या किसी भारतीय स्कूल में पढ़ाई जाती है? यदि बंदूक से निशाना लगाने की दक्षता स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए उस देश में आवश्यक समझी जाती है जोकि स्वतन्त्र है क्या वह खोई हुई स्वतन्त्रता को प्राप्त करने के लिए और भी अधिक आवश्यक नहीं है? कैलीफोर्निया में देशभक्त लोगों को जापानियों की तरह विदेशियों को किरच की नोक से निकाल बाहर करना सिखाती है। क्या भारतीयों के लिए यह सम्भव नहीं है कि वे कैलीफोर्नियावासियों के उदाहरण का अनुसरण करें और अंग्रेजों से उसी तरह का व्यवहार करें।

अन्य पत्र भी इसी प्रकार के विचारों का प्रचार करने में पीछे नहीं थे। 'केसरी' इससे भी आगे बढ़ा, उसने कहा (४ फरवरी १६०८) 'दमनकारी कानूनों और अध्यादेशों की अवज्ञा निर्वासन की जोखिम पर भी करनी चाहिए। जब तक हम यह रुख नहीं अपनाते तब तक हम वर्तमान दासता की स्थिति में बने रहेंगे।" कालचक्र तेजी से घूम रहा है यदि सुधार करने का अवसर खो दिया तो देश में अराजकता फैल जावेगी। 'गुजरात' ने (११ फरवरी १६०८) को नीचे लिखी चेतावनी दी — 'धय की

सीमा होती है। पिछले दिनो सरकार का जनता के प्रति व्यवहार बहुत कठोर हो गया और यदि ऐसी स्थिति में राजद्रोही निकल पडते हैं और अधिकारियों का जीवन खतरे में पड जाता है तो और किसी को दोष नही दिया जा सकता वे स्वय उसके लिए उत्तरदायी हैं।"

नवासारी पत्रिका की भाषा और भी अधिक वजनदार थी (६ फरवरी १९०८) पुलिस और सेना के शासन के विरुद्ध उसने कहा "ब्रिटिश सरकार की यह बड़ी भूल होगी कि सैनिक शक्ति मे अत्यधिक भरोसा करके वह भारतीय राष्ट्र को घृणा की दृष्टि से देखे।'

एक अन्य उचित परामर्श जिसकी औरों की भांति अवहेलना हुई ('राजस्थान' ८ फरवरी १९०८) का कहना था "प्रजा से मित्रता के सम्बन्ध स्थापित करने की उपेक्षा के और जनता को दमन के द्वारा पीस डालने के सदव भयकर परिणाम होते हैं।"

रूस मे डी प्लेहवे की हत्या के उपरात ससार ने भय के साथ राजा कार्लोस पुर्तगाल के राजा और पुर्तगाल के युवराज की हत्या का समाचार सुना जबकि वे लिसबन म गाडी म जा रहे थे। भारतीय समाचार पत्रो के बडे वग ने उसे भारत के निरकुश शासको के लिए एक पाठ के रूप में लिया।

६ फरवरी १९०८ के 'अरुणोदय' ने लिखा—'अत्याचारी शासकों को पुर्तगाली इतिहास से सबक सीखना चाहिए। यह मानना गलत नही होगा कि यह भयानक दुखान्त घटना जो पुर्तगाल मे घटित हुई है सरकार के कार्यों का परिणाम है। यह उन शासको को चेतावनी के उद्देश्य से की गई है कि जो यह विश्वास करते हैं कि वे अपनी शक्ति के भरोसे मनमानी कर सकते हैं और तलवार के जोर से अपनी प्रजा को दबाए रख सकते हैं।" उसी विषय पर लिखते हुए 'बिहारी' ने (१० फरवरी १९०८) नम्र और भावना हीन भारतीयो की तुलना उन पुर्तगालियों से की जिन्होने अपने शासक के अत्याचार को सहन नही किया और राजा कारलोस' अपनी पीडित प्रजा की क्रोधाग्नि के शिकार हो गए। भारतीयो को पुर्तगालियों की पाठयपुस्तक से एक पृष्ठ ले लेना चाहिए और उसी के अनुसार आचरण करना चाहिए। हमारे धम को साधुवाद है कि इस बात की कोई सम्भावना नहीं है कि कोई भारतीय अपने शासक की हत्या करे" रजन ने ९ फरवरी १९०८ के अक में लिखा) परन्तु इस सम्ब ध में किसी को आश्चय नही होना चाहिए कि यदि कभी सुदूर भविष्य में इस प्रकार के नारकीय काय भारत में भी होने लगे।' यह सकेत उन घटनाओ की ओर था जो प्रारम्भिक अवस्था में हो रही थीं।

'अरुणोदय' (१६ फरवरी १९०८) की सम्मति म अग्रेजो के लिए यह अनिवाय रूप से आवश्यक था कि वे उन कारणो की जांच करें जिनके परिणाम स्वरूप पुर्तगालियों न उस दुष्काड को किया और उस काड के परिणामों को भी मालूम करें। उस पत्र के अनुसार यह जानना आवश्यक था कि उन्होने यह दुष्कृत्य निजी स्वार्थवश किया अथवा निस्वार्थ रूप से किया। यदि यह उन्होने निस्वार्थ भावना से किया हो तो जिन्होंने राजा 'कारलोस की हत्या कर दी उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। यह वास्तव में पत्र की बहुत साहसपूर्ण सम्मति थी।

"पुरानी व्यवस्था बदलती है और नई व्यवस्था उसका स्थान ले लेती है।" और

'काल' पत्र ने गर्जना के स्वर में कहा—"राजाओं को चीत्कार करने दो और परजीवियों को सवसाधारण राजा की आज्ञा के सामने नम्रतापूवक अपनी गदन झुका देंगे। अभी हाल की घटनाओ ने यह बतला दिया कि हत्याओ का उस देश में जहा वे की गई हितकर प्रभाव पडा है।"

२८ मार्च १९०८ को 'हिन्द स्वराज्य' ने लोगो के दृढ़ निश्चय को नीचे लिखे शब्दो मे व्यक्त किया—"अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए हम कुछ भी करेंगे। या तो हम उन अधिकारों को प्राप्त करेंगे अथवा उनको प्राप्त करने के प्रयत्न में मर मिटेंगे।" उसी लेख में उसने आगे लिखा— "अब जनता को दमनकारी तरीकों से शान्त कर देने का प्रयत्न व्यर्थ है। जेल हमे स्वर्ग के उद्यान की भाति सुखकर हैं और हमने अपने अधिकारो के लिए सघर्ष करने मे मृत्यु को सुखदायक मानना सीख लिया है।"

भावना से ओतप्रोत

एक परतन्त्र जाति के देशभक्त एक समान भाषा में ही बोलते हैं। 'मैजिनी' ने आस्ट्रियन शासकों से कहा था—तुम हमारी राष्ट्रीय सरकार नहीं हो तुम्हारे शासन के विरुद्ध कभी न झुकनेवाला विरोध करने का यही औचित्य है।"

जब आयरिश देशभक्त 'अ लियेरी' राजद्रोह के अभियोग मे पकड़ा गया तो उसने कहा था—"इगलैड मेरी मातृभूमि नही है। इसलिए यदि मैं आयरलैड में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध काय करता हूँ तो यह राजद्रोह नही है। क्या वह व्यक्ति राजद्रोह का दोषी हो सकता है जिसका कोई राजा ही नही है।" 'राजद्रोह के कानून में ब्रिटिश शासन के प्रति राजभक्ति के सिद्धान्त को ही अब अस्वीकार किया जाने लगा। अब यह कहा जाता है कि कोई अत्याचारी शासक अपने अधीन लोगो से राजभक्ति का दावा करे तो यह न्यायसगत नही है।" 'युगान्तर' की सम्मति म वह जनसमूह जो निरन्तर दुखी उत्पीडित आपदग्रस्त है हत्यारा के दल की खोज रहा है।' 'यह वे लोग हैं जो स्वय को अपने को भारत का स्वामी घोषित करते हैं जो कि इस देश के बालकों को दबाने और पराभूत करने के प्रयत्न मे हिंसा और अ यवस्था को उत्पन्न कर रहे हैं।"

सघष अशान्ति निदय दमन प्रतिशोधात्मक हिंसा तब तक अवश्यम्भावी हो जाते हैं जब तक कि प्रकृति पुन अभिपुष्टि नही करती और उस देश के निवासियो को उनके न्यायपूण अधिकारो और सत्ता को पुन नही सौंप देती" (वन्देमातरम ६ जुलाई १९०७) राजद्रोह शब्द का अथ भारतीयों के लिए कोई अथ नही रखता क्योकि 'युगान्तर' पूछता है (२ अगस्त १९०७)

'यदि यह सम्पूर्ण राष्ट्र की अभिलाषा और इच्छा है कि विदेशियो की दासता के जुए को उतार फेंका जावे और स्वतन्त्रता प्राप्त की जावे तो भगवान और न्याय की दृष्टि में किसका दावा अधिक न्यायोचित है—अग्रेजो का या भारतीयो का अवश्य ही भारतीयो का दावा सही है।' स्वतन्त्रता की माग सदेह रहित है और यदि फिरगी इसके विरुद्ध शत्रुता का रुख अपनाते हैं तो भारत की समस्त छिपी हुई शक्ति उनके विरुद्ध खडी करदी जावेगी और एक अग्निशिखा प्रज्ज्वलित की जावेगी" (युगान्तर ६ नवम्बर १९०६) जिसे ससार की कोई शक्ति नियन्त्रित नही कर सकेगी। वह स्थिति अब आ गई है जबकि हम अपने ध्येय स्वतन्त्रता प्राप्ति को नही छोड सकते

और उसके लिए हम अपना जीवन भी दाव पर लगा देंगे।

उसके आगे भारतीयो का आह्वान करते हुए लिखता है लोगो को अपनी आतरिक शक्ति का ज्ञान होना चाहिए और फिरंगियों के निद्राजाल को नष्ट कर देना चाहिए क्योकि शेर का बच्चा कभी अपने अतर के सिंहत्व को खोता नही है। जनता का मस्तिष्क स्वतत्रता और राष्ट्रीय स्वाभिमान के विचारो स ओत प्रोत हो जाना चाहिए। भारतीयो के हृदय को कभी भी दबाई न जा सकने वाली स्वतत्रता की चाह को उद्वेलित करना चाहिए जिससे समस्त देश में असतोष की अग्नि शिखा जल उठे। (२ फरवरी, १९०७ का युगा तर')

समाचार पत्रो, भजनो, साहित्य यात्रा तथा नाटकों के द्वारा भूमि को तयार करना चाहिए। इस समय और स्थिति मे स्वतत्रता के विचारों का खुले रूप में प्रचारित करने में कुशल नही है। अतएव गुप्त सगठनो की सेवाओं की आवश्यकता होगी। अपने विचारों को घुमा फिराकर गोलमाल भाषा म व्यक्त करना होगा। एक ऐसा गुप्त स्थान खोज निकालना होगा जहा सच्चाई अपने छद्म वेष को उतार कर अपने ज्वालामय रूप को दिखला सके। यह स्थान एसा होना चाहिए कि अत्याचारी को उसका आभास तक न हो सके।" 'यह स्वाभिमान क लिए अपमानजनक है कि स्वय अपनी रक्षा के लिए योग्य बनन के बजाय हम ब्रिटिश सुरक्षा पर निर्भर रहें। हमें शारीरिक शक्ति और साहस के लिए अपने को प्रशिक्षित करना चाहिए जिससे कि हम बड़ी से बड़ी आपत्ति की स्थिति का सामना कर सकें।"

भारतीयो की बढती हुई पाशविक शारीरिक शक्ति को कम समझना फिरंगी बनियो की भयकर भूल होगी। किन्तु भारत को तयार हो जाना चाहिए। मा की रण दुदुभी बज रही है मा ने पुत्रो को अब देर नही करनी है। समस्त देश को मृत्यु का सामना करन के लिए तयार करो पर तु केवल शब्द ही पर्याप्त नहीं होंग ('सध्या' १० मई १९०७) बिना लाठी और बम के फिरगी की बुद्धि ठिकाने नही आवेगी।"

नौकरशाही के हाथों जनता को बहुत अधिक कष्ट पहुँच रहा है परन्तु यह सिद्धात स्वीकार करना होगा कि देश क लिए, देशवासियो की आशाओ और आकाक्षाओ की पूर्ति के लिए और अपने देश के स्वय शासक बनने के लिए कितना ही कष्ट उठाना पड अधिक नही है।" (सध्या' ८ जून १९०७) ' सात सौ वर्षों के विदेशी अधिरोहण क बाद देश निद्रा म सो गया और निष्क्रिय हो गया। जन साधारण को स्थिति की गम्भीरता से अवगत करा कर जगाना आवश्यक होगा उसके लिए केवल शब्द पर्याप्त नही होंगे। विपक्षी से भिड़ने से ही शक्ति का विकास होता है और उससे स्वरक्षा की भावना उत्पन्न होती है।' ('युगान्तर' २६ अगस्त १९०७)

केवल कुछ व्यायाम और अभ्यास के लिए जब भी अवसर आवे तो अपने विरोधी से लडना और दगा करना पड़ता है। बिना किसी शिकायत के जेल जाना केवल जेल जाने की अभिलाषा या उत्तेजना फलाने के लिए नही जाया जाता पर तु जेल के भय को लोगो से निकालने के लिए जाया जाता है। फांसी के तख्ते पर लटकाया जाना अच्छी बात होगी यदि उसके द्वारा एक वग के लोगो का मृत्यु से भय जीता जा सके। देश के जागरण की सुदूर सम्भावनाओ का देखकर एक स्त्री की भांति रोने से काम नहीं चलेगा। शब्द विचारो का स्पष्ट करने में सहायक हो सकते हैं परन्तु आत्मनिर्भरता में विश्वास पदा नही कर सकत।" उसके लिए अनैक्य और मतभेदों

का स्वागत करना होगा। "जब देश में एक विचार बाढ़ के समान आता है तो वह एक दार्शनिक के युक्तिपूर्ण तर्कों के समान धीरे और सावधानी से रखे गये कदमों की तरह नहीं आता।

कोई भी देश इस प्रकार के नपे तुले हिसाब लगाकर आज तक ऊंचा नहीं उठा। यह कहावत कि व्यक्ति भय के जबड़ों में मर जाती है अक्षरशः सही है। क्या तुम देश को बिना कानूनों को तोड़े जगा सकते हो? अच्छा यदि कर सकते हो तो करो किन्तु —'ऐ देशभक्तो बिना रुधिर दान किए क्या देश जागृत हो सकेगा।"

२४ अगस्त १९०७ को युगान्तर ने लिखा कि देश के उद्धार के लिये ही देश में दमन का जोर है। "लोग असंख्य कीड़ों की भांति जब मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे हो तभी यकायक कोड़े की मार से हमारी तंद्रा टूट गई। हमने अपनी आंखें आधी खोलीं जो सात सौ वर्षों से बंद थीं और हमने देखा कि प्रातःकाल की प्रखर सूर्य की रोशनी हमारे चेहरों पर प्रतिबिम्बित हो रही है। व्यस्त और कायरता विश्व के नाद से आकाश गुंजरित हो रहा है केवल हम ही हैं जो अभी शय्या से नहीं उठे हैं।"

"हमारे मस्तिष्क में एक अस्पष्ट विचार घर कर गया कि हम अवश्य ऊंचा उठेंगे बिना उठे इस संसार में जीवित रहने का हमारा कोई अधिकार नहीं होगा। जैसे जैसे कोड़े की मार दिन प्रतिदिन तेज और गहरी होती गई हमारे लिए जीवन भयानक हो गया और हम क्रोध और पीड़ा से चिल्ला उठे क्या हमारे लिए स्वतन्त्रता नहीं है।"

१० अक्टूबर १९०७ को कलकत्ते में कालीघाट में एक सभा में एक वक्ता ने खुले शब्दों में कहा — हमारा मन्त्र वाक्य अब यह होना चाहिए। घूंसे का जवाब घूंसे से, नेत्र का नेत्र से और दांत का दांत से।'

सन्ध्या ने लिखा—तुम लेटे रहकर अत्याचार को कब तक सहन करते रहोगे? और क्यों? क्या तुम घूंसे के जवाब में घूंसा मारना सीखोगे।

विजयदशमी के अभिनन्दन में युगान्तर (२ नवम्बर १९०७) ने लोगों से भय छोड़ देने के लिए कहा क्योंकि परिस्थिति एकदम बदल गई है। ,वन्देमातरम् का ऊंचे स्वर से घोष धीरे धीरे शत्रु के साहस और शक्ति को समाप्त कर रहा है। चारों ओर देखो, देखो मां देवी जगतधात्री के रूप में प्रगट हो रही हैं और राक्षसों को जब वे बहुत अधिक शक्तिशाली हो जावेंगे मार डालने का वचन दे रही हैं। 'तुम्हारा स्वराज्य रूपी सिंहासन अवश्य स्थापित होगा। जाओ प्रत्येक कुटी और झोपड़े में जावो, देश की सुदूर सीमाओं तक जाओ और विजय के सुसमाचार की घोषणा करो। *देखो मां का वीभत्स रूप वह अपना विशाल और भयानक मुख खोले हुए हैं उसकी* जिह्वा बाहर को निकली हुई है और दानव के रुधिर की कामना कर रही है। अपने हृदयों को लेकर माता के चरणों में अर्पण करने से पूर्व हमें ध्यानमग्न होकर सोचना चाहिए कि मां हमारी इच्छा के अनुरूप विध्वंसकारी रूप में उपस्थित हैं। इस बार मां भेड़ों की बलि स्वीकार नहीं करेंगी। उच्चतम बलिदान (मनुष्यों की बलि) देनी चाहिए। अतएव ऐ देशभक्तों जल्दी करो।"

"उठ खड़े हो, यश प्राप्त करो, और शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर समृद्धिशाली राज्य का सुख भोग करो इन सबों को मैंने पहले ही मार दिया है तुम तो केवल साधन मात्र हो।"

"प्रत्येक वस्तु की एक सीमा होती है और धैर्य उसका अपवाद नहीं है। जब सीमा रेखा पार हो जाती है तो हृदय प्रतिशोध लेने के लिए व्याकुल हो उठता है फिर उसे शत्रु की शक्ति की और युद्ध के परिणाम की चिन्ता नहीं रहती।"

'तब हृदय में अपरिमित साहस और शक्ति का उदय होता है। युगान्तर' २१ मार्च १६०८) फिर पीछे नहीं देखा जाता और न एक क्षण के लिए मस्तिष्क में यह विचार ही उठता है कि बाद को क्या होगा। उस समय मन में अपने सामने जो भी बाधा है उसको नष्ट कर देने की अत्याधिक उत्सुकता उत्पन्न हो जाती है। और इस उत्सुकता को क्रिया में परिणित करने के लिए विरोधी के विरुद्ध शस्त्र उठाया जाता है। प्रत्येक फिर वह जो भी कोई हो जो विरोधी के गोत्र या गोष्ठी (जाति, वंश या परिवार का होता उसे भयंकर शत्रु के रूप में देखा जाता है। प्रतिशोध की अग्नि जिसका उद्गम जनता के उत्पीड़न में छिपा होता है तब तक नहीं बुझती जब तक वह शत्रु की सम्पूर्ण जाति को और उसके वंश को पूरी तरह भस्म नहीं कर देती।"

स्फुरण

आन्दोलन के आरम्भ से ही देश के लिए मरने का आह्वान किया जा रहा था परन्तु अब यह पुकार अधिक बलवती अधिक गम्भीर और विस्तृत हो उठी। १२ अगस्त १६०६ को युगान्तर' के एक सम्वाददाता ने जापान से प्रकाशन के लिए नीचे लिखी आशय की कविता भेजी— 'मनुष्य भयंकर कठिनाइयों का सामना करते हुए मरे इससे अधिक गौरवशाली मृत्यु और क्या हो सकती है। वह अपने पूर्वजों की अस्थि, और अपने देवता के मंदिर के लिए मरे इससे अधिक गौरवपूर्ण मृत्यु और क्या हो सकती है।"

'युगान्तर' में २८ अक्टोबर १६०६ को एक उद्बोधक कविता प्रकाशित हुई जिसमें भारतीयों को उनके गौरवपूर्ण भूतकाल की स्मृति दिलाते हुए उन्हें मातृभूमि के लिए अपने प्राणों को बलिदान करने के लिए आह्वान किया था। 'तुम देखोगे कि तुम्हें इस मृत्युलोक के एक जीवन के बदले अमर और अनन्त जीवन प्राप्त होगा। अपने ऋण को अभी तुरन्त चुका देना उसे भविष्य में चुकाने के लिए छोड़ने से अच्छा है। 'घूंसे का बदला घूंसे से लो। यदि तुम्हें कोई घूंसा मारे तो उसे ठोकर मारना न भूलो। तभी तुम में पौरुष के चिन्ह जागृत होंगे। मृत्यु से न डरो। जिस गीत को तुम बड़े उत्साह से बहुधा जनता में गाते हो उसमें आता है— ऐ माँ, यदि जीवन को समाप्त होना है तो तुम्हारा कार्य करते और वंदेमातरम् उच्चारण करते हुए प्राणों को *निकलने दो।*"

भाइयों, तुरन्त ही अपने ऋण का भुगतान कर देना ही सबसे अच्छी नीति है। यह सलाह सन्ध्या की थी (११ जनवरी १६०७) 'हिन्द स्वराज्य (१२ फरवरी १६०७) ने अपने परामर्श को पुनः दोहराया भारतीयों को अपनी सहज *सिधाई* छोड़ देना चाहिए और अंग्रेजों को मुक्के का जवाब मुक्के से देने के लिए तैयार हो जाना चाहिए।"

इंगलैंड के कानून जो भारत में लागू किए गए हैं पाशविक बल पर आधारित हैं। और यदि भारत अपने को स्वतन्त्र करना चाहता है तो उसके लिए तो यह नितान्त आवश्यक है कि वह उसी प्रकार के बल का संचय करे। युगान्तर' कहता है (५ मार्च १६०७) जीवित रहने के लिए और कोई मार्ग नहीं है। अपने हक को

आगे बढाते हुए पत्र कहता है— "क्या बगाल के दस हजार पुत्र अपनी पितृभूमि के अपमान का बदला लेने के लिए मृत्यु का वरण करने को तयार नही है। समस्त भारत देश मे अग्रेजो की सख्या डेढ लाख से अधिक नही है। और प्रत्येक जिले मे अग्रेज अधिकारियो की कितनी सख्या है ? यदि तुम दृढ निश्चय कर लो तो तुम अग्रेजी शासन को एक दिन म समाप्त कर सकते हो। वह समय आगया है कि हम अग्रजो को समझा दें कि धूर्तता से देश पर कब्जा करके उसकी सम्पत्ति का उपभोग सदव के लिए उनको नहीं करने दिया जावेगा अग्रेजो को अब यह अच्छी तरह अनुभव कर लेना चाहिए कि उस चोर की जो दूसरो की सम्पत्ति चुराता है जिंदगी इस देश में सरल नही है।

"एक जान लेकर अपने एक प्राण की देना प्रारम्भ करो। अपने जीवन को स्वतन्त्रता के मदिर को अपण करदो। बिना रुधिर बहाए मा देवी की पूजा पूर्ण नही होगी।'

इसी अक म (५ माच १९०७) पत्र शस्त्र खरीदने के लिए कोष इकट्ठा करने का पहले की अपेक्षा उन्नत कायक्रम प्रस्तुत करता है। कोष के स्रोत— (१) चन्दा और दान (२) क्रान्ति के लिए समुदाय स बलपूवक रुपया लेना। (३) सरकारी सम्पत्ति को लूटकर भावी सावभौम राज्य को स्थापित करने के लिए व्यय के लिए लूटना कोई अपराध नही है। (४) कर लगा कर (जब भी किसी क्षेत्र पर नियत्रण या अधिकार स्थापित हो जावे)

'सध्या' (३० माच १९०७) के अनुसार मृत्यु और अमरता उस समय पर्यायवाची हो गए हैं क्योंकि यदि स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्न करते हुए मृत्यु आई तो वह अमरता मे बदल जावेगी।

थोडे मे 'युगान्तर' (१२ मई १९०७) ने कहा — यदि मृत्यु आती है तो आने दो। तुम मृत्यु से क्यो डरते हो जो मानव के लिए अवश्यम्भावी है।

अग्रेजों के प्रति भारतीय युवको के व्यवहार तथा दृष्टिकोण में बहुत बडा परिवर्तन आया हैं 'सध्या' ने सतोष के साथ लिखा (१५ मई १९०७) "जब कोई उदण्ड फिरगी उनके रास्ते मे आता है तो लोग उसकी अच्छी तरह स ठुकाई करते हैं। और यहा जहा जब भी कोई फिरगी दिखलाई दे जाता है तो लडके यदि उन्हे अवसर मिलता है उस पर ककड पत्थर फेंकते हैं। योरोपियन सनिको की ठुकाई जारी है और फिरगियों की पिटाई होती है। उनकी कसी स्थिति हो गई है। वे फिरगी जो बिना किसी की परवाह किए अहकार के साथ शहर के मध्य शान के साथ चलते थे आज चौकन्ने और चिंतित हैं। वे सब जेबो में पिस्तौल रखकर चलते हैं और अधिकतर नगर के भारतीय मुहल्ला से बच कर निकलते हैं।"

'कायवाही करने का समय आगया है। ऐ वीर ! युद्ध गहन और गम्भीर होता जा रहा है। या तो गौरव प्राप्त होगा या समाधि मिलेगी तुम आगे आओ जो कि मा को उसके प्राचीन गौरव से मडित देखने के लिए अपने जीवन को बलिदान करने के लिए तयार हों।"

'युगान्तर' की पुकार थी। (२६ मार्च १९०७) 'फटे हुए जर्जर वस्त्रो को पहने हुए धूल में लोटती हुई मा के कष्टों को दूर करना होगा। पर तु प्रत्येक व्यक्ति उस व्यक्ति की खोज में है जो सर्वप्रथम अपने क्षणभगुर जीवन को, मां की लज्जा को

मिटाने के लिए बलिदान करेगा। कर्तव्य का मार्ग स्पष्ट है, आवश्यकता है अडिग निश्चय की। मृत्यु अपने हाथ में अमरता का आशीर्वाद लिए हमारे द्वार पर खड़ी है। मां यह देखने के लिए उत्सुक है कि आज मृत्यु के द्वारा कौन जीवित रहेगा।"

इसी शृंखला में 'हमारी आशा' शीर्षक लेख 'युगांतर' (१६ अगस्त, १६०७) ने प्रकाशित किया जो स्वतन्त्रता के लिए कष्ट सहन करने और उसके लिए मृत्यु का वरण के लिए लोगों को उत्साहित करने में अधिक स्पष्ट था। "क्या एक भी ऐसा व्यक्ति उत्पन्न नहीं हुआ है जो उन लोगों की प्रसन्नता को चकनाचूर करदे जो समाचार पत्र के सम्पादकों को जेल में डाल कर निष्कंटक राज्य करने की प्रसन्नता का आनन्द लेने का स्वप्न देख रहे हैं।"

'क्या अभी तक एक भी ऐसा व्यक्ति पैदा नहीं हुआ कि जो यह प्रमाणित करे कि बिना रंग का विचार किए लाठी उन लोगों के सिर पर भी पड़ सकती है जो बारीसाल में गुरखों को लाठी चलाने की आज्ञा दे रहे हैं।"

"क्या बंगाल के कोटि कोटि युवकों में एक भी युवक नहीं है जो मृत्यु के भय से ऊपर उठा हो। अवश्य ही ऐसे व्यक्ति हैं। केवल ऐसे व्यक्तियों ने अपने को प्रकट नहीं किया है। ऐसे मां के मन्त्र के छिपे हुए पुत्र! वह दिन अब आ गया है जबकि तुम्हें मृत्यु दिलाने वाला भाला या तीर चलाना चाहिए। उन थोड़े से निर्दयी पशुओं को जो कि अहंकार में उन्मत्त हो तुम्हारे उद्धार के मार्ग में बाधा पहुंचाते हैं दिखला दो कि आगे से बंगाली एक जीवन के बदले जीवन लेना शुरू करेंगे। ६ हे दिखलादो कि बंगाल से विदेशियों के पद चिन्हों को मिटा देना असम्भव नहीं है।

"इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि हमें अधिक लम्बे समय तक प्रतीक्षा नहीं करनी होगी। दिव्य दृष्टि से हम देवी को उसकी युद्ध की अभिवृत्ति में अपने पुत्रों के मध्य जो युद्ध में पागल हो रहे हैं खड़ा देख रहे हैं। देखो वह भयंकर तलवार रुधिर से चमकती हुई घूम रही है वह देखो छापामार सैनिकों के दल देश में छा गए हैं। वहां वे मां के आशीर्वाद से शक्तिशाली बन शस्त्रागारों को लूट रहे हैं। उनका जयघोष आकाश को गुंजा रहा है और शत्रु को आतंक से भर दे रहा है। वह देखो दानव का रिक्त सिंहासन बंगाल की खाड़ी की लहरें बहाए ले जा रही हैं।"

'यदि आत्म रक्षा तथा स्वयं की परिरक्षा के लिए व्यक्ति द्वारा बल प्रयोग का समर्थन किया जा सकता है और स्वीकृति दी जा सकती है तो बड़े क्षेत्र में उसको लागू करने में कानूनन उसके विपरीत नहीं हो सकता।" "यदि एक व्यक्ति के लिए आत्म परीक्षण के लिए बल प्रयोग करना कानून की दृष्टि में उचित है तो यदि एक राष्ट्र वही करता है तो वह गैरकानूनी किस प्रकार हो सकता है? यदि डाकुओं और चोरों से आत्म रक्षा के लिए मनुष्य की हत्या करना पाप नहीं है तो राष्ट्र को स्वतन्त्र बनाने के लिए थोड़े से व्यक्तियों की हत्या किस प्रकार हो सकती है?' ('युगांतर' ६ जून १६०७)

मच तैयार है। सन्ध्या' (१३ अगस्त १६०७) लोगों का आह्वान करती है। "आओ हम रणक्षेत्र में उतरें। हम तुम्हें युद्ध के लिए बुलाते हैं। देखना कि अभी थोड़े दिनों में सारे देश में कैसा प्रबल संघर्ष आरम्भ होता है। मां के पुत्र युद्ध की तैयारियां कर रहे हैं। उसके शस्त्रागार में जितने भी आग्नेय, वरुण वायव्य अस्त्र शस्त्र हैं, उनको चमकाया जा रहा है। सुनो मां की चारों भुजाओं का कोलाहल सुनो।

क्या हम तुम्हारी तोपो और बदूको से भयभीत हैं।"

'भाइयो शस्त्र सभालो मुक्ति का दिवस समीप है। हमने उस आवाज को सुन लिया है और हम मरने से पूर्व अवश्य ही भारत माता को बधनो से मुक्त देख सकेंगे। अब पीछे हटने के लिए बहुत देर हो गई।"

भारत को स्वतन्त्र करने वाली सैना कूच कर रहा है। कोई भी उसको नही रोक सकता उसको आगे बढ़ने से नही रोक सकता। सध्या' (२७ सितम्बर १९०७) रास्ते का निर्देशन करती है। गीता के उपदेश को दृष्टि से ओझल नहीं करना चाहिए। भगवान के विनम्र अभिकर्त्ता के रूप मे हम उन लोगो को मार डालना चाहिए जिन्हे भगवान ने पहले नष्ट कर दिया है। भगवान सभी राष्ट्रो को अपनी मूर्छा से मुक्त होने और नया जीवन आरम्भ करने का अवसर प्रदान करता है।"

हमारे मार्ग से रोडे हटाने के प्रश्न पर युगान्तर (२७ दिसम्बर, १९०७) ने कहा था "अपने धर्म का नाश करने वाले को मार दो। उस व्यक्ति को मार दो जो तुम्हारे कर्तव्य और धर्म के मार्ग में रोडे डालता है फिर चाहे वह धनी हो या निर्धन, जमीदार हो या राजा सरकार का अधिकारी हो या सम्राट।"

सध्या ने (७ अक्टूबर १९०७) प्रति दण्ड देने का एक सरल और तत्काल तरीका बताते हुए लिखा— आजकल सभाओ का कोई उपयोग नही है इसलिए यह ध्यान मे रखना चाहिए कि जेल का सारा भय और जीवन का मोह हृदय से निकाल देना चाहिये। और क्योकि हम कोई अत्याचार नही करेंगे इस दूसरो को भी अत्याचार नही करने देंगे। यदि लाल चेहरे वाली पुलिस या किले के सैनिक हम पर अत्याचार करने आते हैं तो हम उनके कुछ अगों को काट कर उन्हें छोड देंगे।

वेद मन्त्रम पुना (९ फरवरी १९०८) मे सच्ची वीरता की परिभाषा करते हुए कहा— स्वतन्त्रता और न्याय के लिये अपने जीवन का बलिदान कर देना ही सच्ची स्वतन्त्रता है। आज के समय और परिस्थिति मे यह परिभाषा ही सबसे अधिक समीचीन लगती है।"

देश के शत्रु का विनाश नियमित रूप से होना चाहिए उसके लिये प्रतिदण्ड का कोई उपयुक्त अवसर नही होता। इसके अतिरिक्त जैसा कि विहवावृत (मार्च १९०८) ने कहा कि वह दूसरो के भले के लिये करना चाहिए।

'क्षीण बल और क्षीण बुद्धि के लोग कहते हैं कि उन्हे शान्तिपूर्वक न्याय होने के दिन की प्रतीक्षा करनी चाहिए और स्वय उन पर जो अत्याचार हुआ है उसका बदला न लेना चाहिए। परन्तु यह नीति पौरुष को नष्ट करने वाली और धर्म के विरुद्ध तथा आध्यात्मिक उन्नति के विरुद्ध है हमारी स्मृतियो के लेखको ने कहा है कि घोर अपराधी का वध करने मे कोई पाप नही है। हत्यारा कदी वह व्यक्ति जो दूसरो के देश को ले लेता है और वह व्यक्ति जो राजा के सामने दुर्वचन कहे घोर अपराधी है। घोर अपराधियो को बिना किसी हिचक के मार देना चाहिए वे लोग जोकि अपने राष्ट्र को एक जीवित राष्ट्र बनाना चाहते हैं उन्हे अपने सभी गुणो का उपयोग शत्रु का नाश करने में और देश का विकास करने मे लगाना चाहिये। स्मृति हमसे कहती है कि घोर अपराधी के प्रति कोई अनुग्रह नही करना चाहिए वरन शत्रु को नष्ट करने के लिए तयार रहना चाहिए। शत्रु को जल्दी मार देना उसके साथ भलाई करना है क्योकि यदि अधिक लम्बे दिनो तक जीवित रहा तो वह अपने पापो में वृद्धि करता रहेगा।"

'कालेर वीरी' (काल भेरी) सघष का चरण शीघ्र आने वाला है। सैनिकों ने मृत्यु का भय छोड दिया है युगा तर' (१४ माच १६०८) चेतावनी देता है — "यदि मारे गए तो तुम्हे स्वग मिलगा। काल भेरी बज रही है महाकाल की फेरी की आवाज पर लाखो ही व्यक्ति अपने हाथो में नगी तलवार लिए आगे बढ रहे है और किसी अपरिचित पागल इच्छया के वश खुले युद्ध मे अपने प्राणो को बलि दे रहे हैं। वहा काल भेरी बज रही है। यदि तुम मारे गए तो तुम्हें स्वग प्राप्त होगा। लाखो प्राणी युद्ध की अग्नि मे कूद रहे हैं। युद्ध के समति के छिडते ही, महाकाल की भेरी बजत ही जो आत्माए मुक्ति चाहती हैं वे स्वग की ओर दौड रही है।"

और वास्तव मे दूसरे ही महीने मुजफ्फरपुर मे एक भयकर धड़ाका हुआ जिसने भारत में ब्रिटिश शासन की जडो को हिला दिया।

ओलो की वर्षा

सम्पूण राष्ट्र ने यह भली भाति अनुभव कर लिया था कि अग्रेजो की सुनियन्त्रित सभ्य दासता' से अराजकता कहीं अच्छी है। अब प्रश्न केवल विजय श्री प्राप्त क ने का है और उस तक पहुँचने वाले माग को स्वतनता के योद्धाओ और सैनिको के टपकते हुए रुधिर से लाल करना होगा। इतना रुधिर बहाना होगा कि रुधिर की नदिया बहें और बाढे आ जावें। युगान्तर' (२२ अप्रेल १६०६ कहता है — 'रुधिर में सम्पूण धम का समावेश है, कोई भी शक्ति के बीज को मूल से नष्ट नही कर सकता जो महान व्यक्तियों के रुधिर स अकुरित हुआ है। हमारा आज का धम अभी भी हुतात्मा और बलिदान का है फल वह विजय श्री का धम होगा।'

इसके आगे युगान्तर कहता है — आज लोगो का कतव्य चुपचाप अपने प्राणो का बलिदान कर दना हो सकता है परन्तु कौन कह सकता है कि कल उन्ही लोगो का मिशन धम युद्ध मे विजय श्री प्राप्त करना नही होगा। मानवीय रुधिर ही परतन्त्रता और दासता के कलक को धो सकता है। हमको धीरे धीरे आगे बढना चाहिए। 'डरो मत (युगान्तर ३ माच १६०७) अन्य देशो की कहानी हमारे हृदयो में साहस भर देगी। मा की लोह श्रृखलाओ को हटाने के लिए हमारे प्रयत्नो म भयकर युद्ध की हम कल्पना करते है।" युगा तर (२४ माच १६०७) लोगो से कहता है —

'स्वराज्य की देवी के लिए स्वण का सिंहासन तयार करो जो कि करोड़ो हृदयो द्वारा बहाए हुए रुधिर को मथ कर प्रकट होगी।' हमारे कष्टो की गहनता हम बतलाती है कि मुक्ति अवश्यम्भावी है। वे सब चिन्ह ऊपर से भारत के हितो के विरुद्ध दिखलाई देते हैं वे उल्ट उसके अनुकूल हैं। आगे वह कहता है (युगा तर २३ जून १६०७) अग्रेजो को दूषित बुद्धि राजभक्तो की घोर बोखलाहट, अविश्वासियो का जोर से हसना और व्यग शब्द कहना हमारे लिए आशा के कारण हैं, न कि निराशा के तुमको जिसमें निरुत्साह और भय दिखता है वह एक सच्चे कायकर्ता के लिए आशा और उत्साह का स्रोत है। यह अधकार ही प्रकाश के आगमन की सूचना देता है। इस मृत्यु में ही जीवन के कीटाणु भरे हुए हैं। यही उत्पीडन शक्ति की नीव डालता है। भयभीत व्यक्तियो की आश्चयभरी चिल्लाहट भावी शान्ति की द्योतक है। यही तूफान क्रमश गहन होता जावेगा, वह शक्तिवान बनेगा और स्थायी शान्ति का माग प्रशस्त करेगा। जो भी कोई अमरता की इच्छा करता है उसे जोखिम भरे पथ से

चलने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसको तो केवल प्रस्तावना या प्रारम्भ ही मानना चाहिए यह केवल मात्र जो भविष्य मे होने वाला है उसकी केवल झांकी मात्र ही है। हमें हताश न होना चाहिए क्योकि यही अन्त का प्रारम्भ है।

'देश एक विशाल श्मशान भूमि बन जावेगा, प्रत्येक घर से रुदन का स्वर उठेगा, कुत्ते और सियार झपटेंगे और खेलेंगे तथा आनन्द मनावेगे। मनुष्यो के सिर और मानवीय हड्डियो के ककाल रास्तो और पथो पर बिखरे पडे दिखलाई देंगे। भारत की मिट्टी जो फसलों के कारण हरी है रुधिर के बहाव से लाल हो जावेगी। युद्ध की देवी मा दुर्गा के भयानक नृत्य से प्रत्येक के हृदय में प्रबल हलचल मच जावेगी। लोग इतनी तीव्र क्षुधा से पीडित होगे जसी कि तीव्र क्षुधा ने क्षुधित विश्वामित्र को चडाल की झोपडी मे जाने और वहा कुत्ते का मास खाने पर विवश कर दिया था। जब मनुष्यो का जीवन और उनकी सम्पत्ति सुरक्षित नही रहेगी, जब ब्राह्मण, गाय और परदे की स्त्रियो के जीवन और शील के लिए खतरा उत्पन्न हो जावेगा, जबकि विदेशी सभ्यता जो पाशविक बल पर आधारित और पनपती है अपने वास्तविक रूप मे पूण विकसित होकर प्रकट होगी तब ब्रह्मा ब्राह्मणी और गाय पर दया कर उनकी भलाई के लिए अवतार लेंगे। भगवान तब तक अवतार नही लेते जब तक धर्म की क्षति नही होती और अधम अपनी पराकाष्ठा पर नही पहुँच जाता। इसीलिए हम कहते हैं कि इन गलत कार्यों अन्याय अत्याचार और अधार्मिकता का प्रारम्भ हमें उत्साहित करता है और आशा बधाता है कि भगवान अवश्य दया और कृपा करेंगे। लोग तब तक काम करने को प्रेरित नही होते जब तक कि वे उन्नति की सभावनाएं नहीं देखते। यह बात कि हम प्रति पग पर कठिनाइयो का भय है यह बतलाता है कि वाछित शुभ बहुत समीप है। हम अब कह सकते हैं 'मूर्छित न हो हताश मत हो।" समुद्र तट के किनारे और पहाड के शिखर पर जाओ आधी उल्का तथा वज्र पर अधिकार करो आकाश में प्रत्येक नक्षत्र की अच्छी तरह खोज करो और अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जुट जाओ। उसी दशा मे तुम अपने विरोधियों का विनाश कर सकोगे उनसे मेद पा सकोगे। तभी तुम उस द्वीप को स्वतन्त्रता के हीरों से सुसज्जित कर सकोगे।

युगान्तर (२६ अगस्त १९०७) में पागल योगी के उपनाम से नीचे लिखी रचना प्रकाशित हुई 'मैं पागल और विक्षिप्त मस्तिष्क का हू और उत्तेजना फलाने वाला हूं। मेरी प्रसन्नता का प्याला उस समय भर जाता है जब मैं चारो ओर अशांति को उतरते देखता हूँ। गूगे बहरा के समान मैं और अधिक विश्राम नही कर सकता प्रत्येक दिशा से लूट के समाचार मेरे पास पहुँच रहे हैं। मैं स्वप्न देख रहा हूँ मानो भावी गुरिल्ला छापामार सनिकों के दल द्रव्य लूट रहे हैं मानो छोटी डकैतियों और लूट के रूप मे भावी युद्ध आरम्भ हो गया हो। मैं आज तुम्हारी अर्चना करता हू हमारे सहायक और साथी बनो। तुम अभी तक फून में वल्करोप' की तरह छिपे रहे और देश के जीवन निर्वाह के साधनो को तुमने खाकर समाप्त कर दिया। आओ यहा और वहा प्रयत्न करो और पुरानी वीरता की भावना को पुन जागृत करो। तुमने उस दिन मुझे यह वचन देने पर बाध्य किया था कि तुम्हारी कृपा से भारतीय जब तुम्हें याद करेंगे तुम्हारी अचना और पूजा करेंग तब उन्हें शस्त्र खरीदने के के लिए दान मिलेगा और सनिक प्रशिक्षण प्राप्त होगा। यही कारण है कि मैं आज

तुम्हारी पूजा और अर्चना करता हू।"

"हमारा लक्ष्य अब स्पष्ट है। मा के पुत्र हजारों बाधाओं के होते हुए भी बिना हताश हुए उसकी ओर अग्रसर होंगे।" युगान्तर (२ अगस्त १९०७) को इस सम्बन्ध में पूर्ण निश्चय है कि प्रत्येक भारतीय उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दृढ़ सकल्प हैं चाहे फिर उसे रुधिर के समुद्र मे से ही तरना क्यो न पड़े।

अग्रेजों का भारतीय साम्राज्य एक व्यर्थ बात है केवल एक मनोकल्पना मात्र है और भारतीय जो इतनी दरिद्रता और कष्ट भोगते हैं वह केवल इसलिए क्योंकि उन्होंने इस भयकर गलत झूठ को स्वीकार कर लिया है। युगो पहले भारत के ऋषियों ने कहा था। "जो असत्य हैं उसे नष्ट कर दो और सत्य की स्थापना करो"। यह विदेशी सरकार की प्रणाली जो अपराध और अन्याय पर आधारित है घोर असत्य है अतएव उसके स्थान पर प्रत्येक व्यक्ति को एक शुद्ध स्वदेशी सरकार स्थापित करने का प्रयत्न करना चाहिए जिससे सत्य प्रकट हो सके और यह सम्पूर्ण असत्य का आवरण छिन्न भिन्न हो सके।"

मा की पूजा अर्चना रुधिर से होगी। दैनिक हितवादी (११ अक्टोबर १९०७) में नीचे लिखी कविता में जनता को उत्साहित करते हुए कवि ने कहा 'हम सारे वर्ष उपवास करते हैं नीच लोग आकर हमारे घरो से हमारा भोजन तथा हमारी समृद्धि की देवी को छीन ले जाते हैं। हे मा क्या तुम उस असुर (दानव) को नहीं देखती जो तुम्हारे पुत्रों के देश को लूटता है। दानवो का विनाश करने वाली देवी के रूप मे अवतरित हो मा।" युद्ध की भेरी बज उठे और हम आज मानवीय रुधिर से विशाल और भयकर पूजा करें।"

अस्त्र

नये सम्प्रदाय के नेता इस बारे में भी सोचने म पीछे नही रहे कि उस शत्रु से जो पूर्ण तरह आधुनिक शस्त्रो से सुसज्जित है उसका सामना करने के लिए किन हथियारों का उपयोग किया जावे। 'सध्या' (१३ मई १९०७) उन बमों के बारे में सकेत करता है जो कि बनाए जा रहे हैं।

उस समय तक साहस उत्पन्न नही होता कि जब तक यह ज्ञात न हो कि किस प्रकार की तैयारिया हो रही हैं। बहुत से यह जानना चाहते हैं कि कितनी बदूकें इकट्ठी करली गई हैं। हथियार इकट्ठे करना अब बहुत कठिन है। एक ऐसा बम तैयार किया जा रहा है जो कि आधुनिक युद्ध में क्रान्ति ला देगा वह बम बहुत सस्ता है और उसको हाथ में या जेब में ले जाया जा सकता है। लेकिन हमें हथियारो की चिन्ता नहीं है। हम भारत मा के ऐसे पुत्रो का एक दल चाहते हैं जो कि हमारी आज की दयनीय स्थिति के होते हुए भी यह विश्वास करते हों कि स्वतन्त्रता दिवस समीप आ रहा है जो साहस के साथ हृदय से यह कह सकें कि वे बिना भारत को स्वतन्त्र किये मरना नहीं चाहते। ऐसे सब भारतीयो को सगठित हो जाना चाहिए।"

दूसरे दिन (१४ मई) वहीं पत्र बमों और उनके फेंकने की प्रक्रिया के सम्बन्ध कुछ जानकारी देता है। लेकिन साथ ही यह भी सुझाव देता है कि अन्य प्रकार के देशी अस्त्रों का बहुत बड़ा भडार होना आवश्यक है। 'प्रत्येक ग्राम प्रत्येक मुहल्ले, झोंपड़े, प्रत्येक घर का एक किले में परिणित कर दो। प्रत्येक व्यक्ति के हाथ में लाठी, छुरी, तलवार, खजर और शूल होना चाहिए। तीरकमान और तीरों को तथा भाली भाई

के बमों को बड़ी राशि में इकट्ठा करो। इनमें आग लगाना नहीं है उनको थोड़ा जोर के साथ ऊंचे से गुण्डों के दल पर फेंकना होगा। जैसे ही तुम उन्हें फेंकोगे तुम्हें एक तेज धड़ाका सुनाई देगा और दस बीस मनुष्य धराशायी हो जावेंगे। काली माई के इस बम को तैयार करने में कोई व्यय नहीं होता और न उनको बड़ी राशि में इकट्ठा करके रखना पड़ता है। इन बमों को जब भी आवश्यकता हो बनाया जा सकता है। यदि फिरंगी अशांति पैदा करेंगे तो हम तुरन्त उनसे प्रतिशोध लेंगे। यदि वे पाशविक बल का निर्दयतापूर्वक उपयोग करेंगे और शांति को खतरा पैदा करेंगे तो सन्ध्या' (६ अगस्त १९०७) की सलाह है कि 'प्रतिशोध की देवी की अर्चना की जावे।'

बंदूक या तोप से युद्ध करने की जरूरत नहीं है। मां के मन्दिर के पीछे के द्वार पर अनेक प्रकार के शस्त्र बिखरे पड़े हैं। तुम उन्हें इकट्ठा करना नहीं जानते। तुम्हें स्वदेशी की सीमा निर्धारित कर देनी चाहिए और दुरात्मा को निकाल बाहर करना चाहिए। यदि वह दीवार के अन्दर घुस आवे और तुम्हें सताए तो उसको अच्छी तरह पीटना चाहिए। जब मार पड़ती है तो भूत भाग जाते हैं। केवल अपनी शपथ पर अडिग रहो। तुम्हारे सब संशय दूर हो जावेंगे और आवश्यक अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद स्वतः आ जावेंगी। यह सोचना भूल है 'कि जीवधारियों को मारना सर्वदा पाप कृत्य है। जैसा कि गीता ने कहा है वैसा नहीं है। यदि हत्या धर्म की रक्षा के लिए की जावे तो वह पुण्य कार्य होगा।'

'भारत में विदेशी राज्य असत्य का सबसे बुरा उदाहरण है और वह लोगों को उस असत्य का नाश करने के लिए शस्त्र प्राप्त करने का आह्वान करती है।" उस सब भौम सत्ता को जिसके शक्तिशाली राज्य में हम रहते हैं नष्ट करने के लिए हथियार कैसे प्राप्त किए जा सकते हैं। यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है जो युगान्तर (१२ अगस्त १९०७) उठाता है और उत्तर देता है। यह ऐसी गम्भीर समस्या नहीं है कि जो यदि दृढ़ता और हार्दिक उत्साह हो तो हल न की जा सके। अस्त्र शस्त्र बनाने की शक्ति किसी एक जाति विशेष के पास ही सीमित नहीं है। प्रत्येक राष्ट्र जिसमें दृढ़ इच्छा और लगे रहने की शक्ति है अस्त्र शस्त्रों का निर्माण कर सकता है। भारत जैसे विशाल देश में जहां अगणित वन और पर्वत हैं इस कार्य के उपयुक्त स्थान खोज निकालना सम्भव है। इस प्रकार के स्थान को चुनने में विवेक और दूरदर्शिता से काम लेने की जरूरत है।

किसी राजा के लिए इस बात की जानकारी प्राप्त कर सकना कि इतने विशाल देश में कोई गुप्त रूप से क्या कर रहा है उसकी सामर्थ्य के बाहर है। एक दूसरा तरीका भी अस्त्र शस्त्र प्राप्त करने का है जो बहुत कारगर सिद्ध हुआ है। बहुतों ने जिन्होंने रूसी तरीकों का अध्ययन किया है उन्होंने इस बात को लक्ष्य किया होगा कि क्रांतिकारी दल के लोग जार की सेना में शामिल हो गए और उन्हें सब अस्त्र शस्त्र मिल गए। वे भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर क्रांतिकारियों के साथ आने को तयार रहते थे।

फ्रांस की राज्य क्रांति में भी यह कूटचाल बहुत कारगर सिद्ध हुई। इसके अतिरिक्त यदि शासक लोग विजातीय होते हैं तो क्रांतिकारियों को और अधिक सुविधा रहती है। विदेशी सरकार को सेना में अधिकांश सैनिक देश के निवासियों में से ही भरती करने पड़ते हैं। अतएव यदि क्रांतिकारी गुप्त रूप से इन देशी सैनिकों को

स्वतन्त्रता का संदेश दे दें तो बहुत सुन्दर हो। जब अन्त में उन्हें साम्राज्यशाही से मोर्चा लेना पड़ेगा तो क्रांतिकारियों के पास केवल कुशल और प्रशिक्षित सैनिक ही नहीं होंगे वरन उनको अस्त्र शस्त्र और गोली बारूद का भी लाभ मिलेगा जो कि साम्राज्यवादी सरकार ने उन सनिकों को दिए होंगे। इसके अतिरिक्त शासक वर्ग के समस्त साहस को उनके मस्तिष्क में गम्भीर भय उत्पन्न करके नष्ट किया जा सकता है।

अस्त्र शस्त्र प्राप्त करने का एक और भी स्रोत है लेकिन उसका उपयोग अत्यन्त सतर्कता से करना चाहिए। प्रत्येक देश के बंदूक बनाने वाले, क्रांतिकारियों को अस्त्र शस्त्र अत्यन्त प्रसन्नता से बेचते हैं क्योंकि वे उनके बड़े ग्राहक होते हैं। उसी अंक में पत्र लिखता है (१२ अगस्त १९०७)

"यह कठोर सत्य है कि अपने स्वास्थ्य की रक्षा करने के लिए पश्चिम का व्यापारी कुछ भी कर सकता है। सच तो यह है कि बंदूक तथा अस्त्र शस्त्र निर्माण करने वाले क्रांतिकारियों को बंदूक आदि बेच कर अन्य सब ग्राहकों की अपेक्षा अधिक लाभ कमाते हैं। यदि एक दिन में लाखों बन्दूकें बिक जावें तो उनका मूल्य कुछ कम नहीं होगा जिसकी वे उपेक्षा कर सकें। यदि बड़े शस्त्र निर्माता इस प्रकार अपनी बंदूकें को न बेच सकें तो अधिक लम्बे समय तक अपने व्यापार को नहीं चला सकते। क्योंकि सरकार के अपने निज के शस्त्र बनाने के कारखाने होते हैं उसको दूसरों से अस्त्र तथा गोली बारूद नहीं खरीदनी पड़ती। और बड़े निर्माता फुटकर ग्राहकों को एक या दो बंदूक बेचकर जीवित नहीं रह सकते। अतएव अस्त्र शस्त्र निर्माताओं को क्रांतिकारियों का पक्ष लेना पड़ता है। परन्तु इस प्रकार अस्त्र शस्त्रों का आयात करने में बहुत अधिक सतर्कता बरतने की आवश्यकता है। क्योंकि यदि राज्य को एक बार भी इसकी खबर लग गई तो वह सभी प्रकार की सावधानी के कदम उठाएगा और क्रांतिकारियों के कार्य को हानि पहुँचेगी।"

उत्तेजनात्मक आह्वान (१८९५-१९०८)

कवियों ने देशभक्ति की भावना से भरे गीतों से समस्त देश को उद्बोधित कर दिया। इन गीतों में देशवासियों को भयानक संघर्षमय समय के लिये तैयारी करने सब प्रकार के आराम और विलासिता को त्याग देने किसी भी आपातिक स्थिति के लिए तैयार रहने और बलिदान के गौरव के साथ मृत्यु का सामना करने के लिए आह्वान किया जाता था। बंगाल के युवकों ने उस आह्वान के प्रति अभूतपूर्व प्रतिचार प्रदर्शित किया। यह इसी से स्पष्ट था कि बहुत बड़ी संख्या में लोग उत्साह और साहस के साथ आगे आये और इस प्रकार की कार्यवाहियों में भाग लिया जिसका अवश्यम्भावी परिणाम फांसी था।

ऐसे बलिदानी लोग संख्या में बहुत अधिक थे और हर एक दूसरे से अपने कृतित्व में बढ़ चढ़कर था। रवीन्द्र द्विजेन्द्रलाल, अतुल प्रसाद, रजनीकान्त ने अपनी कविता और साहित्य में मातृभूमि के महान गौरवपूर्ण तथा अतीत और वर्तमान की दयनीय स्थिति का चित्रण किया। एकता, भक्ति और निष्ठा स्वाभिमान की संस्कृत को स्वीकार करने तथा अनन्त कठिनाइयों के होते मजबूत कदमों से आगे बढ़ने को उत्साहित किया। परन्तु उन्होंने कभी भी सावधानी की सीमा का अतिक्रमण नहीं और कभी परोक्ष रूप से भी अपने प्रति अथवा दूसरों के प्रति हिंसा करने का

समेत नहीं किया।

कवियों का वह समूह जिसने भारतीय राष्ट्रीयता के जीवित शव में श्वांस का संचार किया स्वयं एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना बन गए। जैसे ही उनके गीत लोकप्रिय हुए उनमें से बहुतों पर प्रतिबंध लगा दिया गया पर नु जिन्होंने उन्हें सुना और पढ़ा उन्होंने उन्हें अपने मस्तिष्क और स्मृति के भण्डार में संजोकर रख लिया। उनमें से कुछ नमूने नीचे लिखे हैं।

" ऐ मा मुझे शिक्षा दो कि मैं अपने जीवन को कम से कम मूल्यवान मानूं जिससे कि उसे समर्पित कर अपने को धन्य समझ सकूं। अपने चरणों की सेवा करने और अन्य सभी के पहले अपना बलिदान देने की मुझे शिक्षा दो। अपने सेवकों की अगली पंक्ति के सबसे आगे मुझे रखो— ऐ मा।"

' मुझे देखने दो कि मेरा जीवन रुधिर उस मिट्टी में जो तुम्हारे चरणों के स्पर्श से पावन हो गई है— क्या नए सेवक पैदा कर सकता है?"

"तुम सब आवो जो एक भक्त की भांति न कि उस मनुष्य की भांति जो पहले ही मारा हुआ है मरने की तैयारी रखता हो। असुरों को मारने में कोई घबराहट नहीं हो सकती। जंगली पशुओं के शोर से हमें रुकना नहीं है और न हमारे हृदयों में उससे भय होना चाहिए वन की असीम गहनता जिसमें खतरा है उसकी परवाह न कर कौन है जो खतरे को खुली बाहों से गले लगावेगा? आओ वीर पुरुषों की भांति निर्दय शत्रुओं को मार कर मरो।"

तुम्हारी कठोर परीक्षा ली जावेगी। यह देखा जावेगा कि तुम्हारी अग्नि परीक्षा हुई। तुम्हारा शत्रु तुमसे घृणा करता है और तुम्हें परों के नीचे कुचलता है। क्या तुम शत्रु को जला डालने अथवा स्वयं अग्नि में जल जाने और विश्व को शत्रु की अथवा बलिदानी वीरों की भस्म से आच्छादित कर देने की क्षमता रखते हो शत्रु पर विजय पाने के लिए मृत्यु का आलिंगन करो और उससे यह सिद्ध करो कि तुम्हारी विधिवत दीक्षा हुई है। भयंकर दिखलाई देने वाली मृत्यु शीघ्रता से आगे बढ़ रही है। वह अंधकार से आच्छादित सीमा रहित सघन वनों के बीच जा रही है क्या तुम अपनी काली त्वचा वाले हाथ में तेज धार की तलवार पकड़ शत्रु से वीरतापूर्वक युद्ध करने को तैयार हो?

'तुम सब मृत्यु का आलिंगन करने के लिए प्रसन्नता से पागल होकर आओ। श्मशान भूमि के धुएं में विष मिला दो जिससे वह और अधिक मारक बन जावे। मातृ भूमि तुम्हारे मरने के लिए आह्वान कर रही है। तुम उस आज्ञा को शिरोधार्य करोगे अथवा नहीं। राष्ट्रीय अपमान चरम सीमा पर पहुँच गया है और यह कलंक केवल मृत्यु के पथ से ही धोया जा सकता है' —विजोय चन्द्र मजूमदार

" शक्ति के पथ में दीक्षित होकर हमारे सिर निराशा रहित मा के चरणों में झुक जाते हैं "" हम हमारा और शत्रु का रुधिर बहाने से नहीं डरते जब युद्ध की स्थिति में परिवर्तन होता है तो मा दुर्गा आती हैं। वह अपनी तलवार से गरम रुधिर बहते और शत्रुओं के विनाश को देखकर संतुष्ट होती हैं। —शारदा चरन मित्र

" बलिदान के यज्ञ की भांति करोड़ों मनुष्य जो कि मृत प्राय हैं उनको अपनी आहुति देने दो। ऐ मा तुम्हारे पुत्र तुम्हारी पवित्र मूर्ति की अर्चना अपने रुधिर से करेंगे।" —कुसुम कुमारी दास

"ऐ पागल यदि तुम अपने जीवन का बलिदान करना चाहते हो तो तुरन्त कर दो। तुम्हें इससे अच्छा अवसर अपने स्वाभिमान की रक्षा करने का और अपना बलिदान करने का नहीं मिलेगा।"

—जतीन्द्र मोहन बागची

"काल चक्र में ऐ मा चन्डी तुम इन भयंकर असुरों को दण्ड देने के लिए आओ। यह राक्षस जिनके पास अपरिमित शक्ति है तुम्हारे शरीर के टुकड़े कर देंगे।"

—काली प्रसाद काव्य विशारद

"मा हीरों से बने आभूषणों को उतार कर फेंक दो। कटे हुए मनुष्यों के सिरों का हार धारण करो" — "सोने की बांसुरी को अलहदा रख दो अपने हाथ में कृपाण लो और असुरों को मार कर उनके रुधिर से अपनी प्यास बुझाओ"

—हरिश्चन्द्र चक्रवर्ती

"युद्ध की देवी तुम नृत्य करती हुई अपने पुत्रों में विध्वंसकारी युद्ध के लिए पूरी तरह तैयारी करके और कवच धारण करके आओ हमें युद्ध की भयंकर कला, हमारे हृदयों में असीम साहस पैदा कर, मरना सिखाओ हम तुम्हारे गले में शत्रुओं के धड़ से नीचे काटकर मुंडों की माला पहनायेंगे और शत्रुओं की हड्डियों से तुम्हें सिर से लेकर पैर तक सजायेंगे। हम आज रुधिर के महासागर को मथेंगे और स्वतन्त्रता रूपी अमूल्य हीरा ऊपर उतर आयेगा। ऐ युद्ध की देवी मा जागो हम तुम्हारे चरणों में अपनी भेंट चढ़ायेंगे।"

—गिरीन्द्र चन्द्र गंगोली

"उत्साह के साथ करोड़ों सिरों को अपने अधरों पर मुस्कराहट के साथ बलिदान कर दो। तुम्हारे सिरों पर करोड़ों तलवारें मंडरायें मृत्यु के पास आने पर उसकी तथा भयंकर भूतों की जो तुम्हें डराने के लिए और तुम्हारे पूर्व निश्चित मार्ग से तुम्हें हटाने के लिए आवें तनिक भी परवाह न करो।"

—मनीलाल गंगुली

"अपने समर्पित जीवन की चिनगारी से प्रत्येक व्यक्ति के हृदय को देशभक्ति की अग्नि से प्रज्वलित कर दो। प्रत्येक ऐसी बात जिसमें स्वार्थपरता मूढ़, मृत्यु का भय हो, उसको अपनी कष्ट यातना की अग्नि से भस्म कर दो।'

"ऐसा कौन है जो सभी खतरों की सम्भावनाओं का बहादुरी से सामना करेगा अर्थात् अत्याचार स्वयं मे दण्ड प्रहार और मृत्यु। और इन सब खतरों को शान्ति पूर्वक सहन करेगा फिर चाहे उसके अंग खंडित होकर टुकड़े टुकड़े क्यों न हो जावें।"

—देवव्रत बसु

"उसको मा का सपूत स्वीकार करो जो अपना शरीर और आत्मा को मातृभूमि की पीड़ा और कष्ट मिटाने के लिए अर्पित कर अपने का बलिदान करदे। उसको ही यह माना जावेगा कि उसने मा के ऋण को चुका दिया"

—देवव्रत बसु

'ऐ मुरारी सुदर्शन चक्रधारी पतन की अवस्था में पड़ा हुआ भारत तुम्हें चाहता है— तुम पुनः भारत में अवतरित हो। आओ— अपने हाथ में भयंकर तलवार लेकर आओ और शत्रु के रुधिर से संसार को रुधिर-प्लावित कर दो। तुम आओ— उन सब बंधनों को जो भारत को बांधे हैं काटने वाले तुम आओ।"

"मा के प्रत्येक पुत्र को आकाश में फहराते हुए ध्वज के नीचे एकत्रित करो। भारत एक नई और तेजस्वी वाणी बोले। तुम आओ— पृथ्वी को शत्रु के रुधिर से प्लावित करने के लिए तुम नर वेश में आओ।

—कामिनी कुमार मजूमदार

देशभक्ति पूर्ण संगठन (१६०५-१६०८)

राष्ट्रीय शिक्षा—उग्रपन्थ विरोधी आन्दोलन के नेताओं ने जब स्कूलों और कालेजों के बहिष्कार करने की अपील की तब वे केवल बहिष्कार करने की बात कहकर ही चुप नहीं बैठ गए। १६ नवम्बर १६०५ को 'राष्ट्रीय शिक्षा परिषद' का गठन किया गया। उसका उद्देश्य राष्ट्रीय आधार पर साहित्यिक, वैज्ञानिक, प्राविधिक (तकनीकी) तथा व्यवसायिक शिक्षा देना था। उस शिक्षा में देश उसके साहित्य, इतिहास, दर्शन में ज्ञान पर विशेष बल दिया जाता था। उसमें जीवन के उच्चतम आदर्श और विचारों का तथा पश्चिम के उच्च विचारों का समावेश करना था और अपने देश के प्रति सच्चा प्रेम और उसकी सेवा करने की सच्ची लगन जागृत करने का उद्देश्य था इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा योजना को तैयार करने के लिए जो अस्थायी समिति नियुक्त की गई थी उसने २ दिसम्बर १६०५ को अपनी रिपोर्ट दे दी जिसको परिषद ने ११ मार्च १६०६ को स्वीकार कर लिया। परिषद १८६० के इक्कीसवें अधिनियम के अन्तर्गत १ जून १६०६ को पंजीकृत हुई। बंगाल राष्ट्रीय महाविद्यालय का १४ अगस्त १६०४ को उद्घाटन हुआ यह राष्ट्रीय शिक्षा का प्रयत्न सरकार की तत्कालीन शिक्षा नीति को एक बड़ी चुनौती थी जिसमें सरकार शिक्षकों तथा छात्रों की कार्यवाहियों पर प्रतिबन्ध लगाती थी और उन शिक्षण संस्थाओं को दण्डित करती थी जो उन अपमानजनक प्रतिबन्धों की अवहेलना करते थे। जो शिक्षण संस्थाएं अपने आंतरिक कार्यक्रम और व्यवस्था पर लगाए गए प्रतिबन्धों के विरुद्ध काम करतीं थी उनको सरकार दण्डित करती थी यह राष्ट्रीय शिक्षा का महाप्रयत्न उस अराष्ट्रीय शिक्षा नीति को एक खुली चुनौती थी।

परिपत्र विरोधी समिति

सरकार के उन कुख्यात परिपत्रों के बुरे प्रभाव को दूर करने के लिए जिनमें छात्रों द्वारा राजनीति में भाग लेने पर दण्ड देने की व्यवस्था थी 'श्री रमाकांत रे' माइनिंग इन्जीनियर ने परिपत्र विरोधी समिति की स्थापना की। इस समिति की स्थापना बारीसाल सम्मेलन में हुई जिसमें अधिकांश वे छात्र सम्मिलित हुए थे जिनको राजनीति में भाग लेने के कारण स्कूलों से निकाल दिया गया था। सम्मेलन में वे स्वयं सेवक की भांति काम करते थे। 'इंगलिशमन' की भाषा में (१३ दिसम्बर १६०७) इन छात्रों ने पुलिस द्वारा दण्डित होकर प्रसिद्धि प्राप्त करली है।

नेताओं ने यह आवश्यक समझा कि स्वार्थ रहित लगन वाले कार्यकर्ताओं का संगठन करना अत्यन्त आवश्यक है। उनका उपयोग बहिष्कार करने धरना देने और सम्मेलन में आने वाले बड़ी संख्या में प्रतिनिधियों की सुख सुविधा को देखने के लिए करना आवश्यक था।

कुछ ही दिनों में परिपत्र विरोधी समिति का स्थान वृत्त समिति, और वंदेमातरम् सम्प्रदाय ने ले लिया अनेक समितियां और अखाड़े कलकत्ते तथा समीपवर्ती जिलों में स्थापित हो गए। १६ मई को एक सम्वाददाता ने कोमिल्ला से 'इंगलिशमन' को लिखा (१७ मई १६०७)

"इस बात की हमारे पास साक्षी है कि अधिकांश अखाड़े मुख्यतः वन्देमातरम् तथा वृत्तों समितियों के सदस्यों को शस्त्र चलाने का प्रशिक्षण देने के लिए स्थापित किए गए हैं। विशेषकर लाठी, भाला तलवार और छुरी चलाने की वहां शिक्षा दी जाती

है। अब सभी जगह ग्रुप्ती तयार की जाती है और बेची जाती है। सरकार ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया था (दी ऐडमिनिस्ट्रेशन आव बंगाल अन्डर सर ऐडवर्ड फ्रेजर १९०३–०८ पृष्ठ १५१६)।

" कि इन अखाड़ा मे युवक और बच्चों को शारीरिक प्रशिक्षण कवायद और अनुशासन की शिक्षा दी जाती थी और लाठी चलाना तथा कुश्ती लड़ना सिखाया जाता था। इन अखाड़ो के सदस्यो को राष्ट्रीय स्वय सेवक कहा जाता था। इन अखाड़ो का उद्देश्य यह था कि एक ऐसा दल खड़ा किया जावे कि जो शक्ति का मुकाबला शत्रु से कर सके और आक्रमण तथा प्रतिरक्षा के अन्य कार्यों के लिए उपलब्ध हो।

'उनका अन्य कार्यों के लिए भी उपयोग किया जाता है। कुछ को सदेशवाहक की तरह उन लोगों के पास भेजा जाता है जो कि आन्दोलन को चलाने म रुचि रखते हैं और दोष को प्रचार काय करने के लिए भेजा जाता है।'

यह स्वय सेवक अपने ढग से बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं वे सरकार के विरुद्ध प्रतिरोध की भावना को बनाए रखन के लिए आवश्यक हैं। अब यह स्पष्ट हो गया है कि इस दल के बहुत से सदस्यों ने उन कायवाहियों मे प्रमुख भाग लिया है कि जिनके कारण अग्रेज अधिकारियों के हृदय आतक से भर गए हैं।

समाचार पत्रों में घोषणा से यह प्रमाणित होता है " कि खुले ग्राम युवको को भर्ती किया जावेगा और सैनिक युद्ध नीति वायरलैस टलीग्राफी, तीरदाजी, गोली का निशाना लगाना आदि की शिक्षा दी जावेगी।

इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए साधारण सभाओं में इस आशय की अपील की जाती थी कि प्रत्येक परिवार को एक लडके को ब्रह्मचर्य पालन करने और आवश्यकता पडने पर अपने जीवन का मातृभूमि के लिए बलिदान करने के लिए समर्पित कर देना चाहिए।

बारीसाल सम्मेलन (१९०६)

सरकार ने अपने मस्तिष्क का सतुलन खो दिया। बारीसाल की घटना ने अधिकारियों के पाशविक निदयतापूर्ण रुख का नग्न रूप मे प्रकट कर दिया। आन्दोलन के आरम्भ स ही बारीसाल द्वारा अकथनीय यातनाओं और कष्टो को सहन करने और अतुलनीय साहस प्रदर्शन करने के कारण उसकी बहुत ख्याति हो गई थी। आन्दोलन के नेताओ ने पुलिस तथा नेपाल स बुलाए गुरखो के अत्याचारो के होते उस जिले की सहनशीलता और त्याग की सराहना करने के उद्देश्य से वहा एक विशाल सम्मेलन करने का निश्चय किया। सम्मेलन करने के लिए योजना के अनुसार सभी प्रबन्ध पूरे कर लिए गए।

सरकार ने इस बीच यह आज्ञा निकाल दी कि सम्मेलन के सगठन कर्ताओं को 'वन्देमातरम्' से कोई सरोकार नहीं रखना चाहिए। परिस्थिति बहुत कठिन हो गई। सगठन करने वालों से परामर्श करके सम्मेलन १४ अप्रैल १९०६ में अत्यन्त क्षुब्ध वातावरण में हुआ। आरम्भ से ही यह आशका थी कि सरकार और जनता में भिडन्त होगी और वही हुआ भी।

सरकार ने अपने मुख का आवरण उतार कर फेंक दिया और अत्यन्त निदयतापूर्ण दमन पर उतर आई। उससे जनता को पाशविक बल पर नैतिक विजय प्राप्त करने का सुन्दर अवसर प्राप्त हो गया। सरकार द्वारा गम्भीर उत्तेजना उत्पन्न करवी

■ सभी उपाय करने पर भी जनता नितान्त शान्त रही यह नेताओं और जनता के लिए अत्यन्त प्रशंसा की बात थी। सविनय प्रतिरोध की युक्ति विशाल पैमाने पर पहली बार भारत भूमि पर सफलतापूर्वक व्यवहार में लाई गई। बारीसाल ने पहली बार भारत में अहिंसक संग्राम की नींव रक्खी जो भविष्य में महात्मा गांधी के सुयोग्य नेतृत्व में भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में इतनी अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुई।

सम्मेलन की कार्यवाही यकायक बीच में ही रोकनी पड़ी और कार्यक्रम का अधिकांश भाग छोड़ना पड़ा। उस समय जो लोग एकत्रित हुए थे उनमें से बहुतों को तथा नेताओं को अकथनीय यातना सहनी पड़ी पुलिस के लाठी चार्ज के कारण उनके सिरों से रक्त बह रहा था। मुख्य अतिथि तथा स्वागताध्यक्ष को मजिस्ट्रेट द्वारा अपमानित होना पड़ा और उनके विरुद्ध फौजदारी मुकद्दमा चलाया गया। परन्तु पुलिस की चिल्लाहट और शोर तथा मनुष्यों के सिर पर लाठियों के प्रहार के बीच वन्देमातरम् का नारा बराबर सुनाई देता था। युवक और वृद्ध सभी के साथ उस पागलपन से भरे हुए हिंसात्मक आक्रमण में एक समान व्यवहार किया गया। उस निहत्थी और पूर्ण शान्त भीड़ के पास अपनी रक्षा करने के लिए कुछ भी नहीं था। उनके पास उस कठिनाई के समय केवल अतुलनीय साहस और मातृभूमि का प्रेम था जो उनके लिए स्वर्ग से भी बढ़ कर था।

इस प्रकार बारीसाल में सशस्त्र क्रान्ति का बीज बोया गया। जिसके लिए सरकार के अत्याचारों ने जमीन जोत दी और उस स्वर्णीय ऐतिहासिक दिवस अर्थात् १४ अप्रेल १९०६ पर शहीदों के बहन हुए रुधिर से वह सींची गई।

उस समय के वीर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी थे जो राष्ट्रीय भारत के बेताज के बादशाह थे। मजिस्ट्रेट ने उनके साथ अत्यन्त अभद्रता का व्यवहार किया। और जब वे उस समय से गौरव के साथ वापस लौटे तो 'पंजाबी' ने नीचे लिखी कविता (राम शर्मा द्वारा रचित) २५ अप्रेल के अंक में प्रकाशित की।

वह आ रहा है। विजयी वीर आ रहा है भाइयों यशोगान गाओ और भेरी बजाओ बंगाल के वीर पुरुषों अत्याचारी के पतन की धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करो। तुम्हारी आंखों से आवरण हट गया आगे बढ़ो देखो सम्मान का मार्ग कौनसा है आगे बढ़ो! यदि आवश्यकता हो तो रुधिर से स्नान करो। क्योंकि देशभक्त का रुधिर ही स्वतन्त्रता का बीज है। दुर्भाग्यपूर्ण बारीसाल सम्मेलन से तीन महीने पूर्व 'अमृत बाजार-पत्रिका' (१३ जनवरी १९०६) ने खुले शब्दों में कहा कि बारीसाल के सिवाय जिसने सबसे पहले कष्ट सहा और भयंकर रूप से सहा— अन्य किसी भी स्थान पर अव्यवस्था और अशान्ति का मुकाबिला कम से कम अव्यवस्था और अशान्ति से होता। यदि पूरी आराजकता न भी फल जाती।

"दी इंडियन ऐम्पायर' (१० अप्रेल १९०६) ने बारीसाल की जनता को सरकार के सम्भावित होने वाले दमन की चेतावनी देते हुए सम्मेलन के प्रबन्धकों ■ कहा कि— उन्हें यह निश्चय कर लेना चाहिए कि लोग वर्तमान भिक्षा देहि की नीति को अपनाए रहें अथवा वे अपनी भुजाओं की शक्ति पर अपनी राष्ट्रीय आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए भरोसा करें।'

उसने इस महत्वपूर्ण कथन से अपने लेख को समाप्त किया। "गिड़गिड़ाने से घृणा मिश्रित अनुकम्पा मिल सकती है पर ■ जो सत्ता में हैं उनका आदर कभी नहीं

मिल सकता।"

जब सम्मेलन को बलपूर्वक छिन्न भिन्न कर दिया गया तो तुरन्त उसके बाद सन्ध्या ने लिखते हुए नीचे लिखा प्रश्न पूछा—'सैकड़ों गाय बैल और भेड़ों की तरह मार खाना अच्छा है अथवा आत्म रक्षा के लिए लाठी का जवाब लाठी से देना अच्छा है।"

समाचार पत्र जीवन का मोह छोड़ने और अवज्ञा की भावना फैलाने का प्रचार करने लगे। जो कि जनता के मानस का प्रतिबिम्ब था। 'आनन्द बाजार पत्रिका' में श्री श्री विष्णु प्रिया ने १६ अप्रल १६०६ को लिखा—"सरकार को समय रहते इस तथ्य से अवगत करा देना चाहिए कि आजकल भारतीय मृत्यु को साधारण घटना समझना सीख गए हैं।"

एक भयंकर तूफान देश भर में आया हुआ है जिससे सारा के मस्तिष्क में उत्तेजना और उतावली उत्पन्न हो गई है। एक संकट नजदीक आ रहा है और बारीसाल जसी घटना और कहीं घटी तो सम्भावना इस बात की है कि लोग अपने प्राणों की परवाह नहीं करेंगे।'

यद्यपि भारतीय विशेषकर बंगाली नम्र और सहनशील होते हैं वे उतने ही भावना प्रधान हैं जितने कि अन्य देशों के लोग। इस प्रकार की घटना से जो असन्तोष उत्पन्न हुआ है वह उनके हृदयों में गहरा पैठ जावेगा और उसका परिणाम भविष्य में अशान्ति के रूप में प्रगट होगा।

इस सम्बन्ध में 'बंगाली' ने २० अप्रल १६०६ को लिखते हुए इससे भी आगे बढ़कर कहा—एक दूसरा और बड़ा आयरलैंड पैदा कर दिया गया और देश का वैधानिक आंदोलन में विश्वास समाप्त हो गया।

उसी पत्र ने २१ अप्रेल के अंक में इस प्रश्न पर लिखा—'वह ऐसा कायरता पूर्ण, अप्रकोपित और नृशंस निर्दयतापूर्ण अत्याचार था कि जिसने नम्र और शान्ति जनता को खतरनाक ढंग से असन्तुष्ट कर दिया।'

जनता की सहनशीलता की एक सीमा होती है अधिकारियों को यह याद रखना चाहिए कि पाशविक बल का उपयोग करने से पाशविक शक्ति का ही उदय होता है और जहां बुद्धि और सुबुद्धि पूर्ण राजनीतिज्ञता का स्थान बंदूक और लाठी ले लेती है वहां स्वाभाविक है कि लोग वैधानिक तरीकों को तिलांजलि दे दें। अतएव पूर्वीय बंगाल की सरकार अपने लिए अत्यन्त कठिन परिस्थिति उत्पन्न कर रही है और उसी के तरीकों से उसको उसके कुकृत्यों का उत्तर मिलने की सम्भावना है।

अपने आवरण को फेंक कर 'युगान्तर' ने २२ अप्रेल १६०६ को लिखा—तीस करोड़ लोगों को बारीसाल की घटना के सदृश्य अत्याचार के इस तरीके को रोकने के लिए अपने हाथ उठाने चाहिए। शक्ति का उत्तर शक्ति से दिये जाने की जरूरत है।

अब यह स्पष्ट हो गया कि बारीसाल में किए गए अत्याचारों ने समस्त भारत में एक सिरे से दूसरे सिरे तक क्रोध की लहर उत्पन्न कर दी और 'सन्ध्या (२८ अप्रेल, १६०६) ने लोगों का आह्वान किया कि वे अपने क्रोध का प्रदर्शन करें और अपने को स्त्रियों के समान अबला समझने की भूल न करें। यह क्रोध की आंतरिक भावना का बाह्य रूप में क्रोध में प्रदर्शन होना चाहिए क्योंकि "अत्याचार बसा

व्यय क्षोभ राष्ट्रीय चरित्र के लिए अत्यन्त अपमानजनक है। सब परिस्थितियों में धय सदैव अच्छा नहीं होता। जीवन के संघर्ष में प्रतिशोध की भावना भी आवश्यक होती है। प्रतिशोध राष्ट्रीय अपमान को दूर करने का कभी असफल न होने वाला उपाय है।"

'बारीसाल की घटना के अपमान का विष केवल भाषणा से समाप्त नहीं किया जा सकता। यह सब विदित तथ्य है कि विष को विष से ही नष्ट किया जा सकता है। अपमान के विष को प्रतिशोध के विष से ही समाप्त किया जा सकता है।"

'हितवस' (२९ अप्रैल १९०६) ने लिखा कि बाहरी दुनिया सम्भवतः यह न जान सके कि यहां जनता पर कितने भयंकर अत्याचार किए जाते हैं परन्तु उसकी राय थी कि — 'यदि वह घटना दुनिया के किसी और देश में हुई होती तो इमसन (मजिस्ट्रेट जो बारीसाल घटना के लिए उत्तरदायी था) का सिर धड़ से अलग होकर सड़क पर लुढ़कता होता। इस निर्लज्ज व्यक्ति ने जिस प्रकार ऐसे सम्भ्रान्त व्यक्तियों के साथ जो उससे भी ऊंची सामाजिक स्थिति के थे दुर्व्यवहार किया यदि इसी प्रकार कोई निर्लज्ज व्यक्ति अन्य किसी देश में व्यवहार करता तो उसकी हड्डियों को कुचल कर टुकड़े टुकड़े कर दिया जाता।"

भविष्य बहुत अंधकारमय है और यह स्पष्ट है कि — 'शास्त्रों के विरुद्ध शस्त्रों का उपयोग होगा निरपराध बच्चों के रुधिर का अंग्रेजों के और अत्याचारियों के रुधिर से धोया जावेगा। जब कीड़े को कोई ओर से दबाता है तो वह भी काट लेता है। इस देश के लोग कब तक धय धारण किए रहेंगे।'

पत्र ने दोषियों के दण्डित न किए जाने पर भविष्य में होने वाली घटनाओं का अत्यन्त सजीव चित्रण करते हुए लिखा

'हम भय है कि स्वदेशी आन्दोलन अब दूसरा ही रूप धारण करले। यदि बन्देमातरम् के स्थान पर इमसन का कटा हुआ सर यदि खम्भे पर लटका दिया जावे तो वह न तो जनता के लिए और न शासकों के लिए अच्छा होगा। अब हम सरकार को चेतावनी देते हैं यदि मनुष्य वेष में बर्बर राक्षसों को दण्डित नहीं किया गया, यदि इन व्यक्तियों के अहंकार को नष्ट नहीं किया गया तो उससे जो अग्नि प्रज्ज्वलित होगी वह हजारों मनुष्यों के रुधिर से ही बुझेगी। हम जिस बात के लिए डरते हैं वह यह है।"

सभी राष्ट्रीय समाचार-पत्रों की उत्तेजनापूर्ण भाषा और जनता के क्षोभ ने जिलाधीश को चौकन्ना कर दिया। भावी अशान्ति के भय से उसने सूर्य डूबने के बाद और सूर्य निकलने तक किसी भी व्यक्ति को तलवार, छुरी, लाठी, बांस जो कि तीन फीट से अधिक लम्बा और एक इंच से अधिक मोटा हो लेकर निकलने के विरुद्ध आज्ञा प्रचारित कर दी। यह आज्ञा कुछ विशेष सड़कों बाजारों तथा स्टीमर घाट के क्षेत्र पर लागू की गई। पुनः बन्देमातरम् (५ जून १९०७) ने लिखा कि प्रत्येक बात शान्ति और व्यवस्था के नाम पर की जा रही है। उसने उस आज्ञा का अपने ढंग से अर्थ निकालते हुए लिखा —

'अंग्रेजों का शब्द ही कानून है। भारत में उसका अस्तित्व और उपस्थिति ही बहुत से देशभक्ति पूर्ण कार्यों को दबाने और उनको छोड़ देने का संकेत है। विदेशी निरंकुशता से समझौता कर लेना ही पूर्ण व्यवस्था मानी जाती है। भिक्षा मांगने और

राजनीतिक अधिकार की मांग करना महान अशिष्टता मानी जाती है। नौकरशाही के दुष्कार्यों को समाप्त करने का प्रयत्न करना घोर अपराध है। अनन्तकाल तक दासता के लिए इच्छा करना बुद्धिमानी और शांति प्रियता मानी जाती है। अपने को स्वराज्य के लिए सदैव के लिए अयोग्य मानना ही बुद्धिमानी और उदारता मानी जाती है। अपने को एक राष्ट्र मानना पागलपन माना जाता है। अपने देश को प्रेम करना अंध विश्वास समझा जाता है और उसकी मुक्ति के लिए प्रयत्न करना राजद्रोह करार दिया जाता है।

अतएव उसने यह परिणाम निकाला कि नया राष्ट्रवाद जो बहिष्कार और स्वदेशी, राष्ट्रीय शिक्षा और स्वराज्य को स्वीकार करता है कानून और व्यवस्था, धर्म और नैतिकता न्याय प्रियता और औचित्य, आज्ञापालन और अनुशासन का उच्छेदक है।

समाचार पत्र साहस के साथ खुले शब्दों में सरकार की भर्त्सना करने लगे और सभी विचारों के पत्र एक और ही सन्देश करते—प्रतिशोध और रुधिर।

५ जून १६०६ को बगाली ने लिखा 'इमर्सन ने लिखा था कि जिस प्रकार वीरवर 'लवजाय' ने भाषण और विचार की स्वतन्त्रता के लिए एक भीड़ की गोली वर्षा के सामने अपनी छाती करदी थी और उसने जब जीवित न रहना ही ठीक था मृत्यु का आलिंगन कर लिया।'

'ठीक वही भावना आज भारतीयों के मस्तिष्क में उठ रही है। लोग जानते हैं कि राजनीतिक स्वतन्त्रता केवलमात्र शहीदों के रुधिर से ही प्राप्त की जा सकती है और वे उसके मूल्य को चुकाने के लिए तैयार हैं।"

पाशविक शक्ति के लिए खुला आह्वान किया जाता है क्योंकि अंग्रेजों ने कानून तोड़ डाला। ऐसी अवस्था में लोगों का कर्तव्य है कि तुम स्वयं गुण्डा बनना सीखो, स्वयं पाशविक बल संचय करो। याद रखो अंग्रेज शक्तिशाली का ही सम्मान करते हैं और निर्बल के लिए काल के समान भयंकर बन जाते हैं।

एक बार जब जनता को दासता का भान हो जाता है वह जागृति हो जाती है और बंधन की शृंखलाओं को तोड़ने का प्रयत्न करने लगती है तब फिर वह कभी दबाई नहीं जा सकती। लोगों को फिर चाहे जेल भेजा जावे, देश से निर्वासित किया जावे, या फांसी पर लटकाया जावे अथवा उनके शरीर के टुकड़े टुकड़े कर दिये जावें परन्तु वे उस लक्ष्य को नहीं छोड़ सकते जो उन्होंने स्वीकार कर लिया है। 'बंगवासी' (जिसे इंग्लिशमैन ने २ सितम्बर १६०७ को उद्धृत किया)।

"इससे मानकर चला कि देशभक्ति कभी समाप्त नहीं होने वाला स्रोत है। वह रुधिर के बीज के समान है जो कि उनके विनाश करने के प्रयत्नों से और अधिक बढ़ते हैं। जहां एक व्यक्ति को कैद किया जावेगा उसका स्थान लेने के लिए सौ मनुष्य उठ खड़े होंगे।

जबकि दमन अपनी चरम सीमा पर था और कानून की अवज्ञा तथा शिकायतों के लिए प्रतिकार की भावना बलवती थी, रमेशचन्द्र दत्त ने अपने सुनिश्चित विचारों को 'लंदन टाइम्स' में १० जून, १६०८ को लिखते हुए कहा कि इस अशांति के लिए केवल मात्र जनता ही दोषी नहीं है और दमन ही केवल मात्र स्थिति को काबू में लाने का एकमात्र उपचार नहीं है।

बंगाल का विभाजन सर बम्पफाइल्ड का कार्य नहीं है और न वर्तमान सरकार ने उसको किया है वे उसके दुष्पद परिणामों के उत्तराधिकारी हैं। जब उस कदम के विरुद्ध जन क्षोभ का विस्फोट हुआ तो लोगों के मन पर यह छाप पड़ी कि उसके विरुद्ध आंदोलन को पसंद किया जावेगा। इसका परिणाम यह हुआ कि एक वर्ग को दूसरे वर्ग के विरुद्ध एक पंथ के लोगों को दूसरे सम्प्रदाय के विरुद्ध खड़ा किया गया और उसका परिणाम यह हुआ कि पूर्व बंगाल में उपद्रवों, लूट, अगणित दुष्कृत्यों की बाढ़ आ गई उस प्रकार के उपद्रव तथा लूट ब्रिटिश भारत में पिछले पचास वर्षों से अधिक समय में जिसकी मुझे याद है कभी नहीं हुई।

ऐसी दशा में बहुत अधिक संख्या में लोग यह अनुभव करने लगे कि उन्हें उनके कष्टों से मुक्ति मिलने की आशा नहीं करनी चाहिए। उन्हें दमन के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलने वाला है। निराशा ने लोगों को हताश कर दिया और अपराध की भावना उत्पन्न हो गई।

अपराध को कठोरतापूर्वक दबाना चाहिए। परन्तु क्या ऊपर वर्णित परिस्थिति का सामना करने के लिए दमन ही एकमात्र उपचार है। 'सर-बी फुलर' जिसकी कल्पना करते हैं उससे भी अधिक भयंकरता और कठोरता से पिछले बारह महीनों में दमन किया गया परन्तु वह असफल हुआ। दमन सदैव असफल होगा क्योंकि भारत में आयरलैंड की तरह केवल दमन कोई उपचार नहीं है।

उसी समय अरविन्द ने लिखा—'अत्याचारियों ने प्रयत्न किया परन्तु क्या वे कभी भी मनुष्य में जो स्वतन्त्रता के प्रति प्राकृतिक प्रेम है उसको दबाने में सफल हो सके? दबाने से वह अधिक शक्ति से उभरा। अत्याचारी के पैरों के नीचे रौंदे जाने पर वह अनेक रूप धारण कर लेता है और बार-बार असफलता और अकथनीय कष्टों से प्रेरणा पाकर वह उत्तरोत्तर नए रूप में अवतार लेकर अधिक शक्तिशाली हो जाता है। अन्त में वह इतना सबल हो जाता है कि वह अत्याचारी को सदैव के लिए सत्ता से हटा देता है। यह इतिहास की शिक्षा है और यही मानवता का संदेश है।

धार्मिक पुस्तकों में वर्णित बिपले सर्प की भांति अत्याचारियों के आंखें होती हैं परन्तु वे देखते नहीं, उनके कान होते हैं परन्तु वे नहीं सुनते और इतिहास की सदैव शिक्षा और मानवता का सर्वकालीन संदेश उनको नहीं छूता वह उनके लिए व्यर्थ होता है। और विकास का रथ मानव की भूलों और विकृत मनोदशा के कारण इस पृथ्वी पर रुधिर और विध्वंस में से होकर आगे बढ़ता है।

कांग्रेस में फूट (१८९३–१९०७)

प्रवृत्ति—जबकि लोकमान्य तिलक और पराजपे अपने ढंग से उग्र नीति का प्रचार कर रहे थे जो उन्होंने शिवाजी उत्सव और पूना प्लेग के साथ आरम्भ की थी अरविन्द को उससे बहुत पहले ही, जबकि वे राजनीतिक जगत में प्रकाशवान हुए भविष्य में जो घटनाएं घटने वाली थीं और जिस प्रकार वे भारत की भावी राजनीति को प्रभावित करने वाली थी, उसका भान था। सुदूर भूत में (१८९३) जबकि तत्कालीन राजनीतिक नेता नरम नीति का प्रचार कर रहे थे और शिक्षित वर्ग का कार्य केवल धीरे धीरे निरक्षर जनता को ऊपर उठाने तक सीमित था, अरविन्द ने (राय चौधरी, जो अरविन्द और स्वदेशी युग पृष्ठ ६८ ६९) इन्दु प्रकाश में १८ सितम्बर, १८९३ में लिखा था 'स्वयं नेताओं को फ्रांस के इतिहास की शिक्षा को नहीं भूल

ाना चाहिए जहां प्रबुद्ध जन समुदाय ने रुधिर और अग्नि से शुद्ध और दीक्षित
ोकर पांच भयंकर वर्षों में तेरह सौ वर्षों के संचित अत्याचार को मिटा दिया।"
ागे उन्होंने कहा कि आयरलैंड इटली और संयुक्त राज्य अमेरिका इत्यादि के इतिहास
ी भी ठीक यही कहानी है। अरविन्द ने जो कुछ कहा उसके बाद प्रत्येक बुद्धिमान
ौर विचारवान व्यक्ति के लिए यह स्पष्ट हो गया कि जल्दी या देर से एक सशस्त्र
ान क्रांति अथवा राष्ट्र की भावना का किसी प्रकार का हिंसात्मक प्रदर्शन होने
ाला है।

कांग्रेस के अन्दर नरम और उग्र राजनीति का विवाद अभी तक नहीं उठा
ा परन्तु 'काल' ने जनता के हाथ में शक्ति और सत्ता जाने का एक चित्र उपस्थित
किया था। उसने ८ जनवरी १९०४ के अंक में लिखा—"यह कथित राष्ट्रीय महासभा
(कांग्रेस) जो सालों साल अपना सम्मेलन करती है वास्तव में राष्ट्रीय कांग्रेस नहीं है।
यह केवल उन व्यक्तियों के एक उपवर्ग का संगठन है जिन्हें अंग्रेज लोग कृपा कर
शिक्षित कहते हैं क्योंकि उनमें से अधिकांश अंग्रेजों के नितान्त अनुसेवी और आज्ञाकारी
हैं। बहुत करके राष्ट्रीय महासभा कांग्रेस इसी स्थिति में रहेगी और कभी भी देश का
कोई हित नहीं कर सकेगी। लेकिन एक दूसरी भी कांग्रेस है जो अभी तक कभी नहीं
मिली अर्थात उसकी कभी बैठक नहीं हुई। लेकिन जब उसका सम्मेलन होगा तो उसकी
मांगों का विरोध करने का किसी को भी साहस नहीं होगा। उस कांग्रेस में वक्ता
अपने मुख से भाषण नहीं करेंगे और न उस सम्मेलन में आने वाले प्रतिनिधि मंडप
में कुर्सी पर धोत लगा कर बैठेंगे क्योंकि तीस करोड़ प्रतिनिधियों के लिए कुर्सियों
की व्यवस्था कर सकना असम्भव हो जावेगा। वर्तमान कांग्रेस शिक्षित वर्ग की है
परन्तु जिस कांग्रेस की हम बात कर रहे हैं वह अशिक्षित जन समूह की होगी इस
दूसरी कांग्रेस के प्रस्तावों की अवज्ञा करने का किसी भी व्यक्ति को साहस नहीं होगा।
उस कांग्रेस में तीस करोड़ जन को मूक प्रतिनिधियों को काम करने के लिए प्रोत्साहित
करेगी। तीस करोड़ जन जिस अधिकार की मांग करेंगे वह भोजन की मांग होगी।
शब्द नहीं कृत्य उनका आदर्श वाक्य होगा। परन्तु यह कोई नहीं जानता कि इस
कांग्रेस का अधिवेशन कब होगा। परन्तु इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि सरकार तथा
इस देश का शिक्षित समुदाय इस कांग्रेस के अधिवेशन के लिए मार्ग तैयार
कर रहे हैं।"

जबकि बंगभंग विरोधी आंदोलन क्रांतिकारी संस्थाओं को जन्म दे रहा था
इंडियन नेशनल कांग्रेस (भारतीय राष्ट्रीय महासभा) के उग्र राजनीति की ओर
मुड़ने के चिन्ह प्रकट होने लगे। वे सीधी कार्यवाही का रूप ले रहे थे। उस समय
जिन नेताओं के हाथ में कांग्रेस का नियंत्रण था वे आने वाले परिवर्तन को देख रहे थे
और उग्र पंथियों और नरम विचार के लोगों के समझौते के रूप में दो मुख्य प्रस्ताव
जो इंडियन नेशनल कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में दिसम्बर, १९०६ में पास हुए
इस प्रकार थे —पहला प्रस्ताव 'इस बात को ध्यान में रखते हुए कि इस देश की
जनता की देश के शासन में कोई आवाज नहीं है और वे सरकार को जो प्रतिवेदन
देते हैं उस पर सरकार कोई ध्यान नहीं देती—यह कांग्रेस इस मत की है कि बंगाल
में उस प्रान्त के विभाजन के विरोध स्वरूप जो बहिष्कार आंदोलन खड़ा किया
गया है वह वैध है।"

दूसरा प्रस्ताव 'कांग्रेस इस मत की है कि ब्रिटिश उपनिवेशो मे जिस प्रकार की स्वशासित सरकारें है उस शासन प्रणाली को भारत में भी लागू किया जावे।'

इस छोटी सी माग का भी इंग्लण्ड के प्रभावशाली समाचार पत्रो ने विरोध किया था। १६०७ की जनवरी के प्रारम्भ मे 'टाइम्स' ने घोषणा की 'कांग्रेस का पिछला अधिवेशन भारत अथवा विदेशो मे उसके यश और प्रभाव को बढाने वाले सिद्ध नही होंगे।" आगे उस पत्र ने लिखा कि नरम दल और उग्र पथियो मे बिलगाव केवल नरम दल वाला द्वारा अधिकाश मे उग्र पथियों की नीति को अपनाकर ही बचाया जा सका। उसने दादा भाई नौरोजी द्वारा उपनिवेशो जसे स्वशासन के दावे की भूल को बतलाते हुए कहा—"क्योंकि भारत को तलवार से विजय किया गया है और प्रान्तन तलवार से ही उस पर अधिकार बनाए रक्खा जा रहा है अतएव कांग्रेस मे जिस छोटे से उच्च शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व है उसको जान लेना अच्छा होगा कि उनके शत्रुओं और उनके बीच मे तलवार विद्यमान है। (४ जनवरी १६४७ इंगलिशमैन)

इसको कहने की आवश्यकता नहीं कि 'टाइम्स' के उपरोक्त कथन ने जो देश में उस समय क्षोभ की लहर बह रही थी उसमें अग्नि मे इधन जसा काम किया। १६०६ के प्रस्ताव दोनो विरोधी दलो में आवश्यक शांति का वातावरण उत्पन्न करने में असफल रहे। १६०७ में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन नागपुर मे होने वाला था परन्तु दोनों विचारधाराओ के समर्थको के अर्थात नरम दल और गरम दल के मतभेद इतने उग्र व्यापक और कटु हो गए थे कि यह उचित समझा गया कि कांग्रेस अधिवेशन को नागपुर से हटाकर सूरत में शांतिपूर्ण वातावरण में किया जाय जो लोकमान्य तिलक के प्रभाव क्षेत्र से बहुत दूर था।

अनेक समाचार पत्र तथा मासिक पत्र दोनो विरोधी विचारधाराओ के समर्थन में निकलने लगे जो अपनी विचार धारा पर अधिकाधिक बल देते थे। बंगाल के बाहर १६०७ के मई मास मे 'हिन्द केसरी' पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ जिसका उद्देश्य हिन्दी भाषियों और मराठी मे पूना से प्रकाशित तिलक के मराठी 'केसरी' के विचारो को फैलाना था। उसके लेखों मे उग्र विचारो का प्रतिवेदन होता था। यहा तक कि वैधानिक आन्दोलन के झीने आवरण म जिसमे वास्तविक उद्देश्य को छिपाया नही जा सकता था हिंसा का भी समर्थन किया जाता था।

'हिन्द केसरी' को उत्तजना पूर्ण पत्रकारिता के मार्ग मे 'देश सेवक' के रूप में एक सहयात्री मिल गया जो हिंसात्मक उग्र राजनीति का योग्यतापूर्वक प्रतिपादन करता था।

मिदनापुर सम्मेलन

सूरत कांग्रेस से कुछ ही समय पहले ७ दिसम्बर १६०७ को मिदनापुर राजनीतिक सम्मेलन हुआ। उस सम्मेलन में आने वाली भावी घटनाओ की झाकी स्पष्ट दिखलाई दी। उसमें बगाल के नेताओ ने न केवल कोई गम्भीर विचार विमर्श ही नहीं किया वरन आपस मे गहरा मतभेद लेकर गए। उग्र विचार वालों ने सामाजिक बहिष्कार सुरक्षात्मक सगठनो के रूप में अखाड़ों की स्थापना का समर्थन किया और केवल शुद्ध स्वराज्य की माग की जिसका नरम दल वालों ने अपनी पूरी शक्ति से विरोध किया। ये उपनिवेशो की सरकार के समान स्वराज्य से अधिक और कुछ मांगने के पक्ष मे नही थे।

झंझावात के गहन होने के चिह्न और अधिक दिखलाई देने लगे थे। १५ दिसम्बर १६०७ को कलकत्ते के कालेज स्कावयर मे एक सभा हुई। उसमें अरविन्द के नेतृत्व मे लोगो ने लाला लाजपतराय को अगले कांग्रेस अधिवेशन का सभापति बनाने का प्रस्ताव रक्खा। वहा रासबिहारी बोस का नाम पहले से प्रचारित कर दिया गया था। लाला लाजपत राय ने इस विवाद में पडने से इनकार कर दिया अतएव उस समय यह प्रश्न नहीं उठा।

सूरत कांग्रेस

गम्भीर गडबडी के कारण सूरत कांग्रेस का अधिवेशन नही हो सका। दोनों दल एक दूसरे को इसके लिए दोष देते थे और २७ दिसम्बर १६०७ को अधिवेशन स्थगित कर दिया गया। नरम दल वालो ने उसी दिन एक घोषणा पत्र निकाल कर प्रतिनिधियो को उस सम्मेलन के लिए आमन्त्रित किया जो कि भविष्य में होने वाला था। उस सम्मेलन में केवल उन्ही व्यक्तियो को आमन्त्रित किया गया था जो कि इस विचार को स्वीकार करते हों कि भारत का राजनीतिक लक्ष्य उस प्रकार स्वशासन प्राप्त करना है जो स्वशासित उपनिवेशो को प्राप्त है।

यह कहने की आवश्यकता नही है कि सूरत मे जो अलगाव हुआ उससे भारत में क्रांतिकारी भावना को बहुत प्रोत्साहन मिला। उसके हिंसात्मक कार्यों का मार्ग प्रशस्त हुआ। कम से कम जनता के एक बहुत बडे समूह का मन सीधी कार्यवाही को पसन्द करने लगा था। यह इसी से स्पष्ट था कि जो समाचार पत्र इन विचारो के थे उनकी ग्राहक सख्या बहुत तेजी से बढ़ गई और उग्र नीति का समर्थन करने वालो द्वारा आयोजित सभाओं में श्रोताओ की अधिकाधिक भीड इकट्ठी होती थी।

बाद के वर्षों म कांग्रेस जिन परिवर्तनों मे से होकर निकली उसके फल-स्वरूप उसने १६२० मे लखनऊ कांग्रेस मे पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग की और महात्मा गाधी के नेतृत्व म तभी से वह अहिंसात्मक सीधी कार्यवाही की ओर १६२१, १६३० और १६४२ मे बढ़ती गई।

कांग्रेस को क्रांतिकारियों के प्रति अपनी नीति निर्धारित करने में बहुत अधिक समय लगा। वह यह निश्चय नही कर पाती थी कि क्रांतिकारियो को समर्थन न देने की घोषणा करे या नही। उसने उनके उद्देश्य की सराहना करने और उनके कार्यों की निन्दा करने की नीति को स्वीकार किया। धीरे धीरे महात्मा गाधी के प्रभाव से उसने स्वतन्त्रता के सबध में हिंसात्मक कार्यवाहियों का समर्थन करना बिलकुल बन्द कर दिया।

जब कोई राष्ट्र विचलित हो उठता है और स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए सब कुछ दाव पर लगा देता है तो स्वतन्त्रता की माग से जो वातावरण उत्पन्न होता है वह केवल नए स्रोतों से ही नवजीवन और स्फूर्ति प्राप्त नही करता परन्तु वह पुराने परम्परागत प्रेरणा के स्रोतो को ढूढ निकालता है जो तरुण और वृद्ध सबों की भावनाओं को एक समान आदोलित करते हैं।

गीता का महान ग्रन्थ महाभारत का एक भाग है। वह कितने हजार वर्षों से विद्यमान है यह कोई निश्चयपूर्वक नही कह सकता। हिन्दुओ की धार्मिक पुस्तकों में गीता को आध्यात्मिक विचार तथा शिक्षा का सार माना जाता है। पुनर्जाग्रत बंगाल ने राष्ट्रीय आंदोलन की पृष्ठभूमि में उसको एक नया ही अर्थ प्रदान कर दिया

गीता को 'कर्मयोग' का धर्म ग्रन्थ, वह प्रकाश जो हम कर्म का मार्ग बतलाता है अथवा कर्म का धार्मिक संदेश माना जाने लगा। गीता में क्योंकि कर्म करने पर बहुत अधिक जोर दिया गया है इसलिये उसको भारत को जो निद्रा के प्रभाव में पड़ा सो रहा था जगाने के लिए बहुत उपयुक्त समझा गया। क्रमश गीता की अन्य बातें कम से कम उस समय आँखों से ओझल हो गई। गीता योद्धा को युद्ध करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए कहती है —

'पीड़ितों और निबलों की रक्षा करने तथा पृथ्वी पर न्याय और उचित अधिकार को स्थापित करने के लिए लड़ो। इस कर्तव्य से पीछे हटना, युद्ध को टालने की बात करना मतिभ्रम और भ्रमपूर्ण विचार है हृदय की निबलता तथा नपुंसकता का चिह्न है तथा योद्धा और वीर की तेजस्विता का पतन है।"

"पाप पुण्य में न्याय अन्याय में वह शक्ति जो रक्षा करती है और जो शक्ति अत्याचार और अन्याय करती है निरन्तर संघर्ष होता रहता है और जब यह संघर्ष वास्तविक युद्ध में परिणित हो जाता है तो न्याय और सच्चाई की ध्वजा को उठाने वाला तथा उसके समर्थक को जो हिंसात्मक और भयानक कार्य करने के लिए मजबूर होना पड़ता है। उससे कांपना या डरना नहीं चाहिए। उसके अपने अनुयायियों और साथी योद्धाओं को छोड़ नहीं देना चाहिए और न उस पक्ष के साथ विश्वासघात करना चाहिए। उसको न्याय और अधिकारी की ध्वजा को धूल में गन्दी होने के लिए और अत्याचारी के रुधिर से सने पैरों से कुचले जाने के लिए छोड़ नहीं देना चाहिए। क्योंकि हिंसात्मक तथा निर्दयी और विशाल विनाश के प्रति निबल दया प्रदर्शित करना उचित नहीं है। यह विध्वंस तो अनिवार्य है नियति ने उसे संयोजित किया है।" (श्री अरविन्द ऐसेज आन गीता १६५६ पृष्ठ ८६)

महान बाल गंगाधर तिलक ने सबसे पहले भारत में गीता की शिक्षा का राजनीतिक क्षेत्र में उपयोग किया। उन्हें ज्ञात हुआ कि लक्ष्य की प्राप्ति के लिए केवल राजनीतिक विचारों को ही जागृत करने की ही आवश्यकता नहीं है वरन् जनता की आत्मा को भी उसके भविष्य का उसके भूत से जोड़ कर जागृति करने की आवश्यकता है इस काम को गीता से अधिक कुशलतापूर्वक और कौनसा ग्रन्थ कर सकता है जोकि पद्मनाभ श्री भगवान कृष्ण के मुखारविन्दु से निकली है —

'अपने मन में निराशा और हतोत्साह को न आने दो। उठो उठो। यह अपयशकारी, अनार्यों का कार्य है। जबकि उद्देश्य लक्ष्य और पक्ष न्यायपूर्ण हो उसके लिए युद्ध न करने की बात सोचना स्वर्ग प्राप्त करने की इच्छा करने वाले के अयोग्य कार्य होगा। फल का कभी विचार न करो। वह अच्छा बुरा या साधारण जो भी हो परन्तु बिना रुके कार्य करते रहो उन लोगों को कोई पाप नहीं होता जो इस भावना से काम करते हैं। भगवान योद्धाओं के सहायक होते हैं उनके साथ रहते मनुष्य केवल निमित्त मात्र होते हैं।"

'जब जब धर्म का पतन होता है ओ भारत! और अधर्म की विजय होती है तब तब मैं धर्म की रक्षा करने और अधर्मियों का विनाश करने के लिए अवतार लेता हूँ। धर्म की पुनः स्थापना के लिए मैं युगों युगों में जन्म लेता हूँ।' (लार्ड जेटलैंड—हार्ट आर्यावर्त पृष्ठ १२४)

पर यहां यह देना उचित होगा कि भगवान के मुख से निकले ये शब्द

'युगान्तर' ने आदर्श वाक्य के रूप में स्वीकार कर लिये थे। युगान्तर ने भारतीय क्रान्ति को वास्तविकता के क्षेत्र मे लाने के लिए जितना कार्य किया उतना किसी अन्य प्रकाशित साहित्य ने नहीं किया।

आनन्दमठ — स्वदेशी आंदोलन' जो बंग भंग के विरोध में किए जाने वाले तीव्र आंदोलन का सामूहिक नाम था—को आधुनिक भारत के ऋषि बंकिमचन्द चटर्जी की प्रसिद्ध पुस्तक आनन्द मठ से बहुत अधिक प्रेरणा मिली। इसने भारत को जागरण का नया मन्त्र दिया जो कि एक नए भारत को जन्म दे रहा है। वह मन्त्र 'वन्देमातरम' था। बिपिन चन्द्र पाल के शब्दों में 'वन्देमातरम' जिस नए राष्ट्रवाद को प्रकट करता है वह केवल एक नागरिक आर्थिक अथवा राजनीतिक आदर्श मात्र नहीं है वह धर्म है।

'आनन्दमठ' १८८२ में प्रकाशित हुई और वन्देमातरम अर्थात मातृ भूमि की वन्दना का वह प्रसिद्ध गान पहले ही रचा जा चुका था जो उसमें दिया गया था। अरविन्द के अनुसार उस गान मे जो मन्त्र है वह मातृभूमि का उसके अपरिमित सौंदर्य गाम्भीर्य और गौरव के साथ ध्यान करने से महान आध्यात्मिक आनन्द उत्पन्न करता है।"

उस गान में संस्कृत और बंगाली के शब्दों का मिलाकर उपयोग किया गया था इस कारण बंकिम चन्द्र के कुछ मित्रों ने तत्कालीन कुछ प्रसिद्ध व साहित्यकों ने उसे अधिक पसंद नहीं किया। परन्तु बंकिमचन्द्र को उस गान के गौरवपूर्ण भविष्य का निश्चय था इस कारण उन्होंने उस गान को अपने उपन्यास आनन्द मठ मे दे दिया। जब यह प्रकाशित हुआ तो वह उस समय जितना भावावेग उसने बाद को उत्पन्न किया उस समय उसका दसवां हिस्सा भी नहीं उत्पन्न कर सका— परन्तु क्रमशः वह भारत का राष्ट्र गान बन गया। वन्देमातरम् राष्ट्रीय संघर्ष का युद्ध घोष बन गया।

"वह केवल बंगाल की क्रान्तिकारी समितियों का ही युद्ध घोष नहीं बना वरन् सम्पूर्ण राष्ट्र आगे बंगाल का युद्ध घोष बन गया जो कि क्रान्तिकारी समितियों से केवल तरीके मे भिन्न था। उनका लक्ष्य एक समान था।" (लार्ड जेटलैंड दी हार्ट ऑफ आर्यावर्त पृष्ठ १४४)।

अरविन्द ने सम्पूर्ण कविता का अंग्रेजी मे अनुवाद किया और संसार के सभी उन राष्ट्रों को वह कविता भेंट की जो अपनी स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे, और उन्होंने बंकिमचन्द्र चटर्जी को आधुनिक भारत के निर्माताओं में से एक कह कर सम्मानित किया। अरविन्द की भाषा में —

"कोई भी राष्ट्र उस समय तक आगे नहीं बढ़ सकता जब तक कि जो उसका नया परिवेश है उसको व्यक्त करने के लिए उसको कोई संतोषप्रद और उपयुक्त माध्यम प्राप्त नहीं हो जाता। जब तक कि वह राष्ट्र ऐसी भाषा प्राप्त नहीं कर लेता जो कि उसके विचारों और भावनाओं को स्थायी रूप प्रदान कर सके और उसकी प्रत्येक प्रेरणा को तेजी और सफलता के साथ सभी देशवासियों की चेतना में प्रविष्ट कर सके तब तक वह आगे नहीं बढ़ सकता। बंकिमचद्र चटर्जी की भारत के प्रति यह प्रथम महान् सेवा थी कि उन्होंने भारत को ऐसा पूर्ण और संतोष देने वाला माध्यम प्रदान किया। (श्री अरविन्द बंकिम तिलक, दयानन्द १९४७ पृष्ठ— ६)

यह ठीक ही कहा गया है कि बंकिम को यह अन्तर्दृष्टि थी कि भारत की मुक्ति

के लिए किस चीज की आवश्यकता थी। उन्होंने देख लिया था कि ऊपर की शक्ति का सामना करने के लिए उससे भी अधिक शक्तिवान या तरिक विरोधी शक्ति चाहिए-दमन की शक्ति का सामना करने के लिए अभिद्रोही राष्ट्रीय शक्ति चाहिए। उन्होंने हमें ग्लानि आंदोलन की पद्धति को छोड़कर सिंह के समान आंदोलन की पद्धति को स्वीकार करने का आह्वान किया। (श्री अरविन्द बंकिम तिलक, दयानन्द पृष्ठ १०)

परन्तु वे कौन से तत्व हैं जो उनके विचारों को स्वीकार करेंगे और कार्य रूप मे परिणत करेंगे। वे वरागी और फकीर तथा संन्यासी होंगे जिनका सम्पूर्ण जीवन ही त्याग पर आधारित है अर्थात् जो देश के लिए पूर्ण आत्म त्याग करने तथा देश को स्वतन्त्र करने के कार्य के लिए पूर्ण आत्म निष्ठावान होंगे। अपने अमर उपन्यास के पृष्ठों के द्वारा उन्होंने अपने देशवासियों में संयोजन के कठोर नियमों दोष रहित पूर्ण संगठन और नैतिक शक्ति के तीसरे तत्व जिसमे देश भक्ति के कार्यों में धार्मिक भावना का समावेश हो-को अंतर्निविष्ट कर दिया। कौन इस बात से इनकार कर सकता है कि "देशभक्ति का धर्म" बंकिम की रचनाओं का महान श्रेष्ठ विचार नहीं है।

'आनन्दमठ' में बंकिमचन्द्र एक संन्यासी (भावानन्द) के मुख से कहते हैं 'हम अन्य किसी मां को नहीं जानते। हमारे लिए माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ हैं। हम घोषणा करते हैं कि मातृभूमि ही वास्तविक माता है। हमारे कोई मां, बाप भाई पत्नी पुत्र तथा निवास स्थान आदि कुछ भी नहीं है। हमारी केवल माता (मातृभूमि) है जो जल से परिप्लावित फलों से युक्त दक्षिण की वायु से शीतल फसलों से लदी हुई मा है।"

उसी अध्याय में भावानन्द राज्य के धन को लूटने के सम्बन्ध में कहते है कि 'हम चोरी या डकती नहीं करते। यह द्रव्य जोकि विदेशी राजा से जावेगा उसका दुरुपयोग होगा इस द्रव्य पर उसका कोई अधिकार नहीं है। जो देश का शासन उस देश के पुत्रों के हितों में नहीं करता वह उस देश का राजा होने का अधिकार खो देता है।"

उसके साथी महेन्द्र के इस प्रश्न कि इस प्रकार की घटनाओं में प्राण जाने का खतरा है" का कड़ा उत्तर मिलता है अपने जीवनकाल में मनुष्य दो बार नहीं मरता है" यह वह रास्ता है मानो अंगुली के संकेत से बता रहा हो जिससे मुक्ति मिलती है। उससे लम्बी निद्रा से एक साथ जागरण की अवस्था आती है। उन लोगो के ओठो पर वन्देमातरम होता था जो जो उससे भी कठोर और निदयतापूर्ण यातनाओं के शिकार होते थे। उनकी नगी पीठ पर कोड़े मारे जाते थे अथवा जो फासी की सीढ़ियों पर चढ़ते थे।

भवानी मन्दिर' जिसे अरविन्द ने लिखा और जो १९०५ में प्रकाशित हुआ, में क्रांतिकारियों के लक्ष्य और उद्देश्यों का विशद वर्णन किया गया है। उसमे पाठकों को शक्ति (शारीरिक मानसिक, नतिक और अध्यात्मिक बल) का आशीर्वाद प्राप्त करने का आह्वान किया गया है। जिससे कि वे स्वतन्त्रता के युद्ध के लिए उपयुक्त सैनिक बन सकें। राष्ट्र की मुक्ति के लिए उसमें खुले रूप मे शक्ति प्रयोग के आदर्श का समर्थन और प्रचार किया गया है। जापान ने जो मार्ग दिखलाया है उसका अनुसरण किया जा सकता है परन्तु भारत को अपना संघर्ष धर्म की ठोस आधार शिला

पर खड़ा करना होगा। भवानी के मंदिर अथवा काली से सम्बन्धित आधुनिक नगरों की अशुद्धता से बहुत दूर जहां अभी तक मनुष्य का निवास बहुत कम हुआ हो एक कर्मयोगियों का संघ संगठित किया जाना चाहिए ऐसे कर्मयोगी जो मां के लिए सर्वस्व त्याग सकें। इस नवीन संघ की आधार शिला में किसी भी प्रकार की निर्बलता नहीं होनी चाहिए वेदान्त के प्राचीन संदेश में जो ज्ञान भरा हुआ है उसको प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। उनमें से अधिकांश को जीवन भर ब्रह्मचारी का जीवन व्यतीत करना होगा। ये लोग तभी गृहस्थआश्रम में प्रवेश करेंगे कि जब भारत को विदेशियों की दासता से स्वतन्त्र करने का उद्देश्य पूरा हो जावे। पुस्तक में कर्मयोगियों के लिए जो विस्तार से नियम दिए गए उनमें धार्मिक राजनीतिक और सामाजिक विचारों का सम वय किया गया। स्पष्ट है कि यह विचार बंकिमचन्द्र के 'आनन्द मठ' से लिया गया जिसके संबंध में पहले ही कहा जा चुका है।

प्रत्येक व्यक्ति जो अपने को भारतीय कहता है उसको भारत को उससे भी महान बनाने का प्रयत्न करना चाहिए कि जितना महान वह पहले था जिससे कि वह मानवता की मुक्ति के लिए जो महान भावी कार्य उसके लिए भवितव्यता में सुरक्षित रक्खा हुआ है पूरा कर सके। भावी धर्म जो पृथ्वी के सभी धर्मों का समन्वित धर्म होगा भारत से निकलेगा जिसका अंतिम उद्देश्य मानव जाति में परिणित करना होगा जो एक विश्व धर्म को स्वीकार करेगी। पुस्तक का दार्शनिक पक्ष नीचे लिखे शब्दों में प्रगट किया गया।

'पृथ्वी के कभी समाप्त न होने वाली जातियों में जबकि अनन्तकाल चक्र अपने मार्ग पर शक्ति के साथ घूमता है तो अनन्तकाल चक्र से जो अपरिमित शक्ति उद्भूत होती है और जो चक्र को प्रेरित करती है मनुष्य की कल्पना में अनन्त रूपों में दिखलाई पड़ती है। प्रत्येक स्वरूप एक युग का संकेत करता है। (सैल्ले जी यव श्री अरविन्द पृष्ठ ७)

'भवानी मन्दिर' की शिक्षा ने बंगाल की क्रान्तिकारी समितियों को बहुत बड़ी सीमा तक प्रभावित किया। उन्होंने उस पुस्तक में वर्णित सिद्धान्तों को रूसी क्रान्तिकारी हिंसा के तरीकों और उसके विचारों से जोड़ दिया। बहुत समय तक दोनों विचार साथ साथ चले परन्तु फिर परिस्थिति की मांग के कारण हिंसा की भावना अधिक प्रबल हो गई और आन्दोलन के धार्मिक पक्ष में चिपटे रहना कठिन हो गया। ऊपर लिखी पुस्तकों के साथ अन्य पुस्तकों का नाम और जोड़ना आवश्यक है। जोगेन्द्रनाथ विद्याभूषण रचित 'मैजिनी और गरी बाल्डी' के जीवन चरित्र और श्री दुर्गा चरण सानयाल द्वारा रचित 'स्वाधीनतार इतिहास' (स्वाधीनता का इतिहास) यह दोनों पुस्तकें प्रत्येक राष्ट्रीय व्यक्ति के घर में पहुँची और प्रत्येक देश भक्ति की भावनावाले युवक ने उनको पढ़ा।

मुक्ति कौन पाये

गीता और आनन्दमठ से स्वामी विवेकानन्द की प्रेरणादायक वाणी ने लोगों में जैसा राष्ट्रीय चैतन्य उत्पन्न किया वह पहले कभी उत्पन्न नहीं हुआ था। साहित्य गद्य, पद्य, संगीत नाटक कार्टून विज्ञप्तियां तथा समाचार पत्र जो देशभक्ति की भावना तथा राष्ट्रीय जागरण के समर्थक थे हजारों की संख्या में प्रकाशित होने लगे। तत्कालीन सरकार की इस जागरण के प्रति तत्कालीन तेज प्रतिक्रिया हुई और दमन तथा राजद्रोह

के अपराध में मुकदमें चलाने की घटनाएं वर्षा में बूंदों के समान बहुत अधिक संख्या में होने लगीं। यहां उन असंख्य घटनाओं में से कुछ के बारे में भी यहां लिखना कठिन है जिन्होंने राष्ट्र में निराश हृदय में देशभक्ति की भावना को विकसित किया। लेकिन दो के बारे में जो नीचे संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है इन लोगों के मस्तिष्क की हमें एक झांकी देगा जो कि एक नवीन भारत को जन्म देने के लिए कृत संकल्प थे।

'मुक्ति कौन पाये' (मुक्ति किस पथ में है) इन सबमें सबसे अधिक साहसिक थी। उसमें देश को विदेशियों की दासता से स्वतंत्र करने के लिए कोष इकट्ठा करने के तरीके और साधन बतलाए गए थे। 'युगान्तर' के अत्यन्त प्रेरणादायक लेखों का उस पुस्तक के पृष्ठों में स्थान दिया गया जिनमें आन्दोलन में प्रयोग किए जाने वाले और व्यवहार में लाने वाले तरीकों का उल्लेख था। आने वाले आन्दोलन की मुख्य बातें नीचे लिखे अनुसार थीं।

"हमारे देश की वर्तमान स्थिति में स्वतन्त्रता के लिए आन्दोलनों तथा प्रयत्नों की कोई कमी नहीं है। भगवान की अनुकम्पा से प्रत्येक स्थान पर बंगाली इन प्रयत्नों के फलस्वरूप देश प्रेम में दीक्षित हो रहे हैं और स्वतन्त्रता को प्राप्त करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हो रहे हैं। अतएव इन प्रयत्नों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। परन्तु यदि लोग हृदय में स्वतन्त्रता के आदर्श को रखकर इन आन्दोलन में सम्मिलित नहीं होते तो वे कभी भी वास्तविक शक्ति और प्रशिक्षण ग्रहण नहीं कर सकेंगे। अतएव क्रान्तिकारी दल के सदस्य होने के नाते जहां एक ओर दल के कार्य क्षेत्र का विस्तार करने के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा देंगे तो दूसरी ओर उन्हें देश को अपने क्रान्तिकारी कार्यों और आन्दोलनों से उत्तेजित बनाए रखने का सतत् प्रयत्न करना चाहिए।"

उसमें बतलाया गया कि योरोपियनों को गोली मारने में अधिक शारीरिक बल की आवश्यकता नहीं है। अस्त्र शस्त्र यदि दृढ़ निश्चय हो तो प्राप्त किए जा सकते हैं, और हथियारों का गुप्त रूप से किसी गुप्त स्थान पर निर्माण किया जा सकता है। भारतीय सैनिकों की इस काम में सहायता प्राप्त करनी चाहिए। उन्हें देश की दयनीय दशा तथा कष्टों से अवगत कराकर उसको हृदयंगम कराना चाहिए। शिवाजी के शौर्य का यशोगान करना चाहिए। जब तक कि क्रान्तिकारी कार्य शैशव अवस्था में रहे चन्दे से खर्चा चल सकता है। किन्तु जब कार्य आगे बढ़ जावे तो समाज से रुपया बलपूर्वक छीना जा सकता है। जबकि क्रान्ति समाज के हित के लिए की जा रही है तब समाज से उसके लिए द्रव्य इकट्ठा करना न्यायपूर्ण और उचित है। हम यह स्वीकार करते हैं कि चोरी और डकैती अपराध है क्योंकि वे एक अच्छे समाज के सिद्धान्तों का उल्लंघन करते हैं। परन्तु राजनीतिज्ञ डकैत समाज के हित में कार्य करता है। "इसलिए एक छोटी भलाई को ऊंची और बड़ी भलाई के लिए नष्ट करने में कोई पाप नहीं है वरन पुण्य का कार्य है। अतएव क्रान्तिकारी यदि समाज के कृपण और विनाशी सदस्यों से बलपूर्वक द्रव्य छीन लेते हैं तो उनका आचरण बिल्कुल उचित और न्यायपूर्ण है।"

'पुस्तक में आगे चलकर पाठकों का आह्वान किया गया कि उन्हें सैनिकों की सहायता लेनी चाहिए। यद्यपि यह सैनिक पेट की खातिर विदेशी शासकों की सरकार की नौकरी स्वीकार कर लेते हैं परन्तु वे भी हाड़ मांस के मनुष्य हैं उन्हें मौलिक रूप

से सोच विचार करने की शक्ति प्राप्त है। अतएव अब क्रांतिकारी लोग उन्हें देश की दुर्दशा और कष्टों से अवगत करावेंगे तो उचित समय पर वे शासकों द्वारा उन्हें दिए गए हथियारों को लेकर क्रांतिकारियों में शामिल हो जावेंगे। क्योंकि सैनिकों को इस प्रकार तैयार किया जा सकना सम्भव है। इसी कारण आधुनिक अंग्रेजी राज्य में चतुर बंगालियों को सेना में प्रवेश नहीं करने दिया गया। इसके अतिरिक्त विदेशी राज्य शक्तियों से गुप्त रूप से हथियारों के रूप में सहायता प्राप्त की जा सकती है।"

यह पुस्तक अत्यन्त साहसपूर्ण थी। उसमें यह निस्सन्देह निश्चित हो गया कि जो परिस्थिति बन रही है उसमें खुला संघर्ष होना अनिवार्य है।

वर्तमान रणनीति' 1907 में प्रकाशित हुई। उस पुस्तक में देश के तरुणों का आह्वान किया गया था कि वे भय पर विजय प्राप्त करें और मृत्यु का सामना करें। उन्हें तलवार चलाने तथा शत्रु के विरुद्ध छापामार युद्ध में कुशल होना चाहिए। शत्रु जिसने कि उन्हें इसलिए निशस्त्र कर दिया जिससे कि वे सदा के लिए नपुंसक और हानि रहित बने रहें। उनको परिस्थिति के अनुसार अपने को ढालने की कला आना चाहिए।

एक नवीन साहित्य मोड़ शीर्षक लेख में 'बन्देमातरम' ने अपने 13 अक्टूबर, 1907 के अंक में उस पुस्तक के सम्बन्ध में यह टिप्पणी लिखी—" यह पुस्तक एक छोटी सी पाठ्य पुस्तक है जो उन लोगों के लिए जो बंगाल के निवासियों की भांति ब्रिटेन के शासन के अन्तर्गत आधुनिक शस्त्रों के उपयोग, सैनिक शब्दों के अर्थ, आधुनिक सेना के विभिन्न विभागों और उनके उपयोग, छापामार युद्ध के मूल सिद्धान्तों के विषय तथा उसके स्वरूप से सर्वथा अनभिज्ञ हैं उनके लाभ के लिए इन विषयों की व्याख्या करती है। इन विषयों को समझने के लिए इसमें आधुनिकतम युद्धों के उदाहरण दिए गए हैं। बोयर तथा रूस जपान युद्ध का इसमें वर्णन है। पहले युद्ध में नए तरीके प्रकाश में आए अथवा उनकी परीक्षा की गई और दूसरे युद्ध में सामान्य स्थिति के अन्तर्गत बड़े युद्ध क्षेत्र में अनुभव से उनका परिशोधन किया गया। बंगला साहित्य में यह पुस्तक एक नया मोड़ है जो राष्ट्र के मानस को प्रकट करता है। संकुचित जीवन और सीमित आकांक्षाओं के पुराने समय में हम काल्पनिक कविता तथा उपन्यास और कभी कभी साहित्यिक दमन तथा साहित्यिक आलोचना की रचनाओं से सन्तुष्ट थे। आजकल राष्ट्र का हृदय कड़ी चीजों के लिए उत्सुक है जैसे इतिहास, देशभक्ति नाटक, राजनीति रचनाएं, राष्ट्रीय आकांक्षा को उभारने वाले गान हमारे प्राचीन जीवित धर्म के झरने से निकलने वाले विचार।—विचार ही वास्तव में वह साहित्य है जो पढ़ा और सुना जाने योग्य है।

नवोदित राष्ट्र अपने विकास और संगठन के लिए उत्सुकतापूर्वक प्रयत्न करता है और कोई भी वस्तु जो उसको इस कार्य में सहायता पहुँचाती है और उसके उपयोगी ज्ञान के क्षेत्र का विस्तार करती है वह उसके ध्यान को आकर्षित करेगी।

× × ×

इसमें कोई संदेह नहीं कि इस पुस्तक की पाठ्य सामग्री का इस समय कोई व्यवहारिक उपयोग नहीं किया जा सकता। परन्तु हजारों लाखों की इच्छा और इच्छान्वित स्वयं अपने क्षेत्र का निर्माण कर लेती है और जब एक राष्ट्र की किसी कार्य क्षेत्र की मांग करती है तो उस मांग से ऐसी भौतिक घटनाएं

हैं जो कि उस समय अंकुश रहित कल्पना के स्वप्न प्रतीत होते हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम अपने देशवासियों को एक राष्ट्र के जीवन को प्राणवान बनाने के लिए सभी प्रकार के आवश्यक ज्ञान तथा क्रिया की शिक्षा दें। यदि हमें इजाजत हो तो ज्ञान और क्रिया दोनों की शिक्षा दें यदि क्रिया करने की इजाजत न हो तो केवल क्रिया के लिए ज्ञान की शिक्षा दें। यद्यपि आज क्रिया की हम इजाजत नहीं है। परन्तु राष्ट्र के भावीपूर्ण विकास के लिए आवश्यक है। जब साधना के द्वारा एक हार्दिक जिज्ञासु आत्मा तैयार होती है, वह चाहे कितनी ही अधूरी क्यों न हो भगवान अपनी सुविधा से समयानुकूल क्षेत्र और अवसर उपस्थित कर देता है और राष्ट्र की आकांक्षा को पूरा करता है।

यद्यपि क्रांतिकारी विचार का आरम्भ थोड़े से व्यक्तियों से हुआ परन्तु सीधी कार्यवाही के विचार ने धीरे धीरे अधिकाधिक लोगों के मस्तिष्क को अपने बन्धन में जकड़ लिया। दक्षिण से उत्तर तक के समाचार पत्रों ने गधक और अग्नि उगलनी आरम्भ कर दी और स्वाभाविक रूप से अधिकारियों की उन पर कोप दृष्टि पड़ी। 'पूना वैभव' (१८६७) मादावृत' (१८६७) केसरी 'काल (१८६५) विहारी', 'वन्देमातरम' (१६०६) युगान्तर' (१६०६) सन्ध्या' 'नव शक्ति', कर्म-योगिन', 'प्रतोदा' (बम्बई) 'सहायक' (लाहौर) 'पंजाबल (लाहौर) 'हुंकार' 'स्वराज्य', देश सेवक' तथा उनके अनुरूप ही अनेक पत्र निकले और विलीन हो गए।

राष्ट्रीय विचारों को फैलाने वाली पुस्तकों तथा अन्य राष्ट्रीय साहित्य को अधिकारी या तो ज़ब्त कर लेते अथवा उनके प्रकाशन को रोक देते थे। इस प्रकार के साहित्य के प्रकाशित होते ही अधिकारी उसको जब्त करने की आज्ञा निकाल देते 'लघु अभिनव भारत गाथा' (गणेश दामोदर सावरकर की मराठी कविताएं) देशोर-कथा', शम्भु निशम्भु वध' नामक छोटा नाटक अनल प्रभ', 'नव उद्यपिन' 'रणजितरे' 'जीवन यज्ञ' इत्यादि ऐसी अनेक क्रांतिकारी राष्ट्रीय पुस्तकों की प्रतिलिपि थी जिन्हें अधिकारियों ने जब्त कर लिया।

प्रति दिन सरकार का दमन और अधिक कठोर होता गया परन्तु ऐसा प्रतीत होता था कि मानो उन्होंने एक महाप्रबल और भीषण बाढ़ को रोकने के लिए रेत के बांध पर अटूट विश्वास कर लिया हो।

प्रेस सम्बन्धी कानून

"जनता के मस्तिष्क पर समाचार पत्रों के बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर सरकार घबराई। उसने समाचार पत्रों पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करने का विचार किया। ३ जून, १६०७ के पूर्व जबकि भारत सरकार के गृह विभाग ने एक विज्ञप्ति इस आशय की निकाली थी कि यदि प्रांतीय सरकार किसी समाचार पत्र के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही करना चाहे तो उसको तत्सम्बन्धी सारा मामला भारत सरकार को भेजना होगा उसमें यह बतलाना होगा कि किन परिस्थितियों में समाचार पत्र के विरुद्ध कार्यवाही करना तय किया गया और उस समाचार के विरुद्ध क्या कार्यवाही करने का प्रस्ताव है। भारत सरकार की स्वीकृति मिलने पर ही कार्यवाही की जा सकती थी।"

इस सदनियम को तिलांजलि दे दी गई और भारत सरकार ने प्रान्तीय सरकारों को उन सब मामलों में जहां कानून की अवज्ञा की गई हो मुकदमा चलाने

की इजाजत दे दी। यह जो इजाजत मिल गई उसको प्रतिशोध की भावना से स्वतन्त्रतापूर्वक काम में लाया गया और सम्पूर्ण भारत में समाचार पत्रों के विरुद्ध विशेषकर पंजाब, बम्बई और बंगाल में उन पर मुकदमे चलाए गए। लगन वाले सम्पादकों, प्रकाशकों तथा प्रेस के मालिकों के सिर पर विपत्ति आ गई। यहां तक कि इन समाचार पत्रों के वितरक और हाकर भी उसकी चपेट से नहीं बचे। पैम्फलेटों और विवरण पत्रिकाओं के प्रकाशकों इत्यादि को भी फांसा गया। इन पर इण्डियन पेनेल कोड की धारा १२४ अ के प्रावधान के अंतर्गत मुकदमा चलाया जाने लगा।

पंजाब में हलचल (१९०७ १९०८)

जबकि बंगाल विभाजन के कारण अकथनीय अशांति के बीच से निकल रहा था उसी समय पंजाब में भी गम्भीर हलचल उत्पन्न हो गई। उसका मुख्य कारण था कि सरकार ने एक अत्यन्त अविवेकपूर्ण और उत्तेजना उत्पन्न करने वाला कदम उठाया। पंजाब के सबल किसानों ने उसके विरोध में जो कदम उठाए वे तुरंत सफल हुए। सरकार को विवश होकर अपनी नीति को बदलना पड़ा और पंजाब के अधिकारियों की बुद्धि ठिकाने आ गई।

अत्यधिक भूमि कर और ऊपर से सिंचाई तथा अन्य शुल्क लगा दिए गए इससे पंजाब के किसानों में क्षोभ फूट पड़ा। उस समय पंजाब क्षुब्ध था इस कदम ने सूखी घास में चिनगारी का काम किया। "सभी का कहना था कि भूमिकर बहुत ऊंचा है और सिंचाई शुल्क तो अत्यधिक है तथा जो नियम बनाए गए हैं वे अत्यन्त निराशाजनक हैं। इस क्षोभ को और अधिक तीव्र करने के लिए नहर उपनिवेशों के अधिकारियों ने जिन्हें अपने कर्तव्यों का भान नहीं था बीस लाख किसानों को जो बीस लाख एकड़ जमीन जोतते थे आतंकित कर दबाने का प्रयास किया मानो कि वे एक छोटे से आदर्श फार्म (खेत) की व्यवस्था कर रहे हों।" 'पायनियर' समाचार पत्र ने अपनी सम्मति प्रगट करते हुए कहा 'जरमनी के अत्यन्त क्रूर और कठोर राज्य अधिकारी भी नौकरशाही की तुलना में नरम थे।'

किसानों के क्षुब्ध और असंतुष्ट रुख की नितांत उपेक्षा करके और प्रशासनिक चातुर्य को तिलांजलि देकर पंजाब सरकार ने नहरों के उपनिवेश सम्बन्धी अधिनियम का सभी मूर्खतापूर्ण बातों को अनिच्छुक और क्रुद्ध किसानों पर कड़ी धमकी द्वारा लादना चाहा। उस अधिनियम का उद्देश्य पुराने सैनिकों को पुरस्कृत करना और भविष्य में सैनिकों की भर्ती को प्रोत्साहित करना था।

चिनाव नहर उपनिवेशों में जहां कि सिंचाई कर और भूमि कर में कोई कमी नहीं की गई थी बिल का सबसे अधिक और उग्र विरोध था। बार के ६ सदस्यों के विरुद्ध मुकदमे दायर कर दिए गए। उनमें से तीन रावलपिंडी के बरिस्टर थे। उन पर यह दोषारोपण किया गया कि वे सम्राट की प्रजा को विद्रोह करने के लिए भड़काते हैं।

मई १९०७ के प्रारम्भ में तीनों को गिरफ्तार कर लिया गया और उनकी जमानत अस्वीकार कर दी गई। पांच महीने तक वे जेल में रहे। जबकि मुकदमे की अदालत में सुनवाई हुई तो सभी राजद्रोह के अभियोग में मुक्त हो गए। पंजाब केसरी लाला लाजपत राय और सरदार अजीतसिंह को देश से निर्वासित कर दिया गया। अतएव यह किसान आंदोलन अखिल भारतीय आंदोलन बन गया।

बगाल में जो क्रांतिकारी आन्दोलन चल रहा था उसने वीर पजाबियो के मस्तिष्कों को भी प्रभावित किया। प्रति दिन पूर्वी बगाल घोर दमन मारधाड अशाति तथा बहिष्कार की खबरें पजाब मे आती थी और वहा के समाचार पत्र उन पर कडी टिप्पणिया लिखते थे। ग्रामीण क्षेत्र की अपेक्षा पजाब में अशाति तथा क्रातिकारी कार्यवाहिया के चिह्न नगरो मे अधिक दिखलाई देते थे। रावलपिंडी, सियालकोट, लायलपुर तथा अन्य बडे नगरो म क्रातिकारी आदोलन को खडा करने के प्रयत्न किए जाने लगे। खुले आम वहा राजद्रोहात्मक भाषण किए जाने और योरोपियनों को अपमानित किया जाता। 'पजाबी' के मामले म जो फसला किया गया उसके परिणाम स्वरूप दगा हो गया और क्रातिकारी सगठना ने चिनाव नहर उपनिवेश और बारी-दो आब नहर प्रदेश में आन्दोलनकारियों के हाथ मजबूत करने के लिए सभी कदम उठाए। एक गोपनीय सरकारी नोट मे लिखा गया कि आदोलनकारियो ने यह प्रयत्न किया कि "प्रत्येक घटना का आदोलनकारी सिक्खो में ब्रिटिश विरोधी भावना को उभारने में उपयोग करें। आदोलन को दबाने मे पुलिस को अपने देशवासियो के प्रति देशद्रोही कहकर भर्त्सना की जाती है। उन्हें सरकारी नौकरी छोड देने के लिए कहा जाता है और भारतीय सैनिको को आन्दोलन मे सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रित किया जाता है।"

नोट में आगे लिखा था कि कुछ नेता अग्रेजो को भारत से निकाल बाहर करना चाहते हैं कम से कम वे उनकी सत्ता का तो समाप्त कर ही देना चाहते हैं। वे अग्रेजो को या तो बलपूर्वक निकाल देना चाहते हैं अथवा समस्त देशवासियो द्वारा सत्याग्रह के द्वारा हटा देना चाहते हैं। वे अग्रेजों के विरुद्ध कठोर जातीय घृणा की भावना को उत्पन्न करके सारी सरकार के काम को ठप्प कर देना चाहते हैं।

पजाब में तलाशियो और गिरफ्तारियों की धूम मच गई थी। तनिक भी सदेह हुआ कि तलाशी और गिरफ्तारी हो जाती थी। अलीपुर षडयन्त्र के अभियोग मे अभियुक्त द्वारा बम बनाने की पुस्तक का उपयोग किया था। इसका पता लगने से यह सिद्ध हो गया कि पजाब के क्रातिकारियों का बगाल के क्रांतिकारियों से सम्बध स्थापित हो गया था।

इन गिरफ्तारियों, तलाशियो और दमन का परिणाम यह निकला कि लोगों का क्रोध फूट पडा और पजाब के प्रमुख नगरो—दिल्ली, लाहौर और रावलपिंडी आदि में हिंसा फूट पडी। दोनो ओर से रुधिर बहाया गया। राज्य सरकार के अधिकारियो द्वारा हिंसा का उत्तर हिंसा से दिया गया। अन्य सरकार द्वारा की जाने वाली हिंसा को जनता ने नहीं सहा, उसका बदला लिया गया। सारे पजाब में क्रातिकारियो और सरकार में युद्ध हुआ यद्यपि वह युद्ध दो असमान शक्तियों में था। यह असतोष सैनिक बरिकों तक पहुचा और उसमें भी असतोष और अशांति फूट पडी। सनिक अधिकारियों के लिए यह सब चुपचाप देखते रहना सम्भव नहीं था। अन्त में लार्ड किचनर को स्वय इसमें हस्तक्षेप करना पडा और तब वह नहर उपनिवेशों सम्बन्धी अधिनियम को वापस लिया गया।

पजाब के सक्रिय प्रतिरोध की प्रतिक्रिया बगाल में भी हुई और क्रांतिकारियों ने बगालियों को पजाब से साहस से पाठ पढ़ने की अपील की। १६ जून, १९०७ को 'युगान्तर' ने 'लाठी का उपचार' शीर्षक लेख में लिखा— "जसे ही सिचाई शुल्क

बढ़ाया गया पंजाब में घोर क्षोभ फैल गया चारों ओर से उसका विरोध होने लगा। उसके विरुद्ध स्मृति पत्र या प्रार्थना पत्र देने के लिये केवल दो सप्ताह का समय दिया गया। ऐसी दशा में लोगों ने उस औषधि को अपनाया जो कि मूर्खों के विरुद्ध अपनाई जाती है। कुछ लोगों के सर फूट गए और कुछ मकान जल गए और सरकार ने सिंचाई शुल्क की दरों को बढ़ाने का विचार छोड़ दिया। उपनिवेशों सम्बन्धी कानून भी व्यर्थ हो गया। यह औषधि कितनी चमत्कारी है। वास्तव में कानूनी औषधि ही सर्वोत्तम औषधि है।"

न्यायालयों का अपमान (१६०७–१६०८)

राष्ट्रवाद की भावना जैसे जैसे बढ़ती और उग्र होती गई और उसको जागृत करने में समाचार पत्रों ने बहुत बड़ा योग दिया। वैसे ही सरकार ने उन समाचार पत्रों के सम्पादकों के विरुद्ध जो बहुत निर्भीक थे राजद्रोह फैलाने के मुकदमे बहुत तेजी से चलाने आरम्भ कर दिए। सरकार की इस चुनौति का सामना करने के लिए सम्पादकों ने तथा अन्य व्यक्तियों ने कानून की अदालतों की नितान्त उपेक्षा करने की नीति को स्वीकार किया और अदालत की कार्यवाही में भाग लेना अस्वीकार कर दिया। पहली बार इस नीति को 'युगान्तर' के मामले में व्यवहार में लाया गया। उसके सम्पादक थे डाक्टर भूपेन्द्रनाथ दत्त (स्वामी विवेकानन्द के भाई) जिन पर १६ जून १६०७ के अंक में प्रकाशित एक लेख के सम्बन्ध में अभियोग चलाया गया। जैसे ही अभियोग आरम्भ हुआ डाक्टर भूपेन्द्रनाथ दत्त (सम्पादक) ने २२ जून,१६०७ को नीचे लिखा वक्तव्य दिया।

"मैं भूपेन्द्रनाथ दत्त यह निवेदन करना चाहता हूं कि मैं 'युगान्तर' पत्र का सम्पादक हूं इस पत्र में प्रकाशित सभी लेखों के लिए मैं एकमात्र उत्तरदायी हूं। मैंने जो सद्विश्वास के साथ मेरे देश के प्रति मेरा जो कर्तव्य था वह मैंने किया। मैं न तो और कोई वक्तव्य ही देना चाहता हूं और न इस अभियोग में भाग लेना चाहता हूं।"

जो लेख कानून की दृष्टि में आपत्तिजनक थे वे थे 'भोई भगा' (भय को दूर करो) 'लाठोषधी' (लाठी की औषधि) अथवा भारतीयों की राजनीति'।

२४ जुलाई, १६०७ को दण्डनायक ने नीचे लिखा फैसला दिया—'भोई भगा (भय को दूर करो) शीर्षक लेख इस दावे के साथ आरम्भ होता है कि ब्रिटिश साम्राज्य एक महान धोखा है—यह वह मकान है जिसकी नीव नहीं है और उसको थोड़ा धक्का देने से ही वह गिर कर टुकड़े टुकड़े हो जावेगा। लेखक आगे कहता है कि उसके देश वासियों की मूर्खता के कारण ही ब्रिटिश साम्राज्य विद्यमान है। उसकी शक्ति को बहुत बढ़ा चढ़ाकर कहा जाता है। लेखक ने उसको एक भूत की उपमा दी जिसे धक्का देने से उसका पतन निश्चित है।"

उसके उपरान्त उसने पंजाब की घटनाओं का जिक्र किया इस सम्बन्ध में 'लाठी की औषधि' लेख बहुत स्पष्ट है। उसमें लिखा है कि पंजाब में जब सिंचाई शुल्क की दरों में वृद्धि की गई तो बहुत शोर मचा और लोगों ने वैधानिक विरोध करने में बहुत ही अल्प समय लगाया और फिर हिंसा फूट पड़ी। उन्होंने उस उपचार का उपयोग किया जो मूर्खों के साथ बर्ता जाता है। सिर फूटे मकान जला दिए गए, उसका परिणाम यह हुआ कि अधिकारियों ने सिंचाई शुल्क को बढ़ाने का विचार छोड़

दिया। 'काबुली औषधि' जैसी और कोई चमत्कारी औषधि नहीं है।'

समाचार पत्रों के विरुद्ध अभियोग चलाने को बहुत बुरी दृष्टि से देखा जाता था और 'सध्या' (२३ जुलाई १६०७) के अनुसार उसका परिणाम प्रतिशोध की भावना को उत्पन्न करना हो सकता है। उसने स्पष्ट लिखा कि पलासी के आमों के बागों में छिपे रहकर, बिना कोई युद्ध किए धोखा, विश्वासघात और जालसाजी से उन्होंने बगाल पर अधिकार कर लिया। यही कारण है कि वे हम नहीं समझते। अब वे काले सर्प की पूछ पर चलने का दुस्साहस कर रहे हैं। यही राजद्रोह के अभियोग ही अग्नि को प्रज्ज्वलित कर देंगे। हमें ज्ञात है कि तुम मोटी चमडी वाले हो और तुम सुन्दर और सभ्य "शब्दों" को नहीं समझ सकते। बगाली अब तुमसे हिसाब निबटा लेना चाहते हैं। तुम हम पर अत्याचार करके हमसे परिचय करना चाहते हो। तुम जो इच्छा हो करो। केवल भयकर सर्प और उसके दश को याद रखना।

डाक्टर भूपेन्द्रनाथ दत्त के दडित किए जाने पर 'वन्देमातरम्' ने एक पाडित्य पूर्ण सम्पादकीय लिखा जिसमे उसने सभी दृष्टियों से एक राष्ट्रवादी के दृष्टिकोण को देते हुए इस बात पर विशेष बल दिया कि पृथ्वी के सभी पीडित लोगों का स्वतन्त्रता प्राप्त करने का जन्मसिद्ध अधिकार है। (परिशिष्ट मे देखिए)

परिशिष्ट

२८ जुलाई, १६०६ को वन्देमातरम्' ने युगान्तर के सम्पादक श्री भूपेन्द्रनाथ दत्त को दडित किए जाने पर लिखा—

पहले की तरह नौकरशाही ने युगान्तर के सम्पादक के विरुद्ध राजद्रोह का अभियोग चलाकर अपने अधिकार के बाहर काय किया है पजाबी अभियोजन के कारण उनकी प्रतिष्ठा को अकथनीय गहरा धक्का पहुचा और उनकी मलिनता का गव छिन्न भिन्न हो गया। नौकरशाही का कार्य नकरात्मक तथा विध्वसकारी था।

युगान्तर' का अभियोजन राष्ट्र के लिए लाभदायक सिद्ध हुआ है। उससे जनता के नैतिक स्तर को ऊचा बनाने के राष्ट्रीय हित के काय का शुभारम्भ हुआ है। जनता का ऊचा नतिक स्तर विदेशी सत्ता के स्थान पर अपना वचस्व स्थापित करेगा और विदेशी सत्ता की केवल भौतिक बल की श्रेष्ठता को व्यथ कर देगा। युगान्तर के सम्पादक द्वारा अभियोग के सम्बन्ध मे नितान्त निष्क्रिय रहने के कारण ही यह अच्छा परिणाम आया है। अपने अभियोग म अपनी निर्दोषता की वकालत करने से इनकार करके उन्होंने इस अभियोग को अनेकों सनसनी खेज अभियोगों से भी अधिक सनसनी खेज बना दिया। उसने भारत भर में जनता के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डाला है। वह नतिक साहस का केवल व्यक्तिगत उदाहरण मात्र नहीं है और न वह केवल देश के प्रति अपने कतव्य को पालन करने तथा देश के लिए चुपचाप कष्ट सहने मात्र का उदाहरण है। वरन वह अभियोजन के विरुद्ध कभी भी समझौता न करने की स्वराज्यवाद की भावना का पहला व्यवहारिक प्रयोग है। पहली बार एक ऐसा व्यक्ति मिला जो विदेशी साम्राज्यवाद की सत्ता को चुनौति के स्वर में कह सकता है '*कि साम्राज्य के समस्त वभव, गौरव गरिमा, विस्तृत उपनिवेशों, अजेयता तथा अरोध्य शक्ति, असख्य मानवीय शक्ति तथा अटूट सम्पत्ति, अगणित बन्दूकों और तोपो,* समस्त कानून की और तलवार की शक्ति, किसी को कद करने, उस पर अत्याचार

करने और शरीर को नष्ट कर देने की तुम्हारी सम्पूर्ण शक्ति होते हुए भी तुम मेरे लिए मेरी अंतरात्मा के लिए तुम कुछ नहीं हो। मेरे लिए तुम कोई महत्व नहीं रखते। तुम केवल एक अवस्था एक दृश्य और समाप्त हो जाने वाला भ्रम मात्र हो। स्थायी वास्तविकता मेरी मां और स्वतंत्रता है।

यह अच्छा है कि हम उस मूल प्रश्न को समझलें जिस पर सभी अन्य प्रश्न निर्भर हैं और जिससे अन्य प्रश्न उत्पन्न होते हैं। प्रश्न यह नहीं है कि एक भूपेन्द्रनाथ दत्त ने ऐसी सामग्री प्रकाशित की जो बेलवेडर, दार्जलिंग शिलौंग या शिमला में बैठे हुए कुछ मन्द बुद्धि वाले व्यक्तियों को सामूहिक रूप से अपने को बंगाल सरकार या भारत सरकार कहते हैं के विरुद्ध अवज्ञा और घृणा उत्पन्न करेगी, और जनता में उनकी कानूनी सत्ता का प्रतिरोध करने की इच्छा जागृत करेगी। यदि केवल प्रश्न इतना ही होता तब हम इस प्रश्न पर तर्क कर सकते थे कि उन्होंने जो किया वह बुद्धि मत्तापूर्ण था, अथवा उन्होंने जो कुछ लिखा वह सत्य था या असत्य था कानून सम्मत था अथवा कानून के विरुद्ध था। जो स्थिति है इसमें इन बातों का एक फूटी कौड़ी के बराबर भी मूल्य नहीं है। हम राष्ट्रवादियों के लिए वास्तविक प्रश्न इससे बहुत भिन्न और असीम महत्व का है। वह यह है कि 'क्या भारत स्वतन्त्र है।' प्रश्न यह भी नहीं है कि क्या भारत स्वतन्त्र होगा? परन्तु प्रश्न यह है कि क्या भारत स्वतन्त्र है और क्या मैं एक भारतीय की हैसियत से स्वतन्त्र हूँ? और अपनी इच्छा से सेवा करने के लिए अपने को बंधा हुआ मानता हूँ अथवा अपने से बाहर कोई विदेशी शक्ति जो मेरे लिए विजातीय है जो 'अनात्मन' है वह स्वयं मैं नहीं हूँ—के विवेकतापूर्ण निर्देशन में मैं काम करने पर विवश हूं। क्या मैं और मेरे देशवासी मानव समाज के अंश हैं ब्रह्मा के चुने हुए और छांटे हुए मन्दिर हैं और इसलिए हमें मानव समाज में स्वतन्त्रतापूर्वक सिर ऊंचा किए हुए अपनी भावना और संस्कृति में पनपने का अधिकार है अथवा हम पशुओं का एक झुण्ड हैं जिन्हें उस प्रकार का जीवन स्वीकार करना है जो बाहर से हमारे लिए निर्धारित कर दिया गया है। क्या हम अपने स्वयं के भाग्यविधाता हैं? अथवा क्या हमारा कोई भविष्य नहीं है हम नगण्य हैं हम विनाश के लिए हैं। क्योंकि यह कहना व्यंग का मूर्खतापूर्ण प्रलाप है कि दूसरे लोग हमारे भाग्य का निर्माण और निर्देशन कर सकते हैं। यह हमारे भविष्य नष्ट कर देने का एक बेकार का बहाना है। यह केवल मूर्खतापूर्ण प्रलाप है कि दूसरे लोग हमें प्रकाश दिखलावेंगे सभ्य बनावेंगे और राजनीतिक प्रशिक्षण देंगे। क्योंकि जो बोध या ज्ञानदीप्ति स्वयं अर्जित नहीं किया जाता दूसरों के द्वारा दिया जाता है उससे मनुष्य को सही ज्ञान नहीं होता वरन भ्रम उत्पन्न होता है। जो सभ्यता ऊपर से लादी जाती है वह राष्ट्र को तेजवान नहीं बनाती वरन उस जाति को नष्ट कर देती है और वह प्रशिक्षण जो स्वयं अपने परिश्रम और अनुभव से प्राप्त नहीं किया जाता वह राष्ट्र को अकुशल और अयोग्य बना देता है। अतएव प्रश्न केवल एक है "स्वतन्त्रता" का। अन्य सभी प्रश्न भ्रम हैं माया है। और सब चर्चाएं उन लोगों की बातें हैं जो या तो सोते हैं अथवा बौद्धिक और नैतिक बंधनों में जकड़े हैं।

हम राष्ट्रवादियों का दावा है कि मनुष्य सदा और सर्वदा स्वतन्त्र है उसकी स्वतन्त्रता का अतिक्रमण नहीं हो सकता। और हम भी व्यक्तिगत भारतीय के रूप में और सामूहिक

रूप में भारतीय राष्ट्र के रूप में सदैव के लिए अनन्यक्राम्य रूप से स्वतन्त्र हैं। स्वतन्त्र मनुष्य की हैसियत से हम जो हमें उचित और सत्य प्रतीत होता है कहेंगे। हम इस बात की चिन्ता या परवाह नहीं करेंगे कि अन्य लोग हमारे स्वतन्त्र मनुष्य की भांति आचरण करने पर हमारे शरीर को दण्ड देंगे या और कुछ करेंगे। स्वतन्त्र मनुष्यों की भांति हम अपने निज के स्कूलों में अपने को शिक्षा देंगे, अपने झगड़ों को अपने पंचों से तय करवायेंगे अपनी स्वदेशी वस्तुओं का क्रय विक्रय करेंगे। हम अपने चरित्र सभ्यता और अपने भाग्य का स्वयं निर्माण करेंगे। तुम्हारा स्कूल तुम्हारा प्रशासन तुम्हारे न्यायालय, तुम्हारी निर्मित वस्तुएं तुम्हारी व्यवस्थापिका सभाएं तुम्हारे अध्यादेश, तुम्हारे राजद्रोह सम्बन्धी कानून हमारे लिए अवास्तविक और विदेशी और विजातीय है और हम उनसे माया अथवा अनात्मा की भांति दूर बचते हैं। यदि मनुष्य और राष्ट्र अनन्यक्राम्य रूप से स्वतन्त्र हैं तो दासता का बंधन एक भ्रम है एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र पर शासन करना प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध है अतएव वह असत्य है और अवास्तविक है। असत्य तभी तक ठहर सकता है जब तक कि सत्य अपने को नहीं पहचानता। बंगाल के शासकों ने पलासी के युद्ध के समय यह अनुभव नहीं किया कि हम स्वयं अपनी रक्षा कर सकते हैं। उन्होंने सोचा कि बाहर की कोई शक्ति उनकी रक्षा करेगी। क्लाइव ने हमें दास नहीं बनाया। हजारों क्लाइवों की भी इतनी शक्ति नहीं थी कि वह हमें दास बना सकते। हम अपने भ्रमों के कारण ही दास बने। झूठे विश्वासों के कारण—कि हम निबल हैं हम दास बन गए। जिस क्षण कि हम अपनी शक्ति का पूरा विश्वास हो जावेगा, यह विश्वास कि हम सदा स्वतन्त्र हैं हमारी स्वतन्त्रता अक्षुण्ण है, हमारे सिवाय कोई बाहरी शक्ति हमसे हमारे जन्मसिद्ध अधिकार और अमूल्य निधि को नहीं छीन सकता उसी क्षण से हमारी स्वतन्त्रता निर्विवाद निश्चित है। जब तक कि हम यह चिल्लाते रहेंगे कि हम अयोग्य हैं हम अयोग्य हैं" अथवा हम अपनी योग्यता पर सन्देह करते रहेंगे तब तक हम अयोग्य ही रहेंगे। स्वतन्त्रता में विश्वास ही मनुष्य को स्वतन्त्रता के योग्य बनाता है और सक्षम रखता है। वह विश्वास उत्पन्न करना, देशवासियों को उस विश्वास को कार्यान्वित करने के लिए उत्साहित करना ही इस नए आंदोलन का उद्देश्य है। राष्ट्रीयता अक्षुण्ण स्वतन्त्रता का संदेश है, बहिष्कार स्वतन्त्रता का व्यवहारिक आचरण है। बहिष्कार को समाप्त कर देना और राष्ट्रीयता के प्रचार को रोक देना ही नौकरशाही का एकमात्र ध्येय है। 'टाइम्स' ने इस तथ्य को प्रत्यक्ष कर दिया जब उसने वन्देमातरम और 'युगान्तर' के लेखों, विपिनचन्द्र पाल तथा उनके समान विचार रखने वालों के भाषणों तथा बहिष्कार आंदोलन को सब बुराइयों की जड़ बतलाया। इन राजद्रोह के अभियोगों में कानूनी बातों के पीछे वास्तव में यह एक मूल प्रश्न है। हम राष्ट्रवादी यह घोषणा करते हैं कि हम भारतीय सदैव कभी नष्ट न होने वाली स्वतन्त्रता के धनी स्वतन्त्र मनुष्य हैं और स्वतन्त्रता के इस संदेश को प्रचारित करने के अपने अधिकार को हम नहीं छोड़ेंगे। 'मारले' तथा अन्य राज्य अधिकारी हमसे कहते हैं कि तुम इंग्लैंड की सम्पत्ति हो और हमारे स्वतन्त्रता के संदेश को वे एक भीषण अपराध मानते हैं। इस मूलभूत विरोध का जिसका कभी समाधान नहीं हो सकता—कौन और कैसे समाधान करेगा।

वन्देमातरम्

२६ अगस्त, १९०७ को वन्देमातरम् के विरुद्ध अभियोग में पुनः न्यायालय के अधिकार की अवज्ञा करने का अवसर प्राप्त हुआ। वन्देमातरम् के विरुद्ध अभियोग में श्री विपिनचन्द्र पाल को अभियोजन के साक्षी के रूप मे न्यायालय में उपस्थित होने के लिए आज्ञा प्रचारित की गई। परन्तु उन्होने न्यायालय की कार्यवाही में भाग लेने से मना कर दिया। २६ अगस्त १९०७ को जब उनसे शपथ लेने के लिए कहा गया तो उन्होने साफ इनकार कर दिया और कहा "मुझे शपथ दिलाए जाने और इस कार्यवाही में भाग लेने के प्रति अन्तःकरण से आपत्ति है।" दण्डनायक इस उत्तर से झुंझला उठा और उसने पूछा।

"क्या तुम्हें सत्यनिष्ठा से अभिपुष्टि करने से आपत्ति है"

साक्षी — मैं कार्यवाही में भाग लेने से इनकार करता हूं क्योंकि मैं उसे

न्यायालय — मुझे उससे कोई सम्बन्ध नहीं है क्या तुम्हें और किसी और मुकदमे में सत्यनिष्ठा से अभिपुष्टि करने से इनकार है।

साक्षी — नहीं लेकिन मुझे इस मुकदमे में भाग लेने में अन्तःकरण से आपत्ति है।

न्यायालय — तब तुम्हें इस मुकदमे में सत्यनिष्ठा से अभिपुष्टि की शपथ लेनी चाहिए।

साक्षी — मैं ऐसा करने से इनकार करता हूं।

न्यायालय — तुम से प्रश्न पूछा जाएगा यदि तुम उत्तर देने से इनकार करोगे तब तुम्हें उसके परिणाम को भुगतना होगा।

साक्षी — अन्तःकरण के आधार पर मैं उत्तर देने से इनकार करता हूं।

श्री विपिनचन्द्र पाल पर एक पृथक अदालत की मान हानि का मुकदमा चलाया गया। उसकी तनिक भी परवाह न कर उन्होंने दण्डनायक के सामने १९ सितम्बर, १९०७ को एक बयान दिया जिसमें अपने इस कार्य के कारणों को बतलाते हुए उन्होंने कहा —

"इसमें कोई सन्देह नहीं कि समाज के प्रत्येक सदस्य का यह कर्तव्य है कि वह न्याय के प्रशासन को समाज के हित में साक्षी देकर सहायता पहुँचाए। परन्तु जबकि सरकार की नीति के परिणाम स्वरूप अभियोग चलाए जाते हैं जो कि न्यायालयों के क्षेत्राधिकार के बाहर हैं और समाज हित के विरुद्ध हो तो व्यक्ति का इसी आधार पर कर्तव्य भिन्न होगा। मैं ईमानदारी से यह विश्वास करता हूँ कि 'वन्देमातरम्' पर चलाए गए अभियोग तथा उसी प्रकार के अन्य अभियोग हानिकर और अन्यायपूर्ण हैं। अन्यायपूर्ण इसलिए कि वे साधारण जनता के अधिकारों को पददलित करने वाले हैं और हानिकर इसलिए कि उनका उद्देश्य विचार और भाषण स्वतन्त्रता को रोकना है और न जन जाति के हित में ही वे प्रयोजित हैं। इसलिए मुझे इस अभियोजन में भाग लेने के विरुद्ध अन्तःकरण से आपत्ति है। अतएव इस मुकदमे में सत्यनिष्ठा से अभिपुष्टि करने की शपथ लेने से मैं इनकार करता हूँ। न्यायालय की, जिसके सामने यह मुकदमा उपस्थित है अवज्ञा करने की मेरी कोई इच्छा

नही थी। मुझे उस समय अपना बयान देने की आज्ञा नही दी गई अतएव मैं अब अपना बयान देता हूँ।

श्री बिपिन चन्द्र पाल को दण्डित किया गया और उन्हें ६ महीने की साधारण कद की सजा दे दी गई। यह उल्लेखनीय है कि उन दिनो जबकि मुकदमे की सुनवाई हुई तो न्यायालय के कमरे के अन्दर और बाहर लोगो ने बहुत गडबड मचाई। यह गडबडी अदालत के समीपवर्ती स्थानो मे भी फल गई और पुलिस तथा युवकों में खुली मुठभेड हुई। तुरन्त ही उनम से कुछ के विरुद्ध अभियोजन प्रारम्भ कर दिया गया। उनमें से एक पन्द्रह वष के बालक को १२ कोडो की सजा दी गई।

उत्तेजित जनता मे इस फसले से अत्यन्त क्षोभ उत्पन्न हो गया। समस्त बगाल में जो उस समय असतोष की भयकर अग्नि जल रही थी यह फसला उसको और अधिक भडकाने वाला सिद्ध हुआ। उसके कारण सरकार के विरुद्ध आंदोलन और अधिक भडक उठा।

पजाबी' ने उस फैसले पर जो टिप्पणी लिखी वह नीचे लिखी थी वह २२ सितम्बर, १९०७ के वन्देमातरम् में उद्धृत हुई। 'वन्देमातरम्' समाचार पत्र के साथ किसी की सहानुभूति हो या न हो वह उसका प्रशसक हो या न हो इस परिणाम पर पहुँचे बिना नही रह सकता कि जो अभियोजन उसके विरुद्ध प्रारम्भ किया गया है ऐसे स्वस्थ सिद्धान्तो को प्रतिपादित करने के स्थान पर जो व्यवस्था और शाति स्थापित करने मे मदद दें एसी स्थिति उत्पन्न करन म सहायक सिद्ध होगा कि जो कानून के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करने के स्थान पर उसमे अश्रद्धा उत्पन्न करेगी। श्री बिपिनचन्द्र पाल को जो दण्ड दिया गया है। जो कि वन्देमातरम् के अभियोग की एक शाखा है—ने इस स्थिति को काफी हद तक उत्पन्न कर दिया है। श्री पाल के मुकदमे से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस नए आन्दोलन के प्रमुख समथकों में भी अव्यवस्था उत्पन्न करने अथवा कानून की अवहेलना या अवज्ञा की कोई भावना नही है। परन्तु उन मे से कुछ साधारण स्तर से बहुत ऊचे सिद्धान्त और उद्देश्यों से प्रभावित हैं। वह सिद्धात और उद्देश्य मानवीय सम्बधो के अधिक ऊचे और अभिजात सिद्धातो को स्वीकार करत है। योरोपियन सिविल प्रोसजिर कोड (व्यवहारिक प्रक्रिया सहिता) तथा क्रिमिनल प्रोसीजर कोड (दण्ड प्रक्रिया सहिता) उन ऊचे और अभिजात सिद्धातो तक नही पहुचते। उन सिद्धातो के समथक दूसरो को हानि पहुचाने के औजार बनने की अपेक्षा स्वय कष्ट और दण्ड स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। बाबू बिपिन चन्द्र पाल को किस अपराध के लिए दण्डित किया गया? अवश्य ही उन्हें किसी ऐसे काय के लिए दण्डित नही किया गया जिसे अनतिक, अशोभनीय या अपराधिक कहा जा सके। अपने साथियो और सहकर्मियो के प्रति कानून बनान वाले जिन आदर्शों की कल्पना कर सकत थे उससे ऊचे आदश और कतव्य भावना को स्वीकार करने की उन्होने कीमत चुकाई है। इसको न्यायालय का अपमान कहना भाषा का गलत उपयोग करना है क्योकि न्यायालय के प्रति अवज्ञा अथवा घृणा की उनके इस काय में कोई भावना काम नही कर रही थी। उन्होंने केवल प्रशासन की उस नीति को जिसे वे समाज के लिए हानिकर और अनुचित मानते हैं उसमें सम्मिलित होने में असमथता भर प्रकट की थी। वे अपने दृष्टिकोण में सही या गलत हो सकते हैं परन्तु उनका दोष बुरा है बुरा माना जाय तो वाविधिक मात्र है उसमें कोई नतिक

गिरावट नहीं है जिसके होने पर ही वह कार्य अपराध की श्रेणी में आ सकता है।

'पंजाबी' ने करोड़ों भारतीयों की भावना का ऊपर लिखी टिप्पणी में सही चित्रण किया जो उस मुकदमे के फैसले से बहुत उत्तेजित थे।

संध्या—स्वदेशी आंदोलन के प्रकाशवान वीरों में से ब्रह्म बांधव उपाध्याय ऐसे व्यक्ति थे जो अत्यन्त मेधावी थे और जिन से सब साधारण प्रेरणा लेता था। वह उन अत्यन्त निर्भीक व्यक्तियों में से थे जो बहुत से हताश व्यक्तियों के हृदयों में साहस उत्पन्न कर देते थे। अपने को नौकरशाही के आक्रमण के लिए वे निर्भय होकर खतरा मोल लेकर भी खुला छोड़ देते थे। देश में नई भावना और उत्साह उत्पन्न करने वालों में उनका प्रमुख स्थान था।

उनके अनेक हृदय तथा मस्तिष्क के गुणों के अतिरिक्त देश उन्हें संध्या के सम्पादक के रूप में अधिक पहचानता है। 'संध्या' उन बहुत थोड़े से पत्रों में प्रमुख था जो अग्नि वर्षा करते थे और जो सोते हुए राष्ट्र को प्रेरणा देकर कार्यरत होने के लिए उन्हें जागृत करते थे। १० मार्च, १९०७ को उसने अपना आदर्श वाक्य के रूप में लिखा "यदि स्वतन्त्रता के प्रयत्न में मृत्यु हुई तो वह मृत्यु अमरत्व प्रदान करेगी।" आगे १० मई १९०७ को लिखा "सुनो तुमको मां की रण दुंदुभि का नाद सुनाई देगा। मां के पुत्रों रुको नहीं, तैयारी करो गांव गांव जाओ और भारतीयों को मृत्यु के लिए तैयार करो।"

उन्हें अपने मन में तनिक भी संदेह नहीं था कि उनके लेखों के कारण वे सरकार के कोपभाजन बनेंगे। परन्तु उन्होंने इस भय से मातृभूमि को विदेशी दासता से स्वतन्त्र करने के अपने दृढ़ निश्चय को तनिक भी ढीला नहीं किया। अपने स्वयं के कष्ट और यातना उठाने के सम्बन्ध में वह कहते थे (२९ अक्तूबर, १९०७)

'अत्याचार और दमन उन लोगों के लिए कोई महत्व नहीं रखते जो शरीर का आत्मा से दाम्पत्य स्थापित करना पाप मानते हैं। उन लोगों का कौन दमन कर सकता है जिनकी मान्यता यह है कि भौतिक शरीर उसी प्रकार घृणास्पद और त्याज्य है जिस प्रकार फटे हुए पुराने कपड़े फेंक दिए जाते हैं। लोग यह सोचते हैं कि शरीर ही सब कुछ है वे दमन से डरते हैं। मुझे भयभीत होने की क्या आवश्यकता है क्योंकि मैं एक बंगाली ब्राह्मण हूं? यदि फिरंगी मुझे शारीरिक उत्पीड़न करेंगे तो मैं अपने शरीर को उनके सामने उसी प्रकार फेंक दूंगा जिस प्रकार सड़ा फटा पुराना धनधानिया स्लीपर फेंक दिया जाता है। (धनधानिया कलकत्ता में एक स्थान है जो स्लिपर बनाने के लिए प्रसिद्ध है)

व्यंगात्मक तथा विपक्षी पर कटु आक्रमक लेख लिखने में जिससे कि जिस पर वह आक्रमण कर रहे हैं महत्वहीन तथा छोटा और व्यंग के योग्य दिखे उनकी समता करने वाला कोई नहीं था। आवश्यकता पड़ने पर उनकी लेखनी से साहस का प्रज्ज्वलित लावा निकलता था जो भीरु और साहसहीन में भी साहस उत्पन्न करके उनकी निर्बलता को दूर कर देता था। उनके सम्पादकीय लेखों के शीर्षक पढ़ने वाले की कल्पना को तुरन्त आकर्षित करता था और जो अकाट्य तर्क वे अत्यन्त आकर्षक ढंग से और कभी कभी कवितामय भाषा में उपस्थित करते थे पाठकों को दिलाते थे।

'उनकी मृत्यु पर्यन्त उनको हृदयहीनतापूर्वक सताया गया जब पर

चलाए गए। उनके पत्र 'सध्या' के विरुद्ध राजद्रोहात्मक लेख लिखने के लिए बार बार मुकदमे चलाए गये परंतु उनकी कभी न झुकने वाली और आत्मा छोटे और व्यक्तिगत स्वार्थ के विचारों से बहुत ऊंची थी। उन्होंने कभी इनकी परवाह न की और मृत्यु पर्यन्त वे अपनी लेखनी के द्वारा देशवासियों को प्रेरित करते रहे।

उस सम्पादकीय लेखों की शृंखला जिनसे इस नोट का सम्बन्ध है जब प्रकाशित हो रही थी उस समय यह ज्ञात हुआ कि उस प्रेस की जहां 'सध्या' प्रकाशित होती है और सम्पादक की गिरफ्तारी के सम्बन्ध मे सरकार विचार कर रही है १० अगस्त को प्रेस की तलाशी हुई और ३ सितम्बर, १९०७ को सम्पादक को कैद कर थाना ले जाया गया और जमानत पर छोड दिया गया।

तुरन्त ही मुकदमा शुरू हो गया क्योंकि सब कुछ तयारी हो चुकी थी। ब्रह्म बांधव अदालत के कटघरे मे प्रतिदिन खडे होकर मुकदमे मे भाग लेते। उनके चेहरे पर हार्निया के कारण घण्टो तक खडे रहने के कारण होने वाली पीडा का तनिक भी चिह्न नहीं दिखलाई पडता था। उन्होने अपने वकील को उनके हार्निया होने के कारण बठने की आज्ञा मागने की इजाजत नही दी क्योंकि उनका दृढ निश्चय था कि वे उस विदेशी मजिस्ट्रेट से जिसकी अदालत मे उन पर अभियोग चलाया जा रहा है कोई अनुग्रह नही चाहेंगे। और उस मजिस्ट्रेट ऊंची शिक्षा प्राप्त तथा ऊंचे दर्जे के सास्कृतिक विद्वान को जो वृद्ध भी थे यह शिष्टता नही सूझी कि उनको बठने के लिए कहता।

मुकदमे के आरम्भ में ही सम्पादक ने २३ सितम्बर, १९०७ को नीचे लिखा पाडित्यपूर्ण वक्तव्य दिया।

'मैं सध्या समाचार पत्र के प्रकाशन प्रबन्ध और सचालन का पूर्ण उत्तरदायित्व स्वीकार करता हू और मैं यह कहना चाहता हूँ कि १३ अगस्त १९०७ के सध्या के अक म प्रकाशित 'ए खन येके गेची प्रेमर दाई' शीर्षक लेख का लेखक मैं ही हूँ। यह उन लेखो म स एक है जो कि उस अभियोजन का विषय है। किंतु मैं इस मुकदमे मे कोई भाग नही लेना चाहता क्योंकि मैं यह विश्वास नही करता कि ईश्वर द्वारा निर्धारित स्वराज्य के महान काय में अपना विनम्र भाग पूरा करने में मैं उन विदेशियो को हिसाब देने के लिए जिम्मेदार हूँ जो हम पर शासन कर रहे हैं और जिनका हित अनिवार्य और स्वाभाविक रूप स हमारे सच्चे राष्ट्रीय विकास के मार्ग में बाधक है।'

आक्षेप्य लेख 'अब मैं प्रेम म मगन हूँ' जैसा कि बताया गया १३ अगस्त को प्रकाशित हुआ। अभियोग चलाने वाले अधिकारियो ने १३ अगस्त के पहले और बाद को प्रकाशित लेखो म भी राजद्रोह खोज निकाला और जो अभियोग चल रहा था उसमे निर्णय सुना देने के बाद उन आपत्तिजनक लेखो के सम्बन्ध मे पुन अभियोग चलाने का उनका विचार था।

लेखों के शीर्षक ही उनम लिखित शक्तिशाली विचारों को प्रगट करने के लिए यथेष्ठ पर्याप्त थे। ८ अगस्त का लेख था 'युगान्तर के कार्यालय पर रुधिर बह रहा है फिरंगियो के मन भय से कांप रहे हैं' ९ अगस्त का लेख था 'पैसे को नशा' १२ अगस्त का लेख था "कालीघाट में बलि के लिए दो बकरे थे एक काला एक गोरा" २० अगस्त का लेख था 'अराजकता पनप रही है फिरंगी आश्चर्य चकित

हैं" २१ अगस्त का लेख था "फिरंगी बहुत दयालु हैं उसकी कृपा से दाढ़ी बढ़ती है और शकरकंद जाड़े में खाया जाता है" २३ अगस्त के लेख का शीर्षक था "युवकों का वृन्दावन [redacted] जाया जा रहा है।"

जब २३ अक्टूबर १९०७ को अभियोग की सुनवाई हुई तो न्यायालय को सूचित किया गया कि अभियुक्त कैम्पवेल हास्पिटल में बीमारी की दशा में भर्ती है। २६ अक्टूबर, १९०७ को डाक्टरी रिपोर्ट (सरजरी के प्रोफेसर की) न्यायालय के सामने उपस्थित की गई उसमें लिखा था 'मैं नहीं सोचता कि रोगी एक महीने से पहले न्यायालय में उपस्थित होने के योग्य हो सकेगा।"

सरकारी वकील जो कि एक यारोपियन था वह मजिस्ट्रेट से अधिक प्रतिघो धात्मक था। उसने अदालत से यह मांग की कि सर्जन को न्यायालय में उपस्थित होकर शपथ लेकर मजिस्ट्रेट के सामने अपनी सम्मति देने के लिए कहा जावे। सजन के सौभाग्यवश दण्डनायक मजिस्ट्रेट ने सरकारी वकील की मांग को अस्वीकार कर दिया।

अभियुक्त के साथ जो कुछ किया गया नौकरशाही उससे सतुष्ट नहीं थी। उसने अभियुक्त के विरुद्ध राजद्रोह या एक दूसरा अपराध आरोपित किया और यदि भगवान ही उनके मार्ग में बाधक न बन जाते तो सम्भवतः नौकरशाही उनके विरुद्ध अनेक अन्य आरोप लगाती। मजिस्ट्रेट ने पिछली जमानत रद्द कर यह आज्ञा दे दी जैसे ही वह अस्पताल से छोड़े जावें और ठीक हो जावें जेल में ले जाए जावें।

अस्पताल में उनकी दशा खराब हो गई रोगी का हार्निया (अन्त्रवृद्धि) का आपरेशन हुआ। आपरेशन ठीक हुआ और सब कुछ सन्तोषजनक था जबकि यकायक २६ अक्टूबर १९०७ का रोगी को टिटेनस के चिन्ह आठ बजे रात्रि को प्रगट हो गए। प्रातःकाल लगभग १२ घण्टे के उपरान्त आगत व्यक्तियों को बतलाया गया कि रोगी की दशा चिन्ताजनक है और वे धीरे धीरे शान्त हो रहे हैं। एक घण्टे बाद ९ बजे उनका स्वर्गवास हो गया।

रोगी ने डाक्टरों से अपनी अन्तिम इच्छा यह प्रगट की थी कि उन्हें क्लोरोफार्म देकर बेहोश न किया जावे। उनके विचार और आन्तरिक अभिलाषा उस समय जीवन के ऊंचे पक्ष का ध्यान कर रही थी। सम्भवतः वे होश की दशा में इस बात का अनुभव करना चाहते थे कि भगवान ने उनको कितना कष्ट देने का निश्चय किया है। सम्भवतः वे अपने राजनीतिक कार्य के गौरवशाली पक्ष का अन्त समय तक ध्यान करना चाहते थे। यह भी हो सकता है कि [redacted] अपने देशवासियों की दयनीय दशा और मातृभूमि की स्वतन्त्रता के विषय में विचार करना चाहते हो जिसके लिए उन्होंने अपने समस्त जीवन को समर्पित कर दिया था।

ब्रह्म बांधव को अपने में पूर्ण विश्वास था। उनके मन में यह दृढ़ विश्वास था कि फिरंगी ने उन्हें कैद करने के लिए जो जाल बिछाया है वह अपने उद्देश्य में पूरी तरह असफल होगा। अपनी मृत्यु से एक दिन पूर्व २६ अक्टूबर, १९०७ को उन्होंने कहा था —

' मैं फिरंगी की जेल में बैलों की तरह काम करने नहीं जाऊंगा। मैंने कभी किसी के संकेत या आज्ञा के अनुसार काम नहीं किया। मैंने किसी की आज्ञा नहीं मानी। मेरी वृद्धावस्था के अन्तिम दिनों में वे मुझे कानून के लिए जेल भेजेंगे और

में बिना वेतन के वहां काम करूंगा। असम्भव। मैं जेल नहीं जाऊंगा—मुझे प्रभु का निमन्त्रण मिल गया है प्रभु का आदेश मेरे पास पहुँच गया है।'

जबकि वे स्वयं उस महान बलिदान की तयारी कर रहे थे तब उन्होंने अपने देशवासियों के *नाम एक अपील निकाली। ६ अगस्त, १९०७ को कालीघाट में बहिष्कार* समारोह के सम्बध में आयोजित एक समारोह में ब्रह्म बांधव ने कहा था—'काली की वेदी पर फिरंगी के पाप और पुण्य दोनों का बलिदान कर देना चाहिए। फिरंगी का पाप निरन्तर दमन करते रहने में निहित है और उसका आरम्भ पलासी के युद्ध से हुआ जहां कि फिरंगी ने आम के बागों में छिपे रहकर धोखे से भारत की प्रभुसत्ता को भारतीयों से छीन लिया।'

उन्होंने बगाल के पिताओं से यह प्रार्थना की कि वे कम से कम अपने एक *बच्चे को मातृभूमि की सेवा के लिए अर्पित कर दें। उन्होंने यह इच्छा प्रगट की कि* भारतीय युवक फिरंगी द्वारा अपमान और मार को चुपचाप सहन करने के बजाय उसका तुरन्त उसी जगह बदला चुकाने का पाठ पढ़ें। कभी कभी झगड़ा करने और वीरता का रुख अपनाने से फिरंगी भय से कांपने लगेगा।

वे स्वयं अपने उन देशवासियों के प्रति बहुत कटु थे जो 'काले पता' (काले बकरे) देशभक्ति की भावना से रहित थे और सरकार द्वारा देशवासियों के मस्तिष्क में स्वतन्त्रता की भावना उमड़ रही है उसका दमन करने में सहायता पहुँचा रहे थे। अपने एक भाषण में उन्होंने ऐसे देशद्रोहियों के सम्बन्ध में कहा था—

"मैं उन काले फिरंगियों से वास्तविक फिरंगी जाति की अपेक्षा अधिक भय खाता हूं जो फिरंगियों के शिष्टाचार तथा रीति रिवाजों के भक्त हैं। हमारा देश, हमारा जन समुदाय हमारी सामाजिक प्रणाली जो सर्वोत्कृष्ट है फिरंगी विलासिता की ऊष्ण वायु से मानो झुलस गई है। देश और जाति को फिरंगियों के गन्दे शिष्टाचार तथा उनकी रीतियों के प्रवाह के कुप्रभाव से बचाने के लिए उसको रोकना होगा और लोगों को समझा कर यह विश्वास दिलाना होगा कि वे हमारे शारीरिक *स्वास्थ्य के लिए उपयोगी नहीं है अतएव हानिकर हैं।* जो हानिकर है उसे त्याग देना चाहिए। फिरंगियों के रहन सहन तथा शिष्टाचार के प्रति आश्चर्यजनक श्रद्धा और प्रेम के कारण वे देश में प्रचलित हो गए हैं। इस फिरंगी रहन सहन के प्रति प्रेम को समाप्त करने के लिए हमें उसके प्रति घृणा उत्पन्न करनी चाहिए।

इन असाधारण परिस्थितियों में उनकी मृत्यु होने से बुद्धिवादी लोगों में निराशा उत्पन्न होने के स्थान पर यह विचार दृढ़ हो गया कि इच्छा मृत्यु के द्वारा वह देशभक्तियोगी देशवासियों की कल्पना को जागृत करेगा और अपनी मृत्यु के *द्वारा वह जितना देश का काम जीवित रह कर सकते उससे अधिक प्रभावशाली ढंग* से करेंगे।

अन्य लोगों ने इस शोकपूर्ण घटना में कल्याणकारी भगवान का वरद हस्त देखा ब्रह्म बांधव की मृत्यु से लोगों के हृदय में स्वतन्त्रता की आशा का संचार हुआ। उनकी मृत्यु की सूचना मिलने पर वन्देमातरम् ने २७ अक्टूबर १९०७ को लिखा—

"यदि संशय और सदेहात्मक मनोवृत्ति से छुटकारा पाने के लिए किसी वस्तु *की आवश्यकता थी—जो उस महान अजेय राष्ट्रभक्त का उत्पादित गौरवपूर्ण अन्त* को

जीवन और मृत्यु में कभी पराजित नहीं हुआ उसने यह तक उपस्थित कर दिया कि स्वतन्त्रता अ तत विजयश्री प्राप्त करती है।

उन महान व्यक्तित्व के प्रति अधिक सुन्दर शब्दों में श्रद्धा और सम्मान प्रदर्शित करते हुए 'बन्देमातरम्' ३ नवम्बर, १९०७ ने इस प्रकार लिखा —

"भारत के राष्ट्रीय आदोलन की प्रगति के साथ जो अत्यन्त नाटकीय और चमत्कारिक घटनाएं घटी हैं उनमें सध्या' के वीर और यशस्वी सम्पादक ब्रह्म बाधव का सत्ताईस अक्टूबर के प्रात काल कम्पबल हास्पीटल मे निधन प्रत्येक भारतीय की कल्पना को एक विशेष प्रकार से शक्तिशाली ढग से प्रभावित करता है। उनका व्यक्तित्व ऐसा महान था कि पिछले दिनों उनके नाम की चर्चा बगाल के प्रत्येक घर में—नौकरशाही के एक सेवक के समक्ष उन पर राजद्रोह का आरोप लगाए जाने पर उन्होने जो प्रेरणादायक और प्रभावशाली वक्तव्य दिया—उसके कारण होती थी। उन्होने मजिस्ट्रेट के मुह पर कहा कि ईश्वर द्वारा निर्धारित मिशन स्वराज्य' का प्रचार करने के लिए एक विजातीय और विदेशी नौकरशाही के प्रति उनका कोई उत्तरदायित्व नही है। बहुतो को उनका वक्तव्य शेख चिल्लियों जैसा लगा होगा। परन्तु जिन लोगों के पास विश्वास और आशा के नेत्र हैं उनको देश के सुन्दर भविष्य के स्वप्न दर्शन होते हैं। विश्वास और निष्ठा वाले असाधारण बातें कहते हैं, वह आश्चर्यजनक सत्य कहते हैं क्योंकि वे भविष्यवक्ता होते हैं। वे मगलमय भगवान की इच्छा को जानते क्योंकि वे उस प्रभु के औजार के रूप मे काम करते हैं। स्वाधीनता के सदेशवाहकों में निरकुश शासकों की अवना करने की शक्ति होती है—उनके लिए समझौते की भाषा अपरिचित होती है वे समझौता करना नही जानते। वे पराजय से भी अवगत नही होते। वे सभी जो निरकुशता के सहायक और अधीनस्थ रहकर काम करते हैं, जसे उनके पीछे चलने वाले चाटुकार पुरोहित कर वसूल करने वाले, सैनिक वकील, भूस्वामी जेलर और चाटुकार सभी अपनी लोहे की श्रखलाओ से मानवता के उद्धारकर्ता देवदूत को जकड देने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन वह उनकी पकड से निकल जाता है और ऐसे राज्य और प्रदेश में पहुंच जाता है जहा राजाओं की पहुच ही नहीं हो सकती। ब्रह्म बाधव उपाध्याय का ऐसे समय स्वर्गवासी होना जबकि नौकरशाही अत्यन्त अशोभनीय प्रतिशोधात्मक भावना से उनके पीछे पडी थी इस बात का सशय रहित प्रमाण है कि जबकि अनास्थावान यह समझता है कि वह जेल फासी के तख्ते हथकडी और बेडियो द्वारा अभियुक्त पर विजय प्राप्त कर लेता तब विश्वास उसकी असहायता के लिए उसके साथ व्यग करता है उसको मूर्ख बनाता है और उसके शिकार को उससे बहुत दूर ले जाता है।

राष्ट्रीय आदोलन को उसके एक महान और शक्तिशाली नेता के निधन से गहरा धक्का लगा है।

उत्तापन बिंदु (१९०६-१९०८)

पूर्वाभास—यह बतला देना आवश्यक है कि अनुशीलन समिति जिसे १९०२ में सतीशचन्द्र बास ने स्थापित किया थी पी दत्त की अध्यक्षता में अपने ढग से विकास कर रही थी। यतीन बनर्जी उसी समय इस उद्देश्य से कलकत्ता गए कि वहा जाकर देखें कि युवको को बन्दूक आदि शस्त्र चलाने के लिए आकर्षित करने की क्या सम्भावनाएं हैं। १९०४ मे बारीन्द्र कुमार घोष इस उद्देश्य से बडोदा आए कि

राजनीतिक सन्यासी की भांति स्वाधीनता के लिए प्रचार काय करें। उस समय बग भग आंदोलन बल पकड रहा था और जब वह कलकत्ते आए तो शासकों के विरुद्ध गहरे असंतोष को फलाने के लिए अत्यन्त अनुकूल वातावरण था। गुप्त समितियो के नेताओं का यह मानना था कि इतने महान उद्देश्य के लिए केवल राजनीतिक प्रचार काय ही पर्याप्त नहीं है। इसके साथ देश के युवकों के मानसिक धरातल की पृष्ठभूमि भी आध्यात्मिक होनी चाहिए जिससे कि खतरे के समय भी मजबूत रह सकें। वह समय इस काय के लिए बहुत अनुकूल था और धीरे धीरे मध्यम श्रेणी के भद्र लोक के युवक धीरे किन्तु दृढ़ता के साथ ऐसे केन्द्रों की ओर आकर्षित हुए कि ज। मानव जीवन के लिए सबसे अधिक खतरा विद्यमान था। उनमे से कुछ उच्च शिक्षा प्राप्त थे और जिन्हें जीवन के विभिन्न क्षेत्रो का विस्तृत ज्ञान था। समिति के लिए यह विशेष सुविधा और लाभ की बात थी कि उनमे से कुछ को तीव्र विस्फोटक वस्तुओ को तयार करने का गम्भीर और गहरा ज्ञान था। स्टन फोड की पुस्तक 'निट्रो एक्सप्लोसिव', ऐलफ्रेड हटन की 'सोडसमेन ईसलर की ए हैंडबुक आफ माडन ऐक्सप्लासिव्ज' जे एस ब्लोच की 'माडन वैपन्स एड माडन वार' 'फील्ड ऐक्सपर साईज' मनुयल आफ मिलिटरी इन्जीनियरिंग' 'इन्फैंटरी ट्रेनिंग' 'कलरो ड्रिल' मशीनगन ट्रेनिंग', फाल्कार' इत्यादि पुस्तकों को गुप्त रूप से प्राप्त किया जाता था और उनका पूरा उपयोग किया जाता था (रिपोर्ट आफ दी सैडीशन कमेटी १९१८ पृष्ठ १०२)

तैयारी

१९०६ में देश तैयारी की स्थिति को पारस्परिक काय करने की स्थिति मे आ गया। गुप्त समितियां विभिन्न नामो जसे आत्मोन्नति समिति आदि के रूप मे बगाल में यहां वहां सवत्र स्थापित हो गई। विशेषकर पूव बगाल के नए प्रान्त में बहुत अधिक गुप्त समितियां स्थापित हुई। गुप्त समितियों के सगठन को सुदृढ बनाने के लिए केवल योजनाए ही नहीं बनाई गई वरन उनको काय रूप में परिणित करने का भी प्रयत्न किया गया।

हिंसात्मक कार्यवाही करने के लिए अस्त्र शस्त्रों की अन्य सभी वस्तुओं से सबसे अधिक आवश्यकता थी। अस्त्र शस्त्र प्राप्त करने के साधनों की ओर 'युगान्तर' ने इंगित कर ही दिया था। अस्त्र शस्त्रों को सनिकों, असावधान अस्त्र शस्त्र के स्वामियों से, तथा चोरी से लाने वालों से प्राप्त किया जा सकता था। परन्तु इस तरीके से अस्त्र शस्त्र प्राप्त करने से पर्याप्त मात्रा में अस्त्र शस्त्र प्राप्त कर सकना सम्भव नहीं था। अस्त्र शस्त्र प्राप्त करने का यह तरीका नितान्त अपर्याप्त समझा गया। अतएव गुप्त समितियों कायकर्त्ता फ्रेंच उपनिवेश कलकत्ते के समीप स्थित चन्दन नगर जाते जहां कि बदूक और पिस्तौल रखने के लिए बहुत उदाहरण और ढीले नियम थे। चन्दननगर में केवल एक प्रतिबन्ध था कि उसको (बन्दूक या पिस्तौल को) सड़क पर चलते समय रखने वाला दिखलाए नहीं चन्दन नगर से डाक द्वारा उनका आयात किया जा सकता था। क्रान्तिकारी चन्दन नगर से फ्रांस को बन्दूक और पिस्तौलों के लिए आडर देते और फ्रांस से हथियार मगा लेते। १९०६ में केवल दो बदूकें और ६ रिवाल्वर आए परन्तु १९०७ में फ्रांस से ३४ रजिस्टर्ड पासल आए और उनमें अधिक सख्या मे रिवाल्वर आए। वे सभी हथियार फ्रांस की राजकीय आर्म्स फक्ट्री जो सेंट इटैनी में थी वहां से आए थे।

शपथ—यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि इन समितियों के सगठन में गोपनीयता सबसे अधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता थी। क्योंकि वे समितियां ऐसे काय करने वाली थीं कि जिसके परिणामस्वरूप कानून और प्रशासन के शस्त्रागार में जो कडा से कडा दण्ड था वह दिया जा सकता था। अतएव समिति के सदस्य भर्ती करते समय प्रत्येक सदस्य से प्रतिज्ञा ली जाती थी। प्रत्येक समिति मे आरम्भ से ही प्रतिज्ञा लेने की प्रथा थी। सदस्यो को शपथ दिलाने की प्रथा के कारण यह समितियां रूस की क्रांतिकारी समितियों के बहुत नजदीक थी। इन समितियो को स्थापित करने और उनका सचालन करने वालो की प्रशसा करनी होगी कि सदस्यों को जो गोपनीयता की शपथ दिलाई जाती थी उसके परिणामस्वरूप गोपनीयता उनने विस्तृत और दूर दूर तक फले हुए सगठन में बहुत लम्बे समय तक रक्खी जा सकी। आश्चय की बात यह थी सरकार की नाक के नीचे ही यह गुप्त समितिया काय करती रही और सरकार को उनका पता तक न लग सका।

जसे जसे यह गुप्त समितिया बढती और विकसित होती गई इस बात की आवश्यकता प्रतीत हुई कि उन पर कडी देखभाल रक्खी जावे और उनका निरीक्षण किया जावे। समितियो के सगठन कर्ताओं ने सम्पूर्ण बगाल को अचलो और उप अचलों में विभाजित किया। सबसे ऊपर एक केन्द्रीय समिति थी और क्रमश सबसे नीचे मुहल्ला समिति सगठित की गई। सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक था केन्द्रों के सचालक उपयुक्त और योग्य व्यक्ति ही जिनम काय करने की लगन हो जिससे कि सारा काम ठीक और सुचारू रूप से चल सके।

कायकर्ता के स्तर और स्थिति के अनुसार विभिन्न प्रकार की प्रतिज्ञाए थीं जो कायकर्ता को लेनी पडती थी। प्रारम्भिक और अन्तिम प्रतिज्ञाए सभी साधारण सदस्यों को लेनी पडती थी। प्रारम्भिक प्रतिज्ञा सदस्य को भर्ती होते समय लेनी पडती थी और अन्तिम प्रतिज्ञा नए सदस्यो को उस समय लेनी पडती थी जबकि वह एक स्तर तक अनुभव और शिक्षा प्राप्त कर लेता था और दल के प्रति उसकी गहरी आसक्ति हो जाती थी। दो विशेष प्रतिज्ञाए केवल आन्तरिक कोश के सदस्यो को लेनी पडतीं थीं और उनमें भी श्रेणिया थी।

प्रारम्भिक प्रतिज्ञा कडी नहीं थी। सदस्य को इस बात की शपथ लेनी पडती थी कि सदस्य समिति से कभी भी पृथक नही होगा। वह समिति के हितो के प्रति निष्ठावान रहेगा अपने स्वय के चरित्र को ऊचा और शुद्ध रक्खेगा और जो समिति के सचालक हैं उनकी आज्ञा को बिना कोई प्रश्न पूछे शिरोधाय करेगा जिमनास्टिक तथा ड्रिल में पारगत होगा, जो समिति के सदस्य नही हैं उनसे समिति की सारी बातें गुप्त रखेगा आत्मरक्षा की कला में दक्ष और पारगत बनेगा और देश के कल्याण के लिए अथवा ससार के कल्याण के लिए काम करेगा।

अन्तिम शपथ का आरम्भ इस घोषणा से होता था कि समिति से सबधित कोई भी भीतरी बात किसी को भी नही बताई जावेगी और न आवश्यक रूप से उसकी चर्चा की जावेगी। जो सदस्य अन्तिम शपथ ले लेता था उसको परिचालक अथवा समिति के अध्यक्ष की आज्ञा को बिना प्रश्न किए शिरोधाय करना पडता था। वह चाहे जहां हो उसके अपने सम्बन्ध में वह कहां है क्या कर रहा है इसकी सूचना परिचालक को देना आवश्यक था। अध्यक्ष को समिति के विरुद्ध यदि कोई षडयन्त्र

हो तो उसकी सूचना देना आवश्यक था। अध्यक्ष की आज्ञा के अनुसार उस षडयन्त्र का उपचार करना तथा उसकी आज्ञा पाने ही उसको अपनी डयूटी पर वापस लौटना पड़ता था। वह किसी भी कार्य को नीचा या अपमानजनक नहीं समझेगा उसे आत्म त्याग तथा अपत्याग की भावना उत्पन्न करनी पड़ेगी और उन सभी व्यक्तियों से जो कि प्रतिज्ञाबद्ध नहीं हो उनसे जो आज्ञा उसको मिली है गुप्त रखना पड़ती थी।

प्रथम विशेष शपथ के अन्तर्गत सदस्य इस बात की प्रतिज्ञा करता था कि वह दल का तब तक सदस्य रहेगा जब तक उसका उद्देश्य पूरा नहीं हो जाता उसको अपने माता पिता सम्बन्धियों घर द्वार के मोह का त्यागना होगा और सब प्रकार की बुरी आदतों को छोड़ना होगा।

दूसरी विशेष शपथ में सदस्य को यह प्रतिज्ञा लेनी होती थी कि दल के कार्य को पूरा करने में वह अपने जीवन और उसके पास जो कुछ है उसकी बाजी लगा देगा। अन्दर के भेदों को गुप्त रखेगा उनकी कभी चर्चा नहीं करेगा और न उनके बारे में कभी बहस करेगा जो कुछ उसको आज्ञा दी जावेगी उसे बिना कुछ पूछे शिरोधार्य करेगा। उसको मन्त्रों की गोपनीयता को सुरक्षित रखना होगा। अपने नेता से कोई बात नहीं छिपायेगा नेता को असत्य बोलकर कभी धोखा नहीं देगा। द्रव्य फिर चाहे जिस स्रोत से आये समिति का सामूहिक धन समझा जावेगा। सदस्यों की सब कमजोरियां तथा समिति की कमियां नेता के ध्यान में लानी होंगी और उनको दूर करने का प्रयत्न करना होगा विभिन्न इकाइयों और दल की टुकड़ियों के नेताओं कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का भी विस्तार से वर्णन किया जाता था। विशेषकर समिति का विकास करने शारीरिक व्यायाम, धन एकत्रित करने और अन्य कार्यों पर बहुत बल दिया जाता था।

विस्फोट —इससे पहले कि क्रांतिकारी कार्यवाहियों का कोई बाह्य चिह्न प्रकट हो क्रांतिकारी समितियों का दृढ़ संगठन हो चुका था और उन्होंने अपने कार्य क्षेत्र का दूर दूर तक विस्तार कर लिया था।

सर्व प्रथम जब मिर्जापुर काण्ड (८ अप्रैल, १९०८) के परिणामस्वरूप अलीपुर बम केस आरम्भ हुआ तो क्रांतिकारी दृढ़ निश्चयी युवकों का सुदृढ़ संगठन हो चुका है उसका पूरा चित्र प्रकाश में आया।

इसी बीच अध्यवसाय युवकों द्वारा फुटकर और बिखरी हुई जहां तहां क्रांतिकारी कार्यवाहियां की जाने लगी। अब यह निश्चयपूर्वक ज्ञात हुआ है कि अगस्त सितम्बर १९०६ में तथा मई १९०७ में बंगाल में छिपी हुई कार्यवाहियों की योजनाएं बनाई गई परन्तु फिर उनको छोड़ दिया गया।

अक्टूबर नवम्बर १९०७ में लफ्टीनेंट गवर्नर की ट्रेन को उड़ा देने कि दो षड़यन्त्र किए गए परन्तु वे सफल नहीं हुए। ६ दिसम्बर १९०७ को मिदनापुर जिले में नारायन गंज नामक स्थान पर प्रथम महत्वपूर्ण प्रयत्न लैफ्टीनेंट गवर्नर की ट्रेन को उड़ाने का हुआ। यद्यपि उद्देश्य पूरा नहीं हुआ परन्तु जैसा भयंकर विस्फोट हुआ उससे यह सिद्ध हो गया कि बम बनाने की कला में यथेष्ट सफलता प्राप्त करली गई थी। क्योंकि उस विस्फोट के परिणामस्वरूप ५ फुट चौड़ा और पांच फुट गहरा सुराख हो गया।

यद्यपि इस समय कोई बहुत महत्वपूर्ण घटनाएं नहीं घटीं परन्तु २३ दिसम्बर,

१६०७ को फरीदपुर में एक भूतपूर्व मजिस्ट्रेट पर उसकी पीठ पर गोली मारी गई और उसे यह ज्ञात हो गया कि स्वदेशी आंदोलन किस सीमा तक बढ़ गया है।

इसके उपरान्त ११ अप्रेल, १६०८ को चदरनगर के मेयर पर बम फेंका गया जबकि वह भोजन कर रहा था। बात यह थी कि उसके पूर्व अधिकारियों के विपरीत वह इस बात का प्रयत्न कर रहा था कि अस्त्र शस्त्रों का विदेशों से उस फ्रैंच उपनिवेश के द्वारा आयात रोका जाय।

प्रारम्भ में असफलताओं से युवक क्रांतिकारी निराश नहीं हुए। उन्होंने अधिक साहसी और बड़ी योजनाएं हाथ में लीं। जिस आदर्श वाक्य ने उन्हें सफलताओं से हताश न होने का पाठ पढ़ाया वह नीचे लिखा था।

'कभी कभी असफलता सफलता से भी अधिक गौरवमयी होती है। विरोधी भाग्य की अवज्ञा निश्चित मृत्यु के तरीके को चुन कर करना चाहिए। अपने भौतिक जीवन के निधन साधन तथा समृद्धि को गौरव के साथ समाप्त करके भाग्य को अपनी श्रीहीन विजय के लिए लज्जित करो।"

एक घटना जिसने बीसवीं शताब्दी के क्रांतिकारी कार्य की प्रथम आहुति ली और जिसमें प्रफुल्ल चक्रवर्ती का अमूल्य जीवन देश के लिए अर्पित हुआ विशेष उल्लेखनीय है।

तीसरा अध्याय

एक निश्चयात्मक पग (१९०८-१९१३)

एक साहसिक प्रयोग (१९०८)—अनेक प्रयोग करने के उपरान्त उल्लस्कर फार्मूले के द्वारा एक पूर्ण बम का निर्माण किया जा सकता था। वह समय आ गया था कि जब उस बम की विनाशक शक्ति के प्रभाव का परीक्षण किया जाय। फरवरी १९०८ को देवगढ में दिघिरिया पहाड़ी पर जो अधिक ऊंची नहीं थी इस परीक्षण के लिए चुना गया। पहाड़ी की तलहटी में घने घने वन में से रास्ता बना कर चोटी पर एक उपयुक्त स्थान चुना गया। वहां पत्थर की एक बहुत बडी चट्टान थी। ढाल की ओर वह आदमी की ठोडी तक ऊंची थी और पृथ्वी से लम्ब के समान सीधी उठी हुई थी। दूसरी ओर १५ या २० गज का ढाल था जो पहाड़ी की तलहटी तक चला गया था।

सुरक्षा के लिए एक सुरक्षित स्थान पर सबों ने स्थान ग्रहण कर लिया। प्रफुल्लचन्द्र चक्रवर्ती को उस चट्टान के पीछे खडे होकर पहाड़ी की ढाल पर बम फेंकने का कार्य सुपुर्द किया गया था। उसको आदेश दिया गया था कि बम जसे ही हाथ से छूटे उसे तुरन्त बैठ जाना चाहिए। परन्तु प्रतीक्षा करने की सतर्कता की सबने अवहेलना की। दुर्भाग्यवश पृथ्वी में छूने के पहले ही उसके अन्दर जो अत्यन्त विस्फोटक पदार्थ थे वे हवा लगने से प्रज्ज्वलित हो उठे एक चिनगारी निकली और थोड़ा सा धुआं निकला और हवा में ही बम फट गया। एक भयानक धड़ाका हुआ उस धड़ाके की तेज आवाज पहाडी की एक चोटी से दूसरी चोटी तक प्रतिध्वनित हुई, एक साथ सभी साथी अपने अपने अपने स्थानों से प्रसन्नता से चिल्ला उठे—'महान सफलता।

स्पष्ट था कि बम निर्धारित समय के पहले ही फट गया, प्रफुल्लचन्द्र अपने को उस बडी पत्थर की चट्टान के पीछे नहीं छिपा सका। बम की एक फलिका उसके सर पर आकर लगी। उसके मस्तक का एक भाग और एक आंख चकनाचूर हो गई और उस गहरे घाव में से मस्तिष्क का एक भाग बाहर निकल आया। एक क्षण पूर्व जो प्रफुल्ल जो तरुणाई से भरा हुआ उत्साह और शौर्य की मूर्ति दिखलाई देता था और जिसमें देशभक्ति की भावना उद्वेलित हो रही थी, सम्पाशून्य हो पड़ा हुआ था। उसका जीवन दीप बुझ गया उसके प्राण पखेरू उड गए।

प्रफुल्ल के सहयोगी मित्रों के लिए यह एक समस्या उठ खडी हुई उसके शव का क्या किया जाय। दिघिरिया की पहाडी की चट्टानों में उसको कब्र खोदकर गाडना असम्भव था। उनके पास न तो खोदने के लिए कोई औजार थे फिर पृथ्वी कड़ी चट्टानों वाली थी अतएव कब्र खोद सकना असम्भव था। शवदाह भी असम्भव था क्योंकि वहां उतनी सूखी लकड़ी मिलना सम्भव नहीं था और यह भय था कि स्थानीय लोगों का दाह क्रिया करने से ध्यान आकर्षित होने के कारण सन्देह उत्पन्न हो सकता है। अतएव यह निर्णय करना पडा कि शव को वहीं छोड दिया जावे

जिससे जगली पशु उसका भक्षण करलें।

शव बिना किसी देखभाल के वहीं छोड दिया गया। दूसरे दिन जब प्रफुल्ल के मित्र उस स्थान पर गए तो उन्होंने प्रफुल्ल के शव को ज्यों का त्यों पड़ा हुआ पाया। उसमें कोई दुर्गन्धी या विकृत उत्पन्न नहीं हुई थी शव ज्यों का त्यों था। दूसरे दिन देवघर से कलकत्ता जाने के पूर्व जब प्रफुल्ल के मित्र प्रफुल्ल के अन्तिम दर्शन करने गए तो वहाँ शव नहीं था। मित्रों ने बहुत कुछ खोज की परन्तु उसके वस्त्रों का एक धागा भी खोजने से नहीं मिला। यह वास्तव मे आश्चर्य और अटकलें लगाने का प्रश्न है कि जब प्रफुल्ल का जीवन समाप्त हो गया तो यह कहा और कैसे गायब हो गया।

बेंतो से पीटा जाने वाला वीर (१९०७ १५)

'वदेमातरम्', 'युगान्तर', 'सन्ध्या', कलकत्ता मे तथा देश के अन्य राष्ट्रीय पत्र विशेषकर पजाब के पत्र देश के तरुणों का आह्वान कर रहे थे कि भय को छोड दो। राष्ट्रीय पत्रों के इस आह्वान का शीघ्र ही अपेक्षित परिणाम आया। देशवासियों और विदेशियों के झगडो की कहानियां तभी से सुनाई देने लगी जिनमें सफेद चमडी वाले गोरे को अपमानित किया जाता था। इस प्रकार के सघर्षों की कहानियाँ सुनकर साधारण जन भी जो देश की स्वतन्त्रता के युद्ध में विशेष रुचि नहीं रखते थे, प्रसन्नता से विभोर हो उठते थे।

'वन्देमातरम' के विरुद्ध अभियोग में पत्र के सम्पादक श्री अरविन्द के विरुद्ध जब श्री विपिनचन्द्र पाल ने साक्षी देने से इनकार कर दिया था तो जनता में अनिर्वचनीय उत्साह की लहर दौड गई थी। लाल बाजार की सार्वजनिक अदालत मे युवक भारी सख्या मे इकट्ठे होते और 'वन्देमातरम्' के गगनभेदी नारे लगाते। श्री विपिनचन्द्र पाल ने सम्पादक के विरुद्ध साक्षी देने से इनकार करके जो न्यायालय की अवहेलना की उसके समर्थन में, वे प्रदर्शन करते। २६ अगस्त १९०७ को किंग्सफोर्ड के समक्ष मुकदमे की सुनवाई हो रही थी। और दिनों की तरह उस दिन भी अदालत के कम्पाउण्ड में भीड़ मौजूद थी। मजिस्ट्रेट ने शोर मचाने वाले युवकों की भीड़ को अदालत से निकाल बाहर करने और उन्हें उचित आचरण करने की शिक्षा देने की आज्ञा दे दी। इसका परिणाम यह हुआ कि बहुत बडी सख्या में लोहे का टोप पहने हुए तथा लाल साफे वाले पुलिस कांस्टेबिल भीड़ पर लाठी लेकर टूट पड़े और उन्होंने खुलकर लाठियों की भीड़ पर वर्षा की।

अधाधुन्ध लाठी वर्षा से उधर से निकलने वालों में भगदड़ पड़ गई। बहुतों के चोटें आई और कई तो बुरी तरह से घायल हो गए। एक तरुण ने साहस करके पुलिस सार्जेंट की मार का जवाब प्रहार से दिया। दोनो में जमकर लड़ाई हुई। इस घटना का राष्ट्रीय समाचार पत्रों ने अत्यन्त गौरव और प्रसन्नता से प्रचार किया। ३१ अगस्त, १९०७ के अक में 'सन्ध्या' ने इस घटना के सम्बन्ध मे इस प्रकार लिखा—जिस किसी ने भी लाल बाजार मे सुशील के वीरतापूर्ण और साहसिक कार्य को देखा वे आश्चर्यचकित रह गए। सुशील ने जब देखा कि एक लाल मुह वाला दरोगा बिना किसी कारण के लोगों को मार रहा है तो वह भी उस मारपीट के बीच में घुस पड़ा और उसको भी मार पड़ी। सुशील केवल १५ वर्ष का बालक था जबकि वह लाल मुह वाला पुलिस कर्मचारी विशालकाय और भारी व्यक्ति था।

सुशील का उत्साह और साहस देखने योग्य था। लाल मुह वाले कर्मचारी की उसने अच्छी तरह से मरम्मत कर दी। फिरगी लोगो के लम्बे चौडे डील डौल से किसी को भी डरना नही चाहिए उनके अदर सारा भूसा भरा है। सुशील ने उसको निकाल बाहर कर बतला दिया और उनके बाहरी दिखावटी डील डौल के आतक को नष्ट कर दिया।"

सारजेंट की शिकायत पर सुशील के विरुद्ध मुख्य प्रेसीडसी मजिस्ट्रेट किंग्स फोर्ड की अदालत मे मारपीट का फौजदारी मुकदमा चलाया गया। २७ अगस्त, १६०७ को मुकदमा शुरू हुआ। पुलिस सारजट ने मारपीट की शिकायत की कहानी सुनाई। अभियुक्त सुशील ने उत्तर दिया 'मैं दोषी हू या नही इसके सम्बन्ध म मैं कुछ नही जानता। मैं सियालदा से आ रहा था। लाल बाजार से कुछ दूरी पर मैंने भीड देखी। मैं उस जगह आया और यह जानने का प्रयत्न किया कि क्या कारण है। उसी समय यह सारजट आया और जो भी उसके सामने पड़ा उसे पीटने लगा। मैंने भी उसके प्रहार का उत्तर प्रहार से दिया। इस पर वह मुझे बार बार मारने लगा और उसकी इस हरकत को रोकने के लिए मैंने भी उस पर प्रहार किया। उस समय कुछ अन्य पुलिस अधिकारी आ गए और उन्होने मुझे पकड कर गिरा दिया।"

मुकदमा करने वाले मजिस्ट्रेट अभियुक्त के विरुद्ध आरम्भ से ही धारणा बनाए थे। उस समय तक अभियुक्त के विरुद्ध कोई साक्षी भी उपस्थित नही हुई थी उसके नीचे लिखे शब्द इस बात का प्रमाण हैं कि वह पहले से ही अभियुक्त के विरुद्ध था। युवकों में यह धारणा बल पकड़ गई है कि वे बगाली पुलिस का प्रतिरोध कर सकते हैं।" बचाव पक्ष के वकील ने उत्तर दिया कि पुलिस का विश्वास है कि वह बगालियों के साथ जैसा चाहे व्यवहार कर सकती है कल ही अदालत में पुलिस ने बहुतो को मारा था।

किंग्सफोर्ड—क्यो नही ? जैसा कि अन्य देशो म होता है उन्हें लाठी से पीटना चाहिए।

उसने उस बालक को पन्द्रह कोड़े मारने की आज्ञा दे दी जिससे कि वह भविष्य में अनुशासनहीनता न करे।

बगाल और उसके बाहर इस अमानवीय दण्ड के विरुद्ध घोर क्षोभ छा गया। तरुण बगाल ने किंग्सफोर्ड को न्याय (सजा) देने का निश्चय कर लिया। अग्रेजी पत्र 'दी नेशन' ने लिखा—'एक शिक्षित व्यक्ति को राजनीतिक अपराध के लिए कोड़े मारना एक नए प्रकार की दुष्कृति है। रूस में भी राजनीतिक अपराधियों को कोड़े मारने के उदाहरण बहुत कम मिलते हैं। आस्ट्रिया के शासन म इटली में बहुधा यह दड दिया जाता था और यह एक प्रमुख कारण था कि १८४८ म अनुदार अग्रेजों को भी उससे सहानुभूति हट गई।" फिर भी १६०७ में उदार लार्ड मारले ने उसी किंग्सफोर्ड को अपनी नौकरी मे पदोन्नति की स्वीकृति प्रदान की।

'वन्देमातरम्' ने ११ नवम्बर १६०७ को सुशील की इस कारण प्रशसा की कि जब जेल में उसे कोड़े मारे गए तो उसने आश्चर्यजनक कष्ट सहिष्णुता प्रदर्शित की। वह तनिक भी विचलित नहीं हुआ, न हिला क्योंकि उसने सोचा कि यदि मैं नौकरशाही सेवकों के सामने तनिक भी कमजोरी दिखलाता हू तो यह राष्ट्रीय गौरव के लिए अपमानजनक होगा। पत्र ने इस बात पर हर्ष प्रगट किया कि तरुण देशभक्तों की दुखी

लम्बी होती जा रही है और उनमें से प्रत्येक ऐसा अभूतपूर्व नैतिक साहस प्रदर्शित करता है कि उसको समस्त देश की प्रशंसा प्राप्त होती है और नौकरशाही के हृदय में भय का संचार होता है। आगे उसमें लिखा "हमारी पंक्तियों में जो रिक्त स्थान हैं उन्हें भरदो, जो पंक्ति विचलित हो रही है उसे दृढ़ करदो, सुदृढ़ होकर कूच करते हुए आगे बढ़ो, उस निर्जन भूमि की सीमा को पार कर मंगलमय भगवान के निवास की ओर बढ़ो।

सुशील की शिक्षण संस्था नेशनल कालेज उसके सम्मान में एक दिन के लिए बंद कर दिया गया। २८ अगस्त १९०७ को कालेज स्क्वेयर में एक महती साधारण सभा में कलकत्ते के जन समुदाय ने उसे उस साहसिक और वीरतापूर्ण परीक्षा में सफल होने के लिए बधाई दी। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने उस सभा के सभापति को एक स्वर्णपदक उस वीर युवक को भेंट करने के लिए भेजा। जब सभा समाप्त हो गई तो सुशील को एक खुली घोड़ा गाड़ी में जलूस बनाकर सारे कलकत्ते में घुमाया गया। समस्त कलकत्ता नगर उसके वीरोचित कार्य से विमुग्ध हो उठा। उसकी शोभा यात्रा के साथ युवक नीचे लिखा प्रसिद्ध गीत गाते जाते थे।

'जय जाबे जीवन चोले,
जगत मांझे तुमार काजे वन्देमातरम् बोले,
बेत मेरे कि मा भोलाबी अमरा की मार सेई छले।'

अर्थात् मां तुम्हारा कार्य करने और वन्देमातरम् उच्चारण करने से जीवन जाता हो तो जाने दो, क्या तुम कोड़े मार कर हम माता को भुला देने पर विवश करना चाहते हो? ऐसा मत समझना कि हम मां के ऐसे कायर पुत्र हैं।"

नौ महीने के उपरान्त पांच मई १९०८ को सिलहट में अपने गांव बनिया चांग में सुशील को गिरफ्तार कर लिया गया और उस पर अरविन्द बारीन्द्र जैसे भारतीय राष्ट्रवाद के दिग्गजों के साथ मुकदमा चलाया गया। जूरी ने उसे निर्दोष घोषित किया परन्तु जज ने जूरी से असहमति प्रगट करते हुए उसे सात वर्ष की कड़ी सजा दे दी। उच्च न्यायालय में अपील की गई। उच्च न्यायालय में दो जजों में मतभेद हो गया। अतएव सुशील और तीन दूसरे अभियुक्तों का मुकदमा एक तीसरे न्यायाधीश को सौंप दिया गया। १८ फरवरी, १९१० को सुशील को सब अपराधों से मुक्त कर दिया गया।

१९१५ में सुशील कुमार एक दूसरे ही आश्चर्यजनक वीरतापूर्ण रूप में प्रगट हुए। २८ अप्रैल, १९१५ को कुछ थोड़े से युवक नदिया जिले के प्रागपुर नामक स्थान पर दो नावों में आए वे ऐसा लगता था कि बहुत दूर से आ रहे थे उस क्षेत्र में ३० अप्रैल और २ मई को दो भयंकर डाके पड़े थे जिनमें उन युवकों का स्पष्ट रूप से हाथ था। वे उनमें सम्मिलित थे। जब गांव वालों ने उनका पीछा किया तो वे नदी पार कर खलीलपुर की ओर बढ़े। खलीलपुर में वे नावों से उतर कर एक पशु शाला में खाना बना रहे थे। एक आदमी ने उन्हें देखा, नाम पूछने पर उन्होंने नाम नहीं बतलाया उसे संदेह हो गया और उसने पुलिस को सूचित कर दिया। पुलिस दल शीघ्रतापूर्वक उस स्थान पर पहुँचा और वे युवक नावों में चढ़कर भागने का प्रयत्न कर रहे थे कि पुलिस ने गोली वर्षा की। दूसरी ओर से भी गोलियों का उत्तर गोली से मिला। इन भागने वालों और पुलिस में गोलियों का आदान प्रदान, दोनों

रहा। भागने वालों में एक का पैर फिसल गया और उसके हाथ की बन्दूक चल गई और गोली उसके एक साथी के लग गई। घायल साथी को तुरन्त नाव में उठा लिया गया। अब वे युवक तेजी से नाव चलाकर निकल भागने का प्रयत्न कर रहे थे। लेकिन नदी के दोनों किनारों पर गांव वाले तेजी से दौड़ते हुए उनका पीछा कर रहे थे पुलिस न नावें मंगवा ली थीं और उनका पीछा कर रही थी। भागने वाले युवकों के लिए यह जीवन मरण का प्रश्न था। आकाश में घने बादल घिर आए और भयानक तूफान आ गया रात्रि का अंधकार और भी गहरा हो गया।

साथी की गोली लग जाने से जिस युवक के छिन्न दर गोली लग गई थी वह वीर सुशील कुमार सेन था। उस समय तक उसकी जीवनलीला समाप्त नहीं हुई वह अंतिम सासें ले रहा था। उसने अपने साथी मित्रों से कहा कि मेरी मृत्यु हो जाने के उपरांत मेरा सिर धड़ से काट कर अलग कर देना। तदुपरांत उसको फेंक देना जिससे कि एक शव का बोझा कम हो जावे। इसके अतिरिक्त उस दशा में यदि धड़ मिल भी गया तो पुलिस के लिए उसको पहचान सकना कठिन होगा और सरकार सफलतापूर्वक आसियों पर मुकदमा चला सके इसकी सम्भावना बहुत कम रह जावेगी।

बेंतों से पीटे जाने वाले वीर सुशीलकुमार के परामर्श का अक्षरस पालन किया गया। ६ मई, १६१५ को ललीलपुर (फ़िरतापुर धूर) में एक पुलिस मन ने एक ग्रास नदी के किनारे गड़ा देखा और नाव का एक हिस्सा पानी के ऊपर उभरा हुआ दिखलाई पड़ा। उस स्थान की भली भांति खोज की गई और एक खाली कारतूस मिला। इस पर पुलिस ने उस स्थान पर छिछले पानी में जाल डलवाया तो कुछ कपड़ों के टुकड़े तो मिले किन्तु शव नहीं मिला।

सुशीलकुमार बालपन से मातृभूमि की सेवा के पावन यज्ञ में दीक्षित हो चुका था। उसने ही किंग्स फोर्ड के बंगले पर जाकर उस पुस्तक बम को दिया था जो किंग्स फोर्ड को मारने के लिए भेजा गया था जिससे कि पुस्तक के खोलते ही धड़ाके के साथ बम फटता और किंग्सफोर्ड की मृत्यु हो जाती। जिन युवकों ने मानिकतल्ला और कानवालिस स्ट्रीट के चौराहे पर इन्सपेक्टर सुरेश मुकर्जी को मार दिया था सुशील कुमार उस युवक समूह का प्रमुख था।

सुशील कुमार असाधारण प्रतिभा सम्पन्न कुशाग्र बुद्धि और नैतिक गुणों का धनी युवक था। अपने जीवन के अन्तिम दिन तक वह मातृभूमि की सेवा में अनिर्वचनीय उत्साह और निष्ठा से लगा रहा जबकि ३ मई, १६१५ को निष्ठुर मृत्यु ने उसकी शुभ्र आत्मा को चिर शांति प्रदान नहीं कर दी। आज हम भारतीय यह भूल गए हैं कि भारत की स्वतन्त्रता का भवन वीर सुशील कुमार जैसे वीरों के बलिदानों पर खड़ा हुआ है।

रहस्यमय परिस्थिति (१६०८)—पुलिस द्वारा बंगाल की जनता पर भयंकर दमन अत्याचार की पराकाष्ठा को पार कर जाने वाला दमन तथा जनता के क्षोभ और विरोध प्रगट करने के सभी साधनों को कड़ाई से दबाने के परिणामस्वरूप आंदोलन को विवश होकर भूमिगत हो जाना पड़ा। वे गुप्त राजनीतिक संगठन जो स्थापित हो गए थे किंतु सुप्त अवस्था में थे उन्होंने निश्चय किया कि बल प्रयोग का उत्तर बल से दिया जायेगा फिर चाहे उसके जो भी परिणाम क्यों न हों। जो सरकारी अधिकारी

निर्दयी और कठोर थे उनकी हत्या करना (जिसका पूना में २२ जून १८९७ का उदाहरण मौजूद था) बंगाल के क्रांतिकारी आंदोलन का प्रथम लक्ष्य बन गया।

इस बात के स्पष्ट संकेत उपस्थित हो गए थे कि भारतीय राष्ट्रवाद एक नई और रहस्यमयी अवस्था में प्रवेश कर रहा है जिसके महत्व और प्रभाव के सम्बन्ध में कुछ अनुमान लगा सकना कठिन था। वास्तव में (४ मई, १९०८ के 'स्टेटसमैन' के अनुसार) यह लार्ड कर्जन के शासन की भयंकर भूल बंगभंग से प्रारम्भ हुई। 'स्टेट्समैन' के अनुसार 'एक नई भावना और चेतना उत्पन्न हो गई जिसके अस्त्र बम और डायनमाइट थे। इस भावना को कलकत्ता के चीफ प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट किंग्स फोर्ड के फैसलों ने और अधिक प्रज्ज्वलित कर दिया उसके फैसलों ने अग्नि में ईंधन का काम किया और समस्त बंगाल क्षोभ से सिहर उठा। अगस्त १९०४ से मार्च १९०८ तक किंग्स फोर्ड ने उन सबों को निर्दयतापूर्वक कठोर दण्ड दिए जिन्होंने अपने कार्यों तथा लेखन से तनिक भी देशभक्ति का परिचय दिया। सरकार किंग्सफोर्ड की सुरक्षा के सम्बन्ध में अत्यन्त चिंतित हो उठी थी, अतएव २८ मार्च १९०८ को कलकत्ते से उसका स्थानान्तर मुजफ्फरपुर के जिला सेशन जज के पद पर कर दिया गया।

क्रांतिकारी नेताओं ने यह निश्चय कर लिया था कि किंग्स फोर्ड की अवश्य हत्या करनी है। उसको मरना ही चाहिए। अतएव वह चाहे जहां जाये उसका पीछा करना था। इस कार्य के लिए दो तरुणों को चुना गया और किंग्स फोर्ड की हत्या करने के लिए उन्हें आवश्यक अस्त्र शस्त्र देकर मुजफ्फरपुर भेजा गया।

निर्धारित कार्य को पूरा करने के लिए दिनेश चन्द्र राय और खुदीराम बोस अप्रैल १९०८ के तीसरे सप्ताह में मुजफ्फरपुर पहुंचे और वहां की धर्मशाला में एक कमरे में ठहर गए, उनके पास जो भी रुपये थे समाप्त हो गए। पैसों की कमी पड़ गई तो उन्होंने एक स्थानीय सज्जन से कुछ रुपये उधार लिए। वे सज्जन स्थानीय जमींदार के एक प्रभावशाली कर्मचारी थे और उन्हीं की सहायता और सिफारिश से उन्हें धर्मशाला में ठहरने को स्थान मिला था। उनके पास कलकत्ते से उन्हीं सज्जन के द्वारा मनीआर्डर आया जिन्हें बाद को उन युवकों को सहायता पहुंचाने के लिए पकड़ा गया और न्यायालय में उपस्थित होना पड़ा।

दोनों वीर युवक एक सप्ताह तक अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा करते रहे। किंग्सफोर्ड अदालत के सिवाय और कहीं नहीं जाता था वह अवकाश के समय अपने बंगले पर ही रहता था। वे एक बार अदालत भी गए परन्तु उन्होंने कोई आक्रमण नहीं किया क्योंकि यदि अदालत में किंग्सफोर्ड पर बम फेंका जाता तो बहुत संख्या में निर्दोष लोगों के प्राणों को खतरा हो सकता था।

३० अप्रैल १९०८ को दोनों मित्र आठ बजे रात्रि को किंग्सफोर्ड के बंगले के सामने पहुंचे और अपने शिकार की प्रतीक्षा करने लगे।

जबकि दिनेश और खुदीराम छिपे हुए किंग्सफोर्ड की प्रतीक्षा कर रहे थे तो मिस्टर और मिसेज किंग्सफोर्ड और श्रीमती और कुमारी कनेडी क्लब में साढ़े आठ बजे ब्रिज खेल रही थीं। साढ़े आठ बजे वे लोग दो पृथक खुली बग्घियों में जो बहुत कुछ एक समान थीं और दोनों में एक एक घोड़ा जुता था घर की ओर चल दिए। किंग्सफोर्ड का बंगला क्लब के बहुत समीप था किन्तु कनेडी का एक मील दूर था।

जिस बग्घी में श्रीमती और कुमारी कनेडी जा रही थीं वह उनके मित्र

किंग्सफोर्ड की बग्घी ■ ठीक आगे चल रही थी। जैसे ही कि पहली बग्घी किंग्सफोर्ड के कम्पाउण्ड की पहली फाटक के पास आई दिनेश और खुदीराम एक बड़े ऊंचे पेड़ की आड़ से झपट कर निकल आए यह पेड़ बगले और मैदान के बीच जो आम चौड़ा रास्ता था उस पर खड़ा हुआ था।

उस समय उन दोनों के पास तीन रिवाल्वर और एक बम था। योजना यह थी कि यदि बम उद्देश्यपूर्ति में विफल हो जावे तो काय को पूरा करने के लिए रिवाल्वरों का उपयोग करना था।

जब वह मनोवैज्ञानिक क्षण आया तो खुदीराम जानबूझ कर निश्चयपूर्वक बग्घी की ओर दौड़ा उसके फैले हुए हाथ में बम था जो सर के ऊपर उठा हुआ था उसने उस बम को अपनी पूरी ताकत से उस बग्घी पर फेंका जिसमें उसका अनुमान था कि किंग्सफर्ड जा रहे थे।

बम के भयानक विस्फोट से समस्त नगर चौंक उठा। श्रीमती कैनेडी, कुमारी कनेडी और साईस बुरी तरह घायल हो गए। समस्त बग्घी चकनाचूर हो गई। पीछे के हिस्से का कुछ भी शेष नहीं बचा केवल लकड़ी के छोटे छोटे टुकड़े जो विस्फोट के कारण जल गए थे छितर गए। विस्फोट के कुछ मिनटों में ही कुमारी कनेडी की मृत्यु हो गई और श्रीमती कनेडी थोड़ी देर बाद मर गई।

किंग्सफोर्ड का सौभाग्य था कि वह निश्चित मृत्यु से बच गया। यहां यह कह देना उचित होगा कि किंग्सफोर्ड को कलकत्ते में उसके गार्डन कोर्ट हाउस में पुस्तक के अन्दर एक नए प्रकार का बम रख कर उसको मारने का प्रयत्न किया गया था। वह पिकरिक एसिड का एक पतला टिन था जो बारह सौ पृष्ठ वाली एक मोटी पुस्तक में ६०० पृष्ठों को निकाल कर उनके स्थान पर एसिड से भरे उस टिन को ठीक तरह से बिठाया गया था। उसमें इस प्रकार स्प्रिंग लगाए गए थे कि उस पुस्तक को जिस पतली डोरी से बांधा गया था उसको काटते ही उसका कवर एक साथ खुल जाता और पारे से भरे हुए बम के अग्र भाग जिसके फटते ही बम का विस्फोट होता—पर एक तेज कील का आघात होता।

वह पुस्तक बम किंग्स फोर्ड को भेजा गया और चपरासियों ने उसको साहब की टेबिल पर रख दिया। किंग्सफोर्ड ने उस पुस्तक बम को यह सोचकर कि कोई मित्र जो पुस्तक को मांग कर पढ़ने ले गया था लौटा गया है उसको अपनी अन्य पुस्तकों में रख दिया। मुकदमे के सिलसिले में उस पुस्तक को ढूंढा गया तो ज्ञात हुआ कि स्प्रिंग में जंग लग गया था परन्तु विस्फोटक पदार्थ ज्यों का त्यों सुरक्षित था।

दोनों आक्रमणकारी तुरन्त उस स्थान से भाग गए अपने जूतों को वे वहीं छोड़ गए जिससे पता चलता था कि वे नंगे पर भागे थे। जूतों के कारण उनकी गिरफ्तारी बहुत आसान हो गई। मैदान में फुटबाल के गोल पोस्ट के पास एक पीपा भी मिला। उस पीपे में बम को रख कर वे उस स्थान तक लाए थे। काफी दूर तक दौड़ने के उपरान्त वे एक दूसरे से अलग हो गए। एक समस्तिपुर की ओर गया और दूसरा दूसरी ओर भागा।

पुलिस ने तुरन्त ही दोनों अपराधियों को पकड़ने के लिए सभी स्थानों को सूचना भेज दी। जिला पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ने दो थानेदारों को रेलवे लाइन के साथ साथ जाने को कहा। एक को बांकीपुर भेजा और दूसरे को मोकामह की ओर भेजा।

उन्हें यह प्रमाना दी गई कि वे प्रत्येक स्टेशन पर कान्स्टेबिल नियुक्त करते जावें और जो भी संशयात्मक और संदेहास्पद व्यक्ति हो उसको तुरन्त गिरफ्तार करलें। जो लोग दोनों युवकों की खोज में भेजे गए उनमें से दो व्यक्ति ट्रेन के द्वारा वायनी स्टेशन पर भेजे गए।

दिनेशचन्द्र राय—घटना स्थल से भाग कर दिनेशचन्द्र राय एक मई, १९०८ को समस्तीपुर पहुंचे जो कि बी एण्ड एन डब्लू आर का एक स्टेशन था। वहां से उन्होंने मुकामेह घाट के लिए एक इन्टर क्लास का टिकिट लिया। इसी बीच में उन्होंने अपने कपड़े बदल लिए थे वे उस समय नए कपड़े और नए जूते पहने हुए थे। एक सब इन्स्पेक्टर नन्दलाल बनर्जी का उनकी ओर ध्यान आकर्षित हुआ जो अपनी छुट्टी समाप्त कर सिंहभूमि में अपनी ड्यूटी पर ट्रेन द्वारा जा रहा था।

दिनेशचन्द्र की सूरत शक्ल से सब इन्स्पेक्टर को संदेह हुआ। उसको यह संदेह हो गया कि उसका मुजफ्फरपुर पिछले सायंकाल जो हत्याकांड हुआ है उससे अवश्य कुछ सम्बन्ध है। अतएव वह उसी कम्पार्टमेंट में बैठा जिसमें कि दिनेश बैठा था और उससे विभिन्न विषयों पर वार्तालाप करना आरम्भ कर दिया।

दिनेश सुमेरगढ़ पर उतर पड़ा और अपनी प्यास बुझाने के लिए गंगाजी गया। वहां से वह वापस लौट आया किन्तु उस सब इन्स्पेक्टर की बहुत अधिक पूछ ताछ से परेशान हो जाने के कारण वह दूसरे कम्पार्टमेंट में बैठ गया। मोकामेहघाट पर उतर कर उसने हावड़ा का एक दूसरा इन्टर क्लास का टिकिट लिया।

पुलिस अधिकारी ने उससे वहां क्षमा प्रार्थना की और पुनः उससे मित्रतापूर्ण बातचीत करने लगा। इसी बीच उसने मुजफ्फरपुर को तार से अपने संदेह की बात उच्च अधिकारियों को सूचित करदी थी। मोकामेहघाट पर उसे तार द्वारा आदेश मिला कि वह उस संदेहास्पद युवक को गिरफ्तार कर ले। इस संदेश के आधार पर दिनेश को गिरफ्तार कर लिया गया। परन्तु दिनेश के शरीर में अपूर्व बल था उसका शरीर शक्तिशाली था उसने झटका दिया और अपने को छुड़ाकर भागा। उसको पकड़ने के लिए दो कान्स्टेबिलों ने उसका पीछा किया जिन्हें उसकी निगरानी के लिए पहले से ही नियुक्त कर दिया गया था। प्लेटफार्म के अन्त में जब दिनेश ने देखा कि निकल भागना असम्भव है तब वह घूमा और उसने उस कान्स्टेबिल पर गोली चलाई जो उसके बहुत पास आ गया था। गोली का निशाना चूक गया और कान्स्टेबिल ने दिनेश को पकड़ लिया।

किसी प्रकार बहुत प्रयत्न करके दिनेश ने अपने हाथ को छुड़ा लिया और स्वयं अपने ऊपर उसने दो गोलियां चलाई। एक गोली ठोडी के नीचे घुस गई और दूसरी उसकी बाई हंसुली की हड्डी में से निकल गई। दिनेश की तत्काल मृत्यु हो गई।

१ मई १९०८ को ६ बजे सायंकाल के समय मातृभूमि की बलिवेदी पर दूसरे शहीद ने (प्रथम शहीद प्रफुल्ल चक्रवर्ती था) अपना जीवन बलिदान कर दिया। 'हितकारी' ने अपने १५ जून १९०८ के अंक में इस घटना पर नीचे लिखी टिप्पणी की —

"उसकी आत्मा उड़ कर ऊंचे न्यायालय में पहुंच गई जहां राजा और रंक क्रान्तिकारी और उनके शासक एक स्तर पर खड़े होते हैं और जहां न्याय करने में उनके पद या मर्यादा के कारण कोई भेदभाव नहीं किया जाता।"

दिनेश के सर को उसके धड़ से काट कर अलग कर दिया गया और उसको

दाराम में सुरक्षित रखने के लिए रखकर पहचान के लिए कलकत्ता लाया गया। कुछ दिनों बाद यह संदेह से परे निश्चित हो गया कि दिनेश चन्द्र राय और कोई नहीं रंगपुर के प्रफुल्ल कुमार चाकी थे।

प्रफुल्ल एक अत्यंत होनहार और प्रतिभावान बालक था जबकि वह क्रांतिकारी दल का सदस्य बना था। उसमें अपूर्व शारीरिक शक्ति थी और उसका शरीर लोह सदृश्य बलवान था। इस दृष्टि से रंगपुर की राष्ट्रीय संस्था में वह सब श्रेष्ठ बालक था। बारिन्द्र कुमार घोष जब एक गुप्त कार्य से उस जिले में गए तो वे प्रफुल्ल के हृदय और मस्तिष्क के गुणों और अपूर्व साहस से बहुत अधिक प्रभावित हुए और उन्होंने उसको उस प्रथम भयानक और साहसिक कार्य के लिए चुना कि जो प्रत्यक्ष निर्दयी और दमनकारी शासक के हृदय में आतंक और भय का संचार कर देने वाला था। यह देश का दुर्भाग्य था कि उसका प्रयत्न व्यर्थ गया और उसका ऐसा भयानक और विनाशकारी अन्त हुआ। (परिशिष्ट 'अ' देखिए)

खुदीराम बोस— खुदीराम घटना स्थल से रेलवे लाइन की ओर तेजी से बढ़ा। उसका लक्ष्य था कि वह समीपवर्ती रेलवे स्टेशन पहुँच जाय और वहा से कलकत्ता चला जावे। वह मुजफ्फरपुर से २४ मील दूर वनी' नामक बी एन डब्लू रेलवे के स्टेशन पहुंचा। वह नंगे पैर था और बिना भोजन किए और पानी पिए इतनी लम्बी दूरी तक पैदल चलने के कारण बहुत थक गया था।

वनी स्टेशन से कुछ ही गज दूरी पर प्रातःकाल आठ बजे उसे बाजार में घूमते और एक दुकान के पास मुट्ठी भर भुने हुए चावल चबाते हुए देखा गया। जबकि वह पानी पीने जा रहा था उसको पुलिस ने पकड़ लिया।

पुलिस अधिकारी ने उससे बहुत पूछताछ की। उसने गोलमाल जवाब दिए और कहा कि वह बाकीपुर जा रहा है। जब उससे पूछा गया कि उस दिशा में उसे मुजफ्फरपुर उतरना चाहिए था न कि वियानी पर तो उसने यही कहा कि उसे बहुत प्यास लगी हुई थी अतएव प्यास बुझाने के लिए वह वियानी उतर पड़ा। जबकि उससे पूछताछ हो रही थी तो उसने हाथ छुड़ा कर भाग जाने का प्रयत्न किया परन्तु उसको मजबूती से पकड़ लिया गया और हाथ बांध दिए गए। उसने अपने कोट से रिवाल्वर निकालने का प्रयत्न किया जो कि उसकी बगल में दबा हुआ था परन्तु उसके उस प्रयत्न को भी विफल कर दिया गया। जब खुदीराम गिरफ्तार हुआ तो उसके पास दो रिवाल्वर, जिसमें से एक गोली से पूरा भरा हुआ था, तीस रुपये के नोट और सिक्के ३७ राउंड गोलियां इंडियन रेलवे का एक नक्शा तथा स्थानीय टाइम टेबिल की एक नकल मिली।

उस संदेहास्पद युवक को वापस मुजफ्फरपुर सायंकाल की गाड़ी से लाया गया, स्टेशन पर मनुष्यों की अपार भीड़ इकट्ठा हो गई थी जो उसे देखने के लिए आतुर थी। जब वह ट्रेन से उतरा तो उसके मुख पर तनिक भी उत्तेजना या भय के चिह्न नहीं थे। वह शान्त और सुव्यवस्थित था और प्रसन्न मुद्रा में था। परन्तु उसके चेहरे पर वीरता का दम्भ तनिक भी नहीं था। जबकि वह पुलिस स्टेशन जाने के लिए गाड़ी में बैठा उसने 'वन्देमातरम' का घोष किया उसकी आंखों में दृढ़ता की झलक के अतिरिक्त कोई ऐसी बात नहीं थी। कोई स्वप्न में भी यह नहीं सोच सकता था कि दुबला पतला अट्ठारह वय के लगभग का यह बालक एक ऐसे कांड का

विधायक हो सकता है कि जिसके घोष की प्रतिध्वनि पुनः पुनः प्रतिध्वनित होकर आकाश तक पहुंच गई थी।

जिला मजिस्ट्रेट के सामने अपने बयान में उसने कहा कि मेरी इच्छा किंग्सफोर्ड की हत्या करने की थी क्योंकि मेरा मानना था कि वह भारत में सबसे अधिक अत्याचारी अधिकारी है। मैंने ही गाडी पर ३० अप्रैल को बम फेंका था मेरा विश्वास था कि उस गाडी में किंग्सफोर्ड जा रहा है न कि दो निर्दोष और भाग्यहीन महिलाएं।

मुजफ्फरपुर बम कांड का मुकदमा २१ मई, १९०८ को आरम्भ हुआ। मुकदमे के प्रति कैदी की घोर उपेक्षा विशेष उल्लेखनीय थी। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो उसको यह भान ही नहीं था कि उसका क्या अन्त होने वाला था। जब मुकदमा हो रहा था कैदी पत्थर की भांति अविचलित था और मुकदमे के समय कुछ समय तक लोगों ने उसे सोते देखा। मुकदमे के काल में उसका वजन दो पौंड बढ गया और उसने कभी भी कोई भावना या उत्तेजना प्रदर्शित नहीं की।

२५ मई को अभियुक्त को सेशन सुपुर्द किया गया और आठ जून को मुकदमा शुरू हुआ। कैदी ने अपराध स्वीकार कर लिया। १३ जून को मुकदमा समाप्त हो गया उसको मृत्यु दण्ड दिया गया। जब न्यायाधीश ने कैदी से पूछा कि जो दण्ड उसको दिया गया है उसके परिणाम को वह समझ रहा है तो उसने स्वीकारोक्ति स्वरूप सिर हिलाया और मुस्करा उठा। उसके मुखमण्डल पर एक प्रकाश फैल गया ऐसा लगता था कि जैसे उसे उस दण्ड से कुछ भी करना धरना नहीं है।

११ जून को उसने अपने वकील से अनौपचारिक बातचीत की और उस बातचीत में उसने बतलाया—'मैं मिदनापुर का निवासी हूं। मेरे माता पिता, भाई या चाचा और कोई नहीं है। मेरी एक बहिन है जो मुझसे बडी है जिसके कई बच्चे हैं सबसे बडा मेरी उम्र का है।

× × ×

मैंने दूसरी कक्षा तक पढा है। दो या तीन वर्ष हुए मैंने अपनी पढाई छोड दी। तब से मैं स्वदेशी आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने लगा। मैं एक बार मिदनापुर तथा अपनी बहिन और उसके बच्चों को देखना चाहता हूं। मेरे मस्तिष्क में कोई परेशानी नहीं है। मेरे साथ जेल में साधारणतया अच्छा व्यवहार होता है। भोजन अवश्य ही खराब मिलता है। मेरे लिए वह नितान्त अनुपयुक्त है इसी कारण मेरे स्वास्थ्य पर उसका बुरा प्रभाव पडा है। अन्यथा मेरे साथ बुरा व्यवहार नहीं किया जाता। मुझे एकान्त कोठरी में दिन रात रखा जाता है। मुझे केवल एक बार उस कोठरी से निकलने दिया जाता है जबकि मैं स्नान करने जाता हूं। मैं अकेले रहते रहते थक गया हूं। वकील के एक प्रश्न के उत्तर में खुदीराम ने कहा कि उसे डरने का कोई कारण नहीं है। उसने गीता का भली भांति अध्ययन किया है। मेरे दोष स्वीकार न करने का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि मैं इस मामले में अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह अनुभव करता हूं और मुझे इस बात का दुख है कि किंग्सफोर्ड अब भी जीवित है और उसके बजाय दो निर्दोष महिलाएं मारी गईं।

खुदीराम के असीम धैर्य और दृढता को जज पसंद नहीं कर सका उसने अपने फैसले में कहा—'दण्ड को कम करने के लिए मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता मुझे कैदी के मानसिक कष्ट और अनिश्चितता को अधिक बढाना नहीं चाहिए यदि वह

वास्तव में मानसिक कष्ट अनुभव करता है, यद्यपि मैं यह आशा भी नहीं करता कि वह कष्ट अनुभव करने की क्षमता रखता है। परन्तु यदि वह ऐसा अनुभव करता हो तो एक शब्द भी अधिक बोलकर मैं उसको बढ़ाना नहीं चाहता।"

६ जुलाई, १९०८ को उच्च न्यायालय को अपील की गई। संक्षिप्त सुनवाई के बाद १३ जुलाई, १९०८ को मृत्यु दण्ड की पुष्टि उच्च न्यायालय ने भी करदी। और मुजफ्फरपुर जेल में खुदीराम बोस को ठीक ६ बजे प्रातःकाल फांसी दे दी गई। वह दृढ़ता और प्रसन्नतापूर्वक फांसी के तख्ते तक चल कर गया और जब उसको टोपी उढ़ाई गई तो वह मुस्कराया।

हृदयहीन सरकार ने मृत्यु दण्ड के उस अभियुक्त की अंतिम इच्छा अर्थात् अपनी जन्मभूमि मिदनापुर तथा बहिन और उसके बच्चों को देखने की इच्छा पूरी करने की आवश्यकता नहीं समझी।

गडकी नदी के किनारे खुदीराम बोस का साधारण और शांत अग्नि संस्कार कर दिया गया। एक तूफानी व्यक्तित्व का अन्त हो गया जिसने शैशव अवस्था से ही मातृभूमि की कठोर और दृढ़ निष्ठा से सेवा की, और उसने विदेशी सरकार की कोप दृष्टि की तनिक भी परवाह नहीं की जो कि भारत को संगीनों के बल पर दास बनाये हुए थी। ऐसे वीर देशभक्त को मातृभूमि की बलिवेदी पर आहुति चढ़ गई। (परिशिष्ट 'ख' देखें)

किंग्सफोर्ड मरा नहीं परन्तु उसको ऐसा गहरा धक्का लगा और वह अपने जीवन के लिए इतना भयभीत हो गया कि वह बीमार पड़ गया और ३ मई को अपने समस्त परिवार के साथ मसूरी चला गया। कलकत्ता में राजनीतिक मुकदमों में जो तत्परता उल्लास और उत्साह वह प्रदर्शित करता था वह सदा के लिए जाता रहा और भारतीय प्रशासन के लिए वह एक प्रकार से मर गया यद्यपि वह हाड़ मांस के रूप में जीवित था।

ऐम्पायर (सायंकाल दैनिक) ने ११ अगस्त, १९०८ को सम्पादकीय लेख प्रकाशित किया। "आज प्रातःकाल खुदीराम बोस को फांसी दे दी गई। कहा जाता है कि वह फांसी के तख्ते पर सिर उठाए हुए सीधे चढ़ गया। वह प्रसन्न था और मुस्करा रहा था। ऐसा कहा जाता है कि जब उसका वकील फांसी से पूर्व उससे जेल में मिला तो उसने कहा था कि मैं उसी निर्भयता से मृत्यु को अंगीकार करूंगा जिस निर्भयता से प्राचीन काल में राजपूत स्त्रियां अग्नि चिता पर बैठ कर सती होती थीं।"

जहां तक खुदीराम की मातृभूमि की ज्वलंत सेवा का प्रश्न है उसका पिछला इतिहास स्वर्णाक्षरों में लिखा जावेगा। जब वह छोटा था तब भी उसको पुलिस का तथा उनके हाथों मिलने वाले कष्टों का तनिक भी भय नहीं था।

१ अप्रेल १९०६ को एक औद्योगिक प्रदर्शनी का जिलाधीश की उपस्थिति में उद्घाटन हुआ तो कुछ युवकों ने 'वन्देमातरम्' का घोष किया। सभी उपस्थित लोग भय से आतंकित हो गए क्योंकि वे इस अक्षम्य अपराध के भयंकर परिणाम को जानते थे। मेले की समाप्ति के दिन अंग्रेजी शासन को कोसते हुए अपमानजनक भाषा में एक पत्रिका बांटी गयी।

इससे पूर्व २८ फरवरी को एक पद्र पत्र के बालक को हैड कांस्टेबिल ने

उसके पास उस आपत्तिजनक पत्रिका की तीन प्रतियां होने के कारण गिरफ्तार कर लिया था। वह बालक और कोई नहीं खुदीराम बोस था वह जहां भी पुलिस ले जाना चाहे जाने को तैयार था। परन्तु उसने इस बात पर विशेष आग्रह किया कि उसके हाथों में हथकड़ी न डाली जावे उसके हाथ उन्मुक्त रहें क्योंकि न उसका अपराध अभी तक सिद्ध ही हुआ और न अपराध आरोपित ही किया गया है। उसके साथ एक सम्मानयुक्त नागरिक जैसा व्यवहार होना चाहिए। उस कांस्टेबिल ने उसके इस कथे रुख के बदले उसको अपमानित किया और उसको घसीट कर स्थानीय पुलिस स्टेशन (थाना) तक ले जाने का प्रयत्न किया गया। इस अभद्र व्यवहार से खुदीराम को अत्यन्त क्षोभ हुआ उसने बलपूर्वक अपने हाथ छुड़ा लिए और उस स्थान से तिरोहित हो गया।

दूसरे दिन अर्थात १ मार्च १९०६ से पुलिस ने तेजी से खोजबीन आरम्भ की और कई सभ्रान्त व्यक्तियों तथा एक भेदिए को मजिस्ट्रेट की अदालत में बुलाया गया और वहां उनके साथ अभद्र व्यवहार किया गया। इसके साथ ही एक ऊंचे सरकारी पदाधिकारी को पदच्युत किए जाने की सूचना दे दी गई।

खुदीराम का भुकाव क्योंकि स्वदेशी आंदोलन की ओर था, उसे अपने परिवार और घर को छोड़ना पड़ा और बुनाई स्कूल से सम्बंधित छात्रावास में जाकर रहना पड़ा। ३१ मई १९०६ को दो थानेदार और दस सिपाही बलपूर्वक एक बजे रात्रि को छात्रावास में घुसे और खुदीराम को जो अन्य कई लड़कों के साथ सो रहा था कैद कर लिया।

इस प्रकार पुलिस लॉकअप में रहने का अनुभव खुदीराम को बालकपन में ही हो गया था। बहुत प्रयत्न करने पर भी उसको जमानत न हो सकी उसने धैर्य और वीरता से मुकदमे का सामना किया।

४ एप्रैल १९०६ को खुदीराम को जमानत पर छोड़ा गया। १७ एप्रैल को उसे इस आधार पर सेशन सुपुर्द कर दिया गया कि २८ फरवरी के लगभग मिदनापुर के पुराने जेल कम्पाऊंड में उसने सरकार के प्रति घृणा उत्पन्न करने तथा सरकार की मानहानि करने का प्रयत्न किया (इंडियन पैनल कोड धारा १२४ ए) उसका उद्देश्य देशी लोगों को योरापियों के विरुद्ध भड़काना था अतएव उसने उस पत्रिका को प्रकाशित करके आई पी सी की धारा ५०६ के अन्तर्गत अपराध किया।

उसके हाथों में मजबूती से हथकड़ियां डाल कर अदालत में लाया गया मानो वह पुराना और अनुभवी अपराधी हो और पहले कैद से निकल भागने का दोषी रहा हो।

उसकी १८ एप्रिल को जमानत मन्जूर की गई और कम आयु का होने के आधार पर १६ मई, १९०६ को उस पर से मुकदमा उठा लिया गया।

जीवन के प्रारम्भिक दिनों में इस पाठ ने भविष्य में सेवा और बलिदान की खुदीराम बोस के जीवन में सुदृढ़ नींव डाल दी। क्रांतिकारियों में कुछ ने दो निर्दोष महिलाओं की मृत्यु के लिए इस विश्वास से पश्चाताप किया और दुःख प्रगट किया कि भविष्य में भगवान के श्राप से उनके भावी प्रयत्न असफल हो सकते हैं। 'युगान्तर' (लेख ६ जून १९०८ के इंगलिशमैन में उद्धृत किया गया) ने कमजोर हृदय वालों की इस घबराहट और परेशानी को नीचे लिखे उत्साह वर्धक लेख से [illegible] का

प्रयत्न किया ।

"यदि किसी युवक ने जो स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहता है वास्तव में ऐसा कहा है तो वह अभी स्वतन्त्रता के योग्य नहीं हुआ है। शत्रु को पैरों के नीचे कुचलने के लिए कठोर हृदय होना आवश्यक है। त्रेता युग में जब राक्षस दंडक वन में भयंकर उत्पात और अत्याचार कर रहे थे तो राम ने समस्त राक्षस जाति का विनाश कर दिया था। लक्ष्मण ठाकुर ने रावण की सुंदर बहिन सूपनखा की नाक और कान काटकर उसे छोड़ दिया। शत्रु का विनाश करने के प्रयत्न में यदि दुर्घटनावश एक महिला की मृत्यु हो जाती है तो उसके लिए बहुत से उदाहरण देने की जरूरत नहीं है ऐसा होता ही है। उस दशा में अंग्रेजों की भांति भगवान रुष्ट नहीं होंगे। कालांतर में पृथ्वी के वक्ष से असुरों की जाति को समाप्त करने के लिए बहुत सी राक्षसनियों को मारना होगा। इसमें कोई पाप नहीं है इसमें दया और ममता के लिए कोई स्थान नहीं है। (परिशिष्ट ख देखिए)

परिशिष्ट—(क)

प्रफुल्ल चाकी के सम्बन्ध में अमृत बाजार पत्रिका के एक सम्वाददाता ने ३० मई १९०८ को बोगरा से लिखा—' एक बालक जो इतनी कम आयु का सीधा और नम्र हो और जो बोगरा जैसे निष्क्रिय और सुप्त नगर का रहने वाला हो एक गुप्त संगठन का सदस्य होगा यह हमारे कल्पना के बाहर था।

उसने एक शांत और धार्मिक परिवार में जन्म लिया था। वह बेहार के स्वर्गीय राजनारायन चाकी के पांच बच्चों में सबसे छोटा था। बेहार बोगरा से बीस मील उत्तर में एक छोटा गांव था। जैसा कि उसके नाम से इंगित होता है प्रफुल्ल बहुत हंसमुख और मस्त होने के बजाय बचपन से ही गम्भीर और चुप रहने वाला था। वह अपनी आयु के बालकों के साथ बहुत कम खेलता था वरन घंटों अकेला चुपचाप सोच विचार करता बैठा रहता था।

यद्यपि वह सांवले रंग का था किंतु उसका चौड़ा माथा पतली और सुन्दर भौंहें और उसके चेहरे में दृढ़ता झलकती थी उससे यह प्रतीत होता था कि वह दृढ़ मस्तिष्क वाला है।

वह उन अस्सी लड़कों में से था जिन्होंने जिले की अत्याचारी सरकार द्वारा स्कूल में बहुत अधिक हस्तक्षेप करने के विरोध स्वरूप स्कूल छोड़ दिया था और अपने इस कदम से उन्होंने बंगाल में राष्ट्रीय शिक्षा की आधार शिला रखदी थी। यद्यपि उसका जीवन बहुत ही अव्यवस्थित और सूक्ष्म रहा परंतु वह एक सुसंस्कृत और सम्पन्न परिवार में उत्पन्न हुआ था।

प्रफुल्ल ने एक वर्ष से कुछ अधिक पूर्व ही अपनी माताश्री से औपचारिक रूप से विदा ले ली थी। विदा लेते समय जो रहस्यमय शब्द उसने कहे थे वे उसकी वृद्ध माता के लिए अबूझ थे। वह कुछ भी न समझ सकी कि उनके क्या अर्थ हैं परन्तु अब वे शब्द अर्थों से भरे हुए प्रतीत होते हैं।

अपने उस भयानक सेवा कार्य में भी वह अपनी ममतामयी माता को नहीं भूल सका और उसने अपनी माता को दो स्थानों से दो पत्र लिखे किंतु अपना पता नहीं लिखा। उसने उन पत्रों में माता को आश्वासन दिया कि उसका पुत्र तनिक भी दुखी नहीं है और न वर्तमान परिस्थिति में उसको कोई कष्ट ही है। इसके अतिरिक्त

उसने अपनी मां को सूचित किया कि उसने ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया है। वह अपने धर्म में उन्नति कर रहा है उसका धार्मिक अध्ययन चल रहा है उसके लिए कोई चिंता करने की आवश्यकता नहीं है।

इस महीने के आरम्भ तक सब ठीक चलता रहा कि यकायक उसके परिवार को अपने परम प्रिय स्वजन के जीवन के दुखान्त अन्त का समाचार मिला जिससे समस्त परिवार को मर्मान्तक आघात लगा। जबकि समाचार-पत्रों में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि चाकी के सिर को धड़ से अलग करके स्प्रिट में सुरक्षित रक्खा गया है तो सब साधारण इस निर्दय क्रूरता से स्तब्ध रह गया।

हमारी बुद्धि में यह तनिक भी नहीं आता कि मां बाप कही जाने वाली सरकार का इस अत्यन्त अशोभनीय और निन्दनीय कृत्य से क्या लाभ होने वाला है जबकि सरकार ने उसकी पहचान करवाने के लिए फोटो ले ही लिया था। सभी सभ्य राष्ट्रों में शत्रुओं के मृत शरीर का सम्मान किया जाता है। सरकार ने जो यह अत्यन्त निन्दनीय और घणित कार्य किया, शव से सिर काट लिया यह वसा ही था जैसा कि—

फ्रैंच क्रान्ति के समय जन सुरक्षा समिति ने वलाजे के शव के साथ दुर्व्यवहार करने की आज्ञा दी थी। वलाजे गिरोन्डिस्ट सैनिक था। जसे ही उसको मृत्यु दण्ड की आज्ञा सुनाई गई उसने स्वयं छुरा मार कर अपनी हत्या करली। सुरक्षा समिति के अध्यक्ष ने अत्यन्त वीभत्स शब्दों में आज्ञा दी कि वलाजे का शव उसके सहयोगियों के साथ उसी गाड़ी में जेल ले जाया जाय और उसको फांसी दी जाय

मैं इस अधूरे और शीघ्रता में लिखे रेखा चित्र को प्रफुल्ल के अन्तिम शब्दों के साथ समाप्त करता हूँ जब प्रफुल्ल अनन्त के छोर पर खड़ा था उसने कहा "ओ हो तुम एक बंगाली हो मेरे देशवासी हो मुझे पकड़ने आए हो"

परिशिष्ट—(ख)

वन्देमातरम् ने (अगस्त १६ १९०८ बारह अगस्त १९०८ का सम्पादकीय) अपने पाठकों के समक्ष में उस कृत्य का आध्यात्मिक पक्ष रक्खा जो कि शरीर के भय और भ्रम से बहुत ऊपर उठा हुआ था।

उसकी अन्तिम इच्छा स्थानीय मंदिर के देवता का प्रसाद उसके आशीर्वाद के रूप में प्राप्त करने की थी। जेल में वह पूरे दिन धार्मिक तथा देशभक्ति पूर्ण साहित्य पढ़ता रहता था। वह मृत्यु की तयारी कर रहा था। फांसी के तख्त पर उसके वीरोचित आचरण से यह प्रगट हो गया कि उसकी तयारी कसी पूर्ण थी। उसने इस विचार और सिद्धान्त को पूर्ण तरह गलत सिद्ध कर दिया कि कृत्रिम उत्साह ने उसको इस कृत्य के लिए प्रेरित किया था। वह यह पूरी तरह जानता था कि वह उस अपराध के लिए किस सीमा तक उत्तरदायी है। वह उस कृत्य की पूरी जिम्मेदारी लेने के लिए तैयार था इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। उसकी महत्त्वाकांक्षा उन राजपूत महिलाओं की भांति देश के लिए मरने की थी जो अग्नि चिता पर भस्म हो जाती थीं। वह एक परी के समान सुंदर था जिसे देखकर कोई भी यह नहीं कह सकता था कि वह हत्यारा हो सकता है। अब जबकि वह अत्यन्त निर्भयतापूर्वक मरा है तो हत्यारा न रहकर वीर देशभक्त बन गया है। प्रत्येक मनुष्य इस प्रकार अपने शरीर के मोह को नहीं छोड़ सकता। लोग यह कभी भी नहीं भूल सकेंगे कि इस तरुण व्यक्ति में आत्मा ने शरीर पर विजय प्राप्त

प्राप्त करती थी। इस घटना से हमें प्राचीन समय की मोम्यारियर शक्ति की याद हो जाती है।

बम का दर्शन (१६०८)

मुजफ्फरपुर बम विस्फोट का घोर समस्त भारत में गूंजा और इंग्लैंड के तट तक पहुंच कर समाप्त हुआ। राष्ट्रीय समाचार पत्रों ने यद्यपि इस कृत्य की भर्त्सना की परन्तु उन दो तरुण बालकों के स्वार्थ रहित बलिदान की भूरि भूरि प्रशंसा की जिनमें से एक ने स्वयं अपने जीवन को समाप्त कर दिया और दूसरे ने फांसी के फंदे में झूल कर अपने प्राणों का त्याग किया।

यह स्वाभाविक था कि अंग्रेजों द्वारा संचालित सभी समाचार पत्र क्रोध से बौखला उठे और क्रांतिकारी आंदोलन के जाने और अनजाने नेताओं और आन्दोलन के कार्यकर्ताओं के सिरों की मांग करने लगे। उनका कहना था कि उनके विरुद्ध कठोर कार्यवाही की जावे। कुछ राष्ट्रीय पत्रों ने सावधानी से कार्य करने की सलाह दी और सरकार से प्रार्थना की कि वह इस बात का पता लगावे कि इस अशांति तथा हिंसात्मक क्षोभ का वास्तविक कारण क्या है? कि भारतीय जनसंख्या का एक वर्ग जिसमें स्वतन्त्रता की भावना जागृत हो गई है इस बात की तनिक भी चिन्ता किए बिना कि उसको कितनी भीषण यातना सहन करनी होगी स्वतन्त्रता के लिए मरने को तैयार हो गया।

केसरी' ने लिखा (५ मई, १६०८) ऐंग्लो इंडियन प्रेस द्वारा बतलाया हुआ उपचार अवश्य ही विफल होगा। जिस प्रकार वह रूस तथा अन्य देशों में विफल हुआ है। केसरी' के बाद 'प्रकाश ने लिखा (५ मई १६०८) 'अंग्रेज देश की राजनीति में विनाश के ऐंजिन द्वारा लगाए गए परिवर्तन से बहुत भयभीत हैं' पंजाबी' ने (६ मई १६०८) रोग का सही निदान किया। उसने लिखा कि इसका कारण पुराना और गहरा रोग है। इससे ज्ञात होता है कि देश में कितना गहरा असन्तोष व्याप्त है जिसके कारण वर्तमान स्थिति उत्पन्न हो गई है और उसने भय खाने वाले विनम्र पश्चिमी प्रभाव से प्रभावित बंगाली को अराजक और विद्रोही बना दिया।

सरकार के लिए यह आवश्यक है कि वह गम्भीरतापूर्वक उन कारणों पर विचार करे कि जिससे लोगों को इस प्रकार के अपराध करने की प्रेरणा मिलती है। 'काल' (८ मई, १६०८) ने सतर्क किया। बिना कारण के कोई काम नहीं होता और भारतीयों को अवश्य ही कहीं से इतनी अधिक उत्तेजना मिली होगी जिससे कि वे इस प्रकार के हिंसात्मक कार्य करने पर उतारू हो गए।" इसके अतिरिक्त अब बंगालियों में जेल और फांसी का भय जाता रहा। हिन्द स्वराज्य' (६ मई, १६०८) ने लिखा 'वे खुली अदालत में घोषणा करते हैं कि वे देश के लिए मृत्यु का आलिंगन करने को तैयार हैं।"

मराठा' (१० मई १६०८) ने इन कृत्यों को जन्म देने वाले कारणों का विश्लेषण करते हुए लिखा "कि यह कृत्य निस्सन्देह जहां तक उसके स्वरूप का प्रश्न है अपराध' है। परन्तु उसमें लेश मात्र भी स्वार्थ की भावना नहीं थी जो कि अपराध का मदन मूल उद्देश्य होता है। इसमें किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई निजी शत्रुता, कोई निम्न ईर्षा की भावना किसी से घृणित प्रतिशोध लेने का विचार कार्य नहीं कर रहा था, उन बालकों ने जो अपराध को स्वीकार किया वह स्पष्ट रूप से सीधा और सच्चा

था और उनसे यह सिद्ध होता है कि वे तरुण साधारण राजनीतिक आंदोलनों की निस्सारता के विचार से अभिभूत होकर ही इस क्रांतिकारी आंदोलन को अपनाने के लिए प्रेरित हुए थे। उनके हृदय में वर्तमान परिस्थिति के विरुद्ध अपनी शक्ति के अनुसार भभककर विरोध करने की दबाई न जा सकने वाली भावना ने ही उनको इस कार्य के लिए प्रेरित किया था। इसका सुदूर उत्तरदायित्व सरकार के सर पर है।"

'भारत' ने ११ मई, १६०८ के अंक में लिखा "कि अंग्रेजों का साम्राज्यवाद के खातिर स्थायी रूप से भारत पर आधिपत्य जमाये रखने का दृष्टिकोण भारतीयों को और भी अधिक क्षुब्ध करेगा और जो यदा कदा बम विस्फोट के द्वारा अपने क्षोभ के अस्तित्व की सूचना देता रहेगा।"

यही तर्क 'केसरी' ने उपस्थित किया (१२ मई १६०८) जिसमें वह बम काण्ड और उनके कारणों की विशद व्याख्या करता है। लोगों की स्वराज्य के अधिकारों की इच्छा अधिकाधिक बलवती होती जा रही है। और यदि उन्हें शनैः शनैः अधिकार प्राप्त नहीं होते जैसा कि वे चाहते हैं तो दासता में पड़ी जनसंख्या में कुछ लोग क्षोभ और घृणा से अभिभूत होकर अवश्य ही अविचारितापूर्ण अनुचित और भयानक कृत्य करने पर उतारू होंगे। यदि शासक लोग ऐसे कृत्यों को नहीं चाहते तब उन्हें अपने प्रशासन की प्रणाली में परिवर्तन लाना होगा और उस पर प्रतिबन्ध लगाने होंगे।

'ऐसा प्रतीत होता कि सभी विचारवान व्यक्तियों की एक समान सम्मति है कि बम पार्टी अधिकारी वर्ग द्वारा अत्याचार और दमन के परिणामस्वरूप बनी है। उनके द्वारा जनता पर होने वाले दमन और जनमत की अविचारपूर्ण अवहेलना ने क्रांतिकारी दल को जन्म दिया है। बमों का विस्फोट इस कारण होता है क्योंकि अधिकारी वर्ग ने बंगाल के तरुणों के धैर्य की इतनी गहरी सीमा तक परीक्षा की कि बंगाल के तरुणों का सिर फिर गया। अतएव इस विपत्ति का उत्तरदायित्व राजनीतिक आंदोलन लेखों और भाषणों पर नहीं वरन् अधिकारी वर्ग के अविचारपूर्ण हठ पर डालना चाहिए।"

यही उद्देश्य तरुणों के मस्तिष्क और हाथों को बल देता है जो मृत्यु का आलिंगन करने के लिए आगे आते हैं। इस हिंसात्मक कृत्य में मुमुक्ष (१४ मई १६०८ को 'देव की इच्छा दिखलाई पड़ती है कि वह बंगाली जाति जो अभी तक भीरु मानी जाती थी उसमें दर्जनों ऐसे तरुण उत्पन्न हुए जो कि देश के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने के लिए तैयार हैं और 'छापेकर' जैसे तरुण कभी भी निरुत्साहित न होने वाले साहस और प्रसन्नता के साथ किसी भी दण्ड को सहन करते हैं।

'परन्तु सभी लोग जो उनके असाधारण साहस उनकी स्पष्टवादिता और उनके उदात्त और पवित्र ध्येय के सम्बन्ध में सोचते हैं वे उनकी प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकते। वे भी जो उनके अविचारपूर्ण कृत्य की भर्त्सना करते हैं उनकी निःस्वार्थता की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकते। उनकी भूल हो सकती है परन्तु उनका ध्येय शुद्ध और पवित्र था। क्या कभी कोई बिना पवित्र ध्येय के मृत्यु का आलिंगन प्रसन्नतापूर्वक कर सकता है।" यह हिंसा कांड अंग्रेजों के मन में अपने प्राणों की असुरक्षा की भावना भर देंगे। (हिंद पंच १३ मई १६०८)

'स्वराज्य' (१६ मई १६०८) के अनुसार उस हिंसा कांड के लिए खेद प्रकट करने की आवश्यकता नहीं है जिसमें केवल दो स्त्रियों की मृत्यु हुई। 'क्योंकि पुलिस ने

अपने सम्पीडन के द्वारा हजारों को यमलोक भेज दिया होगा। उन देशभक्तों का आचरण स्वार्थरहित था और उन्होंने अपने को एकमात्र देश सेवा के लिए अर्पित कर दिया था। इन देशभक्तों को जिनका एकमात्र ध्येय देश सेवा करना है उन्हें अराजकतावादी कह कर क्यों बदनाम किया जावे। यदि वे उनसे श्रेष्ठ नहीं तो वे नरम विचार वालों और राष्ट्रीय विचार वालों की भांति ही देशभक्त हैं। सम्भवतः उनकी देशभक्ति चरम सीमा पर पहुँच कर गलत दिशा में मुड़ गई।"

इस लेख में पत्र इस विचार बिन्दु को और अधिक स्पष्ट करते हुए लिखता है—'यह दल सीधी मनोवृत्ति का ही ऐसा प्रतीत नहीं होता। इसके विपरीत अपने लक्ष्य में दूरदर्शी और अपने निश्चय में अटल प्रतीत होता है। उन्होंने अपने समक्ष स्वतन्त्रता प्राप्त करने का अभिजात और श्रेष्ठ आदर्श रक्खा है और उन्होंने वही किया कि जिसे वे उसे प्राप्त करने के लिए अपना कर्तव्य मानते हैं। यह स्पष्ट है कि यद्यपि उनके मस्तिष्क अग्निशिखा के समान प्रज्ज्वलित थे उनके हृदय मजबूत और पवित्र थे। उनकी आत्माएं साधारण हत्यारों और डकैतों की भांति पाप से पंकिल नहीं थीं। वे शुद्ध थे।'

'ज्ञानोदय'(?) 'देशसेवक' (१६ मई) 'जन' (१७ मई) 'माला' (२१ मई) पत्रों ने भी उनके हृदय में ध्येय की मुक्ति कंठ से प्रशंसा करते हुए उसी ढंग से टिप्पणी लिखी। मुजफ्फरपुर की घटना का स्वरूप दूसरा है। क्योंकि जिन्होंने इन षड्यन्त्रों का संगठन किया' वे कोई अशिक्षित या मूर्ख अनाड़ी नहीं हैं। 'गुजराती' (१७ मई १६०८) ने लिखा कि हमें इसके कारणों को खोजना चाहिए। 'क्या कारण है कि वे लोग शिक्षित व्यक्ति हैं जो इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं कि उन्हें अपने प्राणों की आहुति देनी होगी, अपने को ऐसे भयानक कृत्यों में झोंक देते हैं? जब इस प्रकार का राजनीतिक पागलपन शिक्षित व्यक्तियों पर सवार हो जाता है तो अधिकारियों को समझ लेना चाहिए कि लोगों में अब प्रशासन के प्रति अपनी घृणा को दबा कर रखने का धैर्य समाप्त हो गया है।"

अपनी स्वयं की सुरक्षा की नितांत उपेक्षा उनका ऊंचा लक्ष्य और उनके द्वारा दुष्प्राप्य दो तरुण बालकों के अदम्य साहस की 'सुधाकर' (१६ मई, १६०८) ने भूरि भूरि प्रशंसा की परन्तु उसकी उनके उस दुष्कृत्य से कोई सहानुभूति नहीं थी। 'बिहारी' (१८ मई १६०८) ने लिखा कि पूना और मुजफ्फरपुर के कांडों का मुख्य प्रेरक कारण सर्वधर्म पद अंग्रेज अधिकारियों रैंड और किंग्सफोर्ड का भयंकर दमन था।"

एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो कि इन अराजकतावादियों की तथा उनकी ऊंची और अभिजात महत्वाकांक्षा की प्रशंसा नहीं करेगा।

बम का जन्म एक नवीन युग के आगमन की चेतावनी है। 'केसरी' ने २६ मई १६०८ के अंक में लिखा—'न तो १८६७ के जुबली हत्याकांड, से न लाला लाजपत राय के देश निर्वासन के समाचार से और न सिक्ख रेजीमेंट में परिवर्तन करने से देश में ऐसा भयंकर क्षोभ उत्पन्न हुआ था जैसा बम विस्फोट से हुआ। अंग्रेजों का लोकमत १८५७ के विद्रोह के उपरान्त भारत में बम के जन्म को अत्यन्त असाधारण घटना के रूप में देखता है।" (परिशिष्ट के अनुसार) 'युगान्तर' जिसको पहले बन्द कर दिया गया ५ मई १६०८ को पुनः प्रकट हो गया। और उसी पहले अंक में उसने स्पष्ट बिना किसी हिचक के जनता का आह्वान किया कि वह सरकारी खजानों को लूट

4607

ले और "देवी चामुंडा नरमुंड मालिनी कराल बदनी काली" के नाम पर शत्रु से युद्ध करने में जुट जावे। 'हितकारी' (२८ मई १६०८) भी अपने पाठकों के सामने क्रांतिकारियों और अराजकतावादियों के भेद को स्पष्ट करने में पीछे नहीं रहा और उसने निर्भय होकर लिखा—'वे (बंगाल के तरुण) लोग योरोपियन अराजकतावादियों की भांति कानून और व्यवस्था को समाप्त नहीं करना चाहते यद्यपि उनके आचरण और कार्यों से गड़बड़ी और अशांति उत्पन्न हो सकती है।'

'उनके सम्बन्ध में न्याय करते समय उनके उद्देश्य और ध्येय को ध्यान में रखना चाहिए जिसने उन्हें बम फेंकने पर विवश कर दिया। उनको बदनाम करने वालों और स्वयं इस कांड को करने वालों के तर्कों का उसमें संतुलन मिल जाता है।" यह कहा जाता है कि खुदीराम हत्या तथा कायरता और घृणित टाइम बम जैसे हथियार को काम में लाने का अपराधी था। क्रांतिकारी लोग इसके उत्तर में कह सकते हैं कि प्रत्येक शासक जो जनता पर अत्याचार और दमन करता है और उनको फांसी पर चढ़ाता है—भी इसी अपराध का दोषी है। यह कहा जा सकता है कि खुदीराम अत्यन्त निर्दयी व्यक्ति है क्योंकि उसने दो निर्दोष महिलाओं की हत्या कर दी। यह सही है परन्तु क्या किसी जज को इसलिए निर्दयी माना जावेगा क्योंकि उसने भूल से एक निर्दोष व्यक्ति को फांसी की सजा दे दी जिस पर पुलिस ने इच्छा अथवा अनिच्छा से मुकदमा चलाया था।

प्रत्येक कृत्य के दो पक्ष होते हैं। इन दो परस्पर विरोधी मतों का सम न्वय बिठाना कठिन होता है। किन्तु उनके ऊंचे आदर्श के सम्बन्ध में तो दो मत नहीं थे। हिन्दुस्तान (२६ मई १६०८) ने नीचे लिखे अनुसार मत प्रकट किया। इस कांड के मुख्य चरित्रों की कुछ ने उनकी वीरता और स्वार्थ त्याग की बड़ी प्रशंसा की है कुछ ने उनको सनकी कह कर उनकी भर्त्सना की है कुछ ने उनको आदर्शवादी कह कर उनकी प्रशंसा की है तो कुछ ने उनको नाशवादी कह कर घृणा व्यक्त की है। इस प्रश्न पर चाहे कितनी ही मत भिन्नता क्यों न हो इस प्रश्न पर सब एक मत हैं कि उनमें कमीनापन तथा ओछापन लेशमात्र भी नहीं था। अपने स्पष्ट उद्घोषित उद्देश्य की सरलता और सत्यता में वे भव्य और ऊंचे तथा प्रकाशवान दिखलाई पड़ते थे।

'युगान्तर' ने घोषणा की (२० मई १६०८) "कि देश देशद्रोहियों से प्रतिशोध लेने के लिए अधीर है। प्रतिशोध की घड़ी अब आ गई है और जिन्होंने पुलिस को सूचित किया है अथवा जिन्हें भूल से भी देशद्रोही माना जा सकता है उनको दंड भोगना होगा।"

'शास्त्र कहते हैं वह चाहे भाई, पिता, या पुत्र हो यदि वह देशद्रोही है तो उसे मार दो। उसमें कोई पाप नहीं है।

"मुट्ठी भर पुलिस तथा सैनिक क्रांतिकारियों के इस महासागर की उत्ताल तरगों के सामने विरोध में नहीं खड़े रह सकेंगे। वह कदी मर सकते हैं किन्तु इनकी जगह हजारों अस्तित्व में आ जावेंगे। भयभीत न हो। वीरों के रुधिर से हिन्दुस्तान की मिट्टी सदैव उर्वरा होती रही है। हिम्मत न हारो। वीरों की कमी नहीं है। यश और गौरव तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। तुम्हारी दृष्टि की एक भृकुटी (क्रुध यमों) ने शत्रु के हृदय में भय का संचार कर दिया है। उनके चीत्कार और क्रन्दन

से आकाश गूंज रहा है। रंग मंच की यवनिका (पर्दे) के उठने से पूर्व रंगमंच का शानदार वैभव जबकि आर्केस्ट्रा बज रहा है दर्शकों के हृदय हर्षोन्मत्त कर देता है। इस युद्ध रूपी महासागर में और अधिक शक्ति और बल से तरो।"

'अलीपुर षडयन्त्र के कैदियों की मानसिक दशा अतिश्रेष्ठ है। उनमें से कुछ अपने को मार कर और शत्रु को घृणा के साथ अंगूठा दिखाकर स्वर्ग चले गए हैं दूसरों ने अपने साथियों को सदैव के लिए विदा दे दी है।"

"दो प्रतिद्वन्दी संघर्ष युक्त शक्तियों के बीच समाज लक्ष्य प्राप्ति के साधन को प्राप्त करने के लिए स्वयं निज का एक स्तर ढूंढ निकालता है (केसरी ५ जून १६०८)

'यह सच है कि कोई भी विचारवान व्यक्ति इस प्रकार की हत्याओं का समर्थन नहीं करेगा। परन्तु प्रतिष्ठित और ऊंचे दर्जे के इतिहासवेत्ताओं ने बतलाया है कि इस प्रकार की दुष्ट प्रवृत्तियों में भी भलाई करने की शक्ति छिपी रहती है इस कारण इस प्रकार के क्रांतिकारियों को मानव जाति के शत्रु के रूप में नहीं देखना चाहिए।"

" जबकि दो शक्तियों में अननुपाती संतुलन होता है तो समाज स्वतः किसी कठोर उपचार या उपाय को जन्म देता है और साम्य स्थापित कर देता है।"

'केसरी' का मत है (६ जून, १६०८) कि भारत सरकार जो शोर मचाकर यह प्रचार करती है कि बंगाल में पनपने वाला बम का पंथ अपने योरोपीय समरूप की भांति ही समाज व्यवस्था के लिए विनाशकारी और विध्वंसक है—पूरा सत्य नहीं है। उस पत्र के अनुसार जबकि योरोप में यह पंथ धनी वर्ग से उत्पन्न हुआ परन्तु बंगाल के पंथ के मूल्य में देशभक्ति की भावना का अतिरेक है। स्पष्ट है कि अंग्रेजों ने समस्त जाति को शौर्यहीन बना दिया और उसको इसलिए नपुंसक कर दिया कि जिससे कि उनका छोटे से छोटा अधिकारी भी मनमाने ढंग से उन पर अत्याचार कर सके। अंग्रेजों में मुगल बादशाहों जैसी न तो उदारता ही है और न उनमें वैसी शक्ति ही है। उन्होंने (मुगल) भारत को कभी निःशस्त्र नहीं किया।

मुगल बादशाहत के शाही साम्राज्य की तुलना में भारत में अंग्रेजी साम्राज्य बहुत कमजोर है और सैनिक शक्ति की दृष्टि से उसमें तेजस्विता की कमी है। सम्राट औरंगजेब ने हिन्दुओं पर धार्मिक दृष्टि से कई प्रकार के अत्याचार किए परन्तु धन वितरण की दृष्टि से कोई अत्याचार नहीं किया। उसकी दस या बीस लाख सेना दक्षिण के दस या बीस वर्षों के युद्धों में समूल नष्ट हो गई। उस पर भी देहली का साम्राज्य डेढ़ सौ वर्ष तक उसकी मृत्यु के उपरान्त घसीटता हुआ चलता रहा। यदि अंग्रेजी सेनाओं को औरंगजेब की सेनाओं की भांति ही कठिनाइयों का सामना करना पड़े तो उसके उपरान्त अंग्रेजों का शासन पच्चीस वर्ष भी नहीं चलेगा। इसका मुख्य कारण यह है कि अंग्रेज भारत में अस्थायी किरायेदार अथवा उड़ते हुए पक्षी की भांति जो थोड़ी देर के लिए विश्राम करने को पेड़ पर बैठ जाता है रह रहे हैं।

सरकार ने जनता को निःशस्त्र कर दिया है और सारी सैनिक शक्ति राज्य सरकार के पास है। इसका परिणाम यह है कि अंग्रेज अपने को समस्त देश का स्वामी

समझते हैं। लेकिन बम ने इस स्थिति को बदल दिया है। अत क्योंकि अभी तक सरकार के पास ऐसे कोई साधन नही थे जिनसे वह यह जान सकती कि सरकार के कारनामो से उग्र स्वभाव वालो मे कितनी सीमा तक निराशा यता और क्षोभ उत्पन्न हो गया है। जनता केवल याचना पत्र देती और उनकी प्रार्थना पर कोई ध्यान नही दिया जाता था।

बम ने जनता के हाथ म एक अत्यन्त प्रभावशाली हथियार दे दिया है और उसने सरकार की सेना की प्रतिष्ठा के प्रति भय और आदर को कम कर दिया है। आगे इङ्गलैड भारत का शासन उस समय शान्ति और सुविधापूर्वक नही कर सकेगा जब तक इङ्गलैड भारतीयो का अधिकाधिक विश्वास प्राप्त नही कर लेता।

"शस्त्रो का निर्माण और उनको अपने पास रखने पर सरकार कानून द्वारा प्रतिबंध लगाकर रोक सकती है पर तु बम के सम्बन्ध मे यह नहीं कहा जा सकता। कारखाने मे दिखलाई देने वाले शस्त्र के निर्माण के समान न होकर वह एक जादू की वस्तु के सदृश्य अधिक है।'

'जो उग्र पथी देश भक्त पागल हिंसा पर तुले हुए हैं उन्हें बमों का निर्माण करने के लिए बडी मात्रा में सामग्री की आवश्यकता नही होती जसा कि कलकत्ते में छिपे हुए बम बनाने की फक्टरी को देखने से ज्ञात होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस खोज से सरकार ने कोई शिक्षा ग्रहण नही की। किसी भी कानून में यह शक्ति नहीं है कि जो उन लोगों से बम बनाने के ज्ञान को गोपनीय रख सकने में सफल हो जो उनका उपयोग करने के लिए कृत सकल्प हैं। क्योंकि बम बनाने का ज्ञान योरोप में गोपनीय नहीं है। भारत में अब भी यह गोपनीय है परन्तु यदि सरकार की दमन नीति देश मे उग्र विचारो के व्यक्तियो की सख्या में वृद्धि कर देती है तो बगाल से बम बनाने का ज्ञान शीघ्र ही देश भर में फल जावेगा।'

इनके अतिरिक्त और भी समाचार पत्र थे (विशेषकर बगाल और महाराष्ट्र में) जिन्होंने परोक्ष रूप से मुजफ्फरपुर काण्ड का समर्थन किया। उनमें से एक काल' था जिसने लिखा—

"स्वराज्य के लिए सब साधारण व्यक्ति मृत्यु भी वरने के लिए तयार है। और वे अब ब्रिटिश शासन का यशोगान नही करते। भारत में बम फेंकना रूस में बम फेंकने से भिन्न है। बहुत से रूसी लोग बम फेंकने वालों के विरोध में सरकार का साथ देते हैं परतु भारत में सरकार के प्रति सहानुभूति पाई जावेगी इसमें गहरा सदेह है। यदि ऐसी परिस्थितियों में भी रूसियों को ड्यूमा (पार्लियामेंट) प्राप्त हो गई तो भारत को अवश्य स्वराज्य प्राप्त होगा। भारत में बम फकने वालो का अराजकतावादी कहना सवथा असगत है। यदि इस प्रश्न को छोड दें कि बम फेंकना न्याय सगत है अथवा नही तो यह स्पष्ट है कि भारतीय जन अशान्ति और अव्यवस्था उत्पन्न करने का प्रयत्न नही कर रहे हैं वरन् स्वराज्य प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हैं।"

बगालियों के चरित्र के सम्बध में अपने विचार प्रकट करते हुए 'आफताब' (२ अगस्त १९०८) कहता है — 'कि इन बालको ने भय पर विजय प्राप्त करली है और इन देशभक्तों की दृढ़ निश्चयी भावना का दमन करने का यदि प्रयत्न किया गया तो वह उनके मस्तिष्क को मदहोश कर देगा और उनके शरीर मे अधिक शारीरिक बल को उत्पन्न करेगा। पत्र ने जिस भाषा और तर्क का उपयोग किया वह दिलचस्प है—

"देश में एक परिवतन की लहर [illegible] रही है। यह बगाल से प्रारम्भ होगी

है जहा की जनता ने सर्व प्रथम राष्ट्रीयता के प्रवाह में डुबकी लगाई। उनके देशवासी उन्हें कायर और भीरु समझते थे परन्तु उनके चरित्र के सबंध में यह अनुमान गलत साबित हुआ। वे अपने को भारत का रक्षक सिद्ध कर रहे हैं। उनमें से मृत्यु का भय सवथा जाता रहा और कद उनके लिए तनिक भी आतक पदा करने वाला दड नही रहा। वे लोग धन्य हैं जो कि अपने देश के लिए अपने जीवन को समर्पित कर देते हैं अपना बलिदान कर देते हैं और इस प्रकार अमर हो जाते हैं। बगाली दृढ़ निश्चय वाले होते हैं कोई भी शक्ति उनके मार्ग को अविरुद्ध नही कर सकती। जितना ही अधिक सरकार उनका दमन करेगी उतने ही वे अधिक शक्तिवान बनेंगे।"

इस काण्ड से सरकार की प्रतिष्ठा को ऐसा गहरा धक्का लगा कि बाद के वर्षों में भी उसकी क्षति पूर्ति न हो सकी।

परिशिष्ट— अ

२६ मई १९०८ के 'केसरी' में प्रकाशित 'बम का दशन' शीर्षक लेख का अश— १८९७ की हत्याओ के उपरान्त अधिकारियों का ध्यान प्लेग की प्रशासनिक व्यवस्था में जो अव्यवस्था थी उसकी ओर आकर्षित हुआ और उस समय से प्लेग सम्बन्धी प्रशासनिक व्यवस्था मे परिवतन होना शुरू हुआ और शीघ्र ही उसमे पूर्ण रूप से परिवतन हो गया। इस समय यह कहा जा रहा है कि सरकार बगालियो के बमो को दो तिनके के बराबर भी महत्व नही देती। "दो तिनके" का अथ क्या है? बगाल के बम बनाने वालों ने स्वय यह स्वीकार किया है कि अग्रेजी सरकार बमो से उलटी नही जा सकती।

कुछ बातो को जनता के दृष्टिकोण से भी देखना चाहिए। केवल अपने ही दृष्टिकोण से उनको देखना यथेष्ठ नही है। परन्तु अधिकारियो के मस्तिष्क में प्रकाश नही चमका। श्री रैंड की हत्या से उनको प्रकाश दिखलाई दिया और बुद्धिमानी के अहम् ने उनके अन्दर मे ज्ञान उत्पन्न कर दिया। जहा तक प्लेग की प्रशासनिक व्यवस्था का प्रश्न था अधिकारियो का अहकार दूर हो गया। इसमे भूल क्या थी? इसमें ब्रिटिश सरकार की शक्ति पर लाञ्छन कहा था? जबकि व्यक्ति चले तो उसे अपनी आंखों का उपयोग करना नही भूलना चाहिए। जबकि किसी को अपने कृत्य के परिणाम स्वरूप दड मिलने पर भी यदि वह सबक नहीं लेता तो फिर कब चेतेगा?

जिस प्रकार किसी गाव के शराब बेचने वाले, और वेश्याए किसी विलासी और व्यभिचारी धनी पुत्र के पिता की मृत्यु से प्रसन्न और संतुष्ट होते हैं उसी प्रकार 'बाम्बे टाइम्स" जो मूर्खता पूर्वक मदहोश होकर तथा पूना और बम्बई के वे देशी पत्र जो सरकार द्वारा परोक्ष रूप मे सहायता और सरक्षण पाते हैं यह देखकर कि सरकार पर बम की विपत्ति मडरा रही है यह सोचने लगे हैं कि अब उनकी समृद्धि के दिन आ गए हैं। यह काले देशद्रोही समाचार पत्र प्रसन्न होकर सरकार से कह रहे हैं कि सरकार को बम कांडो का सामना राष्ट्रीय समाचार पत्रो के लेखो और राष्ट्रीय दल के भाषणो के कारण करना पड़ता है इस कारण मोंकी तनिक भी चिन्ता न कर सरकार को पत्रों तथा भाषण करने वालो का घोर दमन करके उन्हें बन्द कर देना चाहिए। १८९७ मे इन सरकार समथक काले प्रहरियो ने राष्ट्रीय समाचार पत्रो के विरुद्ध इसी प्रकार के अनर्गल दोषारोपण किये थे और सरकार को अपनी दस वर्ष की दमन नीति का परिणाम बमों के रूप में भुगतना पड़ा है। यदि सरकार इस समय भी अपनी नीति को नहीं बदलती तो उसके परिणाम सरकार और प्रजा के लिए इससे भी

अधिक भयकर होंगे।

नाग्वादियों द्वारा किए गए विद्रोहो और विप्लवों को जो कि रूस में बहुधा होते रहते हैं के सम्बन्ध म सबो को भली भांति पात है कि उनका कारण सरकार का दमन था। इस दृष्टिकोण से इस समस्या को देखें तो यह कहना पड़ेगा कि जो स्थिति रूस में सरकारी अधिकारियो, जो उनके ही देशवासी थे के द्वारा किए गए दमन से उत्पन्न हुई वही स्थिति भारत में विदेशी सरकारी अधिकारियों के दमन से उत्पन्न हो गई है। ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है कि जो यह न जानता हो कि ब्रिटिश सरकार की शक्ति उतनी ही बड़ी और अपरिमित है जैसी रूस की सरकार की थी। परन्तु इन शासको को जिनके पास अबाध सत्ता, है उन्हें यह सदव याद रखना चाहिए कि जनता के धय की एक सीमा है। पुराने तथा अनुभवी नेताओ का जहां तक सम्बन्ध है वे इस क्षोभ को अपनी परिपक्व विचार शक्ति और अनुभव के द्वारा स्थायी रूप से सीमाओं में बांध कर रख सकना असम्भव है। साथ ही यह बिना किसी हिचक के कहा जा सकता है कि जिस देश में वहां के निवासियो के लिए क्षोभ की भावना सदैव निर्धारित सीमाओ में बांध कर रखना सम्भव होता है वे देश अनन्तकाल तक सदव दास रहते हैं।

(ख)

'केसरी' (२७ मई १९०८) ने अपनी अद्वितीय आलोचनात्मक वाणी में छापेकर बन्धुओं के वीर कृत्यो और बगाल के बम फेंकने वालो में एक सूक्ष्म भेद करते हुए लिखा था —यदि साहस और काय करने की निपुणता को देखा जावे तो बगाल के बम फेंकने वालो से छापेकर बन्धुओ को श्रेष्ठ स्वीकार करना होगा। परन्तु यदि उद्देश्य और उसकी प्राप्ति के लिए साधनो के उपयोग की दृष्टि से बगाल के बम फेंकने वालों को अधिक प्रशसा करनी होगी। छापेकर बन्धुओ की दृष्टि में केवल प्लेग मे किए गए अत्याचार और दमन थे उनके सामने वह महत्वपूर्ण और बड़ा प्रश्न नहीं था कि वतमान शासन प्रणाली दोषपूर्ण है और इस बात की कोई आशा नहीं है कि नौकरशाही उस समय तक उसको बदलने के लिए कभी तैयार होगी जब तक कि उसके व्यक्तिगत सदस्यो को भयकर परिणाम की धमकी न दी जावे। आधुनिक युद्ध विज्ञान ने सभी देशों में शासकों की स्थिति को मजबूत बना दिया है और प्रजा को उसके विपरीत बहुत असुविधा की स्थिति मे रख दिया है। परन्तु यदि आधुनिक विज्ञान ने शासको के हाथ मे मारक भयकर अस्त्र शस्त्रो को दे दिया है तो उसने विनाशकारी बम को भी जन्म दिया है। यदि सरकार बमो से लाभ नही उठाती, पाठ नहीं सीखती तो वह स्वय अपनी ही शत्रु सिद्ध होगी।

अलीपुर का विध्वस (१९०८ १९१०)

३० अप्रेल, १९०८ की दुर्भाग्यपूर्ण मुजफ्फरपुर वाली घटना जिसमें दो निर्दोष महिलाओं की मृत्यु व्यय म हो गई—के सदभ में क्रांतिकारी सगठन के दो साहसी बालकों के कार्यों ने सशस्त्र क्रांति की तयारी की प्रारम्भिक अवस्था मे ही उस पर विनाशकारी प्रभाव डाला।

पुलिस उन इमारतों पर बहुत पहले से निगाह रख रही थी जिनका सदेहास्पद व्यक्ति उपयोग करते थे। मुजफ्फरपुर की घटना के परिणामस्वरूप पुलिस ने एक साथ २ मई, १९०८ को (१) नम्बर ३२ मुजफ्फरपुर रोड मानिकतला गार्डन, (२) १३४

रजा नव किशन स्ट्रीट (३) १५ गोपी मोहनदत्त लैन (४) १३४ हैरिसन रोड—सभी कलकत्ते मे थे—मकानों की तलाशी ली। देवगढ के (५) सिललाज की भी तलाशी ली गई। कुल इकतालीस व्यक्ति गिरफ्तार किए गए।

इन तलाशियो मे पुलिस ने बडी मात्रा में राजद्रोहात्मक साहित्य और पुस्तकें, विस्फोटक पदार्थ जो निर्माण की विभिन्न स्थितियो मे थ गोली बारूद तथा शस्त्र तथा अत्यन्त भयानक विस्फोटक पदार्थों को बनाने की पूरी लिखित विधि इत्यादि पकडी। जो सामान मिला उससे यह अनुमान सहज में ही लगाया जा सकता था कि सरकार के विरुद्ध युद्ध करने की यह तैयारिया यथेष्ट लम्बे समय से की जा रही थी। यह ध्यान देने की बात है कि ऊपर लिखे षडयन्त्र तथा तैयारी की खोज के पूर्व भी बगाल मे कतिपय क्रातिकारी घटनाए विभिन्न स्थानो पर पहुँच चुकी थी। बाद को ज्ञात हुआ कि उन घटनाओ के जनक ये ही लोग थे जो पकडे गए थे। इसके अतिरिक्त यह हम पहले ही कह आए हैं कि नए रसायनिक पदार्थों से बनाए गए एक बम की विध्वसक शक्ति का परीक्षण करते समय देवगढ मे एक मूल्यवान जीवन नष्ट हो गया था।

२ मई, १९०८ को सफल तलाशी और गिरफ्तारियो के परिणामस्वरूप ३८ अपराधियो पर अलीपुर षडयन्त्र का मुकदमा चलाया गया। लोगों पर युगान्तर' का कल्पनातीत प्रभाव पडा था। कुछ अपराधियो ने इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि युगान्तर' के उत्तेजनाजनक लेखो का उन पर गहरा प्रभाव पडा। और इन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए उस खतरनाक मार्ग को अपनाया। ऐसे सकडों की सख्या मे युवक थे जो क्रातिकारी सगठन के उद्देश्यो को सक्रिय रूप में अथवा गुप्त रूप में स्वीकार करते थे। मानिकतला सगठन से स्वतन्त्र बहुत से दल थे जो स्वतन्त्रता के युद्ध के लिए यथा शक्ति तयारी कर रहे थे।

उनका अन्तिम लक्ष्य अबाध स्वतन्त्रता था परन्तु तत्कालीन उद्देश्य ऐसे लोगों से बदला लेना और उनको दण्ड देना था कि जिन्होंने अपने आचरण और व्यवहार से अपने को देश का शत्रु और देश के हितो का विरोधी सिद्ध किया था।

विभिन्न स्रोतो से जो गवाही एकत्रित की गई उससे स्पष्ट हो गया कि बहुत बडी संख्या मे भद्रलोक तरुण सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने के लिए षडयन्त्र मे सम्मिलित हो गए हैं। अधिकाश अपराधी शिक्षित और गहरी धार्मिक भावना के अकित थे। क्रातिकारी दल ने जो षडयन्त्र किया था वह बहुत शक्तिवान और बडा था। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए क्रातिकारी दल के सदस्यो ने असीम शौर्य साहस और दृढ निश्चय का परिचय दिया। अपराधियो को मजिस्ट्रेट के सामने दो समूहों में उपस्थित किया गया। पहले समूह का मुकदमा ४ मई से आरम्भ हुआ और १८ अगस्त १९०८ तक चला दूसरे समूह का मुकदमा १४ अक्टूबर, १९०८ से ४ मार्च, १९०९ तक चलता रहा। पहले समूह के ३८ व्यक्ति १९ अगस्त, १९०८ को सेशन सुपुर्द कर दिए गए और दूसरे समूह के लोग १४ सितम्बर को सेशन सुपुर्द दिए गए। अलीपुर सेशन का मुकदमा १९ अक्टूबर को आरम्भ हुआ।

६ मई, १९०९ को सेशन जज ने अपना फसला दे दिया। दो को प्राण दण्ड दिया गया और सत्रह को विभिन्न दण्ड दिए गए। दस को आजीवन निर्वासन (काला पानी) दिया गया और शेष छोड दिए गए। उच्च न्यायालय मे २३ नवम्बर, १९०९

को अपील में एक की प्राण दण्ड की सजा को आजीवन निर्वासन मे बदल दिया और दूसरों के दण्ड को कम कर दिया। एक को मुक्त कर दिया गया और एक की मुकदमे के काल में मृत्यु हो गई। पांच के सम्बन्ध में न्यायाधीशों में मत भेद था उनके मामले को एक तीसरे जज को दे दिया गया। उनके सम्बन्ध मे १८ फरवरी, १९१० को फैसला सुना दिया गया। तीन को मुक्त कर दिया गया और दो के दण्ड को यथा विध रक्खा गया। इस प्रकार ब्रिटिश शासन मे पहला सनसनी खेज राजनीतिक षडयन्त्र का मुकदमा समाप्त हुआ।

विश्वासघाती देशद्रोही का अन्त

अलीपुर षडयन्त्र का मुकदमा सेशन जज की अदालत में निर्धारित गति से चल रहा था। पहले समूह मे कनाईलाल दत्त जो २ मई, १९०८ को गोपी मोहन दत्त लेन से पकड़ा गया था और नरेन्द्र नाथ गोस्वामी जो ५ मई, १९०८ को श्रीतमपुर से गिरफ्तार हुआ था रक्खे गये थे। दूसरे समूह में थे सत्येन्द्र नाथ बोस जो आर्म्स ऐक्ट मिदनापुर में कैदी थे। उन्हें सबसे पहले २१ जुलाई १९०८ को मजिस्ट्रेट के सामने उपस्थित किया गया।

अन्य सह कैदियों की जानकारी के बिना कि सरकार नरेन्द्र को सरकारी साक्षी बनने के लिए लालच दे रही है, परन्तु उनको गहरा सदेह हो गया था कि नरेन्द्र को सरकारी पक्ष अपने साथ लेने की कोशिश कर रहा है—नरेन्द्र को पुलिस ने कैदियों के कठघरे से निकाल कर उसे सम्राट के गवाह के रूप मे सरकारी पक्ष की ओर से गवाहों के कठघरे में खड़ा कर दिया। नरेन्द्र ने सम्राट की क्षमा के लिए प्रार्थना की और २३ जून, १९०८ को वह स्वीकार हो गई। उसकी २४, २५, २६ जून और ३ जुलाई को गवाही हुई। पुलिस रात्रि को उसे पढ़ा देती थी वह प्रात काल अदालत में कह देता। ऐसी बहुत से राजनीतिक नेताओ का उसने अपनी गवाही में नाम लिया जिनका षडयन्त्र से तनिक भी सम्बन्ध नही था। उसने अपराधियो के सम्बन्ध में ऐसी कहानियां अदालत के सामने कही जो कभी घटित ही नही हुई थी। इससे अपराधियो मे कदी क्रांतिकारियो में बहुत उत्तेजना और आतंक था। उन्हें अपने जीवन के लिए भय नहीं था वरन वे उनके लिए भयभीत थे कि जिनकी उनके साथ सहानुभूति थी और जिन्होंने अपने तरीके से क्रांतिकारियो की सहायता की थी।

अदालत में तथा अलीपुर सेन्ट्रल जेल में जहां नरेन्द्र को रक्खा गया था उसे एक सीमा तक स्वतन्त्रता थी। अदालत के कमरे में वह पुलिस के अधिकारियो से तथा अन्य सरकारी पिछलग्गुओ से मिल जुल सकता था और जब तक कि उसे अदालत उठने के उपरान्त जेल ले जाने का समय नही होता वह पूरी तरह से स्वतन्त्र था। उसे अन्य कैदियों से पृथक करके योरोपियन वार्ड मे जेल में रखा गया था।

वास्तव में स्थिति अत्यन्त भयावह थी। नरेन्द्र की गवाही जो कानून के अन्तर्गत जायज थी सर्वनाश कर सकती थी। सभी यह अनुभव कर रहे थे कि वह केवल अपराधियों के लिए ही घातक नहीं थी वरन उस पवित्र उद्देश्य के लिए भी घातक थी जिसके लिए वे लोग प्रयत्नशील थे।

इसी बीच 'सत्येन' एक कमजोर और रोगी व्यक्ति जो अदालत में कैदी की पोशाक में हाजिर रहता था जुलाई २६, २७, २८ (१९०८) को अनुपस्थित रहा। उसे

सर्व प्रथम १७ जुलाई १६०८ को अस्पताल ले जाया गया था और उसी दिन उसे अस्पताल से छुट्टी दे दी गई थी। वह पुन २७ जुलाई को अस्पताल मे वापिस लौट आया। ३० जुलाई को उसका दो बाहरी व्यक्तियो से साक्षात्कार हुआ।

कनाई' ने ३० अगस्त को भयकर पेट मे दद (कालिक) की शिकायत की और उसी दिन उसे अस्पताल में भर्ती कर दिया गया। उसे एक एसे सह कदी की सहायता करनी थी जो चल तो सकता था परन्तु स्वयं अपने कपडे नहीं पहन सकता था।

२६ अगस्त १६०८ को नरेन' जेल सुपरिन्टेन्डेंट के पास गया और उससे कहा कि उसे अस्पताल में भर्ती एक बम केस के दोषी कदी का सदेश मिला है कि वह अपराध को अगीकार करना चाहता है। सुपरिन्टेन्डेन्ट की स्वीकृति से नरेन सत्येन से उसी दिन सायकाल को तथा दूसरे दिन प्रात काल मिला। दूसरे दिन अर्थात ३१ अगस्त को दोनों के मिलने की और व्यवस्था की गई।

३१ अगस्त को एक कदी चौकीदार आया और उसने योरोपियन वार्ड के अधिकारी से कहा कि सत्यन नरेन से मिलना चाहता है। कंदी ओवरसियर हिगिन्स के साथ 'नरेन' उस अपनी भाग्य यात्रा पर चल पडा। जब वे लोग अस्पताल के समीप पहुँच रहे थे तो 'सत्येन' पहली मजिल पर बराडा की जाली के पास दिखलाई पडा। जसे ही 'नरेन और हिगिन्स' सीढिया चढ़ने लगे वह वार्ड नम्बर एक की ओर चला गया। वे दोनो डिस्पन्सरी के कमरे मे प्रात काल ७ बजे प्रवेश हुए। नरेन' ने हिगिन्स से 'सत्येन' को बातचीत के लिए बुलाने को कहा।

'कनाई' दूसरे वार्ड मे था और उस समय उसके वहां होने की कोई सम्भावना नही थी। वह वार्ड नम्बर एक की ओर से आता दिखलाई दिया। दोनो ने डिस्पन्सरी में प्रवेश किया और वे नरेन (नरेन्द्र) के बहुत समीप आ गए। उसके उपरान्त वे तीनों साथ साथ बरांडे में चले गए। हिगिन्स डिस्पन्सरी में प्रतीक्षा करता रहा।

दस मिनिट भी नहीं हुए थे कि पिस्तोल चलने की आवाज हुई। नरेन' के एक हाथ में गोली लग गई थी वह डिस्पसरी की ओर चिल्लाता हुआ भाग रहा था। "ईश्वर के लिए मुझे बचाओ, वे मुझे मार डालेंगे" उसके पीछे 'कनाई और 'सत्येन' दौड रहे थे। हिगिन्स' ने नरेन को डिस्पसरी में भीतर की ओर ढकेल दिया और स्वय नरेन और उसका पीछा करने वालो के बीच खडा होगया। वह 'कनाई' से भिड गया और जसे ही उसने कनाई' के हाथ के रिवाल्वर को छीनने के लिए हाथ ऊपर उठाया। उसके दाहिने हाथ के पीछे गोली लगी। गोली उसके अगूठे को चीरते हुए निकल गई। हिगिन्स' जमीन पर गिर पडा परन्तु तुरन्त ही उठ बठा। 'नरेन' (नरेन्द्र) डिस्पन्सरी के किनारे पर खडा हुआ था 'सत्येन ने अपने रिवाल्वर से उसकी ओर निशाना लगाया।

तब तक नरेन' के औसान पुन वापस लौट आए और वह डिस्पसरी से निकल कर बाहर भागा और सीढ़िया जल्दी जल्दी उतरने लगा कनाई' और सत्येन' उसका पीछा कर रहे थे, वे दौड़ते जा रहे थे और गोलियां चला रहे थे। एक गोली नरेन के चूतड़ पर पीछे की ओर लगी।

'नरेन' और 'हिगिन्स' भाग कर किसी प्रकार अस्पताल से बाहर निकल गए उन्होंने उस रास्ते को पकड़ा जो कि अस्पताल के फाटक से पूर्व की ओर जाता था

और वीविंग मिल के शेड के दक्षिणी सिरे पर था। शेड के दक्षिण पूर्वी किनारे पर एक दूसरा रास्ता उससे सीधा आकर मिलता था जो कि कारखाने के दोनो भागों के बीच से होकर उस खुली जगह जाता था जो जेल के फाटक के समीप थी और आज भी है।

उनका 'कनाई' और सत्येन' दृढ़तापूर्वक पीछा कर रहे थे। उन्होंने अपने शिकार का पीछा करते हुए कुछ और गोलियां चलाई एक दूसरा कैदी ओवरसियर 'लिंटन' दौड़ कर शीघ्रतापूर्वक उनकी सहायता के लिए आया और उसने 'सत्येन' को जिसे उसे आने का तनिक भी भान नहीं था पकड़ लिया। सत्येन जमीन पर गिर गया। 'कनाई' अपनी दृष्टि अपने शिकार पर लगाए हुए था जबकि लिन्टन आया और उसको पकड़ लिया। कनाई ने अपनी पिस्तौल का कुन्दा उसके मस्तक पर मारा परन्तु अपने को उसकी पकड़ से छुड़ा न सका। इस कठिनाई में गिरफ्तार हो जाने पर भी कनाई ने अपना पूरा बल लगा कर अपने हाथ को छुड़ा लिया और नरेन पर बहुत समीप से अन्तिम गोली चलाई। नरेन चक्कर खाकर गिर गया। उसका आधा शरीर नाली में था और आधा रास्ते पर।

'कनाई' और 'सत्येन' ने इसके आगे किसी और को जख्मी करने या अपने को स्वतन्त्र करने का कोई प्रयत्न नही किया। कनाई ने अपने रिवाल्वर को फेंक दिया जिसकी पाचों गोलिया चलाई जा चुकी थीं। रिवाल्वर बड़े आकार का मार्क आई सी ०४५० बोर का था। सत्येन का रिवाल्वर छोटे आकार का ०३८० बोर ओसबोन का था। उसमे ६ चम्बर थे परन्तु उसमें केवल ४ गोलियां थी जो चलाई जा चुकी थीं। वे रिवाल्वर ऐसे नही थे जो कारतूसो को स्वय बाहर फेंक दें। खाली कारतूसों को एक लोहे की छड़ से धक्का देकर बाहर निकालना पड़ता था।

५ सितम्बर १९०८ को 'इन्दु प्रकाश' ने इस घटना के सम्बन्ध में नीचे लिखी व्यंगात्मक टिप्पणी प्रकाशित की। "बंगाल के अराजकतावादियों को समस्त पृथ्वी के अराजकतावादियों में सबसे अधिक रोमान्टिक माना जाना चाहिए। जहां तक वीरता चतुराई और चालाकी का प्रश्न है उन्होंने रूसी और स्पेन के दुस्साहसी और जोखिम उठाने वालों को भी पीछे छोड़ दिया है। वे सधाशित वार करने में बहुत तेज हैं वे प्रतिशोध में तेज हैं तथा बलशाली योरोपियन वार्डरों को पछाड़ने में और ऐप्रूवर (भेदी साक्षी) को समाप्त करने में बहुत निपुण हैं।"

उसके विचार में "अराजकतावादियों का कानून वास्तव में अत्यन्त भयंकर है" और इस सम्बन्ध मे उनका धर्म सम्भवतः यह है—चाहे आधे दर्जन रीढ़ को चटखाने वाले योरोपियन बच कर निकल जावें लेकिन एक देशद्रोही विश्वासघाती को बचकर न निकलने दो' यह हत्या एक अत्यन्त साहसिक काय था। प्रतिशोध का इससे अधिक साहसी कृत्य की कल्पना करना कठिन है (सेडीशन कमेटी रिपोट पृ १८८)

इस घटना की जाच्ते की जांच होने उपरांत उन दोनों को सेशन सुपुर्द कर दिया गया। 'कनाई ने वकीलों की सहायता लेना अस्वीकार कर दिया। उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया, ७ सितम्बर १९०८ को मुकदमा प्रारम्भ हुआ। अभियोग चलाने वाले पक्ष की कतिपय साक्षियों के बयान लिए गए जिसमें दो कैदी ओवरसियर भी थे तथा मेडीकल आफीसर भी थे। ज्यूरी ने सर्वसम्मति से 'कनाई' को दोषी घोषित कर दिया। सत्येन' के सम्बन्ध में दो के विरुद्ध तीन के बहुमत ने उसे निर्दोष घोषित

किया। 'कनाई' को प्राणदण्ड की सजा दी गई और 'सत्येन का मामला उच्च न्यायालय को भेज दिया गया। २१ अक्टूबर १६०८ को उच्च न्यायालय ने अपना फैसला दे दिया और दोनों अपराधियों को प्राणदण्ड की सजा दे दी।

प्राणदण्ड का 'कनाई' पर तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ा। मानो कुछ हुआ ही न हो। ऐसा प्रतीत होता था कि उस प्राणदण्ड की घटना से वह तनिक भी विचलित नहीं हुआ। उसके मुख मण्डल पर दैवी शान्ति की आभा निखर रही थी जो उस शांत हृदय और मस्तिष्क का नैसर्गिक प्रकाश था। उसके मुख पर दुःख या परेशानी का लेश मात्र भी चिह्न प्रगट नहीं हुआ। उसका मुख एक सुन्दर पूरे खिले हुए कमल के समान दैदीप्यमान था जो उसके अन्तर के हृदय का प्रतिबिम्ब था, क्योंकि उसका ध्येय पूरा हो गया था। उसने मृत्यु का भी सामना उसी शान्ति और भय से किया जैसा कि जीवन के प्रति उसका दृष्टिकोण था। स्पष्ट दिखलाई देता था कि उसको जीवन के चिंतन सत्य की अनुभूति हो गई थी। उसके लिए कारागार, प्रहरी, सूली, फांसी का तख्ता एकाकार होकर शून्य में परिवर्तित हो गए थे मृत्यु दण्ड सुनने के उपरान्त उसका वजन १६ पौंड बढ़ गया जो इस बात का निश्चित प्रमाण था कि उसका अन्तर अत्यन्त शक्तिशाली विचारों से अभिभूत हो रहा था और वह दैवी अनुकम्पा का अधिकारी बन कर दिव्य लोक में प्रवेश कर चुका था।

फैसला हो जाने के बाद उसने अपने भाई के अतिरिक्त अन्य किसी मित्र या सम्बन्धी से मिलना अस्वीकार कर दिया। वह अपने भाई से ६ अगस्त को मिला। उसने पुरोहित के द्वारा अन्तिम संस्कार कराने से भी इनकार कर दिया।

फांसी लगने वाले दिन से पूर्व की रात्रि को वह इतनी गहरी नींद में सोया कि जेल के कर्तव्य परायण अधिकारियों को उसे फांसी के लिए तैयार होने के लिए निद्रा से जगाना पड़ा, वह उठा और प्रातःकाल की साधारण क्रियाओं से निवृत्त होकर वह संसार से कूच करने के लिए तैयार हो गया। उसको ६ बजकर पांच मिनट पर जकड़ कर बांध दिया गया वह फांसी के तख्ते तक चार योरोपियन वार्डरों से घिरा हुआ चल कर गया। उसके कदम मजबूत थे और वह इस सब की ओर उसी प्रकार उदासीन था जैसा कि वह मुकदमे के काल में उदासीन रहा था।

बिना किसी की सहायता के वह स्वयं फांसी के तख्ते पर चढ़ गया। उसके चेहरे पर काला टोप चढ़ा दिया गया। फांसी का फन्दा उसकी गर्दन में ठीक कर दिया गया। संकेत हुआ लीवर खींचा गया 'कनाई' कुछ फीट नीचे गया और शीघ्र ही 'कनाई' का मृत शरीर रस्सी से लटका हुआ दिखलाई दिया।

यह कभी भी न भूली जा सकने वाली घटना १० नवम्बर १६०८ को अलीपुर सेंट्रल जेल में प्रातःकाल लगभग सात बजे हुई। उसके भौतिक शरीर को क्योरा टोला कालीघाट में चिता पर भस्म करने का निश्चय किया गया। जेल के फाटक से हजारों व्यक्तियों का स्वतः एक जुलूस बन गया और वह श्मशान घाट की ओर चल पड़ा।

बहुत बड़ी संख्या में स्त्री पुरुष वीर 'कनाई' को अपनी अन्तिम श्रद्धांजलि भेंट करने श्मशान भूमि में एकत्रित हो गए थे। जब 'कनाई' का मृत शरीर आता दिखलाई पड़ा तो वे फूट फूट कर रो पड़े। उसी स्थान पर एक सज्जन ने चन्दा करके कई मन चन्दन की लकड़ी मंगवाली।

जब मृत शरीर भस्म हो गया तो उसकी हड्डियों को (पवित्र अवशेष रूप में लोग ले गए। 'कनाई' की भस्म भी भागीरथी गंगा के अर्पण न की जा सकी। लोगों ने चांदी के डिब्बों तथा अन्य बर्तनों में उस पवित्र भस्म को भर लिया। भस्म को लिफाफे में भर लिया गया जिससे 'कनाई' के बाहर रहने वाले भक्तों और प्रशंसकों को वह भेजी जा सके। स्थानीय फूल बेचने वाले एक दूसरे से बिना मूल्य फूल देने के लिए प्रतिस्पर्द्धा कर रहे थे, वे अपने फूलों को उस वीर के शव पर चढ़ाने के लिए आतुर थे।

दोपहर के बाद कालेज स्क्वेयर से एक जलूस बन कर सड़कों पर चला। जलूस गाता जा रहा था " जय आवे जीवन चोले " स्त्रियां अपने शंखों से घोर नाद कर रही थीं और एक वृद्ध पुरुष गा रहा था—

'जो कुछ प्रिय है उसके प्रेम को भूल जाओ।
संसार के दुःखों और चिन्ताओं का विस्मरण करदो ॥
निद्रा में अपनी चमकने वाली आंखों को बंद करलो।
जहां न कोई अन्धकार है और न आंसू हैं।
जहां वीर पुरुष के शव पर गौरव की वर्षा होती है ॥
देखो 'कनाई' ऊपर स्वर्ग को जा रहा है।

रिवाल्वर

जनता इस बात को समझ ही न सकी केवल अटकलें ही लगाती रही कि जेल में जहां कड़ी निगरानी रक्खी जाती है किस प्रकार रिवाल्वर फाटक से उन दोनों कैदियों के पास तक छिपा कर पहुंचाए गए। वो लोग कौन हो सकते हैं जो कि छिपा कर रिवाल्वरों को जेल में ले गए और वे उन दोनों के पास किस प्रकार पहुंचे। इसके अतिरिक्त जेल के अस्पताल में वे दोनों किस प्रकार रिवाल्वरों को अपने पास गुप्त रूप से रख सके। विशेषकर उनमें से एक छोटे आकार का नहीं था जो आसानी से छिपाया जा सकता। वह भारी आकार में बहुत बड़ा पुराने कल्ले नमूने का रिवाल्वर था।

इस बात से रहस्य और भी गहरा हो जाता है कि ३० अगस्त १९०८ को सभी व्यक्तियों की एक साधारण जेल परेड प्रातःकाल हुई थी। जो भी हो जो लोग इस रहस्य का उद्‌घाटन कर सकते थे उन्होंने वैसा नहीं किया। परन्तु अब यह सभी की जानकारी में है कि दो मित्रों ने अपने हाथ में रिवाल्वरों को पेपर में लपेट रक्खा था और जब वे कैदियों से मिल कर जेल से बाहर आ रहे थे तो उन्होंने वे दोनों रिवाल्वर मिलकर वापस जेल में लौटने वाले कैदियों को दे दिए। यह उल्लेखनीय है कि रिवाल्वरों को ऐसी होशियारी से छिपाया गया कि जेल के अधिकारी और वार्डरों की दृष्टि उन पर नहीं पड़ी जो कि कैदियों से मिलने के समय वहां मौजूद थे और जिन्हें उच्च अधिकारियों ने चेतावनी दे रक्खी थी कि मिलने के समय उन पर कड़ी निगाह रक्खी जावे।

सत्येन्द्र नाथ

सत्यन की फांसी को कुछ दिनों के लिए इसलिए रोक लिया गया कि उसके लेफ्टीनेंट गवर्नर को जो याचना पत्र दिया था उसका परिणाम ज्ञात हो जावे। इसी बीच पंडित शिवनाथ शास्त्री सत्येन से उसकी प्रार्थना पर जेल में ९ नवम्बर १९०८ को मिले। उसका अन्तिम पत्र जो उसने अपने एक सम्बन्धी को लिखा उससे प्रगट होता है कि उसको अपनी माता के प्रति गहरा प्रेम और श्रद्धा थी। उसने लिखा —

मेरी प्रथम और अन्तिम प्रार्थना यही है कि मेरी माता को वृद्धावस्था में

तुम उसकी ठीक से देखभाल करना। मेरी इच्छा है कि मेरा दाह संस्कार धार्मिक पद्धति से हो।"

सत्येन नाथ बोस को २१ नवम्बर १६०८ के प्रातःकाल फांसी दी गई और उसका दाह संस्कार जेल के कम्पाऊंड में ही कर दिया गया।

कनाई' की फांसी के उपरान्त उसके दाह-संस्कार के समय जो असंख्य जनता ने विशाल और उत्तेजनापूर्ण प्रदर्शन किया था उस अनुभव से लाभ उठाकर सरकार ने जेल कोड के नियम ८४० को संशोधित कर दिया जिसके अनुसार जेल के अधिकारियों को यह अधिकार था कि यदि फांसी का दंड पाने वाले के शव को उसके सम्बन्धी या मित्र न मांगें तो जेल अधिकारी उसको पृथ्वी में गाड़ दें या उसका दाह संस्कार कर दें। सरकार ने १७ नवम्बर १६०८ को एक विज्ञप्ति द्वारा इस प्रावधान में परिवर्तन कर दिया और यह आज्ञा प्रदान करदी।

"शव सम्बन्धियों और मित्रों को उस दशा में सुपुर्द नहीं किया जावेगा यदि जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट की सम्मति में उसको सार्वजनिक प्रदर्शन का माध्यम बनाए जाने अथवा उसके प्रति अनुचित व्यवहार होने की सम्भावना हो।"

सरकार किसी भी प्रकार और किसी भी रूप में प्रदर्शन न होने देने के लिए दृढ़ निश्चय थी। कुछ व्यक्तियों के मस्तिष्क में यह बात उठी और उन्होंने निश्चय किया कि 'सत्येन' के पुतले को जेल से जलूस में ले जाया जावे और गंगा के तट पर उसका अन्तिम धार्मिक संस्कार किया जावे। सरकार ने तुरन्त ही दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा १४४ के अन्तर्गत सत्येन के सम्बन्ध में कोई भी जलूस निकालने की मनाई करदी क्योंकि यदि उसकी आज्ञा दी जावेगी तो उससे जनता को बाधा पड़ने तथा क्षोभ उत्पन्न होने की सम्भावना है। उससे जन शांति और सुव्यवस्था के भंग होने की सम्भावना है। इसका फलितार्थ यह था कि जनता को जलूस में भाग लेने की आज्ञा नहीं थी।

'सत्येन' का गत जीवन राजनीतिक था। मिदनापुर के कृषि राजनीतिक सम्मेलन के अवसर पर वह राष्ट्रीय स्वयं सेवकों का कप्तान था। जबकि वहां नेताओं में राजनीतिक प्रश्नों पर क्या रुख रहे इस पर मतभेद हुआ तो वह गरम दल में सम्मिलित हो गया। १ अप्रेल १६०६ को बने लैंड ऐक्यूजीशन विभाग की सेवा से वह हटा दिया गया जहां वह कार्य करता था।

२८ जून १६०८ को मिदनापुर में एक अभियोग में पहले उस पर हत्या में सहायता करने का अपराध लगाया गया। कुछ समय बाद उस पर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध युद्ध छेड़ने के लिए अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद एकत्रित करने का दोष आरोपित किया गया। परन्तु इस अपराध को सिद्ध करने के लिए भी कोई साक्षी नहीं था इस कारण वह जमानत पर छोड़ दिया गया।

जहां सत्येन रहता था उस मकान में एक बन्दूक और तीन तलवारें जिनका कोई लाइसेंस नहीं था तलाशी में पाई गई। प्रथम अभियोग के एक मास के उपरान्त पुलिस ने आर्म्स ऐक्ट के अन्तर्गत सत्येन तथा उसके अभिभावकों का चालान किया।

■ जुलाई १६०८ को आर्म्स ऐक्ट की धारा (ई) और (एफ) के अन्तर्गत अपने भाई की बन्दूक बिना लाइसेंस के ले जाने के अपराध में सत्येन' को दो मास की कड़ी कैद की सजा दे दी गई। १८ जुलाई १६०८ को सेशन जज ने

उसकी अपील को अस्वीकार कर दिया। इसी बीच अलीपुर बम अभियोग में उसका नाम लिया गया और उसे उस मुकदमे के लिए कलकत्ता भेज दिया गया। उसके भीतर में मातृ भूमि की सेवा की भावना तीव्र हो उठी थी वह लगातार इस प्रयत्न में था कि वह कोई ऐसा कार्य करे कि जिन बंधनों ने भारत को जकड़ रक्खा है वे निबल हो जावें।

'कनाई' तथा 'सत्येन' की फांसी से जिस प्रकार का अप्रत्याशित और अभूतपूर्व दुख और क्षोभ जनता में उत्पन्न हुआ और वह भी उस समय जबकि ब्रिटिश शासन को जनता श्रद्धा से नहीं वरन् भय और आतंक से देखती थी इस बात की ओर इंगित करता था कि हवा का रुख किस ओर बह रहा है। यदि वह किसी बात को प्रमाणित करता था तो वह यह थी कि राजनीतिक स्वतन्त्रता की भावना जो जनता के हृदय में दबी हुई थी उसे फूट पड़ने के लिए एक रास्ता और माध्यम प्राप्त हो गया जिसके द्वारा वह अपनी दबी हुई मनोभावना को उस अवांछित ढंग से व्यक्त कर सकी। ब्रिटिश सरकार ने पुनः उस भावना को भीतर ही भीतर दबाने का प्रयत्न किया उसका परिणाम यह हुआ कि अधिकाधिक खून बहा और तब तक बहता रहा जब तक कि उस बलवान और जिद्दी शत्रु के हाथ से देश की स्वतन्त्रता छीन नहीं ली गई।

स्वर्ग की देन (१६०८—१६०६)

मुजफ्फरपुर के कांड ने सरकार के मस्तिष्क के सतुलन को नष्ट कर दिया। वह प्रतिशोध की भावना से इस भयंकर रूप से पीड़ित हो गई कि वह अपने शिकार को मृत्यु के द्वार तक भेजे बिना रुकती ही नहीं थी। अधिकारियों को यह बात स्पष्ट हो गई थी कि देशभक्ति की भावना बीस वर्ष से कम की आयु के बालकों में भी गहरी बैठ गई और वे भी स्वतन्त्रता के युद्ध क्षेत्र में उसी उत्साह और साहस से उतर पड़े हैं कि जिस साहस और उत्साह से उनके बड़े उतर रहे थे। ऐसे बहुत से उदाहरण सामने आए जिनमें अल्पवयस्कों को ऐसा कठिन काम सौंपा गया कि जो उनके लिए भी गौरव और प्रशंसा का कारण होता तथा जो आयु तथा बुद्धि में उसके बहुत आगे थे। अशोक नन्दी उतीस वर्ष या ठीक बीस वर्ष का तरुण था परन्तु उसको यह गौरव प्राप्त था कि वह राज्य सरकार के विरुद्ध दो गम्भीर कांडों में एक साथ शामिल था।

२ मई १६०८ को अशोक नन्दी १३४ हैरिसन रोड से गिरफ्तार हुआ। यह मकान उस महान षड्यन्त्र की एक शाखा था जिसका केन्द्र मानिकतल्ला के मुरारी पुकुर गार्डन में था। प्रथम उस पर विस्फोटक पदार्थ सम्बंधी ऐक्ट के अन्तर्गत मानिकतल्ला में निर्मित बम रखने का आरोप लगाया गया। दूसरे अभियोग में उस पर सम्राट के विरुद्ध 'वारि दु कुमार घोष' तथा अन्य अलीपुर षड्यन्त्र के क्रांतिकारियों के साथ रह कर युद्ध करने का आरोप लगाया गया।

प्रथम अभियोग २८ जुलाई को आरम्भ हुआ। उसमें ७ अगस्त १६०८ को उच्च न्यायालय ने उसे दोष मुक्त कर दिया। प्रत्येक न्यायप्रिय व्यक्ति यह आशा करता था कि उसको बंधन मुक्त कर दिया जावेगा। परन्तु सरकार ने एक दूसरी ही कार्य प्रणाली अपनाई। दूसरे अभियोग में दंडित होने की आशा में उसे जेल में ही रोके रक्खा गया।

जबकि वह जेल में था तो नन्दी को नितम्ब संधि (चूतड़ के जोड़ की हड्डी) का क्षय रोग हो गया। उसका स्वास्थ्य बहुत तेजी से विनाशजनक रूप में गिरने लगा। बार बार जमानत के लिए प्रार्थना पत्र दिए गए परन्तु पुलिस के हस्तक्षेप पर [illegible]

ने उन प्रार्थना पत्रों को अस्वीकार कर दिया।

अलीपुर षडयन्त्र के अभियोग में सेशन जज ने उसे सात वर्ष के निर्वासन का दण्ड दे दिया उसके विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की गई जो देर तक वहां चलती रही।

इस बीच प्रार्थी नन्दी की शारीरिक स्थिति गम्भीर हो गई। उसके दुबले पतले शरीर से ग्यारह पौंड वजन घट गया। ११ मई १६०६ को पुनः उच्च न्यायालय में इस आधार पर जमानत की प्रार्थना की गई क्योंकि उच्च न्यायालय में अपील की सुनवाई दो मास से पूर्व नहीं होगी। इस बात की आशंका है कि तब तक अभियुक्त की मृत्यु हो जावेगी। उच्च न्यायालय के माननीय जज कानून के अक्षरों से चिपटे रहे और उन्होंने यह निर्णय दिया कि सब मान्य व्यवहार नीति यह है कि दीर्घकालीन कैदियों को जबकि उनकी अपील की सुनवाई होने वाली हो जमानत पर नहीं छोड़ा जाता।

सम्राट के वकीलों ने जमानत की प्रार्थना का विरोध इस आधार पर किया कि अभियुक्त इस समय जेल होस्पीटल के क्षय रोग के वार्ड में है जो बहुत हवादार और आराम का स्थान है। सरकारी तन्त्र में न्याय के विपरीत आचरण करने वाले और घृणित विचारों का समर्थन करने वाले भद्र कहे जाने वाले लोगों की कमी नहीं थी। चौबीस परगने के मजिस्ट्रेट ने लिखा कि वह दुमंजिला हवादार वार्ड है जिसमें दोहरा बराडा है और वह क्षयरोगी के खुली वायु के उपचार के लिए बहुत अधिक उपयुक्त है। अपनी उदारता में वह यह लिखना भी नहीं भूला कि वह कलकत्ते के साधारण मकानों से कहीं अधिक अच्छा है और सम्भवतः उस स्थान से भी अच्छा है कि जहां रोगी जेल के बाहर ले जाकर रक्खा जावेगा।

सिविल सर्जन ने रिपोर्ट दी कि उसमें अब भी जीवन शक्ति के चिन्ह विद्यमान हैं उसकी दशा मरणासन्न नहीं है। देश बन्धु चित्तरंजन दास जो अभियुक्त की पैरवी कर रहे थे उन्होंने कहा—"यह खुली वायु का उपचार जो कि एक रोगी के लिए इतना अधिक आवश्यक है उन्हें तब तक ध्यान में नहीं आया जब तक कि लार्डशिप के आदेश को उन पर लागू नहीं किया गया। इसके अतिरिक्त इस बात की बहुत अधिक सम्भावना है कि अभियुक्त दोष मुक्त हो जावे क्योंकि उसके विरुद्ध अभियोजक निश्चित रूप से कोई भी अपराध सिद्ध नहीं कर सके। जिस दिन लार्डशिप आदेश उन पर लागू किया गया उसी दिन रोगी को अस्पताल भेज दिया गया।

एक जिम्मेदार डाक्टर ने जो कि सरकारी नौकरी में था रिपोर्ट दी कि "वह गम्भीर रूप से बीमार है" जज ने निर्णय दिया कि रोगी का रोग ही उसके एकाकी कैद का एकमात्र कारण था और अब जबकि उचित और उपयुक्त प्रबन्ध कर दिया गया है और रोगी के लिए जो कुछ भी उपयुक्त और वाञ्छनीय माना जा सकता है वह कर दिया गया है तो आदेश रद्द किया जाता है।

रोगी का स्वास्थ्य अत्यन्त चिन्ताजनक था। देश बन्धु चित्तरंजन दास ने व्यथित पिता को लफ्टीनेन्ट गवर्नर से प्रार्थना करने का परामर्श दिया, जिसका हृदय सम्भवतः जज से अधिक कोमल हो जिसके न्याय करने के कर्तव्य के कारण उसके हृदय में कोई कोमल और सुकुमार भावनाएं सम्भवतः न रही हों। पिता ने अपने रोगी पुत्र को मुक्त करने के लिए प्रार्थना की। यदि यह सम्भव न हो तो विकल्पस्वरूप उसके दण्डादेश के निष्पादन को निलम्बित कर दिया जावे और जब तक अपील का

फैसला न हो उसे घर जाने दिया जाय। क्योंकि इस बात की बड़ी आशंका है कि यदि उसकी अपील बाद को स्वीकार भी कर ली जावे और उच्च न्यायालय की आज्ञा से वह दोषमुक्त भी कर दिया जाये तो भी वह अपनी स्वतन्त्रता का सुख भोग करने के लिए तब तक जीवित ही न रहे।

२ जुलाई १६०६ को बंगाल सरकार की आज्ञा से अशोक नन्दी को जमानत पर छोड़ दिया गया। १७ अगस्त १६०६ को उच्च न्यायालय के सामने जब उस अभियोग की कार्यवाही प्रारम्भ हुई तो अभियुक्त के वकील देशबन्धु चित्तरंजनदास ने न्यायाधीश महोदय से कहा कि अशोक नन्दी सरकार के प्रतिशोध की अग्नि से तथा सरकार की आज्ञानुसार कार्य करने से बच गया। क्योंकि पिछली रात्रि को वह एक ऐसे स्थान को चला गया कि जहां पहुँचने के लिए कानून के लम्बे हाथ भी बहुत छोटे हैं।

'अशोक नन्दी' के अभियोग में २० नवम्बर १६०६ को उच्च न्यायालय ने उसकी अपील को स्वीकार करते हुए उसके पक्ष में फैसला किया परन्तु वह न्याय व्यर्थ था। कई महीने की अनिश्चितता जांच पड़ताल अभियोग और अपील के उपरान्त जब वह मुक्त हुआ तो बहुत देर हो चुकी थी। वह स्वतन्त्रता का सुख अनुभव करने के लिए इस धरा पर नहीं रहा। उनके माता पिता के लिए यह कोई सन्तोष की बात नहीं थी कि उनका प्रिय पुत्र अण्डमन में सात लम्बे वर्षों तक जेल में रहने से बच गया। करुणामय भगवान ने अपनी असीम अनुकम्पा से उसको इस नाशवान शरीर के बन्धन से मुक्त कर दिया जो उस पर जब से पुलिस की कुदृष्टि उस पर पड़ी मंडरा रही थी।

संगठनात्मक विस्तार (१६०६-१६१०)

मुजफ्फरपुर काण्ड तथा अलीपुर षड्यन्त्र के अभियोग ने बंगाल में सर्वत्र फैले हुए क्रान्तिकारी संगठनों की विशालता के सम्बन्ध में अधिकारियों की आंखें खोल दीं। क्रान्तिकारियों के संगठनों की शाखाएं दूर दूर फैली हुई थीं जो कि अंग्रेजों को इस देश से निकाल बाहर करना चाहते थे। उन क्रान्तिकारी संगठनों के आकार और शक्ति का परिचय सरकार को उन अभियोगों से मिला जो कि सरकार ने क्रान्तिकारी आंदोलन की प्रारम्भिक अवस्था में चलाए थे।

व्यक्तियों और व्यक्ति समूहों के विरुद्ध किसी प्रगट कार्य के लिए अथवा किसी ऐसे कार्य के लिए जो कि स्पष्ट रूप से षड्यन्त्र की परिभाषा में नहीं आते फौजदारी अभियोग चलाए गए। जनता की उन अभियोगों के प्रति यह धारणा थी कि यह अभियोग बहुदेशीय हैं जिनका आधार जातीय अहंकार, भय, प्रतिशोध की भावना तथा प्रशासनिक अकुशलता पर निर्भर है। जो भी कुछ हो उन अभियोगों से बंगाल तथा अन्य क्षेत्रों के क्रान्तिकारी विचारों और कार्यों का केवल अधूरा चित्र ही सामने आया।

भारत सरकार के गृह सदस्य (होम मेम्बर) श्री हारवे अडम्सन ने ११ दिसम्बर १६०८ को इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काऊंसिल में एक विधेयक इस आशय का उपस्थित करते हुए कि जिससे बिना ज्यूरी की सहायता के शीघ्रता से न्यायालय अन्वीक्षा (ट्राइल) कर सकें। उन गुप्त क्रान्तिकारी संस्थाओं की रूपरेखा, उनके सदस्यों और उनके कार्यों का यह विवरण दिया था —कि यह राज्य विरोधी संगठन

कहलाती हैं जिनके सदस्य स्वयं सेवक होते हैं। वे सब प्रथम १९०२ में स्थापित हुई। परन्तु १९०६ तक उनके सम्बन्ध में कुछ अधिक ज्ञात नहीं हुआ। ब्रिटिश विरोधी भावना के अधिक घनीभूत हो जाने पर इस प्रकार की समितियों का तेजी से विस्तार हुआ, विशेषकर पूर्व बंगाल के जिलों में उनका जाल बिछ गया। उनका विचार या अधिकांश संगठनों का उद्देश्य युवकों को अस्त्र शस्त्र चलाने की शिक्षा देना और उन्हें सम्भावित देश व्यापी क्रांति में सक्रिय भाग लेने के योग्य बनाना है। वे अपने युवकों को ड्रिल कराते हैं कृत्रिम युद्ध की शिक्षा देते हैं परेड करते हैं और युवकों में युद्ध की भावना भरते हैं। उनका जो अंतिम उद्देश्य देशव्यापी विद्रोह करना है वे उसको छिपाने का प्रयत्न नहीं करते। इसके अतिरिक्त यह आम शिकायत है कि वे सदैव और लगातार योरोपियनों को अपमानित करने का प्रयत्न करते हैं और उसको गौरव पूर्ण मानते हैं। कुछ घटनाएं ऐसी भी हुई कि जिनमें गम्भीर रूप से मारपीट की गई डाके डाले गए, क्रांतिकारियों सम्बन्धी जांच पड़ताल में हस्तक्षेप किया गया, साक्षी को दबाया गया यहां तक अभियोजन के महत्वपूर्ण साक्षी को संसार से ही हटा दिया गया।

सरकार को ऐसी रिपोर्ट मिली है कि इन गुप्त समितियों ने अपने कार्य को विभिन्न शाखाओं में बांट लिया है जिसका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है कि एक शाखा प्रकाशन तथा समाचार पत्रों की व्यवस्था करती है। सैनिक शाखा अस्त्र शस्त्र तथा बमों का निर्माण करती है और उनको एकत्रित करती है। वित्तीय शाखा का मुख्य कार्य कोष इकट्ठा करना है। उसका गुप्तचर विभाग पुलिस की गतिविधियों पर दृष्टि रखता है। परिस्थिति के अनुसार सर्वाधिक उत्तरदायित्व का कार्य अत्यन्त विश्वासनीय परीक्षित कार्यकर्ताओं को ही सौंपा जाता है।

सरकार ने शीघ्रता में इस प्रकार के संगठनों को जो कि पुलिस की दृष्टि में गैरकानूनी कार्यवाहियों में संलग्न हैं दबाने के लिए एक अधिनियम पारित किया। गजट आफ इंडिया के ६ जनवरी १९०९ के असाधारण अंक में सरकार की आज्ञा से नीचे लिखे संगठन गैर कानूनी घोषित कर दिए गए।

(१) अनुशीलन समिति ढाका (२) स्वदेश बांधव समिति बारीसाल (३) व्रति समिति फरीदपुर (४) सुहृद समिति मैमनसिंह (५) साधना समाज मैमनसिंह।

दो मास उपरांत १ मार्च १९०९ को कलकत्ते की 'युवक समिति' खुलना के सतखिरा सब डिवीजन में स्थित कुमिरा की 'व्रति समिति' को भी इस सूची में जोड़ दिया गया।

व्यक्तिगत सावधानियां (१९०७ १९१०)

बहुत बड़ी संख्या में जो राजनीतिक घात किए गए उनका एकमात्र उद्देश्य क्रांतिकारी कार्यों के लिए केवल कोष इकट्ठा करना ही नहीं था किन्तु एक प्रमुख उद्देश्य यह भी था कि तरुण सदस्यों के मस्तिष्क को साहसिक और जोखिम भरे कार्यों को करते हुए यंत्रणा को सहन करने, तथा परिवार के प्रति उदासीन रहने की मानसिक भावना उत्पन्न करने और अपने जीवन तथा शरीर के प्रति मोह न रखने के लिए तैयार किया जाय।

कतिपय घटनाएं और उनसे सम्बन्धित अभियोगों का क्या परिणाम निकला वह यहां तिथिक्रम के अनुसार दिया जाता है।

चिंग्रीपोटा—सब प्रथम घटना चिंग्रीपोटा रलवे स्टेशन जो यस सोनारपुर चौबीस परगने पर घटी। जबकि ६ दिसम्बर १६०७ को रेलवे का खजाना जा रहा था उसका रुपया लूट लिया गया। इस घटना के सम्बन्ध मे कुछ स्थानीय युवकों को गिरफ्तार किया गया और उनमें से तीन पर अभियोग चलाया गया। परन्तु अभियोग को प्रमाणित करने के लिए साक्षी के अभाव म अभियोग को ११ फरवरी, १६०८ को वापस ले लिया गया।

बाराह—ढाका जिले के बाराह स्थान पर जो पुलिस स्टेशन नवाब गंज मे स्थित था दो जून १६०८ की रात्रि को एक डकती डाली गई। इसमे चार व्यक्ति और एक चौकीदार डाका डालने वालों का पीछा करने म मारे गए। इस सम्बन्ध मे बहुत बड़ी सख्या में युवकों को गिरफ्तार किया गया और उनम से चार को उच्च न्यायालय के एक विशेष ट्रिब्यूनल के समक्ष १६ अप्रेल, १६०६ को उपस्थित किया गया। परन्तु अपराध प्रमाणित न हो सका और १० मई १६०६ को चारों अभियुक्तों को दोषमुक्त कर अभियोग को समाप्त कर दिया गया।

बाजीतपुर—१५ अगस्त, १६०८ को बाजीतपुर मैमनसिंह म एक डाका पड़ा उसके सम्बन्ध म जो अभियोग चला उसमें दो व्यक्तियों को क्रमश डेढ़ वर्ष और एक वर्ष के कठिन परिश्रम का दण्ड दिया गया।

बिपाटी—बारह व्यक्तियों के विरुद्ध १६ सितम्बर, १६०८ को हुगली जिले के भद्रेश्वर पुलिस स्टेशन म बिपाटी स्थान पर पड़ी डकती के अपराध मे अभियोग चलाया गया, उच्च न्यायालय के विशेष ट्रिब्यूनल ने २६ मार्च १६०६ को अपना निर्णय दिया जिसमें एक अभियुक्त को ६ वर्ष, दो को पांच वर्ष, और एक को तीन वर्ष ६ महीने का कठिन कारावास दिया गया।

मिदनापुर षड्यन्त्र—सितम्बर, १६०८ में लगभग बीस अभियुक्तों के विरुद्ध एक अभियोग आरम्भ हुआ। अभियोग काल म कतिपय अभियुक्तों को बहुत बड़ी जमानतों (२० हजार और ५० हजार रुपये के बीच में थी) पर छोड़ा गया। ६ नवम्बर १६०६ तीन के अतिरिक्त सभी अभियुक्तों पर से अभियोग उठा लिया गया। लम्बे समय तक अभियोग चलने के उपरान्त दण्डित अभियुक्तों जिनमें दो को दस दस वर्ष और एक को सात वर्षों का निर्वासन का दण्ड दिया गया था उन सभी को उच्च न्यायालय ने १ जून, १६०६ को मुक्त कर दिया उनको दोष प्रमाणित नहीं हुआ।

नारिया—फरीदपुर जिले में पालोंग पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत एक छोटे से गांव 'नारिया' म एक अत्यन्त सनसनीपूर्ण दृश्य उपस्थित हुआ जब कि एक डकती में बहुत बड़ी सख्या म युवकों को भाग लेते हुए देखा गया। डाका डालने वाले सभी लोग लूट का माल लेकर बिना किसी कठिनाई के भाग गए। पुलिस ने सदेह मे लगभग बीस व्यक्तियों को पकड़ लिया जिन मे से १६ पर अभियोग चलाया। आरम्भ में ही २४ फरवरी १६०६ को अधिकांश अभियुक्तों को अदालत ने छोड़ दिया और दो की जमानत मजूर करली गई। अन्त में यथेष्ट साक्षी के अभाव मे अभियोग नहीं चल सका।

मोरेहाल—२ दिसम्बर १६०८ को हुगली जिले के कृष्णनगर पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत मोरेहाल म पड़ी डकती के सम्बन्ध में मार्च, १६०६ में लगभग आठ

दजन व्यक्तियों पर अभियोग चलाया गया। नीचे के न्यायालय ने एक को छोड़ कर सभी अभियुक्त मुक्त कर दिए गए। केवल एक अभियुक्त का अभियोग उच्च न्यायालय को भेजा गया जिसे उच्च न्यायालय ने ८ जुलाई १९०६ को सात साल के कठोर कारावास का दण्ड दिया।

नेतरा—डायमण्ड हारबर पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत नेतरा गाव में २५ अप्रेल, १९०६ को डाका पड़ा जबकि बहुत से व्यक्तियों ने एक मकान पर धावा बोल दिया और बहुत बड़ी धनराशि तथा यथेष्ठ आभूषण लेकर भाग गए। इस सम्बन्ध मे बहुत से व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया और लम्बे समय तक उन्हें हिरासत मे रक्खा गया। गिरफ्तार व्यक्तियों में से केवल कुछ ही के विरुद्ध अभियोग चलाया गया जो २ जुलाई, १९१० तक चलता रहा जबकि न्यायालय ने सभी अभियुक्तों को छोड़ दिया।

पुलिस ने उन लोगों का सम्बन्ध प्रान्त में सुदूर स्थानों पर हुई दूसरी घटनाओं से जोड़ने का प्रयत्न किया और ५० व्यक्तियों को सदेह मे अपनी हिरासत में ले लिया और उनके अतिरिक्त अन्यों पर भी अभियोग चलाया जो जो हावड़ा गैंग केस" के नाम से प्रसिद्ध है।

नागला—खुलना जिले के ताला' पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत 'नागला' नामक स्थान पर डाके के सम्बन्ध में १६ अप्रेल, १९०६ को लगभग दस व्यक्ति गिरफ्तार किए गए। एक विशेष ट्रिब्यूनल के सामने अभियोग रक्खा गया। उसने ३ मार्च, १९१० को अभियोग की सुनवाई प्रारम्भ किया। पुलिस अभियोजक पक्ष मे एक अभियुक्त द्वारा अपराध को अंगीकार कर लेने के कारण अभियोग को पूर्ण रूप से उसके आधार पर ही चलाया था। १५ मार्च को मुखबिर ने (भेदी साक्षी) अपने बयान को बदल दिया और अपराध स्वीकारोक्ति को वापस ले लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकार को दूसरे ही दिन अभियोग वापस लेना पड़ा। ६ जून, १९१० को उसी ट्रिब्यूनल के सामने अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए सरकार ने उस मुखबिर पर इण्डियन पैनल कोड की धारा ३४५ के अन्तर्गत अभियोग चलाया। ट्रिब्यूनल ने उसे २७ जून १९१० को सात वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दे दिया।

राजेन्द्रपुरा—११ अक्टूबर, १९०६ को जोदेसपुर और राजेन्द्रपुर डाका के बीच चलती रैलगाड़ी में डाका पड़ा जिसमे बहुत बड़ी धनराशि लूट ली गई। अभियुक्त लूट के माल को लेकर चम्पत हो गए। बाद को उसम से आधा माल खोज में मिल गया।

पहले की तरह ही इस घटना के सम्बन्ध में नवम्बर भर बहुत सी गिरफ्तारियां होती रही परन्तु जिस व्यक्ति की बहुत खोज थी और जिसकी सबस अधिक आवश्यकता थी वह सफलतापूर्वक बहुत लम्बे समय तक गिरफ्तारी से बचता रहा। इसी बीच सरकार ने डकैती का अभियोग आरम्भ कर दिया जिसमें २६ फरवरी, १९१० को सभी अभियुक्त मुक्त कर दिए गए।

भागा हुआ अभियुक्त १० नवम्बर १९ ० को मालदा जिले में गिरफ्तार हुआ। उसके विरुद्ध ढाका स्टेशन जज के न्यायालय में १८ अप्रेल, १९११ को अभियोग चलाया गया ज्यूरी' ने उसे निर्दोष घोषित कर दिया। अभियोग को उच्च न्यायालय को सुपर्द कर दिया गया और उच्च न्यायालय ने अगस्त, १९११ को उसे

आजीवन निर्वासन का दण्ड दे दिया।

हल्दू बारी—२८ अक्टूबर १६०६ के ऊषाकाल में नदिया जिले के दौलतपुर पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत हल्दू बारी स्थान पर एक डकैती हुई। पुलिस ने संदेह में बहुत से लोगों को बिना समझे बूझे गिरफ्तार कर लिया। उच्च न्यायालय के एक विशेष ट्रिब्यूनल के सामने दस व्यक्तियों पर इंडियन पैनल कोड की धारा ३०७ और ३६५ के अन्तर्गत अभियोग चलाया गया। २१ अप्रैल, १६१० को निर्णय दिया गया जिसमें ५ अभियुक्तों को आठ आठ वर्ष, और एक को सात वर्ष का कठोर कारावास का दंड दिया गया, और एक छोड़ दिया गया।

महीसा—जसोर जिले के महमूदपुर पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत हुई डकैती के सम्बन्ध में डाका डालने वाले दल को बहुत अधिक जन हानि उठानी पड़ी। डाका डालने वालों के विरुद्ध जो अभियोग चलाया गया उसमें एक को ६ वर्ष दूसरे को पांच वर्ष का कठोर कारावास दिया गया। पुलिस एक अन्य व्यक्ति की खोज में थी जो ५ अप्रैल १६११ को कलकत्ते में गिरफ्तार हुआ। ६ मार्च १६१२ को खुलना के स्टेशन जज ने अभियुक्त को ३ वर्ष का कठोर कारावास का दंड दे दिया।

षड्यन्त्रों के अभियोग—उन व्यक्तियों के विरुद्ध जिनका स्पष्ट सम्बन्ध क्रांतिकारी कार्यों से या कार्यवाही करने के अतिरिक्त सरकार ने बड़े षड्यन्त्र अभियोग आरम्भ किए जिससे कि बहुत बड़ी संख्या में उन व्यक्तियों को फांसा जा सके कि जो सरकार की दृष्टि में सन्देहित थे। उनमें से कुछ अभियोग यहां दिए जाते हैं जो १६०८-११ के काल में हुए जिनसे उनके स्वरूप तथा क्षेत्र का पता लग सके।

नांगला (खुलना षड्यन्त्र) अभियोग—यह एक बड़ा अभियोग था। खुलना षड्यन्त्र अभियोग बारह युवकों के विरुद्ध इस आरोप पर चलाया गया कि वे सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने के लिए एक षड्यन्त्र के सदस्य हैं। प्रारम्भिक जांच के उपरांत उच्च न्यायालय ने १८ जुलाई १६१० को उस अभियोग की सुनवाई आरम्भ की। ३० अगस्त, १६१० को फैसला सुनाया गया। पांच को सात वर्षों के लिए निर्वासन तीन को पांच वर्ष का निर्वासन दो को तीन वर्षों के लिए कठोर कारावास का दंड दिया गया। केवल एक को दोषमुक्त कर छोड़ दिया गया।

खुलना दल का अभियोग—बीस व्यक्तियों पर चंदपुर और सोलेगाती (खुलना) तथा धुस ग्राम और महीसा (जसोर) की डकैतियों तथा अन्य घटनाओं में सम्मिलित होने का सन्देह था उन्हें जिलाधीश के समक्ष २१ अक्टूबर को उपस्थित किया गया। अठारह अभियुक्तों को इंडियन पिनल कोड की धारा चालीस के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट ने भिन्न भिन्न अवधि के लिए डाकुओं के दल के सदस्य होने के अपराध में कारावास का दंड दिया। दंडित व्यक्तियों ने उच्च न्यायालय में अपील की जिसकी सुनवाई २ अप्रैल १६११ को हुई। सभी कैदियों ने अपने को अपराधी स्वीकार किया। अभियोजक पक्ष के कहने पर उच्च न्यायालय ने उनके दोष के प्रति नरम दृष्टिकोण स्वीकार किया और सभी अभियुक्तों को नेक चलनी के लिए प्रतिज्ञा करने के लिए विवश किया और यदि भविष्य में उनसे फिर अपराध हो तो वे पुलिस को स्वयं आत्मसमर्पण कर देंगे और मजिस्ट्रेट जो दंड देगा उसको भुगतेंगे। न्यायाधीश ने एक को दोषमुक्त कर दिया। उसके पश्चात दो भगोड़े कुछ समय के उपरांत गिरफ्तार हो गए और उन्हें एक दूसरे अभियोग में लम्बे समय का कारावास हुआ।

मु शी गज षडयन्त्र अभियोग —१२ नवम्बर १६१० को ढाका मे १७ षडयन्त्र कारियों पर मु शीगज षडयन्त्र का अभियोग चलाया गया। तीन के अतिरिक्त सभी अभियुक्त छोड दिए गए। २ मार्च, १६११ को उन तीन पर सेशन की अदालत मे अभियोग चलाया गया। एक को धारा ४ बी विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के अन्तर्गत १० अप्रेल १६११ को दस वर्ष का कठोर कारावास हुआ। उच्च न्यायालय मे अपील व्यर्थ हुई।

ढाका षडयन्त्र अभियोग —पूर्वी बगाल के नागरिकों की सुरक्षा न कर सकने पर निराश और हताश होकर पुलिस ने सबसे सरल उपाय का आश्रय लिया। उसने एक बहुत बडा अभियोग चलाया जिसमें ५५ अभियुक्त थे। उन अभियुक्तों में तरुण और वृद्ध, विद्यार्थी जनता तथा ऐसे व्यक्ति जो अपने अपने पेशों में ऊँचे स्थान पर थे और बहुत प्रतिष्ठित थे सभी प्रकार के व्यक्ति थे। उनमे से ४४ पुलिस की हिरासत मे थे। ८ अगस्त १६१० को सेशन सपुर्द करने के लिए प्रारम्भिक जाच हुई जो ३० सितम्बर से एक मजिस्ट्रेट बठने लगा। अभियुक्तों को २२ नवम्बर को सेशन सुपुर्द कर दिया गया। अतिरिक्त जिला जज के सामने अभियोग ३ जनवरी, १६११ को आरम्भ हुआ और जज ने सात अगस्त १६११ को अपना निर्णय दे दिया तीन को आजीवन निर्वासन, अट्ठारह को दस वर्ष चौदह को सात वर्ष और एक को ३ वर्ष का कठिन कारावास हुआ। आठ छोड दिए गए। उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में अक्टूबर १६११ को चौदह अभियुक्तों की सजा की उच्च न्यायालय ने पुष्टि कर दी और शेष को मुक्त कर दिया।

हावडा दल अभियोग — १ दिसम्बर, १६१० को एक बहुत बडा अभियोग उच्च न्यायालय के विशेष ट्रिब्यूनल के समक्ष इडियन पैनल कोड की धारा १२१ १२२ १२३ के अन्तर्गत आरम्भ किया गया। अभियोजकों ने लगभग सभी राजनीतिक घटनाओं जिनका स्वरूप क्रातिकारी था और जिनका उन घटनाओं से तनिक भी सम्बन्ध होने का सन्देह था उनको अभियोग मे फास लिया। उनमें चिंगरी पोटा नेतरा, हल्दूबारी तथा अन्य डकैतियो के लोग तथा वे लोग भी थे जिन्होंने अलीपुर स्थित दसवीं जाट रजीमेंट की राजभक्ति को डिगाने का प्रयत्न किया था और जो सरकारी वकील तथा पुलिस अधिकारियों की हत्या से सम्बन्धित थे। बारह राजनीतिक समूहों के चुने हुए प्रमुख व्यक्तियो को अभियुक्त बनाया गया। १६ अप्रेल, १६११ को निर्णय सुना दिया गया। प्रारम्भ मे जिन ४६ अभियुक्तों पर अभियोग चलाया गया उनमें से पाच उन्मुक्त कर दिए गए। एक के विरुद्ध अभियोग वापस ले लिया गया। एक की मृत्यु हो गई और तैतीस अभियुक्त मुक्त कर दिए गए। और ६ को जो हल्दूबारी डकैती के अभियोग में दण्ड भोग रहे थे उन्हें और अधिक दण्ड दिया गया।

षडयन्त्र के आवरण में विभिन्न घटनाओं से सम्बन्धित और बहुत से अभियोग चलाए गए। उनमे से कुछ यह थे। मिदनापुर (१६०८) मदारीपुर (१६१३) बारीसाल (१६१३-१४) तथा अन्य अनेक अभियोग भारत मे ब्रिटिश शासन के समाप्त होने तक चलाए गए।

यदि भारत में कभी विप्लवकारी तथा क्रांतिकारी आंदोलन का इतिहास लिखा गया तो वह उत्तर भारत मे पजाब और बगाल के नेताओं ने जो एक दूसरे के

सगठनो को परस्पर सहायता और सहयोग दिया और एक दूसरे से सम्बन्ध स्थापित किया यह प्रमुख रूप से सामने लाएगा। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण और रुचिकर अध्ययन का विषय होगा जिसकी ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

दक्षिण मे षडयन्त्र (१८९७-१९१०)

पश्चिम भारत मे गुप्त क्रांतिकारी सगठन देश मे अन्य सभी स्थानो की अपेक्षा बहुत पहले आरम्भ हो गए थे। उनका युवकों के मस्तिष्क पर जो गहरा प्रभाव था और उनकी जितनी तयारी थी उससे रैंड की हत्या के उपरान्त सरकार अच्छी तरह से अवगत हो गई थी। ऐश' की हत्या के उपरात उसने षडयन्त्र अभियोगो को चलाने की तयारी के लिये थोडा अधिक समय लिया। परिणामस्वरूप अलीपुर षडयन्त्र अभियोग के समाप्त होने के कुछ समय के उपरान्त १९०९ १९१० मे ग्वालियर, नासिक और सतारा आदि के अभियोग चलाए गए।

तिनेवली षडयन्त्र अभियोग—ऐश' के हत्याकाड सम्बन्धी अभियोग के लगभग साथ साथ ही यह अभियोग भी चलाया गया। हत्याकाड के अभियोग मे कुल मिलाकर लगभग १४ अभियुक्तों पर मुकदमा चलाया गया। उन पर हत्या षडयन्त्र और हत्या में सहायक होने के आरोप थे। १४ फरवरी १९१२ को उच्च न्यायालय ने निर्णय दे दिया जिसमें ९ अभियुक्तो को एक से सात साल का कठोर कारावास का दण्ड दिया गया था। तीसरे न्यायाधीश का अन्य दो से मतभेद था। उसने केवल चार को दोषी ठहराया। अतएव उच्च न्यायालय की फुल बेंच को अभियोग सुपुर्द कर दिया गया। मार्च, १९१२ में अभियोग की सुनवाई हुई। पूर्व निर्णय में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ।

ग्वालियर षडयन्त्र—'अभिनव भारत समिति' ने अपनी शाखाएं दूर दूर फला दी थीं और पश्चिम भारत के लगभग प्रत्येक महत्वपूर्ण स्थान मे उसकी शाखा या केन्द्र स्थापित थे। बम्बई नासिक पूना, पेन, औरंगाबाद, हैदराबाद और ग्वालियर राज्य के भी युवक स्वतन्त्रता के युद्ध मे सम्मिलित होने का गौरव प्राप्त कर चुके थे।

ग्वालियर की 'नव भारत समिति' ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये क्रान्तिकारी कार्यवाही का एक कार्यक्रम तयार किया। उसको दो भागो में बांटा गया (१) शिक्षा जिसके अन्तर्गत स्वदेशी प्रचार, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा, शराब का पूर्ण निषेध धार्मिक पर्व तथा त्योहारो का मनाना, भाषण, पुस्तकालय इत्यादि थे। (२) आन्दोलन सम्बन्धी प्रशिक्षण जिसका उद्देश्य निशाना लगाना, तलवार चलाने का अभ्यास करना बम तयार करना डायनेमाइट, तथा रिवाल्वरों को इकट्ठा करना, हथियार चलाने की शिक्षा देना आदि सम्मिलित थे उसमें यह भी निर्देश था कि—

यदि किसी प्रान्त मे उपयुक्त समय पर विद्रोह हो जाए तो सभी को उसमें सहायता और सहयोग देना चाहिए और स्वतन्त्रता प्राप्त करनी चाहिए। दासता को नष्ट करने के लिए विश्वास स्वयं में एक साधन है। यह हमारा पूर्ण विश्वास है कि यदि तीस करोड युद्ध करने के लिए तयार हो तो कोई भी उनकी इच्छा को रोक नहीं सकता। सबसे पहले मस्तिष्क को तयार करने के लिये शिक्षा दी जावेगी और तब विद्रोह खड़ा किया जावेगा। स्वतन्त्रता का युद्ध चतुराई और धूर्तता से लड़ा जावेगा।"

उस समय इस बात के चिन्ह प्रगट नही थे कि गुप्त समितियां अपने काय

क्षेत्र का दूर दूर तक विस्तार करने में लगी थीं। वे साहसिक तथा महत्वपूर्ण कार्य करके अनुभव प्राप्त कर रहे थे। अहमदाबाद भी पीछे नहीं था। नवम्बर १६०६ में उसने वायसराय लार्ड मिंटो की मोटर गाडी पर बम फेंक कर उस प्रकट काण्ड के द्वारा अपनी क्रान्तिकारी तैयारी का प्रदर्शन किया। जब जुलूस निकल गया तो दो नारियल के बम सड़क पर मिले। एक दर्शक ने जिसे यह भान नहीं था कि यह बम है उसमें से एक को उठा लिया वह फट गया और उसका हाथ ही जाता रहा

'अभिनव भारत समिति' के सम्बन्ध में खोज बीन करते हुए पुलिस ने जो सामग्री इकट्ठी की उसमें वह पत्र व्यवहार भी मिला जो नासिक और ग्वालियर के क्रान्तिकारियों के मध्य हुआ था। भारत सरकार के साथ में मिलकर राज्य सरकार ने नव भारत समिति के बाइस अभियुक्तों और अभिनव भारत समिति के उन्नीस अभियुक्तों के विरुद्ध ट्रिब्यूनल के सामने जो अभियोग सुनने के लिए विशेष रूप से निर्मित हुआ था अभियोग चलाया। इसका परिणाम यह हुआ कि आधे से अधिक अभियुक्तों को सजा हो गई। सभी अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप यह थे कि सभी अभियुक्त फिर चाहे वे नासिक में थे अथवा ब्रिटिश भारत के अन्य स्थानों पर थे तथा लन्दन में दामोदर विनायक सावरकर ने (१) युद्ध छेड़ने का प्रयत्न किया (२) आपस में मिलकर युद्ध छेड़ने का षडयन्त्र किया (३) परस्पर मिलकर इण्डियन पेनल कोड की धारा १२१ में दण्डनीय अपराधों को करने का षडयन्त्र किया। सम्राट की ब्रिटिश भारत पर से प्रभुसत्ता हटाने का षडयन्त्र किया। (५) भारत सरकार अथवा बम्बई सरकार को भयभीत करने के लिए आपराधिक बल प्रयोग करने अथवा आपराधिक बल प्रयोग का प्रदर्शन करने का षडयन्त्र किया। (६) युद्ध छेड़ने के लिए अस्त्र शस्त्र इकट्ठे किये। (७) गैर कानूनी तरीके से युद्ध छेड़ने के अभिप्राय और तैयारी को छिपाया (इण्डियन पीनल कोड की धारा १२१, १२१ ए, १२२ १२३ और १२४)

नासिक षडयन्त्र — नासिक जिलाधीश की २१ दिसम्बर १६०६ को हत्या उपरान्त जक्सन की हत्या के लिए जो संगठन उत्तरदायी था उसके गुप्त कार्यों की तेजी से छानबीन हुई। उससे यह ज्ञात हुआ कि वह एक गम्भीर और गहरे षडयन्त्र का परिणाम था कि जिसने उन व्यक्तियों के हाथों को बल दिया जिन्होंने यह कृत्य किया था।

इस प्रथम नासिक षडयन्त्र अभियोग में कुछ नहीं तो अड़तीस व्यक्तियों को पकड़ कर न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया गया। साक्षी से जो कि मुख्यतः कतिपय अभियुक्तों की अपराध स्वीकारोक्ति थी यह पता लगा कि 'मित्र मेला' जिसे विनायक सावरकर ने १८६६ में आरम्भ किया और जो १६०४ में 'अभिनव भारत समिति' में बदल गया उस काण्ड के लिये उत्तरदायी थ जिसमें लंदन से चतुर्भुज अमीन द्वारा लाया गया ब्राउनिंग पिस्तौल का उपयोग किया गया था। यह उस संगठन का एक और एकमात्र उद्देश्य विद्रोह करना था। जिसमें रूस की गुप्त समितियों का तरीका और नमूना अपनाया जाता था। सम्पूर्ण संगठन को छोटे छोटे समूहों में विभाजित किया जाता था। एक समूह का सदस्य दूसरे समूह के सदस्यों को नहीं जानता था। सब सूत्रों को एक कड़ी में जोड़ने वाला व्यक्ति केवल उस संगठन का सर्वोच्च नेता था। सभी सदस्य गोपनीयता की शपथ व्यक्तिशः तथा सामूहिक रूप से लेते थे—यदि पूरे समूह को कोई कार्य करना होता था।

सरकार का प्रयत्न यह था कि किसी प्रकार षड्यन्त्र में गणेश विनायक सावरकर को फास लिया जावे जिससे कि कानून मे जितनी व्यवस्था थी उतने लम्बे समय के लिए उसको जेल में रख कर सरकार के रास्ते से बाहर रक्खा जा सके। अभियोग चलाने वाला के लिए जो साधन उनके पास उपलब्ध थे उनके रहते यह कुछ कठिन नहीं था कि वे गणेश विनायक सावरकर और अन्य अभियुक्तो के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के लिए साक्षी प्राप्त कर लें।

इस ऐतिहासिक अभियोग में २४ दिसम्बर १९१० को फैसला सुनाया गया जिसमें विनायक सावरकर को आजीवन निर्वासन का दण्ड दिया गया। इस अभियोग में ३८ अभियुक्त थे उनमें से अधिकांश को विभिन्न समय के लिए कठोर कारावास का दण्ड दिया गया।

अभियोग मे प्रस्तुत किए गए पम्फलेट 'बन्देमातरम' से स्पष्ट था कि संगठन का तात्कालिक उद्देश्य सरकारी अधिकारियों की हत्या करना था जिससे कि स्वतन्त्रता ध्येय को तेजी से पूरा करने मे सहायता मिले। उस प्रलेख (पेम्फलेट) के नीचे दिए कुछ वाक्यो से संगठन का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है। वे इस प्रकार थे—अंग्रेज और भारतीय अधिकारियों को यदि आतंकित कर दिया जाय तो दमन के सम्पूर्ण सरकारी यन्त्र को पक्षाघात हो जावेगा। खुदीराम बोस, कन्हाईलाल दत्त आदि अन्य शहीदों ने जिस नीति का गौरवपूर्ण उद्घाटन किया उसको निरन्तर काम मे लाने से भारत में ब्रिटिश सरकार शीघ्र ही समाप्त हो जावेगी। अलग अलग हत्याओं का आन्दोलन ही नौकरशाही को निष्क्रिय बनाने और जनता को उत्साहित करने का सर्वोत्तम उपाय है। क्रान्ति के प्रथम चरण मे पृथक पृथक हत्याओं की नीति ही मुख्य कार्य है।

उस अभियोग में जो फैसला दिया गया उससे क्रान्तिकारी संगठन की कार्य प्रणाली और उसमें विनायक सावरकर का कितना हिस्सा था उस पर प्रकाश पड़ता है। इस बात की साक्षी मिलती है कि गणेश सावरकर के नेतृत्व मे मित्र मेला नामक एक संगठन स्थापित था जिसकी स्थापना १९०६ के पूर्व हुई थी। बहुत जांच पड़ताल के बाद ही किसी को उसका सदस्य बनाया जाता था। प्रत्येक सदस्य से उस संगठन के सम्पूर्ण कार्य को गुप्त रखने के लिए शपथ ली जाती थी। युवकों के छोटे छोटे समूह जो समान उद्देश्य के लिये कार्य करते थे मूल संस्था से सम्बद्ध रहते थे। राजद्रोह फैलाने और युद्ध की तैयारी करने के लिये साहित्य प्रकाशित किया जाता था। पड़ोसी देशों में अस्त्र शस्त्र खरीदने और उन्हें वहां जमा रखने के लिए आदेश निकाले जाते थे जिन्हें जब उपयुक्त अवसर आवे तो उपयोग में लाया जा सके। उसमें यह भी सुझाव दिया गया था कि अस्त्र शस्त्रो का निर्माण करने के लिए बहुत से छोटे छोटे कारखाने खोले जावें जो एक दूसरे से दूर हों। यह कारखाने प्रछन्न रूप से स्वतन्त्रता की कामना करने वाले देश मे स्थापित किए जावें और अन्य देशों में गुप्त समितियां अस्त्र शस्त्र खरीदें जिन्हें गुप्त रूप से व्यापारिक समुद्री जहाजों द्वारा आयात किया जावे।

'सावरकर' के सम्बन्ध मे जज ने कहा—हमारे मत से अभियुक्त लोगों को युद्ध छेड़ने के लिए जनता को उकसाने के लिए प्रकाशित सामग्री का प्रचार करने, अस्त्र शस्त्र उपलब्ध करने और विस्फोटकों के निर्माण के सम्बन्ध में आदेश वितरित करने का दोषी है।

दूसरा नासिक अभियोग—एक दूसरे नासिक अभियोग में सावरकर पर नासिक के जिलाधीश जैकसन की हत्या में सहायक होने का अभियोग लगाया गया। २३ जनवरी १९११ को अभियोग आरम्भ हुआ जिसमें अभियोजक (पुलिस) ने बताया कि हत्याकांड में जिस पिस्तौल का उपयोग किया गया उन बीस पिस्तौलों म से एक थी जिन्हें विनायक सावरकर ने प्रच्छन्न रूप से भारत में भेजा था। अतएव यह सिद्ध करना कठिन नहीं था कि अभियुक्त सहायक होने का दोषी था और ३० जनवरी १९११ को विनायक सावरकर को आजीवन निर्वासन का दूसरा दंड दे दिया गया।

यह उल्लेखनीय है कि सावरकर बन्धुओं को ही भारतीय देशभक्तों में यह असाधारण गौरव प्राप्त है कि वे दोनों एक साथ अपने जीवन के एक बहुत लम्बे समय तक सलुलर जेल अंडमन में रहे जो 'भारतीय बैस्टिल' के नाम से प्रसिद्ध था। बड़े भाई गणेश को जून १९०९ को 'लघु अभिनव भारत मेला' नामक देशभक्ति पूर्ण कविताओं की पुस्तक लिखने और प्रकाशित करने के अपराध में दंडित किया गया। उनको आजीवन निर्वासन कारागार काला पानी का दंड दिया गया। यह दंड देश के फौजदारी कानून में सबसे भयंकर और अत्यंत गम्भीर अपराधों के लिए दिया जाता था वह देश भक्ति पूर्ण कविताओं की पुस्तक लिखने के लिए दिया गया।

बाद को लाहौर षड्यन्त्रों के मुकदमों के सम्बन्ध में यथास्थान लिखा गया है।

कर्तव्य ही जीवन है (१९०८)

क्रान्तिकारी दल बंगाल के प्रत्येक जिले में स्थापित हो गया था। बहुधा क्रांतिकारी कार्यवाहियों की रिपोर्ट सम्बंधित मुख्य कार्यालय में पहुँचती थी। कभी कभी अत्यन्त अशुभ परिणाम की भी रिपोर्ट पहुँचती थी।

क्रांतिकारी का सेना को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती थी इस कारण यहां वहां निजी सम्पत्ति को लूटने की घटनाएं होती रहती थी। ऐसी ही एक डकैती ढाका जिले नवाबगंज पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत 'बाराह में दो जून १९०८ को' डाली गई। इसम डाका डालने वाले पच्चीस हजार रुपए नकद और जेवर के रूप में ले गए। इस डाके में अधिक जीवन हानि हुई। जनता के चार व्यक्ति मारे गए और कई घायल हो गए। (पृष्ठ १९२ को देखें)

जब डाका डालने वाले डाका डाल कर वापस नाव द्वारा नदी से लौटे तो इच्छामती नदी के दोनों तटों पर गांव वालोंने उनका तेजी से पीछा किया। नाव में छेद हो गया और पानी तेजी से भरने लगा।

गोपाल उपनाम देवेन्द्र सेन गुप्त को नाव से पानी उलीचने का काम दिया गया जिससे कि नाव म पानी न भरे और वह हल्की रहे। उसने एक चमचा सा बना लिया था और उसी से वह पानी उलीच रहा था। इच्छामती नदी को पार कर दूसरे दिन नाव ने धलेश्वरी नदी से प्रवेश किया। जब कि नाव 'सावर पुलिस स्टेशन से, निकल रही थी तो सब इन्सपेक्टर राइफिल लेकर बाहर निकल आया और भागने वाली नाव में जो लोग थे उन पर गोली चलाने लगा।

गोपाल नीचे झुक कर और फिर खड़ा होकर पानी को उलीच रहा था। ऐसी परिस्थिति में झुकने और खडे होने म जो भारी जोखिम थी गोपाल उससे भली भांति अवगत था। जो लोग नाव म बैठे हुए थे। उनकी अपेक्षा वह बहुत आसानी से गोली का निशाना बन सकता था। परन्तु जीवन का भय उसे अपना निर्धारित

कर्त्तव्य करने से नहीं रोक सका। उसके माथे पर एक गोली आकर लगी और उसकी तुरन्त मृत्यु हो गई।

उसको पुलिस पहचान न सकी अतएव उसके मृत शरीर को नाव के भारी लंगर के साथ बांध कर उस नदी में छोड़ दिया और इस प्रकार उसे चिह्न रहित जल समाधि दे दी। प्रागपुर की घटना में सुशील सेन से थोड़ा ही भिन्न भाग्य गोपाल का रहा।

जनता का पारितोषिक (१९०८)

पुलिस इन्सपेक्टर नन्दलाल बनर्जी का नाम प्रफुल्ल चाकली को १ मई, १९०८ को मोकामेह घाट स्टेशन पर गिरफ्तार करने के प्रयत्न के फलस्वरूप प्रसिद्ध हो गया था। उसकी प्रशंसनीय और श्लाघनीय सेवाओं के पुरस्कार स्वरूप उसको उदार सरकार ने एक हजार रुपए का पारितोषिक दिया था। यह पारितोषिक १० मई, १९०८ को एक दरबार में दिया गया क्योंकि नन्दलाल बनर्जी उस निष्फल गिरफ्तारी के लिए जिम्मेदार था। उसने ही प्रफुल्ल चाकली का समस्तीपुर से मोकामेह घाट तक पीछा किया था जिसके कारण अन्त में वह पकड़ा गया।

वह घटना के कुछ दिना पूर्व ही कलकत्ता आया था और वह सरपैंटाइन लेन' के मकान नम्बर १००/२ में अपने सम्बन्धी के पास ठहरा था। ६ नवम्बर, १९०८ को एक पत्र डाक में डालने के लिए वह सात बजे सायंकाल और ७ ३० सायंकाल के बीच मकान से बाहर निकला। अपने निवास स्थान से वह केवल दो सौ गज ही दूर गया होगा कि उसको किसी ने पीछे से एक या दो गोली मारी। वह कुछ कदम ही आगे दौड़ पाया होगा कि अत्यधिक श्रान्ति (थकावट) के कारण वह चिल्लाता हुआ गिर पड़ा "सरपेंटाइन लेन के नम्बर १००/२ में मेरे भाई को सूचना दे देना।"

मारने वाले इस बात की जोखिम तनिक भी नहीं लेना चाहते थे कि वह कहीं जीवित बच जावे। वे उसके पीछे दौड़े और दो में से एक ने नन्दलाल के शरीर पर झुककर उसके शरीर पर और फायर किए जिससे उसकी तुरन्त मृत्यु हो गई। उसको चार गोलियां लगीं जो उसके सिर से, पीठ के मध्य से पीठ की दाहिनी ओर बायें कंधे से आरपार निकल गई।

इन्सपेक्टर को मुजफ्फरपुर के लिए स्थानान्तरण की आज्ञा मिल चुकी थी और उसे एक दो दिन में ही ड्यूटी से मुक्त किया जाने वाला था।

इस घटना के सम्बन्ध में कोई गिरफ्तारी नहीं हो सकी। मारने वाले साफ बच कर निकल गए।

दारुण विछोह (१९०८)

३ अगस्त १९०८ को नटोर रोड डाक की डकैती के पश्चात जो साधारण धर पकड़ हुई उसमें एक व्यक्ति जो कि बहुत कम आयु का नहीं था और जिसका स्वास्थ्य बहुत खराब था गिरफ्तार किया गया। प्रारम्भिक जांच के उपरान्त उसे सैशन में अभियोग चलाए जाने के लिए भेज दिया गया। उस अभियोग में उसका युवक पुत्र सह अपराधी था। उस अभागे मनुष्य कालीचरण ठाकुर की दशा अभियोगाधीन कारावास के जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों में बिगड़ गई। उसको जमानत पर छुड़ाने के सभी प्रयत्न निष्फल हुए क्योंकि सिविल सर्जन का कहना था

कि जेल में उसकी दशा पहले से बुरी नहीं है।

१९०८ के क्रिसमस में उस रोगी की मृत्यु हो गई और उसके मृत शरीर अन्तिम संस्कार के प्रश्न को लेकर उत्तेजनात्मक परिस्थिति उत्पन्न हो गई। अधिकारि ने जेल के बाहर उसके शव का दाह संस्कार करना अस्वीकार कर दिया।

उसका पुत्र पिता की मृत्यु से शोकातुर था परन्तु फिर भी उसने अधिकारि से प्रार्थना करके इस बात पर मृत शरीर को निकट के सम्बन्धियों को दे दिए जाने व आज्ञा प्राप्त करली कि किसी प्रकार का प्रदर्शन नहीं होगा।

हृदयहीन सरकार ने पुत्र को पिता के अंतिम दाह संस्कार को करने की आ नहीं दी। स्थिति इस कारण और भी उत्तेजनापूर्ण बन गई क्योंकि वह अपने पिता व इकलौता पुत्र था और धार्मिक मान्यता के अनुसार उसे ही पिता का दाह संस्कार करन चाहिए था।

जेल के फाटक पर जब पिता का शव बाहर से लाया जा रहा था तो जैस करुणापूर्ण दृश्य उपस्थित हुआ उसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है उसका वर्ण करना सम्भव नहीं है।

एक अपंग का प्रहार (१९०९)

जहां तक शान्त और गम्भीर साहस का प्रश्न है चारुचन्द्र बसु का का भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन में एक अनोखा और महत्वपूर्ण स्थान रखता है। व ऐसा अद्भुत और दृढ़ साहसी था कि उसने कार्यवाही करने में तनिक हिचकिचाहट वं चिह्न प्रगट नहीं किए और न मूल योजना से वह किंचित मात्र भी विचलित हुआ।

चारु दिखने में नाटा दुबला पतला और रोगी बीस वर्ष से कम का युवक थ और जन्म से ही उसकी सीधी हथेली और अंगुलियां नहीं थीं। उन लोगों के अतिरिक्त जो उसे समीप से जानते थे, अन्य लोगों का विचार था कि वह कोई उत्तरदायित्व क कार्य करने में असमर्थ है। जो उसे समीप से जानते थे वे उसकी अत्यन्त उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों को कर सकने की योग्यता को जानते थे। चारु ने कई प्रेसों और समाचार पत्रं में काम किया। अंतिम बार वह हितवी प्रेस हावड़ा में काम करता था।

वह १३० रमा रोड पर रहता था और पिछले बारह वर्षों से कलकत्ता है भली भांति परिचित था। जब उसने क्रान्तिकारी कार्य करने का निश्चय कर लिया तो वह कई दिनों तक टाली गंज जाकर पिस्तौल चलाने का अभ्यास करता रहा। उसने अपने शिकार अपराधी पर दृष्टि रखने के लिए अलीपुर की अदालत के चारों ओर पांच ६ दिन तक चक्कर लगाना शुरू किया। पूछताछ से चारु को यह ज्ञात हो गया कि आशुतोष विश्वास किस दिन उस अदालत में आवेगा। वह उस दिन आघात करने के लिए तैयार हो गया। उस दिन उसने एक बार जज के न्यायालय में विश्वास पर आक्रमण करने का प्रयत्न किया परन्तु उसने अपने उस विचार को छोड़ दिया क्योंकि उसने देखा कि वह स्थान पुलिस द्वारा भली प्रकार चौकसी से सुरक्षित है और उसकी आशा के अनुकूल वहां आक्रमण करने का अवसर नहीं है।

आशु विश्वास अलीपुर बार के सरकारी वकील के रूप में विख्यात हो गए थे। क्रान्तिकारी युवकों के विशेष घृणा के पात्र बन गए थे क्योंकि वे उनके विरुद्ध बहुत उत्साह से सरकारी पक्ष की पैरवी करते थे और कभी कभी वे उन्हें सजा दिलाने के लिए ऐसे घृणित साधन काम में लाते थे जो कि न तो अभियुक्तों के लिए न्यायपूर्ण होते और न वकीलों के लिए शोभनीय ही होते थे। वह औचित्य के बाहर जाकर

भी पुलिस को इस प्रकार कागजों को तैयार करने और साक्षी प्राप्त करने का परामर्श देते थे कि जिससे कि उन राजनीतिक अभियुक्तों को दंड दिलाने में सहायता मिले जो पुलिस की नजरों में चढ़ चुके थे। यह वह समय था जब सरकारी प्रशासनिक अधिकारी इस बात के लिए कटिबद्ध रहते थे कि यदि किसी व्यक्ति के बारे में यह ज्ञात हो जावे कि उसकी प्रवृत्ति राजद्रोहात्मक है तो फिर उसको बचना नहीं चाहिए उसको अवश्य दण्डित किया जाना चाहिए। पुलिस द्वारा इस प्रकार के अभियोग चलाए जाने में आसुतोष विश्वास ही उनका मुख्य आधार और बल था।

कुछ क्रान्तिकारियों ने किसी स्थान पर यह सोचा कि इस व्यक्ति को अपने कार्य क्षेत्र से सदा के लिए हटा दिया जाय। जैसा कि अन्य दिनों में साधारणतया होता था वह कार्य व्यस्त वकील एक अदालत से दूसरी अदालत को अपने पेशे के कर्तव्य को निभाने के लिए दौड़ रहा था और वह उस भाग्य निर्धारित दिन १० फरवरी, १६०६ का सब अबन मजिस्ट्रेट की अदालत में जाली सिक्के बनाने के मुकदमे में उपस्थित हुआ। आशु ने चार बजकर बीस मिनिट पर सायंकाल अदालत से गमन किया। वह अदालत के पूर्वी फाटक से निकला और दक्षिण की ओर चल रहा था। जब वह अदालत के दक्षिणी पूर्वी किनारे पर एक पानी के नल के पास पहुँचा तो एक गोली चली और घायल आशु चिल्लाया बाप रे' और अपने दोनों हाथों को शीघ्रता से हिला हिला कर पश्चिम की ओर भागा।

चारु ने अपने शिकार का उसी तरह से पीछा किया जैसे कि वन का राजा अपने शिकार का पीछा करता है, और उसकी पीठ से अपने रिवाल्वर को सटा कर दूसरा फायर किया। गोली आशु के शरीर के पार हो गई। यहां यह कह देना आवश्यक है कि रिवाल्वर को मजबूती के साथ उसके अपंग दाहिने हाथ में कस कर बांध दिया गया था। जब उसने दाहिने हाथ को अपने शिकार की ओर बढ़ाया तो उसके बायें हाथ ने पिस्तौल का घोड़ा दबाया जिससे पिस्तौल की गोली चली।

एक पुलिस कांस्टेबिल जो समीप ही खड़ा था उसने चारु को पीछे से दबा लिया। अपनी बांहों से चारु को कस लिया जिससे कि चारु के हाथों का हिल सकना भी असंभव हो गया। तब तक आशु घुमाव के साथ दौड़ता हुआ अदालत के बराड़े से निकल कर कोर्ट सब इन्स्पेक्टर के दफ्तर में पहुँचा जहां कुछ मिनटों में ही उसकी मृत्यु हो गई। चारु पकड़ा गया था उसके हाथ बंध गए थे फिर भी उसने प्रयत्न करके तीसरी गोली चलाई जो कि एक दीवार के किनारे पर फर्श से दो फिट ऊपर जाकर लगी।

दो अन्य कांस्टेबिल जो इस घटना को दूर से देख रहे थे पहले की सहायता के लिए भागते हुए आए और उन्होंने चारु को पूरी तरह से अपने कब्जे में कर लिया। जैसा कि इस प्रकार की घटनाओं में बहुधा होता है चारु के साथ निर्दयतापूर्ण व्यवहार और मारपीट की गई परन्तु उसके अधरों पर मुस्कराहट थी उसने कहा कि मैं बहुत प्रसन्न हूं कि मैं अपना व्रत पूरा करने में सफल हुआ।

रिवाल्वर जो उसके हाथ से प्राप्त हुआ कुछ खराब था और बेल्जियम का बना हुआ था। उसमें ६ चम्बर (खाने) थे और उसमें तीन भरे हुए कारतूस और तीन खाली कारतूस थे।

पुलिस जो भी अपराध स्वीकार कराने के गुप्त हथकण्डे और अत्याचार काम

राय ने भाषण दिया था जबकि वे लदन में थे। वह अपने देश के प्रति भक्ति और प्रेम को कभी भी छिपाने का प्रयत्न नहीं करता था एक बार वह यूनीवर्सिटी कॉलेज में अपनी कक्षा में १८५७ के शहीदों की यादगार में १० मई १९०६ की मीटिंग सगठित करने वालों द्वारा जो बैज उसे प्राप्त हुआ था लगा कर गया। कक्षा में उसे बैज उतार देने की आज्ञा हुई। उसने वैसा करने से इनकार कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि साथी लड़कों ने रैगिंग (तंग करना) आरम्भ किया। मदनलाल धींगरा ने उस लड़के को जो कि बहुत अधिक तंग कर रहा था धमकी दी कि यदि वह नहीं माना तो उसकी गर्दन काट दी जावेगी सब मब चुप हो गए।

मदनलाल धींगरा के इन कार्यों की खबर उसके पिता के पास पहुंची जो एक प्रसिद्ध डाक्टर थे और उसका भाई बैरिस्टर था। उन्हें पता चला कि मदनलाल धींगरा उनकी समझ में बुरे प्रभाव में पड़कर अत्यन्त उग्र राजनीतिक विचारों की ओर उन्मुख हो गया है। उसके भाई ने वायली को एक पत्र लिखकर मदनलाल धींगरा को सुधारने में उसकी सहायता मांगी। मदनलाल धींगरा ने अपने भाई के दृष्टिकोण की भर्त्सना करते हुए उन्हें लिख भेजा कि किसी भारतीय के निजी जीवन में वायली जैसे ऐंग्लो इंडियन का हस्तक्षेप करना नितान्त अनुचित है।

मदनलाल के व्यवहार और आचरण में ऊपर से किसी को भी कोई असाधारण बात नहीं दिखी। परन्तु वह निष्क्रिय और आलसी नहीं था। उसने जनवरी में लन्दन में कोल्ट रिवाल्वर खरीद लिया और दूसरा रिवाल्वर उसने एक निजी व्यक्ति से जो वल्लियम का बना हुआ था ऊँचे दामों में खरीदा उसने एक बन्द में रिवाल्वर रेंज पर निशाना लगाने का अभ्यास करना आरम्भ कर दिया और वह आरम्भ से ही अपने अभ्यास के परिणाम को नियमित रूप से एक नोट बुक में लिख लेता था।

कर्नल वायली भारतीय सेना का अवकाश प्राप्त अधिकारी था। सेना से अवकाश मुक्त होने पर उसे १९०१ में भारत सचिव का राजनीतिक ए डी सी नियुक्त कर दिया गया था। भारत सचिव ने लंदन में पढ़ने वाले भारतीय छात्रों की देखभाल के लिए एक कमेटी नियुक्त की थी वह उसका एक प्रमुख सदस्य था। उस कमेटी के सदस्य की हैसियत से कार्य करते हुए वायली भारतीय छात्रों के राजनीतिक विचारों के झुकाव और हलचलों पर कड़ी निगाह रखता था। और अपने ढंग से उन्हें राजनीति से दूर रखने और इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्य को सम्भावित हानि और खतरे से बचाने का प्रयत्न करता था।

नेशनल इंडियन ऐसोसियेशन की वार्षिक मीटिंग १ जुलाई १९०९ को होना पूर्व निश्चित थी। वायली सेवाय होटल में दिन का भोजन कर ऐसोसियेशन के एट होम में इम्पीरियल इंस्टिट्यूट के जहांगीर हाल में सम्मिलित होने के लिए चला। मीटिंग में वायली उपस्थित होगा यह जानकारी मदनलाल को पहले से ही थी अतएव वह अपने रहने के स्थान से दो घंटे पूर्व ही चल पड़ा और वेस्टबोन अपने मित्रों से मिलने गया। परन्तु उसने वहां अपनी योजना के सम्बन्ध में कुछ नहीं बतलाया। मदनलाल मीटिंग में समय पर पहुंच गया। जैसे ही संगीत का कार्यक्रम समाप्त हुआ वायली जीने से उतरने लगा। मदनलाल ने मुस्कराहट के साथ उससे वार्तालाप करना आरम्भ कर दिया। बात करते करते उसने एक साथ रिवाल्वर निकाल लिया और एक के बाद दूसरी पांच गोलियां उस पर चला दीं। पिस्तौल की नली वायली के चेहरे से

लगभग छू रही थी। जब वायली को पांचवी गोली लगी तो वह गिर पड़ा। एक पारसी सज्जन 'को थास लाल काका' वायली को बचाने के लिए आगे बढ़े तो छठी गोली उनके लगी जिसके परिणामस्वरूप कुछ दिनों के उपरांत उनकी मृत्यु हो गई। वायली की तुरन्त मृत्यु हो गई और उसकी दहिनी आंख पूर्ण रूप से छिन्न भिन्न हो गई। उसके चेहरे की आकृति इतनी बिगड़ गई थी कि उसको पहचाना नहीं जा सकता था।

पास खड़े हुए लोगों ने मदनलाल को पकड़ लिया परन्तु उसने अपना हाथ उनसे छुड़ा लिया और रिवाल्वर से अपने सिर का निशाना लगाया। रिवाल्वर का घोड़ा दबाने की आवाज हुई परन्तु उससे तनिक भी हानि नहीं हुई क्योंकि सब गोलियां वह अपने शिकार पर व्यय कर चुका था। मदनलाल के पास कैद होने के समय एक दूसरा भरा हुआ पिस्तौल, एक छुरा और एक चाकू भी मिला। उसने कहा कि उसकी मन्शा किसी को भी मारने की इच्छा नहीं है प्रत्येक अपने को सुरक्षित अनुभव करे।

पुलिस ने उसके निवास स्थान की तलाशी ली परन्तु उसे वहां कोई भी आपत्तिजनक वस्तु नहीं मिली। उन्होंने इंडिया हाउस तथा हाइगेट पर अधिकार कर लिया वहां से बहुत सा साहित्य और पत्र मिले। पुलिस ने 'इंडियन सोश्योलाजिस्ट" की भी प्रतियों को अपने कब्जे में कर लिया जिसकी एक प्रति में राजनीतिक हत्याओं को केवल क्षमा ही नहीं किया गया था परन्तु उन्हें करने के लिए प्रोत्साहित किया गया था।

मदनलाल में घबराहट या परेशानी के कोई चिह्न प्रकट नहीं हुए वह मानो शान्त, आत्म संयम और साहस की प्रतिमूर्ति बन गया था उसने कहा —

"मैं एक देशभक्त हूं और मातृभूमि को विदेशी दासता के जुए से मुक्त करने का प्रयत्न कर रहा हूं। मेरे लिए 'खूनी' या 'हत्यारा' शब्द के प्रयोग के प्रति मुझे घोर आपत्ति है क्योंकि मैंने जो कुछ किया है उसके करने में मैं पूर्ण रूप से न्याय संगत हूं। यदि जर्मनों ने इङ्गलैंड पर अपना अधिकार कर लिया होता तो अंग्रेज भी वही करते जो मैंने किया है।

मदनलाल को एक मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया गया। जिसने २ जुलाई, १९०९ को उसे एक सप्ताह के लिए पुलिस की हिरासत में रखे जाने की आज्ञा दे दी। जब वह अदालत में आया उसको एक लम्बा चौड़ा मजबूत कांस्टेबिल बांह से पकड़े हुए था। उसने अपने चारों ओर देखने का भी कष्ट नहीं किया परन्तु दृढ़तापूर्वक मजबूत कदमों से चल कर वह अभियुक्त के कठघरे में जाकर खड़ा हो गया। वह उस अदालत में इस प्रकार उदासीन भाव से खड़ा था कि मानो वहां जो कुछ होने वाला था उसमें उसकी तनिक भी दिलचस्पी नहीं थी। वह अपनी पेंट की जेब में हाथ डाले खड़ा था।

मजिस्ट्रेट के लेखक के पूछने पर मदनलाल ने उत्तर दिया—"मुझे केवल यह कहना है कि मैंने जानबूझ कर लालकाका की हत्या नहीं की। मैंने उन्हें आगे बढ़ते देखा उन्होंने मुझे पकड़ लिया और मैंने केवल आत्म रक्षा के लिए उन पर गोली चलाई।"

पुराने बेली की सेशन अदालत में अभियुक्त का अभियोग हुआ और २३

जुलाई, १९०९ को उसे प्राणदण्ड की सजा दे दी गई। यह अभियोग केवल २० सेकिंड में समाप्त हो गया और निर्णय दे दिया गया। शरिफ द्वारा १७ अगस्त को फांसी का दिन निश्चित कर दिया गया।

जब जज ने पूछा कि अभियुक्त को कुछ कहना है तो उसने उत्तर दिया "तुम मेरे साथ जो भी चाहो कर सकते हो। मैं उसकी परवाह नहीं करता। मैंने पहले ही कह दिया जब तुमने पूछा कि तुम गोरे लोग अब पूर्ण शक्तिवान हो और जो चाहो कर सकते हो। परन्तु याद रक्खो कि आने वाले दिनों में हमारा भी समय आवेगा।"

जूरी की मान्यता को स्वीकार कर जज ने मदनलाल को प्राण दण्ड की सजा दे दी जसे ही जज ने प्राण दण्ड का निर्णय सुनाना समाप्त किया मदन लाल ने कहा "माई लार्ड आपने देश के लिए आपको धन्यवाद देता हूं। मुझे गर्व है कि मैं अपने देश के लिए अपना जीवन अर्पण कर रहा हूं।"

१७ अगस्त, १९०९ को अभियुक्त को 'पटोनविली" में फांसी दे दी गई। फांसी के समय केवल उच्च शरिफ के प्रतिनिधि और जेल अधिकारी ही उपस्थित थे। मदनलाल की जेब में उसका निम्नलिखित बयान था— मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उस दिन मैंने देशभक्त युवकों की अमानवीय फांसियां और देश निकाले के विरुद्ध प्रतिशोध के रूप में एक अंग्रेज का रुधिर बहाने का प्रयत्न किया। इस प्रयत्न मे मैंने अपनी अन्तरात्मा के सिवाय अन्य किसी से सम्मति नहीं ली। मैंने किसी से मिलकर षडयन्त्र नहीं किया। मैंने अपना कर्तव्य मात्र किया है।

मेरा विश्वास है कि जो देश विदेशी संगीनों के बल पर दास बना कर रक्खा गया है वह निरन्तर युद्ध की स्थिति में है। क्योंकि एक निःशस्त्र जाति के लिए खुला युद्ध कर सकना असम्भव हो अस्तु मैंने सहसा आक्रमण किया। क्योंकि हमें बंदूक रखने की मनाही है मैंने अपना रिवाल्वर निकाला और फायर किया।

'एक हिन्दू के नाते मैं अनुभव करता हूं कि मेरे देश को हानि पहुंचाना ईश्वर का अपमान है। उसका कार्य राम का कार्य है। उसकी सेवा श्री कृष्ण की सेवा है। मेरा जैसा पुत्र जो धन और बुद्धि की दृष्टि से निर्धन है अपने रुधिर के अतिरिक्त माता को और क्या अर्पण कर सकता है वही मैंने माता की बलिवेदी पर भेंट रूप चढ़ा दिया है।

भारत में इस समय केवल एक ही पाठ की आवश्यकता है 'मरना कैसे जाय" और इसको सिखाने का एक ही रास्ता है कि स्वयं मरा जावे। इसीलिए मैं मर रहा हूं मैं अपने बलिदान में गौरव अनुभव करता हूं। भारत और इङ्गलैंड में यह व्यापार तब तक चलता रहेगा जब तक अंग्रेज और हिन्दू जातियां जीवित हैं (यदि यह अप्राकृतिक सम्बन्ध समाप्त नहीं होता) ईश्वर से मेरी केवल एक ही प्रार्थना है कि मैं पुनः इसी देश में जन्म लूं और मैं पुनः उसी पवित्र उद्देश्य के लिए मरूं। जब तक कि यह उद्देश्य सफल नहीं होता और मेरी मातृभूमि मानवता की भलाई के लिए तथा ईश्वर की गौरवश्री का प्रसार करने के लिए स्वतन्त्र नहीं हो जाती।

—मदनलाल धींगरा

मदनलाल के पिता और भाई ने सार्वजनिक रूप से उसे अपना पुत्र और भाई मानने से इनकार कर दिया परन्तु मातृभूमि ने तथा उसके कृतज्ञ देशवासियों ने उसको देश के सबसे अधिक प्रिय पुत्र के रूप में अपनाया। ऐसे ही पुत्र राष्ट्र की शक्ति

और गौरवश्री प्रदान करते हैं। उसके शरीर ने इङ्गलैंड की मिट्टी को धनी बनाया परन्तु उसकी आत्मा ने उसमें प्रया दन । देशभक्तों के हृदय में प्रकाश की ज्योति भर दी।

५ जुलाई १९०९ को वायली की हत्या के प्रति घृणा प्रदर्शित करने के लिए भारतीयों की एक आम सभा की गई। सावरकर ने धींगरा के कृत्य का खुले रूप में समर्थन किया और प्रस्ताव का विरोध किया। उनके साथ मारपीट की गई और उनको मीटिंग से बाहर निकाल दिया गया। वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ने टाइम्स' पत्र में एक पत्र लिखकर सावरकर का उस समय कानून के छात्र थे उनके विरोध का समर्थन किया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि जैसे ही इस प्रकार की हिंसात्मक घटनाओं का कारण समाप्त कर दिया जावेगा तो उसके परिणाम भी समाप्त हो जावेंगे। उन्होंने आगे कहा—'दमन भारत को फिर के बल विनाश की ओर ढकेलता है। यदि इग्लैंड अब भी यह विश्वास करता है कि वह भारत में मानवता के हित में जमा हुआ है तो जितना वह समझता है उससे शीघ्र ही उसका भ्रम दूर हो जावेगा आगे घटकर होने वाली हत्याओं की सूची सम्भवत लम्बी होगी और उसकी लम्बाई की जिम्मेदारी उन लोगों पर होगी जो भारत की स्वतन्त्रता के उद्देश्य का समर्थन न कर ब्रिटेन के हित में भारत को दास बनाए रखना चाहते हैं।

श्री श्याम कृष्ण वर्मा ने 'टाइम्स में लिखा—यद्यपि मेरा इस हत्या से कोई भी सम्बन्ध नहीं है परन्तु मैं स्पष्ट रूप से यह स्वीकार करता हूँ कि मैं उस कृत्य का अनुमोदन करता हूँ और उसके कर्ता को भारत की स्वतन्त्रता के निमित्त होने वाला हुतात्मा अर्थात शहीद मानता हूँ। मैं जानता हूँ कि मेरी इस स्पष्टोक्ति अथवा घोषणा से बहुतों को धक्का लगेगा किन्तु सौभाग्यवश कि इंग्लैंड में भी एस उन्नत विचारों के व्यक्ति हैं जो मुझसे सहमत हैं और मानते हैं कि राजनीतिक हत्या खून नहीं है।

लंदन में ऐसी दो घटनाएं हुई थीं जिनमें दो भारतीयों ने दो अंग्रेजों पर प्रहार किया था। मदनलाल ने उसको एक नया रूप ही दे दिया। १९०९ से १९४ तक एक लम्बा समय व्यतीत हो चुका था जबकि एक दूसरा अंग्रेज एक भारतीय के हाथों लगभग इन्हीं परिस्थितियों में मारा गया। इस प्रकार की लन्दन में भूली भटकी हत्याओं की घटनाएं बहुत कम हुई परन्तु उनका ब्रिटिश शासकों के मस्तिष्क पर भारत में बहुत अधिक संख्या में होने वाली घटनाओं जिनमें विदेशियों की अपेक्षा भारतीय अधिक आहत होते थे, की तुलना में बहुत अधिक प्रभाव पड़ता था।

जाँच से यह पता चला कि मदनलाल की आयु २२ वर्ष की थी उसने इंटर मीडिएट्स की परीक्षा अमृतसर से पास की थी वह कुछ समय लाहौर में भी पढ़ा था। उसने काश्मीर के बन्दोबस्त में नौकरी करली, जिसे उसने कुछ समय बाद शिमला काल्का टांगा सर्विस में बदल लिया। तीन वर्ष पूर्व वह इंग्लैंड गया और वहाँ इंजीनियरिंग कालेज का छात्र बन गया। वह इसी वर्ष अक्तूबर में अपनी शिक्षा समाप्त कर लौटने वाला था।

न्याय की अदालत में (१९१०)

क्रांतिकारी राजनीतिक अभियोगों की पैरवी करने वाले अभियोजकों तथा उससे सम्बन्धित लोगों की सुरक्षा खतरे में पड़ गई। ऐसा लगता था कि जोखिम की तनिक भी चिन्ता न कर खतरे में कूद पड़ने वाले क्रांतिकारियों ने सारी परिस्थिति

को इस प्रकार अपने नियन्त्रण में ले लिया कि वे जैसा चाहें कर सकते थे। अलीपुर बम षडयन्त्र के अभियोग ने उन अग्नि से खेलने वाले साहसी तरुणों की कल्पना शक्ति को जागृत कर दिया था। वे अपनी जोखिम की तनिक भी चिन्ता नहीं करते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि वे विश्वसनीय सरकारी अधिकारियों अथवा उन लोगों को जो ऐसे अभियोगों में सरकार की सहायता करते थे गोली मार कर मार डालने की अनेक घटनाएं एक के बाद दूसरी शीघ्र होने लगीं। सरकार जिसके पुलिस, गुप्तचरों, सूचना देने वालों, गजमत्तों पहरेदारों, रक्षकों की एक विशाल सेना और अस्त्र शस्त्रों से पूरी तरह सुसज्जित थे उन्हें रोकने में पर्याप्त सिद्ध हुए। अब ऐसा प्रतीत होता था कि साहसी, बुद्धिमान और बलवान युवक बहुत बड़ी संख्या में उप लब्ध थे। मानो कि देश की राजनीतिक मिट्टी क्रांति के जल में सिंचित होकर उर्वरा हो गई हो और बलिदानी शहीदों की फसल बहुत हरी भरी और कभी भी समाप्त न होने वाली पैदा हो रही थी।

महान शक्तिशाली भारत सरकार के पास बहुत बड़ी संख्या में विश्वसनीय और स्वामिभक्त कर्मचारी थे जिन्होंने अपने को अपनी योग्यता से प्रशासन की मजबूत भुजा सिद्ध किया था उसके बचाव और सुरक्षा के लिए सरकार ने रक्षकों और पहरेदारों की बहुत बड़ी सेना अत्यधिक व्यय करके रख छोड़ी थी। परन्तु क्रांतिकारी दल के युवक सदस्यों का प्रतिशोध उनके मार्ग के पथिक हो को निश्चयात्मक रूप से खोज निकालता और वे अपने उद्देश्य को उसके परिणामों की तनिक भी चिन्ता न कर अवश्य पूरा करने में सफल होते थे। वह दृश्य ऐसा था मानो मृत्यु दो विरोधी शिविरों के दो व्यक्तियों को मृत्यु के आलिंगन में खींच रही हो।

वीरेन्द्रनाथ दत्त गुप्त—जो केवल उन्नीस वर्ष का बालक था उसने अपने नेता से किसी जोखिम भरे कार्य के लिए आज्ञा मांगी और नेता ने उसे शमशुल आलम कुख्यात डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस का काज सम्हालने और उसे अपने दुष्कार्यों के क्षेत्र से सदैव के लिए हटा देने का गौरव प्रदान किया। आलम अलीपुर बम षडयन्त्र अभियोग से प्रारम्भ से ही सम्बन्धित था और सरकार उसको ऐसे उलझन भरे राजनीतिक अभियोग को चलाने वाले अधिकारियों में सबसे योग्य मानती थी। वह अभियोजक के रूप में राजनीतिक अभियोगों में बहुत रुचि लेता था और प्रसन्नता अनुभव करता था। मानो वह उसकी सांस का अंग ही बन गया था।

ऐसा प्रतीत होता था कि उसको इस बात का भान हो गया था कि क्रांतिकारी दल के आदमी उसका पीछा कर रहे हैं और अलीपुर षडयन्त्र अभियोग में अभियुक्तों की गिरफ्तारी के बाद उस पर दो बार प्रहार हो चुके थे। १० फरवरी १९०९ को आशु विश्वास की मृत्यु के कुछ दिनों उपरांत उसका एक युवक पीछा कर रहा था जिसे उसके रक्षकों ने पकड़ लिया। दुर्भाग्यवश साक्षी के अभाव में उस युवक को छोड़ना पड़ा।

२४ जनवरी, १९१० से एक सप्ताह पूर्व आलम मदान में जा रहा था तो एक बंगाली युवक ने उसका पीछा किया। उस दिन मुकदमे की सुनवाई समाप्त हो जाने के उपरांत सायंकाल ५.३० पर आलम अपने कागजों तथा मुकदमे से सम्बन्धित वस्तुओं को समेट कर अदालत के कमरे से बाहर आया और जीने की ओर बढ़ रहा था जो कि अदालत के पूर्वी प्रवेश द्वार के लिए नीचे की ओर गया था, उसके सामने

एडवोकेट जनरल थे और ठीक उसके पीछे बगाल पुलिस का एक सशस्त्र सिपाही जो उस पर नजर रखन के लिए नियुक्त किया था चल रहा था। वह जीने के ऊपरी सिरे पर पहुँचन के निकट ही था कि उसे एक बगाली युवक दिखलाई दिया। ऐसा प्रतीत होता था कि वह बराडा म फिर रहा था और अपने शिकार की गतिविधियों पर नजर रख रहा था। आलम के अर्दली ने उनके हाथ में एक रिवाल्वर देखा। लडके ने अपनी बाह को फैलाया आलम पर निशाना साधा और गोली दाग दी। गोली लगते ही आलम ने चिल्लाकर पुकारा पकडो और अपनी छडी जो उसके हाथ में थी अर्दली को दे दी तुरन्त ही वह पीठ के बल पृथ्वी पर गिर पडा। गोली सीधी उसके हृदय मे घुस गई थी। आलम, जो पुलिस का निष्ठावान अधिकारी था तत्काल ही मर गया।

जसे ही लोग चिल्लाए हत्या' बिरेन जीने से नीचे उतरा। उसको किसी ने नहीं रोका। वह उतर कर पुरानी पोस्ट आफिस की सडक के सामने अदालत की इमारत के पूर्वी फाटक की ओर दौडा। वह फाटक बद था और भीड का एक भाग उसके बहुत समीप आ गया थ। बिरेन ने दूसरी गोली चलाई और भीड तीतर बितर हो गई। वह दूसरे फाठक से निकल कर सडक पर आया और रिवाल्वर हाथ में लिए उत्तर की ओर भागा।

अब उसके पीछे घुड सवार पुलिस दौडी परन्तु यह उसके लिए इतनी कठिनाई की बात नहीं थी जितनी कि सडक पर भीड इकट्ठी हो गई थी उसके कारण वह तेजी से भाग नही पा रहा था। बहुत कठिनाई से वह हेस्टिग्ज स्ट्रीट पहुँचा होगा कि अश्वारोही पुलिस ने उसको पा लिया। उसने गोली चलाई परन्तु निशाना चूक गया। उसको गिरफ्तार कर लिया गया और तत्काल उसके हाथ से रिवाल्वर छीन लिया गया। वह रिवाल्वर ०३८० बोर का बल्ले रिवाल्वर था जिसमें ६ चैम्बर थे उसके पास एक खंजर और चाकू भी था।

२७ जनवरी १६१० को उसे चीफ प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया गया और दूसरे ही दिन उसको उच्च न्यायालय के सेशन सुपुर्द कर दिया गया।

३१ जनवरी, १६१० को उच्च न्यायालय में अभियोग आरम्भ हुआ। अभियुक्त दुबला शान्त और नितान्त उदासीन दिखाई दे रहा था। जब उसको अभियुक्त के कठघरे मे प्रवेश किया तो उसके अधरों पर मुस्कराहट खेल रही थी। उस पर २४ जनवरी १६१० को शम्सुल आलम की हत्या करने का अभियोग लगाया गया। अभियुक्त ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने केवल यही कहा कि उसे किसी वकील की सेवाओं की आवश्यकता नही है क्योंकि वह दोष स्वीकार करने जा रहा है। उसकी ओर से अभियोग को सुनने या देखने के लिए कोई व्यक्ति न्यायालय में उपस्थित नहीं था। अभियुक्त ने कुछ भी कहना पसन्द नहीं किया। उसने किसी से कोई प्रश्न पूछने बचाव के पक्ष के साक्षी को उपस्थित करने अथवा जूरी को अपने अभियोग के सम्बन्ध में कुछ कहने से इन्कार कर दिया।

जूरी ने बिना परस्पर परामर्श किए ही अभियुक्त को दोषी घोषित कर दिया और न्यायाधीश ने प्राणदण्ड का निर्णय दे दिया।

जबकि अभियोग चल रहा था तब अभियुक्त ने कचौरी, रसगुल्ला और सदेश खाने की इच्छा प्रकट की जो उसको दिए गए। ऐसा कहा गया कि फांसी से पूर्व बिरेन

ने एक बयान दिया था जिसमें उसने यतीन मुकर्जी तथा अन्यों का नाम लिया कि उन्होंने यह हत्या करने को कहा था। सत्य बात यह थी कि पुलिस ने एक समाचार पत्र के पृष्ठ को नए रूप से छपवाया जिसमें उसके नेता जतीन मुकर्जी का एक फर्जी वक्तव्य दिया जिसमें नेता द्वारा वीरेन के विरुद्ध अपवाद की बात कही गई थी जिससे कि वीरेन से अपराध स्वीकार का बयान करवाया जा सके और अन्य लोगों को फांसा जा सके। फौजदारी अभियोग के इतिहास में यह सबसे घणित और लज्जाजनक कृत्य था जबकि अठारह वर्ष के एक लड़के को जो मृत्यु के द्वार पर खड़ा था धोखा देकर उससे अन्य व्यक्तियों को फंसाने के लिए बयान दिलाने का षडयन्त्र किया गया। फांसी के पूर्व वीरेन को पुलिस की धोखेबाजी का पता चल गया तो उसको अपने कृत्य पर बहुत खेद हुआ और उसने यतीन मुकर्जी से क्षमा याचना की। यतीन मुकर्जी को वीरेन में पूर्ण विश्वास था कि वह सामान्य स्थिति में कभी भी कोई ओछा कार्य नहीं कर सकता था।

२१ फरवरी १९१० को वीरेन को फांसी दे दी गई। अपने अनेक साथियों की ही तरह उस बालक ने कभी गम्भीर राजनीतिक कार्यों के प्रति विशेष अभिरुचि प्रदर्शित नहीं की। जन्म से वह बद्य था वह ढाका जिले के विक्रमपुर गांव का रहने वाला था। जलपाईगुरी में उसकी बहिन के घर रहकर उसकी शिक्षा हुई थी और स्कूल की प्राथमिक कक्षा तक उसकी शिक्षा हुई थी।

उसे अमर कर देने वाली घटना के लगभग सात वर्ष पूर्व वीरेन कलकत्ता आया और अपने बड़े भाई के साथ ठहरा। दो महीने पूर्व वह बहू चटर्जी स्ट्रीट के एक मेस में चला गया।

जिस दिन यह घटना घटी उस दिन वह ८॥ या ९ बजे प्रातःकाल आया और मेस ११ बजे तक रहा परन्तु उसने अपने व्यवहार से ऐसा कोई चिह्न प्रगट नहीं किया जो उसके अन्तर तथा मस्तिष्क में उठने वाले तूफान की ओर इंगित करता। वह नितान्त शान्त रहा।

घातक विदाई (१९०९–१९१०)

अभिनव भारत समिति की समस्त महाराष्ट्र में शाखाएं थीं और महाराष्ट्र के तरुण उन समितियों के उद्देश्यों को सफल बनाने में प्रयत्नशील रहते थे। कोई भी घटना जो देश के हितों के विरुद्ध समझी जाती थी वह उस समिति के सदस्यों पर ऐसी प्रतिक्रिया उत्पन्न करती थी कि उसके कारण कभी कभी वे खुले आम क्रान्तिकारी कृत्यों को कर उसको प्रदर्शित करते थे।

गणेश दामोदर सावरकर को आजीवन कालेपानी (निर्वासन) के कल्पनातीत कठोर दंड ने देश में क्षोभ की लहर उत्पन्न कर दी। नासिक के कतिपय उष्ण रुधिर वाले तरुणों ने मजिस्ट्रेट के इस अनुचित व्यवहार का प्रतिशोध लेने का निश्चय किया। मजिस्ट्रेट ने सावरकर को दंड देकर देश को भयंकर हानि पहुंचाई थी।

ऐसा कहा जाता है कि हृदय की गहन इच्छा मस्तिष्क को उसको पूरा करने के लिए उपाय खोज निकालने के लिए विवश कर देती है। देश के लिए जो कुछ श्रेष्ठ और देशभक्तिपूर्ण था वह सारा का सारा गणेश सावरकर में प्रतिस्फुटित हुआ था। वे लड़के इकट्ठे हुए और अपनी योजना को एक निश्चित रूप देने के लिए विचार विमर्श किया। उस चर्चा में उन्होंने यह भी निश्चय किया कि उनमें कष्टों को सहन करने और आवश्यकता पड़ने पर सर्वोच्च बलिदान कर सकने के लिए कौन है

जो इस काम के लिए उपयुक्त है। जब इस प्रकार का वाद विवाद चल रहा था तो एक मित्र ने जब यह चुनौती दी कि उनमें से कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो मदनलाल धींगरा के स्तर का साहसी और बलिदानी हो तो कान्हेरे अपने साहस और सहनशक्ति को प्रमाणित करने के लिए तेज और गरम शीशे की चिमनी को नंगे हाथ में दो मिनट तक पकड़े रहा।

१९०८ के अन्त तक वे साहसी लड़के एकत्रित हुए और समिति में तीन नए सदस्य इस उद्देश्य से भर्ती किए गए कि अपने सम्मिलित और समान उद्देश्य को पूरा करने के लिए कोष और अस्त्र शस्त्र इकट्ठे किए जा सकें।

अनन्त लक्ष्मण कान्हेरे—अनन्त लक्ष्मण कान्हेरे औरंगाबाद की अभिनव समिति का सदस्य था। औरंगाबाद नासिक से बहुत दूर एक देशी राज्य का कस्बा था जहां कई घण्टों की रेल यात्रा से पहुंचा जा सकता था। मई, १९०९ में आस-पास गणेश सावरकर के विरुद्ध कायरतापूर्ण और नृशंस फैसले के फलस्वरूप जज जैक्सन को मारने का विचार विनायक नारायन देशपांडे के मन में उठा और उसने अपना यह विचार अपने अन्य साथियों पर प्रकट किया। उनमें से कृष्ण गोपाल कर्वे तथा एक अन्य साथी ने उसे पूरी गम्भीरता के साथ स्वीकार किया। इसके पूर्व कर्वे ने बम बनाना सीख लिया था और कुछ पिस्तौल विभिन्न स्थानों से इकट्ठे कर लिए थे।

जबकि योजना पूरी तरह से तैयार हो गई तो अनन्त लक्ष्मण कान्हेरे जो उस समय औरंगाबाद में था उसको नासिक बुला भेजा गया। वह १९ दिसम्बर १९०८, को नासिक पहुंचा। दूसरे दिन दल के एक सदस्य के मकान पर वह अन्य सभी दल के साथियों से मिला। बातचीत के बीच अनन्त लक्ष्मण कान्हेरे ने बताया कि उसे पिस्तौल चलाने का कोई अनुभव नहीं है। साथियों ने उससे कहा कि उसे पिस्तौल चलाने का अभ्यास करा दिया जावेगा। कान्हेरे विनायक नारायन देशपांडे के साथ रात्रि को पंचवटी स्कूल गया जहां देशपांडे अध्यापक था। २० दिसम्बर १९०९ के प्रातःकाल में वे घेट रोड गए जहां कान्हेरे ने हवा में पिस्तौल चलाई और अभ्यास किया। उसको कचहरी ले जाया गया और जैक्सन को पहिचनवा दिया गया।

नासिक में अपने सेवाकाल को समाप्त कर जैक्सन को पूना के लिए तबादले की आज्ञा मिल चुकी थी और २१ दिसम्बर १९०९ को उसको विदाई देने के लिए विजयानन्द थियेटर (रंगमंच) पर एक नाटक के प्रदर्शन की व्यवस्था की गई थी।

जैक्सन की हत्या की योजना को भी अंतिम रूप दिया जा चुका था। २१ दिसम्बर के सायंकाल को देशपांडे के मकान पर कान्हेरे को आवश्यक शस्त्र दे दिए गए। उनमें एक ब्राउनिंग पिस्तौल और निकल प्लेटेड रिवाल्वर था। पूर्व निश्चय के अनुसार कान्हेरे के पास आरसेनिक का एक पैकेट भी था जिससे कि कैद हो जाने की स्थिति में वह आत्महत्या कर सके। उस नाटक में प्रवेश पाने के लिये उसके पास दो टिकिट भी थे। उसके अतिरिक्त दो या तीन किसी तरह थियेटर के अन्दर और घुस गए। देशपांडे कान्हेरे से लगभग सात गज की दूरी पर बैठा। यदि किसी प्रकार कान्हेरे जैक्सन की हत्या करने में असफल हो जावे तो एक दूसरे क्रांतिकारी युवक को यह कार्य पूरा करने का भार दिया गया था वह उस कुर्सी के बहुत पास बैठ गया जो जैक्सन के बैठने के लिए विशेष रूप से रक्खी गई थी। यदि दोनों असफल हो जावें तो स्वयं देशपांडे रणक्षेत्र में उतरें और जैक्सन की हत्या कर दें। कहने का अर्थ यह

था कि क्रांतिकारी समिति की योजना यह थी कि अवसर खोना नहीं चाहिए, जक्सन को मारना ही है।

नासिक निवासियों के निमन्त्रण पर जक्सन पूर्व निश्चय के अनुसार सभा में विदाई समारोह में सम्मिलित होने आया। जैसे ही कि जक्सन पिट (थियेटर के सामने की नीची भूमि) के पास से निकल रहा था और उसके लिए आरकेस्ट्रा में सुरक्षित कुर्सी से तीन या चार कतार पीछे था कान्हेरे जो पिट के एक कोने में बैठा था उठ कर अपने शिकार के बहुत समीप आ गया। एक साथ भयानक तेज धड़ाका हुआ लोगों ने समझा कि कोई पटाखा छोड़ा गया। वह धड़ाका कान्हेरे की पिस्तौल चलने का था। पहला फायर चूक गया, गोली जकसन की बगल में से होकर निकल गई। दूसरी गोली उसकी बगल में लगी और वह गिर गया। उसके शरीर में सामने की ओर से पांच या ६ गोलियां मारी गई वास्तव में उसका शरीर गोलियों से छलनी हो गया और उसकी तत्काल मृत्यु हो गई।

कान्हेरे को उसी स्थान पर पकड़ लिया गया और जिन्होंने उसे पकड़ा उन्होंने उसे आत्म हत्या नहीं करने दी। उसने अपने पकड़ने वालों से कहा कि उसे भागने की तनिक भी इच्छा नहीं है उसे प्रसन्नता इस बात की है कि वह अपना कर्तव्य सफलतापूर्वक पूरा कर सका। उसकी जेब में एक लिखा हुआ नोट था जिसका अर्थ यह था कि जकसन सदैव अच्छी बातें कहता है परन्तु करता कुछ नहीं है।

कृष्ण गोपाल कर्वे २४ दिसम्बर को पकड़ा गया और अन्य लोग विभिन्न तारीखों में उसके आसपास ही पकड़े गए।

अनन्त लक्ष्मण कान्हेरे विनायक नारायण देशपांडे, और कृष्ण गोपाल कर्वे तथा अन्य चार अभियुक्तों का अभियोग १४ जनवरी १९१० को आरम्भ हुआ। प्रारम्भिक जांच के उपरान्त अभियोग २ फरवरी १९१० को उच्च न्यायालय के विशेष ट्रिब्यूनल को सौंप दिया गया।

अभियुक्तों विशेषकर कान्हेरे का व्यवहार इस प्रकार का था कि मानो जो कुछ हो रहा है उससे उसको कोई संबंध नहीं है वह अभियोग की ओर से नितान्त उदासीन था।

उच्च न्यायालय में अभियोग ७ मार्च १९१० को आरम्भ हुआ। अभियुक्तों पर हत्या करने हत्या में सहायता पहुंचाने, हत्या के लिए उत्साहित करने आदि के आरोप लगाए गए। २० मार्च १९१० को फैसला सुना दिया गया अनन्त लक्ष्मण कान्हेरे कृष्ण गोपाल कर्वे और विनायक नारायण देशपांडे को प्राण दण्ड दिया गया, तीन अन्यों को आजीवन कालापानी (निर्वासन) और एक को दो वर्ष का कठोर कारावास दिया गया।

प्राण दंड की सजा देने के कुछ दिनों के उपरान्त दंडित अभियुक्तों को बायकुला के सुधार गृह से हटाकर जहां कि वे नजरबन्द थे बम्बई के उपनगर के थाना के विशेष जेल में बदल दिया गया।

१९ अप्रैल १९१० को प्रातःकाल ६ बजे अभियुक्तों को थाने के विशेष कारावास में प्राणदण्ड दे दिया गया। फांसी का तख्ता और सूली जो कि एक निश्चित स्थान पर स्थित थी उसको इस प्रकार ढक दिया गया कि वह जनता को दिखाई न दे और कोई व्यक्ति उन फांसियों को देख न सके।

कलक का विषय (१६१०)

सतखिरा पुलिस स्टेशन के घोषागर में कालाचद बोस सितम्बर १६१० म एक डाके के मामले में पकड़े जाकर सतखिरा उपजेल में हिरासत म रक्खे गए। एक प्रात काल वह अपनी कोठरी से गायब हो गए। उनकी बड़ी तेजी से तलाश की गई और वे केदारपुर के समीप गिरफ्तार कर लिए गए और माधुरा लाए गए। वे पुलिस की हिरासत में थे पुलिस की हिरासत में उनके साथ कैसा व्यवहार हुआ यह कोई नही जानता केवल उसकी कल्पना ही की जा सकती है। एक दिन उनका मृत शरीर सत खिरा की सूनसान जगह पर पड़ा मिला। दिखाने के लिए कालाच द की मृत्यु के कारण की जांच करने मे सरकार की हलचल मे कोई कमी नहीं थी। जाच के लिए एक एस डी ओ माधुरा पहुचा। उसके अतिरिक्त कालाच द की आतो को कलकत्ता रसायनिक जाच के लिए भी भेजा गया। परन्तु न तो अभियुक्त के सम्बधियो को और न जनता को ही कालाचन्द की मृत्यु के रहस्य का कुछ पता चला। स्थानीय समाचार पत्र 'खुलना वासी' में केवल एक सूक्ष्म सी सूचना मात्र निकली।

निरन्तर खतरे में (१६११)

पुलिस के उन अधिकारियों का जीवन जो कि जाच करते थे जसे जैसे क्रांतिकारी सगठना की कायवाहिया बढ़ती जा रही थी अधिकाधिक असुरक्षित होता जा रहा था। २१ फरवरी, १६११ को गुप्तचर विभाग के श्री श्रीपचन्द्र चक्रवर्ती सायकाल पौने आठ बजे अपने एक मित्र के साथ अपने मकान सिकदार बागान स्ट्रीट को लौट रहे थे। एक अनजाने हत्यारे ने उनको पीछे से इतने समीप से गोली मारी कि उनकी कमीज म आग लग गई। उस स्थान पर प्रकाश बहुत मद था, और वहां सुनसान था, कोई आ जा नहीं रहा था।

उस पुलिस अधिकारी के शरीर में से जिगर के पास से गोली आरपार हो गई। वह बहुत बलवान व्यक्ति था। यद्यपि वह गम्भीर रूप से घायल हो गया था परन्तु वह अपने चाचा के अस्पताल की ओर जो घटना स्थल से दूर था भागा। उसको तुरत मेडीकल कालेज ले जाया गया और उसम उपचार के बावजूद एक घन्टे के उपरा त उसकी मृत्यु हो गई।

उस घटना के सम्बन्ध में न तो कोई गिरफ्तारी हुई और न हत्यारे का कोई पता चला।

भाग्य की विडम्बना (१६१० ११)

दुर्भाग्यग्रस्त बालक चारु चन्द्र घोष हावड़ा गग केस के उन छियालीस अभि युक्तों में स था जिन्हें २० जुलाई, १६१० को सम्राट के विरुद्ध युद्ध छेड़ने के आरोप म अभियोग के लिए सेशन सुपुर्द किया गया था। चारु को २४ माच, १६१० को गिरफ्तार किया गया जबकि वह गम्भीर रूप से अस्वस्थ था। वह इतना अधिक बीमार था कि वह अपने अभियोग मे मुश्किल से खड़ा हो सकता था। अदालत मे उपस्थित होने का अथ था उसकी निश्चित मृत्यु।

१४ अप्रेल १६१४ को चारु हावड़ा के स्पेशल मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया गया। उसकी जमानत के लिए इस आधार पर प्रार्थना पत्र दिया गया कि अभियुक्त को मिरगी के फिट पड़ते हैं और उसको जेल में रखने से उसका जीवन ही खतरे में पड़ जावेगा। उस प्रार्थना को बिना उस पर कुछ विचार किए अस्वीकार कर दिया

गया। उसके उपरान्त जेल के मेडिकल ऑफिसर की रिपोर्ट पर चारु को १६ मई १६१० को जमानत पर छोड़ दिया गया। कठिनाई से चार महीने ही व्यतीत हुए होंगे कि वह २४ सितम्बर १६१० को फिर गिरफ्तार कर लिया गया। उसको ४ जनवरी १६११ तक प्रतिदिन स्पेशल मजिस्ट्रेट की अदालत मे उपस्थित होने पर विवश किया गया।

उसका स्वास्थ्य अब तेजी से गिरने लगा और उच्च न्यायालय का एक और प्रार्थना पत्र दिया गया। हाई कोर्ट मे सरकारी वकील और जज के मध्य एक अत्यन्त मनोरंजक और अजीब तर्कों का आदान प्रदान हुआ जिसमे दोनो ही एक दूसरे पर जमानत की जिम्मेदारी डालने का प्रयत्न करते रहे और जमानत पर छूट जाने के उपरान्त उसके सम्भावित गायब हो जाने की चर्चा करते रहे। सरकारी वकील कहता था कि यदि न्यायाधीश महोदय अभियुक्त को जमानत पर छोड़ना चाहें तो अपने उत्तरदायित्व पर छोड़ सकते हैं। जबकि जज महोदय सरकारी वकील की जमानत पर छोड़ने के लिए निश्चित स्वीकृति चाहते थे। अदालत में जो जनता उपस्थित थी वह जज और सरकारी वकील के मध्य इस असाधारण संघर्ष को रुचि के साथ सुनती थी। अन्त में एक मध्य रास्ता निकाला गया। चारु को अभियोग की जिस दिन सुनवाई हो अदालत में उपस्थित होने से मुक्त कर दिया गया।

जेल की एकान्त कोठरी में बन्द अभियुक्त के लिए यह जीवन और मरण का प्रश्न था। अपनी मृत्यु के कतिपय दिन पहले से पूर्व चारु को पेरों के पक्षाघात के कारण जमानत पर छोड़ दिया गया। फैसला सुनाने के पूर्व ही चारु ने न्यायालय को धता बतादी। १६ अप्रेल १६११ को दयालु भगवान ने सरकार की प्रतिशोध की भावना और कानून के पंजे से चारु को निकाल कर अपने संरक्षण में ले लिया। उस दिन रात्रि को बकुलबागान भवानीपुर म चारु की मृत्यु हो गई।

शोकातुर चारु की मा ने लफ्टिनट गवरनर को एक स्मृति पत्र इस आशय का दिया कि यदि मेरे अभागे पुत्र को कैद करके एकान्त काठरी में जेल में न रखा जाता तो उसकी इतनी कम उमर में मृत्यु नहीं होती। उस समय उसका स्वास्थ्य इतना गिरा हुआ था कि उसको बहुत अच्छी देखभाल तथा सावधानी के साथ चिकित्सा कराने की आवश्यकता थी तथा उसकी बहुत अच्छी सेवा सुश्रुसा तथा पूर्ण विश्राम की आवश्यकता थी।

उस स्मृति पत्र को जो कि एक प्रकार से बेकार ही था उसको सरकार ने रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। शोकातुर मां को उसका कोई उत्तर नहीं दिया गया। देश के कानून और व्यवस्था के सम्मान की रक्षा हो गई परन्तु भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नीव की एक ईंट और खिसक गई।

स्टेशन की दुर्घटना (१६१०-११)

जब कि बंगाल में राजनीतिक असंतोष चरम सीमा पर पहुंच चुका था और हिंसात्मक राजनीतिक कार्यवाहियां जल्दी जल्दी हो रही थीं तो यह सम्भव नहीं था कि दक्षिण उन विचारों के प्रभाव से बचा रहता जिससे कि कम से कम तरुणों के एक वर्ग में तो यह भावना तेज हो गई कि उन्हें देश को स्वतन्त्र करने के लिए आवश्यक पग उठाना ही चाहिए।

१६१० के प्रारम्भिक भाग में तूनीकोरन में स्वतन्त्रता या दोलन के संगठन कर्ताओं ने सभाएं की जिनमें वक्ताओं ने उग्र राजद्रोहात्मक भाषण दिए जिनमे से

राजनीतिक मुकदमो के उन फसलो की घोर निन्दा और भर्त्सना की गई और कहा गया कि अग्रेजो का भारत मे रहना देश के हितो के लिए अत्यन्त हानिकर है। 'भारत माता परिषद्' के नाम से उन्होने उस सगठन को स्थापित किया उसमे अपने उद्देश्य को किस प्रकार पूरा किया जाय उनके साधनो और उपायो पर विचार होता था और एक स्तर पर वे लोग इस परिणाम पर पहुचे कि योरोपियनों को व्यक्तिश तलवार, लाठी या पत्थर से मारने से कोई लाभ नही, हमे १८५७ की भांति सशस्त्र विप्लव करना चाहिए।

क्रातिकारियो ने शपथ लेकर कुछ केन्द्र तेनकासी और तूतीकोरिन मे स्थापित किए और ट्रावनकोर के पुनालूर तथा शेनकोटाह म शाखाए स्थापित की। तूतीकोरिन मुख्य कार्यालय का केन्द्र चुना गया और उस स्थान पर मीटिंग होने लगी। एक सभा मे 'मा' काली मूर्ति का प्रदशन किया गया और जल मे सिंदूर तथा चन्दन रखा गया। जिससे मा काली प्रसन्न हो। इसके अतिरिक्त अपने उद्देश्य की सफलता के लिए और भी क्रियाए की गई। इन बैठकों में से एक मे 'वांची ऐयर' ने कहा कि भारत में प्रति वर्ष करोड़ो आदमी मरते हैं अग्रेजी शासन ने दुर्भिक्ष, प्लेग और घोर निर्धनता प्रदान कर दी है। इस अत्याचार का अन्त करने के लिए गोरे लोगो को मारना होगा यदि हम उनके अनिच्छुक हाथो से स्वराज्य छीनना चाहते हैं। उसने इस बात का वचन दिया कि इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए वह पार्टी को अस्त्र शस्त्र देगा। उसने उस मीटिंग मे उपस्थित सदस्यों को याद दिलाया कि 'ऐश' ने स्वदेशी स्टीम-नवीगेशन कम्पनी का सर्वनाश कर दिया और राजनीतिक आंदोलन के प्रसिद्ध और प्रमुख नेताओ को बहुत लम्बे काल के लिए कारागार का दण्ड देता है। एक दूसरी मीटिंग मे वाचनी ने अपने मित्रो से अग्रेजो को भारत से निकाल बाहर करने के लिए गुप्त समितिया स्थापित करने के लिए कहा। वह अस्त्र शस्त्र इकट्ठे करने के लिए स्वय पांडीचेरी गया।

उस समान उद्देश्य को पूरा करने के लिए यह गुप्त समितिया १ जनवरी, १९११ के मध्य बहुत अधिक सक्रिय हो गई और उनके उत्साही सदस्य तेनकासी तूतीकोरिन, शेनकोटाह, पुनालूर, ओट्टापदाराम और अन्य स्थानो पर बहुधा मिलते रहते थे बडे पमाने पर जन विद्रोह की तयारियां पीछे पड गई। ट्रावकोर वन विभाग का एक क्लर्क वांची ने अपने कुछ चुने हुए मित्रो के साथ तिनेवली जिले के जिलाधीश राबर्ट विलियम ऐश्टकोट को मारने का निश्चय किया। ऐश को नीचे लिखे शब्दो मे चेतावनी दी गई —भारत माता परिषद के सदस्य तुमको नीचे लिखी चेतावनी देते हैं 'किसी जनकार्य में हस्तक्षेप मत करो' यदि तुम इस चेतावनी के बाद भी अपने हठ पर अड़े रहोगे तो तुम्हारे सिर को कुछ ही दिना म कुचल दिया जायेगा।

तुम्हारा विश्वासभाजन
वी एम ए
(उपनाम भारत माता एसोशिएसन)

१२ दिसम्बर, १९१० को उपरोक्त पत्र डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस को भेज दिया गया। इस घटना के कुछ दिन पूर्व तामिल म एक छपा हुआ पैम्फलेट जिसके नीचे व देमातरम हस्ताक्षर के स्थान पर छपा था डाक से हजारो की सख्या म भेजा गया। जिसमें भारतीयों से अभिनव भारत समाज गुप्त समिति के सदस्य बनने की

अपील की गई थी। उस पम्पलेट में स्पष्ट शब्दों में कुछ प्रतिज्ञाएं दी गई थी जिन्हें समिति के नए सदस्य को लेना अनिवार्य था। इसके साथ ही उसमें भारतीयो को अंग्रेजों की हत्या करने और भारत को विदेशी दासता से मुक्त करने के लिए प्रोत्साहित किया गया था।

अब वाची 'ऐयर ऐश को दी गई धमकी को कार्यान्वित करने के लिए गम्भीरता पूर्वक तैयारियां करने लगा। १६ जून १६११ को वह अपने एक मित्र की हुंडी की दूकान पर गया और वहा उसने रात्रि को एक दूसरे साथी के साथ जिसका उसने नाम नहीं बतलाया विश्राम किया। दूसरे दिन भी उसने अपने साथी के साथ वहीं रात्रि व्यतीत की। १७ जून को प्रात काल दोनों यह कह कर कि वे ट्रेन से मदूरा जा रहे हैं चल दिए।

१७ जून १६११ को भवितव्यता का वह दिन आया। श्री तथा श्रीमती ऐश तिनेवली से मनयाची जक्शन की यात्रा कर रहे थे जहा उन्हे कोडाइकानाल के लिए गाडी बदलना था। 'वाची उस ट्रेन में तिनेवली से उस दम्पति का पीछा कर रहा था। वह स्टेशन पर उतर पडा और अपने शिकार पर कडी निगाह रख रहा था।

वे लोग मनयाची जक्शन लगभग ग्यारह बजे दिन के पहुँचे। ट्रेन स्टेशन के पश्चिम के अन्तिम प्लेटफाम पर ठहरी। प्लेटफाम तीन थे और टिकट घर दो प्लेट फार्मों के बीच में था पूर्व का तीसरा प्लेट फाम और बुकिंग आफिस के बीच रेलवे लाइन थी।

जब तिनवली से ट्रेन मनयाची स्टेशन पर आकर रुकी तो श्रीयुत और श्रीमती ऐश पहले दर्जे के डिब्बे से उतरे और प्लेट फाम नम्बर दो पर खडी गाडी मे बठ गए तब तक उनके नौकर ने तिनेवली वाली गाडी से असबाब हटाकर प्लेट फाम नम्बर ३ पर लगा दिया था जिससे कि तूतीकोरन की जब बोट मेल आ जावे तो उसमें चढा दिया जाव।

श्री एश पश्चिम की ओर मुख किए बठे कुछ पढ रहे थे और श्रीमती एश पूर्व की ओर स्थित प्लेट फाम की ओर देख रही थीं जहा कि बोट मेल आने वाली थी। बोट मेल को पकडने के लिए यात्री जब तिनेवेली की गाडी से उतर कर प्लेट फाम पर आ गए उसके कुछ मिनट बाद एक धडाका सुनाई दिया। कुछ यात्रियो ने समझा कि सोडा वाटर की बोतल फट गई उसका धडाका है। किन्तु उसी समय महिला का चीत्कार सुनाई दिया। वह सहायता के लिए चीख रही थी। ऐश के गले की हड्डी के नीचे छाती की बाईं ओर गोली लगी थी। वह गोली एक अधेड आयु के औसत ऊंचाई के आदमी के रिवाल्वर से निकली थी। कुछ लोगो ने बाद को बतलाया कि उन्होंने उस आदमी को देखा था जबकि वह रिवाल्वर में प्लेट फाम पर गोली मार रहा था। एश गाडी के फर्श पर गिर पडा था। उसके शरीर से बहुत रुधिर बह रहा था। उसको तिनवली की गाडी के एक डिब्बे में ले जाया गया जो कि तेजी से डाक्टरी चिकित्सा प्राप्त करने के लिए चल पडी।

महिला की चीख और चीत्कार के कारण जो लोग प्लेट फाम पर खडे थे उस ओर भागे जिधर से धडाके की आवाज आई थी। प्लेट फाम नबर २ पर एक आदमी रिवाल्वर लिए खडा दिखलाई पडा। उसके साथ एक लडका था जिसे लोगों ने उसका नौकर समझा।

गोली मारने वाला हत्यारा कुछ मिनट प्लेटफाम पर इसलिए खडा रहा

कि वह जान सके कि गोली प्रभावकारी हुई या नही और जबकि उसको निशाना ठीक लगने का विश्वास हो गया तो वह उस स्थान से भाग जाने के उपक्रम में था कि ऐश के अर्दली ने उसे पकड लिया परन्तु जब उसने रिवाल्वर से गोली मारने की धमकी दी तो उसे छोड दिया।

गोली चलाने वाला यह कहते हुए कि अगर कोई भी उसके समीप आया तो गोली मार दूंगा प्लेटफार्म पर दौडा और अन्त में प्लेटफार्म के सिरे पर जो शौचालय था उसमे घुस गया और उसने अपने गले में गोली मारली उसकी वहीं तत्काल मृत्यु हो गई। घटना के पूर्व यात्री के पास जो लडका प्लेटफार्म पर खडा था वह मनमाची स्टेशन के उत्तर की ओर भागने लगा।

जबकि ऐश के गोली लगी तो उसने अपने टोप को उतार कर गोली मारने वाले पर फेंका वह अपने लक्ष्य पर न पहुचकर प्लेटफार्म पर गिर गया। घटना के उपरान्त पुलिस बहुत सक्रिय हो उठी और प्लेटफार्म पर खडे लोगों को अन्धाधुन्ध पकडने लगी। जब जाच समाप्त हो गई तो पुलिस ने उच्च न्यायालय के एक विशेष ट्रिब्यूनल के समक्ष १४ व्यक्तियों पर सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने के षडयन्त्र हत्या षडयन्त्र तथा उसमें सहायक होने के आरोप लगाकर ३० अगस्त, १९११ को मुकदमा चलाया। जब अभियुक्तो का मुकदमा शुरू होने की वे लोग प्रतीक्षा कर रहे थे तो उसमें से एक पुनारोल के एक समृद्धिशाली ब्राह्मण वकील श्री वकटेश्वर अय्यर ने अपने गले को एक तेज चाकू से काट कर आत्म हत्या करली और एक दूसरे अभियुक्त श्री धमराज अय्यर ने जहर खाकर आत्म हत्या की। दोनों ने अक्टूबर १९११ में आत्महत्या की थी। मामले में कुछ अभियुक्तों को विभिन्न काल की सजा दी गई केवल दो चार ही छोडे गए।

एक समान भाग्य (१९११)

अपने कृत्या के कारण खुफिया पुलिस का सब इन्स्पेक्टर राजकुमार राय मैमनसिंह के क्रांतिकारियों का लक्ष्य बन गया था। १९ जून १९११ को जब राजकुमार अपने घर में घुस रहा था जो कि बगाल स्टेशन के बहुत समीप ही स्थित था उस समय एक अनजाने अज्ञातनामक ने उसके माथे पर और शरीर के विभिन्न अगों पर गोली चलाई वह मर कर पृथ्वी पर गिर पडा।

उसके साथी कोर्ट इन्स्पेक्टर ने केवल एक मूर्ति को तेजी से अन्धकार में विलीन होते भर देखा। दोषी को पहचानने का न तो समय था और न अवसर ही था और इस घटना के सम्बन्ध में न कोई कभी गिरफ्तारी हुई।

कल्ले ग्राम (१९११)

ढाका सत्र डिवीजन के सोनारग गाव मे ११ जुलाई १९११ को राजनतिक कार्यवाही का एक रोमाचकारी दृश्य उपस्थित हुआ जबकि गाव के दोनो दफेदार रसूल दीवान और अमेरी दीवान तथा साक्षी विनोद चक्रवर्ती पर जो कि एक चपरासी पर प्रहार के मुकदमे मे महत्वपूर्ण साक्षी था और जिसमें कई युवको को सजा हो गई थी—गम्भीर रूप से प्रहार किया गया।

सध्याकाल होने पर एक युवक दफेदार रसूल दीवान के मकान पर गया और उसको बाहर बुलाया। जसे ही वह मकान से निकल कर बाहर आया उस पर तुरन्त रिवाल्वर से गोली चली। रसूल ने चिल्लाकर कहा बहुत अच्छा मैंने तुम्हें

पहचान लिया"। आक्रामक जो कि भागा जा रहा था वापस लौटा और उसने कई गोलियां चलाई जिससे रसूल की तुरन्त मृत्यु हो गई।

अमेरी दीवान और काली विनोद मकानों पर लोग एक साथ गए और अपने शिकार पर आक्रमण करने का लगभग वही तरीका दोहराया गया। अमेरी भी तुरन्त मर गया।

काली एक समय राजनीतिक संदिग्ध व्यक्ति था परन्तु बाद को पुलिस द्वारा लालच दिए जाने पर पुलिस का एक बहुत महत्वपूर्ण साक्षी बन गया था। उस पर रिवाल्वर या बन्दूक से आक्रमण न कर चाकुओं से आक्रमण किया गया उसके शरीर पर कई घाव लगे। उसको खतरनाक स्थिति में अस्पताल ले जाया गया जहां वह चार दिन तक मृत्यु से संघर्ष करता रहा। १५ जुलाई, १९११ को मुन्शीगंज अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई।

जहां तक क्रांतिकारी दल का प्रश्न था उसके दृष्टिकोण से एक रात्रि में तीन जासूसों की हत्या की घटना एक अभूतपूर्व सफलता थी विशेषकर पुलिस किसी को भी नहीं पकड़ सकी और आगे चलकर पुलिस ने दोषियों को पकड़ सकने की आशा भी छोड़ दी।

गति पूर्ववत रही—११ नवम्बर १९११ को पुलिस इन्सपेक्टर मनमोहन घोष की बारीसाल में हत्या कर दी गई। गोधूली के समय वह टहल कर लौट रहा था। वह ढाका षड़यन्त्र अभियोग में एक महत्वपूर्ण मुख्य साक्षी था। क्रांतिकारियों को उस पर यह भी सन्देह था कि वह अनेक क्रांतिकारियों जिन पर क्रांतिकारी कार्यवाहियां करने का सन्देह था गिरफ्तार कराने के लिए उत्तरदायी था।

सर्वोच्च बलिदान (१९११)

संसार में अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए किए जाने वाले बलिदानों में एक अनजाने और भूले हुए देशभक्त के बलिदान की समता करने वाले दृष्टांत बहुत कम हुए होंगे।

१९११ में बड़ी भमनसिंह के श्री नरेन्द्र नारायन चक्रवर्ती अपने सहयोगियों के साथ जिनमें एक बीस वर्ष से कम का लड़का था और जिसको खतरनाक कार्यों को करने की शिक्षा दी जा रही थी सघन वन में से होकर एक क्रांतिकारी कार्य के लिए जा रहे थे। वे अंधकार पड़ने के बाद अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँचना चाहते थे। उन्होंने देखा कि जंगल में एक शेर उस लड़के पर झपटना ही चाहता था। स्थिति अत्यन्त निराशाजनक और असहाय थी। तुरन्त ही नरेन्द्र नारायन ने अपना कर्तव्य निश्चित कर लिया। वे शेर और उस लड़के के बीच में आ गए और अपनी पूरी शक्ति से शेर से कुश्ती में भिड़ गए। दूसरे साथी ने भी उनका साथ दिया।

शेर लड़के तक न पहुँच सका दूसरे आदमी को दो जगह घायल कर दिया और नरेन्द्र को मार कर शेर चला गया। लड़का बच गया इस घटना का किसी से जिक्र करना भी कठिन था क्योंकि वे क्रांतिकारी थे और क्रांतिकारी कार्य के लिए गन्तव्य स्थान पर जा रहे थे। यह आवश्यक था कि पुलिस एक प्रमुख क्रांतिकारी राजनीतिज्ञ की मृत्यु के बारे में न जान सके नहीं तो दल के अन्य सदस्यों के लिए वह भयंकर सिद्ध होता। अतएव नरेन्द्रनारायन के मृत शरीर को सघन वन के मध्य में पृथ्वी में गाड़ दिया गया और यह प्रसिद्ध कर दिया गया कि नरेन्द्रनारायन संयासी

हो गया और वह अपने परिवार से कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता। अपने साथी के लिये प्राण देने का यह गौरवपूर्ण और अनुपम उदाहरण था।

अन्दमन में शहादत (१६०८ १२)

स्वतन्त्रता संग्राम के लिए वीर और देशभक्त सनिकों पर भारत में तथा सुदूर अन्दमन की जेल में जसा अमानवीय अत्याचार होता था उसकी हृदय विदारक कहानी जनता को पूरी तरह ज्ञात नहीं है। इसका कारण यह है कि उसका किसी ने ठीक प्रकार वर्णन नहीं किया और न उन वीरों ने उस कहानी का वर्णन लिखा जिन्होंने उन अत्याचारों को स्वयं भोगा था। केवल एक ऐसे कांड का बहुत सूक्ष्म विवरण उपलब्ध है जो कि उस अपरिमित पाशविक क्रूरता भरे व्यवहार का एक अंश मात्र है जो कि उन व्यक्तियों के साथ किया जाता था जिनके नाम इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने के योग्य थे।

२ मई १६०८ को मानिकतला में मुरारीपुकुर रोड से अठारह वर्ष के तरुण इन्द्रभूषण राय को गिरफ्तार किया गया उसके साथ बारीन्द्रकुमार घोष और अन्य व्यक्ति भी गिरफ्तार किए गए। उन पर अलीपुर षडयन्त्र केस के अन्तर्गत अभियोग लगाया गया। इन्दु के तरुण हृदय में स्वतन्त्रता की उत्कट चाह उत्पन्न हो गई थी। वह मातृभूमि को फिरंगियों की दासता से मुक्त कर वहां एक अच्छी सरकार स्थापित करना चाहता था। वह खुलना के हाई स्कूल का छात्र था और १६०७ में एन्ट्रेंस की परीक्षा में बैठा जिसमें वह अनुत्तीर्ण हो गया। उन दिनों मां बाप तथा सम्बन्धी लोग अपने बच्चों तथा प्रतिपाल्यों का कम आयु में ही विवाह कर देते थे। इन्दु भी उस परिपाटी का अपवाद नहीं था। इन्दु के पिता ने उसको विवाह के लिए बहुत दबाया तो वह उन्हें बिना सूचना दिए ही अपने प्रिय माता पिता को छोड़ कर एक सन्यासी का जीवन व्यतीत करने के लिए घर से निकल पड़ा। जबकि वह रहने के लिए एक उपयुक्त स्थान की खोज में घूम रहा था तो कालेज स्क्वयर पर उसको बारीन्द्र मिला। उसने उसे बताया कि वहां गुप्त रूप से क्या क्या तैयारियां हो रही हैं। उसने मानिकतला में रहना शुरू कर दिया और गम्भीरतापूर्वक गीता पढ़ने लगा। क्रमशः उसके मन में यह विचार दृढ़ हो गया कि वह अपने जीवन को देश के लिए बलिदान कर दे और अपने देशवासियों के लिए एक आदर्श उपस्थित करे। वह इतिहास का एक गम्भीर विद्यार्थी था और 'आनन्द मठ' तथा उस जसी अन्य पुस्तकों के पठन से उसको ऐसे महान विचार बनाने में सहायता मिली थी।

जीवन के प्रति तनिक भी मोह न होने के कारण उसको अत्यन्त खतरे के कामों के लिए चुना जाता था। ११ अप्रेल १६०८ को चन्दर नगर [redacted] मेयर पर बम फेंकने के लिए उसको चुना गया। अलीपुर षडयन्त्र के मुकदमे में इन्दु को दस वर्ष के काला पानी की सजा दी गई।

इन्दु भूषण दिसम्बर १६०६ को अन्दमन के सलुलर जेल में पहुँचा जिसके नाम से भयंकर और पक्के डाकू तथा खूनी भी भयभीत होकर कांप उठते थे। वह उन लोगों में से था जिन्हें जेल के बाहर काम करना पड़ता था। इन्दु के लिए जेल के बाहर का काम जेल के अन्दर के काम की अपेक्षा अधिक कष्टकर और लज्जाजनक था।

स्थिति यह थी कि यदि साधारण बंदी जेल के बाहर काम करता था यदि

बीमार पड़ जाता था तो वह जेल के अस्पताल में न भेजा जाकर एक अन्य अस्पताल में भेजा जाता था जो जेल के अस्पताल से अच्छा था। राजनैतिक बन्दियों के लिए इससे सर्वथा भिन्न व्यवस्था थी। यदि वह बीमार पड़ जाता तो यह घोषित कर दिया जाता था कि वह बीमार पड़ने का बहाना कर रहा है और उसे बीमार पड़ने के लिए विशेष रूप से दण्ड दिया जाता था। बीमारी कितनी गम्भीर है उसकी ओर तनिक भी ध्यान न देकर राजनैतिक कैदी को जो कि बीमारी के कारण कार्य करने के अयोग्य हो जाता उसे अपने बिस्तरे को अपने कन्धे पर ढोकर चार मील चलाया जाता था और उसको अपनी एकान्त सेल में बन्द कर दिया जाता था।

इन्दु की शारीरिक सहन शक्ति ने जब जवाब दे दिया तो उसने जेल के अन्दर काम करने की इच्छा प्रकट की। जब वह जेल में पहुँचा तो उसके हाथ में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी डाल दी गई और उसको अपनी पुरानी कोठरी (सेल) में ले जाया गया। एक या दो दिन बाद उसको पुनः उपनिवेश में निर्धारित कार्य करने के लिए वापस जाने की आज्ञा दी गई। उसने वहां जाने से इन्कार कर दिया। उस पर तुरन्त जेल के अनुशासन को भंग करने का आरोप लगाया गया।

इन्दु के स्वास्थ्य की दशा अत्यन्त दयनीय थी और जो कार्य उसको करना पड़ता था वह अत्यन्त कठिनाई से कर पाता था। २८ अप्रैल १९१२ को उसने जेलर से मिलना चाहा और उसको जेलर के कार्यालय में ले जाया गया उसने जेलर से अत्यन्त विनम्र शब्दों में याचना की कि राम बांस से सफेद सन बनाने के काम से उसे हटाकर और दूसरा काम दे दें। रामबांस के रस से उसके हाथों में भयंकर छाले पड़ गए थे और उनके कारण इतनी सूजन और दर्द था कि वह अपनी अंगुलियां को कठिनाई से हिला सकता था। हाथ में इतना दर्द होता था कि उसे रात्रि को एक क्षण के लिए भी नींद नहीं आई उसकी अंगुलियां में ऐसी भीषण पीड़ा थी और उसके हाथ के जख्मों के कारण वह रोटी का कौर मुंह तक भी नहीं ले जा सकता था। हाथ के जख्मों में दाग लग जाने से ऐसी भयानक पीड़ा होती थी कि उसकी आंखों के आंसू गालों पर बहने लगते थे और वह भोजन को छू भी नहीं पाता था। उसने अत्यन्त आतुर होकर प्रार्थना की कि यदि यही स्थिति रही तो मैं क्षुधा से मर जाऊंगा।

उसने पुनः अपने काम में परिवर्तन के लिए प्रार्थना की। यदि यह सम्भव न हो तो कुछ दिनों के लिए उसे अस्पताल भेज दिया जावे जिससे कि उसकी हथेली के जख्म ठीक हो जावें। उसकी सभी प्रार्थनाओं को जेलर ने कठोरतापूर्वक ठुकरा दिया। यही नहीं पृथ्वी पर उस भयंकर नरक के जेलर ने उपयुक्त शब्दों में इन्दु को अत्यन्त अभद्र भाषा में गालियां दीं। इन्दु फिर भी उससे कहता रहा कि उस डाक्टर से मिलने की आज्ञा दी जावे जिससे कि वह उसे अपने हाथों की दशा दिखाकर उपचार करवा सके।

जेलर चिल्लाया "तुमको मेरी आज्ञानुसार कार्य करना होगा"। उसके उपरान्त एक मिनट ठहर कर वह बोला 'बहुत अच्छा मैं तुम्हारे कार्य को बदल दूंगा' और वार्डर को आज्ञा दी कि दूसरे दिन से इन्दु को उस भयंकर और सबको भयभीत करने वाले तेल के कोल्हू (घानी) में जोत दिया जावे। इन्दु ने कहा कि यदि उसको उन जख्मी हाथों से कोल्हू में काम करना पड़ा तो उसकी मृत्यु हो जावेगी। किन्तु जेलर यह सब सुनने को तैयार नहीं था। इन्दु को अभद्र भाषा में गाली देकर उसने हटा दिया।

यह ऊन की पीठ में अन्तिम तीर था। प्रातःकाल इन्दु अपनी कोठरी में फांसी लगाकर लटका मिला। उसकी मृत्यु हो चुकी थी। २६ अप्रैल १६१२ को वह ऊपर की खिड़की से लटका हुआ मिला। अपने फटे हुए कुर्ते की चीरों से उसने रस्सी बनाली थी। सलुनर जेल के एक कैदी (वीर सावरकर 'मेरे निर्वासन की कहानी' पृष्ठ २१४ ने लिखा) 'उस युवक ने अपनी बेइज्जती को सहन न कर सकने के कारण जीवन को भार स्वरूप समझा और उसका अन्त कर दिया।" प्रातःकाल गश्त में एक वार्डर ने उसको अपनी कोठरी में लटके हुए देखा। शोर मच गया जेलर दौड़कर उस जगह आया। मेडीकल सुपरिन्टेन्डेन्ट को चार पांच बार टेलीफोन से सूचना दी गई। एक पुलिस का आदमी उसके बंगले भेजा गया जो ज्यादा दूर नहीं था, परन्तु दूसरे दिन प्रातःकाल आठ बजे से पहले कोई उत्तर नहीं आया। इसी बीच एक मद्रासी जो कि अस्पताल में असिस्टेंट डाक्टर था बुला भेजा गया परन्तु जब तक वह आया उसका शरीर लकड़ी के लट्ठे की भांति कठोर हो गया था।

दूसरे दिन प्रातःकाल जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट, जिलाधीश और पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट जांच के लिए आए। जेलर जो कि एक छटा हुआ बदमाश गुण्डा था उसने एक अजीब बयान गढ़कर सुना दिया जिसे उन अधिकारियों ने स्वीकार कर लिया। उसने कहा कि इन्दु ने आत्महत्या इस कारण करली कि उसे भ्रम हो गया था कि उसके साथी कैदी उसकी हत्या कर देंगे। स्वयं शैतान भी ऐसा विचित्र बहाना खोज कर नहीं निकाल सकता था।

इन्दु भूषण की इस खेदजनक मृत्यु की सूचना भारत में कई सप्ताहों के बाद पहुंची और सर्वत्र अतीव शोक की लहर फैल गई। इन परिस्थितियों में भारतीयों की विकलता ने हजारों व्यक्तियों के हृदयों में इन्दु भूषण की मृत्यु का बदला भारत को स्वतन्त्र बनाकर लेने के लिए दृढ़ संकल्प के रूप में उत्पन्न कर दिया जिससे कि भविष्य के सभ्य शासन में इस प्रकार की जंगलीपन की क्रूर घटनाएं न घट सकें।

चौकीदार पर चौकसी (१६१२)

सरकार के एजेंटों की गतिविधि को वे लोग जिन पर पुलिस उसके पिट्ठुओं और जासूसों की बड़ी निगाह रहती थी ध्यान से देखते रहते थे।

ढाका पुलिस का हैड कांस्टेबिल रतीलाल कई दिनों से कतिपय सदेहास्पद लोगों पर नजर रख रहा था। अपनी ड्यूटी के पांचवें दिन उसने अपने अधिकारी से कहा कि उसके कुछ मांगे हुए संदेहास्पद व्यक्तियों को उस मैस में आते जाते देखा है। २४ सितम्बर, १६१२ की सायंकाल को वह अपने एक मित्र के मकान पर गया। वहां से वह सात बजकर पन्द्रह मिनट पर चला और दस मिनट बाद ही सूतनगारी गली में गोली से मार दिया गया।

जिसने उसे मारा इसका कोई संकेत तथा खोज न मिलने के कारण दोषी को पकड़ने का कोई प्रयत्न नहीं किया जा सका।

महान षडयन्त्र (१६१२-१५)

ब्रिटिश शासन के विरुद्ध विद्रोह की भावना ने बंगाली तरुणों की कल्पना को जकड़ लिया था उसने शीघ्र ही साहसी और वीर पंजाबियों के मस्तिष्क को भी प्रभावित कर दिया। जैसा कि १६०७ के आरम्भ के महीनों में पंजाब के लेफ्टीनेन्ट गवर्नर ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था—"प्रत्येक स्थान पर लोग एक परिवर्तन का अनुभव कर

रहे थे। एक नई हवा साधारण जन के मस्तिष्क में बह रही थी और वे लोग इस बात की प्रतीक्षा कर रहे थे कि देखें कि उसमें से क्या निकलता है।' रिपोर्ट आव दी सडीशन कमेटी १९१८ पृष्ठ १४१।

उसी रिपोर्ट में आगे चलकर कहा गया 'बड़े नगरों में प्रांत व केन्द्रों में आंदोलनकारी जनता में ब्रिटिश शासन के प्रति दुर्भावना फैलाने की गम्भीरतापूर्वक कोशिश करते हैं। कतिपय महत्वपूर्ण नगरों में जैसे रावलपिंडी, सियालकोट और लायलपुर में एक साथ खुले रूप में तेजी से ब्रिटिश विरोधी प्रचार किया जा रहा है। प्रांत की राजधानी लाहौर में ब्रिटिश विरोधी प्रचार ऐसा प्रचंड है कि उसके परिणाम स्वरूप वहां अशांति की स्थिति उत्पन्न हो गई है।

उग्र विचारों के समर्थकों की संख्या तेजी से बढ़ रही थी। एक पंजाबी को राजद्रोह के अपराध में सजा देने के कारण दंगा हो गया। योरोपियन लोगों को जिनसे अभी तक लोग आतंकित और भयभीत रहते थे और अनिच्छापूर्वक आदर और मान देते हैं उनके प्रति अब थोड़ा भी शिष्टाचार नहीं बरता जाता था। शिक्षित उग्र विचारों के आंदोलनकारी सार्वजनिक सभाओं में भाषणों के द्वारा अंग्रेजों के प्रति घृणा फैलाते थे। गांवों में भी और विशेषकर उन ग्रामीण क्षेत्रों में जहां कि नहर उपनिवेशों में भूमि के स्वामित्व सम्बन्धी नियमों में प्रस्तावित कानून के कारण गहरा असंतोष व्याप्त था तथा बारी दोआब में नहरों से सिंचाई की दर में वृद्धि का प्रस्ताव था वहां निश्चित रूप से ब्रिटिश विरोधी प्रचार किया जा रहा था। महान सिक्ख जाति के क्रोध और असंतोष को भड़काने का विशेष रूप से प्रयत्न किया जा रहा था जिससे कि वह ब्रिटिश शासन के विरुद्ध उठ खड़ी हो।

आंदोलनकारी पुलिस की ओर विशेष रूप से ध्यान देते थे जिनको देशद्रोही कहकर देशवासियों में बदनाम किया जाता था और उनको सरकार की नौकरी छोड़ देने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। भारतीय सैनिक जो कि अत्यन्त राजभक्त हैं उन्हें सेना के पदों को छोड़कर जन आंदोलन में सम्मिलित होने के लिये आमन्त्रित किया जाता था। आंदोलन का उद्देश्य यह था कि जातीय घृणा की भावना को अत्यन्त तीव्र और बलवती बनाकर सरकार के शासन तन्त्र को ठप्प कर दिया जावे।

जब ऊपर लिखे तरीके अपने उद्देश्य की पूर्ति में अत्यन्त सफल हुए तो यह यदि दिनों का नहीं तो महीनों का प्रश्न था कि प्रांत में कहीं हिंसात्मक कांड हो। पंजाब की तुलना एक सूखे बारूद के ढेर से की गई जिस पर एक चिनगारी पड़ जाने से भयंकर विस्फोट होने की सम्भावना थी। वही भारत की राजधानी के मध्य घटित हुआ।

वह घटना २३ दिसम्बर १९१२ को भारत के वायसराय लार्ड हार्डिंग पर एक साहसी द्वारा बम फेंकने के रूप में घटित हुई। वह वह अवसर था कि जब वायसराय देश की नवीन राजधानी दिल्ली में उसको भारत की राजधानी घोषित करने के लिए प्रवेश कर रहे थे। महामहिम वायसराय को लाने वाली स्पेशल ट्रेन दिल्ली की सेंट्रल स्टेशन में पहुंची। उस स्थान पर उस अवसर पर जो राजकीय समारोह आयोजित किए गए थे वे सभी शाही शानशौकत के किए गए। उसके उपरांत लार्ड हार्डिंग एक ऊंचे हाथी पर विराजमान हुए और वह भव्य विशाल जलूस चलना शुरू हुआ। जबकि जलूस चांदनी चौक के मध्य में घंटाघर के आगे पंजाब नेशनल बैंक के भवन

के सामने पहुंचा कि एक बम हौदे के पृष्ठ भाग पर लाड हार्डिंग तथा पीछे बैठे सेवक के बीच भयानक धड़ाके के साथ जिससे समीप के लोग थोड़ी देर के लिए बहरे हो गए फूटा। हौदे में पीछे बैठा सेवक बलरामपुर राज्य का जमादार महावीर सिंह था जो लार्ड हार्डिंग पर छत्र लगाए हुए बैठा था मर कर लटक गया। बम का पूरा प्रभाव वायसराय पर उनके सिंहासन के कारण नहीं पड़ा। सिंहासन रूपी कुर्सी का पृष्ठ भाग नष्ट भ्रष्ट हो गया। कुर्सी के पिछले हिस्से में जो मोटी चांदी की चादर का बहुत भारी काम था उड़ गया। बम का एक टुकड़ा लार्ड हार्डिंग की पीठ पर लगा और उनके कंधे पर से ऊपर निकला उसके लगने से कंधे में चार इंच लम्बा घाव हो गया और कंधे की हड्डी निकल आई। उनकी गर्दन की दाहिनी तरफ कई घाव लगे और उनके दाहिने नितम्ब पर भी चोट आई।

लेडी हार्डिंग जो अपने महान पति के साथ ही जलूस में चल रही थी उन्होंने उस घटना का नीचे लिखे शब्दों में वर्णन किया है। उन्होंने उस घटना को अपने लिए 'भयानक अनुभव' कहा है जो कि वास्तव में उनके लिए एक भयानक अनुभव था परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उस परिस्थिति में भी जितना वे शान्त रह सकतीं थीं उतना शान्त रह कर उन्होंने अपने को सम्हाला और जो सेवक वायसराय के निकटतम थे उन्हें शीघ्र ही महा महिम वायसराय को एक ऐसे स्थान पर ले चलने के लिए कहा जहां शीघ्र से शीघ्र सहायता तथा चिकित्सा प्राप्त की जा सके। उन्होंने लिखा —

जब हम चांदनी चौक से निकल रहे थे और चारों ओर हर्ष ध्वनि हो रही थी तो मैंने यकायक एक हृदकम्प का अनुभव किया और मैं आग की मार जोर के धक्के से गिर पड़ी। जब मैं पुनः अपने स्थान पर बैठ गई, तो मेरी आंखें चौंधिया गईं और मस्तिष्क में जोर की झनझनाहट से मैं निश्चयपूर्वक क्षण भर के लिए बहरी हो गई। वायसराय ने मेरी ओर मुड़ कर कहा कि मुझे भय है कि वह बम था।

हाथी रुक गया था। इस पर वायसराय ने जोर से कहा चलो और जलूस पुनः चल पड़ा तब तक मेरे मस्तिष्क पर यह छाप पड़ी कि भीड़ में पूर्ण रूप से निस्तब्धता और शान्ति थी। किन्तु हम जब पुनः चल पड़े तो भीड़ से आवाजें आईं 'शाबास'।

' फिर मैंने पास पास विस्तार से देखना आरम्भ किया। उदाहरण के लिए हौदे की पीठ गायब थी और वायसराय पीले पड़ गए थे मैंने कहा "आपको निश्चय है कि आपके चोट नहीं आई ?

' उन्होंने उत्तर दिया कि मुझे इस बात का निश्चय नहीं है कि मेरे चोट नहीं आई। मुझे गहरा आघात लगा परन्तु मैं समझता हूं कि जलूस में चल सकता हूं।"

कुछ सेकिंड उपरान्त मैंने घोक लगाई और वायसराय के दाहिने कंधे के पास फटी हुई यूनीफार्म से (जो मुझ से दूर थी) मुझे लाल मांसपेशी दिखलाई पड़ी। तब मुझे यह भान हुआ कि मैं उन्हें बतलादूं कि वे घायल हो गए हैं परन्तु उससे उनके भयभीत हो जाने का डर था, अथवा हाथी के चलने से उनको लगने वाले झटकों से होने वाली हानि की जोखिम लूं। मैंने पुनः चारों ओर देखा तो मैंने एक आदमी की टांगों को देखा जो उल्टा लटक रहा था और मर चुका था।

तब मैंने धारे से कहा मुझे जलूस को रोकने दो क्योंकि मुझे भय है कि पीछे का सेवक मर चुका है। उस समय तक हम १५० गज चल चुके थे।"

"वायसराय ने कहा अवश्य ही एसी परिस्थिति में हम आगे नहीं चल सकते।"

मैंने हाथी को रुकवाया और सामने के हाथी में कर्नल मक्सवल को संकेत किया। वह दौड़कर आये और वायसराय ने उनसे कहा कि क्या तुम पीछे लटके हुए बेचारे जमादार के लिए कुछ कर सकते हो ?'

'मैंने कहा क्या तुम कर्नल राबर्ट को बुलाना पसन्द करोगे मेरे विचार से वायसराय का कन्धा जख्मी हो गया है।'

'ठीक उसी समय वायसराय को थोड़ा आक्षेप हुआ और उनकी चेतना जाती रही। कुछ समय उपरान्त जब उनकी चेतना शक्ति पुनः लौटी तो उन्होंने समारोह के सभी कार्यों को पूरी तरह करने की आज्ञाएं दी।'

इसके उपरांत और कुछ कहने को नहीं है केवल वायसराय को हौदे से उतारने और उनके कपड़ों को उतारने में जो कठिनाई हुई उसका वर्णन शेष रहता है। उनके छः जख्म लगे थे जिनमें बहुत अधिक रुधिर बह रहा था। घर में कोई भी नहीं था परन्तु सेवकों तथा कर्मचारियों ने सारा प्रबन्ध कर दिया और सारी व्यवस्था अत्यन्त सुन्दर ढंग से करदी।'

(पत्र जो बम्बई में टाउन हाल में ८ जनवरी १९१३ को हुई सभा में पढ़ा गया)

भारत सरकार ने बहुत बड़े पारितोषिक की घोषणा की उसके अतिरिक्त राजभक्त देशी नरेशों ने अपनी राजभक्ति प्रदर्शित करने के लिए बहुत बड़ी रकमों के पारितोषिकों की घोषणा की। जिन अधिकारियों को इस घटना से चिन्तित होना चाहिए था उनसे भी अधिक चिन्ता देशी नरेशों ने व्यक्त की। इस पर भी किसी को पकड़ा नहीं जा सका। घोषित पारितोषिकों की रकम अवास्तविक और कल्पनातीत संख्या तक पहुँच गई और हम बात में सन्देह होने लगा कि यदि कभी वह अवसर आया तो क्या वह राशि उपलब्ध भी हो सकेगी।

२४ जनवरी, १९१३ को भारत सरकार ने घोषणा की कि यदि जो कोई ऐसी सूचना देगा कि जिससे अपराधी जो उस कृत्य के लिए उत्तरदायी हैं उसको पकड़ा जा सके और उसे सजा दिलाई जा सके उसको एक लाख रुपये का पुरस्कार दिया जावेगा। इस घोषणा से पहले के सभी सरकारी तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा घोषित पुरस्कारों को रद्द कर दिया गया।

बहुत कुछ जांच पड़ताल करने के उपरांत विशेषज्ञ केवल यह सिद्धांत निर्धारित कर सके कि वह बम उसी प्रकार का था जैसा कि बंगाल में हुए बमकाण्डों में बम थे। बम एक सिगरेट के टिन का बनाया गया था। उसमें पिकरिक एसिड, फलमिनेट आव मरकरी और कुट काम्बस (वैज लोहे की किलियाँ जिन्हें पिंस कहा जाता है) का उपयोग किया गया था।

टिन में बम बनाकर देहली में वायसराय पर फेंकने के अन्दर एक विचार यह था कि टिन पर सिगरेट का लेबिल भी ज्यों का त्यों लगा होने के कारण दोषी व्यक्ति उसको बिना सन्देह उत्पन्न किए उसे आसानी से कहीं भी ले जा सकता था।

सरकार की पुलिस ने अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियाँ की और हजारों की संख्या में पुलिस और गुप्तचर अथक परिश्रम कर बम काण्ड का पता लगाने का प्रयत्न करने लगे। परन्तु कहीं कुछ पता न लगा। देहली की पुलिस निराश होकर चुप हो गई और वह मामला वहीं अटक गया कोई संकेत न मिला।

वायसराय की हत्या करने के प्रयत्न के ६ महीने के बाद लाहौर से इस बात के संकेत मिले कि प्रांत में क्रान्तिकारी सक्रिय हैं। १७ मई १९१३ को लारेंस गार्डन में जो बम फटा वह अपने उद्देश्य में विफल रहा। मांट गोमरी हाल से सौ गज की दूरी पर जिमखाना क्लब का एक चपरासी सड़क पर मरा पड़ा मिला। उसकी बाईं टांग और सीधे घुटने में भयंकर जख्म थे। उसकी छाती और शरीर मानो तेज कीलों से छेद दिए गए थे। जहां वह चपरासी का शव पृथ्वी पर पड़ा हुआ था उसके सामने की ओर सड़क के किनारे लालटेन का खम्भा टुकड़े टुकड़े होकर गिरा पड़ा था।

दोषी का कोई पता नहीं चल सका जांच से यह ज्ञात हुआ कि जिस सड़क पर वह अभागा चपरासी साइकिल पर जा रहा था वहां एक बम रख दिया गया था। जब चपरासी उससे टकराया तो वह फट गया।

बंगाल से लाहौर समाचार पहुंच चुका था कि मौलावी बाजार का कुख्यात गार्डन लाहौर के एक जिले कसूर में इसलिए स्थानान्तर करके भेजा गया है कि जिससे बंगाल के क्रांतिकारियों के प्रतिशोध से उसकी रक्षा की जा सके। क्रांतिकारी उसकी गतिविधियों पर कड़ी निगाह रख रहे थे और पंजाब व बंगाल के प्रतिरूप क्रांतिकारियों को यह ज्ञात हो गया कि १७ मई, १९१३ को वह क्लब में उपस्थित होगा। जब वह क्लब रूम से निकल कर बाहर आवे तो उसकी हत्या कर देनी है। देहली काण्ड की तरह ही पुलिस इस हत्याकांड का भी पता नहीं लगा सकी।

देहली तथा अन्य स्थानों पर समय क्रांतिकारी कार्यवाहियों के चिह्न मुखर होने लगे थे। तरुणों को क्रांतिकारी कार्यों के लिए प्रोत्साहित करने वाले पर्चे भारी संख्या में विशेषकर छात्रों में बांटे जाते थे। एक पत्रिका में लार्ड हार्डिंग के जीवन पर २३ दिसम्बर, १९१२ को होने वाले प्रहार की नीचे लिखी भाषा में प्रशंसा की गई थी।

'गीता, वेद कुरान हमें आज्ञा देते हैं कि जाति धर्म रंग की चिन्ता किए बिना मातृभूमि के शत्रुओं को मार दो। अन्य बड़ी और छोटी घटनाओं को छोड़ दो तो गत दिसम्बर में देहली में देवी शक्ति का जो विशेष प्राकट्य हुआ वह निस्सन्देह इस बात का प्रमाण है कि भारत के भाग्य का स्वयं भगवान निर्माण कर रहा है।"

दो गम्भीर और भयंकर बम काण्डों का कुछ भी पता न लगा सकने, भ्रमित हो जाने, और दोषी को गिरफ्तार करने के प्रयत्न में असफल हो जाने पर पुलिस ने अपना ध्यान राजद्रोहात्मक साहित्य के उद्गम स्थान की ओर केन्द्रित किया। पुलिस 'लिबर्टी' पत्र के सम्बन्ध में विशेष रूप से सतर्क थी कि जिसके अंक गुप्त रूप से लोगों के पास भेजे जाते थे और समय समय पर शहर के भिन्न भिन्न भागों में दीवारों पर चिपकाए जाते थे।

१६ फरवरी, १९१४ को और उसके उपरान्त विभिन्न स्थानों पर अनेक मकानों की तलाशियां ली गईं। पुलिस ने डिप्टी कमिश्नर, दिल्ली द्वारा प्रेस एक्ट के अन्तर्गत निकाले वारंटों के आधार पर यह तलाशियां ली थीं। वह उत्तेजना फैलाने वाले साहित्य को जब्त करने के उद्देश्य से ली गई थी। उस साहित्य का सम्बन्ध सरकार के इस बयान के द्वारा बंगाल से जोड़ने का प्रयत्न किया गया कि जो पर्चे जब्त किए गए थे उनकी प्रतियां राजा बजार बम केस साक्षी के रूप में उपस्थित की गई थीं। आगे चलकर जो लोग देहली षड्यन्त्र के मामले में अभियुक्तों के रूप में उपस्थित

उनमें से अधिकांश इन तलाशियों के समय गिरफ्तार किए गए थे।

यह ज्ञात हुआ कि 'लिबर्टी' पत्र या तो जालंधर से प्रकाशित होता है कम से कम उसके पहले दो अंक जालंधर में छपे थे या कलकत्ता से प्रकाशित होता है विशेषकर उसके तीसरे और चौथे अंक वहां से ही प्रकाशित हुए। उसके एक अंक में उसने उन वीरों की सूची प्रकाशित की जिन्हें हत्या के अपराध में फांसी दे दी गई थी अथवा जिन्हें हिंसात्मक अपराधों में सजा दी गई थी। उन व्यक्तियों के लिए लिखा गया था कि वे भगवान के कार्यकर्ता हैं और वे दैवी प्रेरणा से दैवी निर्देशन में काम करते हैं। मनुष्य के जीवन का उद्देश्य ईश्वरीय कार्य करने में अभिरुचि होनी चाहिए। उस कार्य में जीवन को उत्सर्ग करना अनिवार्य है। उसके अन्त में लिखा था "भगवान के औजार बनो, मरो और अपने राष्ट्र का निर्माण करो।

—वन्देमातरम्'

क्रांतिकारी दल की बंगाल और पंजाब शाखाओं को जोड़ने वाली कड़ी रास बिहारी बोस थे। उत्तर भारत में क्रांतिकारी संगठन में जीवन और सक्रियता उत्पन्न करने का श्रेय उन्हीं को था। रास बिहारी बोस द्वारा चलाए गए आंदोलन का मुख्य उद्देश्य था — इन हिंसात्मक काण्डों के द्वारा जनता को जागृत कर यह तथ्य बताना है कि हम विदेशों की दासता के जुए में जी रहे हैं। जब जनता यह जान जायेगी कि हम दास हैं तो जनता में खुले विद्रोह की चाह भड़क उठेगी।"

रास बिहारी केवल बंगाल और पंजाब में एक कड़ी का ही काम नहीं करते थे वरन् वे समस्त उत्तर भारत में क्रांतिकारी कार्यों के संचालक भी थे। उन्होंने अपने कुछ सहकारियों को चुना था जो जितना भी क्यों न हो असीम कष्ट उठाने के लिए तैयार थे यहां तक कि वे बड़ी से बड़ी जोखिम अर्थात् मृत्यु का भी सामना निर्भय होकर करने की तैयारी रखते थे।

उनमें से एक अवध बिहारी थे। उन्होंने लाहौर से ट्रेनिंग कालेज में शिक्षा प्राप्त की थी परन्तु वे देहली में रहते थे और १६०८ में अमीरचन्द के घनिष्ठ मित्र थे। वे १६१२ में रासबिहारी बोस से अग्रवाल आश्रम में मिले थे। अवध बिहारी को उत्तर प्रदेश और पंजाब में क्रांतिकारी कार्यों का अध्यक्ष बनाया गया। उसका क्रांतिकारी संगठन के प्रत्येक विभाग में हाथ रहता था और कठिन से कठिन कार्य को वे सरलता से निबटा दे। एक बार उन्होंने अपने एक मित्र को लिखा था—

'मृत्यु हर एक के लिए अनिवार्य है और हम एक वीर पुरुष की मृत्यु प्राप्त करेंगे। बंगाल की क्रांतिकारी भावना की पौध को पंजाब में हमें लगाना चाहिए।"

१६ फरवरी १६१४ को अवध बिहारी को गिरफ्तार कर लिया गया। उनके कमरे में 'लिबर्टी पत्र की कतिपय प्रतियां, तलवार' पत्र की हस्तलिखित प्रति जो सर्व प्रथम १६ मार्च १६१० को बर्लिन में प्रकाशित हुआ था। उसके मुख्य पृष्ठ पर मदनलाल धींगरा का चित्र था जो उस पत्र का आदर्श और वीर पुरुष था एक हिंदी पुस्तिका की पाडुलिपि भी मिली जो राजनीतिक उद्देश्य के लिए भिन्न प्रकार के विषों के सम्बन्ध में थी। उनके कमरे से एक आलेख भी प्राप्त हुआ जिसमें सभी योरोपियनों को मार डालने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया गया था। अन्य वस्तुओं में बम की एक टोपी और पेट्रोल की एक बोतल भी तलाशी में मिली थी।

अमीरचन्द इस समय तक कैम्ब्रिज मिशन स्कूल में मास्टर रहे थे और

गिरफ्तारी के समय चर्खे वाला संस्कृत स्कूल के हैडमास्टर थ। वे इन "ईश्वर के कर्त्ताओं के सबसे महत्वपूर्ण केन्द्रीय व्यक्ति थे। उनके जीवन का एक मात्र लक्ष्य तरुणों को क्रांति धर्म की दीक्षा देना था। उनका अनुभव और उनकी प्रतिभा संगठन के लिए निस्सदेह एक बहुत मूल्यवान निधि थी।

अमीर चंद के मकान की तलाशी में एक विशेष प्रकार के भूरे रंग के कागज मिले कागजों में एक हिन्दी पुस्तक विष के उपयोगों पर प्राप्त हुई। कुछ प्रतियां 'लिबर्टी' की और एक प्रलेख मिला जिसमें कुछ नामों की सूची उनके उपनामों सहित मिली और प्रत्येक नाम के सामने वर्णमाला का अक्षर लिखा हुआ था। स्थानीय नामों की एक सूची मिली जिनके सामने एक अक्षर लिखा था जो क्रान्तिकारियों के मिलन के स्थान का द्योतक था। अमीर चन्द के मकान को रु० १०० और अवधबिहारी के मकान को रु० ४०० कहा जाता था। इसी प्रकार अन्यों के मकान के संकेत थे। आना पाई से समय का बोध होता था। एक हस्तलिखित लेख 'स्वतन्त्रता का प्रेम' शीर्षक से मिला जिसमें सभी योरोपियनों विशेषकर अंग्रेजों की हत्या करने के लिए कहा गया था। इसके अतिरिक्त और बहुत सा आपत्तिजनक साहित्य मिला।

दूसरे कमरे में एक बिस्कुट का बाक्स भी मिला जिसमें कुछ कपास और ऊन थी जिस पर कुछ पीले छींटे थे। अमीर चन्द और उनके भतीजे को १६ फरवरी १९१४ को गिरफ्तार किया गया।

बाल मुकुन्द अवध बिहारी के साथ विशेष रूप से राजद्रोहात्मक साहित्य को तैयार करने और उसको बांटने के लिए नियुक्त किए गए थे और इनको बम फेंकने की शिक्षा दी गई थी। फरवरी १९१४ में बालमुकुन्द ने जोधपुर में जहां वे राजघराने में निजी अध्यापक का काम करते थे वायसराय के निवास स्थान में प्रवेश पा सकने के लिए पास प्राप्त करने का प्रयत्न किया परन्तु वे उसमें सफल नहीं हुए। वे पंजाब और विशेषकर लाहौर के क्रांतिकारी कार्यों के लिए नियुक्त किए गए।

रासबिहारी बोस ने बालमुकुन्द को बसंत कुमार विश्वास के लिए नौकरी ढूंढने का दायित्व सौंपा था जिससे जब भी उसकी सेवाओं की आवश्यकता हो वह उपलब्ध रहे।

बसन्त उपनाम बिपिनदास लाहौर की पापुलर डिस्पेंसरी 'सुतरामद' में नौकर था। बाल मुकुन्द के प्रयत्नों से उसको यह नौकरी मिली थी वह अपने मालिकों के काम और अपने कर्तव्य की प्रति लापरवाह नहीं था परन्तु साथ ही वह अपने राजनीतिक नेता के कार्यों और योजना को कार्यान्वित करने के लिए सदैव समय और अवसर निकाल लेता था। वायसराय पर आक्रमण के संबंध में उसने बहुत प्रशंसनीय कार्य किया था। वह अत्यन्त चतुराई के साथ गिरफ्तारी से बच निकला। किंवदन्ती है कि उसका सुकुमार चेहरा और छोटा कद स्त्रियों के वस्त्र पहन स्त्रियों का रूप धारण करने के लिए अत्यन्त सुविधाजनक था। वह स्त्री के वेष में चांदनी चौक में पंजाब नेशनल बैंक की इमारत में खड़ी स्त्रियों में मिल गया जो कि वायसराय की सवारी और जलूस देखने के लिए एकत्रित हुई थी। उसने कहा— उधर देखो। जब स्त्रियां उसके सुझाव पर जलूस के एक भाग की ओर देखने लगीं और उनका ध्यान उस ओर गया तो ऐसा कहा जाता है कि वह बिना किसी के देखे बम फेंकने में सफल हो गया। जब बम के धड़ाके से खलबली और भगदड़ मच गई तो वह फुर्ती से उस इमारत से खिसक कर बाहर निकल गया

और सडक पर भीड़ म शामिल हो गया। X

अवध बिहारी के साथ उसको गाडन को मारने के लिए चुना गया था। यदि वह बम को उस माग म रखने की भूल न करता जिस पर वनव के योरोपियन सदस्य नहा जाते थ तो वह अपने कारनामा म एक और शानदार पृष्ठ जोड देता।

बसत विश्वास देहली स अपन पतृक गाव बगाल के नादिया जिले के परागाचा गाव म अपने बाप का श्राद्ध—करने गया था जहां वह २३ फरवरी १९१४ को गिरफ्तार कर लिया गया।

रासबिहारी बोस जो कि मुख्य अपराधियो म से थ उनका कही पता नही लगा उनको पकडवाने के लिए सरकार ने १४ माच १९१४ को १०००) के पारितोषिक की घोषणा कर दी। उन्हें उद्घोषित अपराधी घोषित कर दिया गया और उनकी सारी जायदाद जब्त करली गई।

एक गश्ती पत्र में उसकी आकृति का इस प्रकार वर्णन किया गया था " वह लगभग ३० वष की आयु का है रग गोरा है और लम्बा है उसकी आखें बडी बडी हैं और उसके एक हाथ की तीसरी अगुली कटी है उस पर दुघटना म चोट का निशान है।" अभियोजन के साक्षियो म से एक ने तो कि देहली षडयत्र केस म भेदी-साक्षी था कहा —

उसके शरीर की बनावट मजबूत है उसका रग न तो गोरा है और न बहुत काला है। वह बगाली और पजाबी वेश भूषा मे बगाली या पजाबी लगता है जब जसे वस्त्र धारण कर लेता है वसा ही लगने लगता है। उसकी तीसरी अगुली में छोटे से घाव का चिह्न है जो कि पिछली बार बगाल जाते समय रेल के डिब्बे में अगुली कुचल जाने से लगा था। वह घाव चवन्नी के आकार का है उसकी आखें चौडी हैं।'

१६ माच १९१४ को अमीर चन्द अवधबिहारी बसत विश्वास बालमुकुन्द तथा अन्य सात व्यक्तियो को देहली के मजिस्ट्रेट के समक्ष मुकदमे के लिए उपस्थित किया गया। अभियुक्तो पर षडयत्र, राजद्रोह, हत्या, विस्फोटक पदार्थो को रखने के जुम लगाए गये। सभी अभियुक्तो के विरुद्ध एक समान दोषारोपण यह था कि उन्होने हत्या करने के लिए षडयत्र किया और अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए वे कानून के विरुद्ध गोली बारूद रखते थे। अभियोजको (पुलिस) का कहना यह था कि अभियुक्तों में से कतिपय ने वास्तव मे हत्या की है उदाहरण के लिए लाहौर में जबकि १७ मई १९१३ को एक चपरासी मारा गया। उनमें से कुछ षडयत्र के सदस्य थे जिनके पास ऐसा साहित्य था जिसमें लोगों को हत्या करने के लिए उकसाया गया था और जिसे वे बाटते थे।

मजिस्ट्रेट ने सभी अभियुक्तो के विरुद्ध जो सख्या में ग्यारह थे हत्या तथा षडयत्र का अपराध स्थापित कर दिया। अमीरचन्द बालमुकुन्द और बसत विश्वास पर विस्फोटक पदार्थो सम्बन्धी कानून के अन्तगत भी अपराध स्थापित किया गया तथा अवधबिहारी और बसत विश्वास पर १७ मई १९१३ को चपरासी की हत्या का अलग से अपराध लगाया गया। २१ मई १९१४ को देहली सेशन में मुकदमा आरभ हुआ बहुर्गभित दोषारोपण इस प्रकार था —

कि तुमने अक्टोबर १९१० और मार्च १९१४ के बीच देहली तथा

X (कुछ लोगों की मान्यता है कि जोरावरसिंह बारहट ने बम फेंका था—अनुवादक)

ब्रिटिश भारत के अन्य स्थानों पर एक दूसरे से तथा अन्यो के साथ (भेद साक्षी आदि के साथ) जिनके सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं है हत्या करने का षडयन्त्र किया (इण्डियन पनल कोड धारा ३०२) वह अपराध १७ मई १९१३ को लाहौर में (धारा ३०२ इण्डियन पनल कोड तथा १२०वीं उपधारा) घटित किया गया।

२५ मई को दोषारोपण में संशोधन किया गया। 'षडयन्त्र' के स्थान पर 'सहमत' होना कर दिया गया।

५ अक्टूबर १९१४ को मुकदमे का फैसला सुना दिया गया। अमीरचन्द और अवध बिहारी को २० वर्ष का कालापानी विस्फोटक पदार्थ रखने के जुर्म में सजा दे दी गई। बसन्त विश्वास को उसकी कम आयु होने के कारण आजीवन काला पानी दिया गया। इसके अतिरिक्त अन्य अपराध में अमीरचन्द अवध बिहारी और बाल मुकन्द को फांसी की सजा दी गई।

अमीरचन्द, अवध बिहारी और बालमुकन्द की ओर से उस फैसले के विरुद्ध पंजाब की चीफकोर्ट में ५ अक्टूबर १९१४ को अपील की गई। अभियोजक (पुलिस) के वकील ने तीनों अभियुक्तों की सजा की पुष्टि करने और बसन्त विश्वास की सजा को फांसी की सजा के रूप में बढ़ाने की अपील की। उसके सम्बन्ध में कहा गया कि उसकी आयु २२ वर्ष की है और वह जो कृत्य कर रहा था उसके परिणामों से भली भांति अवगत था। १० फरवरी, १९११ को सभी अभियुक्तों जिनमें बसन्त विश्वास भी था, को फांसी की सजा दे दी गई अन्य तीन को अलग अलग समय के लिए कारावास का दण्ड दिया गया।

अभियुक्तों की ओर से भारत सचिव से यह प्रार्थना की गई कि वह कुछ समय के लिए फांसी को रुकवा दें जिससे कि फांसी की सजा वाले अभियुक्त प्रिवी काउन्सिल में अपील कर सकें। १ मार्च १९१५ को भारत सचिव ने उस प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया।

अभियुक्तों के पास समय और साधना की अत्यन्त कमी थी फिर भी किसी प्रकार उन्होंने प्रिवी काऊंसिल से अपील की। प्रिवी काऊंसिल की न्यायिक समिति ने उनकी अपील अस्वीकार कर दी। प्रिवी काऊंसिल के फैसले की सूचना २९ अप्रेल, १९१५ को भारत पहुंची, सरकार ने तनिक भी देरी नहीं की और चारों अमीरचन्द, बालमुकन्द, अवधबिहारी को देहली जेल में और बसन्त विश्वास को अम्बाला जेल में ११ मई १९१५ को फांसी दे दी गई (लाहौर की एक सूचना जो १४ मई, १९१५ के 'पायनियर' में प्रकाशित हुई थी उसमें कहा गया—सभी अर्थात चारों अपराधियों को फांसी दे दी गई।)

भारत के ये चार वीर जिन्होंने अपने जीवन में अनेक कठिनाइयों के सामने भी अडिग निष्ठा के साथ देश को स्वतन्त्र कराने का कार्य किया था उन्होंने अपने जीवन का, साथ साथ फांसी के तख्ते पर बलिदान भी कर दिया और वे शहीदों के स्वर्ग में राष्ट्र की असीम और अमर कृतज्ञता का उपभोग करने चले गए।

यद्यपि दुनियां उनके सम्बन्ध में अधिक नहीं जानती परन्तु देहली षडयन्त्र के सम्बन्ध में एक मूक शहीद की गाथा को उनके त्याग और बलिदान के योग्य श्रद्धा से लिख देना आवश्यक है। बाल मुकन्द ने अपने देश प्रेम के अपराध में देश के कानून के अन्तर्गत जो सर्वोच्च दण्ड था, प्राप्त किया था। जब उनकी फांसी की सूचना उनके

घर पहुँची तो उनकी निष्ठावान पत्नी रामरखी ने सबों के बहुत मना करने और मनाने पर भी उन्होंने भोजन लेना और जल पीना छोड़ दिया और कुछ ही दिनों में वे मुख पर मुस्कान लिए और अपने पार्थिव जीवन के अंतिम दिनों में सभी हितैषियों के आशीर्वाद के साथ अपने पति के पदचिह्नों पर पर रखती हुई चली गई।

वे धन्य हैं उनका नाम प्रत्येक देशभक्त भारतीय को अनन्तकाल तक प्रेरणा देता रहेगा।

शान्ति बलिदान (१६१३)

नासिक षडयन्त्रों के मामलों में से एक में बहुत बड़ी संख्या में क्रांतिकारी देशभक्तों को सजा हुई थी उनमें से एक "सखाराम सादाज गोरे थे"। उनको पांच वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया गया था। वे एक ऐसे जेल में रक्खे गए जहां उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहा। उनको फेफड़े का रोग अर्थात् ब्रोंकाइटिस हो गई और १२ फरवरी १६१३ को उनकी जेल में ही मृत्यु हो गई। (इण्डियामन फरवरी, १४ १६१३) उन्होंने देश के सामने देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए चुपचाप अपने जीवन को मातृभूमि की बलिवेदी पर चढ़ाने का आदर्श उपस्थित किया।

खेदजनक घटना (१६१३ १६१५)

शाहबाद जिले के बिया और सब डिवीजन में निमेज की घटना का राजनीतिक स्वरूप केवल उसके उद्देश्य से ही जाना जा सकता है। षडयन्त्र का एक प्रमुख अभियुक्त अपने अनुयायियों को यह उपदेश देता रहता था कि जो भी कार्य यहां तक कि डाका भी स्वराज्य के लक्ष्य को आगे बढ़ाने में सहायक हो तो वह न्यायोचित है। एक दूसरा अभियुक्त एक ऐसे व्यक्ति से निरन्तर सम्बन्ध रखता था कि जो देहली षडयन्त्र केस के प्रसिद्ध श्री अमीरचन्द का बहुत घनिष्ठ मित्र था।

उस इलाके में यह कहानी बहुत जोरों से फैली हुई थी कि निमेज के मन्दिर के महंत ने अपार धनराशि संचित की है और सारा का सारा धन आश्रम में ही छिपा कर रखता है। २० मार्च १६१३ को मोतीचन्द ने अपने चार साथियों को लेकर महन्त पर आक्रमण कर दिया। महंत भगवानदास ने आक्रमणकारियों का मुकाबला किया उस संघर्ष में महन्त भगवानदास मारा गया। उसका नौकर बसीधर जो बीस वर्ष से बहुत कम उम्र का लड़का था उसकी उन लोगों ने हत्या कर दी जिससे कि इस अपराध का कोई साक्षी न रहे। आक्रमणकारियों को बहुत कम सम्पत्ति हाथ लगी। वह इतने झंझट और संघर्ष की तुलना में नगण्य थी। विशेषकर जबकि हम देखते हैं कि उस काण्ड में दो निर्दोष जानें नष्ट हो गई तो उस थोड़े धन की व्यर्थता और भी स्पष्ट हो जाती है।

इस घटना के सम्बन्ध में उस समय कोई गिरफ्तारी नहीं हुई। कुछ महीनों के उपरान्त मुख्य अभियुक्त का नाम एक दूसरे राजनीतिक मुकदमे में प्रमुख रूप से उभर कर प्रकाश में आया और उन हत्याओं के सम्बन्ध में सब जानकारी पुलिस को प्राप्त हो गई। मोतीचन्द और उसके मित्र गिरफ्तार हो गए और उनके विरुद्ध हत्या और डाका डालने का मुकदमा शुरू हो गया। प्रारम्भिक जांच के उपरान्त अभियुक्तों को ७ जुलाई को सेशन सुपुर्द कर दिया गया। ५ अक्टूबर १६१४ को मोतीचन्द को प्राण दण्ड दे दिया गया और उनके एक साथी को लम्बे समय के लिए कठोर कारावास का दण्ड दिया गया। दूसरे को दस वर्ष का काला पानी मिला। २५ जनवरी,

१६१५ को उच्च न्यायालय ने मृत्यु दण्ड की पुष्टि करदी।

मोनीच द ने प्रिवी काऊंसिल में अपील की परन्तु प्रिवी काऊंसिल की न्यायिक समिति ने उनकी प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया उसी महीने में उनको फांसी दे दी गई।

एक असावधानी का कृत्य (१६१२-१३)

२७ मार्च १६१३ को सिलहट के मौलवी बाजार में एक भयंकर धड़ाका सायंकाल ७॥ बजे सुनाई दिया। दूसरे दिन प्रातः वहां के एस डी ओ श्री गाडन के बंगले के कम्पाऊंड की बाऊन्डरी के पास एक शव जो छिन्न भिन्न हो गया था और पहचाना नहीं जा सकता था पड़ा मिला। वह एक सभ्रान्त बंगाली लगता था। उसके शरीर पर जनेऊ था उससे ज्ञात होता था कि वह जाति का ब्राह्मण था।

मृतक का बायां हाथ कलाई तक और कुछ सीधे हाथ की अंगुलियां धड़ाके के साथ उड़ गई थी उनको खोजा नहीं जा सका। उसकी दाहिनी जांघ भी नष्ट हो गई थी मांस और हड्डियां इत्यादि केवल एक मांस का लोथड़ा बन कर रह गई थीं। समस्त शरीर पर अनेक भयंकर घाव थे वह दृश्य अत्यन्त भयानक और मन को क्षुब्ध करने वाला था। उसकी छाती और पेट में अनेक घाव थे उसके बांई ओर का चेहरा बुरी तरह से विकृत हो गया था।

मृतक एक कोट, एक कमीज एक गंजी और एक शाल पहने था। कोट की जेब में एक भरा हुआ रिवाल्वर था और कुछ फालतू कारतूस भी थे, दो डाक के लिफाफे, कुछ कोरे कागज और एक पैंसिल थी।

एक दूसरा भरा हुआ रिवाल्वर कुछ दूरी पर पड़ा मिला। ऐसा प्रतीत होता था कि मृतक एक हाथ में बम और एक हाथ में रिवाल्वर लिए हुए था। धड़ाके के कारण रिवाल्वर उड़ गया।

छाती की जेब में कुछ रुपए मिले। उनमें से कुछ में छेद हो गए थे जैसे किसी ने स्क्रू से कर दिए हों। यह उस कांड के प्रभाव के कारण हो गया।

यह भी ज्ञात हुआ कि एक पिस्तौल नया है और दूसरे का पुराना मॉडल है। फूटा हुआ बम ठीक वैसा ही था जैसा कि वायसराय लार्ड हार्डिंग पर फेंका गया था।

ऐसा अनुभव होता था कि गाडन को अपने बंगले में न पाकर वह युवक सर्किट हाऊस की ओर गया जहां गाडन के होने की सम्भावना थी क्योंकि वहां रात्रि को एक डिनर होने वाला था। गाडन वहां भी नहीं था।

वह वहां से जल्दी ही वापिस लौटा और गाडन के बंगले में घुसने की जल्दी में उसने तारों को फलांगना चाहा उसके कारण वह भूमि पर गिर गया गिरने से जो बम उसके हाथ में था वह फट गया और उसका घातक परिणाम हुआ।

बहुत समय तक खोज बीन करने पर भी पुलिस उस युवक को पहचान नहीं सकी।

इस प्रयत्न के पीछे एक कहानी थी। गाडन ने अपने को सबों की घृणा का पात्र बना लिया था क्योंकि वह जिनके संबंध में तनिक भी संदेह करता कि उनका संबंध कानून की अवज्ञा से और उसके प्रशासनिक अनुशासन को भंग करने से है उनके साथ वह अत्यन्त बर्बरतापूर्ण अमानुषिक व्यवहार करता था किसी ने उसको यह सूचना दी कि सिलचर का जगतसी आश्रम राजनीतिक कार्यवाहियों का केन्द्र बन गया है और आश्रम

के अध्यक्ष ने यह घोषणा करदी है कि उसे ब्रिटिश शासन में तनिक भी श्रद्धा है। इसके अतिरिक्त यह भी कहा गया कि ३० जून १६१२ को उसने सरकार के इ अधिकार को मानने से इनकार कर दिया। गाडन के पास न तो इतना समय था न उसकी इच्छा ही थी कि वह उस मामले का बारीकी से अध्ययन करता। तुरन्त ही बिना समझे बूझे मन में यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह उस आश्र नष्ट कर देगा और आश्रमवासियों को तितर बितर कर देगा उसकी योजना थ आश्रमवासियों तथा स्थानीय नागरिकों को आतंकित करके वह उस आश्रम को कर देगा। क्योंकि अधिकांश स्थानीय जनता उस आश्रम के प्रति भक्ति र रखती थी।

यह अपने क्रोध का प्रदर्शन करने का अवसर खोज ही रहा था कि इ के विरुद्ध एक सज्जन की इस आशय की सुविधाजनक शिकायत आ गई कि उसके भाई का आश्रम वालों ने उड़ाकर बलपूर्वक आश्रम में रोक रखा है। यह शिक उसके लिए बहुत अच्छा बहाना थी। तुरन्त ही आश्रम वालों की तलाशी लेने की लड़के को आश्रम से निकाल लाने की आज्ञा निकाली गई। पुलिस अपने ढंग से क करना चाहती थी। पुलिस ने ऐसा प्रचारित किया कि ६ जुलाई को आश्रमवा ने तलाशी का विरोध किया और उसमें रुकावट डालने का प्रयत्न किया। दूसर दिन सात जुलाई को सहायक सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस द्वारा सशस्त्र पुलिस के साथ आ के और आश्रमवासियों पर लाठी और संगीनों का खुलकर प्रहार किया गए पुलिस ने गोली भी चलाई। महेन्द्रनाथ डे जो योगानन्द [redacted] नाम से प्रसिद्ध थे (इ म्मसा) विश्वविद्यालय के एम ए बी एस सी थे) तलाशी के समय पुलिस की ग लगने से घायल हो गए।

अपराधियों ने ... सोचते हुए मैं वापस लौट आया परन्तु उन्होंने जो कुछ प्रा ... पुलिस के ... न मिल सकी।

एक उल्लेखनीय शिकार (१६१४)

गुप्तचर विभाग कलकत्ता की स्पेशल ब्रांच के इन्सपेक्टर नृपेन्द्रनाथ घोष । हत्या अवश्य ही एक प्रतिभापूर्ण और चतुराई का काम था और वह क्रान्तिकारियों के प्रारम्भिक स्तर पर राजनीतिक कार्यों की जिनमें पुलिस अफसरों की हत्या करने का प्रयत्न किया गया एक भारी विजय और सफलता थी।

१६ जनवरी, १६१४ को लगभग आठ बजे सायंकाल जबकि ग्रेस्ट्रीट और चितपुर रोड के मिलन स्थान पर पैदल चलने वालों तथा सवारियों की बहुत भीड़ थी उस समय सड़क के सोवा बाजार के कोने में नृपेन्द्र को किसी ने गोली से मार दिया जहां यह घटना हुई थी वह कुमार तुली पुलिस स्टेशन से केवल सौ गज की दूरी पर थी। सड़क पर जो भारी भीड़ थी उसके कारण मारने वाले को उसे मारकर भीड़ में मिल जाने और उसके पहचाने जाने, गिरफ्तार होने से बचने की विशेष सुविधा और अवसर मिल गया।

नृपेन्द्र ने गुप्तचर विभाग के मुख्य कार्यालय में जो एलीसियन में स्थित था अपना दिन भर का काम समाप्त किया और लगभग ७.४५ पर वह ट्राम द्वारा अपने घर की ओर चला। ट्राम से उतरते उसे देर नहीं हुई थी कि मारने वाला जो उसका पूरी यात्रा में निकट से पीछा कर रहा होगा ट्रेलर कार से कूदा उसने रिवाल्वर निकाला

चौथा अध्याय

प्रथम महायुद्ध के आसपास
(१९१४–२२)

एक अप्रत्याशित सफलता

पूर्वीय बंगाल में भूले भटके पड़ने वाली राजनीतिक डकैतियाँ क्रांतिकारी विस्फोटक की अग्नि को प्रज्वलित रख रही थीं और सरकारी अधिकारियों [redacted] प्राणों पर आक्रमण बहुत कम हो गए थे।

इस समय का उपयोग उन क्रांतिकारी नेताओं ने जो भारत में थे और जो उस समय विदेश में विशेषकर जरमनी में रहते थे एक विस्तृत क्षेत्र में क्रांतिकारी कार्यवाही की योजना के तयार करने में किया। जिसकी प्रहार करने की शक्ति अधिक थी। ऐसे लोग से क्रांतिकारी दूरदर्शी नेता थे जो कि कूटनीतिक तनाव की बिगड़ती हुई स्थिति से भविष्य में यूनाइटेड किंगडम और जरमनी में युद्ध छिड़ जाने की सम्भावनाओं को देख सकते थे। ये क्रांतिकारी नेता सावधान हो गए और उनके पास जो बहुत थोड़े और सीमित साधन उपलब्ध थे उनके द्वारा उन शक्तियों को इकट्ठा करने तथा उनका सगठन करने में लग गए जो भारत को स्वतंत्र करने के लिए ब्रिटेन पर प्रहार कर सकतीं।

क्रांतिकारी दल की सदस्यता के रूप में तथा सक्रिय समर्थकों के रूप में चाहे जितनी भी मानवीय शक्ति क्यों न हो उनके पास शस्त्रों की बहुत कमी थी जिनके द्वारा वे शत्रु के अत्यंत सुरक्षित और महत्वपूर्ण स्थानों पर आक्रमण कर सकते। शस्त्रों और गोली बारूद प्राप्त करने के स्रोत बहुत ही कम थे। उनको प्राप्त करने में जोखिम बहुत अधिक थी और उनका मूल्य इतना अधिक था कि उनको प्राप्त कर सकना कठिन था।

उस समय तत्कालीन महत्व की एक ऐसी घटना घटी कि जिससे कि कम से कम समय के लिए यह कठिन समस्या हल होगई। कलकत्ते की मैसर्स रोडा एण्ड कम्पनी ने जो बंदूक बनाने का काम करती थी विदेश में शस्त्रों के लिए आर्डर दिया और अगस्त १९१४ के तीसरे सप्ताह में २०२ पेटियों में भरे हुए शस्त्र कलकत्ता बंदरगाह में ठीक तरह से पहुँच गए। कम्पनी [redacted] एक कर्मचारी २६ अगस्त १९१४ को कस्टम से माल छुड़ाने के लिए नियुक्त किया गया। प्रथम बार में उसने १९२ बेसों की डिलिवरी ली और पुन वह आफिस से शेष दस की डिलीवरी लेने गया। परंतु वह लौट कर युक्त संगत समय में जब वापस नहीं आया तो कम्पनी ने पुलिस को सूचना दी। यह सूचना पाकर पुलिस ने उसकी खोज में बहुत दौड़ धूप की परंतु उसका पता लगाने में असफल रही। गुम हुए केसों में पचास मौजर पिस्तौल थे और उनके लिए छियालीस हजार (४६ ०००) राऊंड गोलियां थीं। पिस्तौल बड़े आकार के ० ३०० बोर के थे। 'उनकी बनावट इस तरह की थी और उनका इस प्रकार पैक किया गया था कि यदि उसकी मूठ पर जिसमें पिस्तौल रहता था उस बाक्स को सटा दिया जाय तो एक ऐसा शस्त्र बन जाता था कि जिसको उसी तरह जिस तरह राइफिल को चलाया जाता है कंधे से

चलाया जा सकता था।" (सेडीशन कमेटी रिपोर्ट १९१८, पृष्ठ ६६)

इस प्रकार जो पिस्तौल और कारतूस मिले उससे क्रांतिकारियों की शस्त्रों की बढ़ती हुई आवश्यकता पूरी हो गई। क्रांतिकारियों को जो बहुत बड़ी संख्या में कारतूस प्राप्त हुए उन्हें जब भी पिस्तौल को काम में लाने की आवश्यकता पड़ी स्वतन्त्रतापूर्वक बिना किसी हिचक के काम में लाया गया। इस घटना के उपरान्त शायद ही ऐसी कोई राजनीतिक हत्या या अन्य हिंसक कार्य हुआ होगा जिसमें मौजर पिस्तौल का उपयोग न हुआ हो। क्रांतिकारियों के दुर्भाग्यवश २६ फरवरी १९१५ तक पुलिस ने २३,००० राऊंड कारतूस तथा १९१८ के मध्य तक ३१ पिस्तौल विभिन्न स्थानों से बरामद कर लिए।

भारत जरमन गुप्त प्लाट (१९१४-१८)

जरमनी का इग्लैंड के साथ युद्ध छिड़ने के बहुत पहले ही जरमनी के कूटनीतिज्ञ भारत में राजनीतिक अशान्ति और हिंसात्मक कार्यों के विस्फोट को ध्यान और आशा के साथ देख रहे थे। उनका मुख्य उद्देश्य यह था कि भारत में राजनीतिक अशान्ति उत्पन्न करके उसको भारत में बहुत अधिक सेना को रखने के लिए विवश कर दिया जाय। जिससे कि जब जरमनी से युद्ध छिड़े तो इग्लैंड भारतीय सेना को युद्ध क्षेत्र में न भेज सके। इस सम्बन्ध में जब जरमन सरकार की भारतीय क्रांतिकारियों में बातचीत हुई तो भारत की स्वतन्त्रता का प्रश्न सर्वोपरि था। जरमनी की सरकार ने भारत की स्वतन्त्रता के प्रयत्न के लिए पूर्ण समर्थन और सहायता देने का आश्वासन दिया।

१९११ में ही कुछ भारतीय युवक जो क्रांतिकारी विचारों के थे बर्लिन अथवा उसके आस पास रहते थे। वे भारत की स्वतन्त्रता को प्राप्त करने लिए विदेशी सहायता प्राप्त करने की बात सोच रहे थे। जब उन्हें जरमन सरकार की इस विचारधारा का उन्हें पता लगा तो उन्होंने जरमनी को इस रूप में सहायता देने के लिए कि जो दोनों के लिए लाभदायक हो और भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन को सहायता देने के लिए औपचारिक रूप से जरमन सरकार के सामने अपने प्रस्ताव रक्खे। लाला हरदयाल इन प्रस्तावकर्त्ताओं में प्रमुख थे। उन्होंने इस नए क्रांतिकारी आन्दोलन का श्रीगणेश किया और उसमें पूरी तरह लग गए। जब उन्होंने योरोप से संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए प्रस्थान किया तब उनके पास परिस्थिति का पूरा चित्र उपस्थित था।

८ अप्रेल १९११ में संयुक्त राज्य अमेरिका पहुंचे। उन्हें वहां यह देखकर बहुत सन्तोष हुआ कि उनके जैसे विचार वाले युवकों ने वहां एक सुदृढ़ और सबल संगठन पहले से ही बना रक्खा था जिसके द्वारा वे समान उद्देश्य को प्राप्त करना चाहते थे।

नया पथ—जब इंग्लैंड ने जरमनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी तो इससे भारतीय क्रांतिकारियों के लिए अपनी कार्यवाही को अधिक सतेज बनाने का नया मार्ग खुल गया। उन्होंने जरमन सरकार से अपने उद्देश्य में सहायता पहुंचाने के लिए प्रार्थना करने में क्षण भर की भी देर नहीं की।

उस समय तक जरमन सरकार को प्रत्येक भारतीय क्रांतिकारी जो जरमनी में रह रहा था उसके बारे में पूरी जानकारी मिल चुकी थी और भारत में ब्रिटिश शासन

के सम्बन्ध में उसके क्या विचार हैं उससे भी जरमन सरकार अवगत हो चुकी थी। उन भारतीय क्रान्तिकारियों ने जरमनी के वैदेशिक विभाग से सम्पर्क स्थापित किया और उसको वे यह विश्वास दिलाने में सफल हो गए कि वे विदेशियों को भारत से निकाल बाहर करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ और कटिबद्ध हैं। उन्होंने जरमन सरकार के वैदेशिक विभाग से भारत के स्वातन्त्र्य युद्ध के लिए सभी सम्भावित सहायता देने का वचन प्राप्त कर लिया।

भारतीय क्रान्तिकारी जो भी धन के रूप में तथा अस्त्र शस्त्रों के रूप में जरमनी सरकार से सहायता प्राप्त करते उसके बदले जरमनी को किसी दाम से बचना नहीं चाहते थे। यह उनके स्वाभिमान के विरुद्ध था। उन्होंने यह प्रस्ताव रखा जिसे जरमनी के वैदेशिक विभाग ने स्वीकार कर लिया कि भारत के क्रान्तिकारी जो भी सहायता जरमनी से लेंगे वह ऋण स्वरूप होगी जिसे स्वतन्त्र भारत की सरकार भविष्य में चुका देगी।

जरमनी के वैदेशिक विभाग ने यह भी स्वीकार कर लिया कि वह अपने होनो लूलू, बटाविया, मैनिला, इत्यादि दूतावासों को यह आदेश दे देगा कि वह भारत के स्वतन्त्रता के प्रयत्न को उसी तत्परता और लगन से सहायता पहुँचावें जिसी तत्परता और लगन से वे जरमनी का कार्य करते हैं। उन्हें भारतीयों द्वारा पृथ्वी के विभिन्न भागों में क्रान्तिकारी केन्द्र स्थापित करने में सहायता पहुँचानी तथा उन सभी बिखरे हुए व्यक्तियों और दलों को एक सूत्र में संगठित करने के लिए सहायता करनी होगी जो भारत को स्वतन्त्र करने के प्रयत्न में लगे हुए हैं। यह प्रयत्न किया गया कि विभिन्न इकाइयों को एक आन्दोलन से सम्बद्ध कर दिया जावे जिससे कि क्षमतावान क्रान्तिकारी इकाई का निर्माण हो जिसका मुख्य उद्देश्य भारत में स्थित सेना में तथा युद्ध के विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय सिपाहियों में विद्रोह फैलाना हो।

एक प्रमुख भारतीय क्रान्तिकारी को कार्य सौंपा गया कि जिन भारतीय सैनिकों को जरमनी युद्ध में पकड़ेगे उन्हें ब्रिटिश सेना से हटा कर तथा ब्रिटिश शासन की भक्ति और निष्ठा से पृथक कर क्रान्तिकारी सेना में भर्ती कर ले। इस बात की भी व्यवस्था की गई कि युद्ध के समाचार छपवाकर स्याम, बरमा सीमा पर गुप्त रूप से बर्लिन आफिस कोड की सहायता से भारत में भेजे जावें। इस काम का भार जिस व्यक्ति को सौंपा गया उसे बर्लिन आफिस कोड पहले ही दे दिया गया था।

इस प्रकार जरमनी का उद्योग दृढ़ आधार पर स्थापित किया गया। समस्त योजना के लिए वित्तीय प्रबन्ध स्वयं जरमन सम्राट कैसर ने की और उसको कार्यान्वित बर्लिन वैदेशिक विभाग ने गुप्त एजेंटों के द्वारा किया। सान फ्रांसिस्को में जरमन कौंसिल के द्वारा एक कथित युद्ध कोष से इस कार्य के लिए धन देने का निश्चय हुआ। भारत के लिए यह गौरव और शानदार बात थी कि स्वतन्त्रता संग्राम के सैनिकों में जो विदेशों में जाति धर्म प्रादेशिक दलीय किसी तरह का भेद भाव नहीं था। प्रत्येक व्यक्ति ने अपने स्वार्थ अथवा व्यक्तित्व को एक सामान्य संगठन में समाहित कर दिया जिससे कि वह संगठन पूरे विश्वास के साथ और एक राष्ट्र की ऊंची भावना से ओत प्रोत होकर देश की स्वतन्त्रता के लिए कार्य कर सके। उस समय भारतीय क्रान्तिकारियों को एक और सुविधा यह थी कि भारतीय

मुस्लिम जनता का उनके आन्दोलन को समर्थन मिलना लगभग निश्चित था क्योंकि तुर्की के सुल्तान ने यद्यपि तब तक खुले रूप में अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा नहीं की थी परन्तु वह जरमन सरकार के शत्रुओं के विरुद्ध पूरी सहायता देने को तैयार था।

संगठन का ढांचा—सितम्बर १९१४ में ज्यूरिख में एक अन्तर्राष्ट्रीय "भारत समर्थक समिति" (Pro Indian Committee) संगठन स्थापित किया गया। उसके अध्यक्ष ने स्थानीय जरमन कौंसिल से प्रार्थना की—वह उसको जरमनी में ब्रिटिश विरोधी साहित्य प्रकाशित करने की आज्ञा प्राप्त कर। दूसरे मास वह ज्यूरिख से बर्लिन गए। वहां उनके जाने का उद्देश्य विदेशी विभाग के अन्तर्गत काम करना और तत्काल सन फ्रांसिस्को की गदर पार्टी के सदस्यों को साथ लेकर "भारतीय राष्ट्रीय दल" (Indian National Party) स्थापित करना था।

एक दूसरे भारतीय क्रांतिकारियों के समूह ने बर्लिन में १९१४ के अन्त में इण्डियन इंडिपेंडेंस कमेटी (भारतीय स्वतन्त्रता समिति) की स्थापना की। समिति ने पहला काम यह किया कि एक घोषणा पत्र निकाल कर जापान की मित्र राष्ट्रों का साथ देने की कटु आलोचना की और जरमनी के प्रति गहरी सहानुभूति प्रदर्शित की। घोषणापत्र निकालने के कुछ ही समय बाद जरमन अधिकारियों से महत्वपूर्ण वार्ता हुई। जरमन अधिकारियों ने भारतीय प्रतिनिधि मंडल के प्रस्तावों को मोटे तौर पर स्वीकार कर लिया और बताए हुए ढंग से काम आरम्भ हो गया।

कार्य की योजना

जब जरमन अधिकारियों से दृढ़ सम्बन्ध स्थापित हो गया तो यह आवश्यक समझा गया कि भारत में स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करने वालों की सहायता की जावे। सबसे पहले यह आवश्यक समझा गया और जो समझौता जरमनी से किया गया था उसमें यह प्रावधान भी था कि भारत को गोली बंदूक और अस्त्र शस्त्र भेजे जावें। जरमन नौ सेना को कहा गया कि वह अपनी सुविधानुसार परन्तु शीघ्र ही अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद को ले जावे और भारतीय क्रान्तिकारियों को पहुँचाने का प्रयत्न करे। यह स्पष्ट था कि जरमनी की सरकार की योजना यह थी कि भारतीयों को भारत से अंग्रेजों को निकाल बाहर करने में सहायता पहुंचाय और मध्य योरोप के देशों पर इंगलैंड जो आक्रमण करने की तैयारियां कर रहा है उसमें बाधा पहुंचाये। भारत पर दो ओर से आक्रमण करने की योजना थी। क्रांतिकारी लोग मनिला, चीन, जापान, बोर्नियो और स्याम होकर बरमा पहुंचे। पश्चिम में योजना यह थी कि स्वेज नहर पर अधिकार कर लिया जाय और फारस और अफगानिस्तान होकर भारत की पश्चिमी सीमा पर पहुंचा जावे। मुस्लिम असंतोष के आधार पर जो योजना तैयार की गई उसका लक्ष्य पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त की ओर था किन्तु दूसरी योजना सन फ्रांसिस्को की गदर पार्टी के तथा बंगाली क्रांतिकारियों के सहयोग पर आधारित थी उसके केन्द्र बैंगकाक और बटाविया में थे। बैंककाक योजना गदर पार्टी के वापस आए हुए सिक्खों को सौंप दी गई और बटाविया की योजना बंगाली क्रांतिकारियों के जिम्मे दे दी गई। दोनों ही योजनाएं शंघाई स्थित जरमन कौंसल के सामान्य निर्देशन में रक्खी गईं जो कि वाशिंगटन स्थित जरमन दूतावास की आज्ञानुसार काम करता था।

संयुक्त राज्य अमेरिका में रहने वाले भारतीय क्रांतिकारियों (गदर

से नियमित सपक स्थापित कर सकना बहुत कठिन था। अतएव स्वीकृत योजना के अनुसार उनमे से कुछ बर्लिन मे आ गए। उनमे से दो या तीन को वापस भारत मे भेजा गया कि वे भारतीय सहकर्मी क्रातिकारियो को इस बात की सूचना दे दें कि सुदूर विदेशों में भारत के हितो मे अनुकूल घटनाए घट रही हैं और जरमन सरकार भारत की स्वतन्त्रता के लिए सहायता दे रही है।

१६१५ तक "भारतीय स्वतन्त्रता समिति" (इडियन इडिपडंस कमेटी) विदेशी प्रभाव से सर्वथा स्वतन्त्र होकर अपने ढग और अपनी स्वतन्त्र योजना के अनुसार काम करने लगी।

वास्तव मे कतिपय भारतीयो के लिए जो कि अधिक प्रसिद्ध नही थे सुदूर विदेश में एक क्रातिकारी सगठन को स्थापित कर उसका सचालन करना बडे साहस और जीवट का काम था। कमेटी ने अब यह निश्चय किया कि पृथ्वी भर में जहा भी क्रातिकारी कार्यकर्त्ता फले हैं उनसे सम्पर्क स्थापित किया जावे।

बगाल में जो क्रातिकारी कार्यवाहियों का विस्फोट हुआ वह बहुत हद तक बर्लिन कमेटी द्वारा क्रातिकारी कार्यवाहियो को अधिक गहरा और सतेज करने का परिणाम ही था। सयुक्त राज्य में स्थापित गदर पार्टी ने अपने सदेशवाहक जरमनी भेजे और उन दोनों सगठनो में जो सम्पर्क स्थापित हुआ। उससे दोनों देशो में क्रातिकारी कार्य को बहुत बल मिला।

बगाल का प्रयत्न—भारत मे और विशेषकर बगाल मे क्रातिकारी नेता १६१५ के आरम्भिक दिनो मे मिले और उन्होने जरमनी की सहायता से भारत मे विद्रोह भडकाने की योजना को अन्तिम रूप दिया। बगाल के क्रातिकारी सगठन से स्याम तथा अन्य स्थानो के भारतीय क्रातिकारियो का सम्पर्क स्थापित हो गया और उन लोगो ने विद्रोह की कार्यवाही करने के लिए जरमनी से भी सम्बन्ध स्थापित कर लिया। उस समय क्रातिकारी गतिविधियों में बहुत अधिक तेजी आ गई थी। क्रातिकारी कार्यकर्ता बटाविया, बगकाक जापान स्याम और बरमा से आ जा रहे थे। बगाल के अन्दर और उसके पडोसी प्रान्त उडीसा मे जरमनी द्वारा भेजे जाने वाले अस्त्र शस्त्रो को विभिन्न स्थानों पर प्राप्त करने का उचित प्रबन्ध कर लिया गया।

मध्यपूर्व

बर्लिन कमेटी को पश्चिम एशिया में अपनी कार्यवाहियों का विस्तार करना आवश्यक प्रतीत हुआ। उन्होंने फारस के क्रातिकारियो से इस उद्देश्य से सम्पर्क स्थापित किया कि वे उनको सहायता से भारत पहुँचने के लिए बिना किसी जोखिम के मार्ग पा जावें। जो लोग बर्लिन कमेटी के इस मिशन के साथ फारस आए उन्हें उन लोगो से मिलकर बहुत प्रसन्नता हुई जो उनके विचारो के ही थे और उनसे पहले ही वहा पहुँच कर, वहा की परिस्थिति का अध्ययन कर अपने ढग से ही कार्य कर रहे थे।

मार्च, १६१५ में भारतीय क्रातिकारी तुर्की पहुचे और उन्होंने अपने को दो समूहों मे बाट लिया एक समूह फारस होकर बगदाद जाने वाला था दूसरा समूह स्वेज होकर दमिश्क जाने वाला था। ५ नवम्बर, १६१४ को तुर्की युद्ध में सम्मिलित हो गया और इसमें 'गदर समाचार पत्र ने बहुत प्रशसनीय कार्य किया। सम्पादकीय लेखों और समाचारों सम्बन्धी टिप्पणियों के अतिरिक्त इस पत्र में गरम दल के मिस्री

नेताओं के लेख भी समय समय पर प्रकाशित होते थे।

२० नवम्बर १९१४ के अंक में अनवर पाशा के नीचे लिखे भाषण को पत्र ने बहुत महत्व देकर प्रमुख स्थान पर छापा— 'यह अनुकूल अवसर है कि जब हिन्दुस्तान में गदर" की घोषणा कर देनी चाहिए अंग्रेजों के शस्त्रागारों को लूट लेना चाहिए उनके अस्त्र शस्त्रों पर कब्जा कर लेना चाहिए और उनसे अंग्रेजों को समाप्त कर डालना चाहिए। भारतीयों की संख्या बत्तीस करोड़ है अंग्रेज केवल दो लाख हैं। उनके पास कोई सेना नहीं है। स्वेज नहर का शीघ्र ही तुर्क बंद कर देंगे। जो भी अपने देश और मातृभूमि को स्वतन्त्र करने में मर जावेंगे वे सदा के लिए अमर हो जावेंगे। हिंदुओं और मुसलमानों, तुम दोनों ही स्वतन्त्रता की सेना के सैनिक हो और भाई भाई हो। यह नीच और मतीत अंग्रेज तुम्हारे शत्रु हैं। जिहाद की घोषणा करके तुम्हें गाजी बन जाना चाहिए और अपने भाइयों के साथ इस स्वातन्त्रता के युद्ध में सम्मिलित होना चाहिए। अंग्रेजों को मार डालो और भारत को स्वतन्त्र करो। (रिपोर्ट आव दी सेडीशन कमेटी पृष्ठ १६६)

१९१५ [redacted] आरम्भ में कतिपय प्रमुख क्रांतिकारी कान्स्टनटिनोपिल पहुंचे। जो भारतीय सैनिक वहां के आस पास मसोपोटामिया पर आक्रमण करने के लिए जमा थे उनमें क्रांतिकारी साहित्य के द्वारा प्रवेश किया गया। और उनमें से बड़ी संख्या में सैनिकों ने ब्रिटिश सेना को छोड़ दिया और क्रांतिकारियों के साथ हो गए।

सीरिया को भी नहीं छोड़ा गया दल के एक दो सदस्य वहां भी गए। ईजीप्ट को विद्रोह और क्रांति के लिए अधिक उपयुक्त स्थान समझा गया वहां बड़ी संख्या में ईरानी सैनिक मौजूद थे। प्रत्येक स्थान पर क्रांतिकारियों द्वारा विद्रोह की चिनगारी पहुंचाने में उन्हें अपने जीवन को सकर खतरे में डालना पड़ता था। अंग्रेजों की गुप्तचर सेवा बहुत कुशल और सक्षम थी। उन्होंने अपने सम्पूर्ण साम्राज्य में और उन देशों में जो परिस्थितिवश उनके प्रभाव में आ गए थे गुप्तचरों का जाल बिछा दिया था और सैनिकों की चौकियां स्थापित कर दी थीं।

गदर पार्टी के लगभग आधे दर्जन सदस्य किसी प्रकार अत्यन्त कठिनाई से फारस में प्रवेश कर गए वहां उन्हें पता चला कि दो क्रांतिकारी पहले से ही भेष बदल कर गुप्त रूप से वहां रह रहे हैं। बाद को पता चला कि वे दोनों ब्रिटिश बिलोचिस्तान में घुस गए और भारत में अस्त्र शस्त्र पहुंचाने में आंशिक रूप से सफल हुए। दुर्भाग्यवश सरकार को षडयन्त्र का पता चल गया। दोनों ही पकड़ लिए गए और उनको मार दिया गया।

समुद्री मार्ग से अस्त्र शस्त्रों का आना (१९१४-१५)

जरमन सरकार ने भारत को शस्त्र भेजने का जो वचन दिया था उसको पूरा करने की भरसक चेष्टा की। सरकार ने सभी जरमन राजदूतावासों को आदेश भेज दिया कि जहां भी सम्भव हो भारत को अस्त्र शस्त्र भेजने का वचन पूरा किया जावे।

मार्च के आरम्भ में भारत में जरमनी के शस्त्र देने के वचन की सूचना पहुंची और यह भी बताया गया कि बटाविया में स्थित जरमन अधिकारियों से सारी बातें विस्तार से तय कर ली जावें कि कितने शस्त्र किस प्रकार से भारत में पहुंचाए जावेंगे। जब भारत से क्रांतिकारी दल के संदेशवाहक जरमन अधिकारियों से इस सम्बन्ध में बात करने के लिए बटाविया पहुंचे उसी समय 'एस० एस० मावेरिक' एक तेल से

जाने वाला जहाज कैलीफोर्निया के तट पर से २२ मार्च १९१५ को भारत की ओर चला। मूल योजना यह थी कि शस्त्र कराची पर उतारे जावें उसको बदल कर बंगाल और उड़ीसा पर शस्त्रों को उतारने का निश्चय किया गया। यह परिवर्तन भारतीय क्रांतिकारियों के प्रतिनिधि के कहने पर हुआ जो उस समय कलकत्ता से बटाविया पहुँच गया था।

'मावेरिक' सर्व प्रथम लोअर कलीफोर्निया में 'सेन जोस डल कोबो' गया उसका लक्ष्य जावा में ऐन्गर' पहुँचना था। अपनी यात्रा में उसने मक्सिको से ६०० मील पश्चिम में सोकोरो को छुआ और एक दूसरे जहाज ऐनीलारसेन के इन्तजार में एक मास तक ठहरा रहा जिसमें सनडियेगो में अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद लादा गया था। यह उसकी चौकसी करता रहा 'मावेरिक' की अचानक तलाशी ली गई एच एम एस सेना तथा एच एम सी एस रेनबो और एक अमरीकी युद्ध पोत ने उसकी पृथक पृथक तलाशी ली। उसके उपरान्त वह जावा की ओर चला बीच में हैलो जापन द्वीप को छूते हुए जावा पहुंचा। २२ जुलाई को जावा पहुंचने पर एक डच टारपीडो ने उसको पकड़ लिया और वह वहीं रोक लिया गया।

ऐनी लारसन अपने उद्देश्य में असफल हो जाने के कारण इधर उधर उद्देश्यहीन होकर चक्कर लगाता रहा। वह जितना भी हो सका तलाशी और नजरबंदी को बचाता रहा और जून १९१५ में वाशिंगटन में 'होक्याम' पहुंचा उसको तुरन्त संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार ने पकड़ लिया और उसकी तलाशी ली गई। इस जहाज का सारा अस्त्र शस्त्रों और गोली बारूद का सामान सरकार ने जब्त कर लिया।

एक तीसरे जहाज हेनरी एस' का भी यही भविष्य हुआ। मनिला से शंघाई की ओर चलने से पूर्व ही मैनिला के कस्टम अधिकारियों ने उसमें भरे हुए बहुत अधिक मात्रा में अस्त्र शस्त्र तथा कारतूस आदि का पता लगा लिया। उन्होंने जहाज के मास्टर को विवश कर दिया कि वह सारा माल उतार कर ही जा सकता है। अपने उद्देश्य में बुरी तरह असफल होकर ही उसे वहां से जाने की आज्ञा मिली।

अब यह ज्ञात हो चुका है कि प्रथम महायुद्ध के समय इसी तरह से कई प्रयत्न भारतीय क्रांतिकारियों के लिए अस्त्र शस्त्र जहाजों द्वारा भेजने के प्रयास किए गए। उनमें से एक शंघाई से बंगाल के लिए और दूसरा उड़ीसा के लिए निर्देशित था। तीसरा 'अण्डमन' जाने वाला था। व बहुत बड़ी मात्रा में अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद ले जाकर पोर्ट ब्लेयर पर आक्रमण करता। वहां जो भी क्रांतिकारी और विद्रोही कैद थे तथा सिंगापुर के विद्रोही सैनिक जिनके बारे में यह धारणा थी कि वे वहां नजरबन्द हैं छुड़ा लेता और फिर रंगून की ओर जाकर उस पर आक्रमण करता।

इस योजना का सारा समाचार ब्रिटिश सरकार को ज्ञात हो गया इस कारण षडयन्त्र से सम्बन्धित किसी भी व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं रहा कि वह गुप्त रूप से और सुरक्षित रहकर कार्य कर सके। प्रत्येक क्रांतिकारी पर जो षड्यन्त्र में सम्मिलित था ब्रिटिश सरकार कड़ी नजर रख रही थी और प्रथम अवसर पर ही उन्हें गिरफ्तार कर लेती थी। षड्यन्त्रकारियों का प्रत्येक गुप्त स्थान ब्रिटिश सरकार को ज्ञात

हो गया था और उन्हें यह भी ज्ञात हो गया था कि कब क्या होने वाला है। षडयन्त्रकारियों के लिए संदेशवाहकों के द्वारा अथवा डाक द्वारा एक दूसरे से सम्पर्क बनाए रखना बहुत कठिन हो गया। डाक बीच में ही सरकार के हाथ पड़ जाती और संदेशवाहक पकड़े जाते। इस प्रकार जिस योजना पर भारत में विद्रोह खड़ा कर सकने के लिए भारी आशाएं लगाई गई थी वह व्यर्थ हो गई और उसका कोई परिणाम नहीं निकला।

जबकि भारत के अन्दर और बाहर महान शक्तिशाली भयंकर विप्लव की जोरदार तैयारियां चल रही थीं। बंगाल के विभिन्न भागों में यहां वहां सरकार के कर्मचारियों, एजेन्टों पुलिस के अधीन गुप्तचरों तथा मुसाबिरों के विरुद्ध क्रांतिकारियों द्वारा हिंसक आक्रमण होते रहे जिनमें कुछ की जानें गईं।

गदर आंदोलन (१९०८ १९१८)

घटनाएं तेजी से घट रही थी। मुजफ्फरपुर की दुर्घटना, अलीपुर तथा अन्य षड्यन्त्र तथा अन्य फुटकर कांडों से यह स्पष्ट हो गया कि देश में संगठित हिंसात्मक कार्यवाहियों की प्रवृत्ति बढ़ रही थी। कतिपय देशभक्त भारतीयों के प्रारंभिक अग्रगामी काम, तत्पश्चात् 'इण्डियन एसोसिएशन आफ-दी-पैसिफिक कोस्ट' 'दी इंडियन इण्डिपेंडेंस लीग', (दी हिन्दी एसोसिएशन) संयुक्त राज्य अमरिका में, दी इंडियन इंडिपेंडेंस कमेटी तथा जरमनी की 'बर्लिन कमेटी' की स्थापना विदेशों में रहने वाले भारतीयों के क्रांतिकारी कार्यों की सूचक थी। उन दोनों समूहों के लिए यह बहुत कठिन काम नहीं था कि वे जरमन सरकार की सहायता से समुद्र के पार एक दूसरे से सम्बन्ध स्थापित कर सकते। उन दोनों भारतीय क्रांतिकारी समूहों की सम्मिलित कार्यवाहियों का प्रदर्शन हमें सुदूर पूर्व, मध्यपूर्व, ईजिप्ट, टर्की, चीन, जापान और बरमा तथा भारत के उत्तर पश्चिमी सीमान्त में देखने को मिलता है। भारत में भी इसके फलस्वरूप गुप्त क्रांतिकारी संगठन सजीव हो उठे और उनके कारण पंजाब में क्रांतिकारी कार्यवाहियां अधिक उग्र और गम्भीर हो उठीं।

वह एक विशाल और महान क्रांतिकारी योजना थी यद्यपि वह आंशिक रूप में ही सफल हो सकी। फिर भी उसमें अदम्य साहस निर्भीकता दृढ़ निश्चय साधनों की सुन्दर व्यवस्था, धर्म तथा मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए क्रांतिकारियों के असीम कष्ट सहने की शक्ति के दर्शन होते हैं। गदर पार्टी तथा बर्लिन कमेटी अपनी शाखाओं के सहित देश की स्वतन्त्रता के लक्ष्य को प्राप्त करने में अपने गौरवशाली अंश का दावा कर सकते हैं।

प्रारम्भ अत्यन्त साधारण ढंग से हुआ। जिस प्रकार एक छोटी सी चिनगारी भयंकर अग्निकांड का कारण बन जाती है उसी प्रकार इस दिखते हुए साधारण क्रांतिकारी प्रयत्न के फलस्वरूप तीन महाद्वीपों के भारतीय क्रांतिकारियों का मिलन हुआ और उसने ऐसी दृढ़ नींव डाली कि जिस पर भावी क्रांतिकारी आंदोलन मुख्यतः आधारित था।

१९०७ में कुछ युवक बर्कले, कैलीफोर्निया में अध्ययन के उद्देश्य से आए। वे आपस में मिले और उन्होंने अपना एक संगठन स्थापित किया जिसका उद्देश्य तत्कालीन परिस्थितियों में जिस प्रकार से भी देश की स्वतन्त्रता का लक्ष्य प्राप्त हो सके उन कार्यों को करना था। अन्य लोगों के सहयोग से उन्होंने १९०८ में कैली-

फोर्निया में "इण्डियन इण्डिपेण्डेंस लीग" की स्थापना की जिसके नाम से ही उसके संस्थापकों का उद्देश्य स्पष्ट था।

इस संगठन के सर्वप्रथम व्यक्ति जिन्होंने लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया श्री तारकनाथदास और उनके थोड़े से सहयोगी थे। कुछ ही समय के उपरांत श्री पांडुरंग खान खोजे उसमें सम्मिलित हो गए और उनके उपरांत श्री काशीराम और अन्य लोग उसके सदस्य बने। अपने अध्ययन और एक राजनीतिक दल के संगठन के कार्यों में व्यस्त रहते हुए भी उनमें से कुछ लोगों ने सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त करने तथा बमों तथा विस्फोटक पदार्थों का निर्माण करने की क्रिया सीखने का प्रयत्न किया।

जिस समय इन तरुणों ने अपनी क्रांतिकारी कार्यवाहियों को खुले रूप में करना आरम्भ किया उसी समय संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कनाडा में रहने वाले सिक्खों में भयंकर असंतोष और क्षोभ की लहर फैली हुई थी। विशेषकर कनाडा में रहने वाले सिक्ख बहुत अधिक क्षुब्ध और असंतुष्ट थे। कारण यह था कि भारतीय होने के नाते उन्हें बहुत कठिनाइयों और अपमान को सहन करना पड़ता था। जितने भी भारतीय वहां रहते थे उनमें सिक्ख संख्या में सबसे अधिक थे और उनकी कठिनाइयों के कारण सभी वर्गों के भारतीयों में बहुत अधिक रोष व्याप्त था।

पोर्टलैंड में सिक्ख बहुत अधिक संख्या में केंद्रित थे अतएव वह अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा उत्पन्न करने और उसको फैलाने के लिए उपयुक्त स्थान बन गया। वहां अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा के बीज बोए गए क्योंकि वे भारतीयों को संरक्षण दिलाने में असमर्थ थे जबकि अपने देश भारत में उन्हें दास बनाकर रखते हुए थे।

खान खोजे ने काशीराम को अपने साथ लेकर पोर्टलैंड में 'इण्डियन इण्डिपेण्डेंस लीग' की स्थापना की। शीघ्र ही लीग के केंद्र संयुक्त राज्य अमेरिका के विभिन्न केंद्रों में जैसे ओरेगान, सानफ्रांसिस्को, वाशिंगटन आदि में स्थापित हो गए। शीघ्र ही यह संगठन अधिक विस्तृत और शक्तिशाली बन गया। यह संगठन घोषणा पत्रों के रूप में क्रांतिकारी साहित्य अपने सदस्यों के लिए निकालता था उनमें वह साहित्य बांटा जाता था और वह साहित्य भारत के तट पर भी पहुंचता तथा अन्त में भारतीय क्रांतिकारियों के हाथ में पहुंचता था।

१९०६ के आप्रवासन सम्बन्धी अधिनियम ने भारतीयों के मस्तिष्क में घोर असंतोष उत्पन्न कर ही दिया था। लीग के नेताओं ने उस असंतोष और आक्रोश का पूरा लाभ उठाया। क्षुब्ध भारतीयों में विद्रोह की भावना उत्पन्न कर दी गई और उनमें यह मांग उत्पन्न करदी गई कि जिस प्रकार अन्य स्वतन्त्र राष्ट्रों के नागरिकों के साथ व्यवहार किया जाता है ठीक वैसा ही व्यवहार उनके साथ किया जावे।

इण्डिया इण्डिपेण्डेंस लीग' के कार्य को विष्णु गणेश पिंगले और उसके उपरान्त अप्रेल १९११ में हरदयाल के फ्रांसिसको में आने पर और अधिक बल मिला। अपने गतिशील क्रांतिकारी व्यक्तित्व इतिहास के गहन ज्ञान अद्भुत भाषणकला के धनी होने के कारण लाला हरदयाल ने क्रांतिकारियों में नया जीवन और नया दृष्टिकोण उत्पन्न कर दिया।

धीरे धीरे विद्रोह की अग्निशिखा कैलीफोर्निया और ओरेगान पर फैलने लगी। उन दोनों राज्यों में भारतीय प्रवासी बहुत बड़ी संख्या में बसे हुए थे। इस

विद्रोह की भावना का प्रथम परिणाम यह हुआ कि ओरेगान राज्य में एसटोरिया नामक स्थान में १६१२ के अंतिम दिनों में अथवा १६१३ के प्रारम्भ में हिन्दुस्तानी एसोसिएशन की स्थापना हुई। उस एसोसिएशन का मुख्य उद्देश्य भारत से देशी भाषाओं के पत्र मंगवाना, भारतीय युवकों को अमेरिका आने के लिए प्रोत्साहित करना, था, जिससे कि वे अमेरिका में शिक्षा प्राप्त कर नए विचारों और कार्य करने के नए तरीकों का सीख कर देश की सेवा कर सकें। एसोसिएशन की साप्ताहिक बैठकों की चर्चा में सदस्यों में गहन देशभक्ति की भावना प्रदर्शित होती थी और ये लोग बहुधा इस प्रकार की चर्चा किया करते थे।

बाद में जब हिन्दी एसोसियेशन की स्थापना हुई तो उसके उद्देश्य भी अपनी पूर्ववर्ती हिन्दुस्तानी ऐसोसिएशन के सामान ही थे। उसका लक्ष्य भारत के सभी वर्गों और धार्मिक विचारों के लोगों की एकता को स्थापित करना था और भारतीयों को भारत में अंग्रेजों का विरोध करने के सामान्य उद्देश्य से शिक्षित करना था।

उससे भी पहले "इण्डियन ऐसोसिएशन आफ दी पैसिफिक कोस्ट" स्थापित हो चुकी थी और इन क्रांतिकारियों में परस्पर सम्पर्क स्थापित हो चुका था। क्रांतिकारी कार्यवाहियों तथा गतिविधियों को अधिक तीव्र करने के लिए एक "गदर पार्टी" की स्थापना की गई और पार्टी का एक मुख पत्र गदर प्रकाशित करने का निर्णय किया गया। प्रारम्भ में गदर गुरमुखी में प्रकाशित किया गया क्रमशः उसको हिन्दी, उर्दू और गुजराती में प्रकाशित करने का निश्चय किया गया। एक वर्ष के अन्दर इन भाषाओं में भी गदर पत्र प्रकाशित होने लगा। उस पत्र के चुने लेखों का अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित किया जाता था और उन लोगों में बिना मूल्य वितरित किया जाता था कि जो लोग भारत की स्वतन्त्रता के प्रश्न में दिलचस्पी दिखलाते थे। विशेषकर यह यह असन्तुष्ट सिक्खों तथा भारतीय सेना के सैनिकों में बांटा जाता था जो पृथ्वी के विभिन्न भागों में पड़े हुए थे।

'गदर' पत्र का पहला अंक सन फ्रांसिसको से एक नवम्बर १६१३ को प्रकाशित हुआ। जिस प्रेस में वह पत्र छापा गया उसका नाम युगान्तर आश्रम रखा गया। पत्र के पहले ही अंक में खुले शब्दों में घोषणा की 'आज विदेशी भूमि पर परन्तु हमारी अपने देश की भाषा में ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध युद्ध प्रारम्भ होता है। तुम्हारा नाम क्या है ? 'गदर'। तुम्हारा कार्य क्या है गदर', यह कहा होगा ? भारत में एक समय आवेगा जबकि लेखनी का स्थान राइफिल और स्याही का रुधिर लेंगी।"

गदर' पत्र उस प्रत्येक भावना को उभारता था कि जो भारतीयों की क्रान्तिकारी भावना को उत्तेजित करे। उसके प्रत्येक वाक्य में भारतीयों के लिए अंग्रेजों के मारने और उनके विरुद्ध विद्रोह करने का उद्बोधन होता था और वह प्रत्येक भारतीय को भारत जाकर वहां के शासन को ठप्प कर अंग्रेजों को भारत से निकाल बाहर करने के लिए प्रोत्साहित करता था।

गदर' पत्र ने इस बात का भी खूब प्रचार किया कि भारतीय स्वतन्त्रता के युद्ध को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि नए क्रांतिकारी पत्र निकाले जावें और उपयुक्त पुस्तकें प्रकाशित की जावें और उन्हें भारत में भेजा जावे। सैनिक कवायद हर एक भारतीय के लिए अनिवार्य आवश्यकता है तथा विदेशी राष्ट्रों से अपील

की जाय कि वे भारत के विद्रोहियों को सक्रिय सहायता दें। शीघ्र ही एसोशियशन की गतिविधियां सभी दिशाओं में तेजी से फैलने लगी और उसे पोर्टलैंड, और ऐसटोरिया के अतिरिक्त सेंट जोन, सक्रामेंटो स्टाकटन, ब्रिडाल वेल, इत्यादि स्थानों में भी शाखाएं खोलनी पड़ीं।

'गदर' पत्र निकालने के साथ साथ क्रान्तिकारी कविताएं "गदर की गूंज" 'नीम हकीम खतरए जान', और शाही जुल्म आदि भी प्रकाशित की गई। इन सभी कविताओं में इस बात की घोषणा की गई कि अब समय व्यर्थ खोने का नहीं है हमें पंडित और मुल्लाओं की उचित मार्ग दिखाने के लिए जरूरत नहीं है। 'तलवार खींचो अब युद्ध करने का समय है अपनी देव प्रार्थना और नमाज के लिए स्थगित कर दो इस क्षण की पुकार है। मारो मारो सभी कविताओं और लेखों का सार था।

संयुक्त राज्य अमरिका के अधिकारियों ने लाला हरदयाल को २५ मार्च १९१४ को उनके उत्तेजना उत्पन्न करने वाले हिंसात्मक भाषणों और आपत्तिजनक कार्यवाहियों के लिए गिरफ्तार कर लिया। वे जमानत पर छोड़ दिए गए और वे संयुक्त राज्य अमेरिका से भाग गए, जिससे कि उन्हें कहीं अंग्रेजों के सुपुर्द न कर दिया जाय। गदर पार्टी की गतिविधियां को प्रतिष्ठान कालोनियों में पहुंची और वहां के सिक्खों और हिन्दुओं में तीव्र उत्तेजना जागृत हो गई। कनाडा सरकार ने आप्रवास नियमों के द्वारा जो कठिनाइयां भारतीयों के लिए खड़ी कर रखी थीं, उनको आन्दोलन को तीव्र बनाने के लिए खूब लाभ उठाया गया और उसके प्रावधानों को जहां तक वे भारतीयों को प्रभावित करते थे उन्हें प्रभावहीन और व्यर्थ करने के प्रयत्न किए गए।

शीघ्र ही गदर पार्टी ने यह अनुभव कर लिया कि केवल विदेशों में आन्दोलन करना इतना अधिक प्रभावशाली और कारगर नहीं होगा कि भारत सरकार पर यथेष्ट दबाव पड़ सके और न ब्रिटिश अधिकारियों के लिए इतनी उलझन और आकुलता ही उत्पन्न कर सकता है कि वे उनकी स्वतन्त्रता की मांग को मान लें।

गदर पार्टी के बढ़ते हुए प्रभाव और शक्ति के कारण अमरिकन सरकार की यह मान्यता बन गई कि यह अनुज्ञेय देने वाली सीमा से बाहर चली गई है और संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए एक गम्भीर समस्या बन गई है। इस बात की शंका की कमी नहीं थी कि गदर पार्टी ने संयुक्त राज्य अमरिका तथा कनाडा के सीमित क्षेत्र में अपनी गतिविधियों को सीमित करने के बजाय उसने अपने सदस्यों को भारत भेजने और वहां देश की स्वतन्त्रता के लिए प्रचार करने तथा अपने को सब प्रकार की परिस्थितियों के लिए तैयार रहने के कार्यक्रम को अपना लिया था। भारत स्थित भारतीय सेना को गदर पार्टी भेद्य बिन्दु मानती थी जहां यदि बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से प्रवेश किया जावे और सैनिकों को समझाया जावे तो सफलता मिल सकने की सम्भावना थी। अतएव गदर पार्टी के कार्यकर्त्ताओं को अपने एक भाग को उस दिशा में लगाने का परामर्श दिया जाता था।

१९१३ में तीन सिक्ख प्रतिनिधि पंजाब आए। वे गदर पार्टी के सदस्य थे और वहां की परिस्थिति की टोह लगाने आए थे। उन्होंने पंजाब के विभिन्न नगरों और कस्बों में कनाडा में रहने वाले भारतीयों की कठिनाइयों और शिकायतों के सम्बन्ध में भाषण दिए और उन सभी सभाओं में उसके विरोध में प्रस्ताव पास कराए जिनमें सभी जातियों के लोग सम्मिलित थे।

गदर पार्टी ने संयुक्त राज्य अमेरिका के विभिन्न राज्यों में सभाएं करना प्रारम्भ करदीं। विशेषकर सन फ्रांसिसको और कैलीफोर्निया में बहुत सी सभाएं की गईं। कैलीफोर्निया राज्य के सैक्रेमैन्टो की सभा जो ३० दिसम्बर १९१२ को बुलाई गई कई कारणों से विशेष महत्वपूर्ण थी। वह एक विशाल और वृहद जन समूह था जिसमें भारत की सभी जातियों का प्रतिनिधित्व था बहुत बड़ी संख्या में भारतीय उसमें सम्मिलित हुए थे और उसमें जर्मनी के उच्च अधिकारी भी उपस्थित हुए थे। इसमें आने वाली घटनाओं की छाया स्पष्ट होने लगी थी और उस सभा के महत्व को उसने बहुत अधिक बढ़ा दिया था।

'कोमागाटा मारु' जहाज जो गदर पार्टी के सदस्यों को लेकर बजबज को चला था उसको मार्ग में विभिन्न बन्दरगाहों पर जो उस लम्बी यात्रा में कष्ट और कठिनाई का सामना करना पड़ा था उसकी खबरों ने भारतीयों और विशेषकर सिक्खों के रोष को बहुत अधिक बढ़ा दिया था तथा विदेशों में रहने वाले भारतीय आक्रोश से बहुत अधिक क्षुब्ध थे। उनका रोष चरम सीमा पर पहुँच गया था और वे उस ताड़ना और अपमान को ठीक करने के लिए सभी प्रकार का त्याग और बलिदान की जोखिम उठाने के लिए तयार हो गये। सितम्बर २९ १९१४ को बजबज में 'कोमागाटा मारु' जहाज के भारतीय यात्रियों पर जो गोलीकाड हुआ उसमें घास के ढेर में जैसे अग्नि की चिनगारी फेंक दी और विदेशी सरकार ने जो भारतीयों का अपमान किया और निर्दोष भारतीयों का खून बहाया उस अपमान का बदला लेने की तेजी से तयारियां होने लगीं।

भारतीय क्रांतिकारियों से सहानुभूति रखने वालों और भारतीय क्रांतिकारी ऐजेन्टों के प्रयत्नों और गुप्त रूप से क्रांतिकारी साहित्य को प्रचुर मात्रा में बांटने के परिणामस्वरूप सुदूरपूर्व में बहुत बड़ी संख्या में भारतीय क्रांति के लिए नए सदस्य भर्ती कर लिए गये। विशेषकर शंघाई में बहुत बड़ी संख्या में भारतीय क्रांतिकारी दल में सम्मिलित हो गए। भारतीयों को शंघाई हांगकांग मनिला, पनांग, सिंगापुर तथा श्याम के क्रांतिकारी आन्दोलन में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहन दिया गया।

अब संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा से भारतीय बहुत बड़ी संख्या में वापस लौटने लगे। प्रत्येक जहाज जो संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा से आता जैसे कोरिया' तोसामारु', 'मान्गिमारु कवाचीमारु' 'सालामिस' आदि और जिसका लक्ष्य भारत होता उसमें भारी संख्या में सिक्ख भरे होते जो भारत इस उद्देश्य से वापस आ रहे थे कि वे भारत में क्रांति की तैयारी करें जिससे कि भारत से अंग्रेजी सरकार को उलट देने का अन्तिम ध्येय पूरा हो सके।

स्मरणीय क्षेत्रक (१९१४-१५)

गदर पार्टी के लक्ष्य और उद्देश्यों के सम्बन्ध में अब कोई गोपनीय बात नहीं रह गई थी। ब्रिटिश तथा कनाडा की सरकारों ने मिलकर इस आन्दोलन को आगे बढ़ने से रोकने तथा अशोभनीय और घृणित साधनों से इस आन्दोलन के मुख्य अभिनेताओं को संसार से हटा देने का निश्चय कर लिया।

सबसे पहले इन दोनों सरकारों ने कनाडा में गुप्तचरों का एक जाल बिछा दिया। उसका मुख्य उद्देश्य वैंकावर की इण्डियन कमेटी को तोड़ देना ...

प्रतिनिधियों ने कोमा गाटा मारू जहाज को किराए पर तय किया था। इस प्रकार दोनों सरकारें यह चाहती थीं कि 'कोमागाटा मारू जहाज जो कि झंझट में फंस गया था उसकी सहायता के सभी प्रयत्नों को विफल कर दिया जाय और वे अन्य किसी जहाज को भी कनाडा में उत्प्रवासियों को भविष्य में ला सकने के लिए किराए पर तय न कर सकें।

इस विचार को कार्य रूप में परिणित करने के लिए गृह विभाग ने अपनी "अपराधी खोज शाखा" के इण्डियन पुलिस सेवा के एक अवसर प्राप्त अधिकारी विलियम हापकिंसन को सारी कार्यवाही का भार सौंप दिया। हापकिंसन ने बेलासिंह को अपने प्रमुख भेदिए के रूप में नौकर रख लिया। बेलासिंह अपराधी खोज शाखा के लिए बहुत ही उपयोगी और महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

अब बहुधा यह रिपोर्ट सुनने को मिलने लगी कि लोगों को समझाया जा रहा है उन पर दबाव डाला जा रहा है उन्हें आर्थिक लाभ का लालच दिया जा रहा है तथा बेलासिंह और उसके आदमी लोगों को डरा धमका रहे हैं कि वे इंडिया कमेटी से अपना सम्बन्ध तोड़ दें। बेलासिंह के द्वारा अब सिक्ख समुदाय पर हापकिंसन का स्पष्ट प्रभाव पड़ने लगा। कुछ सिक्ख उससे प्रभावित होने लगे। ऐसी परिस्थिति में यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि सरकारी एजेंटों की इन जघन्य कार्यवाहियों को रोका जावे जो संगठन के लिए खतरनाक बनती जा रही थीं। गुप्त मन्त्रणा हुई कि बेलासिंह की जघन्य कार्यवाहियों को किस प्रकार रोका जावे और कुछ ही दिनों में बेलासिंह का एक आदमी रहस्यपूर्ण ढंग से गायब हो गया। उसका कोई पता नहीं लगा। पहली घटना से कुछ ही दिनों के बाद बेलासिंह के दूसरे आदमी अर्जुनसिंह को रामसिंह ने दिन दहाड़े गोली से मार दिया। रामसिंह ने अपने को निजी सुरक्षा का बहाना किया और न्यायालय ने अभिकथन को स्वीकार कर लिया।

बेलासिंह बदला लेने की भावना से अगस्त में वैंकोवर के एक सिक्ख गुरुद्वारा में गया जहां एक मृत सहदेशभक्त की आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना समाप्त होने जा रही थी और वहां उपस्थित जन समुदाय के लोग गुरु ग्रन्थ साहब को शीश झुका कर प्रणाम कर रहे थे उस समय यकायक बिना किसी उत्तेजना के बेलासिंह ने कनाडा के क्रान्तिकारी संगठन के अध्यक्ष भागसिंह और सरदार बतनसिंह' को गोलियों से छलनी कर दिया। दोनों की घटनास्थल पर तुरन्त ही मृत्यु हो गई। एकत्रित भीड़ में अनेक लोग जख्मी हो गए उनमें से कुछ तो गम्भीर रूप से घायल हो गए थे। वह २२ अक्टोबर १९१४ को न्यायालय के समक्ष हत्या के अपराध में उपस्थित किया गया। हापकिंसन ने उसे जमानत पर छुड़ा लिया। अभियुक्त बेलासिंह ने खुली अदालत में अपने अपराध को स्वीकार कर लिया परन्तु स्वयं निज की रक्षा का बहाना लिया उसके इस अभिकथन को इस आधार पर स्वीकार कर लिया गया और उसे मुक्त कर दिया कि इतनी बड़ी भीड़ के समक्ष ऐसा साहसपूर्ण कार्य केवल निज की रक्षा के लिए किया जा सकता है। अभियोजकों का यह तर्क कि बेलासिंह गुरुद्वारे में जहां धार्मिक भावना से प्रेरित निशस्त्र जन समूह एकत्रित था भरा हुआ पिस्तौल लेकर गया और उसने गोलियां चलाईं इस बात का प्रमाण है कि वह वहां हत्या करने के विचार से ही गया था, अमान्य करदी गई।

यह चुनौती स्थानीय सिक्खों के लिए इतनी गम्भीर थी कि सिक्ख उसको चुपचाप

सहन कर लेते यह सम्भव नहीं था। इसका बदला लेने और विशेषकर मुख्य हत्यारे हापकिंसन को धराशायी करने की बहुत सी योजनाए सोची गई और उन्हें अस्वीकार कर दिया गया। अन्त में एक युवक ने जो सिक्ख समुदाय में अधिक प्रसिद्ध या परिचित नहीं था उसने 'भागसिंह' तथा सरदार बातनसिंह की मृत्यु का बदला लेने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया।

युवक 'सेवा (या मेवा) सिंह" ने हापकिन्सन का प्रिय और विश्वास प्राप्त करने के लिए एक युक्ति सोची उसने भारतीयों के विरुद्ध भेदिए का काम करने का प्रस्ताव हापकिंसन के सामने रक्खा। भाग्य प्रबल था हापकिंसन उसके जाल में फंस गया परन्तु सेवासिंह को बहुत निराशा हुई क्योंकि उसका अपना काम पूरा करने का उपयुक्त अवसर ही नहीं मिल सका। एक दिन प्रातःकाल जब हापकिन्सन अपने कमरे में हजामत बना रहा था सेवासिंह अपने हाथ में रिवाल्वर लिए हुए घुसा। हापकिन्सन को अपने शीशे में सेवासिंह दिखलाई दे गया और बिजली जैसी फुर्ती से उसने पलट कर सेवासिंह का हाथ पकड़ लिया (गुरदित्तसिंह दी वायज आफ कोमागाटा मारु भाग दो पृष्ठ १६) सेवासिंह ने अपने मस्तिष्क के सतुलन को बनाए रखने में कमाल कर दिया हसते हुए उसने हापकिन्सन से कहा आप तनिक भी उत्तेजित न हो। मैं रिवाल्वर को आपको देने आया हूँ क्योंकि अब उसका मेरे लिए कोई उपयोग नहीं रहा। सेवासिंह ने अपने चेहरे पर गम्भीरता और वेदना के भावों का ऐसा स्वभाविक प्रदर्शन किया कि जिसकी समता कर सकना किसी के लिए भी असम्भव था। उसने कहा 'मेरे देशवासी मुझसे घृणा करते हैं खुले रूप से मुझ पर दोषारोपण करते हैं कि मैं तुम्हारा वेतन भोगी जासूस हू जबकि आपने मुझे जो नौकरी देने का वचन दिया था आज तक नहीं दी।" वह ऐसे दयनीय जीवन के भार को ढोने के कारण अत्यन्त लज्जित और अपमानित अनुभव करता है और हापकिन्सन के पास इसलिए आया है कि वह रिवाल्वर की गोली से उसके इस अपमान जनक जीवन का अन्त करदे।

इस चतुराई और युक्ति ने केवल सेवासिंह के जीवन की ही रक्षा नहीं की वरन उसे हापकिंसन के अधिक नजदीक ला दिया। २१ अक्टूबर १९१४ को जब बेलासिंह का मुकदमा अपनी निर्णायक स्थिति में पहुच गया और हापकिंसन अभियोजन की अत्यन्त महत्वपूर्ण बातों में सहायता पहुचाने में व्यस्त था उस समय विक्टोरिया में खुली अदालत में उसको गोली मार कर मार दिया गया। गोली मारने वाले से जब बाद को कैद होने के उपरान्त पूछा गया तो उसने कहा कि हापकिन्सन जैसा व्यक्ति जो भाई के विरुद्ध भाई का जासूस की भांति उपयोग करने का जघन्य कार्य करता था इस प्रकार गोली से मारे जाने ही योग्य था।

हत्या के अपराध में चलाए जाने वाले मुकदमे में सेवासिंह ने अपने बचाव की तनिक भी कोशिश नहीं की और उसने मुकदमे को यह स्वीकार कर कि उसने जानबूझ कर हापकिंसन की हत्या की है बहुत सरल और सीधा बना दिया। सेवासिंह को मृत्यु दण्ड दिया गया। ११ जनवरी १९१५ को जब उसे फांसी दी गई तो उसने स्थानीय गुरुद्वारा के महन्त के द्वारा, जो उससे मिलने वाला अंतिम व्यक्ति था, संसार के लिए एक सन्देश दिया।

सेवा सिंह फांसी के समय अत्यन्त प्रसन्न दिखलाई देता था। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो सुखद भावी अस्तित्व की कल्पना कर रहा हो। उसका कहना था कि वह

'सनयात सेन' के द्वारा भारतीय विप्लववादियों को जापान में हुई एक गुप्त सभा में सहायता देने का वचन दिया। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि स्वतंत्र भारत श्याम-वर्ण के केवल एशिया के ही नहीं अन्य महाद्वीपों के निवासियों में स्वतन्त्रता की भावना जागृत कर देगा। वह उन जातियों की आँखें खोल देगा कि जो श्वेत जातियों की दासता में पड़ी हुई कराह रही हैं। वह उस युद्ध में सफलता की सम्भावनाओं को उपस्थित करेगा कि जिसमें एक अधीन देश या उपनिवेश जो कि शक्ति में एक बौने के समान है ब्रिटिश साम्राज्य तथा अन्य औपनिवेशिक शक्तियों की राक्षसी शक्ति से सफलतापूर्वक मोर्चा ले सकता है।

बहुत बड़ी संख्या में दृढ़ निश्चयी भारतीय जब कि भारत में प्रवेश का प्रयत्न कर रहे थे कद कर लिए गए और जेल में ठूंस दिए गए। उनमें से कुछ भारत सरकार के गुप्तचर विभाग के द्वारा फैलाए हुए जाल से बचकर पंजाब पहुँच गए। उनके हृदय में उस शासन के विरुद्ध घोर घृणा थी जो कि उन देशों में जिनके इङ्गलैंड से कूटनीतिक सम्बन्ध थे उनकी प्रतिष्ठा और न्यूनतम मानवीय अधिकारों की रक्षा नहीं कर सका।

पंजाब की अशान्ति और जो समस्त पंजाब में हिंसात्मक विस्फोट हुए वह अधिकतर उन क्रान्तिकारियों के प्रयत्नों के परिणाम थे जो कभी कनाडा या संयुक्त राज्य अमेरिका के निवासी थे। केवल राजभक्त किसानों के पास ही नहीं क्रान्तिकारी उत्तर भारत में स्थित लाहौर फीरोजपुर अम्बाला, बनारस आदि की सैनिक छावनियों में भी गए और उन्होंने सैनिकों से विद्रोह में सहायक होने के लिए कहा। बहुत से सैनिकों ने क्रान्तिकारियों को सहायता देने का वचन दिया था।

एक दुर्भाग्यपूर्ण यात्रा (१९१३ १४)

यह कहावत कि जिसका घर पर मान आदर नहीं होता उसको बाहर भी मान आदर नहीं मिलता। यह कहावत उन सैकड़ों सिक्खों के सम्बन्ध में चरितार्थ होती थी कि जो कनाडा जीवन यापन की खोज में गए थे। उनमें से बहुत से अवकाश प्राप्त ब्रिटिश सेनाओं के सैनिक थे जिन्होंने अपने जीवन का सर्वोत्तम भाग साम्राज्य की रक्षा में व्यतीत किया था।

१९०४ तक उनके साथ व्यवहार साधारणतया ठीक था। १९०८ तक उनकी संख्या आठ हजार तक पहुँच गई और भारत से और अधिक सिक्ख आकर कनाडा में बसने लगे। यह क्रम जारी था। कनाडा सरकार कनाडा को एक मात्र श्वेत जातियों के लिए सुरक्षित रखना चाहती थी। अतएव उसने भारत से आकर बसने वाले भारतीयों को रोक दिया। जो पहले से बसे हुए थे उनके विरुद्ध मुकदमे चलाए जाने लगे जिससे कि उनको कनाडा से निकाल बाहर किया जावे।

भारतीयों में जो कनाडा में बसे हुए थे इस भारतीय विरोधी नीति के कारण घोर क्षोभ और रोष उत्पन्न हो गया। सरकार की भारत विरोधी नीति का विरोध करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में मीटिंगें हुई कभी कभी उन मीटिंगों का रूप राजनीतिक हो जाता था उनमें भारतीयों को समस्त ब्रिटिश उपनिवेशों में अन्य स्वतंत्र देशों के नागरिकों के समान बराबर दर्जे की माग की जाती थी। अपने इस प्रयत्न में सफल न होने पर उन्होंने ब्रिटिश तथा कनेडियन सरकार से भारतीयों के साथ अन्य देशों के नागरिकों की तुलना में भेदात्मक नीति को रोकने के लिए प्रार्थना की। इन प्रतिवेदनों का भी कोई परिणाम नहीं निकला। भारतीय मुख्यत पंजाबी थे और

इनमें भी अधिकतर सिक्ख थे। वैंकोवर में जो पंजाबी और सिक्ख थे वे राजनीतिक आंदोलन के प्रभाव के कारण बहुत उत्तेजित हो उठे थे।

कनेडियन सरकार इस आंदोलन से बहुत चौंकी और उसने यह आज्ञा निकाली कि सभी भारतीय कनाडा छोड़कर ब्रिटिश हौंडुरास चले जावें जो उस समय वहां की कठिनाइयों और अभावों के कारण पृथ्वी का नरक माना जाता था। भारतीयों ने वहां जाना अस्वीकार कर दिया।

इस प्रस्ताव के विरुद्ध प्रबल आंदोलन उठ खड़ा हुआ। कनाडा सरकार ने ९ मई १९१० को एक कानून बना दिया जिसके अन्तर्गत प्रत्येक भारतीय को (कुछ विशेष भारतीयों को छोड़कर) जो भी कनाडा में आकर बसना चाहता हो कनाडा सरकार को इस बात का संतोष दिलाना होगा कि उसके पास दो सौ डालर हैं और वह अपने देश से सीधे टिकट के द्वारा कहीं बिना रुके हुए कनाडा आया है।

यह प्रत्येक व्यक्ति जानता था कि भारत से कनाडा कोई सीधा स्टीमशिप नहीं आता था। इसका सीधा अर्थ था कि भविष्य में भारत से कनाडा आकर कोई बस नहीं सकता था।

उस आज्ञा को चुपचाप स्वीकार कर लेने के बजाय १५ दिसम्बर १९११ को इस राज्याज्ञा का विरोध करने के लिए दो समितियां (१) दी यूनाइटेड इण्डिया लीग (२) दी खालसा दीवान सोसायटी वैंकोवर में स्थापित हुईं। यह समितियां इस आज्ञा का विरोध करने के लिए अधिकारियों के पास प्रतिनिधिमण्डल ले गईं परन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला। उस स्थिति में भी गुरुदित्त सिंह ने जो सिंगापुर और मलाया के एक धनी और साधन सम्पन्न ठेकेदार थे १९१३ में स्वयं हांगकांग की स्थिति का निरीक्षण करने आए और गुरु नानक नवीगेशन कम्पनी के लिए उन्होंने एक जापानी जहाज 'कोमागाटा मारु' को किराये पर ले लिया। उनकी आगे योजना यह थी कि वे चार जहाज ले लें। २ जहाज सीधे कलकत्ता से कनाडा लाइन पर चलें और दो बम्बई ब्राजील लाइन पर चलें। यह नया किराये पर लिया हुआ जहाज ४ अप्रेल १९१४ को हांगकांग से चला उसने शघाई मोजी और याकोहामा पर यात्रियों को लिया। यह ३७२ यात्री लेकर २१ मई को विक्टोरिया और २३ मई को वैंकोवर पहुंचा। कनाडा सरकार के सैनिकों ने उस जहाज को घेर लिया और २२ व्यक्तियों को छोड़कर शेष सभी को कनाडा को वापस आ रहे थे उन्हें कनाडा की भूमि पर उतरने नहीं दिया गया।

दो महीने में जहाज में जो भी भोजन और पानी था समाप्त हो गया। जहाज के सभी यात्री भूखे और प्यासे थे और स्थिति अत्यंत विस्फोटक हो गई। जापानी यात्रियों को तट पर से जल लाने दिया जाता था। उस जल को लेकर बहुधा झगड़े होने लगे।

अनुनय विनय, प्रार्थना, कानूनी कार्यवाही सब निरर्थक रहे उनका सरकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और स्थिति विस्फोटक हो गई। १९ जुलाई, १९१४ को जहाज को बन्दरगाह से निकल जाने की आज्ञा दी गई। परन्तु यात्री जाने के लिए तैयार नहीं थे वे वैंकोवर में संघर्ष करके मरने के लिए तैयार थे फिर वह संघर्ष चाहे जो भी रूप धारण करे। कारण यह था कि यात्री यदि उस आज्ञा को स्वीकार कर लेते तो खुले समुद्र में उनकी भूख और प्यास से निश्चित मृत्यु होती परन्तु वे संघर्ष करके मरना पसन्द करते थे। यात्रियों के मित्रों और सम्बन्धियों को जहाज में

उनसे मिलने नहीं दिया गया और न यात्री उन लोगों से जो तट पर थे कोई सम्पर्क ही स्थापित कर सकते थे।

अब सरकार ने जहाज को बन्दरगाह छोड़ कर चले जाने के लिये विवश करने के लिए बल प्रयोग करने का निश्चय किया। एक बहुत बड़ी स्टीम बोट 'सी लायन' जिसमें बहुत बड़ी संख्या में सशस्त्र पुलिस थी कोमागाटा मारू जहाज के पास पहुंची। दोनों में १६ जुलाई को युद्ध छिड़ गया। पुलिस के पास पिस्तौल थे और जहाज के यात्रियों के पास वह लकड़ियां थीं जो समुद्र में बह कर आ जाती हैं तथा बायलर में जलने वाला कोयला था।

दोनों दलों के लोग घायल हो गए। इस युद्ध का समाचार दूर दूर फैल गया। जहाज के यात्रियों ने भारत तथा ब्रिटेन में उत्तरदायित्व पूर्ण अधिकारियों और व्यक्तियों से हस्तक्षेप करने की प्रार्थना की परन्तु किसी ने उनकी प्रार्थना को नहीं सुना। यही नहीं की ब्रिटिश सरकार ने उन निरीह यात्रियों की प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया वरन् आगे बढ़कर उस जहाज के विरुद्ध बल प्रयोग की आज्ञा भी दे दी और युद्धपोत रेनबो तथा एक दूसरे युद्धपोत को उस जहाज को निकाल बाहर करने की आज्ञा दे दी। दोनों युद्धपोत कोमागाटा मारू जहाज के दोनों ओर आकर जम गए और सैनिक कार्यवाही की आज्ञा मिलने की प्रतीक्षा करने लगे। तट पर अपार भीड़ उस समय के परिणाम को देखने के लिए जमा हो गई।

जो भी भारतीय तट पर थे वे निस्सहाय और विवश थे वे अपने देशवासियों की कोई सहायता नहीं कर सकते थे। इस अपमानजनक व्यवहार का बदला लेने की भावना प्रत्येक भारतीय के हृदय में जाग उठी थी। कोमागाटामारू जहाज में जो भी यात्री थे उन्होंने यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि वे जो कुछ भी मिलेगा लाठी लोहे की छड़ें कोयले के ढेले जहाज में जो कुछ लोहे की चीजें जो निकाली जा सकतीं थीं उनको निकाल कर लड़ेंगे यद्यपि यह एक व्यंग सा लगता है परन्तु उस समय प्रत्येक यात्री का यह दृढ़ निश्चय था कि यह समय जीवन मरण का समय है और उसका सामना साहस और दृढ़ता से करना होगा, स्थिति अत्यंत खतरनाक और गम्भीर हो गई थी।

जहाज के डेक से किसी ने देखा कि बन्दरगाह से कुछ दूर की पहाड़ी पर से कोई व्यक्ति किसी विशेष उद्देश्य से संकेत कर रहा है। अधिकारियों के बिना जाने हुए जहाज में जा छिपे थे उन्होंने मिमेफोर सिगनल' के द्वारा उस सिगनल करने वाले व्यक्ति को सूचित कर दिया कि इस समय जो भी योजना कारगर और सम्भव प्रतीत हो उसे कार्यरूप में परिणित करने के लिए तयार हैं। पहाड़ी पर से उत्तर में सिगनल आया कि यदि वैंकोवर बन्दरगाह में कोमागाटा मारू जहाज के विरुद्ध कोई कार्यवाही की गई तो समस्त वैंकोवर बंदरगाह को अग्नि से भस्म कर दिया जायेगा। इस योजना को कोमागाटा मारू जहाज के यात्रियों ने जहाज के यात्रियों की मृत्यु के प्रतिशोध रूप में स्वीकार कर लिया।

भारतीयों द्वारा वंकोवर बन्दरगाह को आग लगाकर भस्म कर देने की योजना की खबर जासूसों तथा भेदियों के द्वारा बहुत थोड़े समय में ही अधिकारियों के पास पहुंच गई। उसका परिणाम यह हुआ कि अधिकारी भयभीत हो गए उन्होंने कोमागाटा मारु जहाज को खाने पीने का सामान यथेष्ट राशि में दे दिया और २१

जुलाई १९१४ को कामागाटामारु जहाज दो महीने के कठिन संघर्ष के उपरान्त वैंकोवर बंदरगाह से जापान में याकोहामा की ओर चल पड़ा।

१६ अगस्त १९१४ को जहाज याकोहामा बंदरगाह में पहुंचा। परन्तु भारतीय यात्रियों को ले जाने का अभिशाप उसका पिंड नहीं छोड़ रहा था वह उसका पीछा कर रहा था। हांगकांग बंदरगाह के अधिकारियों ने उन्हें भूमि पर उतरने नहीं दिया। अतएव वहां से जहाज याकोहामा की ओर चला और २१ अगस्त को कोबे पहुंचा जहां उसके मार्ग में नई कठिनाइयां उपस्थित कर दी गई। अब उसके लिए हांगकांग बंद कर दिया गया था। उस समय यह समाचार आए कि भारत सरकार जहाज को कोबे से भारत की ओर भेजने का समस्त व्यय वहन करेगी।

यद्यपि कहा यह गया कि जहाज का लक्ष्य कलकत्ता पहुँचना है परन्तु जहाज को मदरास की ओर चलने की आज्ञा दी गई। इस पर पुनः कठिनाई और झंझट उठ खड़ा हुआ। अन्ततः कोबे के ब्रिटिश कौंसिल जनरल को झुकना पड़ा और पुनः जहाज को कलकत्ता जाने की आज्ञा दी गई।

कोमागाटा मारू जहाज २६ सितम्बर १९१४ को सिंगापुर पहुंचा जहां उसे तट से पांच मील दूर रोक रक्खा गया। यात्रियों को तट पर उतरने की आज्ञा नहीं दी गई। यहां तक कि भारत में संबंधित अधिकारियों तथा अन्य स्थानों को तार देने के लिए भी किसी को तट पर उतरने की आज्ञा नहीं दी गई।

२६ सितम्बर, १९१४ को जब जहाज अपनी पूरी गति से जा रहा था तो कुल्पी के समीप उसने यकायक अपनी गति को रोक लिया। एक योरोपियन एक लांच से झंडी के द्वारा सिगनल दे रहा था। दूसरे दिन एक लांच में कई योरोपियन अधिकारी और बहुत बड़ी संख्या में पंजाबी आए और वे जहाज पर चढ़े। उन्होंने डेक के सभी यात्रियों की पूरी तरह तलाशी ली। अगले दो दिन भी इसी प्रकार सभी यात्रियों की तलाशी ली गई। जब २८ सितम्बर १९१४ को जहाज बजबज के समीप पहुंचा जो कि कलकत्ते से सत्रह मील दूर था तो यह स्पष्ट होगया कि जहाज की यात्रा समाप्त हो गई है। जिन अधिकारियों ने यात्रियों का चार्ज लिया उन्होंने बतलाया कि यात्रियों को स्पेशल ट्रेन से सीधे पंजाब भेजा जावेगा।

गुरदित्त सिंह ने अपने साथी यात्रियों की ओर से इस घोषणा पर आश्चर्य प्रगट किया। उनसे कहा गया कि वे अपने साथियों से बिना तनिक भी विरोध या झंझट किए सीधे उतर आने को कहें। जब कि सभी यात्री भौंचक्के होकर परामर्श कर रहे थे कि आगे क्या किया जावे योरोपियन अधिकारी उनके पास आया और उसने आज्ञा दी कि यदि वे पंद्रह मिनिट में जहाज से उतर कर उसको खाली नहीं कर देते हैं तो गोलियों के द्वारा उन्हें जहाज को खाली करने पर विवश किया जावेगा। प्रत्येक पांच मिनिट के उपरान्त वह चिल्ला कर कहता था कि आज्ञा को कार्य रूप में परिणित करने में कितने मिनिट शेष रह गए हैं। अन्त में उसने घोषणा की कि अब केवल एक मिनिट शेष है।

थके और भूखे यात्री समझ नहीं पा रहे थे कि वे क्या करें। उनके होश हवास गायब थे। उन्हें धक्के मार कर और लातें मार कर जहाज से केवल एक तख्ते के द्वारा उतारा गया कि जो जहाज को डाक से जोड़े हुए था।

२८ सितम्बर १९१४ को बजबज रेलवे स्टेशन पर उन यात्रियों को आज्ञा दी गई कि वे तुरन्त बिना तनिक भी देरी किए खड़ी हुई ट्रेन में बैठ जावें। उनसे स्पष्ट

कह दिया गया कि यदि उन्होंने बातचीत, सलाह मशवरा करके समय नष्ट किया तो बल प्रयोग करना होगा।

यात्रियों ने अपने प्रतिनिधियों के द्वारा उन अधिकारियों से उनके साथ इस प्रकार का दुर्व्यवहार करने के लिए सरकारी आज्ञा दिखाने की माग की। अधिकारी उन्हें एक चिट भी नहीं दिखा सके। चौबीस परगने के मजिस्ट्रेट की आज्ञा के विरुद्ध यात्रियों ने ट्रेन में बैठने से इनकार कर दिया और उन्होंने पैदल कलकत्ते की ओर चलने का निर्णय कर लिया। तब तक पहली स्पेशल ट्रेन ६० आदमियों को लेकर जा चुकी थी। यात्रियों को ले जाने के लिए एक दूसरी स्पेशल ट्रेन तयार की गई।

जिलाधीश के पास यथेष्ट पुलिस दल नहीं था कि जिससे वह यात्रियों को कलकत्ते की ओर जाने से रोक सकता। अतएव उसने पुलिस तथा सेना बुलाई। कुछ योरोपियन अधिकारियों ने यात्रियों के मार्ग को रोकना चाहा। प्रत्येक अधिकारी ने पिस्तौल तान कर कहा कि यदि वे आगे बढ़े तो वे गोली मार देंगे। सरदार इन्दरसिंह और सरदार अमरसिंह ने अपनी छातियां खोल दीं अपनी छातियों को पिस्तौलों की नली से लगाकर अधिकारियों से गोली चलाने को कहा। अधिकारी झिझक गए गोली नहीं चली।

यात्रियों ने चलना जारी रक्खा वे तीन मील तक चलते गए। पंजाब की पुलिस उनके दोनों ओर चल रही थी। एक मील तक वे और चले जबकि सामने से एक कार जिसके पीछे अनेक कारें थी आती दिखलाई पड़ी। उनमें से एक व्यक्ति ने गवरनर के प्रतिनिधि होने का दावा किया और यात्रियों को वापस बज बज स्टेशन लौटने की आज्ञा दी जहां वह उनकी शिकायतों को सुनेगा। थके हुए यात्रियों को निरीह पशुओं की भांति धमकी और अपमान के साथ पुनः वापस लौटना पड़ा। सारे रास्ते उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता रहा। तब तक जिलाधीश का दल बढ़ गया था। कलकत्ता रिजर्व पुलिस की एक बड़ी टुकड़ी जिसके पास राइफलें थीं आ गई थी और फोर्ट विलियम से रायल फ्यूजिलियर्स की दो कम्पनियां पहुंच गई थीं।

जैसे ही कि सब लोग सन्ध्या पड़ते पड़ते स्टेशन पर आ गए पुलिस ने उन्हें ट्रेन के बजाय स्टीमर पर चढ़ने की आज्ञा दी। उस समय यात्रियों के मन में बहुत प्रकार की दुश्चिन्ताएं और भ्रम फैल गया क्योंकि कुछ ही घण्टे पहले उन्हें उसी जहाज से उतरने पर विवश किया गया था। उन्होंने स्टीमर के बजाय गाड़ी में चढ़ने की अपनी इच्छा जाहिर की। जब यात्रियों ने स्टीमर में चढ़ने से इनकार किया तो बुरी तरह से पीटा गया लातें मार कर धक्का देकर उन्हें स्टीमर में जाने के लिए कहा गया। क्रोधित यात्रियों ने स्टीमर में जाने की आज्ञा को मानने से इनकार कर दिया। उन पर किरचों से वार किया गया और जब यात्रियों ने अधिक विरोध किया तो उन पर गोली चलादी गई। उन्हें गोलियों से भून दिया गया और सोलह (गैर सरकारी सूत्रों के अनुसार चालीस) प्लेट फार्म पर मरकर गिर पड़े। एक यात्री तहल सिंह १३ अक्टूबर को मेडीकल कालेज में मर गया। इस अंधाधुन्ध गोली वर्षा के जवाब में जिन एक दो यात्रियों के पास रिवाल्वर थे उन्होंने भी गोली चलाई उससे मेजर ईस्टवुड, पंजाबी पुलिसमन मालसिंह, एक कांस्टेबिल तरणसिंह और कुछ आम पुलिस के सिपाही

मारे गए। रेलवे का डिस्ट्रिक्ट पुलिस सुपरिंटेण्डेन्ट सोनावल के गोली लगी और वह वहीं मर गया।

यात्री तितिर बितर हो गए उनका पीछा किया गया और उनपर गोली चलाई गई। जिस प्रकार जंगली जानवरों का शिकार किया जाता है उसी प्रकार उनका पीछा किया गया और उन पर गोली चलाई गई। यह हत्याकाण्ड ३ बजे प्रातःकाल तक चलता रहा। १२० से अधिक पंजाबियों को गिरफ्तार कर लिया गया। तब तक युद्ध आरम्भ हो गया था। शत्रुओं तथा अवाञ्छनीय विदेशियों के विरुद्ध मुकदमे चलाने के लिए संकटकालीन कानून बना दिए गए थे। कोमागाटामारू' जहाज के अभागे यात्रियों पर उन संकटकालीन कानूनों के अन्तर्गत मुकदमे चलाए गए।

यात्रियों ने जो अपमान और आपत्तियां उठाईं और जिस प्रकार निर्दयता के साथ गोलियों से उन थके हुए यात्रियों को मारा गया जिनको कनाडा के जाने में असीम आर्थिक हानि और शारीरिक कष्ठ उठाने पड़े थे उसके कारण समस्त भारत तथा कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका में बसे भारतीयों में रोष फैल गया। जो आन्दोलन अधिकतर आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक बातों से सम्बंधित था उसका गहरा राजनीतिक रूप बन गया। कामागाटामारू दुघटना आरम्भ से लेकर अन्त तक ऐसा काण्ड है जिसके लिए यह मानना होगा कि उसने भारत के स्वाधीनता आन्दोलन को गति को तीव्र बनाया।

आंशिक सफलता— एक उच्च और प्रसिद्ध पुलिस अधिकारी बसंत कुमार चटर्जी पर आक्रमण करने के लिए स्थान और समय निश्चित करने में कोई भूल नहीं हुई परन्तु भाग्य ने उसका साथ दिया। वह बच गया और उसका अंगरक्षक हेडकांस्टेबिल रामभजनसिंह उसके बजाय मारा गया।

२५ नवम्बर १९१४ को ७ और ८ बजे रात्रि के बीच तीन बंगाली युवकों ने पुलिस अधिकारी के मकान नम्बर १०/४१४ मुसलमानपुरा लेन के बैठकखाने पर बम फेंका। जहां कि कुछ मिनिट पहले बसन्तकुमार चटर्जी ने तीन अन्य पुलिस अधिकारियों से बातचीत की थी। बसंत को मकान के अन्दर बुला लिया गया था और तीनों पुलिस अधिकारी वहां से गए ही थे कि कुछ ही मिनटों में एक बम फटा जिससे रामभजन गम्भीर रूप से घायल हो गया उसकी दोनों टांगें पूरी तरह से नष्ट हो गईं और उसके शरीर पर और भी जख्म हो गए। अभागा व्यक्ति उन जख्मों से दो दिन में मर गया। बम फेंकने वाले बम फेंक कर उस स्थान से गायब हुए कि उनका कोई पता न लग सका।

उस घटना के स्थान से १०० गज दूरी पर एक बंगाली सड़क के किनारे बैठा हुआ मिला जो कि बुरी तरह घायल था और रुधिर अधिक निकल जाने से बहुत थका हुआ और निबल हो गया था। पुलिस ने उसको हिरासत में ले लिया परन्तु लम्बे मुकदमे के बाद भी पुलिस उसका सम्बन्ध बम की उस घटना से प्रमाणित न कर सकी और उसको छोड़ दिया गया।

अभिमंत्रित जीवन (१९१४–१६)

इस प्रकार की अधिक कथायें सुनने को नहीं मिलेंगी जब कि एक पुलिस अधिकारी के जीवन को लेने के लिए उस पर दो असफल आक्रमण किए गए हों और पुनः ३० जून १९१६ को उस पर उसी उद्देश्य से आक्रमण किया गया जिसके सम्बन्ध में 'स्टेटसमैन' ने अपने सम्पादकीय लेख में नीचे लिखे अनुसार टिप्पणी की थी।

"वह बंगाली क्रांतिकारियों द्वारा किए गए घातक कार्यों में सबसे अधिक साहसपूर्ण कार्य है।" और जहां वह क्रांतिकारियों की अभूतपूर्व विजय है वहां सरकार के लिए विशेष लज्जा और अपमान की बात है।

वहां दूसरी ओर उस घटना ने उस अधिकारी की कर्त्तव्य परायणता को भी सिद्ध कर दिया। उस पर दो बार आक्रमण हो चुके थे। दूसरे आक्रमण के उपरांत उस पुलिस अधिकारी को आसानी से पुलिस लाईन में अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित कार्य जिसमें जोखिम न हो, दिया जा सकता था अथवा वह पुलिस अधिकारी अपने हत्यारे के बार बार के आक्रमण से बचने के लिए उस पद को छोड़ सकता था।

प्रथम बार उस पर ढाका में १६ जुलाई, १९१४ को आक्रमण किया गया। उस पर कई गोलियां चलाई गईं परन्तु उसके कोई गोली नहीं लगी, वह बच गया परन्तु उसका नौकर घटना स्थल पर ही मर गया। जैसा कि ऊपर बतलाया गया एक दूसरा प्रयत्न बसन्त कुमार चटर्जी पर किया गया जबकि उसके बैठकखाने पर बम फेंका गया परन्तु जब बम फटा तो उसके कुछ मिनट पहले ही वह वहां से चला गया था।

गरमी के दिन सायंकाल का समय था। सूर्य की रोशनी पूरी तरह से चली नहीं गई थी लगभग ६।। बजे का समय था जबकि बसन्त कुमार चटर्जी अपने कार्यालय से साइकिल पर अपने घर की ओर जाता दिखलाई दिया। उसके पीछे उसका सशस्त्र अंग रक्षक भी साइकिल पर आ रहा था। वे दोनों शम्भूनाथ पंडित सड़क पर भवानीपुर में जा रहे थे। उस समय पड़ोस की सड़कों पर सवारियों और पैदल चलने वालों की भारी भीड़ थी। सड़क की एक ओर एक खुला हुआ मैदान था जहां बंगाली युवक फुटबाल खेल रहे थे।

सड़क की एक ओर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो सूर्य से पांच बंगाली युवक रिवाल्वरों को ताने हुए बसन्त और उसके अंग रक्षक अर्दली पर झपटे। चौकन्ने और चतुर अंगरक्षक ने उन लोगों को देख लिया जो उसके अफसर पर आक्रमण कर रहे थे। उसने एक को गर्दन से पकड़ लिया और जब तक वह अपने शस्त्र निकाले उसकी टांगों पर दो बार प्रहार किया गया और वह गिर पड़ा। बसन्त को रिवाल्वर की नौ गोलियां लगीं। अभी तक किसी पुलिस अधिकारी को इतनी गोलियां नहीं मारी गई थीं। एक गोली उसके सिर को छेद कर निकल गई जिससे उसकी तत्काल मृत्यु हो गई। घायल अर्दली बिलासचन्द्र घोष शम्भूनाथ पंडित अस्पताल में १६ अगस्त १९१६ को जख्मों के कारण मर गया।

सड़क पर चलते हुए एक दूसरे पुलिस कांस्टेबिल ने उन्हें ललकारा तो उन बंगाली युवकों ने रिवाल्वर से खाली फायर करके उसे भयभीत कर दिया। मारने वाले घटना स्थल से पूर्व की ओर भागे और एक छोटी गली (पीयर्स पट्टी लेन) में घुस गए और आंख से ओझल गए। पुलिस ने घटना स्थल पर जो जांच की उससे उन्हें इस बात की तनिक भी आशा नहीं रही कि कोई उन्हें पहचान सकता है। उसके अतिरिक्त कोई ऐसा सूत्र उन्हें नहीं मिला जिससे कि वे उन लोगों को पकड़ सकते।

उलझा हुआ जाल (१९१४-१७)

फीरोजपुर हत्याकांड—पार्टी के लिए धन एकत्रित करने के उद्देश्य से पंजाब के क्रांतिकारियों ने ३० नवम्बर, १९१४ को मोगा के सरकारी खजाने को लूटने की

योजना तैयार की।

२७ नवम्बर, १९१४ को लगभग एक बजे दोपहर को पन्द्रह आदमियों का एक दल जिसमें जगतसिंह जीवनसिंह कान्शीरासिंह, लालसिंह, ध्यानसिंह, काशीराम जोशी तथा रहमत अली थे फीरोजपुर छावनी के इक्का स्टैंड पर आया और उसने उन सबों को फीरोजपुर शहर के पुल तक ले जाने के लिए तीन टमटम किराए पर कीं।

मिश्रीवाल गांव में थानेदार 'बशारत अली और ज्वालासिंह, जेलदार तथा थोड़े से और अन्य पुलिस दल के लोग सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस उस समय वहां पहुँचने वाला था।

इतने आदमियों को एक साथ जाते देखकर थानेदार बशारत अली ने टमटम वालों को रुकने का संकेत किया परन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला।

बशारत अली ने इस पर अपने एक आदमी को घोड़ी पर भेजा कि वह जगतसिंह और उसके दल को जाकर रोक दे। उसने जाकर उन्हें रोक दिया और वह उन्हें थानेदार बशारत अली के पास ले आया। बशारत अली ने उन्हें अपने चारों ओर बिठा लिया तो उनमें से एक ने कहा कि वे सरकारी कर्मचारी हैं और सेना के लिए रंगरूट भर्ती करते हैं और पुलिस द्वारा उनके कार्य में हस्तक्षेप करना नितान्त अवांछनीय है।

थानेदार ने उन लोगो की बातो पर विश्वास नहीं किया और उन पर संदेहजनक व्यवहार का दोषारोपण किया। उनसे कहा गया कि वे जब तक सुपरिन्टेन्डेंट पुलिस न आ जावें वहीं रुके रहें जब पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट आ जावें तो वे उनके सामने अपनी बात रख सकते हैं।

क्रान्तिकारियों के दल को यह अच्छी तरह से अनुभव हो गया कि अब पुलिस के पंजे से निकल जाना कठिन होगा अतएव चारों ने पिस्तौल निकाल लिए और जगतसिंह ने बशारत अली पर गोली चला दी। जैसे ही बशारत अली गिरा दूसरे आदमी ने तकुये से उसके सर पर कई बार वार किया। पुलिस के आदमी तथा जेलदार तथा अन्य कुछ लोग जिन्हें पुलिस ने रोक रक्खा था भाग खड़े हुए। जलदार ज्वालासिंह को पीछा करने वालो ने पीछे से गोली मार दी और वह गिर पड़ा। जबकि कि वह जमीन पर लम्बा लम्बा गिर पड़ा तो उसको दूसरी गोली मारी गई और उसे अपने भाग्य पर छोड़ दिया गया।

तब तक मिश्री वाला गांव के लोग यह देखने के लिए कि क्या बात है वहां आ गए और उन अजनबियो को डाकू समझ कर जो भी उनको मिला लेकर उनका पीछा किया। जगतसिंह तथा अन्य दूसरे इतनी अधिक संख्या में गांव वालों को देखकर डर गए और उन्होंने वहां से भाग जाने का प्रयत्न किया किन्तु गांव वाला ने उनका पीछा करने मे ढील नहीं की। क्रांतिकारी दल के नौ आदमियो ने नहर के दोनों किनारों पर जो नरकुल का जंगल था उसमें शरण ली वे उसमें छिप गए। और शेष ६ लोगों की और भाग गये उनका पता न लग सका।

गांव वालों के सक्रिय हस्तक्षेप से साहस पाकर बशारत अली के कुछ आदमी वहां लौट कर वापस आए तो उन्हें बशारत अली मरा मिला। ज्वालासिंह कुछ मिनिट और जिन्दा रहा। जो भी आदमी नरकुल के जंगल मे छिप गए थे वहां से निकल

नहीं पाए क्योंकि गांव वालों ने समस्त क्षेत्र को पूरी तरह घेर लिया था। उनमें से एक जीवनसिंह एक पेड़ के नीचे बाहर दिखलाई पड़ा और वह गिरफ्तार कर लिया गया। जो दल उन लोगों को घेरे हुए था वह उस ओर ही लगातार गोली चला रहा था जहां से घिरे हुए लोगो की गोलियां आ रही थीं। ६ व्यक्ति अपने छिपने के स्थान से निकल कर बाहर आ गए और अलग अलग स्थानो पर पकड लिए गए। कुछ लोगों ने साहस किया और आगे बढ़े और जहां भागने वाले छिपे हुए थे उसकी खोज की। उनमें से एक चन्दासिंह मर गया और दूसरा ध्यानसिंह मरणासन्न रूप से घायल हो गया था। वह बहुत लम्बे चौड़े डील डौल वाला आदमी था और उनका नेता प्रतीत होता था।

उनका फिरोजपुर सेशन के यहां मुकदमा हुआ और १३ फरवरी, १९१५ को फैसला सुना दिया गया। जगतसिंह को बश २४ अगो की हत्या के अपराध में इंडियन पिनल कोड की धारा ३०२ मे सजा हो गई और दूसरे ६ (१) जीवनसिंह (२) काकशीरसिंह (३) लालसिंह (४) ध्यानसिंह (५) काशीराम और (६) रहमत अली को इण्डियन पेनल कोड की धाराओ १४६ और ३०२ मे प्राण दण्ड दिया गया। प्रत्येक अपराधी की सब सम्पत्ति राज्य ने जब्त करली।

अपराधियों ने पंजाब की कोर्ट मे अपील की जो [illegible] मार्च, १९१५ को अस्वीकार कर दी गई और नीचे न्यायालय की सजा की पुष्टि करदी गई। तीन अपराधियों को मांटगोमरी जेल मे २५ मार्च को फांसी दे दी गई और शेष दो को लाहौर जेल मे २७ मार्च को फांसी दी गई।

अकस्मात पकड़े गए—पंजाब में सिक्खों में अशांति के स्पष्ट चिह्न थे और पुलिस बहुत चौकन्नी थी। वे जो भी सन्देहजनक बात होती उसको ध्यान से देखते थे। २० फरवरी १९१५ को तीन सिक्ख जिनमें एक अर्जुन उपनाम सज्जन सिंह था। अनारकली डाकखाने के पास एक तांगे पर दिखलाई पड़े जो लाठियां ले जा रहे थे उनको देखकर थानेदार मुहम्मद मूसा को सदेह हुआ। उसे ऐसा लगा कि वे बाहर [illegible] दिखलाई देती हैं वही नहीं है सम्भवत लाठी के आवरण में वह तलवारें हैं।

उसने तांगे को रोकने के लिए कहा वह लाठियो की जांच करना चाहता था। सिक्खों ने मना किया और नाराजगी जाहिर की परन्तु पुलिस ने उनमें से एक [illegible] हाथ से वह लाठी छीन ली।

तुरन्त ही सज्जनसिंह ने रिवाल्वर निकाल लिया और पुलिस पर गोली चलादी। हैड कांस्टेबिल मासूम शाह के गोली लगी, हास्पीटल पहुँचते पहुँचते मर गया और थानेदार मुहम्मद मूसा गम्भीर रूप से घायल हो गया। सज्जनसिंह को समीप खड़े हुए राहगीरों ने पकड़ लिया और उसको ढकेल कर एक दुकान मे बन्द कर दिया। अन्य दो भाग गए।

यह अनुमान लगाया गया कि तीन सिक्ख जो अनारकली कांड में सम्मिलित थे उस दल के थे जो १८ फरवरी को पकड़े गए और उनके दो साथी २० फरवरी, १९१५ को पकड़े गये। २५ फरवरी १९१५ को सज्जन सिंह को हैड कांस्टेबिल मासूम सिंह को मारने तथा थानेदार मुहम्मद मूसा को मारने का प्रयत्न करने के अपराध में जिलाधीश की अदालत में उपस्थित किया गया। उसको सेशन सुपुर्द कर दिया गया जहां ११ मार्च, १९१५ को उसका अभियोग आरम्भ हुआ। सेशन जज ने सज्जन को

दोषी घोषित कर उसे प्राणदंड की सजा दे दी। सज्जन सिंह ने न्यायालय में साहस और वीरता के साथ घोषणा की कि जो भी भारत के हितों के विरुद्ध काय करेगा। मुझे उसे मारने में तनिक भी झिझक नहीं होगी। अपराधी कैदी सज्जनसिंह को लाहौर सेन्ट्रल जेल में २० अप्रेल १९१५ को प्रात काल तड़के फांसी दे दी गई।

मेरठ की सैनिक अदालत मे कोर्ट मार्शल (१९१५)

जो चारों ओर घटनाएं घट रही थी उनके कारण तथा देशभक्तों द्वारा भारतीय सेनाओं के सनिको से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने का कुछ सैनिकों के मन पर बहुत ही अनुकूल प्रभाव पड़ा और उनमें देशभक्ति की भावना का उदय हुआ। बारहवीं अश्वारोही सेना (कवेलरी) और १२८ पायनियर्स के साथ उन्हें सफलता मिली यह स्पष्ट था। पहली सेना के (सवार (ऐक्टिंग लस दफादार) ईश्वर सिंह और सवार हजारा सिंह तथा अन्य दो हवलदार (क्वार्टर मास्टर हवलदार) चीमा सिंह और सिपाही फूला सिंह जो दूसरी सेना के थे उन पर यह अभियोग लगाया गया कि दो फरवरी और २३ मार्च १९१५ के बीच यह जानते हुए कि राज्य के विरुद्ध एक षड्यन्त्र हो रहा है कुछ व्यक्ति मेरठ मे स्थित सनिको को राज्य के विरुद्ध खुला विद्रोह खड़ा करने के लिए भड़का रहे हैं, उन लोगों ने उपयुक्त अधिकारियो को उसकी सूचना तुरन्त बिना देरी किए नहीं दी।

१९ ऐप्रिल १९१५ को मेरठ में एक समरी कोर्ट मार्शल की बैठक (सैनिक अदालत की बैठक) हुई और सभी अभियुक्तों का मुकदमा हुआ। सनिक अदालत ने फसला दिया कि सभी अभियुक्त व्यक्तिगत और सम्मिलित रूप से दोषी हैं। चारो को दोषी पाया गया और उन्हें ब्रिगेडियर प्रेसीडेन्ट मेरठ ने एक साथ प्राण दण्ड की सजा दी। २१ एप्रिल १९१५ को प्रधान सेनापति ने फसले की पुष्टि करदी।

२३ एप्रिल १९१५ को सिविल जेल मेरठ मे चारो को फांसी दे दी गई। चारों भारतीय सनिक जिनके हृदय में स्वतन्त्र भारत के लिए गहरा प्रेम और भावना थी वे भारतीय स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर अपने प्राण उत्सर्ग करने वाले बलिदानियों की लम्बी पंक्ति में सम्मिलित हो गए।

होशियारपुर कांड— क्रांतिकारियों को इस बात के यथेष्ठ सकेत मिले थे कि कोई व्यक्ति जो उनके बहुत समीप था उसने इस प्रकार का आचरण अवश्य किया कि जिससे दल के एक विश्वसनीय और सक्रिय सदस्यो की गिरफ्तारी हो गई। जांच करने पर यह ज्ञात हुआ कि चादा सिंह जेलदार ना गल कला गुप्त रूप से क्रांतिकारी दल के सम्बन्ध मे अधिकारियो को समाचार देता था। क्रांतिकारी दल की गुप्त बठक में यह निश्चय किया गया कि चांदासिंह को मार डाला जावे जिससे वह आगे दल के विरुद्ध कोई कार्य न कर सके।

२५ अप्रेल, १९१५ को शाम को एक आदमी चादासिंह के मकान नागल कलां भेजा गया कि वह पता लगाए कि चादासिंह उस समय घर पर है अथवा नहीं। उस आदमी ने बांतासिंह और बूटासिंह को कहला भेजा कि वे दोनो तयार रहें। संदेशवाहक के द्वारा यह जानकर कि चादासिंह घर पर ही है बांता सिंह, बूटासिंह और एक तीसरा आदमी जो बाद को फरार हो गया चादा सिंह के मकान के पास अपनी योजना को कार्यरूप रूप मे परिणित करने के अवसर की ताक मे प्रतीक्षा करते रहे। कुछ देर बाद जैसे ही चांदा सिंह मकान से निकल कर बाहर आया बांता सिंह और

बूटा सिंह ने उस पर यकायक आक्रमण किया उन्होंने उसके सिर में गोली मारी जिससे वह तुरन्त मर गया।

६ जून १९१५ को बूटा सिंह एक अन्य क्रान्तिकारी के साथ जो लाहौर षडयन्त्र का फरार था। 'चित्ती' गांव में पकड़ा गया और बांता सिंह २५ जून को अपने ही गांव में कद हो गया। २३ जुलाई १९१५ को उन पर अभियोग चलाया गया कि उन्होंने २५ अप्रेल १९१५ को नागल कला म चादा सिंह की हत्या करदी।

२७ जुलाई १९१५ को दोनो अभियुक्तों बांतासिंह और बूटासिंह को प्राण दण्ड की सजा दे दी गई और उनकी समस्त सम्पत्ति राज्य द्वारा जब्त कर ली गई। पंजाब सरकार तथा भारत सरकार को प्राणदंड पर पुन विचार करने की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गई और १२ अगस्त १९१५ को दोनों अभियुक्तों को लाहौर जेल में फांसी दे दी गई।

देशद्रोही का पुरस्कार (१९१५)

यद्यपि क्रान्तिकारी बड़ी योजनाओं की तैयारी में लगे थे। वे आलस्य में नहीं थे और उन मामलों की ओर ध्यान देते थे कि जिन्हें वे अपने मार्ग में बाधक समझते तरण तारण से १५ मील दूर जगतपुर ग्राम के सरदार बहादुर हजारा सिंह के बारे में क्रान्तिकारियों की दृढ़ धारणा थी कि वे देशद्रोही के समान कार्य कर रहे हैं। सरकारी पक्ष का समर्थन करने के कारण वे सार्वजनिक घृणा के पात्र बन गए थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने कुछ क्रान्तिकारियों को इस बात की धमकी दी थी कि वे उन पर बुरे चरित्र के होने तथा उनके जीवन निर्वाह के कोई दिखते हुए साधन न होने के अपराध में मुकदमा चलावेंगे। उनको रास्ते से हटा देने की योजना तयार की गई। ४ जून १९१५ को दिन दहाड़े साढ़े ९ बजे सायंकाल उस पर कालूसिंह आत्मासिंह चानन सिंह और बन्ता सिंह ने आक्रमण किया और वह स्थान पर ही मारा गया।

पहले लोग १२ जून और चौथा २५ जून को गिरफ्तार हो गए। अभियोग में आत्मा सिंह, कालूसिंह चानन सिंह और बन्ता सिंह को प्राण दण्ड दिया गया (२१ जुलाई १९१५) और उनको लाहौर सट्रल जेल में ६ अगस्त १९१५ को फांसी दे दी गई।

बन्ता उपनाम बूटा सिंह की फांसी इसलिए रोक दी गई क्योंकि उसके विरुद्ध अदालत में और भी अभियोग थे जिनमें उसे उपस्थित होना था।

वल्ला नहर पुल पर आक्रमण (१९१५)

क्रान्तिकारी कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए अस्त्र शस्त्रों की बहुत आवश्यकता होती थी। अतएव गम्भीर खतरे को उठा कर भी उनको प्राप्त करने की योजनाएं और तैयारियां की जाती थीं। १२ जून १९१५ को कालासिंह, चाननसिंह हरनामसिंह आत्मा सिंह और बनतासिंह कुछ अन्य साथियों के साथ वल्ला नहर के पुल के पास आए जो अमृतसर के पास था और वल्ला रेलवे पुल के पास जो मिलिटरी गार्ड था उस पर चार बजे सायंकाल आक्रमण किया। आक्रमण का उद्देश्य बन्दूकें तथा गोली बारूद प्राप्त करना था। उन्होंने उसी समय निकलने वाली एक रेलवे ट्रेन का लाभ उठाया और अत्यन्त तेजी और फुर्ती से सनिक रक्षक पर टूट पड़े।

सिपाही फूल सिंह और हवलदार छित्तर नायक राइफिल तथा पिस्तोल की गोलियों से मारे गए। गोलियों के अतिरिक्त फूलसिंह के शरीर पर पांच घावों के घाव भी थे और उसका शरीर गोलियों से छलनी हो गया था। छित्तर नायक के दो गोलियों

और दो घाव धावी से लगे। ६ राइफिलें और बहुत से कारतूस और और गोलियां आक्रमण कारी उठा ले गए।

यह हत्याएं करके क्रान्तिकारी दस हथियारों को लेकर दक्षिण की ओर बढा। पलासुर के समीप उन्होंने गुनाथ नामक व्यक्ति को मार दिया क्योंकि उसने उन्हें अपना घोड़ा देना अस्वीकार कर दिया था।

पलासुर से आक्रमणकारियों का गोविन्दवाल नाव घाट तक लोगों ने पीछा किया। पीछा करने वालों और जिनका पीछा किया जा रहा था दोनों में रात्रिभर लगातार गोलियों का आदान प्रदान होता रहा। नाव वालों को मार डालने की धमकी देकर आक्रमणकारियों ने उन्हें कलाम नदी के दूसरे किनारे पर पहुंचा देने पर विवश कर दिया। एक नाव वाले मोलग को उन्होंने गोली मार कर इसलिए मार दिया क्योंकि उसने नाव वालों को उन भगोड़ों को अपनी नावों में पार न उतारने का परामर्श दिया गया था।

काला सिंह और उसके दल का सशस्त्र पुलिस तेजी और दृढ़ता से पीछा कर रही थी, मार्ग में वे दो क्रान्तिकारियों को पकड़ने में सफल हो गए। शेष दल चालीस मील चलकर कपूरथला राज्य सीमा में घुसने में सफल हो गया। वहां कालासिंह चानणसिंह हरनाम सिंह और आत्मा सिंह पकड़ लिए गए।

अपने ही आदमियों द्वारा विश्वासघात किए जाने पर बन्तासिंह बहुत खोज के उपरान्त एक स्थान पर जो उसके घर से बहुत दूर नहीं था २५ जून १९१५ को पकड़ लिया गया।

अभियुक्त कालासिंह ने घोषणा की कि उसने गार्ड (सैनिक रक्षक) पर आक्रमण किया था और वह स्वयं उसकी मृत्यु का कारण है। वह शघाई से कोलम्बो होकर भारत एक फ्रैंच जहाज में आया था और उसने यह निश्चय कर लिया था कि भारत पहुंच कर और देश की राजनीतिक परिस्थिति का अध्ययन करने के उपरान्त वह भारत सरकार के विरुद्ध विद्रोह करेगा।

१२ जून १९१५ को सभी पांचों अभियुक्तों पर चित्तसिंह हवलदार फूलसिंह सुलाब और मलाग की हत्या करने और डाका डालने के अपराध में अभियोग चलाया गया। २१ जुलाई १९१५ को उन सभी को प्राण दण्ड की सजा दे दी गई।

लैफ्टीनैंट गवरनर को दया की प्रार्थना का पत्र दिया गया जो ४ अगस्त १९१५ को अस्वीकार कर दिया गया। बन्तासिंह को छोड़कर चारों अर्थात् (१) कालासिंह (२) चानणसिंह (३) हरनाम सिंह, (४) और आत्मासिंह को ९ अगस्त और १४ अगस्त १९१५ के बीच लाहौर सैंट्रल जेल में फांसी दे दी गई।

पदरी हत्याकांड (१९१५)

लाहौर षड्यन्त्र के मुकदमे में पदरी का कपूर सिंह एक सरकारी गवाह था। उसके उपरान्त वह पुलिस का मुखबिर बन गया तथा राजनीतिक दृष्टि से सदेहजनक व्यक्तियों के विरुद्ध वह पुलिस को खबर करता रहता था।

९ अगस्त १९१५ को ठीक सूर्य डूबने के बाद प्रेमसिंह जो लाहौर षड्यन्त्र (पूरक) अभियोग का अभियुक्त था तथा कुछ अन्य क्रान्तिकारी जो वल्ला नहर पुल के आक्रमणकारी दल के ही थे अमृतसर जिलेके पदरी नामक स्थान पर मिले। उनके मिलने का उद्देश्य उस आपत्तिजनक व्यक्ति को ससार से हटा देना था। शिकार अर्थात् कपूरसिंह कुएं पर

मक्खा कर घर की ओर आ रहा था जबकि उसके गोली मारी गई और वह घटना स्थल पर ही मर गया। मृतक के दोनों हाथों को चाकिस से काट लिया गया।

उस सूचना के आधार पर पन्द्रह सिक्खों पर जिनमें अधिकांश विदेशों से आए हुए थे अभियोग चलाया गया। चार पर हत्या का आरोप लगाया गया तीन पर षड्यन्त्र तथा अपराध में सहायक होने का तथा अन्यों पर षड्यन्त्र तथा हत्या का आरोप किया गया।

७ मार्च, १९१६ को लाहौर के विशेष न्यायालय ने 'सूरसिंग' के प्रेमसिंह तथा पहरी इन्दरसिंह को प्राणदण्ड तथा पांच अभियुक्तों को आजीवन काला पानी की सजा दे दी।

सैनिक विद्रोह (१९१५)

राष्ट्रीय कार्य के लिए सेना को अपनी ओर लाने प्रयत्न सर्वथा व्यर्थ नहीं गए। लाहौर षड्यन्त्र के अभियोग में अभियोजकों ने बहुधा इस बात का उल्लेख किया था कि क्रान्तिकारियों ने सेना को अपने साथ लाने का प्रयत्न किया। जांच करने पर यह स्पष्ट हो गया कि २३ कवेलरी रैजीमैंट (अश्वारोही सेना) कुछ सैनिकों का कनाडा और अमेरिका से वापस आने वाले सिक्खों द्वारा छेड़े किए गए विद्रोह से अधिक गम्भीर और निकट का सम्बन्ध था जिसके सम्बन्ध में तब तक कुछ ज्ञात नहीं हो सका था।

कम से कम अठारह व्यक्तियों का विप्लववादियों से सम्बन्ध था यह प्रमाणित करने के लिए आवश्यक सामग्री इकट्ठी की गई। वे लोग ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने के लिए प्रयत्न कर रहे थे। उन अठारह व्यक्तियों पर भारत सरकार के विरुद्ध विप्लव करने के प्रयत्न करने का अभियोग लगाया गया और समरी कोर्ट मार्शल (सैनिक अदालत) के सामने उनका अभियोग सुना गया। १४ अगस्त, १९१४ तथा उसके आगे की तारीखों में अभियोग की सुनवाई हुई।

सोलह सवार, एक लैंस दफेदार और एक दफेदार जो कि तेईसवीं (अश्वारोही) कवेलरी फ्रंटियर फोर्स (सीमा सेना) के सैनिक थे, १५ अक्तूबर १९१४ और १५ मई, १९१५ के बीच षड्यन्त्र करने के अपराध में सैनिक अदालत के सामने उपस्थित किए गए। उन पर यह आरोप था कि वे उस षड्यन्त्र में सम्मिलित थे जिसके अन्तर्गत बमों को बनाया गया। तार काटे गए, और गुप्त सभाएं हुईं जिनमें विप्लव की योजनाएं तयार की गईं। उन गर कमीशन अधिकारियों में से आठ पर यह वकल्पिक आरोप भी लगाया कि उनमें से प्रत्येक १५ अक्तूबर और १५ मई १९१५ के मध्य लाहौर छावनी में गदर पार्टी के सदस्यों द्वारा षड्यन्त्र की तयारी के बारे में जानता था कि जो कानून द्वारा स्थापित भारत में ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने का प्रयत्न था। उस षड्यन्त्र के परिणाम स्वरूप कतिपय कमीशन प्राप्त अधिकारी और उसी सेना के सैनिकों ने खुला विद्रोह करना स्वीकार कर लिया था और उन्होंने उस षड्यन्त्र की सूचना तुरन्त ही कमांडर अथवा अन्य किसी उच्च अधिकारी को नहीं दी।

बिना अधिक प्रयास के सैनिक अदालत ने सत्रह अभियुक्तों को प्रथम अपराध का दोषी करार दे दिया और उन्हें प्राण दण्ड की सजा दे दी। अठारवें को उन्होंने दूसरे अपराध का दोषी पाया और उसे आजन्म काले पानी की सजा गई।

अभियोग के पुनर्विचार के बाद प्रधान सेनापति ने नीचे दिए बारह अभियुक्तों के प्राणदण्ड की सजा की पुष्टि कर दी —

(१) अब्दुल्ला (२)मगर्वसिंह (३) बुद्धसिंह (४) बूटासिंह (५) गुजरसिंह (६) इन्दरसिंह (७) इन्दरसिंह (८) जेतासिंह (९) लक्ष्मन सिंह (१०) मोतासिंह (११) तारासिंह और (१२) बचावनसिंह उनमें से अधिकांश लाहौर और अमृतसर के थे।

सभी बारह को अम्बाला के सिविल जेल में ३ सितम्बर १९१५ को फांसी दे दी गई। उन बारह को फांसी मानो उन व्यक्तियों का कत्ले आम था जो अपने देश को स्वतन्त्र देखना चाहते थे और उसी लक्ष्य और उद्देश्य के लिए उन्होंने काय किया। वे देश को स्वतन्त्र बनाने के लिए बलिदान हो गए।

एक दूसरे अभियुक्त मन्दासिंह को अण्डमन में निर्वासित कर दिया गया जहां उसकी २० अक्टूबर, १९१८ को मृत्यु हो गई। मन्यासिंह का भाग्य भी उसी के जैसा था। उसकी मृत्यु १९ अप्रेल १९२० को हुई। ('पीयूष्स पाथ' फरवरी, १९६६ पृष्ठ ५१)

लाहौर षडयन्त्र अभियोग (१९०९-१९१५)

ब्रिटिश सरकार को उखाड़ फेंकने को बरमा के बाद सबसे अधिक बड़े पैमाने पर पंजाब में तैयारियां की गई। अंग्रेजी सरकार को उखाड़ फेंकने का विचार पंजाब में १९०९ में उत्पन्न हुआ तथा प्रथम विश्व युद्ध के प्रारम्भिक वर्षों में वह विकसित और पल्लवित हुआ।

उस षडयन्त्र का चित्र फिर चाहे वह कितना ही अपूर्ण क्यों न हो प्राप्त करने के लिए जो घटनाएं विदेशों में विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, मलाया बरमा तथा अन्य पूर्वी देशों मे घट रही थीं उनका ब्यौरा जानना आवश्यक है जो प्रपत्र दिया गया है। गदर कोमागाटा मारु बजबज विद्रोह सनफ्रांसिसको-अभियोग, चौथवी देसी लाइट इन्फैंट्री तथा मलाया स्टेट गाइड्स का विद्रोह मांडले षडयन्त्र तथा अन्य अभियोग जो सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने तथा सेनाओं को सम्राट के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए भड़काने के आरोप में चलाए गए थे उनमें से कुछ घटनाएं थीं जिनका १९१५ और उसके पश्चात लाहौर षडयन्त्र के अभियोग से निकट का सम्बन्ध था।

कुछ पंजाब में क्रांतिकारी आन्दोलन को संयुक्त राज्य अमेरिका कनाडा शंघाई तथा सुदूर पूर्व के देशों से लौटकर आए हुए भारतीयों से बहुत बढ़ावा मिला। उन भारतीयों का विदेशों का विस्तृत और विभिन्न प्रकार का अनुभव था साथ ही उनका मानस किसी भी दुर्घटना का सामना करने के लिए पूरी तरह तैयार हो चुका था। उनके आ जाने से पंजाब में जो क्रांतिकारी संगठन पहले से ही सक्रिय था अधिक शक्तिवान और सतेज हो उठा। अमेरिका, कनाडा तथा अन्य देशों से प्राप्त किए हुए अस्त्र शस्त्र गोली-बारूद बड़ी मात्रा मे भारत में गुप्त रूप से लाए गए। विदेशों से लौटे हुए भारतीयों ने जैसे ही भारत भूमि पर पैर रक्खा उनमें से बहुतों को गिरफ्तार कर लिया गया। और कारागार में डाल दिया गया। उनमें से कुछ को जिन्हें गिरफ्तार नहीं किया गया अथवा उनकी कड़ी जांच करके छोड़ दिया गया वे पंजाब आ गए और सनिकों तथा ग्रामीणों में क्रांतिकारी विचारों को फैलाने लगे।

क्रांतिकारियों के सामने यह स्पष्ट था कि देश को स्वतन्त्र करने के लिये

लाहौर की छावनी में सशस्त्र प्रदर्शन किया और फिर वे इस उद्देश्य से फिरोजपुर की ओर बढ़े कि मोगा के खजाने और शस्त्रागार को ३० नवम्बर १९१४ को लूट लिया जावे। मोगा की ओर जाने वाले सशस्त्र क्रांतिकारी दल की फीरोजपुर (फीरोजशर) के पास २७ नवम्बर १९१४ को पुलिस के दल से मुठभेड़ हो गई जिसमें एक थानेदार और एक जेलदार मारा गया। क्रांतिकारी दल और पुलिस मे देर तक गोली चलती रही। क्रांतिकारियो में दो क्रांतिकारी घटनास्थल पर ही मर गए और बाद को सात क्रांतिकारियो पर मुकदमे चले और उन्हें फांसी द दी गई।

लुधियाना जिले के 'सानेवाल' और मानसुराम' स्थानों पर क्रमश २३ और २७ जनवरी १९१५ को क्रांतिकारियो ने डाके डाले और धनिकों की सम्पत्ति क्रांतिकारी कार्यों के लिए लूट ली। इसी प्रकार मालेरकोटला रियासत 'भानेर' स्थान पर जनवरी २९ को, अमृतसर जिले 'छावा' नामक स्थान पर २ फरवरी को लुधियाने जिले के 'रामोन' नामक स्थान पर ३ फरवरी को तथा अन्य स्थानो पर डाके डाले गए।

इनके अतिरिक्त व्यक्तिगत क्रांतिकारियो द्वारा आक्रमण और झपटें बहुधा बड़ी सख्या में होती रहीं। २० फरवरी १९१५ को अनारकली बाजार (लाहौर) में एक क्रांतिकारी द्वारा एक थानेदार और कांस्टेबिल मारा गया जिसके लिए उसको फांसी दी गई। क्रांतिकारियो का एक सशस्त्र दल ५ जून १९१४ को एकत्रित हुआ। उनका लक्ष्य कपूथला शस्त्रागार को लूट कर अस्त्र शस्त्र प्राप्त करना और तत्पश्चात लाहौर और मांटगोमरी जेलो पर आक्रमण करना था। जब क्रांतिकारी इकट्ठे हुए और उन्होंने सारी परिस्थिति का अध्ययन किया तो उन्होंने अनुभव किया कि दल की शक्ति उस काय के लिए पर्याप्त नही है अतएव १२ जून को अधिक शक्ति सचय कर कार्यवाही करने का निश्चय किया गया। उन्होने कुछ क्रांतिकारियो को वाल्ला पुल पर नियुक्त सनिक टुकडी पर आक्रमण करने के लिए भेजा। १२ जून को पुल की रखवाली करने वाले सनिको पर आक्रमण किया गया जिसमे चार सनिक मारे गए और आक्रमणकारियों में से चार पर मुकदमा चला और उनको फांसी दे दी गई।

वाल्ला पुल पर आक्रमण रेल यातायात को नष्टभ्रष्ट करने के उद्देश्य से किया गया था जो कि क्रांतिकारियों के कार्यक्रम का एक भाग था। एक दूसरी योजना फरवरी १९१५ मे दारहा रेलवे पुल पर आक्रमण करने की थी जो अंतिम क्षण में स्थगित करदी गई।

पजाब के क्रांतिकारियों का सम्बन्ध मडी रियासत के असतुष्ट और क्षुब्ध व्यक्तियों से भी था। क्रान्तिकारियो ने निश्चय किया कि रियासत मे बम और शस्त्र इकटठे किए जावें और पजाब से क्रांतिकारियों को लाकर वजीर तथा भारत सरकार के प्रतिनिध रजीडट को मार कर रियासत पर अधिकार कर लिया जाय। क्रान्तिकारियो का लक्ष्य यह था कि मण्डी को समीपवर्ती प्रदेश पर विस्तृत आक्रमण करने के लिए आधार केन्द्र बनाया जावे। इससे पृथक मण्डी षडयन्त्र केस म पाच क्रांतिकारियों पर मुकदमा चलाए गए उनमे से एक को आजन्म कालापानी और अन्यो को विभिन्न कालो के लिए कारावास की सजा दे दी गई।

क्रांतिकारियो में विलक्षण योग्यता प्रतिभा अदम्य साहस तथा क्षमता के व्यक्ति थे। १२ फरवरी १९१५ को लाहौर में उन्होने यह निर्णय किया कि २१ फरवरी को विभिन्न स्थानों पर बहुत विशाल क्षेत्र में जनविद्रोह खड़ा कर दिया जाय। क्रांतिकारी

सदेशवाहकों को विभिन्न छावनियों में २१ फरवरी को होने वाले विद्रोह की सूचना देने के लिए भेज दिया गया। योजना यह थी कि जब मीयांमीर में विद्रोह होने की सूचना मिले तो समस्त पजाब मे सेनाए विद्रोह कर दें।

इस बात की भी व्यवस्था करली गई थी कि ग्रामीणों के समूहों को लाहौर में इकट्ठा कर लिया जाय और उन्हें भी विद्रोह में सम्मिलित किया जावे। बड़ी मात्रा में बम बनाए गए और बहुत बड़ी राशि में अस्त्र शस्त्र इकटठे किए गए जो कि विद्रोह के समय क्रांतिकारियों में बांट दिए जाते। विद्रोह की व्यवस्था को पूर्ण करने के लिए तारों को काटने के लिए तथा सचार व्यवस्था के केन्द्रों को नष्ट भ्रष्ट करने के लिए बहुत बड़ी मात्रा मे औजार इकटठे कर लिए गए। जब विद्रोह सफल हो जावे तो सभी प्रमुख स्थानों पर स्वतन्त्र भारत की ध्वजा को फहराने के लिए बहुत बड़ी सख्या में राष्ट्रीय झडे तयार कर लिए गए। तात्पर्य यह है कि उस विशाल जन क्रांति को सफल बनाने के लिए शीघ्रतापूर्वक पूरी तैयारी करली गई।

जब तैयारी लगभग पूरी हो चुकी थी उसके अंतिम चरण मे क्रांतिकारियों को यह पता लगा कि पुलिस को होने वाले विद्रोह की एक जासूस के द्वारा तैयारी की खबर लग गई है और विद्रोह को न होने देने के लिए सारा प्रबध कर लिया गया है। सभी प्रमुख स्थानों पर तथा केन्द्रों पर सनिक रक्षक नियुक्त कर दिए गए और जिन सनिक टुकड़ियों तथा सनिकों ने विद्रोह में सम्मिलित होने का वचन दे दिया जिनकी उनके साथ सहानुभूति थी उन्हें रात में ही बहुत दूर स्थानांतरित कर दिया गया।

जब क्रांति के नेताओं के समक्ष यह नवीन परिस्थिति उपस्थित हुई तो इस उद्देश्य से कि महीनों की विप्लव की तयारी व्यर्थ नष्ट न हो जाय उन्होंने शीघ्रतापूर्वक विद्रोह की तारीख को निश्चित तारीख से दो दिन पूर्व अर्थात् १९ फरवरी कर दिया। परन्तु अब समय इतना कम रह गया था कि बदली हुई तारीख की सूचना सभी केन्द्रों में जो एक दूसरे से बहुत दूर थे पहुँचाना कठिन था। विद्रोह का सगठन करने वालों के लिए इसका परिणाम अत्यन्त भयानक हुआ। क्रान्तिकारी कुछ भी कर सकें उससे पूर्व ही विद्रोह की विशाल योजना निराशापूर्ण ढग से असफल हो गई थी।

एक साथ पजाब मे क्रांतिकारी दल के सदस्यों की धर पकड़ प्रारम्भ हो गई। बहुत बड़ी सख्या में क्रांतिकारी पकड़ लिए गए। उन सबों के घरों की बड़ी बारीकी से तलाशी ली गई छोटे से छोटे कागज के टुकड़ों को भी नहीं छोड़ा गया। पुलिस घरों से कागज और अन्य सभी ऐसी वस्तुए ले गई जिनसे षड्यन्त्र के सम्बध में तनिक भी जानकारी मिल सकती थी। १९ फरवरी को लाहौर के मोची गेट की तलाशी में एक जगह बहुत से तयार बम तथा बम बनाने की सामग्री तथा रिवाल्वर और खजर मिले। २० फरवरी की तलाशी म विभिन्न प्रकार के रिवाल्वरों के कारतूस टोपियां रेतो डुप्लिकेटर, एक मुहो, राष्ट्रीय झडे तथा क्रांतिकारी साहित्य प्राप्त हुआ। २४ फरवरी, १९१५ को लाहौर के गुमटी बाजार के मकान में तथा अनारकली के एक दूसरे मकान में ४ बक्सों में बने हुए बम एक पिस्तौल, विभिन्न प्रकार के कारतूस, एक बोतल जिसम ग्रीक फायर (Greek Fira) का सालूशन भरा था तथा

बम बनाने में काम आने वाले रसायनिक पदार्थ मिले।

२७ अप्रैल, १९१५ को लाहौर के सट्रल जेल मे एक स्पेशल ट्रिब्यूनल के समक्ष देश का सबसे बड़ा षड्यन्त्र का अभियोग चलाया गया। आरम्भ में ६२ अभियुक्त थे परन्तु बाद को उनकी सख्या बढ़कर अस्सी हो गई जिनमे से सोलह फरार हो गए।

सभी अभियुक्तों पर धाराओं १२१ १२१ ए १२२ १२२ ११६, १२३ १२४ ए, १२४ए १०७ १३१ १३२ ३०२ ३०३/१०६/१२० बी ३६५ ३६५-३६७ ३६६ ४१२ ४१४ आई पी सी (इडियन पिनल कोड) के अन्तगत मुकदमा चलाया गया। इसके अतिरिक्त विस्फोटक पदार्थ कानून (१९०८ के एक्ट ६) की धारा ३ ४ ५ ६ के अन्तगत भी उन पर अभियोग चलाया गया।

इस षड्यन्त्र के अभियोग मे १३ सितम्बर १९१५ को फसला सुनाया गया जो कि उसके उद्‌गम उद्देश्य समय स्वरूप पेचीदगी प्रभाव और उसमे जितने व्यक्ति फसे हुए थे तथा उनके कार्यों के क्षेत्र की दृष्टि से अनोखा था। उसके फसले के अनुसार चौबीस क्रांतिकारियों को फांसी दे दी गई। छब्बीस को आज म कालापानी और अ यों का विभि न समय की कड़ी सजा दी गई। दो चार को ही मुक्त किया गया।

१४ नवम्बर १९१५ को गवरनर जनरल इन काउंसिल ने सत्रह व्यक्तियों की मृत्यु की सजा को आजीवन काले पानी में परिणित कर दिया। केवल सात व्यक्तियों को मृत्यु दण्ड भुगतने के लिए छोड़ दिया जिन सात को मृत्यु दण्ड मिलना था वे थे— १ बकशीशसिंह, २ विष्णु गणेश पिंगले ३ सुरेनसिंह (ईश्वरसिंह के सुपुत्र) ४ सुरेन सिंह (बूरसिंह के सुपुत्र) ५ हरनामसिंह (स्याल कोट वाले) ६ जगन्नाथसिंह और ७ करतारसिंह (सराबा) यह सातों वीर जिन्होंने भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध को लड़ा जि होने लम्बे वर्षों तक देश को स्वतन्त्र करने के लिए अथक परिश्रम किया जिन्होंने देश के लिए अकथनीय कष्ट उठाए और उन सब सुखों का त्याग कर दिया जिनके पीछे साधारण यक्ति दौड़ते हैं जि होने देश के लिए अपना सवस्व निछावर कर दिया उन्हें १७ नवम्बर १९१५ को लाहौर के सेन्ट्रल जेल में फांसी दे दी गई।

न्यायालय के कक्ष में और फांसी के तख्ते के सामने खड़े होने पर भी उन सभी वीर अभियुक्तों ने अपने काय को षडयन्त्र की सज्ञा देना स्वीकार नहीं किया। उन्होंने स्वीकार नहीं किया कि उ होने कोई षडयन्त्र किया था। उनका कहना था कि उनका प्रयास विदेशी शासको के विरुद्ध एक खुला विद्रोह और चुनौति था। अवश्य ही उन विदेशी शासको ने उन देशभक्त वीरो के विरुद्ध जिन्होंने अपनी मातृभूमि को स्वतन्त्र बनाने के लिए देश पर सवस्व निछावर कर दिया—राजद्रोह अर्थात सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने का अभियोग लगाया।

करतार सिंह सराबा ने कहा कि मैंने जो कुछ किया उसके लिए मुझे तनिक भी खेद नहीं है वरन उसे इस बात का गौरव है कि उसने उन विदेशियों को जिन्होंने षडय त्र से देश पर अपनी सत्ता स्थापित कर ली है चुनौती दी। अवश्य ही उसे मुझे अपने इस प्रयत्न के असफल हो जाने का अफसोस है। उसने दृढता पूवक इस बात को कहा कि प्रत्येक दासता में पड़े व्यक्ति को विद्रोह करने का अधिकार है और मातृभूमि के पुत्रों द्वारा अपने प्रारम्भिक अधिकार अर्थात स्वतन्त्रता को प्राप्त करने के लिए विद्रोह

किया उसके उपरांत यह सुना गया कि वे जुलाई मे स्याम पहुँचे और अगस्त, १६१५ में बैंगकाक में गिरफ्तार कर लिए गये। वहा से उन्हें सिंगापुर मे ले जाया गया जहां से उन्हें पुलिस की हिरासत मे भारत में बहुर्गामित षडयन्त्र के अभियोगो के अभियुक्त के रूप में लाया गया। उस समय अधिकारियो का सारा ध्यान उन षडयन्त्रो के अभियोगो के फले हुए ज्वर ने अपनी ओर खीच रक्खा था अधिकारियो को व षडयन्त्र के अभियोग एक सुलभ अस्त्र के रूप में प्राप्त हो गए थे कि जिनके द्वारा साहसी और सशक्त पजाबियो को राजभक्ति और नागरिकता का पाठ पढ़ाया जा सकता था।

शहीदो की सख्या मे वृद्धि (१६१५)

उन अनेक क्रांतिकारी वीरो में से जिनकी हड्डियां अदमन की मिट्टी म दब गई उनमें से एक 'भानसिह थे जिन्हे १६१५ में काले पानी भेजा गया था। भानसिह उग्र और दृढ़ विचारों के व्यक्ति थे अतएव बहुत जल्दी ही उनका अभियुक्त वाडरों तथा नीचे अफसरो से सघर्ष छिड गया। अतएव उन्हें उस कोठरी (सैल) में बदल दिया गया जहां निमम क्रूरता के साथ अभियुक्तों पर पाशविक अत्याचार किया जाता था जिसे वहा की भाषा मे "धुलाई" कहा जाता था। जब सुपरिन्टेन्डेन्ट को इस बात की सूचना दी गई तो वह उनकी सल में आया और उन्हें अत्यन्त गन्दी भाषा में भद्दी गालियां दीं। भानसिह ने अवसर के अनुकूल उचित भाषा में सुपरिन्टेन्डेन्ट के इस अभद्र और अपमानजनक व्यवहार का विरोध किया। उस सुपरिन्टेन्डेन्ट के लिए यह एक नवीन अनुभव था वह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि कोई अभियुक्त उसे अपमानित करने का साहस करेगा।

सुपरिन्टेन्डेन्ट की आज्ञानुसार बहुत से लोग भानसिह पर टूट पडे और उनको बडी निदयता और क्रूरता के साथ मारा उसके परिणामस्वरूप भानसिह को खून की क हुई, बहुत सा खून वमन म गिरा। उन्हें जेल के अस्पताल म भेज दिया गया परन्तु वहां भी उनकी दशा म सुधार नहीं हुआ। वे बहुधा रक्त वमन करते रहे। क्षत विक्षत शरीर को लेकर भानसिह दो महीने तक जीवन और मृत्यु के बीच झूलते रहे। वे मृत्यु से सघर्ष करते रहे। जीवन क्रमश क्षीण होता जा रहा था। एक दिन वे अपनी सैल म मरे मिले। अग्रजी सरकार की निर्दयता के शिकार उस वीर ने मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने प्राण उत्सर्ग कर दिए। (सदम वीर वी डी सावरकर रचित 'स्टोरी आफ माई ट्रांसपोर्टेशन फार लाइफ' पृष्ठ ३६६)

मेरी मा को रोने दो जिससे अन्य किसी की मा न रोवे (१६१५)

राजस्थान के एक मन्त्री परिवार का वशज होने का प्रतापसिंह को गौरव प्राप्त था। उनके यशस्वी पिता श्री केसरीसिंह बारहठ को उदयपुर तथा कोटा के दरबारों म बहुत सम्मान मिला था। प्रतापसिंह को अपने नेता रासबिहारी का असीम विश्वास प्राप्त था, साथ ही उत्तर भारत के क्रांतिकारियों और सहयोगी मित्रो मे वे बहुत आदर के साथ देखे जाते थे। अपने समय मे प्रतापसिंह राजपूताने के क्रांतिकारियों के असदिग्ध नेता थे। उन्होंने राजपूत सैनिकों में असन्तोष उत्पन्न करने का प्रयत्न किया और जबकि उनके नेता रासबिहारी बोस फरार होकर गुप्त रूप से नवद्वीप (बगाल) मे छिपे थे और उनको पकडने के लिए सरकार ने जासूसों की एक सेना जुटा रक्खी थी, प्रतापसिंह ने अपने नेता से नवद्वीप मे मिलने का खतरा मोल लिया और पजाब में क्रांतिकारी काय करने के लिए उनका परामश लिया। देहली के प्रसिद्ध

वाला पुल पर आक्रमण करने के लिए दल को सगठित करने का भार दिया गया था। (४) हरसिंह सनवादी दुसाज, मोगा, फिरोजपुर के निवासी थे वे शुरू की क्रांतिकारियों म से थे। वाला पुल पर प्रथम आक्रमण मे सम्मिलित थे। (५) उत्तमसिंह हासी जोगराव लुधियान के निवासी थे। बहुत पहले ही वे लोहातवादी क्रांतिकारियों के सम्पर्क में आ गए थे। उन्होने लोहातवादी क्रांतिकारी दल को अस्त्र शस्त्र देकर तथा उसके लिए शस्त्र इकट्ठा कर बहुत सहायता पहुचाई थी। उन्होने दल के लिए बम तयार किए तथा फिरोजपुर जिले के आक्रमण मे भाग लिया था। ५ जून, १९१५ को कपूरथला म जो क्रांतिकारियों की सभा हुई उसमे भी वे सम्मिलित थे जिसमें कि वाला पुल पर आक्रमण करने की योजना तयार की गई थी। वे गिरफ्तारी से बचने के लिए फरार होकर फरीदकोट राज्य में भाग गए थे।

(द्वितीय पूरक) अभियोग (१९१६)

पहले और दूसरे लाहौर षडयन्त्र के अभियोगों में जो आरोप और साक्षी उपस्थित की गई थी उन्हीं आरोपो और साक्षी पर उसी ट्रिब्यूनल के समक्ष द्वितीय पूरक अभियोग ८ नवम्बर १९१६ को आरम्भ हुआ जिसमें बड़ी सख्या में क्रांतिकारियों को फासा गया। अपेक्षाकृत वह अभियोग थोड़े समय तक ही चला क्योंकि जितनी भी गवाही थी वह १४ दिसम्बर तक सब समाप्त हो गई। उस समय तक अभियोजन के साक्षी सब भली भाति साक्षी देने में प्रशिक्षित और पारागत कर दिए गए थे और पुलिस उनसे जो कहलाना चाहती थी वे बिना कठिनाई के वही कह देते थे साथ ही अभियुक्त भी उस प्रकार की गवाही सुनने के अभ्यस्त हो चुके थे और वे यह भी जानते थे कि उनका भविष्य क्या होना है।

५ जनवरी १९१७ को ६ व्यक्तियों को प्राणदण्ड की आज्ञा दे दी गई। अभियोग के पुन विहावलोकन पर सरकार ने एक अभियुक्त के प्राण दण्ड को आजीवन काले पानी म परिणित कर दिया। शष पाच जिनको प्राण दण्ड दिया गया वे थ —

(१) बाबूराम (२) बलवतसिंह (३) रफीक अब्दुल्ला, (४) रूरसिंह और (५) मना इन पांचो क्रांतिकारी वीरों ने अपने को उन शहीदो की सूची में जोड़ दिया जिन्होंने लाहौर सेन्ट्रल के फांसी के तख्ते को २६ माच, १९१७ को अपनी शहादत से पवित्र किया था। अन्य अभियुक्तों के बारे में बहुत कुछ खोज करने पर भी कोई ब्योरा नहीं मिल सका। बलवतसिंह के विषय में इतना अवश्य ज्ञात था कि वे कनाडा के क्रांतिकारी आंदोलन में अत्यन्त प्रभावशाली और प्रमुख कायकर्ता थे। वे १९११ के आरम्भ में युनाइटेड किंगडम ब्रिटेन गए और वहां उन सभी व्यक्तियों से मिले जो अत्यन्त उग्र राजनीतिक विचारों के थे। उसी वष के अगस्त मास में वे लाहौर आए और उन्होंने 'गदर' तथा विदेशों में भारत की स्वतन्त्रता के लिए किए जाने वाले सघर्ष में अनेक प्रभावशाली भाषण दिए।

१९१४ में वे कनाडा वापस लौटे जबकि 'कोमागाटा मारु' काड के कारण कनाडा के सिक्खों में बहुत क्षोभ और उत्तेजना फली हुई थी। बलवतसिंह भी उसमें कूद पड़े और उन्होने उस जहाज की यात्रा से सम्बन्धित आंदोलन म प्रमुख भाग लिया। वे भारतीयों के क्रांतिकारी उद्देश्य से भारत वापस लौटने की योजना के सबसे प्रबल और उदार समर्थक थ। वे सितम्बर १९१४ में कनाडा से चले और कुछ दिनों बीच में सन फ्रांसिस्को ठहरे जहां उन्होंने गदर पार्टी के मुख्य कार्यालय से सम्पर्क स्थापित

किया उसके उपरान्त यह सुना गया कि व जुलाई मे स्याम पहुँचे और अगस्त, १९१५ में बैंकाक में गिरफ्तार कर लिए गये। वहां से उन्हें सिंगापुर मे ले जाया गया जहां से उन्हें पुलिस की हिरासत मे भारत में बहुर्गमित षडयन्त्र के अभियोगी के अभियुक्त के रूप में लाया गया। उस समय अधिकारियों का सारा ध्यान उन षडयन्त्रों के अभियोगों के फले हुए ज्वर ने अपनी ओर खींच रक्खा था अधिकारियों को व षडयन्त्र के अभियोग एक सुलभ अस्त्र के रूप में प्राप्त हो गए थे कि जिनके द्वारा साहसी और सशक्त पंजाबियों को राजभक्ति और नागरिकता का पाठ पढ़ाया जा सकता था।

शहीदों की संख्या मे वृद्धि (१९१५)

उन अनेक क्रांतिकारी वीरों में से जिनकी हड्डियां अदमन की मिट्टी मे दब गई उनमें से एक 'मानसिंह' थे जिन्हें १९१५ में काले पानी भेजा गया था। मानसिंह उग्र और दृढ़ विचारों के व्यक्ति थे अतएव बहुत जल्दी ही उनका अभियुक्त वार्डरों तथा नीचे अफसरों से संघर्ष छिड़ गया। अतएव उन्हें उस कोठरी (सैल) में बदल दिया गया जहां निर्मम क्रूरता के साथ अभियुक्तों पर पाशविक अत्याचार किया जाता था जिसे वहां की भाषा मे "धुलाई" कहा जाता था। जब सुपरिटेंडेन्ट को इस बात की सूचना दी गई तो वह उनकी सैल में आया और उन्हें अत्यन्त गन्दी भाषा में भद्दी गालियां दी। मानसिंह ने अवसर के अनुकूल उचित भाषा में सुपरिटेन्डेन्ट के इस अभद्र और अपमानजनक व्यवहार का विरोध किया। उस सुपरिटन्डन्ट के लिए यह एक नवीन अनुभव था वह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि कोई अभियुक्त उसे अपमानित करने का साहस करेगा।

सुपरिटेन्डेन्ट की आज्ञानुसार बहुत से लोग मानसिंह पर टूट पड़े और उनको बड़ी निर्दयता और क्रूरता के साथ मारा उसके परिणामस्वरूप मानसिंह को खून की कै हुई, बहुत सा खून वमन में गिरा। उन्हें जेल के अस्पताल में ले जाया गया परन्तु वहां भी उनकी दशा में सुधार नहीं हुआ। वे बहुधा रक्त वमन करते रहे। क्षत विक्षत शरीर को लेकर मानसिंह दो महीने तक जीवन और मृत्यु के बीच झूलते रहे। वे मृत्यु से संघर्ष करते रहे। जीवन क्रमशः क्षीण होता जा रहा था। एक दिन वे अपनी सैल में मरे मिले। अंग्रेजी सरकार की निर्दयता के शिकार उस वीर ने मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने प्राण उत्सर्ग कर दिए। (स्वतन्त्र वीर श्री सावरकर रचित "स्टोरी आफ माई ट्रांसपोर्टेशन फार लाइफ" पृष्ठ १६६)

मेरी मा को रोने दो जिससे अन्य किसी की मा न रोये (१९१५)

राजस्थान के एक मन्त्री परिवार का वंशज होने का प्रतापसिंह को गौरव प्राप्त था। उनके यशस्वी पिता श्री केसरीसिंह बारहठ को उदयपुर तथा कोटा के दरबारों में बहुत सम्मान मिला था। प्रतापसिंह को अपने नेता रासबिहारी का असीम विश्वास प्राप्त था, साथ ही उत्तर भारत के क्रांतिकारियों और सहयोगी मित्रों मे वे बहुत आदर के साथ देखे जाते थे। अपने समय में प्रतापसिंह राजपूताने के क्रांतिकारियों के असंदिग्ध नेता थे। उन्होंने राजपूत सनिकों में असन्तोष उत्पन्न करने का प्रयत्न किया और जबकि उनके नेता रासबिहारी बोस फरार होकर गुप्त रूप से नवद्वीप (बंगाल) में छिपे थे और उनको पकड़ने के लिए सरकार ने जासूसों की एक सेना जुटा रक्खी थी, प्रतापसिंह ने अपने नेता से नवद्वीप में मिलने का खतरा मोल लिया और पंजाब में क्रांतिकारी कार्य करने के लिए उनका परामर्श लिया। देहली के प्रसिद्ध

क्रान्तिकारी अमीरचन्द ने प्रतापसिंह का परिचय कराया था। अमीर चन्द ने रासबिहारी बोस को उनकी निष्ठा के सम्बन्ध में जो आश्वासन के शब्द कहे थे, प्रतापसिंह ने जीवन में उनको कभी झूठा नहीं होने दिया।

१९१५ में प्रथम बार प्रतापसिंह देहली षडयन्त्र के सम्बन्ध में पकड़े गए परन्तु उनके विरुद्ध पुलिस यथेष्ट साक्षी उपस्थित नहीं कर सकी इस कारण अदालत ने उन्हें छोड़ दिया। दूसरी बार उन्हें पुनः पकड़ लिया गया। पुलिस ने उन्हें दल के भेद बताने के लिए बहुत अधिक धन देने का लालच दिया। यही नहीं उनसे कहा गया कि उनके पिता और चाचा के विरुद्ध जो षडयन्त्र के मुकदमे चल रहे हैं उनको उठा लिया जावेगा उनकी जब्त की हुई जायदाद वापस करदी जावेगी उनके पिता को कारागार से मुक्त कर दिया जावेगा और स्वयं उन्हें छोड़ दिया जावेगा। उनसे कहा गया कि उनकी माता उनके लिए दिन रात रोती रहती हैं। इक्कीस बाईस वर्ष के उस वीर युवक ने जो उत्तर दिया वह क्रांतिकारियों के इतिहास में अत्यन्त गौरवमय है। उन्होंने पुलिस अधिकारियों से कहा— तुम्हारा यही तो कहना है कि मेरी माता दिन रात रोती हैं और मेरे भविष्य के सम्बन्ध में बहुत ही दुखी हैं। परन्तु मैं अन्य किसी मां के रोने का कारण बनना अस्वीकार करता हूं। यदि कभी ऐसा हो तो वह मेरी मृत्यु होगी और वह मेरी माता का अपमान होगा।" प्रतापसिंह को बरेली जेल में हृदय हीन अंग्रेजी सरकार ने महीनों तक अमानवीय यातनाएं देकर बाईस वर्ष की आयु में मार डाला।

अनभ्यस्त व्यापार (१९१६)

इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि क्रांतिकारियों ने जो सैनिकों को उनकी छावनियों और बरकों में जाकर अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध भड़काया उसमें उनको सातवीं राजपूत बटालियन में आंशिक सफलता मिली थी। देहली में २८ फरवरी १९१६ को संक्षिप्त सामान्य सैनिक अदालत के (Summary General Court Martial) के सामने ड्रिल हवलदार जालेश्वरसिंह और एक नायक (दोनों ही सातवीं राजपूत बटालियन के थे) पर लिखे आक्षेप के आधार पर अभियोग चलाया गया। यह जानते हुए कि राज्य के विरुद्ध एक षडयन्त्र हो रहा है उन्होंने कमांडिंग अथवा अपने से उच्च अधिकारी को सूचना नहीं दी। बनारस में एक जनवरी और १५ अप्रैल, १९१५ के बीच यह जानते हुए कि 'गदर' पार्टी के सदस्यों द्वारा एक षडयन्त्र इस उद्देश्य से रचा जा रहा है कि ब्रिटिश भारत में कानून द्वारा स्थापित सरकार को उखाड़ फेंका जावे जिसके परिणामस्वरूप उस रजीमेंट के कुछ आदमी उस क्रांतिकारी दल में सम्मिलित होकर विद्रोह करने के लिए तयार हो गए थे उन्होंने इसकी सूचना अपने कमांडिंग अथवा उच्च अधिकारियों को नहीं दी।

दोनों ही अभियुक्तों को प्राण दण्ड की सजा दे दी गई। बाद को नायक की प्राणदण्ड की सजा को आजीवन कालेपानी की सजा में बदल दिया गया। २१ मार्च, १९१६ को देहली सेन्ट्रल जेल में जालेश्वरसिंह ने भारत माता के एक वीर सपूत की भांति साहस के साथ मृत्यु को वरण किया।

बहुतों में से (१९१७)

रामरखा फरवरी १९१७ के मांडले पूरक अभियोग में अभियुक्त था जिसे ६ जुलाई, १९१७ को आजीवन काले पानी की सजा दी गई। उसको अण्डमन भेजा गया

और कठोर श्रम कराया गया। क्योंकि वह हृष्ट पुष्ट और अच्छे स्वास्थ्य का युवक था उस अत्याधिक अमानवीय कठोर श्रम को लम्बे समय तक कर सका। परन्तु व्यक्तिगत धार्मिक आचरण के सम्बन्ध में उसका वहा के अधिकारियो से संघर्ष हो गया। उसने कुछ सुविधाए और विशेषाधिकार जिसका वह अधिकारी था मागी परन्तु अधिकारियो ने अस्वीकार कर दी। उसने उसके विरोधस्वरूप मृत्यु पर्यन्त उपवास किया और लम्बे उपवास के उपरान्त उस वीर देशभक्त ने अपनी छोटी सी सैल में अदमन के सेलुलर जेल में जो भारत के बास्टिल के नाम से प्रसिद्ध था की मृत्यु का वरण किया।

मातृभूमि की सेवा करने प्रलोभन (१९१५ १७)

एक व्यक्ति जो बहुत लम्बे समय तक भारत के बाहर विशेषकर कनाडा में रहा मातृभूमि की पुकार सुनकर वापस भारत लौट आया। जब वह १९१५ में कलकत्ता लौटा तो उसको नजर बन्द कर लिया गया और पुलिस की निगरानी में लाहौर भेजा गया। उसके तेज मस्तिष्क मे यह सदेह प्रबल हो उठा कि जब वह निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचेगा तो बन्द कर लिया जावेगा अतएव गार्डों (सिपाहियो) की आख बचाकर बिना उन्हें जात हुए बीच के एक स्टेशन पर उतर गया। अत्यन्त कठिनाई से पैदल चलकर पुलिस की आख में धूल झोंककर वह पजाब पहुच गया और वहा वह क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हो गया। उसको बम बनाने की विशेष जानकारी थी और बम बनाने मे वह निपुण था। उसके बनाए हुए दो बमों का मसूरान डकैती में उपयोग हुआ था जिसका लाहौर षड्यन्त्र के अभियोग में प्रमुख रूप से उल्लेख किया गया था।

यह जानकर कि उसका पजाब में ठहरना अत्यन्त जोखिम भरा है 'मथुरासिंह' मार्ग से काबुल चला गया और उसके उपरान्त उसने सीमा पार कर रूस मे प्रवेश किया। अत्यन्त कठिनाई के साथ वह ताशकन्द पहुच गया। वहां से उसने एक अत्यन्त योग्य और विश्वसनीय व्यक्ति के साथ जार के नाम पत्र भेजा। यह काय पार्टी के नेताओ ने उन्हें सौंपा था। उन्हें यह जानकर सतोष हुआ कि वह पत्र जार के पास पहुँच गया। जार ने भारत की स्वतन्त्रता की आकाक्षा के प्रति अपनी सहानुभूति प्रदर्शित की, बाद को मथुरासिंह को यह पता चला कि आन्तरिक सकट के कारण जार अधिक कुछ करने के लिए तैयार नहीं है। अतएव मथुरासिंह को पुन वापस भारत की ओर आना पड़ा। ब्रिटिश सरकार के हस्तक्षेप पर रूसी सरकार ने मथुरासिंह को कैद कर लिया। उन्हें पजाब लाया गया और जनवरी, १९१६ के अन्तिम सप्ताह से लाहौर जेल में रखा गया।

२१ फरवरी, १९१७ को डाक्टर मथुरासिंह को एक विशेष ट्रिब्यूनल के समक्ष उपस्थित किया गया और उन पर सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने तथा अन्य आरोप लगाए गए। भारतीय दड सहिता की धाराए १२१, १२१ ए १३१ १३२, ३०२ १०९ के अन्तगत उन पर अभियोग चलाया गया। ट्रिब्यूनल ने उन्हें अपने फैसले में प्राण दण्ड की सजा दी। अभियुक्त ने उस फैसले को अत्यन्त उदासीनता से सुना, मानो उसका उनसे कोई सम्बन्ध न हो। स्वतन्त्रता के वीर योद्धा और क्रान्तिकारी दल और विद्रोह के सशक्त दाहिने हाथ डाक्टर मथुरासिंह को लाहौर से ट्रल जेल में २७ मार्च १९१७ को फांसी दे दी गई।

अन्त में (१९१७)

मूल लाहौर षड्यन्त्र अभियोग के एक अभियुक्त जवान्दसिंह बहुत लम्बे समय

तक फरार रहे और गिरफ्तार होने से बचते रहे। अन्त में पुलिस ने मई १९१७ को उन्हें गिरफ्तार कर लिया और उन पर अभियोग चलाने के लिए तुरंत एक विशेष ट्रिब्यूनल स्थापित किया गया।

सभी आरोप जो मूल अभियोग में क्रांतिकारियों के विरुद्ध लगाए गए थे उनके विरुद्ध लगाए गये। उस अभियोग में जो साक्षी उपस्थित किए गए और साक्षी दिलवाई गई वह ठीक वही थी जो ऐसे मुकदमों में बहुधा दिलवाई जाती हैं। लाला हरदयाल के संयुक्त राज्य अमेरिका में आने से लेकर बाद को जो भी घटनाएं घटी वे सभी इस अभियोग में दुहरायी गयी। यह सिद्ध हो गया कि जवांदसिंह क्रांतिकारी दल का एक अत्यंत सक्रिय सदस्य था। यही नहीं व्यक्तिगत रूप से जवांदसिंह अन्य किसी भी दल के सदस्य से राजनीतिक हत्याओं और डकैतियों के लिए जिम्मेदार था। पुलिस ने जवांदसिंह पर यह आरोप लगाया गया कि २३ जनवरी, १९१५ को सानेवाल में २७ जनवरी को मनसूरान में, २ फरवरी को छब्बा में पड़ी डकैतियों में तथा १२ जून १९१५ को वालब्रिज पर आक्रमण करने वाले दल में वह सम्मिलित था। जैसा कि उस समय लाहौर में विशेष अदालत का साधारण रूप से व्यवहार बन गया था जवांदसिंह को सात आरोपों में से पांच आरोपों में दोषी पाया गया और १० मई १९१७ को उनको प्राण दण्ड दे दिया गया। जवांदसिंह भी उन देशभक्त वीरों में से थे जिन्होंने मातृभूमि की सेवा के लिए अपने तूफानी क्रांतिकारी जीवन में अपने प्राणों की कभी चिन्ता नहीं की। और उसका कोई मूल्य नहीं समझा। प्राणदण्ड के फैसले को उन्होंने बड़ी उदासीनता से सुना मानो उसके लिए उसका कोई महत्व नहीं था।

१० जून १९१७ को लाहौर के सेन्ट्रल जेल में इस वीर देशभक्त को फांसी दे दी गई।

अद्भुत साहसिक कार्य (१९१५)

कलकत्ता नगर के अत्यंत भीड़ भरे क्षेत्र में कलकत्ता मेडीकल कालेज के दूसरे मुख्य फाटक के ठीक सामने १९ जनवरी १९१५ को दस बजे के समय मधुसूदन भट्टाचार्य सी आई डी इन्स्पेक्टर दक्षिण की ओर जाने वाली ट्राम गाड़ी से उतरा। वह स्थान दक्षिण की ओर कालूटोला और कालेज स्ट्रीट के मिलन स्थान से कुछ गज ही पर था। मधुसूदन भट्टाचार्य कतिपय राजनीतिक संदेहास्पद व्यक्तियों पर दृष्टि रखने के लिए नियुक्त किया गया था। यह स्वाभाविक ही था कि जिन व्यक्तियों पर दृष्टि रखने के लिए उसकी नियुक्ति हुई थी वे भी उस पर कड़ी निगाह रखते थे। जैसे ही उसने ट्राम से उतर कर अपना कदम पृथ्वी पर रक्खा कि दो बंगाली युवक सामने के फुटपाथ पर से दौड़ते हुए आए जब वे अपने शिकार के बहुत समीप पहुंच गए तो उन्होंने अपने रिवाल्वर निकाल लिए—एक के पास माउजेर और दूसरे के पास वब्ले रिवाल्वर था और जिन्होंने मधुसूदन पर तीन फायर तीन सेकिंड से कम समय में कर दिए। मधुसूदन भयंकर रूप से घायल होकर चक्कर खाकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। वे दोनों अपरिचित युवक प्रतापचन्द्र स्ट्रीट जो कि एक सूनी गली थी उसमें भागे कुछ सड़क पर चलने वालों ने उनका पीछा किया। दोनों लगातार रिवाल्वरों से गोली चला रहे थे इस कारण कोई भी उनके समीप नहीं पहुंच सका। वे दोनों युवक एक नीची दीवार को फलांग कर एक समीप के मकान के कम्पाउंड में उतर गए

और फिर उनका कोई पता नहीं चला। मधुसूदन भट्टाचार्य को तुरन्त ही अस्पताल ले जाया गया परन्तु उसका जीवन शांत हो चुका था। उसके शरीर पर दो जख्म थे एक कन्धे पर और दूसरा पीठ पर था। अनुमान यह था कि जब उसके कन्धे पर गोली लगी तो वह घूमा जिसके कारण दूसरी गोली उसकी पीठ म लगी और छाती में घुस गई।

सडक पर उस घटना को देखने वालो की साक्षी के आधार पर पुलिस ने उन दोनो युवको का इस प्रकार विवरण प्रकाशित किया।

(१) रग काला, हृष्ट पुष्ट शरीर की बनावट मझोला कद, लम्बी और घनी मूछें एक सफेद सलवार और कुर्ता पहन था।

(२) रग गोरा, पतला शरीर, मझोला कद, मूछ बादामी सलवार और पजाबी कमीज पहने था।

एक सफल फदा (१९१५)

क्रांति के काम मे सफलता का एक माप दण्ड यह भी था कि पुलिस अधिकारियो पर आक्रमण करने तथा उन्हे मारने में कितनी सफलता मिलती है। क्रांतिकारी दल के नेता जतीन्द्रनाथ मुकर्जी ने यह निश्चित कर दिया कि सुरेशचन्द्र मुकर्जी सी आई डी विभाग की स्पेशल ब्रांच का इन्स्पेक्टर अमुक तारीख के उपरान्त जीवित नही रहना चाहिए। क्रांति के सनिक अपने जीवन को खतरे में डालकर भी उसकी इच्छा को पूरा करने के लिए तयार थे।

चित्तप्रिय राय चौधरी घोषित अपराधियो की सूची में था। पुलिस एक दीर्घ काल से उसकी खोज मे थी परन्तु उसको पकडने मे सफल नहीं हो रही थी। उसने अपने तीन चार अन्य सहयोगियो के साथ इस जोखिम भरे कर्तव्य को करने की जिम्मेदारी ली और २८ फरवरी, १९१५ को अपनी योजना को इस प्रकार काम में परिणित किया कि वह कल्पनातीत रूप से सफल हुई।

उस दिन कलकत्ता विश्वविद्यालय का दीक्षान्त समारोह होने वाला था। सभी जिम्मेदार पुलिस अधिकारी समारोह की व्यवस्था और सुरक्षा प्रबध को देखने मे लगे थे जिससे [illegible] वायसराय की सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था की जा सके जो दीक्षांत भाषण देने वाले थे।

सुरेश एक सब इन्स्पेक्टर और अर्दली के साथ कालेज स्क्वायर मे प्रात सुरक्षा व्यवस्था देखने गया। [illegible] पार्क (हेदुआ) के दक्षिण पश्चिमी किनारे पर खडा हुआ था उस समय उसका ध्यान तरुणो के एक समूह की ओर आकर्षित किया गया जिनकी गतिविधि सदेहजनक थी। सुरेश ने तुरन्त उस समूह मे [illegible] चित्तप्रिय राय चौधरी को पहचान लिया।

सुरेश ने अपने अर्दली को आज्ञा दी कि वह चित्तप्रिय राय चौधरी को गिरफ्तार करले जबकि चित्तप्रिय सुरेश के समीप लाया गया तो उसने चित्तप्रिय को कद करने के अभिप्राय से उसका हाथ पकडना चाहा। चित्तप्रिय थोडा आगे की ओर झुका और एक क्षण म ही उसने अपनी कमर से रिवाल्वर निकाला और फायर किया। परन्तु रिवाल्वर का घोड़ा रुक गया चला नही। उसी क्षण एक दूसरा युवक साथी आगे आया और उसने समीप से सुरेश पर गोली चलाई सुरेश घायल होकर गिर गया उसी समय तीन चार युवक दौडकर उस स्थान पर आ गए और उन्होने उस पुलिस अधिकारी

कि पृथ्वी पर पडे हुए शरीर पर और अधिक गोलिया चलाई। उन्होंने सुरेश के अदली दयोप्रसाद कहार को भी गम्भीर रूप से घायल कर दिया। दयोप्रसाद ने अपने सतुलन को तुरन्त खो नही दिया वरन उसने उस तरुण को पकडने का प्रयत्न किया कि जिसने उसके मालिक को मारा था। परन्तु वह अशक्त होकर भूमि पर गिर पडा। सुरेश के मुह पर वक्ष पर, पेट पर और कधो पर पाच गोलिया लगी। वह तत्काल मर गया। अदली की दशा क्रमश बिगडती गई और वह भी घटना के तीन दिन बाद मर गया।

उन अपराधियो के बारे मे कोई कुछ पता न लगा सका। उनमे से एक भारतीय स्वत त्रता के योद्धाओं म अद्वितीय साहसी और वीर योद्धा चित्तप्रिय राय चौधरी था ऐसा कलकत्ता की पुलिस स्वीकार करती थी।

एक अनुत्तर दायित्वपूर्ण काय (१६१५)

१२ फरवरी १६१५ को गाडन रीच हाई वे पर डकती के सम्बन्ध मे पुलिस ने अनेक युवको को केवल इस सदेह पर कि उनका इस घटना से कुछ सम्बन्ध है पकड कर चलान कर दिया। उनमें से एक सरोज भूषण दास कलकत्ता की मट्रा पालिटन इस्टीट्यूट में अध्यापक भी थे। अभियुक्त होने के नाते १३ फरवरी १६१५ को उन्हे जेल भेज दिया गया। उसी महीने की १८ तारीख तक उ हें अच्छे और पूण स्वस्थ होने की घोषणा की गई।

जेल के नियमो के अनुसार जसा कि वहां साधारण चलन था उ हे सब असिस्टेन्ट सजन ने कुछ दिनो बाद टीका लगाया और उसके कुछ ही दिनो बाद उनके भयकर चेचक निकल आई। उनके सम्बधियो को सूचित किया गया और सरकार ने कदी को जमानत पर जेल से छोड दिया। सरोज को अपने घर ले जाया गया जहां २ माच १६१५ को मृत्यु ने उसे वाधिक जमानत की शर्तों से मुक्त कर दिया।

प्रथम खुला सघर्ष (१६१५ २४)

जैसे जसे दिन व्यतीत होते गए क्रांतिकारियो म जो पहले घबराहट और अनिश्चितता थी उसका स्थान ब्रिटिश नौकरशाही की प्रतिष्ठा पर सफल आक्रमण लेते गए। १६१४ तक क्रांतिकारियों ने परिस्थिति पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया था। डकतियों और हत्याओं के असफल प्रयत्नों की सख्या घटती जा रही थी। कलकत्ते में एक के बाद दूसरे, ग्यारह हिंसा के कांड हुए जिसमें चार मोटर टैक्सियो के द्वारा हुए। यह क्रांतिकारी कांडो मे एक नया प्रयोग था। यह कांड १२ फरवरी, १६१५ को गाडन रीच डकती से आरम्भ हुए जिसमें बोड एड कपनी के अठारह हजार रुपयों को लूटा गया। उसके पश्चात २२ फरवरी को बेलिया घाटा की डकती हुई जिसमें क्रांतिकारियो ने एक चावल के बडे व्यापारी के कशियर से बीस हजार रुपये क कांसी नोट छीन लिए। तीसरा कांड जो अधिक साहसी था २ दिसम्बर को घटित हुआ जिसमें मारपोरेशन स्ट्रीट कलकत्ता की एक चावल के व्यापारी की दुकान से क्रांतिकारी २५ हजार रुपए ले ज ने में सफल हो गए।

तीन पुलिस आफिसरों और एक जासूस के जीवन पर सफल आक्रमण हुए। यह सभी कांड तथा अन्य कुछ कांडों को करने का श्रेय जतीन मुकर्जी और उनके साथियो को था। उच्च न्यायालय के समीप वाली घटना म जतीन मुकर्जी को पुलिस ने २६ जनवरी, १६१० को अपर चितपुर रोड के २७५ नम्बर के मकान से गिरफ्तार

कर लिया। उनके साथ कलकत्ता तथा हावडा और चौबीस परगने के जिलों में बहुत से क्रांतिकारियों सन्देह में पकड लिया गया। जतीन मुकर्जी को कलकत्ते के पुलिस कमिश्नर ने उस कांड में सम्मिलित होने के आरोप में ३१ जनवरी को बरी कर दिया। परन्तु एक दूसरी डकैती के अभियोग मे जो उस समय चल रहा था उसे जेल में रक्खा गया। हावडा गेंग केस १२ फरवरी, १६१० को हावडा के जिलाधीश की अदालत मे प्रारम्भ हुआ। सभी अभियुक्तों को २० जुलाई १६१० को उच्च यायालय के सुपुर्द कर दिया गया। जबकि जतीन मुकर्जी उच्च-न्यायलय के समक्ष अभियोग सुने जाने की प्रतीक्षा कर रहे थे तब उन्हें शम्स उल आलम की हत्या के मामले म एक अभियुक्त के अपराध में अगीकार वक्तव्य के द्वारा फसाने का प्रयत्न किया गया। उस अभियुक्त ने जो वक्तव्य दिया वह नीचे लिखे अनुसार था ऐसा सरकारी पक्ष का कहना था —

'मेरा एक व्यक्ति से जिसका नाम जतीन नाथ मुकर्जी था और जो २७३ अपर चितपुर रोड मे रहता था एक लडके द्वारा सितम्बर के महीने में परिचय कराया गया। युगा तर' पत्र को पढकर मेरे मन म वीरता और हिंसात्मक काय करने के लिए तीव्र इच्छा जागृत हो उठी थी मैंने जतीन मुकर्जी से मुझे कोई वीरता का काय देने को कहा। उन्होंने मुझ से शम्स उल आलम डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस को गोली मारने के लिए कहा जि होंने अलीपुर बम अभियोग का सचालन किया था और उस लडके को जिसका नाम था इसके लिए उचित व्यवस्था करने की आज्ञा दी। मैंने जतीन से इस प्रकार के कार्यों को मुझे भी सुपुर्द करने को कहा तो उन्होंने मुझ से पूछा कि क्या मैं शम्स उल आलम की हत्या कर सकता हू। मैंने उत्तर दिया कि इस काय को कर सकता हू।

बीरेन के इस अपराध स्वीकार करने वाले वक्तव्य के उपरात पुलिस ने तत्काल जतीन मुकर्जी के विरुद्ध एक दूसरा अभियोग चलाया। १६ फरवरी १६१० की रात्रि को जतीन मुकर्जी के सम्बन्धियो को सूचित किया गया कि वह दूसरे दिन प्रात काल प्रेसीडेंसी जेल मे भेज दिया जायेगा। जतीन मुकर्जी के सम्बन्धी जब अपने वकील के साथ प्रेसीडसी जेल में उपस्थित हुए तो उन्हें ज्ञात हुआ कि चीफ प्रेसीडैंसी मजिस्ट्रेट उस दोषी के अभियुक्त के वक्तव्य के आधार पर जतीन मुकर्जी के विरुद्ध एक नए अभियोग को चलाने की तैयारी कर रहा है। बीरेन ने अपना वक्तव्य समाप्त कर दिया था, मजिस्ट्रेट ने प्रतिवादी के वकील से जिरह करने को कहा। जतीन के वकील ने उस सम्पूर्ण कायवाही का विरोध किया और जिरह करने से इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि उसको अपने वादार्थी (क्लाइट) से इस सम्बन्ध मे आदेश प्राप्त करने का कोई अवसर ही नहीं दिया गया और न उसके पास कोई ऐसे तथ्य ही हैं जिन पर जिरह की जावे। उसने उस मुकदमे को स्थगित करने की प्रार्थना की जिससे कि बीरेन की फांसी को वह स्थगित करवा सके और जतीन से इस सम्बन्ध में आदेश प्राप्त कर सके।

मजिस्ट्रेट ने थोडे समय के लिए मुकदमे को स्थगित करना स्वीकार कर लिया। जतीन का वकील पुलिस कमिश्नर के साथ बलवेडर रोड कर गया कि जिससे वह लफ्टीनेन्ट गवरनर से बीरेन की फांसी को कुछ समय के लिए स्थगित करवा सके। लफ्टीनेन्ट गवरनर ने इसमें हस्तक्षेप करने से इन्कार कर दिया और बीरेन को उससे जिरह किए जाने से पूर्व ही फांसी दे दी गई। परन्तु जतीन के विरुद्ध मुकदमा

वापस नहीं लिया गया। पुलिस की मान्यता थी कि क्योंकि बीरेन ने एक क्षमा दण्डनायक के समक्ष अपना बयान दे दिया है अतएव उसका बयान जतीन के विरुद्ध बध है।

इस मामले को उच्च न्यायालय को उसकी सम्मत्ति के लिए भेजा गया। २१ फरवरी, १९११ को हावड़ा गैंग केस की सुनवाई के समय मुख्य न्यायाधीश ने व्यवस्था दी। "मजिस्ट्रेट ने जतीन के वकील से उसके मिलने की व्यवस्था नहीं की इस कारण वकील अपने मुवक्किल से आवश्यक आदेश प्राप्त नहीं कर सका अतएव हम इस निर्णय पर पहुंचे हैं कि मुकदमे को भारतीय साक्षी अधिनियम की धारा ३३ के अन्तर्गत चालान नहीं किया जा सकता। अतएव बीरेन का बयान का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है। जिन परिस्थितियों में यह बयान दिया गया है उसको देखते यदि यह मान भी लिया जावे कि उस बयान का इससे सम्बन्ध है तो भी उसके द्वारा जो अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने का प्रयत्न किया जा रहा है उसके प्रमाणस्वरूप उसका कोई मूल्य नहीं है।"

सरकारी वकील ने फिर उसके बाद इस मुकदमे में आगे कोई कार्यवाही करना पसन्द नहीं किया तथा जतीन और एक दूसरा व्यक्ति गैंग केस के समाप्त होने से पूर्व छोड़ दिए गए।

जबकि पुलिस उन कांडों का पता लगाने में असमर्थ रही कि जिसमें राज्य कर्मचारियों के जीवन तथा धन की हानि होती थी तथा जब उनको यह सूचना मिली कि उनमें से कुछ में जतीन सम्मिलित था तो उनको कैद करने के लिए तत्परता से तलाशी की जाने लगी। जतीन अपने कुछ विश्वस्त सहायकों के साथ भूमिगत हो गए। जतीन का बहुत कुछ खोज करने पर भी पुलिस को कोई पता नहीं चला। जब पुलिस बिलकुल निराश हो गई और उसको पकड़ सकने की उसे तनिक भी आशा नहीं रही तो उसने यह सोच कर संतोष कर लिया कि या तो उसने क्रांतिकारी राजनीति से संन्यास ले लिया है अथवा वह किसी क्रांतिकारी कार्यवाही में मारा गया।

परन्तु जतीन पुलिस के चंगुल से बचने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर अपने साथियों के साथ चले जाते। इस प्रकार वे पुलिस से बचते रहे। २० फरवरी १९१५ को पथरिया घाट स्ट्रीट में एक फानीभूषण राय ने ७३ नम्बर का मकान किराए पर लिया। फानीभूषण जाली नाम था। उस नाम से जतीन तथा उनके क्रांतिकारी साथियों के लिए वह मकान किराए पर लिया गया। २४ फरवरी १९१५ को निरोद हल्दर नामक व्यक्ति जो वस्तुतः एक पुलिस मुखबिर था उस मकान में घुसा और एक नाम लेकर चिल्लाया और ऊपर चला गया। उसने जतीन को अपने पांच छः युवक साथियों सहित बैठे देखा तो बेहद खुश हुआ। जतीन को पहचान कर उसने कहा 'अच्छा जतीन तुम यहां हो।" एक युवक कुछ कदम आगे बढ़ा और उसने निरोद पर रिवाल्वर तान दिया। और जैसे ही कि निरोद घूमा और उसने उस कमरे से बाहर भागने की उसने कोशिश की, एक गोली उसकी रीढ़ को छेद कर अन्दर चली गई और वह वहीं जमीन पर गिर पड़ा।

उसको मरा समझ कर तीन युवक साइकिलों पर चढ़कर और दूसरे अपना पदल सामान लेकर वहां से चलते बने। निरोद मरा नहीं था वह जख्मी हो गया था। इस घटना के तुरन्त बाद सूचना मिलने पर पुलिस वहां पहुँची और वह निरोद को मेयो

हास्पीटल ले गई। उसको इतना होश था कि उसने बतलाया कि वह निश्चयपूर्वक कह सकता है कि इस मनुष्य समूह में जो कि उस कमरे में जमा था उसने जतीन को देखा और जतीन ने ही उसको गोली मारी।

निरोद को अस्पताल में प्रातःकाल ८-२० पर भर्ती किया गया परन्तु २६ फरवरी १९१५ को मध्याह्न के उपरान्त दो बजे उसकी मृत्यु हो गई। नियमानुसार निरोद के शव की शव परीक्षा हुई। मृत्यु नैदानिक तथा ज्यूरी का मत यह था कि मृतक के मृत्यु के समय बयान के अतिरिक्त अन्य कोई साक्षी ऐसी नही है जिससे इस मत को समर्थन मिले कि उसको जतीन ने गोली मारी है। ज्यूरी ने "किसी अनजान व्यक्ति द्वारा मारी गोली से मृत्यु होने का निर्णय दे दिया।"

जतीन अपने विश्वासनीय और वीर साथियों के साथ कुछ दिन और कलकत्ते में रहा और उस सप्ताह में तथा बाद के सप्ताह में कतिपय अत्यन्त साहसिक क्रांतिकारी कार्यों को करने का उसको श्रेय दिया जाता है। कुछ समय के उपरान्त जतीन तथा उसके साथियों के लिए कलकत्ते में और अधिक ठहर सकना असम्भव हो गया। पूर्व व्यवस्था के अनुसार जतीन और चित्तप्रिय मार्च १९१५ में काप्ती पोदा (महुलडिहा) पहुंच गए और कुछ दिनों के पश्चात निरेन और मनोरंजन भी आ पहुंचे।

लम्बे समय तक अंधेरे गंदे स्थानों में जहां दिन का प्रकाश भी नहीं पहुंचता था, रहने के उपरान्त स्वतन्त्र वातावरण में पहुंचने पर उन दोनों युवकों के हृदय में असीम हर्ष और स्फूर्ति की उत्तेजना उत्पन्न हो गई। वे उछलने कूदने और खेलने लगे। मनोरंजन के हाथ में मोजर पिस्तौल था। पिस्तौल को नीरेन की ओर तान कर व्यंग में उसने निरेन से पूछा कि क्या उसको मृत्यु का कोई भय है और यदि वह उसे गोली मार दे तो वह क्या करेगा।

निरेन ने उत्तर दिया कि व्यवहारिक प्रयोग इस बात को प्रमाणित कर देगा कि वह जीवन की तनिक भी चिन्ता नहीं करता क्योंकि उन्हें तो मरना ही है। मनोरंजन ने अपना व्यंग जारी रक्खा और निरेन से पूछा कि क्या वह गोली मार दे। उसको पूरा विश्वास था कि पिस्तौल में कोई कारतूस नहीं था। निरेन ने स्वीकृति दे दी। मनोरंजन ने घोड़ा दबाया और सबने आश्चर्य चकित होकर देखा कि पिस्तौल की गोली निकल कर निरेन के दायें पर में घुटने के नीचे आरपार हो गई। निरेन के मुखमण्डल पर कोई घबराहट के चिन्ह प्रकट नहीं हुए। ऐसा प्रतीत होता था कि कुछ हुआ ही न हो केवल कुछ समय के लिए वह चल फिर नहीं सकता था।

निरेन का कोई इलाज नहीं कराया जा सकता था। उसके लिए डाक्टरी सहायता प्राप्त नहीं की जा सकती थी। केवल कुनीन की टिकिया पीस कर जख्म पर लगाई हुई। केवल यही औषधि उस समय उपलब्ध हो सकी। यह सूचना कलकत्ता पहुंची। तुरन्त कुशल और योग्य चिकित्सक वहां भेजा गया। जांच से पता चला कि गोली मांस में से पार हो गई उससे हड्डी को कोई चोट नहीं लगी। निरेन को पुनः चलने फिरने लायक होने में कुछ समय लग गया। ज्योतिषचन्द्र पाल काप्तिपोदा कुछ समय के उपरान्त पहुंचा और उड़ीसा की भूमि पर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध प्रथम खुले संघर्ष में सम्मिलित हुआ।

जतीन के उड़ीसा पहुंचने के पहले यह आवश्यक समझा गया कि कलकत्ता से सम्पर्क बनाए रखने की व्यवस्था की जावे अतएव "यूनीवर्सल एम्पोरियम" नाम के

एक व्यापारिक फर्म जो दिखते हुए साइकिलों और घड़ियों का व्यापार करती थी, बालासोर मे खोली गई।

काप्तीपोदा मे अपने शरण स्थल के अतिरिक्त उससे लगभग ६ मील दूर एक दूसरा केन्द्र मयूर के एक सप्ताह पूर्व स्थापित किया गया। निरेन और ज्योतिष वहां खेती करने और दूकान खोलने के लिए भेजे गए। इस बीच दोनो केन्द्रों के कार्यकर्त्ता दो बार आपस मे मिले। मार्च १९१५ में कलकत्ते को पुलिस को बालासोर के यूनीवर्सल एम्पोरियम के सम्बन्ध मे कुछ सूचना मिली। सूचना यह थी कि उस दूकान पर बाहर के लोग बहुधा आते जाते हैं। कलकत्ते का अपराधी जांच विभाग सतर्क हो गया और वह तेजी से कार्य करने लगा। सितम्बर १९१५ के प्रारम्भिक दिनों मे विभाग के कतिपय चीफ अधिकारी बालासोर पहुंचे। ५ सितम्बर को यूनीवर्सल एम्पोरियम की तलाशी ली गई और दो व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया।

एक रद्दी कागज के टुकडे से जो कि फर्श पर पड़ा हुआ था काप्तीपोदा गांव के बारे मे जो कि मयूर भज राज्य से मिले हुए नील घडी राज्य का एक छोटा सा महत्वहीन गांव था और जिसे एक छोटी सी नदी मयूर भज से पृथक करती थी सकेत पाकर बालासोर का जिलाधीश उस गांव की ओर ६ सितम्बर को सूर्य छिपने के बाद सेना तथा उच्च पुलिस अधिकारियों को साथ लेकर पहुंचा। वहां उन्हें पता लगा कि कुछ अपरिचित लोग मोहुल्डिया मौजे में जो कि नाम मात्र की उस नदी के पास एक झोंपडी में रहते हैं। ६ सितम्बर की रात्रि को काप्तीपोदा के शान्त वातावरण मे बहुत चहल पहल हो गई। क्योंकि उस रात्रि को कई योरोपियन योरोपियन पोशाक मे बहुत बड़ी संख्या में सिपाहियों के साथ वहां आए हुए थे। यह काप्तीपोदा के लिए एक आश्चर्यजनक बात थी। वे लोग वहां तक हाथियों पर सवार होकर गये थे। हाथियों के गले मे जो घण्टियां बन्धी हुई थी उनकी आवाज ने उन लोगों को सशंक बना दिया जो उस साधु (जतीन) और उसके दो साथियों में अधिक रुचि रखते थे। उनमे से एक भयभीत होकर दौडा दौडा जतीन के पास गया और उसको मयूर भज प्रदेश के जंगली क्षेत्र में जो बहुत बड़ी मात्रा में पुलिस और सेना की कार्यवाही हो रही थी उसकी सूचना दी।

जतीन विश्वप्रिय और मनोरंजन तीनों ने जो नष्ट कर सकते थे उसको नष्ट करके उस स्थान को तुरन्त छोड़ दिया। वे तलदिहा की ओर तेजी से चले जिससे कि निरेन और ज्योतिष को भी अपने साथ ले लें इस प्रयत्न मे बहुत सा बहुमूल्य समय नष्ट हो गया परन्तु जतीन कभी भी अपनी सुरक्षा की बात इस मूल्य पर नहीं सोच सकते थे कि उनके तरुण साथियों को खतरे में छोड दिया जावे। अन्धेरी रात्रि के कारण जिलाधीश कुछ न कर सका। उसने प्रातःकाल की प्रतीक्षा मे वहीं डेरा डाल दिया। दूसरे दिन प्रातःकाल उसने उस स्थान की तलाशी ली। पेड पर जो लक्ष्य वेध (टार्गेट) रक्खे हुए थे तथा झोपड़ी की मिट्टी की दीवार में गोलियों के चिन्ह मिले। थोडी सी बारूद और दो चार दूर दूर पडी हुई बदूक की गोलियां भी मिलीं परन्तु जिन लोगों की तलाश थी व नहीं मिले। जो कुछ जानकारी वहां उपलब्ध थी उससे पुलिस को यह पता लग गया कि तलदिहा इन क्रान्तिकारियों का दूसरा शरण स्थल था। वे अपने को दो समूहों में बाट कर एक दूसरे से यथेष्ट दूरी पर रहते थे।

जब सब लोग जतीन से मिल गये तो जतीन और उनके सभी साथी बालासोर

रेलवे स्टेशन की ओर चले। वे हरिपुर श्ररिया गांव तक पहुंच गए जो उनके लक्ष्य से अधिक दूर नहीं था परन्तु वहां उन्हें इस बात का पूरा सन्देह हो गया कि वहां भी उनके लिए खतरा मौजूद है।

वे पुन वापस लौटे और खुले में आ गए। वे इस बात की सम्भावना का पता लगाना चाहते थे कि क्या पुलिस के चंगुल से बच निकलने का कोई मार्ग हो सकता है।

जिलाधीश की आज्ञानुसार मयूरभंज की पुलिस ने उन क्रान्तिकारियों की खोज जारी रक्खी और जिलाधीश बालासोर इस उद्देश्य से लौटा कि मयूरभंज राज्य से बालासोर को जाने वाले सभी मार्गों को रुकवा दे। क्योंकि जिलाधीश तथा पुलिस अधिकारियों का विचार था कि वे बंगाली क्रान्तिकारी रेलवे स्टेशन पहुंचने का प्रयत्न करेंगे। प्रत्येक पुलिसमन को आज्ञा दे दी गई कि वह जो भी अजनबी मिले उस पर कड़ी नजर रक्खें। उस प्रदेश के निवासियों में यह बात साधारण चर्चा का विषय बन गई कि कुछ बंगाली डाकू उस क्षेत्र में फिर रहे हैं और पुलिस उनको गिरफ्तार करने के लिए दौड़धूप कर रही है। एक व्यक्ति जो बालासोर कस्बे में दूकान करता था और जहां वह प्रति दिन जाता था। जबकि ८ सितम्बर को वह दूकान बन्द करके घर वापस लौट रहा था तो उसने पुलिस कर्मचारियों को नाव घाट पर नाविकों से यह कहते सुना कि वे बाहरी लोगों पर कड़ी नजर रक्खें और यदि बाहरी व्यक्ति वहां आवें तो पुलिस को तुरन्त सूचित कर दें। घर लौट कर उस दुकानदार ने यह बात अपने भाई को बतलाई जो कि खेती करता था और उससे कहा कि वह भी चौकन्ना रहे और देखभाल रक्खे।

९ सितम्बर वृहस्पतिवार को प्रात काल ६ बजे वह किसान जिसे सारा तथ्य मालूम था जैसे ही अपनी छोटी नाव से किनारे पर उतरा और उस नाव को खूंटे से बांध दिया उसके सामने किनारे पर पांच अपरिचित व्यक्ति दिखलाई दिए। उन्होंने पुकार कर उस किसान से कहा कि वे सरकारी कर्मचारी हैं और चाहते हैं कि वह उन्हें नदी के उस पार पहुंचा दे। उसने उन्हें उस पार पहुंचाने से इस कारण इन्कार कर दिया कि उसकी नाव सरकारी (किराए की नाव) नहीं है और वह इतनी छोटी है कि उतने आदमियों को वह बिना डूबे नदी पार नहीं ले जा सकती।

उन अजनबियों ने यह प्रस्ताव रक्खा कि वह नदी पार करके उनके कपड़ों और झोलों को ले जावे वे स्वयं नदी को तैर कर पार कर लेंगे। वह किसान इसके लिए भी तयार नहीं हुआ। इसके विरुद्ध उसने सुझाव दिया कि थोड़ी दूर ऊपर की ओर चार नावें हैं और वे उनमें से एक से सरलता से पार जा सकते हैं। उस सुझाव के अनुसार जतीन और उनके साथी उन नावों की ओर गये और उन्होंने नदी पार की। उस किसान को वह बात याद आई— जो पिछली रात को उसके भाई ने कही थी और उन अजनबी व्यक्तियों के सम्बन्ध में उसे जिज्ञासा उत्पन्न हो गई। वह उस स्थान पर गया जहां कि नदी के उस पार वे अजनबी उतरे थे किनारे पर उतर कर वे अजनबी जंगल की ओर बढ़े तब उस आदमी ने पुकार कर कहा कि उधर कोई सड़क नहीं है। तब वे अजनबी उसकी ओर मुड़े। तब तक वहां एक भीड़ इकट्ठी हो गई। उस भीड़ में से एक व्यक्ति ने उनसे पूछा कि वे कौन हैं जब उन्हें उनके प्रश्न का सतोषजनक उत्तर नहीं मिला तो उसका सदेह और दृढ़ हो गया।

अब तक उस आदमी के पास कुछ व्यक्ति इकट्ठे हो गए थे उसने यह सुझाव रक्खा कि एक आदमी को जाकर दफेदार को सूचित कर देना चाहिए। और वह तथा उसके अन्य साथी उन पर निगाह रक्खेंगे वे अजनबी नदी के किनारे कुछ दूर चलकर उस रास्ते पर गए जो कि बांध की सड़क पर मिलता था जो कि नदी के समानान्तर पर पचास कदम की दूरी पर जा रही थी। क्योंकि अजनबी लोग निश्चित नहीं थे कि किधर जाया जाए उसी आदमी ने उनसे पूछा कि वह कहां जाना चाहते हैं तो वह उन्हें वहां का रास्ता दिखा देगा। उन अजनबियों ने उत्तर दिया कि वे रेलवे लाइन पर जाना चाहते हैं तो उस आदमी ने बतलाया कि उन्हें बांध की सड़क से जाना चाहिए जो उत्तर पश्चिम की ओर जाती है। वे अजनबी उसी सड़क की ओर गए परन्तु कुछ मिनट बाद वे विश्राम करने के लिए बैठ गए। वह स्थान जहां वे बैठे गोविन्दपुर गांव के समीप था।

वह आदमी वहां चुपचाप और आदमियों को बुलाने चला गया और जब वह लौट कर आया तो उसने देखा कि वे अजनबी चले जा रहे हैं। दफादार का भाई दौड़ कर आगे आया और उसने उनका रास्ता रोक उनसे थाने में उसके साथ चलने को कहा उन अजनबियों ने उसे धक्का देकर दूर कर दिया जब दफादार के भाई ने दुबारा उनको रोकना चाहा तो उन्होंने कमर से पिस्तौल निकाल ली और गांव वालों को जो संख्या में बढ़ गए थे डराने के लिए इधर उधर फायर किए इस प्रकार वे अजनबी डुमुदा गांव ११ बजे पहुंच गए और गांव वाले उनका पीछा करते रहे। जब गांव वालों ने देखा कि गोलियों से किसी को कोई प्रकार की हानि नहीं पहुँची तो एक गांव वाला उनके बहुत नजदीक आ गया। जब वह उन भागने वाले अजनबियों के पच्चीस कदम दूरी पर पहुँचा तो उन्होंने गोली चलाना शुरू की दुर्भाग्यवश मनोरंजन की पिस्तौल से निकली हुई गोली राजू महन्ती के लगी और वह भूमि पर गिर पड़ा।

राजू महन्ती के गिरते ही चार को छोड़ कर और सब गांव वाले भाग गए। दफादार का भाई और शेष तीन बालासोर की ओर बढ़े जो कि वहां से आठ मील दूर था। वे मजिस्ट्रेट तथा पुलिस को इस घटना की सूचना देना चाहते थे। वे अजनबी कुछ दूर चलने के उपरान्त बैठ गए और उन्होंने थोड़ा जलपान किया। गांव वाले उनका पीछा कर रहे थे। उन्होंने बन्द रोड को छोड़ दिया और खेतों और मैदानों में से पूर्व को चल दिए।

जब उन्होंने सड़क पार करली तो उनके सामने एक छोटी नदी आई। वे उस नदी के पानी में से चल कर उस पार गए। उन्होंने अपने कपड़े और रिवाल्वर सिर पर बांध रक्खे थे वे एक एक करके नदी पार कर रहे थे साथ साथ कभी कभी गोली चलाते जाते थे जिससे कि गांव वाले दूर रहें। उसके उपरान्त वे चसरवन्द गांव की ओर बढ़ने लगे। कुछ आगे बढ़ने पर वे धान के खेतों के बीच में एक पुराने तालाब के बांध पर एक चींटियों के भिटे के पीछे छिप गए। उसके चारों ओर झाड़ियां थीं जिससे कि वे दिखलाई नहीं पड़ते थे। वहां से वे चारों ओर दूर दूर देख सकते थे।

लगभग उसी समय बालासोर की पुलिस फोर्स बुरह बलंग के किनारे पर पहुँची। मजिस्ट्रेट ने पुलिस फोर्स को दो टुकड़ियों में बांट दिया। एक टुकड़ी मयूर भंज सड़क से उस क्षेत्र को पार करके आगे बढ़ी दूसरी मिदनापुर की सड़क के रास्ते से गई। दोनों

टुकड़ियां उस स्थान पर जाकर मिलीं जहां कि पुलिस थानेदार ने एक सफेद भंडा गाड़ दिया था। पुलिस थानेदार दफादार के साथ वहां पहले ही पहुँच गया था। मजिस्ट्रेट ने ०.३०३ स्पोर्टिंग राईफल से गोली इस उद्देश्य से चलाई जिससे कि क्रान्तिकारी यह समझ लें कि पुलिस के पास दूर तक मार करने वाली राइफिलें हैं जिससे कि वे बिना जीवन की हानि के आत्म समर्पण कर दें।

परन्तु क्रान्तिकारियों ने अग्नि का उत्तर गोली से दिया। दोनों ओर से बीस मिनट तक गोली चलती रही। पुलिस में कुछ लोग धराशायी हो गए। उस समय गोली चलना बन्द हुई तो दो व्यक्ति खड़े हुए अपने दोनों हाथों को ऊंचा किए दिखलाई दिए। मजिस्ट्रेट ने गोली चलाना बन्द करने की आज्ञा दी। पुलिस दल सतर्कतापूर्वक आगे बढ़ा। समीप पहुँचने पर पता चला कि एक व्यक्ति मारा गया है और दो घायल हो गए हैं। तुरन्त मृतक व्यक्ति तथा दोनों घायलों और शेष दो कैदियों को बालासोर लाने का प्रबन्ध किया गया। मृतक के शव को शव गृह में, घायलों को अस्पताल में और कैदियों को जेल में भेज दिया गया।

चित्तप्रिय राय चौधरी गोली बारी में उसी स्थान पर मारे गए थे। जतीन गम्भीर रूप में घायल हो गए थे उन्हें साढ़े आठ बजे रात्रि में अस्पताल में भर्ती किया गया। उनके पेट में तथा बाएं हाथ में गम्भीर जख्म थे। उनके बाएं हाथ की हड्डियां बुरी तरह टूट चुकी थीं। ज्योतिष के एक ही गोली से दो घाव हो गए थे। गोली पीठ की बाईं ओर से घुस कर छाती से निकल गई थी।

१० सितम्बर १६१५ को जतीन की प्रातःकाल मृत्यु हो गई। ज्योतिष ठीक हो गया और २२ सितम्बर को जेल भेज दिया गया। बाद को उस पर निरेन और मनोरंजन के साथ मुकदमा चला।

१ अक्टूबर १६१५ को ज्योतिषचन्द्र पाल, निरेन्द्रदास गुप्त और मनोरंजन सेन गुप्त एक विशेष न्यायालय के समक्ष मुकदमे के लिए उपस्थित किए गए। यह विशेष अदालत सात अक्टूबर से बालासोर में नियमित रूप से बैठी। इन तीनों अभियुक्तों के विरुद्ध हत्या करने वाले पर आक्रमण के सम्बन्ध में हत्या करने के प्रयत्न तथा जिलाधीश और पुलिस की हत्या करने तथा अस्त्र शस्त्र अधिनियम के अन्तर्गत आरोप लगाए गए। अक्टूबर १६ को फैसला सुना दिया गया। मनोरंजन और निरेन को मृत्यु दण्ड दिया गया और ज्योतिष को चौदह वर्ष का कालापानी (निर्वासन) का दण्ड दिया गया।

३० अक्टूबर को बिहार उड़ीसा के लफ्टीनेन्ट गवरनर ने क्षमा की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया जिसे अभियुक्तों की ओर से उनके वकीलों ने की थी। दोनों युवकों को २२ नवम्बर १६१५ को बालासोर की जेल में फांसी दे दी गई। मातृभूमि की बलिवेदी पर दोनों युवक बलिदान हो गए।

जतीन्द्रनाथ मुकर्जी का व्यक्तित्व अनोखा था। उसमें अपरिमित शक्ति थी। उसमें शारीरिक, मानसिक नैतिक तथा आध्यात्मिक शक्ति का अटूट भंडार था। आध्यात्मिक शक्ति जो कभी भी विनाश न होने वाली और कभी भी समाप्त न होने वाली शक्ति है और जो अन्य सभी प्रकार की शक्तियों का स्रोत है उसमें अपरिमित थी। बंगाल में क्रान्तिकारी कार्यों की चरम सीमा के दिनों में वह एक ऐसे सन्धि स्थल पर खड़े थे जहां विभिन्न दिशाओं और स्रोतों से बहने वाली बल धाराएं अपनी

समस्याओं का सन्तोषजनक हल प्राप्त करने के लिए आती थीं और वह उनकी आशाओं को भली भांति पूरा करता था।

जतीन अपने साथियों में नवीन उत्साह और स्फूर्ति फूंकता था वह उनमें साहस और दृढ निश्चय उत्पन्न करता था और उनके लिए मानो वह एक सुरक्षित स्वर्ग था जहां अपनी सभी चिन्ताओं को उसके प्यार भरे व्यक्तित्व को सौंपकर उसके साथी चिन्ता मुक्त हो जाते थे। मातृभूमि के लिए असीम प्रेम और भक्ति तथा देशवासियों के लिए सहानुभूति में जतीन बेजोड़ था। उसकी समता करने वाला कोई नहीं था। १९१४ में जबकि क्रांतिकारियों में उदासीनता और अपेक्षाकृत निश्चेष्टता व्याप्त थी वह क्रान्तिकारी युद्ध क्षेत्र में उतरा और क्रांतिकारियों का उसने उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया। प्रत्येक क्रांतिकारी उसमें असीम विश्वास रखता और उसके व्यक्तित्व के प्रभाव से प्रत्येक क्रांतिकारी अपनी मान्यताओं तथा धारणाओं को उसके अनुरूप बना लेता था। उन्हें उसके नेतृत्व को स्वीकार करने में प्रसन्नता होती थी। उसी वर्ष वह रासबिहारी बोस से बनारस में मिला। उसका उद्देश्य यह था कि उत्तर भारत में काम करने वाले क्रांतिकारियों से बंगाल के क्रान्तिकारियों का सम्बन्ध जोड़ा जावे। इन दो महान क्रांतिकारियों के परस्पर सम्बन्ध अत्यन्त मधुर थे वे एक दूसरे को भली प्रकार समझते थे और परस्पर एक दूसरे पर निर्भर रहते थे।

जतीन के चरित्र में आध्यात्मिकता कूट कूट कर कर भरी थी परन्तु वह उसके क्रांतिकारी कार्यों तथा अन्य सांसारिक कार्यों में तनिक भी हस्तक्षेप नहीं करती थी। वह प्रत्येक प्रश्न को सही दृष्टिकोण से देखता था और प्रत्येक समस्या को निर्लिप्त होकर हल करने का प्रयत्न करता था। ०अगस्त १९१० को उसने अपनी बहिन विनोदबाला को अलीपुर सेंट्रल जेल से निम्न पत्र लिखा था—

तुमने देख लिया कि इस पृथ्वी की सभी वस्तुएं और घटनाएं कितनी क्षण भंगुर हैं। वह व्यक्ति वास्तव में सौभाग्यशाली है जिसे किसी महान कार्य के लिए अपने क्षणभंगुर जीवन का बलिदान करने का अवसर मिले।"

उसके जीवन में मातृभूमि की स्वतन्त्रता की पिपासा अन्य सभी आकांक्षाओं से बढ़ी हुई थी। उसका अपने तरुण सहोदरों जो नाम उसने प्रेमवश अपने साथियों को दे रक्खा था के लिए जो प्रेम और सहानुभूति थी वह सब प्रसिद्ध थी वह एक लोकोक्ति बन गई थी। उसका शरीर और हृदय जहां फोलाद का था वहां वह इतना कोमल भी था कि जो मोमकण से भी अधिक कोमल था।

उसका सम्पूर्ण जीवन एक महान वीर का इतिहास था। यह उस जैसे महान वीर के योग्य ही था कि भगवान ने उसकी मृत्यु के लिए खुले युद्ध रूपी मृत्यु का द्वार खड़ा कर दिया। जब उस महान क्रांतिकारी वीरेन ने उस मृत्यु द्वार में प्रवेश किया तो वह अपने समकालीन सहयोगियों और पीछे आने वालों के लिए निरन्तर प्रवाहित होने वाली प्रेरणा छोड़ गया। स्वयं अमरता प्राप्त कर कभी न लुप्त होने वाले महान यश का भागी बना।

तीन मित्रों में से चित्तप्रिय मनोरंजन और निरेन के सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि इस संसार में उनके आविर्भाव में कुछ ही वर्षों का अन्तर था वे मदारीपुर के एक ही स्कूल के छात्र थे जबकि दिसम्बर १९१३ में वे गिरफ्तार हुए और गोपालपुर बलाकुरी डकैती अभियोग (फरीदपुर षडयन्त्र अभियोग) में अभियुक्त

बनाए गए। वह अभियोग बाद को २० एप्रिल १९१४ को वापस ले लिया गया। सभी साहसिक कार्यों और जोखिम भरे कार्यों में वे एक साथ रहे। तीनों ने उसी महान काम के लिए जीवन का उत्सर्ग कर दिया। एक ने रणभूमि में अपना जीवन दिया और शेष दोनों ने फांसी के तख्ते पर झूल कर अपने जीवन का उत्सर्ग कर दिया। इस पावन यज्ञ में तीन मास का भी अन्तर नहीं पड़ा।

निरेन और मनोरंजन चचेरे भाई थे गांव में उनके मकान बहुत पास थे। उनमें कुछ सौ गज की ही दूरी थी। राजनीतिक कार्यों और सरकार द्वारा चलाए गए अभियोग में वे एक दूसरे से चिपटे रहे और जीवन की अन्तिम घड़ी तक वे साथ साथ रहे। उनको एक ही दिन एक ही जेल में और लगभग एक ही समय फांसी दी गई। वास्तव में यह एक अनोखी बात थी। उन तरुणों की आत्मा में कोई किसी प्रकार का भी भय नहीं था इस कारण उन्हें अपने सम्बन्ध में कोई सन्देह तथा भ्रम नहीं था। अपने मन से सभी प्रकार के सन्देह और भ्रम उन्होंने निकाल दिए थे।

चित्तप्रिय राय चौधरी ने जब सेवा के लिए अपने घर को छोड़ दिया और भूमिगत हो गया उस समय अपने एक सम्बन्धी से गुप्त साक्षात्कार में कहा था— गीता का कथन है कि आत्मा अमर है और उसका मुख्य कार्य पुनर्जन्म में मनुष्य को नवीन शरीर धारण करने की शक्ति प्रदान करना है।"

उन दिनों जबकि पुलिस उनका तेजी से पीछा कर रही थी, उसने कहा था— 'मृत्यु मेरे द्वार पर प्रतीक्षा कर रही है वह मेरे सिर पर मंडरा रही है परन्तु मैं उससे भयभीत नहीं हूँ। आलस्य में जीवित रहने की अपना शीघ्र मृत्यु को प्राप्त करना श्रेयस्कर है। उस दशा में मैं पुनर्जन्म लूंगा शीघ्र ही एक नए और बलवान शरीर में रहकर शीघ्र ही सक्रिय हो सकूंगा और अंग्रेजों का विनाश कर सकूंगा।'

निरेन दास गुप्त ने फांसी के पूर्व अपने माता पिता भाई बहिनों को लिखा था—'मेरी मृत्यु से आपको दुखी नहीं होना चाहिए। इसके सिवाय हिन्दुओं का यह दृढ़ विश्वास है कि वे अमर हैं पार्थिव शरीर की मृत्यु से उनकी मृत्यु नहीं होती।'

यतीन्द्र नाथ भारतीय क्रान्तिकारियों के उस वरिष्ठ नेता ने अलीपुर सेन्ट्रल जेल से २० अगस्त १९१० को लिखा था—'मेरी दृष्टि संसार के सर्वशक्तिमान विधाता के चरणों पर टिकी हुई है। जो कुछ भी वह करेगा मैं उसे उसके आशीर्वाद स्वरूप स्वीकार करूंगा। वह कभी भी ऐसा कुछ नहीं करता जो हमें तनिक भी हानि पहुँचाने वाला हो, अपनी अज्ञानता में हम यह अनुभव नहीं करते कि जिन बातों को हम अपने लिए हानिकर समझते हैं उसके पीछे उसका कोई महान उद्देश्य होता है।" दीदी ने असीम को उत्तर में लिख भेजा "मैं सिंह को पुनः पिंजड़े (जेल) में बंद न देखूं।"

जबकि वे लोग अत्यन्त कष्टकर जीवन व्यतीत कर रहे थे और उनको निरन्तर खतरे का सामना करना पड़ता था। मनोरंजन और निरेन दोनों ही का वजन बढ़ गया और उनका शरीर और मुख मंडल शक्ति और कान्तिमय बन गया। यहां तक कि उस समय मनोरंजन एक हृष्ट पुष्ट पंजाबी लगने लगा वह दुबल बंगाली नहीं रहा था। उन मित्रों और सम्बन्धियों का जिन्होंने उसे पृथ्वी पर अन्तिम बार देखा, कहना था कि जब अभियुक्त के कठघरे में वह आया तो वह बहुत स्वस्थ प्रसन्न और ताजा था। उन दोनों के चेहरे मुस्कराहट और प्रसन्नता अन्त तक बनी रही। अभियोग में क्या होगा, वे उसकी ओर से नितान्त उदास थे। मनोरंजन ने उस सम्बन्धी से कहा कि उसको तनिक भी शोक नहीं

करना चाहिए क्योंकि जो कुछ 'दादा' (जतीन) तथा चित्त प्रिय के साथ घटित हुआ वह उनके साथ हो सकता था। उसने कहा सच तो यह था कि जब पुलिस से युद्ध चल रहा था तो उनका यह दृढ़ निश्चय था कि अन्तिम श्वास तक वे युद्ध करते रहेंगे और वीर गति प्राप्त करेंगे। परन्तु दादा का आदेश इसके विपरीत था और अनुशासित सैनिक की भांति उन्होंने अपने सेनापति की आज्ञा का पालन किया।

उन्होंने जो अन्तिम पत्र अपने माता पिता स्नेहशीला भगनियों और सहोदरों को लिखे उनका सारांश यही था कि मृत्यु के लिए रोना व्यर्थ है विशेषकर एक बलिदानी शहीद की मृत्यु पर रोना शोभा नहीं देता। यह सर्वदा याद रखना चाहिए कि इस पार्थिव शरीर के नष्ट होने से मनुष्य की मृत्यु नहीं होती। यही जीवन के सम्बन्ध में हिन्दुओं का सर्वमान्य दृष्टिकोण है।"

अपने मित्र को एक पृथक पत्र में उन्होंने पुनर्जन्म में अपने अडिग विश्वास को प्रकट किया और लिखा कि उनको यह दृढ़ विश्वास है कि वे बार बार जन्म लेंगे और मरेंगे जब तक कि भारत माता विदेशियों की दासता से मुक्त नहीं हो जाती।

ज्योतिष चन्द्र को अदमन भेज दिया गया जहां उसके मस्तिष्क में विकार होने के चिह्न प्रगट होने लगे। कुछ वर्षों के उपरान्त उसको बहरामपुर जेल में स्थानान्तरित कर दिया गया जहां वह ठीक हो गया। उसके मित्र तथा सम्बन्धी समय समय पर मिलते रहते थे। अन्तिम साक्षात्कार के समय वे लोग उसके लिए कुछ कपड़े ले गए थे परन्तु उसने उन्हें लेने से इनकार कर दिया क्योंकि उनकी उसे आवश्यकता नहीं थी क्योंकि उसे सूचित किया गया था कि वह पन्द्रह दिन में जेल से मुक्त किया जाने वाला है।

एकायक बरहामपुर जेल से उसके सम्बन्धियों के पास मदारीपुर एक तार पहुंचा कि वह गम्भीर रूप से बीमार है। सात घंटे में दूसरा तार इस आशय का आया कि कैदी की मृत्यु हो गई।

ब्रिटिश सेना से भारत में प्रथम खुले युद्ध का अन्तिम वीर बरहामपुर जेल में ४ दिसम्बर १९२४ को सन्देहात्मक परिस्थिति में मार दिया गया।

सरकार की दृष्टि में जतीन्द्रनाथ मुकर्जी चित्तप्रिय राय चौधरी मनोरंजन सेन गुप्त निरेन्द्रनाथ दास गुप्त और ज्योतिष चन्द्र पाल कानून की दृष्टि में घोषित अपराधी थे। सरकार उन्हें लफंगा डाकू और हत्यारा कह कर बदनाम करती थी। राजभक्त लोग जो बुद्धिमान होने का दावा करते थे उनका मानना था कि वे देश को नष्ट करने पर तुले हैं। परन्तु समय के साथ भारत के इतिहास में उनको उनका उचित स्थान प्राप्त होगा और उनके कृतज्ञ देशवासियों के हृदय में वे सदैव गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त करेंगे।

परिपूर्ण व्यवस्था (१९१५)

कलकत्ता से मैमनसिंह यह समाचार पहुंचा कि प्रसिद्ध डिप्टी सुपरिटंडट पुलिस जतीन्द्र मोहन घोष मैमनसिंह कुछ सन्देहास्पद राजनीतिक व्यक्तियों के अभियोग के सम्बन्ध में वहां पहुंच रहा है।

९ अक्टोबर १९१५ को जबकि डिप्टी सुपरिटन्डेन्ट तथा उसकी पत्नी पांच वर्ष के एक बालक के साथ मकान के दरवाजे के सामने बैठे थे पांच व्यक्ति एकायक वहां प्रगट हो गए उन्होंने उसकी पत्नी से कहा कि वह वहां से चली जावे क्योंकि उन्हें साहब से कुछ बातें करनी हैं। पत्नी उस स्थान से पूरी तरह हटी भी नहीं थी कि आगन्तुकों ने जतीन पर कई गोली दाग दी। एक गोली उसके मस्तक पर लगी और दूसरी उसके पेट के पार

निकल गई वह तुरन्त मर गया। बच्चे के भी एक गोली लग गई जिससे उसकी भी मृत्यु हो गई।

वह पुलिस अधिकारी क्रान्तिकारियों की आंखों में चढ़ा हुआ था। उसने हावड़ा और खुलना गैंग अभियोग तथा नदिया डिविस बाथम लूटिंग केस में बहुत सक्रियता दिखलाई थी। उसकी कार्य क्षमता को देखकर सरकार जटिल राजनीतिक अभियोगों को उसी के सुपुर्द करती थी। यही कारण था कि वह उन लोगों (क्रान्तिकारियों) के रोष का लक्ष्य बन गया जिनके कार्य में उसके कारण हानि पहुँचती थी।

गाद में आक्रमण (१९१५)

क्रान्तिकारियों द्वारा अनेक साहसिक कार्यों में २१ अक्टोबर १९१५ को मस्जिदबारी स्ट्रीट में जो उन्होंने साहस दिखाया वह बहुत ऊंचा माना जाता है।

चार वरिष्ठ पुलिस अधिकारी मस्जिदबारी स्ट्रीट कलकत्ते के मकान नम्बर ६६ में पासे का खेल खेल रहे थे। लगभग साढ़े दस बजे रात्रि का समय था जब कि गिरीन्द्र नाथ बनर्जी ने अपने निज के क्वाटर में जाने की बात कही उनके साथी खिलाड़ियों ने इस बात का आग्रह किया कि वह थोड़ी देर और ठहरे कि जिससे उस खेल विशेष का फैसला हो जावे। घर के स्वामी ने यह सुझाव दिया कि सुरक्षा की दृष्टि से उसे जाकर उस दरवाजे को बन्द कर देना चाहिए कि जो गली में खुलता है। कारण यह था कि उस समय पुलिस के अधिकारियों के जीवन को बहुत अधिक खतरा रहता था। उनमें से एक दरवाजे को बन्द करने के लिए उठा।

उस मनोवैज्ञानिक क्षण पर एक युवक ने उस कमरे में प्रवेश किया उसके पीछे तीन और थे और उसने पूर्वी बंगाली लहजे में पूछा कि क्या वह गिरीन्द्र नाथ बनर्जी नहीं है? उत्तर की प्रतीक्षा न कर उस आगुन्तक ने गिरीन पर गोली चलाई जो बच कर निकल गई उसके नहीं लगी। दूसरी गोली हरीकेन लालटेन में लगी जिससे वह चकनाचूर हो गई। रोशनी बुझ गई और सम्पूर्ण कमरे में घोर अंधकार छा गया। चारों पुलिस अधिकारी उस कमरे से जो कि केवल सात या आठ वर्ग गज का था निकल कर भागे। उन्होंने प्रयत्न किया कि वे मकान के आंगन में पहुँच जावें परन्तु आक्रमणकारी उनका पीछा कर रहे थे। आक्रमणकारी बिना रुके गोली चला रहे थे। चारों पुलिस अधिकारी जो अपने जीवन की रक्षा के लिए भाग रहे थे उस पतले तंग जीने की ओर झपटे जो उस इमारत के दुमंजिले पर जाता था।

वे कठिनाई से जीने के सिरे पर पहुँचे होंगे जबकि गिरेन उन जख्मों से रुधिर बहने के कारण जो कि उसके बांये नितम्ब पर और छाती के दाहिने तरफ हो गये थे थक कर गिर पड़ा और धराशायी हो गया।

यह याद दिलाने की आवश्यकता है कि गिरेन उस समय बाल बाल बच गया था जबकि मुसलमान पाड़ा लेन में अपने मकान से डिप्टी सुपरिटेंडेंट बसंत कुमार चटर्जी को मार डालने का प्रयत्न किया गया था।

दूसरा पुलिस अधिकारी जिसके बांये टखने और दाहिने नितम्ब पर गोली लगी थी कुछ सप्ताह के उपरान्त ठीक हो गया।

देरी से कार्यवाही (१९१५)

सरपे टाइन लेन से एक मकान की तलाशी लेने के उपरान्त पुलिस ने अक्टोबर मास के अन्तिम सप्ताह में तीन सन्देहास्पद व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया। इस

व्यक्तियो के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए जो कि उस स्थान पर उनके मित्रों के गिरफ्तार हो जाने के उपरान्त सम्भवत आ सकते थे सिपाही कलान नाथ पाठक वहाँ पहरा देने के लिए और भविष्य में क्या होता है देखने के लिए नियुक्त कर दिया गया।

उस गली में प्रकाश कम था और वह तग गली थी। ९॥ और १० बजे रात्रि के बीच ३० नवम्बर १९१५ को एक बगाली युवक एक दूसरे युवक के साथ कलाश के सामने प्रगट हुआ और समीप जाकर उसने कलाश पर गोली चलाई। सेन्ट पाल स्कूल का रसोइया जो अपने घर वापस जा रहा था उस पर उन युवको को यह सन्देह हो गया कि वह उनका पीछा कर रहा है। वे पीछे को मुडे और उसे गोली मारदी दोनो ही व्यक्ति घटना के कुछ घटों के बाद ही मर गए।

फौलादी इच्छा

ससार के दासता म पडे देशो में ऐसे उदाहरण देखने को नहीं मिलते जिसमें ऐसा व्यक्ति जो जन्म से ही अपग हो उसने मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए अपने जीवन का बलिदान कर दिया हो। सूफीजी का एक हाथ नहीं था। एक भुजा का न होना और फिर भी उस उद्देश्य के लिए युद्ध करना जो उनको अत्यन्त प्रिय था। सूफीजी के समान ही केवल चास्सोस था जो जन्मजात अपग था और जिसकी दाहिनी हथेली नही थी।

सूफी अम्बाप्रसाद जब छोटे थे तब अपने मित्रा से व्यग में कहा करते कि मेरी दाहिनी भुजा १८५७ के सिपाही विद्रोह म कट गई थी। जब व छोटे थ तभी से मातृभूमि के प्रेम ने मानो उन्हे आत्म विभोर कर दिया था। व मातृभूमि के प्रेम के नशे म सब कुछ भूल चुके थे। जब वे पच्चीस वष के भी नही थे उन्होने 'हलूस नामक उर्दू पत्र निकालना प्रारम्भ कर दिया था। वे हलूस पत्र मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश) अपने पतृक निवास स्थान स निकालते थ। उन पर अराजकता फलाने के अपराध मे अभियोग चलाया गया और उन्हें अठारह महीने का कठोर कारावास का दण्ड दिया गया। बाद को उन्होने भारत माता' पत्र निकाला और उसके सपादक की हैसियत से उन पर पुन अभियोग चलाया गया और अक्टोबर १८९७ म उनको पुन एक वष के लिए जेल में बन्द कर दिया गया।

१९०६ में जब बगाल में बगभग के कारण तीव्र हिंसात्मक आन्दोलन उठ खडा हुआ और समस्त बगाल में क्रान्ति फूट पडी तो पजाब पर भी उसका प्रभाव पडा। वहाँ के किसान विद्रोही हो उठे परन्तु उन्हें अपने यथोचित अधिकार मागने के अपराध में अग्रेजी सरकार के क्रूर दमन को सहना पडा। उस समय अम्बाप्रसाद जी सूफी गुजरानवाला से निकलने वाले पत्र इडिया' के सहायक सपादक थे जिसमे वे ४ अप्रेल १९०७ को आए थे। उन्होने स्थानीय किसान नेताओ का समथन किया। उन पर २४ सितम्बर १९०७ को लाहौर सेशन जज के समक्ष राजद्रोह का अभियोग चलाया गया। परन्तु सेशन जज ने ११ जनवरी १९०८ को उन्हें मुक्त कर दिया।

जब अन्य नेता गिरफ्तार हो गए तो अम्बाप्रसाद सरकार की आंख में और अधिक खटकने लगे। परन्तु अम्बाप्रसाद किसी प्रकार नेपाल मे घुस गए। उसी बीच उन्होंने 'भारत माता पुस्तक समिति' नामक सस्था देशभक्ति पूर्ण साहित्य प्रकाशन के लिए स्थापित कर दी। जब उन्होने देखा कि देश में रह कर काय कर सकना कठिन

है और वहा का वातावरण उनके लिए अनुकूल नहीं है वे काबुल चले गए और वहां से ईरान चले गए।

बर्लिन क्रान्तिकारी कमेटी के निर्देश के अनुसार जरमन सरकार की सहायता से सूफी अम्बाप्रसाद दो प्रमुख क्रान्तिकारियो के साथ टर्की पहुचे। उन्होंने तुर्की के शासक से एक पत्र अमीर अफगानिस्तान के नाम इस आशय का लिखा कि वह उनकी सहायता करें। वे उस पत्र को लेकर अमीर अफगानिस्तान के पास पहुँचे और उससे उनके द्वारा भारत पर आयोजित आक्रमण म सहायता देने की प्रार्थना की। अफगानिस्तान के अमीर ने उनको भारत के आक्रमण में कोई सहायता देने से सर्वथा इनकार कर दिया परन्तु उनको ब्रिटिश अधिकारियों को नहीं सौंपा क्योंकि अफगानिस्तान का प्रधान मत्री इसके विरुद्ध था।

अफगानिस्तान के प्रधान मत्री की जानकारी अथवा उसकी जानकारी के बिना भारतीय क्रान्तिकारियो ने अपनी एक अस्थायी सरकार अफगानिस्तान में स्थापित करली थी और वे चुपचाप २१ फरवरी १९१५ को भारत में होने वाले विद्रोह में सम्मिलित होने की तयारिया कर रहे थे। योजना यह थी कि वे लोग शत्रु पर पश्चिम से आक्रमण करेंगे। परन्तु पजाब म एक व्यक्ति के विश्वासघात के कारण जब विद्रोह की सारी योजना ढह गई तो काबुल सरकार ने उन भारतीय क्रान्तिकारियो के विरुद्ध कठोर कदम उठाने का निश्चय किया जो वहा अभी तक रह रहे थे।

अम्बा प्रसाद सूफी व दो साथी बडी ही कठिनाई से काबुल से निकल जाने में सफल हो गए और ईरान (परशिया) पहुँच गए। अम्बाप्रसाद पकड़ लिए गए और उनको काबुल स्थित ब्रिटिश एजेन्ट ने (जो काबुल में था) प्राप्त कर लिया। अम्बाप्रसाद को घोर ताडना और कष्ट दिए गए उनके साथ अत्यन्त निर्मम और क्रूर व्यवहार किया गया और उन्हें कहा गया कि वे अपराध को स्वीकार करलें और रात्रि को उन्हें जेल में बन्द कर दिया गया। अम्बाप्रसाद के साथ जो मार पीट और क्रूर व्यवहार किया गया था उसमें उनके बहुत चोटें आई थी। उस मार और निर्मम क्रूर व्यवहार का परिणाम यह हुआ कि प्रात काल वे अपनी कोठरी में मरे पाये गए। किसी को भी ज्ञात नहीं हो सका कि उनका अन्तिम क्षण कब आया और वे कब शान्त हो गए।

अम्बा प्रसाद की मृत्यु के सबध में एक दूसरा कथन यह है कि वे शिराज (परशिया) में पकडे गए। जबकि प्रथम महायुद्ध मे ब्रिटिश विजयी हो गए। उनका तोप के मुह में बांध कर उड़ा देने की आज्ञा दी गई। परन्तु रात्रि को उनकी कोठरी म उनकी मृत्यु हो गई जिससे वे उस प्रकार की मृत्यु से बच गए।

रहस्य भली प्रकार सुरक्षित रक्खा गया (१९१५)

क्रान्तिकारियों में भी अधिकांश क्रान्तिकारी उस भोले भाले युवक के बारे में कुछ नहीं जानते थे जिसको जतीन मुकर्जी ने जरमनी से अस्त्र शस्त्र भेजने का कठिन उत्तरदायित्व दे रक्खा था। उसको १९१५ के पहले सुदूर पूर्व की ओर भेज दिया गया था और विदेशों में उसे भारतीय क्रान्तिकारियो को अस्त्र शस्त्र भिजवाने की व्यवस्था की पूरी अन्दरूनी जानकारी थी। वह उसी वर्ष गोआ आया और सी मार्टिन' (नरेन्द्र नाथ भट्टाचार्य जो बाद को मानवेन्द्रनाथ राय के नाम से प्रसिद्ध हुए) के सम्बन्ध में चिन्तित हो जाने के कारण उसने एक तार मार्टिन को

भेजा जिसमें उसने पूछा था कि वे कैसे हैं। इस तार ने ब्रिटिश पुलिस को उसके संबंध में संकेत दे दिया और उसने गोआ की पुलिस को विज्ञप्त कर दिया कि वह उसको पकड़ ले। भारी प्रबल ब्रिटिश सरकार के हस्तक्षेप करने पर पोर्तुगीज अधिकारियों ने उसको गोआ से निवासित कर दिया और उसको भारत गोआ की सीमा पर पकड़ लिया गया और पूना के फर्राशखाने ले जाया गया।

उससे अपराध स्वीकार कराने के सभी नृशंस और क्रूर उपाय काम में लाए गए परन्तु भोला नाथ चटर्जी उन उपायों के सामने भी डटा रहा। उसने भेद नहीं खोला परन्तु जब उसके लिए वह नृशंस उत्पीड़ा असह्य हो उठा और उसने देखा कि उस नृशंस उत्पीड़न को और अधिक सहन कर सकना असम्भव है तो उसने अपनी धोती के द्वारा ७ २८ जनवरी १९१६ को रात्रि को आत्महत्या करली और अपने को पुलिस व उन क्रूर कृत्तों के चंगुल से मुक्त कर लिया।

एक समय में दो (१९१६)

ढाका जासूसी विभाग के दो कांस्टेबिल सुरेन्द्र भूषण मुखर्जी और रोहिणी कुमार मुखर्जी जो कि क्रान्तिकारी दल के दो फरार क्रान्तिकारियों की खोज में लगे थे उन पर ढाका के बैरागीटोला मुहल्ले में २३ जून १९१६ को ६ बजे सायंकाल आक्रमण किया गया। आक्रमणकारी अपने शिकार को बच जाने का कोई अवसर नहीं देना चाहते थे इसलिए उन्होंने सुरेन्द्र पर पांच बार गोली चलाई जबकि रोहिणी के सात गोली लगी। एक गोली उसके मस्तिष्क को फाड़ कर निकल गई।

मृत्यु जिसका ब्योरा ज्ञात नहीं (१९१६)

सजीव चन्द्र राय मयमनसिंह जिले के किशोर गंज का निवासी था। वह बहुत कम उम्र में ही राजनीतिक कार्यवाहियों में भाग लेने लगा था और संगठन करने की अद्भुत क्षमता तथा साहसी कार्यों के लिए प्रसिद्ध था।

अप्रैल १९१६ में भारत सुरक्षा अधिनियम के अन्तर्गत उसको नजरबन्द करने की आज्ञा निकाली गई। जबकि पुलिस अधिकारी उस आज्ञा को लेकर उसके घर पहुंचे तो वह वहां नहीं था। बाद को किशोरगंज सब डिवीजन नगर के समीप वह पकड़ा गया वह साईकिल पर था और उसके झोले में एक रिवाल्वर और कारतूस थे। १३ जुलाई १९१६ को उसको दो वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दे दिया गया। उसको अत्यन्त अमानवीय नृशंसता और क्रूरता से उत्पीड़ित किया गया परन्तु उसने बहुत प्रशंसनीय साहस के साथ उस उत्पीड़न को सहा।

सजीव को तनिक भी विश्राम करने का अवसर नहीं दिया गया। जुलाई में जबकि वह जेल में था उस पर नजरबन्दी की आज्ञा से बचने के अपराध में अभियोग चलाया गया।

उसने अपनी सजा के विरुद्ध अपील की और वह मुकदमे की सुनवाई की प्रतीक्षा कर रहा था। उसी बीच में सरकार ने सितम्बर १९१६ के प्रथम सप्ताह में यह घोषणा की कि वह जेल में पचिश से मर गया। जिस दिन उसकी मृत्यु हुई उसके एक दिन पहले तक उसके बीमार होने की तनिक भी खबर नहीं थी। मृतक के शव को सम्बन्धियों को अंतिम संस्कार के लिए नहीं दिया गया यद्यपि उन्होंने उसके लिए बहुत दौड़धूप और प्रयत्न किए। इस प्रकार ब्रिटिश जेल की कोठरी में एक बहुमूल्य जीवन समाप्त हो गया और किसी को वास्तविक तथ्य ज्ञात नहीं हुआ।

रहस्यमय अदृश्य होना (१९१५)

गिरीशचन्द्र मित्र उपनाम 'हाबू' जिस नाम से वह अपने मित्रों में अधिक प्रसिद्ध था और पुलिस भी उसको उसी नाम से जानती थी रोडा पिस्तौल चोरी के मामले में बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति था। उस चोरी में उसका प्रमुख हाथ था। हाबू किसी प्रकार गिरफ्तारी से बचने में तो सफल हो गया परन्तु निकल भागना उसके लिए कठिन था। पुलिस का जाल उसके चारों ओर बिछा हुआ था और पुलिस बहुत चौकन्नी होकर उसको गिरफ्तार करने का प्रयत्न कर रही थी।

ऐसा कहा जाता है कि हाबू ने भारत से चुपचाप बाहर निकल कर पैदल चीन में उत्तरी सीमा से घुसने का प्रयत्न किया। इस साहसपूर्ण और जोखिम भरे प्रयत्न में उसको सीमा के प्रहरी ने गोली मार दी और वह वस्तुतः में अपने छिपने के स्थान से गया उसका कोई पता किसी को नहीं लगा।

क्रूरता से मार डाला गया (१९१६-१७)

शचीन्द्र नाथ दास गुप्त रंगपुर निवासी एक अत्यन्त मेधावी तथा क्षमतावान लड़का था। उस पर पुलिस को यह सन्देह हो गया था कि वह क्रान्तिकारी कार्यों में सम्मिलित है। अतएव २४ अगस्त १९१६ को उसे भारत सुरक्षा अधिनियम के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया। अपने घर से बहुत दूर एक गांव में उसे नजरबन्द कर दिया गया। वहां नियमित रूप से पुलिस जाकर क्रूरता के साथ उसको मारती पीटती थी। इसके अतिरिक्त उस स्थान का जलवायु इतना अधिक खराब था कि शचीन्द्र उसका सहन नहीं कर सका और उसका स्वास्थ्य गिर गया। उसके पिता द्वारा शपथ पूर्वक आश्वासन देने पर उसे एक नजरबन्द के रूप में ९ दिसम्बर १९१६ से अपने पिता के पास रहने की आज्ञा प्रदान कर दी गई। सरकारी आज्ञा के अनुसार उसको एक बहुत सीमित दायरे में ही आने जाने की आज्ञा थी। उसकी नजरबन्दी की शर्तों में मनोरंजन इत्यादि में सम्मिलित होने की आज्ञा नहीं थी। जब वह गिरफ्तार किया गया था उस समय वह कलकत्ता कालेज के चतुर्थ वर्ष का छात्र था। उसने सरकार से अपने अध्ययन को जारी रखने की आज्ञा मांगी जिसे सरकार ने अस्वीकार कर दिया।

इसके अतिरिक्त उस नजरबन्द युवक को न तो खेलने दिया जाता था और न किसी से मिलने दिया जाता था। स्थानीय पुस्तकालय में भी वह पढ़ने नहीं जा सकता था। उसको अपने परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त और किसी से बात करने की आज्ञा नहीं थी।

क्रमशः शचीन्द्र की जीवन में रुचि कम होती गई। १९ सितम्बर १९१७ को उसने रात्रि को सोने जाने से पूर्व कहा कि इस प्रकार जीवित रहने से कोई लाभ नहीं जिसमें कि वह कोई उपयोगी काम भी नहीं कर सकता। उसकी स्थिति जेल में बन्द एक अपराधी से भी गई बीती थी। उसके लिए यह एक महान मानसिक कष्ट था कि वह इस प्रकार के अभिशप्त जीवन को लेकर परिवार पर एक भयंकर बोझ बन गया था। उसने मां से यह भी कहा कि परिवार के लिए वह एक स्थायी विपत्ति का स्रोत बन गया है क्योंकि परिवार को सदैव तलाशी और उत्पीड़न का भय बना रहता है।

शचीन्द्र प्रातःकाल शीघ्र उठता था जबकि सात बज गए और फिर भी वह अपने कमरे से बाहर नहीं निकला तो उसकी मां ने उसके बन्द कमरे को खटखटाया परन्तु कोई प्रत्युत्तर नहीं मिला। दरवाजा तोड़ा गया तो शचीन्द्र जमीन पर बेहोश पड़ा था और

उसके समीप ही एक बर्तन में बहुत थोड़ी मात्रा में दूध और अफीम का घोल रक्खा था। बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी उसको होश नहीं आया और १६ सितम्बर १६१७ को उस दर्दनाक स्थिति में बारह बजे दिन के उसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय उसकी आयु अठारह वर्ष की थी।

उसके कमरे में तीन पत्र एक जिलाधीश के नाम दूसरा सी आई डी इन्सपेक्टर के नाम और तीसरा उसके भाई के नाम मिले। भाई के नाम जो पत्र था उसमें उसने उन्हीं उद्‌गारों को व्यक्त किया था जो उसने मां से व्यक्त किये थे। पुलिस के दुर्व्यवहार तथा परिवार में रहने के कारण परिवार वालों को जो अध्ययन और उत्पीड़न सहन करना पड़ता था उसका उल्लेख था। उसके लिए जीवन असह्य हो गया था अतएव उसने यह दुखदायी परन्तु घातक कदम उठाया जिससे कि वह स्वयं अपने को तथा परिवार को उन चिन्ताओं से मुक्त कर दे जो कि पुलिस के दुर्व्यवहार के कारण प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी।

सी आई डी इन्सपेक्टर को उसने पत्र में लिखा "मैं अब ऐसे स्थान के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ जहां कि तुम न तो मेरा पीछा ही कर सकते हो और न मुझ पर दृष्टि ही रख सकते हो।

शचीन्द्र की इस दुखद मृत्यु की तीव्रता रवीन्द्र नाथ टगोर के द्वारा 'प्रवासी' अग्रहायन १३२४ में प्रकाशित 'छोटो ओर बड़ो (छोटे और बड़े) शीर्षक लेख में इस शोक जनक मृत्यु के सम्बंध में उल्लेख से बहुत बढ़ गई और अधिक प्रकाश में आई। उनके बंगाली में लिखे लेख का जिसकी भाषा को कोई नहीं पा सकता स्वतन्त्र परन्तु भद्दा अनुवाद हम यहां देते हैं—'सभी महान व्यक्तियों का इतिहास यह पुकार कर कहता है कि अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जो यह अन्तरज्वालना उठती गिरती घोर गर्जन करती और नदी की धारा के समान फेनिल बन सफलता और विफलता के पत्थरों से टकराती हुई सभी व्यवधानों और रुकावटों को चकनाचूर करती और तोड़ती हुई पृथ्वी पर आहिस्ते से उतरती है एक महान वरदान है। सतो और महात्माओं के उपदेशों तथा इतिहास के पाठ के विपरीत उन युवकों को जिनमें भावना की स्फूर्ति विद्यमान है विवशता पूर्ण आलस्य मृत्यु से भी अधिक बड़ा अभिशाप प्रतीत होता है। यह बात हृदय को व्यथित करने वाले शचीन दास गुप्त के अपनी आत्म हत्या के सम्बंध में लिखे गए अन्तिम पत्र से स्पष्ट हो जाती है।

आज मैं अत्याधिक हर्ष और प्रसन्नता से यह देख रहा हूं कि भारत में ऐसे तरुण यात्रियों की कमी नहीं है जो ऐसे कटका कीर्ण मार्ग पर चलने को तयार हैं जिसमें न तो भौतिक वैभव है और न पद और प्रतिष्ठा ही है और जिसमें अकथनीय कठिनाइयां और कष्ट हैं। ऊपर से पुकार आई और हमारे युवकों ने उसका तत्काल प्रत्युत्तर दिया। सर्वोच्च बलिदान की चरम सीमा पर वे धार्मिक जोश के साथ अपने कठिन मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए मार्ग बनाते हैं। उन्हें इस बात की तनिक भी आशा नहीं है कि नकली अंग्रेज (भारतीय साहब) उनके ऊंचे आदेशों की सराहना करेंगे अथवा उनसे उनको अपने प्रयत्न में आशीर्वाद प्राप्त होगा। वे देश जो सौभाग्यशाली हैं और जिस पर सौभाग्य की वर्षा हो रही है और जहां मानव और मातृभूमि की सेवा करने के अनेक विशेष क्षेत्रों का विस्तार हो चुका है जहां कि पोषित इच्छाओं और उनके लिए किए गए प्रयत्नों के क्षेत्र का सुखद सम्मिलन होता है वहां दृढ़ निश्चयी, आत्म बलिदानी, भौतिक

हानि लाभ की चिन्ता न करने वाले संवेदनाशील युवक जिन के हृदय पर आदर्शों को अंकित किया जा सकता है देश के अत्यन्त बहुमूल्य कोष के समान मूल्यवान होते हैं।

शचीन्द्र द्वारा आत्म बलिदान की इस अन्तिम घटना का सिंहावलोकन करने पर प्रत्येक व्यक्ति को यह सोचने पर विवश होना पड़ता है कि यदि वह तरुण उन अंग्रेजों के देश में उत्पन्न हुआ होता जिन्होंने उसे दण्ड दिया तो वहां शचीन आत्मगौरव के साथ जीवन व्यतीत कर सकता था और गौरव तथा यश से प्रकाशित गौरवपूर्ण मृत्यु को प्राप्त कर सकता था।

प्राचीन काल अथवा आधुनिक काल का कोई भी शासक अथवा उसके पिठ्ठू किसी भी देश को एक सिरे से दूसरे सिरे तक कठोर दमन के द्वारा तथा क्रूरतापूर्ण ढंग से जीवन रहित और निष्क्रिय बना सकते हैं। यह कार्य बहुत सरल है पर है अत्यन्त क्रूरतापूर्ण और असभ्य। इससे अधिक निर्दयतापूर्ण मानवीय जीवन का अपव्यय क्या हो सकता है कि तनिक से संदेह पर उन तरुणों को जो ऊंचे चढ़ने में दुर्घटनावश नीचे फिसल जाते हैं और जिन्हें उनके उखरे से भरे मार्ग से आशा और हर्ष के एक शब्द से पीछे वापस लाया जा सकता है जीवन भर के लिए अपंगों में परिणत कर दिया जाय। प्रत्येक लड़के और प्रत्येक युवक को बिना सोचे विचारे या विरोध किए गुप्त पुलिस की दया पर छोड़ देना बुद्धिमानों की राजनीति नहीं है। यह ठीक वैसा ही है मानो कमीनेपन को अथवा असाम्य पाप को राज्य चिह्न से भूषित किया जावे। यह ठीक वैसा ही जैसा कि भैंसों के एक झुंड को रात्रि में एक हरे उद्यान में खुला छोड़ दिया जाय। उद्यान का स्वामी निराश और दुःखी होकर आह भरता है और कातर होकर अपने सिर को हाथों से धुनता है जब कि भैंसों के झुण्ड का स्वामी अतीव हर्ष से प्रफुल्लित होकर इस बात पर संतोष व्यक्त करता है कि उद्यान में घास का एक भी तिनका नष्ट होने से नहीं बचा।

रवीन्द्र नाथ टैगोर की प्रभावशाली भाषा में उस आक्रोश और उदासीनता के विचारों और दुःखी भावनाओं का सही प्रतिबिम्ब उतरा है जो कि ऐसे प्रत्येक बच्चे के माता पिता और सम्बन्धियों के हृदय में उठती थीं और प्रकाश में आना चाहती थीं कि जिन्हें पुलिस तनिक से भी संदेह पर गिरफ्तार कर लेती थी।

स्वाभिमान का प्रतीक (१९१५—१७)

यतीन्द्रनाथ मुकर्जी के नेतृत्व में क्रान्तिकारी हलचलों में भाग लेने के लिए मदारीपुर गांव के एक लड़के ने अपना गृह त्याग दिया। १२ फरवरी १९१५ को गार्डन रीच डकैती के सिलसिले में पुलिस उसकी तलाश में थी।

राधाचरण प्रामाणिक एक स्थान से दूसरे स्थान में छिप कर पुलिस की आंखों से बचता रहा। अन्त में २० फकीरचन्द दत्त स्ट्रीट कलकत्ता में वह एक पिस्तौल और कुछ कारतूसों के साथ पकड़ा गया। उस पर मुकदमा चला और उसको दो वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दे दिया गया। उसको अस्त्र शस्त्र अधिनियम के अन्तर्गत तथा डकैती डालने के लिए षड्यन्त्र करने के लिए २७ मई १९१५ को दण्ड दिया गया।

गार्डन रीच डकैती के संबंध में २ जुलाई को राधाचरण को अतिरिक्त अपराधी बनाकर मुकदमा चलाया गया और १७ अगस्त को सेशन जज की अदालत में उसकी सुनवाई हुई। उस पर सशस्त्र डकैती डालने का अपराध लगाया गया

तथा २२ नवम्बर तक वह मुकदमा चलता रहा। जब उसमें एक और अपराध साधारण डकैती डालने का जोड़ दिया गया तो उसने दूसरे अपराध को स्वीकार कर लिया परन्तु पहले अपराध को अस्वीकार कर दिया। उसको उसी तारीख को सात वर्ष के कठोर कारावास का दंड दे दिया गया।

जब वह जेल में दो वर्ष रह चुका तो उसको आंखों में कष्ट रहना आरम्भ हो गया। उसने जेल सुपरिटेन्डेन्ट से अपनी आंखों की बीमारी की उचित चिकित्सा कराने की प्रार्थना की। उस प्रार्थना के उत्तर में उससे कहा गया कि उस जैसे डकैतों और हत्यारों को अच्छा है कि वे अंधे हो जावें जिससे कि देश और सरकार बहुत से झंझटों और चिंताओं से बच जावे।

राधाचरण ने इस पर यह प्रतिज्ञा करली कि जेल के अन्दर वह सरकारी व्यय से लाई हुई किसी औषधि का उपयोग नहीं करेगा। दुर्भाग्यवश एक सप्ताह के अन्दर ही उसकी पूरी पेचिश भयंकर रूप से हो गई। डाक्टर ने दवा देनी चाही परन्तु अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उसने औषधि लेने में दृढ़तापूर्वक इन्कार कर दिया। १९१७ के फरवरी के महीने में बाईस वर्ष के उस तरुण ने स्वाभिमान की वेदी पर और अपमानजनक जीवन व्यतीत करने के विरोध स्वरूप अपने प्राणों का बलिदान कर दिया।

घोर विश्वास घात (१९१७)

कुछ क्रान्तिकारी जो जर्मनी में क्रान्तिकारी कार्य करते थे इस आशा से परशिया (ईरान) गए कि वहां से वे देश की अधिक अच्छी सेवा कर सकेंगे उनका तात्कालिक उद्देश्य भारत में उनके सहयोगियों से ईरान के द्वारा सम्बन्ध स्थापित करना था और उनका एक उद्देश्य यह भी था कि यदि सम्भव हो तो भारत पर आक्रमण करने के लिए एक गुरिल्ला सैनिकों का दल तयार किया जाय।

इन साहसी क्रान्तिकारियों में केदार नाथ जो केवल २२ वर्ष का था एक अत्यन्त साहसी युवक था। परशिया में जो भारतीय सिपाही थे उन्होंने उसको आश्वासन दिया और उसे लालच देकर शिराज स्थित भारतीय दूतावास में इस उद्देश्य से ले गए कि उसे ब्रिटिश अधिकारियों को सौंप दिया जाय। परन्तु केदारनाथ को अपने नए मित्रों पर सन्देह हो गया और उसने अपनी सुरक्षा के लिए मरुभूमि को पार कर सुरक्षित स्थान पर चले जाने का निश्चय किया।

उन विश्वासघातियों को केदारनाथ की इच्छा ज्ञात हो गई। उन्होंने उसको गिरफ्तार कर लिया और शत्रुओं को सुपुर्द कर दिया। उसको 'मशहद' ले जाया गया वहां से उसे करमान स्थानान्तर किया गया वहां १९१७ में जून को मरुभूमि में जो मध्य परशिया में स्थित है ब्रिटिश सत्ताधारियों ने गोली से मार दिया।

वास्तविक मित्र (१९१७)

बदारनाथ केदारनाथ के साथी थे। दोनों ही बर्लिन कमेटी के सदस्य थे। उन्होंने भी केदारनाथ की नीति और कार्य प्रणाली का अनुसरण किया और सम्भवतः उसी दिन और उसी स्थान पर उन्हें गोली मार दी गई।

दादा चानजी केरसास्प बर्लिन में इंजीनियरिंग का छात्र था। उसको ईरान के रास्ते से अफगानिस्तान इस उद्देश्य से भेजा गया था कि वह भारत को बिना अधिक कठिनाई और जोखिम के हथियार भेज सके। उसका उद्देश्य सफल नहीं हुआ

अतएव उसने पुन परशिया वापस आकर अपने पहले के काय को पुन करने की कोशिश की। वह सलिनान में पकड लिया गया।

बसन्तसिंह जो पहले गदर पार्टी का सदस्य था उसने मैसोपोटमिया में भारतीय सनिकों को राजभक्ति से हटाने का प्रयत्न किया जिसमे उसको सफलता नहीं मिली। अस्तु वह अफगानिस्तान चला आया। उसको यह आशा थी कि वहा उसे इडियन मिशन के लोग मिल जावेंगे और वह सगठन के द्वारा भारत को द्र य भेज सकेगा।

केसरासप और बसन्तसिंह जब वापस लौट रहे थे उस समय भारतीय सेनाओं द्वारा करमान अफगानिस्तान की सीमा पर पकड लिए गए। केदारनाथ की भाति ही ब्रिटिश अधिकारियों की आज्ञा से इन्हें गोली से मार दिया गया।

नियति का पथ (१९१८)

अपने कर्तव्य के पालनार्थ बोगरा की आई डी विभाग का सब इसपेक्टर हरिदास भद्र आठ मई १९१८ को कुछ सिपाहियों के साथ एक महिला के मकान पर एक व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए गया जिसके सम्बध मे यह सदेह था कि वह क्रान्तिकारी दल से मिला हुआ है। हरिदास मकान के अन्दर घुसा तो वह मकान की तलाशी लेने वाले दल के आगे था। मकान के अन्दर जिस युवक को वह गिरफ्तार करने के लिए गया था उसने हरिदास पर गोली चलाई। गोली चलने से जो हडबडी और घबराहट फल गई उसके फल स्वरूप यद्यपि सिपाही उस युवक को घेरे रहे पर तु वह लगातार गोलिया चलाता रहा और निकल भागने में सफल हो गया।

हरिदास भद्र वही मर कर गिर पडा और उस युवक का कहीं पता नही लग सका।

कटरा बाजार की मुठभेड (१९१८)

अब तक पुलिस और क्रान्तिकारी युवक एक दूसरे से बहुत समीप आ चुके थे क्योंकि अधिकाश क्रा तिकारियों के पकडे जाने पर उ हें जेल हो जाने, बिना मुकदमा चलाए नजरबन्द हो जाने के कारण बहुत थोडे क्रा तिकारी बाहर बच गए थे जिन पर पुलिस अब अपनी पू ी शक्ति लगा सकती थी। अब पुलिस सभी सन्देहास्पद व्यक्तियों को घर पकड कर रही थी और उनकी तलाश मे गुप्त रूप से पता लगाकर उनके रहने के स्थान पर छापा मारती थी।

इस प्रकार के एक धावे में पुलिस ने ढाका के कटरा बाजार के एक मकान पर सूचना मिलने पर १५ जून १९१८ को धावा बोल दिया। उस मकान के रहने वालों ने देखा कि पुलिस ने चारों ओर से मकान को पूरी तरह से घेर लिया है और पुलिस के घेरे से निकल जाने का कोई अवसर नहीं है। मकान में केवल तीन व्यक्ति तरनी प्रसन्न मजूमदार नलिनीकान्त बागची तथा एक और व्यक्ति था तीनों ने निश्चय किया कि पुलिस से खुल कर युद्ध किया जावे फिर वह च हे जितना असमान युद्ध क्यों न हो। बिना पुलिस को तनिक भी अवसर दिए उ होंने गोली चलाना प्रारम्भ करदी। उत्तर म पुलिस ने भी गोली चलाई।

प्रीतमसिंह कांस्टेबिल पहला व्यक्ति था जिसे घातक गोली लगी जिसने मकान में घुसकर एक व्यक्ति के हाथ से हथियार छीनने का प्रयत्न किया था। दूसरा व्यक्ति जो घिरे हुए लोगो की गोली से घायल हुआ तलाशी लेने वाले दल का सब इसपक्टर था।

दूसरे पक्ष म तरनी के घातक जख्म लगा उसे मिल फोर्ड हास्पिटल ले जाया गया जहां वह कुछ घटों के बाद मर गया। नलिनीकान्त भी गम्भीर रूप से घायल हो गया था।

दूसरे दिन १६ जून १६१८ को उसी अस्पताल में उसकी भी मृत्यु हो गई। उसी दिन प्रीतम सिंह भी मर गया। अब उन सब इसपेक्टर बच गया। मकान में तीसरे व्यक्ति को गिरफ्तार कर लिया गया।

तरनी और नलिनी दोनों ही लम्बे समय से क्रांतिकारी दल की सेवा कर रहे थे। खतरों का सामना करने तथा दल की सेवा का उनका पिछला कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय रहा था। जब पुलिस बंगाल में बहुत सक्रिय थी उस समय क्रांतिकारियों को अपेक्षाकृत आसाम अधिक सुरक्षित प्रतीत हुआ और उनमें से कुछ वहां बचाव के लिए चले गए। क्रमश गोहाटी क्रान्तिकारियों के रहने का केन्द्र बन गया जहां वे अस्थायी रूप से शान्तिपूर्वक अपना सर छिपा सकते थे।

सभी क्रांतिकारियों के लिए एक छिपने का स्थान अपर्याप्त था आगन्तुक क्रांतिकारियों ने रहने के लिये दो मकान चुने एक अटगांव में जो जेल के बहुत समीप पूर्व की ओर था और दूसरा फसी बाजार में था। ७ जनवरी १६१८ को पुलिस अटगांव के मकान पर रात्रि के साढ़े तीन बजे चढ़ आई। क्रान्तिकारियों और पुलिस में जम कर गोली चली। पुलिस किसी को भी गिरफ्तार न कर सकी सब के सब निकल गए। उस मकान से निकलकर क्रांतिकारियों ने आसाम की नवग्रह पहाड़ियों में शरण ली।

पुलिस के भेदिया ने उस स्थान का भी पता लगा लिया। १० जनवरी १६१८ को दो बजे दिन के बहुत बड़ी संख्या मे पुलिस वहां पहुँची जबकि क्रांतिकारी अपने दोपहर के भोजन के लिए तैयार ही हो रहे थे।

दोनों दलों में जमकर युद्ध हुआ। पुलिस को कुछ समय के उपरान्त रुक रुक कर दूसरी ओर से गोली आने से यह पता चल गया कि क्रांतिकारियों की गोली बारूद समाप्त हो रही है। तब पुलिस ने घिरे हुए क्रांतिकारियों के चारों ओर घेरे को और कसना आरम्भ कर दिया। नलिनी कान्त बागची उन लोगों में से एक था जो पुलिस के घेरे में फंस गया था। वह अपने नेता के साथ बिना किसी भय के मरने के लिए खड़ा हो गया।

दल के गुप्तचर विभाग का नलिनी अत्यन्त महत्वपूर्ण और उपयोगी घटक था। नेता ने नलिनी को आज्ञा दी कि वह शीघ्र किसी सुरक्षित स्थान को चला जावे तब तक (नेता) पुलिस को गोली की मार से आगे बढ़ने से रोकेगा।

नलिनी अत्यन्त चतुर और साहसी था वह उस संकटपूर्ण परिस्थिति से साफ बच कर निकल गया। परन्तु उसके भाग्य में पुलिस से खुले युद्ध में १६ जून १६१८ को एक वीर की मृत्यु मरना लिखा था।

तरनी पुलिस की संदिग्ध व्यक्तियों की सूची में बहुत दिनों से था। पुलिस अत्यन्त दृढ़ता के साथ उनकी खोज में थी। परन्तु १६१६ से सब तक सदैव अपनी युक्ति से गिरफ्तार होने से बचता रहा और पुलिस को मूर्ख बनाता रहा। १६१६ में पुलिस ने उसको पकड़ने के लिए अपने प्रयत्नों को अधिक तेज कर दिया।

कोमिल्ला में पुलिस ने तरनी को उसके आश्रय स्थान पर घेर लिया। साहस के साथ तरनी एक हाथ में रिवाल्वर और दूसरे में पिस्तौल लेकर निकला जो उस समय उसके पास थे और वह पुलिस घेरे में से निकल जाने में सफल हो गया। एक बार पुलिस ने उसको कलकत्ता में भवानीपुर में कसारीपारा में उसके मकान में घेर लिया। उस समय उस मकान में से किसी के लिए भी निकल जाना सम्भव

नही था। तरनी ने मकान की छत से छलांग मारी और उसकी टांग की हड्डी टूट गई। परन्तु उस समय भी जबकि उसकी टाग मे भयकर दर्द था और तत्काल कैद हो जाने का खतरा था। उसकी चतुराई और प्रतिभा ने उसका साथ नही छोडा। उसने अपने लगडेपन का उस क्षण बडी कुशलता से उपयोग किया। उसने अपने शरीर पर जो भी वस्त्र वह पहने हुए था उन्हे फाड कर चिथडे कर दिया और कुछ मिनटो में ही अपने को एक लगडे ल्यनोप भिखारी के रूप में परिवर्तित कर लिया वह पुलिस के घेरे में से साफ निकल गया किसी पुलिस वाले को उस पर तनिक भी सदेह नही हुआ। सारे के सारे पुलिस म न उस मकान को घेरे खडे रहे पर तु तरनी जिसको कैद करने के लिए वह विशाल आयोजन किया गया था साफ बच कर निकल गया।

अपने गुप्त यात्रा कायक्रम के अनुसार परिभ्रमण करता हुआ तरनी १५ जून १९१८ को अपने लक्ष्य स्थान पर पहुँच गया। वहा उसने अत्यन्त वीरतापूवक युद्ध किया और वीर योद्धा की मृत्यु उसने प्राप्त की।

इस प्रकार दो अभिन्न मित्रो की घटना बहुल जीवन लीला समाप्त हो गई। उन दोनो का जीवन उनके सम्पूर्ण राजनतिक क्रांतिकारी जीवन काल मे अत्य त जोखिम भरा रहा और वे दोनो प्रगाढ आलिंगन में बद्ध मातृ भूमि की सेवा म अपने जीवन के अतिम क्षण तक लगे रह कर अनात देश में चले गए।

अपराध पूर्ण मानव हत्या (१९१८)

कलकत्ता विश्व विद्यालय का एक अत्य त मेधावी प्रतिभाशाली छात्र एम ए गणित का स्वर्ण पदक प्राप्तकर्त्ता मणीन्द्रनाथ सेठ १९१६ म दौलतपुर अकादमी का उपाध्याय नियुक्त हुआ। जब रगपुर कालेज खुला तो वह अपने विषय १९१७ मे अपने विषय का वरिष्ठ प्रोफेसर नियुक्त हो गया। अकादमी मे उसने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया। जून १९१७ को जब कि वह अपने नए पद का कायभार लेने गया तो उस संस्था का मन्त्री जो कि एक मजिस्ट्रेट था उसने उसको इस आधार पर अपने नए पद का कायभार लेने से रोक दिया कि उसके विरुद्ध पुलिस ने कुछ रिपोट दी है। इस कारण उसको उसके नए पद पर नियुक्त नही किया जा सकता। मन्त्री ने उसको एक मास का वेतन देने का प्रस्ताव रक्खा—मानो मन्त्री उस पीडित व्यक्ति के प्रति महान अनुकम्पा और दया कर रहा हो।

जुलाई १९१७ के मध्य म मणीन्द्र दार्जिलिंग जाकर सरकार के राजनीतिक सचिव (पोलिटिकल सेक्रेटरी) से मिला। वह उसने अपने भाई शचीन जो कि हिरासत म था उसके छुटकारे के लिए प्राथना करने तथा अपनी परिस्थिति के बारे म बतलाने गया था। जब मणीन्द्र न राजनीतिक सचिव से पूछा कि इन परिस्थितियों म वह अपना जीवनयापन किस प्रकार कर सकता है? तो उसमे राजनीतिक सचिव ने सरल ढग से कहा — 'तट पर खडे रहकर मैं यह कसे कह सकता हूँ कि नदी किस ओर बहेगी बाबू तुम्हें धन्यवाद देना चाहिए और अपने भाग्य को सराहना चाहिए कि तुम्हे नजरब द नही किया गया" (अमृत बाजार पत्रिका २५ जनवरी १९१८)

मणीन्द्र के सामने अत्य त जटिल समस्या खडी हो गई। उसके लिए अपने घर से दूर अन्यत्र कहीं नौकरी के लिए प्रयत्न करना बहुत कठिन था क्योंकि उसके माता पिता की मृत्यु के परिणाम स्वरूप उसके दो अनाथ छोटे भाई जो क्रमश १२ और दस वष के थे उनकी उसको देखभाल करनी पड़ती थी। उसकी अनुपस्थिति म

इन दोनों छोटे भाइयों की देखभाल करने वाला कोई नहीं था। उस परिस्थिति में यह अत्यन्त आवश्यक था कि या तो शचीन को मुक्त कर दिया जावे यदि वह सम्भव न हो तो विकल्प स्वरूप उसे उसके अपने घर मे ही नजरबन्द कर दिया जाय।

परन्तु भाग्य ने और ही कुछ लिख रक्खा था। बहुत जल्दी ही राजनीतिक सचिव की भविष्य वाणी सत्य हो गई। २६ अगस्त १९१७ को मणीन्द्र गिरफ्तार कर लिया गया और प्रेसीडेंसी जेल कलकत्ता को ले जाया गया। वहा उसको सभी प्रकार के अनिवीक्षाधीन बन्दियों के साथ रक्खा गया जिनमे पागल बन्दी भी थे।

एक अत्यन्त ऊंचे दर्जे के सम्भ्रान्त और उच्च शिक्षा प्राप्त युवक के लिए जो कोमल भावनाओं से युक्त था कैद किया जाना तथा अनिवीक्षाधीन सभी प्रकार के अपराधी बन्दियों में रखे जाना एक गहरा और असहनीय आघात था। ऊपर से दो छोटे निराश्रित भाइयो की दयनीय दुदशा के विचार ने उसके शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य का जजर कर दिया। वह उस आघात को सह नही सका। परिणाम अत्यन्त घातक सिद्ध हुआ। ११ सितम्बर १९१७ को जेल सुपरिटेंडेंट ने सरकार को रिपोर्ट भेजा कि कैदी को मस्तिष्क विकार के चिन्ह प्रकट होने के कारण निरीक्षण मे रक्खा जा रहा है।

२६ सितम्बर १९१७ को सरकार ने शीघ्रता करके नजरबन्दी की आज्ञा निकाल दी। उसके विरुद्ध जेल रिपोर्ट यह भेजी गई कि वह खतरनाक है। अनिवीक्षाधीन कैदियों के साथ जेल के अधिकारी कसा व्यवहार करते थे यह इसी से स्पष्ट हो जाता है कि ठीक एक महीने के उपरान्त २८ अक्टोबर को जेल से यह रिपोर्ट भेजी गई कि वह पागल नही है वरन अपने कृत्यो के लिए उत्तरदायी है। साथ ही रिपोर्ट में यह भी लिखा था कि उसको क्षय रोग होने का सदेह है।

४ नवम्बर १९१७ को उसे घर में नजरबन्द करने की आज्ञा हुई और उस अभागे व्यक्ति को कलकत्त म एक ऐसे सम्बधी के घर म नजरब द कर दिया गया जो उसको रखने के लिए तयार नहीं था। दूसरे दिन अर्थात् ६ नवम्बर को उसकी दशा चिन्ताजनक हो गई। और उसे शीघ्रतापूर्वक अस्पताल ले जाया गया।

वह एक प्रोफेसर था और अविवाहित था जिसके बारे में दौलतपुर के लोगों की राय थी कि मणीन्द्र कष्ट से पीडित मानवता की सेवा तन मन धन से करते थे। वह शिक्षा क्षेत्र में एक आदर्श गुरु थे और विद्यार्थी समूह के नतिक उत्थान के लिए अथक परिश्रम करते थे। प्रत्येक व्यक्ति उनको आदर और प्रेम करता था और वे प्रत्येक अभाव ग्रस्त के सच्चे हितैषी और मित्र थे। वे अपने जीवन की अन्तिम घडिया गिन रहे थे। सरकारी अधिकारियो ने उस समय सतोष की सास ली जबकि १६ जनवरी १९१८ को रात्रि के साढ़े दस बजे मणीन्द्र चिर निद्रा में सो गए। उनकी मृत्यु कलकत्ता मेडिकल कालेज में ही हुई। जिस समय मणीन्द्र कलकत्ता मेडिकल कालेज में पुलिस अधिकारियों, उनके पहरेदारों तथा जेल के अधिकारियों से घिरे हुए मृत्यु शैय्या पर पडे अन्तिम घड़ियां गिन रहे थे उस अन्त समय भी उनको अपने निराश्रित भाइयों के भविष्य की चिन्ता व्याकुल कर रही थी।

घोर नराश्य (१९१८)

उच्च शिक्षा, सस्कृत, उच्च सामाजिक स्तर तथा ऊंचे पारिवारिक सम्बध

आदि किसी भी युवक को क्रांतिकारी संगठन में आने के लिए कोई रुकावट नहीं थे। ऐसे उच्च डिग्री प्राप्त युवक जब क्रांतिकारी संगठन मे सम्मिलित होते तो वे पुलिस की आखों में चढ़ जाते और उन्हें उसके भयंकर दुष्परिणाम सहने पड़ते। १ जून १९१८ को 'अमृत बाजार पत्रिका' में एक सम्वाददाता ने इस आशय का लेख प्रकाशित कराया कि १७ जून को राजशाही जेल में ग्यारह बजे रात्रि को एक अत्यन्त दुखद घटना घट गई जबकि मैमनसिंह के निवासी एक कायस्थ युवक ने जो कलकत्ता विश्वविद्यालय का एम ए उपाधि प्राप्त था उसने अपने वस्त्रों को मिट्टी के तेल से भिगो कर उसमें आग लगाकर आत्म हत्या करली। कोई भी उस भयानक कृत्य का क्या कारण था यह नहीं बता सका परन्तु तथ्य यह था कि ब्रिटिश जेल में बिना मुकदमा चलाए दीर्घकाल तक कैद रखने के कारण एक अत्यन्त मूल्यवान जीवन का अन्त हो गया।

कुछ जेलों मे कैदियों को जिस दुर्दशा और अपमान का जीवन व्यतीत करना पड़ता था उसके फलस्वरूप उनमें से बहुत से आत्म हत्या करने पर विवश हो जाते थे, कुछ उनमें से पागल हो जाते, कुछ जेल से छूटते ही मर जाते अथवा जीवन भर के लिए शारीरिक दृष्टि से नितान्त क्षीण और अशक्त अथवा अपंग हो जाते थे। उस समय समाचार पत्र उस युवक का नाम प्रकाशित नहीं कर सका। जहां तक राजनीतिक कैदियों का प्रश्न था यदि वे आत्म हत्या करते तो उनके सम्बन्ध में समाचार प्रकाशित करने पर एक मौखिक प्रचारित परम्परा के अनुसार सरकार द्वारा नियंत्रण लगा था।

४ जुलाई १९१८ को लजिस्लेटिव काऊंसिल के सदस्य द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर सरकार के होम मेम्बर ने उस अभागे युवक का नाम 'रसिक सरकार' बतलाया परन्तु उसके बारे मे अधिक जानकारी देने से इनकार कर दिया।

कदम-ब कदम (१९१८)

प्रत्येक क्रांतिकारी का एक गुण अविचारिता होता है जबकि उसको परिवार तथा देश दो परस्पर विरोधी शक्तियों का सामना करना पड़ता है और उनमें से एक को चुनना पड़ता है जबकि दोनों ही प्राथमिकता का दावा करते हैं। बनारस षड्यन्त्र के मामले में क्रांतिकारी दल के साथ घनिष्ठ रूप से काम करते हुए सुशीलचन्द्र लाहरी जो मदनपुरा—बनारस का निवासी था तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय का विज्ञान का स्नातक था नितान्त भाग्यवश उस मुकद्दमे में फंसने से बच गया। परन्तु पुलिस उसकी गतिविधियों पर कड़ी दृष्टि रख रही थी और २१ फरवरी १९१८ को उसने लाहिरी को लखनऊ में गिरफ्तार कर लिया। उसके निवास स्थान की तलाशी लेने पर एक टिन मिला जिसमें दो रिवाल्वर थे और उसके पड़ोसी के बक्स से २०० जीवित कारतूस पुलिस के हाथ लगे।

इसी बीच में विनायक राव कपिले उपनाम 'सत्येन' उपनाम बड़ा बाबू जो किसी समय बंगाल के राजनीतिक संगठन का प्रमुख और महत्वपूर्ण सदस्य था और जिस पर दल के साथ घोर विश्वासघात कर पुलिस से मिल जाने का भयंकर दोषारोपण था १९ फरवरी १९१८ को लखनऊ की घसियारी मंडी में बन्दूक की गोली के घाव के परिणाम स्वरूप मरा पाया गया।

६ मई १९१८ को भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा २० के अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया। अभियुक्त सुशील को पांच वर्ष का कठोर कारावास और एक हजार रुपए जुर्माने की सजा दे दी गई।

बन्दी ने २१ मई को जुडीशियल-कमिश्नर अवध की अदालत में निर्णय के

विरुद्ध अपील की और २६ जुलाई को मुकद्दमे की सुनने की तारीख निश्चित की गई। परिणाम यह हुआ कि अपील खारिज कर दी गई।

फिर भी पुलिस ने कपिले की हत्या के लिए उत्तरदायी व्यक्ति की खोज के अपने प्रयत्न में तनिक भी शिथिलता नहीं आने दी। जांच पड़ताल कर लेने के उपरान्त पुलिस ने सुशील जो कारागार में था तथा एक दूसरा व्यक्ति जो फरार था के विरुद्ध मुकदमा दायर किया। इन दोनों पर कपिले की हत्या करने का सन्देह था। न्यायिक जाँच के उपरान्त सुशील और दूसरे व्यक्ति को जो बनारस षड्यंत्र का फरार था १७ जुलाई १९१८ को सेशन सुपुर्द कर दिया गया। मजिस्ट्रेट ने सेशन सुपुर्द करने की आज्ञा देते हुए कहा कि जो कारतूस मकान में मिले थे वे उस खाली कारतूस की ही बनावट और स्वरूप के थे जो कि उस स्थान पर मिला था जहां विनायक कपिले मारा गया था। सुशील तथा फरार युवक पर इण्डियन पिनल कोड (भारतीय दण्ड संहिता) की धारा ३०२ और ११४ और क्रिमिनल प्रोसीजर कोड (दण्ड प्रक्रिया संहिता) की धारा २११ (१) के अन्तर्गत दोषारोपण किया गया और अभियोग चलाया गया।

सेशन न्यायालय ने सुशील को ११ अगस्त १९१८ को प्राण दण्ड की आज्ञा दे दी अभियुक्त ने अपने बचाव में कोई भी बयान देने से इनकार कर दिया और प्राण दण्ड की सजा को तनिक भी विचलित हुए बिना सुना।

सेशन के फैसले की अवध के जुडीशियल कमिश्नर ने पुष्टि कर दी और उसके पांच वर्ष के कारावास की अवधि पूरी न हो सकी क्योंकि अक्टोबर १९१८ में वह मृत्यु लोक को छोड़ कर स्वर्ग सिधार गया। अन्तिम क्षण तक वह शान्त बना रहा उसका मानस तनिक भी विचलित नहीं हुआ। प्रातःकाल उसने पवित्र गंगाजल से स्नान किया उसके स्नान के लिए गंगाजल लाया गया। एक ईश्वर भक्त ब्राह्मण के सभी कृत्यों को उसने श्रद्धा के साथ सम्पन्न किया। उसके उपरान्त वह सिर ऊंचा किए दृढ़ता के साथ चला और फांसी के तख्ते पर जाने के लिए मुखमंडल पर गौरव की प्रभा लिए सीढ़ियों पर एक वीर पुरुष की भांति चढ़ गया। उसका समस्त व्यक्तित्व उस समय देश की स्वतंत्रता की बलिवेदी पर सर्वस्व अर्पण कर देने वाले वीर पुरुष के समान आलोकित हो रहा था। जबकि फांसी का फन्दा उसके गले को कठोरता से कस रहा था उसने अन्तिम बार 'वंदेमातरम' का घोष किया।

दुःखद मृत्यु (१९१८)

बंगाल के सैकड़ों युवकों की भांति सत्येन्द्र चन्द्र सरकार जिसकी अवस्था बीस वर्ष से कम थी क्रान्तिकारी कार्यों में सम्मिलित होने के परिणाम स्वरूप गिरफ्तार कर लिया गया और कारावास के दण्ड की अवधि समाप्त कर जसोर जिले के छोगाछा गांव में नजरबंद कर दिया गया। एक नजरबंद को जिन विपत्तियों और कठिनाइयों को सहना पड़ता है उनको सहते हुए मई १९१८ के एक दिन उस निराश्रित युवक को एक पागल कुत्ते ने काट खाया उसका यह सौभाग्य था कि उसको डाक्टरी सहायता दी गई जो बहुधा नजरबन्दों को नहीं दी जाती थी। उसको उपचार के लिए शिलोंग भेजा गया जहां वह ९ जून १९१८ तक रहा। उसके उपरान्त उसे अपने गांव जाना पड़ा।

शिलोंग से वापस आने पर लगभग चार मास उपरान्त १ अक्टोबर को वह सहसा भयंकर रूप से रोग ग्रस्त होगया। उसके गम्भीर रूप से बीमार हो जाने की

सूचना जिला केन्द्र में भेज दी गई। क्रांतिकारियों के संबंध में राजतंत्र में बहुत देरी और धीमे से कोई हरकत होती है और इससे पहले कि कोई डाक्टरी सहायता आ सकती यह युवक कुत्ते के काटने से उत्पन्न होने वाले रोग जलभी (हाइड्रोफोबिया) से दूसरे दिन दोपहर के बाद एक बजे मर गया। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि रोग के उग्र चिह्न जो सत्यन में अत्यंत तीव्र रूप से प्रगट हो गए थे उनकी अवहेलना कर रोगी की किसी ने भी देखभाल तथा सेवा शुश्रूषा नहीं की। उसके मित्र तथा सम्बन्धी जो इस जोखिम को उठाने का साहस कर सकते थे वे उससे बहुत दूर थे। उसके शव पर किसी ने भी अश्रुपात नहीं किया। क्योंकि उसका कोई स्नेही वहां नहीं था। उसके शव का अंतिम संस्कार किस प्रकार किया गया कोई नहीं जानता।

आयु को भी क्षमा नहीं किया गया (१९१८)

क्रांतिकारियों के विरुद्ध घृणा और क्रोध से पागल बंगाल सरकार ने जो अंधाधुंध गिरफ्तारियां और नजरबंदियों की उनमें अधिक आयु वाले और अवकाश प्राप्त वृद्ध लोगों को भी शांति से नहीं रहने दिया। नाल डांगा रायपुर के 'शारदा कांत चक्रवर्ती' जो साठ वर्ष के एक सम्पन्न व्यक्ति थे २३ सितम्बर १९१७ को गिरफ्तार होने से पूर्व वर्षों से वाराणसी में रह रहे थे। वहीं बस गए थे। वे अपना अधिकांश समय पूजा पाठ और धार्मिक कृत्यों में व्यतीत करते थे और उदार मना होने के कारण वे अनेक युवकों के अध्ययन के लिए उनकी आर्थिक सहायता करते थे अथवा निर्धन परिवारों को पालते थे। एक एक करके वे सभी छात्र पकड़ लिए गए और कारावास में ठूंस दिए गए।

वृद्ध शारदा कांत चक्रवर्ती को गिरफ्तार करके कलकत्ता से लाया गया और वहां से उन्हें जसोर जिले के 'अलफडांगा' नामक स्थान पर भेज दिया गया जो अत्यंत अस्वास्थ्यकर था। वहां पहुंचने के एक सप्ताह के अन्दर ही उनको मलेरिया ज्वर ने घर दबाया और अधिक आयु होने के कारण वे उस ज्वर की विभीषिका को सहन न कर सके। उनको जो भत्ता दिया गया वह अत्यन्त अपर्याप्त था विशेष कर ऐसे व्यक्ति के लिए जिसने जीवन में ऊंचे रहन सहन तथा सम्पन्नता का जीवन व्यतीत किया हो। वे प्रत्येक महीने अपने सम्बन्धियों से रुपया भेजने की प्रार्थना करते। वे उस स्थान के अस्वास्थ्यकारी जलवायु से इतने अधिक भयभीत हो गए थे कि जो भी उनका मित्र या सम्बन्धी उनसे मिलने के लिए आने की इच्छा प्रगट करता वे उससे प्रार्थना और आग्रह करते कि वह वहां किसी भी दशा में न आवे। वे जो भी पत्र लिखते थे उनमें यही सूचना होती थी कि उनका स्वास्थ्य निरंतर गिरता जा रहा है और अंतिम पत्र से तो यह स्पष्ट ही हो गया कि उन्होंने उस पत्र को और किसी से लिखवाया था। उनके सम्बन्धियों का इससे चिन्तित होना स्वाभाविक था। अतएव उन्होंने एक के बाद दूसरा कई बार उस थाने के अधिकारी को उनके स्वास्थ्य के संबंध में सही स्थिति जानने के लिए दिए। उन सभी तारों का अन्त में एक अलभ्य उत्तर आया उससे ज्ञात हुआ कि नजरबंद कैदी ३० नवम्बर को स्वर्ग सिधार गया और यह सब सभ्य कही जाने वाली सरकार के शासन में हुआ।

आपराधिक प्रमाद (१९१८)

मिदनापुर के ढेगरा नामक स्थान पर कोई योग्य प्रशिक्षित चिकित्सक नहीं था। उस विशाल प्रदेश में कटक मेडिकल स्कूल का एक छात्र ही एक मात्र चिकित्सक

था। वह इतना मेधावी था कि कभी उसने मेडिकल डिप्लोमा की परीक्षा उत्तीर्ण नहीं की। उसके अतिरिक्त उस क्षेत्र में एक अद्ध प्रशिक्षित पशुओं का डाक्टर था। ऐसे स्थान पर एक अत्यन्त मूल्यवान जीवन को नजरबन्द करके आपराधिक उपेक्षा और घोर प्रमाद के फलस्वरूप केवल मरने के लिए रख दिया गया। इस उपेक्षा के शिकार कुमुद बंधु भट्टाचार्य थे जिन्हें यदि उनकी इच्छा पर छोड़ दिया जाता तो वे सीधे फांसी के दंड को पसंद करते। उन्हें १९१६ में नजरबंद करके रक्खा गया। उनको नाम मात्र का इतना कम भत्ता दिया जाता था कि जो उनके निर्वाह के लिए नितांत अपर्याप्त था। स्थान के अत्यंत अस्वस्थकर होने के कारण वे नियमित रूप से निरन्तर मलेरिया ज्वर से पीड़ित रहते थे। उन्होंने बराबर इस शिकायत को अधिकारियों के समक्ष सभी तरीकों से रखने का प्रयत्न किया परंतु उसका कुछ भी परिणाम नहीं हुआ।

उनकी दशा १९१८ में अत्यंत निराशाजनक हो गई। केवल उनकी प्रार्थना को ही नहीं वरन थानेदार की अनुपस्थिति में हेड कान्स्टेबिल जो उस समय थाने का इन्चार्ज था उसकी रिपोर्ट को भी जिले के पुलिस सुपरिटेंडेंट ने कोई सुनवाई नहीं की। परिणाम यह हुआ कि वह मेधावी युवक उन दो अद्ध चिकित्सकों के उपचार तथा देख रेख में मर गया जिन्हें किसी सभ्य देश में मनुष्यों का तो क्या पशुओं की चिकित्सा करने की भी आज्ञा नहीं दी जाती। वह युवक १५ दिसम्बर १९१८ को बिना किसी देखभाल और सेवा के मर गया। उसकी मृत्यु पर उसके पास कोई दो अश्रु गिराने वाला भी नहीं था।

एक व्यक्तित्व (१९१८)

क्रांतिकारी जगत में गिरजा बाबू के नाम से प्रसिद्ध नगेन्द्र नाथ दत्त राजनीति की अग्नि में कूदने से पूर्व अपने पिता के द्वारा समाज सेवा की प्रारम्भिक प्रशिक्षा प्राप्त कर चुके थे। जब अन्य व्यक्ति किसी रोगी के पास उसके गम्भीर रोग तथा छूत लग जाने के भय से आने से भयभीत होते और कतराते थे तब उस रोगी की देखभाल करने नगेन्द्र नाथ के पिता जो एक प्रसिद्ध वकील थे उसके पास अवश्य पहुँचते। वह अपनी रोगशय्या के पास उनके सहानुभूतिपूर्ण मुख को अवश्य देखता था।

जबकि नगेन्द्र नाथ दत्त कठिनाई से चौदह या पन्द्रह वर्ष का होगा उसने अपने साथ खेलने वाले एक मित्र से अपने पिता के रिवाल्वर को लाने के लिए कहा जिससे कि वह बन्दूक या रिवाल्वर चलाने का अभ्यास कर सके। खेल में ही उसके मित्र पर निशाना साधा और घोड़ा दबा दिया क्योंकि उस बरिल (खाने) में कोई कारतूस नहीं था कुछ भी नहीं हुआ। जब उसकी बारी आई परंतु दूसरे बरिल (खाने) में एक जीवित कारतूस था और जैसे ही उसके मित्र ने फायर किया गोली नगेन्द्रनाथ दत्त की एक जंघा के पार हो गई। उस घाव के ठीक होने में बहुत ही लम्बा समय लग गया।

जब नगेन्द्र नाथ दत्त सिलहट सुनामगंज में कानून का अध्ययन कर रहे थे तो उन्होंने बंग भंग विरोधी आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। वे अनुशीलन समिति के सदस्य बन गए और उन्होंने वहां समिति की शाखा स्थापित की। क्रांतिकारी संगठन के नेताओं के गिरफ्तार हो जाने के कारण संगठन निर्बल पड़ गया था। नगेन्द्रनाथ दत्त ने उसमें पुनः स्फूर्ति और उत्साह उत्पन्न कर दिया। बहुत शीघ्र ही

पुलिस का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ और उन्हें एक बड़े क्षेत्र में कार्य करने के लिए उस स्थान को छोड़ना पड़ा।

वे प्रसिद्ध विप्लवी रासबिहारी बोस के निकट सम्पर्क में आए और वे उनके इतने अधिक विश्वासपात्र बन गए कि वे उत्तर भारत में फैले हुए उनके महान् और विस्तृत क्रान्तिकारी संगठन के संचालन में उनके दाहिने हाथ बन गए। जब महान् विप्लवी रास बिहारी बोस भारत छोड़ कर चले गए तो नगेन्द्र नाथ ने इस बात का भागीरथ प्रयत्न किया कि विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए फुटकर छोटे छोटे क्रान्तिकारी दलों में एकता बनी रहे। उनकी यह इच्छा और चिर पोषित आशा थी कि विदेश से रासबिहारी बोस भारत में बहुत बड़ी राशि में अस्त्र शस्त्र भेजने में सफल हो जावेंगे अथवा वे स्वयं बहुत बड़ी मात्रा में अस्त्र शस्त्र लेकर भारत आवेंगे और विप्लव के अधूरे काम को पूरा करेंगे।

रासबिहारी बोस के भारत में छिपे हुए जोखिम भरे परिभ्रमण में पुलिस के घेरे से निकलते हुए गिरजा बाबू बराबर उनके साथ रहे यहां तक कि जब एप्रिल १९१५ को रासबिहारी बोस कलकत्ते से जा रहे थे तो वे बंदरगाह तक उनके साथ थे।

भारत छोड़ने के पूर्व रासबिहारी बोस ने अपने अनुयायियों को यह आदेश दिया कि उनके पीछे वे गिरजा बाबू तथा एक दूसरे नेता के नतृत्व में काम करें जिससे कि उनकी अनुपस्थिति में संगठन अक्षुण्ण और सुसंगठित बना रहे।

यद्यपि गिरजा बाबू की रासबिहारी बोस से अल्पकाल की ही घनिष्ठता थी परन्तु उनकी निष्ठा स्वार्थ त्याग विलक्षण बुद्धिमत्ता तथा चतुराई के कारण बोस का उन पर अटूट विश्वास था और वह महान् विप्लवी नेता उनको विशेष प्रतिभावान व्यक्ति मानते थे।

गिरजा बाबू १९१५ में गिरफ्तार हुए और बनारस षड्यन्त्र में उनको अभियुक्त बनाया गया दिल्ली और लाहौर षड्यन्त्रों के मामले में भी उनका नाम प्रमुख रूप से आया परन्तु सरकार के लिए उनको बनारस षड्यन्त्र के मुकदमे में फांसना अधिक सुविधाजनक था। उनको चार वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड मिला। जेल में उनको भयंकर पेचिश का आक्रमण हुआ उनका कोई ठीक से इलाज नहीं कराया गया। उनके स्वास्थ्य के प्रति सरकार की इस अक्षम्य उदासीनता के परिणाम स्वरूप उनकी आगरा जेल में १९१८ में किस दिन मृत्यु हो गई किसी को ज्ञात नहीं है।

सर्वोच्च जोखिम के रहते (१९१९)

घटना के दिन ६ मई १९१८ को एक यात्री मैमनसिंह जिले के कियोरगंज में एक स्टेशन पर रेल गाड़ी से उतरा उसके हाथ में एक बंडल था। एक कांस्टेबिल जिसका काम संदिग्ध संदेहास्पद व्यक्तियों पर कड़ी नजर रखना था जो भी स्टेशन से निकले, उस अजनबी व्यक्ति के पास गया और उसके सभी सामान की तलाशी लेने की इच्छा प्रगट की। उस अज्ञात यात्री ने कांस्टेबिल को अपने सामान की तलाशी लेने की स्वीकृति दे दी। जबकि कांस्टेबिल सामान को देख रहा था तो उस यात्री ने एक रिवाल्वर निकाल लिया और उसने कांस्टेबिल प्रसन्न न दी को गोली मार दी।

उस बंडल में बहुत से कारतूस और कुछ औजार जो कि राजनीतिक काम में सहायक होते हैं मिले। वह यात्री गोली मारकर भाग गया, यद्यपि कांस्टेबिल को

अस्पताल ले जाया गया। उसकी दशा गम्भीर थी और वहां जाकर उसकी चोट से मृत्यु हो गई।

अंतिम आश्रय के रूप में (१६१६)

निर्दयतापूर्ण निष्ठुरता और घोर उत्तरदायित्वहीनता के जो असंख्य उदाहरण हैं उनमें कलकत्ता के उपनगर आलमबाजार के माखनलाल घोष की कहानी जिसकी आयु केवल पन्द्रह वर्ष की थी और जो स्थानीय स्कूल का छात्र था, विशेष महत्व का है। माखनलाल घोष को मार्च १६१६ के दूसरे सप्ताह में गिरफ्तार किया गया और उस पर एक डकैती में सम्मिलित होने का अभियोग लगाया गया। मजिस्ट्रेट ने अपराध सिद्ध न होने के कारण उसको छोड़ दिया किन्तु उसको भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत पुनः गिरफ्तार कर लिया और उसे प्रसीडेंसी जेल में भेज दिया गया जहां उसे एक एकान्त कोठरी में एक महीने तक रखा गया।

उसके उपरान्त उसको 'कालछीनी' नामक गांव में नजरबन्द कर दिया गया। वह गांव जलपाईगुड़ी जिले में एक अत्यन्त अस्वस्थकर स्थान था। यहां वह गम्भीर रूप से बीमार पड़ गया तो उसको अलीपुर जेल भेज दिया गया। वह वहां पूर्ण रूप से रोग-मुक्त नहीं हो पाया था कि उसका स्थानान्तर हुगली जेल में कर दिया गया जहां वह एक वर्ष तक रहा। हुगली जेल से उसको मिदनापुर जेल भेजा गया जहां बड़ी कठिनाई से वह अपने स्वास्थ्य को नष्ट होने से बचा सका।

उसके उपरान्त उसको हजारी बाग जेल भेजा गया जहां उसका स्वास्थ्य कुछ सुधरने लगा और वहां उसको अपना स्वास्थ्य अच्छा लगने लगा। जिस प्रकार बिल्ली अपने नवजात पिल्ले को मुंह में दाब कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर फिरती रहती है उसको बांकुरा जिले के तालडांगरा स्थान पर जाकर रहने की आज्ञा हुई। तालडांगरा में फूस से आच्छादित अंधेरे और गंदे मकान में जो वास्तव में मृत्यु का पिंजड़ा था उसको रहना पड़ा। वह स्थान अत्यन्त अस्वास्थकर था और विषैले सर्पों की वहां बहुतायत थी। माखनलाल ने उस अस्वास्थकर स्थान के विरुद्ध सरकार के पास अपना प्रतिनिवेदन भेजा। सुपरिटेंडेंट पुलिस उस स्थान का निरीक्षण करने आए और उन्होंने उसको प्रतिवेदन देने के लिए डांटा और उसे यह सत् परामर्श देकर चले गए कि दयालु सरकार ने उसके रहने के लिए जो व्यवस्था की है उससे ही वह सन्तुष्ट रहे। लेकिन वहां उसके लिए और अधिक रह सकना असम्भव था अतएव उसने अपनी नजरबन्दी की सीमा को नजरबन्दी के नियमों के विरुद्ध पार किया और सदर पुलिस स्टेशन पर गिरफ्तार होने के लिए उपस्थित हो गया।

अब दृश्य बदला और माखन को 'ओंडाल' भेज दिया गया जहां उसको हैजा हो गया। उसकी मां को अपने रोगी पुत्र की देखभाल करने की आज्ञा दे दी गई और वह उसके पास १६ मार्च को पहुंच गई। वह रोग से पूर्ण रूप से सम्हल भी नहीं पाया था कि उसको आज्ञा हुई कि वह बर्दवान पुलिस सुपरिटेंडेंट से मिले। उसकी माता अपने पति गृह को चली गई और वह अभागा युवक आदेशानुसार बर्दवान की ओर चला।

पन्द्रह दिन तक उस अभागे युवक की कोई खबर नहीं मिली। उसके चिन्ताग्रस्त पिता ने उसके समाचार जानने के लिए सभी उपाय किए। दीर्घ काल के उपरान्त अन्त में उसके पिता को सूचित किया गया कि वह चौटागांव जिले के

'महेशकाली' स्थान पर नजरबद है। महेशकाली में उसके कष्ट पहले की अपेक्षा सौगुने अधिक हो गए। जसा कि उसने अपनी माता को एक के बाद दूसरे तीन पत्रो मे लिखा था। अन्तिम पत्र २६ दिसम्बर १६१६ का लिखा था जिसमे उसने लिखा था "समय पर मैं तुम्हें सब कुछ बतलाऊगा'

■ जनवरी १६२० को माखन के पिता को सरकार द्वारा भेजा गया एक पत्र इस आशय का मिला 'सरकार को यह जानकर खेद है कि २६ दिसम्बर १६१६ को महेशकाली' के माखन लाल घोष की आत्म हत्या के परिणाम स्वरूप मृत्यु हो गई जिसके लिए सरकार घोष के परिवार के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करती है।

माखन लाल घोष की मृत्यु के सबध म सब साधारण तथा उसके माता-पिता यह अटकलें ही लगाते रहे कि क्या वास्तव में उसकी मृत्यु आत्म हत्या के कारण हुई अथवा साप क काटने, गम्भीर रोग, अथवा पुलिस के निमम अत्याचार के कारण हुई। माखन लाल घोष की मृत्यु के बारे मे कोई कुछ न जान सका।

मणीपुर मे ज्वाला भभकी (१६१७-१६१८)

१८६०-६१ की अन्तिम अशान्ति के उपरा त मणीपुर म ब्रिटिश सत्ता ■ विरुद्ध कोई बाहर से दिखता हुआ बडा सघष का चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं हुआ पर तु विद्रोह की अग्नि जो एक बार धधक चुकी थी वह पूरी तरह बुझी नहीं वह अन्दर ही ■ दर सुलगती रही। जिन अधिकारियो को कुकी और नागा अपने शान्तिमय जीवनयापन के लिए एक मात्र अनिवाय अधिकार मानते थे जब उन पर नये ढग से चोट हुई तो उस परिवतन के झोके से सुलगती हुई अग्नि अप्रत्याशित रूप से धमक उठी।

१६१७ में प्रथम महायुद्ध में मुख्य कार्यालय पर आक्रमण कर दिया। एक दूसरे महत्वपूर्ण गाव 'ऊखा पर सरकारी सेना को कुकी विद्रोहियो के बड़े मुकाबले का सामना करना पडा। कुकी विद्रोही ने अपने जगलो मे छिपने के स्थान स भारी गोली वर्षा की जिससे बहुत बड़ी सख्या मे सरकारी सनिक धाराशायी हो गए।

अपनी इस सफलता स उत्साहित होकर उ होने एक सेना ■ कप्तेटन और स्वय पोलीटिकल एजेंट और उसके दल पर आक्रमण कर दिया। दोनो ही बाल बाल बच गए। इसके प्रतिशोध स्वरूप सरकारी सेना ने ऊखा' गाँव को जला कर भस्म कर दिया। उसके अतिरिक्त अ य अनेक विद्रोही गावो को अत्य त निदयता से नष्ट कर दिया गया और उनके अस्तित्व को ही समाप्त कर दिया गया। इससे भयभीत अथवा निरुत्साहित होने के स्थान पर कुकी विद्रोहियों ने दुगने वेग से आक्रमण किया और मणीपुर की सीमा की चौकी तेंग्नोपाल' पर आक्रमण कर वहां ■ रक्षक हवलदार तथा अन्य सनिको को मार डाला। यातायात तथा सभी सदेहवाहक साधनो को नष्ट कर दिया गया और ऐसा प्रतीत होने लगा कि कम ■ कम समय विद्रोहियो का वहां अधिकार हो गया। वह विद्रोहियो की अभूतपूव सफलता का दिन था।

अब सरकार को स्थिति की गम्भीरता का अनुभव हुआ। आसाम राइफिल्स की दो सेनाए दक्षिणी और उत्तरी पहाड़ियो के विद्रोही सरदार के विरुद्ध भेजी गई। साथ ही बरमा सरकार को आज्ञा भेजी गई कि वह भी भारतीय सेना की सहायता के लिए और उससे सहयोग करने के लिए अपनी सेना भेजे। इसके अतिरिक्त नागा पहाड़ी क्षेत्र के डिप्टी कमिश्नर ने भी अपने जिले की सीमा पर स्थित कुकी

गावो के विरुद्ध सैना सहित कूच कर दिया। आधुनिक अस्त्र शस्त्रो से सुसज्जित प्रशिक्षित विशाल सेना से मुठभेड होने पर विद्रोही कुर्की जगल में पीछे हट गए। अब सेना ने निदयतापूवक प्रतिशोध आरम्भ किया। एक के बाद दूसरे गाव को जलाया गया। गांवो को पहले अच्छी तरह लूटा जाता और उनको पूरी तरह नष्ट कर दिया जाता। फिर उन्हे जला दिया जाता। नागा घरो में जो भी कुछ धन होता वह ले लिया जाता।

परन्तु एक दूसरे क्षेत्र मे विद्रोहियो को यथेष्ट सफलता मिली। कप्टेन के अग रक्षक तथा दो राइफिल मैन मार दिए गए और उस दल के बहुत से सैनिक गम्भीर रूप से जख्मी हो गए।

फरवरी १९१८ म नागा पहाडी क्षेत्र की सेना को उस क्षेत्र में बडी कठिनाई का सामना करना पड रहा था अतएव सिलचार से एक दूसरी सेना उसकी शक्ति में वृद्धि करने तथा उसके साथ सहयोग करने के लिए भेजी गई। दोनो सेनाओ ने इम्फाल की ओर कूच किया और वहा की सचार व्यवस्था को जो छिन्न भिन्न होगई थी पुन व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया।

वनाच्छादित पवतो के प्रदेश मे कुर्की और नागा वीरों के जो छापामार युद्ध में निपुण थे आक्रमण का सामना करना कठिन था। ब्रिटिश सनिको के लिए उन लोगो से युद्ध करना और उनको परत न करना बहुत कठिन काय था, जो लोग उनके समीप आने वाली सेना पर गोली वर्षा करते और वहा से अन्तरध्यान हो जाते वे शत्रु सेना के प्रत्याक्रमण की प्रतीक्षा ही नही करते थे।

ब्रिटिश सेना ने इसका प्रतिशोध केवल एक के बाद दूसरे गांव को नष्ट करके उनकी समस्त धन सम्पत्ति को लूट कर उनके जीवनयापन के लिए आवश्यक प्रत्येक वस्तु को यहा तक कि अनाज को भी छीन कर ही नही किया वरन उनको खेती न करने देकर भी लिया। विद्रोहियो को दबाने के लिए सेना में वृद्धि की गई और बरमा तथा आसाम सेनाओ के सहयोग की उत्तम व्यवस्था की गई।

कुकी और नागा विद्रोह अन्तत दब गया परन्तु उनकी विद्रोही भावना को नही दबाया जा सका। कुकी लोगो तथा उनके पडोसियों को युद्ध में सेना के लिए लाने के सारे प्रयत्न बुरी तरह असफल हो गए। (स्रोत २१ फरवरी १९१८ को निकाली गई सरकारी विज्ञप्ति से।)

पजाब अग्नि की लपटो मे (१९१९)

वस्तुस्थिति यह है कि १९१९ में पजाब म जो भयानक हृदकम्प आया और उसके परिणाम स्वरूप उस अभागे प्रा त के निवासियो को भयकर कष्टो और नृशस अत्याचारो को सहना पड़ा उसका वणन इस पुस्तक की योजना में हमने जो पद्धति अपनाई है उसके अनुरूप नही है।

जहा तक जन साधारण में उग्र राष्ट्रीय जागृति का और उसके परिणामस्वरूप जो भारतीयो को और कुछ गर सरकारी योरोपियनों को उसके भयानक परिणाम भुगतने पडे उन सब का प्रश्न है और जो अराजकता तथा क्रातिकारी अपराधी सम्बन्धी अधिनियम जो रोलेट ऐक्ट के नाम से प्रसिद्ध है— के पास होने के कारण घटित हुए वसा उग्र राष्ट्रीय जागरण भारत क राष्ट्रीय जीवन में कभी उत्पन्न नहीं हुआ। परन्तु इस उग्र राष्ट्रीय विस्फोट में उस क्रान्तिकारी सगठन की मूल भावना काम नहीं कर रही थी जो कि क्रान्तिकारी सगठनों का मुख्य लक्षण था। क्रान्तिकारी

संगठन गुप्त रूप से अस्त्र शस्त्रो के द्वारा विदेशी शासन को असम्भव कर देने और अनिच्छुक शासकों के हाथ से सत्ता छीन लेने के एक मात्र उद्देश्य से गठित किए जाते थे। परन्तु यह एक प्रगट जन आन्दोलन था और उसमे भाग लेने वाला को उसके क्या परिणाम होंगे भली भांति मालूम था। परन्तु इसका वर्णन यहा इसलिए समीचीन है क्योंकि रौलेट एक्ट इसलिए बनाया गया था कि उसम क्रांतिकारी आन्दोलन को दबाया जा सके जिसके उभरने की आशका बढ़ गई थी। कारण यह था कि युद्ध काल मे जो बहुत से महत्वपूर्ण अधिकार शासन सत्ता को प्राप्त थे, जिनके कारण देश में शांति बनाए रखी जा सकी वे शीघ्र ही समाप्त होने वाले थे।

पजाब की प्रचंड अग्नि एक साधारण सी चिनगारी से आरम्भ हुई। देखते देखते उसने विद्युत की कौंध के समान तीव्र गति से समस्त प्रांत को अपनी लपट म ले लिया। भूमिगत क्रांतिकारी आन्दोलन के विपरीत इस विद्रोह की कोई पूर्व तैयारी नहा हुई थी। वह तो एक प्रश्न पर जिसकी कोई पूर्व कल्पना भी नही कर सकता था विस्फोट हो गया मानो ज्वालामुखी फूट पडा हो। उसके कारण हिंसा का एक कुचक्र सा बन गया जिसम दोनो ओर हिंसा प्रतिहिंसा का दृश्य उत्पन्न हो गया।

भारत के इतिहास के पृष्ठों म पंजाब की घटना सदव एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करेगी, क्योंकि यह एक ऐसी घटना थी जिसके परिणाम स्वरूप समस्त देश म ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध अत्यन्त कटु भावना उत्पन्न हो गइ और जिसने उस समय तथा उसके उपरान्त उन्नीस सौ तीस के आसपास देश भर में क्रांतिकारी भावना के उदय होने में सहायता पहुंचाई।

सरकार चाहती थी कि क्रांतिकारी अपराधो के विरुद्ध साधारण दण्ड विधि को नए कानून बना कर अधिक प्रभावशाली बनाया जावे। वे उसके पूरक हो। इस उद्देश्य से ६ फरवरी १९१९ को उसने इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काऊंसिल में दो विधेयक उपस्थित किए। उनका उद्देश्य साधारण दण्ड विधि की कमी को पूरा करना और आपातिक अधिकार सरकार का देना था। अधिनियम की विभिन्न धाराओ में बिना कोई कारण बतलाए किसी व्यक्ति को गिरफ्तार कर लेने तथा कद कर रखने व तुरन्त शीघ्रतापूर्वक मुकद्दमा तय करने का प्रावधान था जिसकी अपील नहीं हो सकती थी।

२९ फरवरी १९१९ को गाधी जी ने बम्बई से उन विधेयको की कटु भर्त्सना करते हुए घोषणा की कि इन अधिनियमो से यह प्रतीत होता है कि सरकार में गहरा रोग पठ गया है जिसको पहले निकालना होगा। परन्तु सरकार ने विरोध की परवाह नही की दोनो विधेयक १८ मार्च १९१९ को लैजिस्लेटिव काऊंसिल के भीतर और बाहर कडे विरोध के बावजूद पास हो गए और कानून बन गए।

देश ने सरकार की इस चुनौती को चुपचाप सहन नहीं किया। समस्त देश ने एक स्वर से इन अधिनियमो को नितान्त अनावश्यक और दश के हितो के विरुद्ध बतलाया। अपना विरोध प्रगट करने के लिए महात्मा गाधी ने २४ मार्च को चौबीस घटे का उपवास रक्खा। ३० मार्च को समस्त देश म शोक तथा राष्ट्रीय अपमान दिवस मनाने का निश्चय किया गया।

जो राष्ट्रीय असतोष की अग्नि अभी तक सुलग रही थी उसमे लपटें उठी। एक अप्रैल १९१९ को दिल्ली में गम्भीर दगा हो गया

गोली से कई आदमी मारे गए और बहुत से आहत हो गए। बात यह थी कि जो दूकानदार अपनी दूकानें बंद नहीं करना चाहते थे और व्यापारी अपने व्यापारिक संस्थानों को खुला रखना चाहते थे उनको राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता छेड़ें नहीं उनको रोकने के लिए पुलिस ने गोली चलाई।

६ अप्रेल को महात्मा गांधी बम्बई से देहली की ओर चले। दस अप्रल को ज्यकि वे बम्बे-बाम्बे बड़ौदा एण्ड सेंट्रल इण्डिया ट्रेन से यात्रा कर रहे थे उन्हें कोसी वाला स्टेशन पर नोटिस दिया गया कि वे पंजाब प्रांत की सीमा में प्रवेश न करें। उनको ट्रेन से उतार लिया गया मथुरा ले जाया गया। इसके पश्चात् पंजाब और दिल्ली के प्रशासनिक अधिकारियों ने उन्हें यह आज्ञा दी कि वे दोनों सरकारों के प्रशासनिक क्षेत्र में प्रवेश न करें। गांधी जी ने सरकार के नोटिस की अवज्ञा की और वे गुड़गांव जिले के पलवल स्टेशन की ओर चले। उनको गिरफ्तार कर लिया गया और यह आज्ञा प्रचारित की गई कि वे केवल बम्बई में रह सकते अन्य कहीं नहीं जा सकते दस अप्रेल १९१९ को गांधी जी ने देशवासियों को संदेश देते हुए कहा कि जब रोलेट कानून परिनियम पुस्तक के पृष्ठों को कलुषित कर रहा हो तो मुक्त रहना अत्यन्त कष्ट का का कारण है। उसी दिन पंजाब के कुछ प्रथम श्रेणी के नेता भी गिरफ्तार कर लिए गए। १० अप्रेल को गांधी जी की गिरफ्तारी के विरोध में आम हड़ताल हुई। लाहौर और अमृतसर में गम्भीर दंगे हुए। पहले की तरह ही पुलिस बहुत बड़ी संख्या में शस्त्रों से पूरी तरह लैस होकर हड़ताल और दंगों का दमन करने के लिए निकल पड़ी कई स्थानों पर गोली चली और बहुत से आदमी मारे गए।

ग्यारह अप्रेल १९१९ को गांधी जी वापस बम्बई पहुंचे और उन्होंने एक विशाल जन समूह के समक्ष भाषण दिया। नगर के अन्य भागों में हिंसा फूट पड़ी और पुलिस ने गोली वर्षा की। १२ अप्रेल १९१९ को कलकत्ते में विरोध सभाएं की गई और जलूस निकाले गए। बहुत जल्दी ही क्षुब्ध जन समूह आपे के बाहर हो गया और शान्ति भंग हो गई।

लाहौर में दंगे ने अत्यन्त चिंताजनक रूप ले लिया। क्रुद्ध जन समूह ने व्यापारिक संस्थानों के चार योरोपियन अधिकारियों की हत्या कर दी। १४ अप्रेल १९१९ को जलियांवाला बाग का निर्मम और क्रूर हत्याकांड हुआ। जलियांवाला बाग हत्याकांड के जनक डायर के शब्दों में जो उसने हंटर कमेटी (पंजाब अशांति जांच कमेटी) के सामने १९ नवम्बर १९१९ को बयान देते हुए कहे थे कि इतिहास में उसकी समानता करने वाली घटना नहीं मिल सकती।

डायर ने अपनी गवाही में कहा था कि वह ११ अप्रेल १९१९ के सायंकाल पहुंचा, डिप्टी कमिश्नर की प्रार्थना पर मैंने कमान अपने हाथ में ले ली। उसने यह समझा कि परिस्थिति ऐसी भयावह है कि नागरिक शासन समाप्त हो गया है और उसका स्थान सैनिक शासन को लेना होगा। वह एक असाधारण परिस्थिति थी और उसने प्रशासन को नागरिक अधिकारियों द्वारा कहने पर अपने हाथ में ले लेने को उचित बतलाया। यद्यपि इस प्रकार का कोई अधिनियम था परिनियम नहीं था कि किसी नागरिक प्रशासनिक अधिकारी के कहने मात्र से सैनिक शासन स्थापित स्थापित हो जावे।

उसने अपने बयान में कहा कि अमृतसर के बाहर भी अशांति थी। उसकी

मान्यता थी कि जलियांवाला गोली कांड सर्वथा उचित था। उसने लोगों को सभा न करने के लिए बार बार घोषणा करवाई परन्तु उन्होंने उसकी आज्ञा की अवहेलना की। उसको यह अनुभव हुआ कि उसकी आज्ञा की अवज्ञा की गई। मार्शल ला (सैनिक कानून) की अवहेलना की गई थी अतएव यह उसका कर्तव्य था कि वह उस भीड़ को तेज गोली वर्षा से तितर बितर कर दे।

उसने पहले से ही निश्चय कर लिया था और वहां पहुँचते ही तुरन्त गोली चलाने की आज्ञा दे दी। मार्शल ला (सैनिक कानून) की सरकार द्वारा विधिवत घोषणा न होने पर उसने गोली चलाने की आज्ञा देने के पूर्व डिप्टी कमिश्नर से परामर्श करने की आवश्यकता नहीं समझी और वहां डिप्टी कमिश्नर उपस्थित भी नहीं था।

उसने यह अपना कर्तव्य समझा कि उस समय तक गोली चलाई जाती रहे जब तक कि सम्पूर्ण भीड़ तितर बितर न हो जावे। थोड़ी देर गोली चलाने से उस समय तो भीड़ तितर बितर हो जाती परन्तु वे लोग पुनः वापस इकट्ठे हो जाते और मैं मूर्ख बनता। उसने सोचा कि उसको घेरने का प्रयत्न किया जा रहा है। स्थिति भयावह और गम्भीर थी और उसने अमृतसर की भीड़ को विद्रोही समझा। जलियांवाला बाग गोली कांड को उसने अपना कर्तव्य समझा— भयानक कर्तव्य।

मिस्टर जस्टिस रैनकिन (एक कमिश्नर) ने कहा "जनरल मुझे यह कहने के लिए क्षमा करें कि क्या यह भयभीत हो जाने के फलस्वरूप नहीं था।"

जनरल डायर— नहीं यह भयभीत होने के कारण नहीं था। वह एक भयानक कर्तव्य था जो मुझे करना पड़ा। मेरे विचार में मेरा यह कृत्य दया का कार्य था। मैंने सोचा कि मुझे अच्छी तरह जम कर और मजबूती से गोली चलाना चाहिए जिससे कि भविष्य में मुझे अथवा और किसी को कभी गोली न चलाना पड़े। यदि मुझे एक गोली चलाने का अधिकार था तो मुझे बहुत अधिक संख्या में गोली चलाने का भी अधिकार था। मैं तार्किक निश्चय पर पहुँचा कि मुझे उस भीड़ को छिन्न भिन्न कर देना चाहिए जिसने कानून की अवहेलना की है। बीच का कोई रास्ता नहीं था। केवल एक ही चीज थी शक्ति और बल।

जब उससे पूछा गया कि क्या वह ऐसा नहीं सोचता कि उसने ब्रिटिश राज्य की कुसेवा की है। उसने कहा कि जो कुछ उसने किया वह उचित और ठीक था उन्हें उसका आभारी होना चाहिए और धन्यवाद देना चाहिए।

प्रश्न — जब गोली कांड समाप्त हो गया तो तुमने आहतों की सेवा सुश्रुषा तथा उपचार की कोई व्यवस्था की?

उत्तर — नहीं कदापि नहीं। यह मेरा कार्य नहीं था। अस्पताल खुले हुए थे और घायल वहां चिकित्सा के लिए जा सकते थे।

प्रश्न — क्या तुम्हारे इस कार्य का जिसके परिणामस्वरूप जैसा कि हम जानते हैं चार सौ या पांच सौ व्यक्ति मारे गए पंजाब सरकार ने अनुमोदन किया?

उत्तर — अवश्य मेरा ऐसा विश्वास है।

देश में शान्ति और सुव्यवस्था बनाए रखने के प्रयत्न में सरकार ने एक ऐसा कानून बनाना आवश्यक समझा कि जो एक स्वतन्त्र नागरिक की स्वाधीनता के प्रथम सिद्धान्त की ही अवहेलना करता था। उसने देश के नेताओं और सर्व साधारण जनता में ऐसा कड़ा और शक्तिशाली विरोध उत्पन्न कर दिया कि सरकार का जो उद्देश्य

था, परिणाम सर्वथा उसके विपरीत निकला। तेरह अप्रैल की दुर्घटना तथा हत्याकांड ने समस्त राष्ट्र को इतना क्षुब्ध कर दिया कि क्रोधोन्मत्त जनता को नियंत्रण में लाने के स्थान पर उसने उसको उस निर्मम दुर्भाग्य की ओर से नितान्त उदासीन बना दिया कि जो उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। १५ अप्रैल को समस्त पंजाब में खुला विद्रोह उठ खड़ा हुआ। लाहौर में दंगाइयों पर बम वर्षा मशीनगनों से गोली वर्षा की गई। नागरिक कानून को तिलांजलि दे दी गई और गुजरानवाला लाहौर तथा अमृतसर जिलों पर मार्शल ला लागू कर दिया गया।

सैनिक प्रशासन में निर्दोष व्यक्तियों को कपड़े उतार कर निर्वसन (नंगा) कर दिया जाता और उन पर कोड़ों की मार पड़ती। यह सब सड़कों पर होता उनके हाथ और पैर खम्भों से बांध दिए जाते जो इस काम के लिए खड़े किए गए थे। जनश्रुति के अनुसार कोड़ों की मार से तीन या चार व्यक्तियों की मृत्यु हो गई। परन्तु सरकार ने इस अफवाह का खंडन किया और विज्ञप्ति में कहा गया कि १५ अप्रैल से १५ मई १९१९ तक तीनों जिलों में केवल ३२ व्यक्तियों को कोड़े लगाए गए। कोड़ों की औसत संख्या प्रति व्यक्ति ग्यारह थी।

हजारों छात्रों को प्रति दिन हाजिरी के लिए सोलह मील चलने पर विवश किया जाता था। सैंकड़ों की संख्या में छात्रों और उनके प्रोफेसरों को गिरफ्तार कर लिया गया और हिरासत में रख लिया गया। पांच वर्ष से सात वर्ष तक के छोटे बालकों को परेड पर आने और यूनियन जैक को सलामी देने के लिए विवश किया जाता था। इमारतों तथा मकानों के मालिकों को उनकी इमारत की दीवारों पर चिपकाए गए मार्शल ला के इश्तहारों की सुरक्षा के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता था।

एक सम्पूर्ण बारात जो बाहर से आई थी और जिसे मार्शल ला के प्रावधानों की कोई खबर तक नहीं थी उसको सबके सामने खुले आम कोड़े मारे गए।

इसलामिया स्कूल के ६ छात्रों को केवल इसलिए कोड़े लगाए गए क्योंकि वे बड़े दिखलाई देते थे उनको दण्ड देने का और कोई कारण नहीं बतलाया गया। लोगों को अपमानित करने के लिए पशुओं के पिंजड़े केन्द्रीय स्थानों पर खड़े किए गए तथा बनवाए गए और उनमें कैद किए गए लोग जिनमें बहुत से अत्यन्त सम्भ्रान्त व्यक्ति थे रक्खे गए जैसे वे कोई हिंसक पशु हों।

तरह तरह के नए नए दण्डों का आविष्कार किया गया। लोगों को रेंग कर पेट के बल सड़क पर चलने कूद कूद कर चलने तथा ऐसे ही अनेक दण्ड दिए गए जिनकी किसी ने सैनिक कानून अथवा नागरिक कानून में स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी यह नए आविष्कार किए हुए दण्ड दोषी तथा निर्दोषों को समान रूप से दिए गए उनमें कोई भेद नहीं किया गया। लोगों के हाथों में हथकड़ी डालकर उन्हें रस्सी से एक साथ बांध दिया गया और उन्हें चिलचिलाती धूप में खुले ट्रकों पर पन्द्रह घंटे खड़ा रक्खा गया। यह दिखलाने के लिए कि हिन्दू मुस्लिम एकता का क्या परिणाम होता है हिन्दुओं और मुसलमानों के जोड़े को हथकड़ियों से एक साथ बांधा गया।

लोगों पर शरीर बन्धक थोपा गया अर्थात् यदि परिवार में किसी व्यक्ति को सरकार चाहती थी तो उसके भाई अथवा पुत्र को हिरासत में रख लिया गया तथा अनुपस्थित अभियुक्तों अथवा सन्देहास्पद व्यक्तियों की उपस्थिति के लिए या तो सम्पत्ति

जब्त करली गई अथवा उसको नष्ट कर दिया गया। बहुत बड़ी संख्या में भारतीयों के मकानों के बिजली के कनेक्शन काट दिए गए और दंड के रूप में जल देना बंद कर दिया गया। भारतीयों को अपने निज के बंगलो से निकलने पर विवश किया गया, उनको योरोपियनों को दे दिया गया। भारतीयों की मोटरें तथा घोड़ा गाड़ियां छीन ली गई और उन्हें योरोपियनों के उपयोग के लिए दे दिया गया।

निहत्थी जनता को आतंकित करने के लिए हवाई जहाज, लुइस तोपें, और वैज्ञानिक युद्ध के आधुनिकतम अस्त्र शस्त्र का प्रदर्शन किया गया जिससे लोग ब्रिटिश राज्य की महान शक्ति को समझें।

कथित अपराधियों के विरुद्ध शीघ्र से शीघ्र मुकदमे तय करने का प्रयत्न किया गया जिससे कि मार्शल ला की अवधि समाप्त होने से पूर्व ही उनको तय कर दिया जाय। कई स्थानों पर सैनिक अदालत स्थापित कर दी गई जिन्होंने ८५२ अपराधियों के मुकदमों की सुनवाई की जिसमें से ५८२ को सजा दी गई। बीसियों आदमियों को प्राण दंड की सजा दी गई और उनमें बहुतों को फांसी लगा दी गई।

ओडायर और डायर ने भारत को ब्रिटिश राज्य के लिए सुरक्षित बनाने के लिए जो कदम उठाए ऊपर उनका थोड़ा नमूना दिया गया है। वे अपने उद्देश्य में कहां तक सफल हुए उसका असंदिग्ध प्रमाण तो केवल इतिहास दे सकता है और ओडायर भी अपने दुष्कृत्य की सजा पाए बिना नहीं रहा।

दुर्भाग्य द्वारा पीडित (१९१७-२०)

जब स्वतंत्रता प्राप्त करने की भावना देश के वायु मंडल में फैल जाती है तब कोई भी नहीं जानता कि वह किसी व्यक्ति को किस प्रकार प्रभावित करके उसको सक्रिय होने के लिए प्रोत्साहित करेगी।

क्रांतिकारी कार्यवाही के विचार को मूर्त रूप देने वालों में औरैया निवासी गेंदालाल दीक्षित थे। वे कुछ समय तक ऐंग्लो वेदिक स्कूल में अध्यापक भी रहे थे। उन्होंने शिवाजी समिति नामक एक संगठन महान् महाराष्ट्र वीर शिवाजी के नाम पर खड़ा किया जिससे उसके सदस्य छत्रपति शिवाजी के आदर्शों का उनके रणकौशल का अनुसरण करें।

अपने राजनीतिक जीवन के प्रारम्भिक काल में उन्होंने अपने क्रांतिकारी विचारों का प्रचार शिक्षित और सम्पन्न लोगों में किया उनका विचार था कि उन्हें देश की दासता और उसकी वेदना का ज्ञान है और जीवन की दैनिक चिन्ताओं से मुक्त होने के कारण देश को स्वतंत्र करने के प्रयत्न करने में वे उनका साथ देंगे। परन्तु उनके प्रयत्नों में वे अधिक सफल नहीं हुए। शिक्षित और सम्पन्न व्यक्तियों का प्रति उत्तर उत्साहवर्धक नहीं रहा। परन्तु गेंदालाल दीक्षित निराश नहीं हुए। उन्होंने अपना प्रयत्न और ध्यान निराशाग्रस्त व्यक्तियों अर्थात् ग्वालियर राज्य के डाकुओं की ओर मोड़ दिया। जिन्हें अपने जीवन की चिन्ता नहीं थी।

एक बार गेंदालाल ने सेना में भर्ती होने का प्रयत्न किया परन्तु उनको सेना में भर्ती नहीं किया गया। वे कहा करते थे कि महायुद्ध छिड़ा हुआ है उसमें अंग्रेजों की हार हो रही है वे बहुत कठिनाई में हैं यही विप्लव करने और जनता द्वारा विद्रोह करने का अनुकूल अवसर है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे ग्वालियर आए और वहां वे १९१७ में लक्ष्मणानन्द ब्रह्मचारी के नाम से प्रसिद्ध व्यक्ति से मिले।

उन्होंने अपनी बिलखती पत्नी को यह कह कर सान्त्वना दी कि देश में हजारों ऐसी निस्सहाय विधवाएं हैं जिनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है। उनको अपने भाग्य की सराहना करनी चाहिए कि उनका पति मातृभूमि को स्वतंत्र करने के प्रयत्न में स्वर्गवासी हुआ। केवल उसको इसी बात का खेद है कि वह अपने जीवन के मिशन को पूरा किए बिना ही इस संसार को छोड़ कर जा रहा है।

बड़ी कठिनाई से उनके मित्र और पत्नी उनको एक अस्पताल में ले गए और वहां उसकी पहचान होने से पूर्व ही २७ दिसम्बर १९२० को मध्याह्नोपरान्त दो बजे उनकी मृत्यु हो गई। (स्रोत — स्मृति कथा विप्लवी बंगाली २ अक्टोबर १९५६ पृष्ठ ६०१ ६९८ चटर्जी जे सी प्रदेशिया)

झंझावात उत्पन्न करने वाले क्रांति दूत का आगमन (१९०३–१९२२)

वीरेन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय भारतीय विश्व-विद्यालय से स्नातक की उपाधि लेकर १९०३ में किसी राजनीतिक उद्देश्य से नहीं वरन गम्भीर अध्ययन के लिये योरोप आया। जबकि वे मिडिल टैम्पिलइन्स आफ कोर्ट के विद्यार्थी थे तब उन्हें इस आरोप पर संस्था से निकाल दिया गया कि वे उन क्रान्तिकारियों से सम्बन्ध रखते हैं कि जो कि यूनाइटेड किंगडम में रहते हैं।

बात यह थी कि चट्टोपाध्याय श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा की ओर आकर्षित हो गए थे और इन्डियन सोस्योलाजिस्ट के प्रकाशन तथा संपादन में उनके सहायक थे। १९०६ में वे कामिल पाशा से मिले जो कि तरुण तुर्कों का सदस्य व नेता था और उस समय युनाइटेड किंगडम में रहता था। चट्टोपाध्याय ने भारतीयों द्वारा ब्रिटिश शासन को भारत से निकाल बाहर करने में उसकी सहायता चाही।

जरमनी के स्टटगार्ट नगर में जो अन्तर्राष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन हुआ वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय उसमें सम्मिलित हुआ और वहां से वह कैनाओं (पोलैंड) तथा वार्सा की यात्रा पर गया। इस यात्रा में उसका तलवार पत्र जो योरोप में एक महत्वपूर्ण ब्रिटेन विरोधी पत्र था उसके लेखक तथा संपादक से घनिष्ट परिचय हो गया।

१९०८ में वह आयरलैंड गया वहां से १९०९ में वह पेरिस चला गया जहां वह मैडम कामा के 'वन्देमातरम् समूह' में सम्मिलित हो गया जो कि भारत की स्वतन्त्रता के लिए काम कर रहा था। १९१० से वह नियमित रूप से 'तलवार' पत्र में लिखने लगा।

उसने इस आयरलैंड और विशेषकर मरक्को के 'रिफ्स' क्रान्तिकारी दलों से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयत्न किया। उन दलों से सम्पर्क स्थापित करने का उसका मुख्य उद्देश्य सैनिक अनुभव प्राप्त करना था। उसकी मान्यता थी कि वह अनुभव भारतीय स्वतन्त्रता के योद्धाओं के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

६ जुलाई १९११ को लंदन के 'टाइम्स' पत्र में उसने अपने विचार व्यक्त करते हुए इस आशय का लेख लिखा कि यह यद्यपि आतंकवाद को समाप्त कर देने के लिए अत्यन्त इच्छुक है परन्तु वह अन्तःकरण से ब्रिटिश सरकार की उसको दबाने में सहायता नहीं कर सकता क्योंकि उसकी दृढ़ मान्यता है कि ब्रिटिश सरकार की नीति गलत है। अपने लेख में उन्होंने इस बात का भी संकेत किया कि भविष्य में राजनीतिक हत्याओं की सूची अधिक लम्बी होगी और उसकी जिम्मेदारी उन पर

होगी जो भारत की स्वतन्त्रता के काम में सहायक न होकर भारत में ब्रिटेन के स्वार्थों को अक्षुण बनाए रखना चाहते हैं।

१९१४ के आरम्भ में जब ब्रिटेन और जरमनी के कूटनीतिक सम्बन्ध बिगड़ने लगे तो वे सतर्क हो गए और वे फ्रांस से जरमनी चले गए। वहां वे एक प्रकाशन संस्था के लिए हिन्दी उर्दू तथा अन्य भारतीय भाषाओं में पुस्तिकाएं लिख कर जरमनी में भारत के हित में प्रचार करने लगे। उक्त प्रकाशन संस्था ने भारत की स्वतन्त्रता के आन्दोलन को सहायता देने का वचन दिया था। वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय 'बर्लिन-कमेटी" के संस्थापकों में से एक थे और उसके प्रथम मन्त्री थे।

प्रथम महा युद्ध के उपरान्त १९२२ में वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय जरमनी से निकलकर किसी प्रकार रूस पहुंचे। ऐसा कहा जाता है कि वहां उनकी रहस्यमय परिस्थितियों में मृत्यु हो गई। उसके उपरान्त उनका कोई भी समाचार किसी को नहीं मिला।



अध्याय पांच

सुदूर पूर्व में अशान्ति (१९१२-१७)

जालुन अथवा म्यो का विद्रोह — बर्मा महायुद्ध के उपरान्त सर्व प्रथम बरमी देशभक्तों ने १९१३ में जालुन अथवा म्यो का— विद्रोह के रूप में बरमा को स्वतन्त्र करने की संगठित कार्यवाही की। १९१२ में तरुण देशभक्तों के एक समूह ने गुप्त रूप से इस बात की तैयारियां की कि सरकार पर एक स्थान विशेष पर आक्रमण किया जावे और यदि विद्रोह सफल हो और परिस्थिति अनुकूल हो तो विभिन्न स्थानों पर विद्रोह को भड़काने का प्रयत्न किया जावे। योजना यह थी कि १८ सितम्बर १९१२ को जालुन पर आक्रमण किया जावे और उस पर अधिकार कर उसकी सरकारी सेनाओं के विरोध में जब तक सम्भव हो मोर्चा लेकर डटे रहा जावे। विद्रोह के प्रारम्भ होते ही सरकार ने सेना को विद्रोह के स्थल पर भारी संख्या में भेज दिया और विद्रोहियों से युद्ध हुआ। विद्रोही देशभक्तों को भारी जन हानि के बाद पीछे हटना पड़ा।

पुलिस और सेना की टुकड़ियों को समीपवर्ती स्थानों की तलाश करने के लिए भेजा गया जिससे युद्ध में भाग लेने वाले शेष तरुण देशभक्तों को पकड़ा जा सके। वे लोग उस दल के दो बड़े नेताओं को बन्द करने में सफल हो गए— गमो सायां' उपनाम 'पोमया' और उसका सहायक म्या हपोनगी (हरो माई उपनाम यू-क्येडा। जबकि सेना तथा पुलिस की टुकड़ियां उस क्षेत्र की खोज कर रही थीं तो वे दोनों गिरफ्तार हो गए।

१४ मार्च १९१३ को उन दोनों तथा उनके अनुयायियों जिनकी संख्या पन्द्रह थी पर सैशन जज हुजादा की अदालत में मुकद्दमा चलाया गया और उनको फांसी की सजा हो गई। उस दल के अन्य व्यक्तियों पर जिनकी संख्या लगभग पन्द्रह थी सेशन अदालत में षड्यन्त्र करने तथा विद्रोह में शामिल होने के अपराध में मुकदमा चलाया गया। उनमें से दस को प्राण दण्ड की सजा हुई। उच्च न्यायालय में अपील करने पर उनमें से आठ की सजा आजीवन काले पानी में परिणित कर दी गई। इस प्रकार संगठित रूप में सरकार के विरुद्ध विद्रोह का यह सर्व प्रथम प्रयास समाप्त हुआ। दुर्भाग्यवश जिन लोगों ने विद्रोह में भाग लिया उनके नाम उपलब्ध नहीं हैं।

बरमा षड्यन्त्र (१९१५)

भारत में जो क्रांतिकारी हलचलें हो रही थीं उन्होंने बरमा के राजनीतिक जीवन को एक बड़ी सीमा तक प्रभावित किया। ऐसा समय कभी भी नहीं रहा जबकि बरमा में इस प्रकार के प्रयत्न फिर वे चाहे जितने निर्बल क्यों न हों पूर्णतः समाप्त हो गए हों जिनका उद्देश्य विदेशियों को देश से खदेड़ बाहर कर उस प्राचीन देश में पुनः राजा की सत्ता को स्थापित करना था।

भारतीय क्रांतिकारियों का प्रथम संगठित प्रयत्न प्रथम विश्व महायुद्ध के काल में प्रकाश में आया जबकि भारतीय क्रांतिकारियों ने गुप्त रूप से बरमा के क्रांतिकारियों से अपने दृढ़ सम्बन्ध स्थापित कर लिए। युद्ध तथा युद्ध की तैयारियों का

लाभ उठा कर भारतीय क्रान्तिकारियों ने भारत के अन्दर और बाहर अपने केन्द्र स्थापित करने का अथक प्रयत्न किया। उनकी दृष्टि से बरमा उनके लिए एक अनुकूल और उपयुक्त स्थान था जो अभी तक पुलिस तथा गुप्तचरों के लिए शहद की मक्खियों का छत्ता नहीं बना था।

बरमा में क्रान्तिकारियों का मुख्य कार्यक्रम सेना में विद्रोह फैलाना और सैनिकों को क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित करना था जिससे सेना द्वारा भीतर से ही विदेशी सरकार को उलटा जा सके।

प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व ही बरमा में कुछ बंगाली क्रान्तिकारी पहुँच गए थे जो कि स्थानीय जनता से सम्पर्क स्थापित कर उनमें सरकार विरोधी भावना को फैलाने का प्रयत्न कर रहे थे। वे इसके लिए साहित्य प्रकाशित करते और जहाँ भी सम्भव होता सभाएं करके सरकार विरोधी विचारों का प्रचार करते।

संयुक्त राज्य अमरिका से अनुभवी भारतीय क्रान्तिकारियों और साहित्य के प्रचुर मात्रा में आ जाने से उन स्थानीय भारतीय क्रान्तिकारियों को बहुत अधिक बल मिला जो अभी तक अत्यन्त विपरीत परिस्थितियों में कार्य कर रहे थे। क्रमशः पूर्वीय सीमा से बहुत बड़ी संख्या में क्रान्तिकारियों के बरमा में घुस आने का परिणाम यह हुआ कि बरमा में क्रान्तिकारी युवकों का एक ऐसा दल उत्पन्न हो गया जो कि विलक्षण योग्यता साधन सम्पन्नता उच्च शिक्षा और संस्कृति के धनी थे। जिनके लिए जहाँ तक मातृभूमि को स्वतन्त्र करने का प्रश्न था बड़े से बड़ा खतरा भी कुछ नहीं था। क्रान्तिकारी विचारों के प्रवाह का मुख्य स्रोत संयुक्त राज्य अमेरिका की गदर पार्टी थी। उसके सदस्य बरमा में सुदूर पूर्व के देशों मुख्यतः थाईलैंड (स्याम) के मार्ग से घुस आए और बरमा में क्रान्तिकारी आन्दोलन को गदर पार्टी के मुख्य कार्यालय बैंकाक से सहायता मिलती थी।

क्रान्तिकारी आन्दोलन का मुख पत्र 'गदर" पत्र था जो सभी भारतीयों को विशेष कर जो भारतीय बैंकाक में रहते थे उन्हें बिना मूल्य भेजा जाता था। जो लोग क्रान्तिकारी विचारों से सहानुभूति रखते थे उनको एक से अधिक प्रति भेजी जाती थी और प्रत्येक से यह कामना की जाती थी कि जब उस को पढ़ लें तो अपने अन्य मित्रों को दे दें। पत्र के इस प्रकार के बण्डलों को पाने वालों में एक 'माय जिल कार्ली' बैंकाक में थे। अवश्य यह नाम फर्जी था। इनके पास पत्र की पचास प्रतियां बांटने के लिए आती थीं। क्रमशः सरकार ने विदेशों से पत्रों तथा अन्य साहित्य के डाक से आने पर सेंसर शिप स्थापित कर दी उसके परिणाम स्वरूप विदेशों से आने वाले समाचार पत्रों की संख्या कम हो गई और जब सरकार की पुलिस ने विदेश से आने वाले पत्रों की जांच करना आरम्भ कर दी तो उनका आना प्रायः बन्द हो गया।

एक दूसरा पत्र जिसने इस दिशा में कुछ काम किया 'जहाने-इस्लाम' था जो मई १९१४ में निकला और जिसमें अरबी हिन्दी और तुर्की में लेख होते थे। इस पत्र में ब्रिटिश और उसके मित्रों पर कठोर प्रहार किए जाते थे इस कारण सरकार ने 'गदर' पत्र की तरह ही उसको भी बरमा में आने से रोकने का प्रयत्न किया। परन्तु पत्र के प्रवेश होने पर रुकावट होने से पूर्व उसने अपने उद्देश्य में गहरी सफलता प्राप्त कर ली थी। २० नवम्बर १९१४ के अंक के उर्दू संस्करण में मिस्र के अनवर पाशा का इस आशय का एक भाषण प्रकाशित हुआ कि स्वतन्त्रता की घोषणा अविलम्ब होनी

चाहिए। उसमे देरी नही होनी चाहिए। अनवर पाशा ने भारतीयो को विद्रोह के लिए नीचे लिखे शब्दों में ललकारा था—

' अग्रजी सरकार के शस्त्रागारो (मैगजीनो) को लूट लो और उन्हीं शस्त्रो की सहायता से अंग्रेजों को मार डालो। भारतीय सख्या में बत्तीस करोड है और अधिक से अधिक अग्रेज सख्या में केवल दो लाख है उन सभी को मार देना चाहिए। उनके पास कोई सेना नही है। स्वेज नहर को शीघ्र ही तुर्क लोग बद कर देंगे। जो भी व्यक्ति अपनी जन्म भूमि तथा देश को स्वतन्त्र करने के लिए मरेगा वह अमर हो जावेगा। हिन्दू और मुसलमान तुम दोनों ही स्वतन्त्रता की सेना के सनिक हो और भाई हो और यह नीच और घृणित अग्रज तुम्हारे शत्रु हैं। तुम्हे गाजी बनना चाहिए और जिहाद की घोषणा कर देनी चाहिए साथ ही अपने भाइयो से मिलकर अंग्रेजो को मार कर भारत को स्वतन्त्र बनाना चाहिए'' (रिपोर्ट– सडिशिन कमेटी १६१८ पृष्ठ १६६)।

बरमा में जो षड्यन्त्र का सगठन किया गया उसको तुर्क सरकार का तथा ऐसे व्यक्तियो का समर्थन प्राप्त था जो अग्रेजो से गहरी घृणा करते थे। तुर्की सरकार ने ऐसे ही व्यक्तियो को महत्वपूर्ण स्थानो पर नियुक्त कर लिया था। तुर्की सरकार बरमा स्थित कवियो ने भारतीय क्रान्तिकारी या दोलन की बहुत सहायता की।

रगून स्थित सेना में विद्रोह की भावना उत्पन्न करने विशेषकर १३०वी बलोच सेना में विद्रोह उत्पन्न करने के प्रयत्न एक सीमा तक सफल हुए थे और १६१५ के जनवरी मास में सेना सरकार के विरुद्ध खुले रूप में विद्रोही हो उठी। उस विद्रोह के सगठन कर्ताओं तथा उसम सम्मिलित होने वालो को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा। उसके उपरान्त विद्रोह दबा दिया गया। विद्रोह में भाग लेने वालो को अपने प्राण देने पड़े, परन्तु उसके अतिरिक्त दो सौ से अधिक व्यक्तियों को विभिन्न समय के लिए कठोर कारावास मिला। इसके अतिरिक्त मेले स्टेट गाइड्स तथा पांचवीं लाइट इन्फन्ट्री ने भी विद्रोह किया।

विद्रोह के सगठन कर्ताओं ने बहुत बड़ी जोखिम तो ली ही, साथ ही बहुत कठिनाइयां का सामना भी किया। यहा तक कि सगठन कर्ताओं मे से एक मैनिला और सिंगापुर होकर मांडले पहुँचा और दूसरे लोग बनकाक से सियाम की सीमा के मार्ग से मांडले पहुचे थे। बरमा में विद्रोह के लिए धन और अस्त्र शस्त्र एकत्रित करने का कार्य बड़ी सावधानी और तेजी से चलता रहा, और वहां विद्रोही बहुत सक्रिय थे।

एप्रिल १६१५ म सरकार को बरमा में गदर करने के षड्यन्त्र की साक्षी मिल गई और उसको दबाने के लिए उसने कडे कदम उठाने का निश्चय किया। गदर सम्बन्धी साहित्य बहुत से स्थानो पर मिला विशेषकर श्याम की सीमा पर स्थित म्यावादी में गदर साहित्य बहुत अधिक प्राप्त हुआ। विद्रोह की सहायता करने वालों की भर्ती तेजी से की जा रही थी। विशेष कर सिक्ख और पजाबी मुसलमान बहुत बड़ी सख्या में विद्रोह में भर्ती हुए थे। पुलिस को ऐसे बहुत से नामो का पता चला जो कि बाद के मुकदमो में अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी प्रमाणित हुए। जिन लोगों को कद किया उनके विरुद्ध मुख्य आरोप यह था कि उन्होंने सम्राट के विरुद्ध विद्रोह (युद्ध) किया सेना की राजभक्ति और निष्ठा को नष्ट करने का प्रयत्न किया और सम्राट के शत्रुओं को सहायता करने के लिए बहुत उत्तेजनाजनक समाचार फैलाए।

एक पैम्फलेट के द्वारा विद्रोह करने के लिए खुला आह्वान किया गया। उस पैम्फलेट का शीर्षक था "सैनिक बन्धुओं को आशा का सन्देश"। सैनिक पुलिस के अधिकारियों को दासता के पदक तथा चिह्नों के लिए लालायित न होकर उन्हें फेंक देने के लिए आमन्त्रित किया गया था और उनका आह्वान किया गया था कि वे अपने पुराने दासता के पाप के कलंक को धो डालें तथा अपनी छाती पर स्वतन्त्रता के चिह्न को धारण करें।"

बाद को पता चला कि सैनिक विद्रोह की जोरदार तैयारियाँ १६११ से ही हो रही थीं। सैनिक विद्रोह की तैयारियाँ करने में सुदूर पंजाब से आए हुए कुछ युवकों का प्रमुख हाथ था। इनमें से कम से कम दो को बम बनाने का ज्ञान था। एक तीसरे के पास बम बनाने की सामग्री मौजूद थी। उन्होंने रंगून में एक मकान किराए पर ले लिया जहाँ सरकार को उखाड़ फेंकने के उद्देश्य को सफल बनाने के लिए निरन्तर बैठकें होती थीं।

'गदर' पत्र को इस मकान में डुप्लिकेटिंग मशीन पर छापा जाता था। ये लोग बैंकाक तथा भारत में क्रान्तिकारी कार्यकर्त्ताओं से नियमित रूप से सम्पर्क स्थापित किए हुए थे। क्रान्तिकारी उद्देश्य के लिए चन्दा इकट्ठा किया जाता था। क्रमशः इन क्रान्तिकारियों का कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया। उनमें से कुछ का यह दृढ़ विश्वास था कि सर्व व्यापी विद्रोह होना अनिवार्य है विद्रोह के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध हैं और सफलता निश्चित है।

षड्यन्त्रकारी केवल मात्र अपनी भावना पर ही निर्भर नहीं कर रहे थे। संयुक्त राज्य अमेरिका में गदर पार्टी के कार्यों में जरमन सरकार ने गहरी रुचि ली थी। उन्होंने भारतीय क्रान्तिकारियों को सैनिक शिक्षा देने की व्यवस्था की थी।

"उत्तरी श्याम में बरमा की ओर जो रेलवे लाइन बन रही थी उसको अधिकतर जरमन इंजीनियर और पंजाबी श्रमिक बना रहे थे। उन भारतीय श्रमिकों को जरमन सैनिक अधिकारी अस्त्र शस्त्रों को चलाने का प्रशिक्षण विभिन्न विभिन्न स्थानों पर देते थे जिससे जब वे भारत लौटें तो बरमा पर आक्रमण कर सकें तथा भारतीय पुलिस तथा सेना में विद्रोह भड़का सकें।"

सुदूर पूर्व में कई स्थानों पर बहुत क्रान्तिकारी हलचलें हो रही थीं जिनमें बहुत अधिक चतुराई बुद्धिमत्ता तथा साधनों की आवश्यकता थी। बैंकाक एक अत्यन्त महत्वपूर्ण केन्द्र था जहाँ भारत की गुप्त क्रान्तिकारी संस्थाओं के प्रतिनिधि संयुक्त राज्य अमेरिका व सन फ्रांसिस्को तथा बरमा के विभिन्न केन्द्रों के क्रान्तिकारी प्रतिनिधियों से मिलते थे और जो भारत के विभिन्न क्रान्तिकारी दलों से मिलकर कार्य कर रहे थे। ब्रिटिश सरकार इन क्रान्तिकारी हलचलों की सूचना पाकर अत्यन्त चौकन्नी हो उठी और उसका मुकाबला करने के लिए उसने कठोर कदम उठाए तथा तैयारियाँ आरम्भ कर दीं। ब्रिटिश सरकार को इस बात की पूर्व सूचना मिल चुकी थी कि क्रान्तिकारी १६१५ के अक्टोबर मास में बकरीद के दिन विद्रोह करने की योजना बना रहे हैं अतएव पुलिस ने सरलता से उस विद्रोह की योजना को व्यर्थ कर दिया। म्योबी में स्थित सैनिक पुलिस बटालियन जो विद्रोह करने के लिए बिल्कुल तैयार थी और विद्रोह करने की तैयारी में थी परन्तु वह भी निश्चित समय पर कार्यवाही न कर सकी क्योंकि कुछ लोग हिचक गए और सरकार ने बिना तनिक भी विलम्ब किए कार्यवाही करके योजना को विफल कर दिया। विद्रोह की इस योजना

रूप अन्य षडयन्त्रों की तुलना में बहुत व्यापक और विस्तृत था। विद्रोह की विस्तृत पैमाने पर तैयारियाँ की गई थीं रिवाल्वर, डायनोमाइट तथा अन्य विस्फोटक पदार्थों को बहुत बड़ी राशि में एकत्रित किया गया था। क्रांतिकारियों ने अत्यन्त जोखिम भरे कार्य में बड़े साहस और शौर्य का प्रदर्शन किया परन्तु कतिपय कायर और लोभी व्यक्तियों के कारण असफलता और निराशा हाथ लगी अन्यथा यह षडयन्त्र बर्मा के इतिहास में गौरवशाली अध्याय जोड़ता और प्रथम विश्व युद्ध में भारत के साथ ही बरमा भी स्वतन्त्र हो जाता।

काचिन विद्रोह

भारतीय क्रांतिकारियों के सहयोग से एक विस्तृत क्षेत्र में सशस्त्र क्रांति और विद्रोह की तैयारियाँ चल रही थीं, बरमा के विभिन्न भागों में कुछ घटनाएं घटीं जिससे इस बात का प्रमाण मिला कि गुप्त क्रांतिकारी दल तत्काल क्रांतिकारी कार्यवाहियों के लिए तैयार थे।

१६१४ के आरम्भ में नगा-पो यमक अपने को मि तांग' (चमत्कारी शक्तियों से युक्त (ऐसा घोषित करने लगा और गुप्त रूप से बरमिया में अपने ध्येय को पूरा करने के लिए बरमियों में प्रचार करने लगा। उसने अपने दल में योग्य और क्षमतावान सहायकों को भर्ती किया जिनमें तीन प्रमुख सहायक थे जो अत्यन्त योग्य और कार्यक्षम थे। सहायकों को भर्ती करके उसने काचिन प्रदेश की यात्रा इस उद्देश्य से की कि वहां से विद्रोह खड़ा किया जावे। पी येमक तथा उसके तीन प्रमुख सहायकों ने सरकारी सेवाओं के विरोध का सामना करते हुए विशाल भू भाग को पदाक्रान्त कर दिया। नगा कई को जिस प्रदेश को क्रान्तिकारियों ने स्वतन्त्र कर लिया था उसका संरक्षक नियुक्त किया गया। ब्रिटिश सरकार की सेनाओं से संघर्ष करते हुए भी उसने उस विशाल प्रदेश पर यथेष्ट दीर्घकाल तक अपना अधिकार जमाए रक्खा।

सिम पो पाई स्थल भंडार बड़ी राशि में सैनिक सामग्री एकत्रित थी। क्रांतिकारियों ने उस पर भी आक्रमण कर दिया। यह उनका अत्यन्त साहसिक कार्य था। विद्रोही मावांग' में एकत्रित हुए जो कि मालिखा और 'माई थाईमाप्रतामों' मार्ग के बीच में स्थित था और वहां पर सिम्पोई के रसद भंडार पर आक्रमण करने की तैयारियां की गई। उस आक्रमण में उनका सामना ६४ वीं पायनियर सेना से जो दो योरोपियन सैनिक अधिकारियों के आधीन थी, हुआ दोनों दलों में 'वावांग' नामक स्थान पर जम कर युद्ध हुआ। दोनों ओर से तोपों की वर्षा से अधिक लम्बे समय तक मार होती रही। विद्रोहियों ने इस युद्ध में सात से दस तक अलग अलग तोपों का प्रयोग किया यह इस बात का प्रमाण है कि विद्रोहियों ने बहुत बड़ी तयारी कर ली थी। ब्रिटिश सेना ने मौम में उसे 'वावांग' पर आक्रमण किया और उसको जला कर भस्म कर दिया। परन्तु फिर भी विद्रोहियों ने अपनी कार्यवाही में कोई शिथिलता नहीं आने दी। जब ब्रिटिश सेना युद्ध स्थल से लौट रही थी तो विद्रोहियों ने उस पर आक्रमण कर दिया और कुछ सैनिक गम्भीर रूप से घायल हो गए। इस आक्रमण में दो काचिन मारे गए।

'नगा कई', पो येमक के धर्म युद्ध का काचिन लोगों में मुख्य प्रचारक था और विद्रोह में जो सफलता मिली थी उसका अधिक श्रेय उसी को था वह अपने को

"हार्मेंगे ग्रोर पो येयक को मिताग' घोषित करता था। 'नगा कँई' की ही सारी योजना थी जिसके परिणाम स्वरूप उस अल्पकालीन विद्रोह में सफलता प्राप्त हुई।

दूसरे अन्य दो प्रमुख विद्रोही और सहायक 'नगा नी' और 'नगा सो येन' थे जो पो येयक की यात्राओं में उसके साथ रहते थे। वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते और अपने उद्देश्य का प्रचार करते। उन्होंने विद्रोह की तैयारी में प्रमुख सक्रिय भाग लिया। पो येयक के साथ रहने से पो येयक 'मिताग' की प्रतिष्ठा और प्रभाव में बहुत वृद्धि हुई थी।

१६१५ में ब्रिटिश सरकार सतर्क हो गई उसने यह अनुभव कर लिया कि 'थावोंग' की घटना सम्राट के विरुद्ध एक बड़े युद्ध की योजना का ही एक भाग है।

अतएव सरकार ने इस अभियोग के लिए एक विशेष सेशन जज नियुक्त किया। मईंतू न्यायालय में अभियोग चला और—(१) नगा पोयमक (२) नगा कँई (३) नगा-नी और (४) नगा सो यौन को अभियुक्त करार दिया गया। एक सितम्बर १६१५ को एक अल्पकालीन अभियोग की सुनवाई के उपरान्त जज ने निर्णय दे दिया और चारों ही अभियुक्तों को फांसी का दंड दे दिया गया।

कामाइंग विद्रोह अभियोग (१६१५)

कार्थिंग विद्रोह के थोड़े दिनों बाद ही कमाइंग विद्रोह अभियोग चला। उस विद्रोह के सम्बन्ध में अधिक कुछ ज्ञात नहीं है। अभियुक्तों पर सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने का गम्भीर आरोप लगाया गया था। उस अभियोग में चारों अभियुक्तों—शानों को प्राण दण्ड दिया गया और २६ सितम्बर १६१५ को अपर बरमा के जुडीशियल कमिश्नर ने उस दण्ड की पुष्टि कर दी। लैफ्टीनेंट गवरनर ने बाधी लकरने पर हस्तक्षेप करना अस्वीकार कर दिया और सभी अभियुक्तों को फांसी दे दी गई।

नामती शान अभियोग (१६१५)

नामती शान अभियोग में तीन अभियुक्त थे। सभी पर सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने का अभियोग चलाया गया। उनको दोषी पाया गया और मृत्यु दण्ड दे दिया गया। उन्होंने लफ्टीनेंट गवरनर को अभियोग पर पुनः विचार करने के लिए याचना पत्र दिया परन्तु लैफ्टीनैंट गवरनर ने २५ सितम्बर १६१५ को उसे अस्वीकार कर दिया।

मांडले षडयन्त्र (१६१५)

जो भारतीय क्रांतिकारी विदेशों में रहते थे उन्होंने बहुत पहले बरमा पर समीपवर्ती देशों से आक्रमण करने की बात सोची थी। यह विचार सोहनलाल को बहुत पसंद आया। सोहनलाल भारत की स्वतन्त्रता के लिए अथक परिश्रम करने वाले एक प्रसिद्ध और पुराने कार्यकर्त्ता थे। उस विचार को मूर्त रूप देने के लिए सोहनलाल प्राणपण से जुट गए। १६१० में वे स्याम में थे और वहां रहने वाले सिक्ख उन्हें बहुत श्रद्धा और आदर से देखते थे। १६११ के आरम्भ में वे लाहौर आए और वहां से वे १६३२ में संयुक्त राज्य अमेरिका चले गए जहां वे १६१४ तक रहे। संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार को भारतीय क्रांतिकारी दल से उनके सम्बन्ध की सूचना मिल गई अतएव उन्हें संयुक्त राज्य अमेरिका छोड़ना पड़ा और उन्होंने 'स्याम' को अपनी गतिविधियों का मुख्य केन्द्र बनाया। इस कार्य में अमरसिंह उनके मुख्य सहायक थे। सोहनलाल वर्ष के अन्त में 'स्याम' वापस आए और आते ही उन्होंने पुराने

मित्रों तथा सहयोगियो से सम्पक स्थापित किया जो गदर के कट्टर समथक थे।

उन्होने बरमा में विद्रोह का सदेश पहुँचाने का दायित्व स्वय अपने ऊपर लिया और इस प्रकार वे इस षडयन्त्र के केन्द्रीय व्यक्ति बन गए। बरमा पहुँचने से पहले उन्होंने अपने दो विश्वासपात्र सहायको को इस उद्देश्य से आगे भेज दिया कि वे एक ऐसे भवन का पता लगावें जिसमें 'गदर के तीथ यात्री' जाकर ठहर सकें और बिना किसी अड़चन के अपनी कायवाही को चुपचाप कर सकें।

सोहन लाल ने पाक्को में क्रान्तिकारियो का एक सम्मेलन बुलाया जिसमे बहुत बडी सख्या में क्रान्तिकारी सम्मिलित हुए थे। उस सम्मेलन मे क्रान्तिकारियो को छाटा गया और उनको विशेष उत्तरदायित्व सौंपे गए। उनमे से एक जिसने अपने को बचाने के लिए आगे चलकर षडयन्त्र अभियोग में सरकारी गवाह बनना स्वीकार कर लिया उसको सोहनलाल ने यूनान तथा छिपिनदिन भेजा जहा जरमन सैनिक अधिकारी दो सौ भारतीयों को जो यथा समय बरमा पर आक्रमण में भाग लेने के इच्छुक थे सनिक प्रशिक्षण दे रहे थे। यह व्यवस्था की गई थी कि सोहनलाल मुजतबा हुसेन और अमर सिंह बरमा पहले चले जाय और वहा उस वृहद् क्रान्ति और विद्रोह की तयारी करें।

वह १९१५ के प्रथम भाग में बरमा आए और उन्होने वहा जो सेनाए पडी थी उनसे सम्पक स्थापित किया। अपने उद्देश्य मे अत्यन्त निष्ठावान होने के कारण तथा इच्छित परिणाम को शीघ्रतापूवक लाने के उत्साह मे सोहनलाल ने सतकता को तिलाजलि दे दी। कभी कभी वह सनिको से खुले में बातचीत करने की भारी जोखिम भी लेता था। वह उन्हें ब्रिटिश शासन की बुराइयो को बताता और ब्रिटिश वरिष्ठ अधिकारियो की अधीनता में भारतीयो की दयनीय तथा लाच्छित अवस्था का भान कराता था।

१४ अगस्त १९१५ को वह एक जमादार और तीन अन्य सनिको हवलदार इत्यादि से मिला वे सभी 'दराजात माऊटेन बटरी' सेना के सैनिक थे जो 'मेमेयो' में पड़ी थी। उसने उनसे अभिवादन किया और पूछा कि भारत के किस भाग के रहने वाले हैं। उनसे भारत के सम्बन्ध म बात करके वह उनका मित्र बन गया। धीरे धीरे उसने अपनी स्थिति उन पर स्पष्ट की और उन्हे यह बतलाया कि ब्रिटिश शासन के कारण भारत की आर्थिक स्थिति कितनी दयनीय हो गई है। उसने उन सनिकों को बतलाया कि देश में ऐसे बहुत से सगठन हैं जो कि देशवासियों के असतोष भडकाने का काय कर रहे हैं और साथ ही अनुकूल अवसर पर खुला युद्ध छेड़ने की तयारी भी कर रहे हैं। भारतीय सनिको के लिए यह उचित है कि उनकी सब प्रकार सहायता करें और उनका पक्ष लें। उन्हें दो प्रकार से विद्रोहियों की सहायता करनी चाहिए। निष्क्रिय रूप मे वे विद्रोहियों की सहायता सरकार द्वारा विद्रोह को दबाने के प्रयत्नो में सहायता न करके कर सकते हैं और सीधे और प्रत्यक्ष रूप में विद्रोहियो के साथ शामिल होकर विद्रोह की सहायता कर सकते हैं।

सोहनलाल प्रतिदिन सनिकों से मिलने जाता था। एक दिन जब कि वह सैनिकों से बात करके गया था एक सनिक ने उसे पकड लिया और वह उन्हे 'मेमेयो' ले आया और अपने आफिसर कमांडिंग के सामने उपस्थित कर दिया। इससे पूव कि सोहनलाल अपने कद करने वालो से छूटने का प्रयत्न करें उसको मजबूती से

पकड लिया गया और उसकी तलाशी ली गई। उसके पास नीचे लिखी वस्तुए मिलीं —

(१) दो कारतूसों से भर ब्राऊनिंग स्वचालित पिस्तौल और कारतूस (२) एक छोटी फटी हुई पुस्तिका जिसका कवर हरे रंग का था और जो आंशिक रूप में अरबी उर्दू और तुर्की में लिखी थी। (३) अरबी भाषा में लिखा हुआ 'फतवा' जिसकी फोटोग्राफ द्वारा प्रतिया निकाली गई थीं उसकी चार प्रतिया। (४) दो पृष्ठों में बम बनाने का फारमूला कुछ रुपए एक घड़ी तथा कुछ अन्य सामग्री।

१४ दिसम्बर १९१५ को माउले में सोहनलाल पर सेशन जज की अदालत में मुकदमा दायर किया गया। उन पर भारत सुरक्षा अधिनियम १९१५ के नियम दो धारा डी तथा भारतीय दंड संहिता (इडियन पेनल-कोड) की धारा १२४ १२४ ए तथा धारा १३१ के अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया। उन पर उत्तेजनापूर्ण समाचार फैलाकर सम्राट के शत्रुओं को सहायता पहुँचाने, राजद्रोह, तथा सैनिकों को राजभक्ति और राज निष्ठा से विमुख करने के आरोप लगाए गए। इसके अतिरिक्त उन पर यह भी आरोप लगाया गया कि सोहनलाल इस प्रकार के वक्तव्य प्रसारित करते थे जिनका उद्देश्य सम्राट की प्रजा के विभिन्न वर्गों में घृणा और शत्रुता उत्पन्न हो। उन्होंने मयमो स्थित माऊंटेन बैटरी में अत्यन्त उत्तेजनापूर्ण सरकार विरोधी साहित्य बाट कर उस सेना के सैनिकों की राजनिष्ठा को भंग किया और सैनिकों को अपने कर्तव्य से विमुख किया।

१५ दिसम्बर १९१५ को अभियुक्त को प्राण दंड की सजा दे दी गई। उनकी अपील ७ जनवरी १९१५ को रद्द कर दी गई। जबकि प्राण दंड की अपील में पुष्टि हो गई तो सोहनलाल के एक मित्र ने उनसे प्रार्थना की कि वे दया की प्रार्थना करें। तो उस क्रांतिकारी वीर ने उत्तेजनापूर्ण स्वर में कहा सरकार अन्यायी और अत्याचारी है— क्षमा याचना उसे करनी चाहिए मुझे नहीं। १० फरवरी १९१६ को सोहनलाल को मांडले जेल में फांसी दे दी गई।

बरमा षडयन्त्र अभियोग (१९१५-१६)

संयुक्त राज्य अमरिका में लिए हुए निश्चय के अनुसार गदर पार्टी के सदस्यों में से अनेक लोग बरमा में विभिन्न मार्गों से विभिन्न समय पर घुसे। अधिकतर लोग स्याम के मार्ग से आए।

१९१५ में पंजाबियों का एक दल जो उच्च शिक्षा प्राप्त थे और जिनकी समाज में ऊंची प्रतिष्ठा थी और जो ऊंचे और उत्तरदायित्व के पदों पर थे बरमा पहुँचा। पहुँचते ही उन क्रांतिकारियों ने अपना कार्य करना आरम्भ कर दिया और उन्होंने रंगून में कई मकान किराए पर ले लिए। उन्होंने बरमा के विभिन्न भागों की ओर खुले रूप में राजद्रोह का प्रचार करना आरम्भ किया। वे सभी प्रकार के बरमी लोगों से मिले विशेषकर उन लोगों से वे बहुत घुल मिल गए जिनकी राष्ट्रीय कार्य के प्रति सहानुभूति थी। वे इस विचार का प्रचार करते थे कि जब भी सम्भव हो हमें विद्रोह खड़ा कर देना चाहिए और बरमा के अन्दर 'गदर' को चोरी छिपे लाने का प्रयत्न करना चाहिए। जब बरमा में पुलिस ने चौकसी बहुत कड़ी कर दी और बाहर से समाचार पत्र तथा साहित्य लाना असम्भव हो गया तो उन्होंने बरमा में ही उसकी प्रतियां निकाल (डुप्लीकेट) कर बांटना आरम्भ कर दिया। कभी कभी वे लोग खुले रूप में विद्रोह करने का प्रचार करते थे और कहते थे विदेशों से धन तथा शस्त्रों की

सहायता और भारत के क्रांतिकारियों से बहुत बड़ी संख्या में क्रांतिकारियों के समर्थन की व्यवस्था पूरी कर ली गई है।

पूर्व तथा बरमा में विशाल क्षेत्रफल में क्रांतिकारी केंद्र स्थापित कर लिए गए थे। यदि कोई गदर पार्टी का सिंगापुर में सदस्य आता था तो वह तुरन्त रंगून के क्रांतिकारियों से सम्पर्क स्थापित कर लेता था। एक अभियुक्त ने विद्रोह के उपरान्त सिंगापुर छोड़ा और फरवरी १९१५ के अन्त में रंगून चला गया। क्रमशः समस्त बरमा और विशेषकर माडले और रंगून पूर्व में क्रान्ति के मुख्य केंद्र बन गए जहां भावी विद्रोह के लिए पूरी और विस्तृत पैमाने पर तैयारियां की गई। अस्त्र शस्त्र गोली बारूद डाइनमाइट तथा अन्य विस्फोटक पदार्थ उतनी राशि में एकत्रित किए गए जितना उन परिस्थितियों में सम्भव था। एक अभियुक्त जिसका सोहनलाल से घनिष्ट और निकट का संबंध था, बरमा में बहुत से अस्त्र शस्त्र तथा अन्य सामग्री लेकर आया जिससे कि ब्रिटिश के विरुद्ध युद्ध छेड़ा जा सके।

जब कि विद्रोह की तैयारियां सम्पन्न पूरी हो चुकी थीं उस समय पुलिस को होने वाले विद्रोह की सूचना मिल गई। पुलिस ने क्रांतिकारी संगठन पर एक साथ धावा बोल दिया और सम्पन्न पंजाबियों को गिरफ्तार कर लिया। कालान्तर में ६ मार्च १९१६ को उन सभी अभियुक्तों को एक विशेष न्यायालय के सामने अभियोग के लिए उपस्थित किया गया।

उन पर सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने का बहुर्चर्चित आरोप तो लगाया ही गया उसके अतिरिक्त विद्रोह की तैयारी करने शत्रु को महत्वपूर्ण जानकारी देने, सैनिक पुलिस की राजनिष्ठा को डिगाने षड्यन्त्र करने तथा राजद्रोह फैलाने के आरोप (१२१, १२१ अ, १२०, १२४ अ डिफेंस आफ इण्डिया कस्सोलीडेशन नियम १९१५ आदि की धाराओं के अन्तर्गत) लगाए गए।

११ जुलाई १९१६ को अभियोग का फैसला सुना दिया गया जिसमें नीचे लिखे सात क्रांतिकारियों को फांसी की सजा दी गई—

(१) हरनाम सिंह, (२) छलियाराम (३) नारायन सिंह, (४) बासवा सिंह (५) नरायन सिंह (६) पालिया सिंह (७) एक अन्य। एक के अतिरिक्त शेष को आजीवन काले पानी देश निकाले की सजा दी गई।

१९ अगस्त १९१६ को स्थानीय सरकार ने एक आज्ञा निकाली, जिसके अनुसार उनकी समस्त सम्पत्ति को जब्त कर लेने की सजा को माफ कर दिया गया हरनाम सिंह छलियाराम और नारायन सिंह ने उनके अभियोगों पर पुनः विचार करने की प्रार्थना ही नहीं की, अतएव उनकी सजा में कमी करने का प्रश्न ही नहीं उठता था। अन्य तीन अभियुक्तों ने दया के लिए प्रार्थना की जो अस्वीकार कर दी गई। सातवें अभियुक्त की प्राणदण्ड की सजा आजीवन काले पानी (देश निकाले) में बदल दी गई। एक अन्य अभियुक्त भाई बसवन्त सिंह ने दया की प्रार्थना की जो अस्वीकार कर दी गई। सभी दंडित अभियुक्तों को बरमा में १६ से २२ अगस्त के मध्य फांसी दे दी गई।

माडले का पूरक अभियोग (१९१५-१७)

गदर आन्दोलन जिसका सूत्रपात और संगठन संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ उसका प्रभाव विशाल क्षेत्र में फैल गया। क्रांतिकारी कार्यकर्ता विदेशों में जहां वहां

भारतीय बर्मा ये इस उद्देश्य से भेजे गए कि जहां भी सम्भव हो विद्रोह खड़ा किया जावे। अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिए सुदूर पूर्व का भू भाग अत्यन्त उपयुक्त समझा गया। लक्ष्य यह था कि अन्तत उसको भारत पर आक्रमण करने की आधार भूमि के रूप में काम में लाया जावेगा।

उन बहु सख्यक क्रान्तिकारियों में से जो समय समय पर बरमा गए उनमें से चार ने यह उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया कि वे विद्रोह की तैयारी के काम को आगे बढ़ावेंगे। इनका नेता मूलच द उपनाम मुजतबा हुसेन था जो जयपुर का रहने वाला था। इसके सहकर्मी लुधियाना के अमरसिंह होशियारपुर के रामरक्खा उपनाम बाहले और उत्तर प्रदेश में फर्रूखाबाद जिले के शाहजहांपुर नामक स्थान के अली अहमद सिद्दीकी थे। इन सभी ने सोहनलाल से सम्पर्क स्थापित कर रक्खा था और व भी अग्रेजों को भारत के तट से निकाल बाहर करने के समान उद्देश्य से कार्य कर रहे थे। मुजतबा हुसेन जिसका तीसरा नाम मुजफ्फर हुसेन भी था ने सुदूर पूर्व के देशों की प्रचारात्मक लम्बी यात्रा की। उन देशों में वह खूब घूमा।

उनके सुदूर पूर्व में भ्रमण के सम्ब ध में उन्होंने जो सिंगापुर से ३० अक्टोबर १९१५ को पत्र लिखा था उससे कुछ प्रकाश पड़ता है। कलकत्ता से वे ३ अक्टोबर को चन्दरनगर गए। पुलिस की आख स बचने के लिए उन्होंने चन्दर नगर से हांग काग तथा पनांग और सिंगापुर के मार्ग से जहाज में प्रथम श्रेणी में यात्रा की। ३ नवम्बर को व जापान की ओर एक अमेरिकन यात्री के साथ अमेरिका जाने के उद्देश्य से चल पड़े। वे वहा तीन वर्ष इस उद्देश्य से रहना चाहते थे कि जिससे वे वहां की नागरिकता के प्रमाण पत्र को प्राप्त करने की योग्यता प्राप्त करलें। इस प्रमाण पत्र को लेकर वे भारत बिना किसी भय के सुरक्षा के साथ वापस लौट सकते थे।

परन्तु उसके पश्चात जो पत्र उन्होंने याकोहामा नागासकी से लिखे उनसे यह प्रगट होता था कि उन्होंने अमेरिका जाने का अपना विचार बदल दिया और वे मैनिला की ओर चले गए। बरमा म क्रान्तिकारी कार्यवाहियों और वहां के आन्दोलन में उनकी इतनी गहरी रुचि उत्पन्न हो गई थी, वे उस आन्दोलन में इतने गहरे पठ गए थे कि वे इसके अतिरिक्त और कुछ सोच ही नहीं सकते थे कि वे इस महा नाटक में अपना पाट अच्छी से अच्छी तरह निभा सकें।

मुजतबा न गदर साहित्य को संयुक्त राज्य अमेरिका से मगाने की व्यवस्था कर रखी थी और वे उस साहित्य को विभिन्न केन्द्रों मे इस प्रकार पहुँचाते थे कि वह साहित्य उन्हीं दरकों में पहुँचता था कि जिनमें भारतीय सनिक रहते थे। गदर साहित्य विशेष रूप से उन भारतीय सैनिक छावनियों में पहुँचाया जाता था जो 'मिन्डानों और उत्तरी बोर्नियों के बीच सम्बावन द्वीप में स्थित थी।

उनके उद्देश्य म बहुत बड़ी सीमा तक सफलता मिली। भारतीय सेना में विद्रोह फूट पड़ा। परन्तु उस सनिक विद्रोह को बड़ी क्रूरता के साथ दबा दिया गया। यह बात उल्लेखनीय और विशेष महत्वपूर्ण है कि मुजतबा हुसेन ने सेना के एक सूबदार को इस बात के लिए तैयार कर लिया कि उसने मोर्चे पर जाने से अस्वीकार कर दिया। अफिसर कमांडिंग ने उस सूबदार का कोर्ट मार्शल किया और उसको गोली से मारे जाने की आज्ञा दे दी। जब सूबेदार

को गोली से मारे जाने की आज्ञा हुई तो उस उसने गम्भीर परिस्थिति का सामना बड़ी वीरता से किया। मानो वह नितान्त उदासीन हो उसके चेहरे पर भय अथवा खेद का कोई चिह्न नहीं था अपने वक्ष में गोली लगने के पहले उसने अपने उन सभी साथियों से जो उस समय वहां उपस्थित थे उनसे शान्त पूर्वक कहा कि वह जिस महान उद्देश्य के लिए मृत्यु को स्वीकार कर रहा है वह उद्देश्य प्रत्येक भारतीय को प्रिय होना चाहिए और आप लोग मेरी मृत्यु का प्रतिशोध ले कर उस उद्देश्य को पूरा करें।

दूसरे ही दिन कमांडिंग आफिसर के अर्दली ने कमांडिंग आफिसर को मार डाला जिसका अवश्यम्भावी परिणाम अर्दली को भुगतना पड़ा। इस सबका परिणाम यह हुआ कि सैनिक नियन्त्रण के बाहर हो गए उनमें तीव्र असंतोष फूट पड़ा उ होने जेल को तोड़ कर बहुत से बंदियों को मुक्त कर दिया। उन दिनों क्रांतिकारियों के प्रचार के कारण सेना में अनुशासनहीनता की घटनाएं आए दिन होने लगी थी। उक्त घटना विशेष इस बात का प्रमाण थी कि सोहनलाल मुजतबा हुसेन और उनके साथियों का उन सैनिकों पर गहरा प्रभाव था जिनसे वे सम्पर्क स्थापित करने में सफल हो गए थे।

अमरसिंह स्याम का रहने वाला था और स्याम का नागरिक था वह भी मुजतबा हुसेन का निकट सहयोगी बन गया था। रामरक्खा बम निर्माण करने के लिए आवश्यक सामग्री को इकट्ठा करने का कार्य करता था। वह उक्त सामग्री को बंगकाक से प्राप्त करता था जहां वह उपलब्ध थी। जब सिंगापुर में विद्रोह भड़क उठा उस समय वह वहां उपस्थित नहीं था। वह उस घटना के कुछ दिनों बाद सिंगापुर पहुंचा उसका विश्वास था कि जब विद्रोह आरम्भ हो जावेगा तो जरमनी की सहायता पहुंचने में देर नहीं लगेगी। रंगून में यह निश्चय किया गया था कि विद्रोह बकरीद १९१५ के दिन आरम्भ किया जावेगा। परन्तु उस योजना को इसलिए छोड़ना पड़ा क्योंकि उस समय तक अस्त्र शस्त्रों की कमी थी यथेष्ट अस्त्र इकट्ठे नहीं हो पाए थे विद्रोह आरम्भ करने का महूर्त बड़े दिन के लिए स्थगित कर दिया गया जो फिर कभी नहीं आया।

प्रथम मांडले षडयन्त्र अभियोग के सम्बन्ध में मिली हुई जानकारी के आधार पर पुलिस ने विभिन्न समय पर सारे क्रांतिकारियों को गिरफ्तार कर लिया। लोग एक दूसरे से बहुत दूरी पर नहीं पकड़े गए। उनको गिरफ्तार कर पुलिस ने पूरा मांडले षडयन्त्र अभियोग १९१७ में चलाया। अभियोग मांडले में २८ मार्च को आरम्भ हुआ। अभियुक्तों पर सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने षडयन्त्र करने, सेना को राजभक्ति को डिगाने का प्रयत्न करने इत्यादि आरोप लगाए गए। गवाहियों में संयुक्त राज्य अमेरिका में गदर पार्टी के कार्यों के संबंध में विस्तार से साक्षी दी गई। उन गवाहों ने विद्रोह में जरमनी का सहयोग जरमनी से मिलने वाली सहायता विद्रोहियों का भारतीय विद्रोहियों से सम्बन्ध तथा अभियुक्तों की व्यक्तिगत जिम्मेदारी सभी विषयों पर साक्षी दी।

६ जुलाई १९१७ को फैसला सुनाया गया। (क) मुजतबा हुसेन उपनाम मूलचन्द उपनाम मुहम्मद जफर जयपुर का। (ख) लुधियाने का अमरसिंह (ग) फैजाबाद जिले (उत्तर प्रदेश) के शहजादपुर के अली अहमद सिद्दीकी तीनों को प्राण दण्ड की सजा दी गई। (घ) रामरक्खा उपनाम बाहले— होशियारपुर को आजीवन कालापानी

देश निकाले का दण्ड दिया गया। अभियुक्तों की समस्त सम्पत्ति राज्य द्वारा जब्त कर लेने का आदेश था।

अभियुक्तों द्वारा अपील करने पर लफ्टीनेन्ट गवरनर ने मुकदमे पर पुनर्विचार का फसले की पुष्टि करनी। केवल सम्पत्ति को जब्त करने की आज्ञा का संशोधन कर दिया, उसे रद्द कर दिया। ७ सितम्बर १९१७ को रगून के प्रेस नोट में यह घोषणा की गई कि प्रत्येक अभियुक्त के प्राण दण्ड की सजा को आजीवन कालेपानी देश निकाले में परिवर्तित कर दिया गया है।

रामरक्खा को अपनी सजा भुगतने के लिए अडमन सैल्यूलर जेल भेजा गया। अडमन सैल्यूलर जेल में उसका जेल के अधिकारियों से संघर्ष हो गया। उसने वहां की अपमानजनक परिस्थितियों को सहन करने से इनकार कर दिया और उसने उस अमानवीय व्यवहार का दृढ़ता से विरोध किया, जो वहां बंदियों के साथ किया जाता था। उसको जेल अधिकारियों की आज्ञा न मानने पर निर्दयतापूर्वक पीटा गया। उसके विरोध में उसने आमरण अनशन किया। मरने से पूर्व उसको खून की कै होने लगी थी परन्तु जेल के अधिकारी उसको जीवित रखने के लिए उसके गले के नीचे कुछ भी न उतार सके, १९१९ में उसकी मृत्यु हो गई।

सच पूछा जावे तो उपरोक्त घटना इस पुस्तक की योजना के अन्तगत नहीं आती, क्योंकि सभी अभियुक्तों को आजीवन कालापानी हुआ वे मृत्यु से बच गए। परन्तु सुदूरपूर्व में विद्रोह के इतिहास में इस महत्वपूर्ण अध्याय छोड़ देना, इस अपवाद से जो विशेष परिस्थितियों में किया गया है अधिक अक्षम्य होता।

इस संबंध में यह बताना आवश्यक है कि वायसराय द्वारा सबसे महत्वपूर्ण प्रविलम्बन जो कि उन्होंने प्रदान किया वह मुख्य लाहौर षडयन्त्र अभियोग में किया वह मुख्य लाहौर षडयन्त्र अभियोग में किया था। १३ सितम्बर १९१५ को २४ व्यक्तियों को प्राणदण्ड की सजा दी गई थी। वायसराय से प्रार्थना की गई और १४ नवम्बर को घोषणा की गई कि सात व्यक्तियों को छोड़ कर शेष सत्रह (१) बलवन्तसिंह, (२) हरनाम सिंह (३) जगत राम–होशियारपुर, (४) हिरदा राम, (५) कालासिंह अमृतसर (६) केहर सिंह अमृतसर (७) खसान सिंह छुगा, (८) नन्द सिंह–लुधियाना (९) निधान सिंह फीरोजपुर (१०) पृथ्वीसिंह लुधियाना (११) परमानन्द (१२) रामसरन दास (१३) रूलासिंह भाकना (१४) स्वान सिंह अमृतसर (१५) बसवासिंह (१६) भाई परमानन्द झांसी (१७) सोहन सिंह अमृतसर के प्राण दण्ड को आजीवन काले पानी (अडमन) देश निकाले में परिवर्तित कर दिया गया।

पांचवी देशी लाइट इन्फैन्ट्री का विद्रोह (१९१५)

प्रथम विश्व महायुद्ध के समय १९१५ में सिंगापुर में स्थित पांचवी देशी लाइट इन्फैन्ट्री का विद्रोह सबसे अधिक घातक विद्रोह था जिसका अंग्रेजों को सामना करना पड़ा।

सोहनलाल तथा अन्य क्रान्तिकारियों द्वारा प्रेरणा पाकर कुछ क्रान्तिकारी सेना में क्षोभ और असंतोष के बीज बोने में सफल हो गए। उस सेना में कुछ असंतोष पहले से ही इस कारण था कि उसमें लोगों की मनमाने ढंग से पदोन्नति कर दी गई थी और उस सेना को अविवेकपूर्ण ढंग से विभिन्न स्थानों पर भेजा गया था। जबकि इस रेजीमेंट को जिसकी संख्या ८०० सैनिक थी, उसको हांगकांग

जाने के लिए तैयार होने की आज्ञा दी गई तो असंतोष की जो अग्नि धीरे धीरे सुलग रही थी ज्वाला में भभक उठी और उन्होंने आज्ञा मानने से खुले रूप में इन्कार कर दिया।

सैनिक अधिकारियों को इस विद्रोह की कल्पना भी नहीं थी वे आश्चर्य चकित रह गए। उनकी गुप्तचर प्रणाली निकम्मी प्रमाणित हुई। वह उस विद्रोह के सम्बन्ध में तनिक भी पूर्व जानकारी प्राप्त करने में असफल रही। बिना किसी अग्रिम सूचना के विद्रोह १५ फरवरी १९१५ को तीन बजे तीसरे पहर फूट पड़ा। वह चीनियों के वर्षारम्भ का दिन था। विद्रोह ने तुरन्त ही गम्भीर रूप धारण कर लिया। विद्रोहियों ने समस्त सेना को प्रभावित करने का प्रयत्न किया और उसमें से कुछ सैनिक जो निष्ठावान थे उन्होंने विद्रोह में सम्मिलित होना अस्वीकार कर दिया उनको विद्रोहियों ने गोली मार दी अथवा उनको आज्ञा दी कि वे उनकी कार्यवाही में कोई हस्तक्षेप न करें।

उन क्रान्तिकारियों की राय में जो विद्रोह कराने के लिए उत्तरदायी थे विद्रोहियों ने पूर्व निश्चित योजना के अनुसार जरमन बन्दी शिविर पर पहरा देने वाले गार्ड्स और संतरियों पर गोली चलाना आरम्भ कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि जो संतरी मारे नहीं गए अथवा जख्मी नहीं हो गए वे भाग खड़े हुए और जरमन कैदियों को निकल भागने का अच्छा और सुगम अवसर मिल गया। इसके उपरान्त विद्रोही सैनिक नगर की ओर चले। विद्रोही सैनिक जिस मार्ग से गए उस पर पड़ने वाले मकानों को उन्होंने लूट लिया और उनमें आग लगा दी। उन्होंने आफिसर कमांडिंग के मकान को घेर लिया जिसके साथ अलक्जेंड्रिया बरकों में और ऊंचे सैनिक अधिकारी भी थे। सहायता का कार्य केवल उन रूसी सैनिकों से आरम्भ किया गया कि जो एक ब्रिटिश जहाज में बंदरगाह में प्रतीक्षा कर रहे थे।

अधिक कुछ विरोध न होने के कारण विद्रोही सैनिक गोल्फ क्लब के मैदान की ओर बढ़े और जो लोग वहां थे उन पर अंधा धुंध गोली चलाई जिससे वहां सबसे अधिक संख्या में नागरिक मारे गये।

१६ फरवरी के पूरे दिन भर गोली चलती रही। १६ की रात्रि को भीषण गोली वर्षा हुई। १७ फरवरी को विद्रोही सैनिक नगर के समीपवर्ती समस्त ग्रामीण क्षेत्र में फैल गए और विभिन्न दिशाओं और स्थानों से गोली चलने की आवाज सुनाई देती रही। उनमें से कुछ विद्रोही मुख्य व्यापारिक प्रदेश में घुस गए जिसके कारण अधिकारियों के समक्ष गम्भीर समस्या उठ खड़ी हुई। १९ फरवरी को पांच बजे सायंकाल एक जहाज से आई सैनिक टुकड़ी पर अलक्जेंड्रिया रोड के पूर्व में स्थित चीनी ग्राम की एक झोंपड़ी से भयंकर गोली वर्षा हुई। उसका उत्तर सहायता के लिए आई हुई कुमुक ने भयंकर गोली वर्षा करके दिया।

२० फरवरी तक बुकनैंडस के समीप युद्ध चलता रहा जहां ४ बजे सायंकाल दो रूसी जहाजी नाविक (सेलर) घायल हो गए। चार विद्रोही सैनिकों ने जो कि शस्त्रों से सुसज्जित थे रूसी सैनिक टुकड़ी पर जो कि विद्रोहियों की खोज में एक निश्चित स्थान पर जा रही थी गोली वर्षा प्रारम्भ करदी। ऐसा अनुमान किया जाता है कि सायंकाल साढ़े सात बजे रूसी सैनिक चौकी पर जिन विद्रोहियों ने आक्रमण किया उनकी संख्या आठ थी। उन विद्रोहियों ने रूसी सैनिकों को उस स्थान से

डलैंड्स की ओर जो कि वहां से पन्द्रह मील पर था वापस लौटने पर विवश कर दिया। एक ग्रत्लास के बगीचे से भी फुटकर गोली वर्षा हुई जिसमें दो रूसी सैनिक घायल हो गए।

२१ फरवरी को दो आक्रमणकारियों को गोली से मार दिया गया। उनमें से एक पांचवीं लाइट इन्फेंटरी का देशी अफसर था और दूसरा एन सी ओ था।

स्थिति कितनी गम्भीर हो गई थी उसकी कल्पना तो उस सेना से की जा सकती है जो उस विद्रोह को दबाने के लिए इकट्ठी की गई थी। स्थानीय सैनिकों के अतिरिक्त नागरिक सशस्त्र पुलिस, सुल्तान ऑफ लाहौर के सैनिक भी थे (जो विशेष रूप से इन विद्रोहियों का सामना करने के काम में लाए गए जो कि देश के भीतरी भाग में घुस गए थे। जो युद्ध के सैनिक बंदरगाह में महायुद्ध की प्रथम अवस्था में तैनात थे उनसे भी विद्रोह को दबाने में सहायता ली गई। अल्पकाल में ही फ्रांस, जापानी, और रूसी युद्धपोत वहां पहुँच गए और उन्होंने बड़ी संख्या में सैनिक टुकड़ियों को वहां उतार दिया। ये सैनिक भी अन्य सैनिकों के साथ विद्रोहियों को पकड़ने में सहायता देने लगे। यहीं नहीं विभिन्न स्वयं सेवक तथा कांस्टेबिल इसी काय के लिए विशेष रूप से भर्ती किए गए। दो सौ जापानी स्वयं सेवकों को इस काय के लिए नियुक्त किया गया। छत्तीसवीं सिक्ख रजीमेंट की टुकड़िया तथा मलाया स्टेट्स वालटियर राइफल्स के बियासी सैनिकों को इस काय में लगाया गया।

स्त्रियों और बच्चों को जानसन पियर से हटा कर उन्हें जहाजों में भेज दिया गया वहां लांच तैयार थी कि यदि आवश्यकता पड़े तो उनको युद्ध पोतों पर ले जाया जा सके।

मार्शल ला घोषित कर दिया गया और लोगों को चेतावनी दी गई कि यदि कोई भी व्यक्ति अन्यों से मिलकर अथवा संकेत अथवा अन्य प्रकार से ऐसे समाचार फैलायेगा जिनसे जनता में आतंक भय और निराशा फैले तो उसे कठोर दण्ड दिया जावेगा। यह चेतावनी की आज्ञा २० फरवरी १९१५ को निकाली गई। विद्रोह को अत्यन्त कठोरता से दबाया गया और जो सत्रह जरमन बंदी निकल भागे थे उनमें से अधिकांश को फिर से पकड़ लिया गया। विद्रोहियों तथा सेना से भागने वालों के विरुद्ध कोर्ट-मार्शल की कार्यवाही की गई। उन पर विद्रोह में सम्मिलित होने तथा रजीमेंट के अन्य सैनिकों से मिल कर वरिष्ठ अधिकारियों की आज्ञा की अवहेलना करने तथा उनके विरुद्ध हिंसात्मक कार्यवाही करने तथा विद्रोहियों को गोली बारूद देने का आरोप लगाया गया।

६ मार्च १९१५ को तीन (एक दूसरी रिपोर्ट के अनुसार ६) विद्रोहियों को कोर्ट मार्शल ने गोली से मार देने का फैसला किया। वह फैसला एक मार्च को जेल के बाहर मुख्य फाटक पर आठ बजे प्रातःकाल पढ़ कर सुनाया गया। उस समय वहां स्थानीय लोग बड़ी संख्या में एकत्रित थे।

८ मार्च को प्रातःकाल तीनों को गोली मार कर हत्या करदी गई। (क) रसूलाह जिस पर कैप्टेन इजार्ड की हत्या का आरोप था। (ख) इम्तियाज अली जो १५ फरवरी को अपने अधिकार का उपयोग करने में असफल रहा तथा अपनी रजीमेंट के सैनिकों को बन्दूकों तथा गोली बारूद के स्टोर के तालों को तोड़ कर ऐम्युनिशन निकालने में सहायता दी जिसका विद्रोहियों ने उपयोग किया तथा भी उनका दिया था।

(ग) रहमतउद्दीन जिसने विप्लवियों को शस्त्र तथा कारतूस आदि देने में सहायता पहुँचाई और अपनी रेजीमेंट के उस आदमी को गोली मार देने की धमकी दी जो उस स्थान से चला नहीं जावेगा जिससे कि विप्लवियों का आन्दोलन प्रभावशाली तथा सरल बन सके।

गोली से मार कर तीनों की हत्या करने की सजा जेल की दीवार के बाहर जनता की उपस्थिति में दी गई जिसके लिए यथेष्ट व्यवस्था की गई थी। १३ मार्च १९१५ को पांचवीं लाइट-इन्फेंटरी के पैंतालीस व्यक्तियों पर तीसरी पुलिस कोर्ट सिंगापुर में मुकदमा चलाया गया उनमें चार एन सी ओ थे, उनके नाम थे—

(१) लांस हवलदार— सुलेमान (२) नायक—मुशीखां (३) नायक जफर अली और (४) लैंस नायक- अब्दुल रज़ाक खां।

'उन्होंने विप्लव में सम्मिलित होकर तथा अन्य विप्लवियों से मिलकर अपने वरिष्ठ अधिकारियों की आज्ञा की अवहेलना कर तथा उनके विरुद्ध हिंसात्मक कार्यवाही की और जब उनसे आत्मसमर्पण करने को कहा गया तो आत्म समर्पण करने से इनकार कर दिया और उन्होंने सम्राट की सेना पर गोली चलाने के उद्देश्य से अपनी राइफिलों में गोलियां भरीं। उनके विरुद्ध अभियोग चलाने वाले अधिकारी ने कानून के अन्तर्गत जो चरम दंड हो उसकी मांग की।

समान रूप से उन्हीं आरोपों पर सात सिक्खों के विरुद्ध अभियोग चलाया गया। वे सात थे थे — (१) भगत सिंह (२) अन्तर सिंह (३) तमार सिंह (४) रुलाह सिंह (५) हजारा सिंह (६) तामार सिंह (७) वीर सिंह उनमें से रुलाह सिंह के सम्बन्ध में तो निश्चित रूप से मालूम है कि उनको गोली से उड़ा दिया गया। शेष का भविष्य भी वही हुआ होगा यद्यपि उनके सबंध में कोई लेख नहीं मिला।

२२ मार्च १९१५ तक उन लोगों को छोड़ कर जिन्हें गोली से मार दिया गया अथवा फांसी पर चढ़ा दिया गया, साठ सैनिक या तो युद्ध में मारे गए अथवा डूब कर मर गए। नागरिकों में तैंतालीस नागरिक मारे गए और उन्नीस जख्मी हो गए।

एक अत्यन्त धनी व्यक्ति जिसका राजनीति से कुछ लेना देना नहीं था वह भी उस तीव्र देश भक्ति की भावना से नहीं बच सका जो प्रथम विश्व युद्ध के समय सुदूर पूर्व में प्रबल थी। १९१४ के अंतिम दिनों में सिंगापुर के एक प्रसिद्ध व्यापारी परिवार के श्री कासिम इस्माइल मंसूर का सम्पर्क रंगून स्थित भारतीय सेनाओं से हुआ। उसने अपने देशवासी सैनिकों को आवश्यक वस्तुएं देने तथा उनके आने जाने के लिए सुविधाएं देने की बात सोची।

अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने शत्रु के एजेन्टों से जो बरमा में थे पत्रों द्वारा सम्पर्क स्थापित किया। उस प्रकार का एक पत्र जो २८ दिसम्बर १९१४ का लिखा हुआ था रंगून में जरमन कौंसिल को लिखा गया था। पत्र लिखने का उद्देश्य उसके साधनों की सहायता से दो समुद्री जहाजों को भारतीय सैनिकों को सिंगापुर से ले जाने के लिए प्राप्त करना था।

वह पत्र पकड़ा गया और मंसूर पर ग्यारह आरोप लगाए गए। नौ आरोप अभिद्रोह के थे दसवां शत्रु को सैनिक जानकारी देने का था और ग्यारहवां सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने का था। यह आरोप ३ मई १९१५ को फील्ड कोर्ट मार्शल के सामने अभियुक्त मंसूर पर लगाए गए। तत्कालीन वातावरण तथा हिंसात्मक प्रतिशोध की भावना

के अनुकूल कोर्ट मार्शल ने एक सुनवाई में ही अभियुक्त को फांसी की सजा दे दी।

बाहरी दुनिया को कुछ भी मालूम नहीं हुआ। एक धनी व्यापारी जो यदि चाहता तो आराम से भोग विलास का जीवन व्यतीत कर सकता था उसने अपने देश के लिए फांसी के तख्ते पर मृत्यु को अंगीकार किया।

[एक दूसरी न्यूज एजेंसी की रिपोर्ट २१ मई १९१५ की यह है " अभियोग के कुछ दिनों बाद जो कि फील्ड जनरल कोर्ट मार्शल ने गुप्त रूप से सुना था— वह जनता के सामने पढ़ कर सुनाया गया और जनता के सामने ही सजा दी गई।" अमृत बाजार पत्रिका २२ मई, १९१५]

मार्ग से बहुत दूर (१९१५)

बहुत से लोग ऐसे थे जो कि राजनीतिक कार्यकर्ता या क्रान्तिकारी नहीं थे परन्तु उन्होंने अपने मार्ग से हट कर स्वतन्त्रता के कार्य में सहायता पहुँचाई और अपने प्राणों को देश के लिए उत्सर्ग कर दिया।

श्याम में 'पाकोह' के इंजिनियर श्री अमरसिंह ने 'हेनरी यस समुद्री जहाज द्वारा ले जाए जाने वाले अस्त्र शस्त्रों के एक भाग को अपने पास गुप्त रूप से छिपा कर रखने और ले जाने का खतरे से भरा उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर लिया उनका नाम उस सूची में था, जो उस व्यक्ति के पास से मिली जो उनमें से एक व्यक्ति था, जो जरमनी से भारतीय क्रांतिकारियों के लिए भेजे जाने वाले अस्त्र शस्त्रों को ले जाता था। वह पकड़ा गया और उसके पास मिली सूची में अमर सिंह का नाम था। उस सूची से मिली हुई जानकारी के आधार पर श्री अमर सिंह को पकड़ लिया गया उन पर अभियोग चला और उन्हें प्राण दण्ड की सजा दे दी गई। किसी समय १९१५ में उनको माइले जेल में फांसी दे दी गई। (सदन सैडशिन कमेटी रिपोर्ट १९१८ पृष्ठ १२५)

माले स्टेट गाइड्स (१९१५)

ऐसा था एक दूसरा भाग ' माले स्टेट गाइड्स ' जो सुदूर पूर्व में स्थित था। वह भी ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध विद्रोह में उठ खड़ा हुआ। वह विद्रोह उतना विस्तृत और भयावह नहीं था जितना कि पांचवीं लाइट इन्फेंट्री द्वारा खड़ा किया गया विद्रोह खतरनाक और प्रबल था। परन्तु यह विद्रोह भी उस विद्रोह के साथ ही उठ खड़ा हुआ इससे स्थिति अत्यन्त गम्भीर और भयावह हो उठी। गाइड्स को आज्ञा दी गई कि वे उन विभिन्न सेनाओं की सहायता करें जो विद्रोह को दबाने में लगी हुई थीं परन्तु उन्होंने विद्रोह को दबाने में सहायक होने से इनकार कर दिया वरन उनमें से कुछ विद्रोह में सम्मिलित हो गए। उन्होंने अपने वरिष्ठ अधिकारियों की आज्ञा मानने से इनकार कर दिया और जब उनको आत्म समर्पण करने के लिए कहा गया तो उन्होंने आत्म समर्पण भी नहीं किया। इसके अतिरिक्त उन पर विप्लव भड़काने तथा विप्लव में स्वयं सम्मिलित होने का भी आरोप लगाया गया।

कोर्ट मार्शल के समक्ष उनमें से कुछ का तथा पांचवीं लाइट इन्फेंट्री के कुछ विद्रोहियों का साथ साथ मुकदमा हुआ और नीचे लिखे पांच विद्रोहियों को गोली मार कर मृत्यु दण्ड की सजा दी गई।

(1) सूबेदार डन्डे (डुडो) खां (२) जमादार चिश्तीखां (३) १८९० हवलदार रहमत अली (हलवारा—लुधियाना के) (४) २३११ सिपाही हाकिम अली और (५) २१८४ हवलदार अब्दुल गनी।

२१ मार्च १९१५ को अपार जन समूह के सामने सिंगापुर जेल की दीवारों के बाहर पुराने फांसी देने के स्थान पर समस्त सेना तथा वालंटियरों ने पूरी संख्या में परेड की। उन लोगों को अभी हाल के कोर्ट मार्शल के द्वारा दिए दण्ड को जो दोषी सैनिकों तथा अधिकारियों को दिया जाने वाला था उस उत्सव को दिखाने के लिए बुलाया गया था।

उनके अपराधों और उसकी सजा को उन बंदियों को पढ़ कर सुनाया गया। दोषी बंदी पत्थर की शिला के समान दृढ़ता से खड़े थे। उसके उपरांत उन दोषी बंदियों के हाथ पीठ के पीछे बांध दिए गए और उनको वध-स्थल तक जेल के बाहरों के कड़े पहरे में मार्च कराया गया। वहां गोली मारने वाला दल जो 'रायल गरिसन आर्टीलरी और रायल इन्जीनियर्स सेना का था, पहले से उनको गोली मार कर मारने के लिए तैनात था।

उनके विरुद्ध प्राण दण्ड की सजा की विधिवत घोषणा की गई। गोली चलाने वाले दल के कमांडिंग आफिसर ने तलवार ऊपर उठाई 'रैडी' (तैयार हो) कहा। रैडी की आज्ञा देते ही गोली चलाने वाले दल ने शीघ्रता से एक के बाद दूसरी गोली अपनी राइफिलों में भर ली उसके उपरान्त अधिकारी ने प्रेजेंट (उपस्थित हो) फायर (दागो) की आज्ञा दी। एक साथ गोलियां दागी गई।

जिन अभियुक्तों को मृत्यु दण्ड दिया गया था वे गिर गए और इस प्रकार न्याय पूरा हुआ। न्याय के नाटक का पटाक्षेप हो गया। उन विदेशियों के जो बल पूर्वक भारत को दास बनाए हुए थे और जिसका भारतीय विरोध करते उनके अनुसार देश भक्तों को इस प्रकार मार देना ही न्याय था। सत्रह दूसरे अपराधियों को खाई की दूसरी ओर खड़ा किया गया। प्रत्येक को खम्भे से अलग अलग बांध दिया गया था। एक सौ सशस्त्र सेना के सैनिक जिनमें से आधे सीधे तन कर खड़े हुए थे और आधे अपने एक घुटने पर आराम कर रहे थे। सब औपचारिकता समाप्त हो जाने के उपरान्त उन्होंने एक सौ राइफिलें दोषियों की ओर तान दी निशाना लिया और तब उनको दो बार गोली दागने की आज्ञा दी गई। गोलियों की प्रथम बौछार बाढ़ ने सभी सत्रह वीरों को मार दिया। गोलियों की दूसरी बाढ़ इसलिए दागी गई कि यह निश्चय हो जावे कि पहली गोली से कोई बच न गया हो। (संदर्भ पी चक्रवर्ती से मुंगेर अन्वेषण पथ पृष्ठ ८५)

असीम निर्दयता (१९१५-१६)

एक अभागा युवक घडी चरन नाम मई १९१३ में नौकरी की खोज में सपाताला हाजीगंज तिपरा से बरमा पहुंचा। उसको पीगू सर्किल के कन्जरवेटर आफ फॉरेस्ट के कार्यालय में नौकरी मिल गई। वह रंगून की लाइस स्ट्रीट के ६८ नम्बर के मकान में रहता था।

बरमा सरकार ने ५ अक्टोबर १९१५ को घडी चरन को 'भारत में प्रवेश अध्यादेश के अन्तर्गत बन्द कर लिया और उसे रंगून सन्ट्रल जेल में रखा गया। दिसम्बर १९१५ को उसको टाईफाइड ज्वर का आक्रमण हुआ और उसके जीवन की कोई आशा नहीं रही। उसकी गिरफ्तारी के बाद उस युवक के अभागे पिता ने कई स्मृति पत्र अपने पुत्र के बारे में यह जानने के लिए भेजे कि वह कहां है और कैसा है परन्तु कोई उत्तर उसे नहीं मिला। उन स्मृति पत्रों के उत्तर में प्रथम बार १८ फरवरी, १९१६ को

उसको इस आशय का उत्तर मिला " उनका पुत्र एक समय रंगून जेल में ज्वर से पीड़ित था परन्तु अब स्वास्थ्य लाभ कर रहा है और यदि कोई अनहोनी परिस्थिति उत्पन्न न हो तो उसके पूर्ण स्वस्थ हो जाने की आशा है। पिता को अपने पुत्र से साक्षात्कार करने की स्वीकृति देने से इनकार कर दिया गया।

(पायनियर १३ जून १९१७)

उसी समय बंगाल सरकार ने गोपनीय रूप से पूछा कि क्या उस नजरबंद युवक को कलकत्ता भेजा जा सकता है? उसके उत्तर में २४ फरवरी १९१९ को बरमा सरकार ने लिखा ' कि उसको क्षय रोग होने का संदेह है।" १ मार्च १९१९ को बंगाल सरकार ने अपनी यह इच्छा प्रकट की कि उस बंदी को कलकत्ता भेज दिया जावे।

७ मार्च १९१९ को बरमा सरकार ने चण्डी चरन के पिता को सूचित किया कि उनके पुत्र चण्डी चरन को शीघ्र ही रंगून सेंट्रल जेल से मुक्त कर कलकत्ता भेज दिया जावेगा। ११ मार्च को चण्डी चरन को जेल से मुक्त कर दिया गया और दूसरे ही दिन वह स्वास्थ्य की अत्यन्त खतरनाक दशा में अस्पताल में प्रविष्ट किया गया।

२१ एप्रिल १९१९ को एकाएक पुलिस ने चण्डी चरन को अस्पताल से निकाल कर एक स्टीमर पर सवार करा दिया जो कलकत्ता जाने वाला था। उसके लिए यह आज्ञा हुई कि उसे अपने पैतृक ग्राम में नजरबंद कर दिया जावे। वह अपनी नजरबन्दी के स्थान पर ३० एप्रिल १९१९ को पहुँचा।

अत्यन्त अस्वास्थ्यकर और अरुचिकर स्थान में ६ मास तक नजरबन्द रहने के उपरान्त २७ अक्टूबर १९१९ को एक आज्ञा निकाली गई कि वह जहाँ चाहे रहने के लिए स्वतन्त्र है। जब चण्डी चरन को स्वतन्त्र किया गया तब बहुत देर हो चुकी थी। उसका ६ मास तक कोई उचित उपचार नहीं हुआ था। यदि यह कहा जावे तो सत्य के अधिक निकट होगा कि नाम मात्र को भी कोई उपचार नहीं हुआ था। आर्थिक साधनों के अभाव में उसके पिता उसे किसी स्वास्थ्यप्रद स्थान पर भी नहीं भेज सके। परिणाम यह हुआ कि वह अभागा युवक २१ जनवरी १९२७ को प्रात काल ११ ३० पर स्वर्ग सिधार गया। उसकी मृत्यु से उदार ब्रिटिश सरकार को एक झंझट से छुटकारा मिल गया। जिसने अपनी हृदयहीनता और असीम निर्दयता का परिचय देकर एक उपयोगी जीवन का असमय में ही अंत कर डाला।

अच्छा जोड़ मिला (१९१५–१७)

यदि भारत सरकार सुदूर पूर्व में भारतीय राष्ट्र भक्तों के बीच अपने भेदिए तथा एजेंटों को गुप्त रूप से जमाने में सफल हुई तो बहुधा इन भेदियों और एजेंटों का क्रांतिकारियों को पता चल जाता था और उनको क्रांतिकारी उचित दंड देते थे।

यह केवल अवसर न मिलने के कारण था कि इस प्रकार की अधिक हत्याएं नहीं हो पाती थी। अन्यथा ऐसे साहसी क्रांतिकारियों की कोई कमी नहीं थी जो अपने प्राणों की परवाह न कर उन भेदियों को जब भी अवसर मिलता यमलोक पहुंचाने का प्रयत्न करते।

१९१५ में भारत सरकार ने सुदूर पूर्व में रहने वाले भारतीयों की मनोवृत्ति की जांच करने के लिए जिस उच्च अधिकारी को भेजा उसने जो गोपनीय रिपोर्ट दी

उसमें उसने लिखा "यह खेदजनक किंतु सत्य है कि सुदूर पूर्व में बसाने वाले भारतीय अधिकांश में पूर्ण रूप से सरकार विरोधी हैं उनमें तनिक भी राजभक्ति नहीं है।" उस अधिकारी ने हरनाम सिंह नामक एक कुशल और क्षमतावान व्यक्ति को चुना जो कि श्याम में भारतीय क्रांतिकारी षड्यन्त्र के सम्बन्ध में जांच कर रहा था। वह इस सम्बन्ध में बहुत उपयोगी कार्य कर रहा था जबकि विरोधी शिविर का एक व्यक्ति जिसका नाम आत्माराम था उसके भाग में आया और उसने समस्त घटनाक्रम को ही बदल दिया।

आत्माराम अत्यन्त मेधावी चतुर और क्रियाशील व्यक्ति था। उसकी चतुराई और दक्षता के कारण वह बैंकाक स्थित जरमन लिगेशन के अनुग्रह को प्राप्त करने में सफल हो गया। यहां यह बतला देना आवश्यक है कि आत्माराम ही क्रांतिकारियों को संदेश भेजता था कि जरमनी से अस्त्र शस्त्र भारत भेजे जा रहे हैं और वही जहाज से अस्त्र शस्त्रों के उतारने की व्यवस्था करता था।

उस समय भारतीय क्रान्तिकारियों की गतिविधियां श्याम में बहुत बढ़ गई थीं उससे श्याम की सरकार बहुत सशंकित हो उठी। श्याम की सरकार उसकी कार्यवाहियों पर प्रतिबंध लगाने अथवा उसे देश से निकाल बाहर करने के लिए क्या कदम उठाए जावें कि इस पर गम्भीरता से सोचने लगी। इससे पहले कि श्याम सरकार उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही कर पाती आत्माराम अपने हैडक्वाटर को श्याम से हटाकर नार्नहिग ले गए।

श्याम देश की भूमि से हटने के पूर्व आत्माराम ने एक अत्यन्त साहसपूर्ण कार्य किया। उसने हरनाम सिंह की हत्या करदी। इस पर उसको ब्रिटिश एजेंटों ने पकड़ लिया और अम्बाई ले जाया गया। अभियोग चला उसमें आत्माराम ने हरनामसिंह को मारने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया। न्यायालय के समक्ष बयान देते हुए आत्मा राम ने कहा कि हरनामसिंह का मैंने इस कारण वध किया क्योंकि मैं उसे अपने देश का शत्रु मानता था।

उस साहसी भावना प्रधान देशभक्त युवक को २ जून १९१७ को फांसी दे दी गई।



छठा अध्याय

संघर्ष गहन हो गया (१९२४–३०)

प्रामुख

महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन के द्वारा जो देश में अपेक्षाकृत निष्क्रिय शान्ति छा गई थी वह क्रमशः तिरोहित होती गई और भारत के क्रांतिकारी दल ने विशेषकर उत्तर भारत में अगले दो दशाब्दों में पुनः क्रांतिकारी कार्यवाही के चिन्ह प्रगट करने प्रारम्भ कर दिए। यह एक कविता की स्मृति दिलाती है जो उस राजनीतिक दर्शन के सार तत्व को प्रकट करती है जिसमें घटनाओं के चढ़ाव उतार का वर्णन होता है और जिसके द्वारा अन्तिम लक्ष्य को पहुँचा जाता है। उस कविता का भावार्थ नीचे लिखा है

"महान अगली छलांगें उसके उपरान्त बेहोश होकर गिरने की घटना काल गति का नियम है। मानव जाति को जो ज्ञान प्राप्त हुआ है, वह भयंकर तूफानों से घिरा हुआ रहा है स्वर्ग से मानव को जो उपहार मिला है उसका मूल्य संघर्ष के रूप में ही चुकाना पड़ा है क्योंकि बिना युद्ध कर मृत्यु का आलिंगन किए कुछ भी प्राप्त नहीं होता"।

'मृत्यु का आलिंगन करते तक युद्ध रत रहना' ही सकड़ों तरुणों का बड़ी मात्रा में आगे चल कर प्रयास रहा जिन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में दुर्दमनीय साहस और विलक्षण बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किया।

खेदजनक — ३ अगस्त १९२३ को एक खेदजनक घटना घटी जबकि चार तरुण क्रांतिकारियों ने शंकरी टोला पोस्ट आफिस पर धावा किया। पोस्ट-अमृतलाल ने आक्रमणकारियों का विरोध किया और उन्हें गोली से मार दिया गया। आक्रमणकारी गोली मारने वाले को लोगों ने लम्बी दौड़ के उपरान्त पकड़ लिया। अभियोग हुआ और उसको प्राणदंड हुआ जो उसकी दया याचना पर बाद को घटा कर आजीवन काले पानी में परिणित कर दिया गया।

गलत व्यक्ति— ऐसे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों की मृत्यु जिनके प्रति हिंसा का व्यवहार करने का किसी का कभी भी उद्देश्य नहीं था और जिन पर घातक प्रहार करने का तो कभी प्रश्न ही नहीं उठता था। १२ जनवरी, १९२४, की घटना का एक विशेष महत्व है।

ई डे नामक एक योरोपियन सज्जन जो कि कलकत्ता की एक व्यापारिक फर्म के कर्मचारी थे सात बजे से साढ़े आठ बजे तक मैदानों तथा उसके आस पास प्रात काल वायु सेवन का आनन्द लेते थे उस घटना के दिन वे चौरंगी रोड और पार्क स्ट्रीट के क्रासिंग पर एक फर्म के शो रूम को देख रहे थे तभी [illegible] युवक गोपीनाथ (गोपी मोहन) साह जो सफेद धोती खाकी कमीज और काले [illegible] पहने था उसने

अग्रेज सज्जन पर आठ या दस फिट से गोली चलाई। गोली निशाना चूक गई। वे घूमे और उन्होंने अपने मारने वाले का सामना किया। दूसरी गोली उनके लग गई ओर वे वही गिर गए। धराशायी शरीर पर तथा मरते हुए व्यक्ति पर युवक ने कुछ और गोलियां इस उद्देश्य से चलाई कि वह किसी भी प्रकार कहीं मृत्यु से बच न जावे।

पहले तो गोली चलाने वाला युवक पाक स्ट्रीट आराम आराम से चला। उसका एक टक्सी ड्राइवर ने अपनी टक्सी से पीछा किया। गोपीनाथ ने उस ड्राइवर पर गोली चलाई पर वह कारगार नही हुई। तब उसने अपनी चाल तेज कर दी और वह रसल स्ट्रीट में घुस आया। उसने एक बहुत बडी इमारत का चक्कर लगाया और पुन वह पाक स्ट्रीट पर आ निकला पुव की ओर आगे चल कर उसने एक खडी प्राइवट मोटर कार के ड्राइवर को उस ले जाने के लिए प्रेरित करने का प्रयत्न किया। ड्राइवर ने उसे ले जाने से इन्कार कर दिया इस पर साहा ने उस पर गोली चलाई परन्तु ड्राइवर जो बल्ट बाधे हुए था उससे वह बच गया। अब साहा ने दौडना प्रारम्भ किया उसका एक बडी भीड पीछा कर रही थी जो प्रति मिनट बढती ही जाती थी।

पाक स्ट्रीट और फ्री स्कूल स्ट्रीट की क्रासिंग पर वह झिझका। उस जगह वह पकडा ही जाने वाला था कि उसने अपना पीछा करने वाले पर गोली चलाई जो उसके हाथ में लगी। वह फ्री स्कूल स्टीट के रास्ते से अब रायड स्ट्रीट पहुँचा। उसके उपरान्त वह तेजी से दौडता हुआ वाल्टन लेन से होकर रिपन स्ट्रीट पर पहुँचा और फिर वलेस्ले स्ट्रीट की ट्राम लाइन पर पहुचा। वहां उसने एक घोडा गाडी में पर रक्खा परन्तु ड्राइवर ने गाडी हाकने से इनकार कर दिया। उसी समय एक आदमी पहुँचा और वह उससे भिड गया और साहा गिर पडा। एक कांस्टेबिल की सहायता से उसको जकड कर बाँध दिया गया। गिरने से उसके माथे में बहुत चोट आई।

जिस समय वह गिरफ्तार हुआ उसके पास एक मैगजीन पिस्तौल, एक रिवाल्वर और चालीस या पतालीस जीवित कारतूस थे। पुलिस को जाच पडताल में अधिक दिन नही लगे और उसने एक जनवरी १९२४ को साहा को चीफ प्रसीडेंसी मैजिस्ट्रट के समक्ष अभियोग के लिए उपस्थित किया। अभियोग की सम्पूर्ण कार्यवाही में वह युवक जिसका रंग सांवला था और जिसके माथे पर पट्टी बधी हुई थी नितान्त शान्त रहा, उसने कार्यवाही में प्रति तनिक भी दिलचस्पी नही दिखलाई।

सरकारी अभियोजक (पब्लिक प्रोसीक्यूटर) के एक वक्तव्य विशेष के सम्बन्ध मे उसने कहा—'सरकारी अभियोजक का कहना है कि मैं लाल बाजार में निरुद्देश्य घूम रहा था, मुझे बड़ा बाजार में एक मकान मे एक दूसरे व्यक्ति के साथ घुसते देखा गया। यह बिलकुल गलत है। मै सदैव अकेला जाता था और अकेला ही घूमता फिरता था और सदैव टगाट साहब को मारने का प्रयत्न करता था। मैं टगाट को भली भांति जानता हू। परन्तु दुर्भाग्यवश मैंने एक निर्दोष साहब की हत्या कर दी। उस निर्दोष साहब की सूरत ठीक टगाट की भांति थी। भगवान की कृपा से टगाट बच गया और यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं अपने प्रयत्न में असफल रहा। मैने भूल की है।

'यदि देश में कोई देशभक्त युवक है तो वह मेरे अधूरे कार्य को पूरा करेगा। मुझे आशा है कि वह ऐसी भूल नहीं करेगा जैसी कि मैंने की है और मुझे आशा है कि वह अधिक चतुराई और कुशलता से कार्य करेगा।"

जब युवक ने कहा ' मैं सदैव टैगार्ट साहब को मारने का यत्न करता रहा।" तो उसने टैगार्ट साहब की ओर ताका और उन्हें चिढ़ाते हुए मुस्कराया जब कि गोपीनाथ को अभियुक्त के कटघरे से हटाया गया तो उसने चिल्ला कर कहा 'श्री टैगार्ट अपने को सुरक्षित समझ रहे होंगे परन्तु वे सुरक्षित नहीं हैं। मैं उस कार्य को पूरा न कर सका। मैं उस अधूरे काम को दूसरों के लिए छोड़ जाता हूँ।

अभियोग की सुनवाई के दूसरे दिन १७ फरवरी को एक स्थल पर साहा ने सरकारी अभियोजक से जल्दी करने को कहा। अभियोग की सुनवाई बंद होने पर उसने कहा कि 'अभियोग की कार्यवाही को लम्बी करने से क्या लाभ ?"

२१ जनवरी को उस पर हत्या करने, तथा सदोष मानव हत्या का प्रयत्न करने जिसका परिणाम हत्या का नहीं होना, के आरोप लगा कर उसको हाईकोर्ट सेशन सुपुर्द कर दिया गया। जब उससे पूछा गया कि वह अपने बचाव के लिए कोई बयान देना या साक्षी उपस्थित करना चाहेगा तो उसने कहा 'उसका क्या परिणाम होगा" अपने दोषों के आरोप सुन कर उसने कहा "बहुत अच्छा बहुत अच्छा" और थोड़ी सी धाराएं क्यों नहीं जोड़ देते।

१३ फरवरी १९१४ को हाई कोर्ट सेशन में अभियोग आरम्भ हुआ। अभियोग की सुनवाई के दूसरे दिन अभियुक्त ने कार्यवाही में अधिक दिलचस्पी ली। जब अभियोग समाप्ति पर आ गया तो उसने कहा

"मेरे लिए यह अत्यन्त पावन दिवस है माता मुझे इसलिए बुला रही है कि मैं सर्वदा के लिए उसके वक्ष पर विश्राम करूं अतएव मैं जाना चाहता हूं। पिछले वर्ष के आरम्भ में मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा था कि टैगार्ट नामक एक योरोपियन ने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के सम्बन्ध में समस्त विश्व में घूम कर जानकारी एकत्रित की है और वह भारत इस उद्देश्य से वापस आ रहा है कि भारत को स्वतंत्र करने के हमारे प्रयत्नों में अड़चन डाले। मैं हमारे स्वतन्त्रता आन्दोलन में अड़चन डालने के प्रश्न पर गहराई से सोचने लगा। जबकि मैं इस प्रश्न पर ध्यान केन्द्रित कर सोच रहा था तो मुझे अनुभव हुआ कि मेरा मस्तिष्क गरम हो गया। मैं रात्रि को न तो सो सकता था और न खा ही सकता था और रात्रि को अपने मकान की छत पर टहलता था।

"जब मेरी ऐसी दशा थी तो मैंने मां की पुकार सुनी वह यह थी "उसका पीछा करो" तब से मैं उसके बारे में जानकारी इकट्ठी करने लगा। उसके उपरान्त इस मामले पर मैं बहुत गहराई से चिन्तन करने लगा। जबकि मैं चिन्तन कर रहा था तो मां की आवाज आई ' उसे इस पृथ्वी पर से उठा दो।'

जहां तक उस निर्दोष साहब का प्रश्न है जिसे मैंने मार दिया मुझे अत्यन्त खेद है। क्योंकि कोई साहब है इसीलिए मैं उसे अपना शत्रु नहीं मानता" २६ फरवरी १९२६ को फैसला सुना दिया गया अभियुक्त को मृत्यु दण्ड दिया गया। गोपीनाथ ने अत्यन्त शान्त होकर निर्णय को सुना, वह तनिक भी विचलित नहीं हुआ।

न्यायालय के कक्ष में जो उसने अंतिम शब्द कहे वे यह थे " मेरे रुधिर की प्रत्येक बूंद भारत के प्रत्येक घर में स्वतंत्रता के बीज बोये" आगे उसने कहा "जब तक

जलियांवाला बाग चादपुर इत्यादि जसे निदयतापूरण दमन होते रहेंगे यही स्थिति बनी रहेगी। एक समय आवेगा जबकि सरकार उसके परिणामों का अनुभव करेगी।'

जिस दिन गोपीनाथ को प्राण दड की सजा हुई और जिस दिन उसको फांसी दी गई उस समय के बीच उसका वजन पांच पौंड बढ गया। उसने अपनी मृत्यु के सम्बध म सदैव उदासीन मनोवृत्ति बनाए रक्खी, मानो कोई असाधारण बात घटित नहीं हुई है। उसको लोगो ने सदव प्रसन्न चित्त देखा वह जेल की कोठरी में प्रसन्नतापूवक जीवन बिता रहा था और नियमित रूप से स्वाद के साथ भोजन करता था। जिस दिन उसको फासी लगी उसके पिछली रात्रि को वह अत्यन्त गहरी नींद म सोया।

प्रेसीडेंसी जेल में एक माच १९२४ को वह उस स्थान पर ले जाया गया जहा फासी लगनी थी। वह फासी के तख्ते पर बिना किसी का सहारा लिए चढ गया। वह निरन्तर मुस्करा रहा था और देवी देवताओ का नाम जप रहा था। ९ बजे प्रात काल कियों के बाड के समीप बाहरी दीवार के समीप ही उसका दाह सस्कार हुआ।

उसने जो अंतिम पत्र अपनी माता को लिखा उसमे उसने अपनी मां से प्रायना की थी कि वह सवशक्तिमान परमेश्वर से प्राथना करे कि प्रत्येक भारतीय माता उसके जसे पुत्र को जन्म दे और प्रत्येक भारतीय युव उसकी मां जसी माता से पवित्र बने।

मदरास एजेंसी विद्रोह (१९२४)

आदिवासियों के स्थानीय कष्टों तथा शिकायतो को दूर करवाने से आरम्भ तथा राजकीय अधिकारियों द्वारा निधन, अशिक्षित तथा विवश आदिवासियो के प्रश्न को लेकर जिनका कोई मित्र और सहायक नही था 'अलूरी सीताराम राजू' जो कि राजू के नाम से प्रसिद्ध था शीघ्र ही आदिवासी एजेंसी क्षेत्र में शासन अधिकारियों के लिए चिन्ता और परेशानी का एक प्रमुख कारण बन गया।

अपने यौवन के आरम्भिक काल में राजू अध्ययन की ओर अधिक ध्यान न देकर धार्मिक कृत्यो तथा धम चर्चा की ओर अधिक ध्यान देता था। वह अपना अधिक समय समाज सेवा के काय को करने में लगाता था लोगों को वह यह उपदेश देता कि उन्हें अपने पड़ोसियो से तथा मनुष्य मात्र से मित्रतापूवक और शान्तिपूवक रहना चाहिए।

एक बार वह अपने सेवा काय के सिलसिले में जो बहुत कुछ सत्याग्रह आन्दोलन के सदृश्य लगते थे गिरफ्तार कर लिए गए। उनको सत्याग्रह आन्दोलन से बहुत सी बातों में कोई विशेष लगाव नहीं था न वे उसके बडे भक्त थे परन्तु उनको गिरफ्तार कर लिया गया किन्तु १९२२ में उन पर बिना अभियोग चलाए ही उनको छोड़ दिया गया।

अपने स्कूल जीवन में जो उन्होंने अध्ययन की ओर उदासीनता बरती थी उस कमी को उन्होंने स्कूल के बाहर निकल कर पूरा किया और उन्होने सस्कृत और अंग्रेजी भाषाओं का ऊचा ज्ञान प्राप्त कर लिया। जब उन्होंने यह अनुभव कर लिया कि शान्तिपूर्ण अहिंसात्मक उपाय से उनका उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता अहिंसात्मक उपाय पर्याप्त नहीं हैं तो क्रमश वे ब्रिटेन के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह करने की ओर झुकते गए। अब उन्होंने स्थानीय समस्याओं को हल करने के लिए गांवों में ग्राम पंचायत की स्थापना तथा मद्यपान के दुगुण को आदिवासियों से दूर करने में और

स्वराज्य प्राप्ति के लिए अपनी शक्ति लगाना आरम्भ की। वे अहिंसावादी नहीं थे। उनके लिए यह सैद्धान्तिक अनिवार्यता नहीं थी कि स्वतन्त्रता का युद्ध अहिंसात्मक उपायों से ही लड़ा जाये।

यह स्वाभाविक ही था कि सरकार उनकी कार्यवाहियों के प्रति सशंक हो गई और उनकी गतिविधियों पर कड़ी निगाह रक्खी जाने लगी। उसी बीच राजू ने गंजाम, विजगापट्टम और गोदावरी के पहाड़ी और मलेरिया से ग्रस्त एजेंसी डिवीजन के जिलों के पर्वतीय लोगों तथा आदिवासियों में अपने सेवा कार्य के द्वारा अपना प्रभाव बढ़ा लिया और उनका समर्थन प्राप्त कर लिया। नवम्बर १६२० में इन क्षेत्रों को मैदानी क्षेत्र से अलहदा करके एक पृथक जिला एजेंसी डिवीजन बना दिया गया जिससे कि जिन क्षेत्रों में आसानी से पहुँचा जा सकता था उनको अधिक नियन्त्रण में लाया जा सके और उनका विकास किया जा सके।

अल्पकाल में ही राजू एक धार्मिक व्यक्ति के रूप में उस क्षेत्र में प्रसिद्ध हो गए और सब साधारण उन्हें श्रद्धा और आदर की दृष्टि से देखने लगा। लोग ऐसा मानने लगे कि सब साधारण के हितों के लिए ही अपना जीवन खपा रहे हैं। शीघ्र ही उनका नाम दक्षिण भारत के प्रत्येक घर और झोंपड़े में फैल गया। क्रमशः पर्वतीय लोग उनकी ओर अधिकाधिक आकर्षित होते गए। उन्होंने उस स्थान के सब मैजिस्ट्रेट तथा उनके पिट्ठुओं के कुकृत्यों के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। पर्वतीय लोग उनके अत्याचारों से दुखी थे अतएव श्री राजू ने उनके कष्टों को दूर करने के लिए संघर्ष आरम्भ कर दिया।

इस प्रकार राजू का उस क्षेत्र में प्रभाव बढ़ता गया और उस आदिवासी क्षेत्र के सरल स्वभाव के स्त्री पुरुष उन्हें दैवी शक्ति सम्पन्न मानने लगे। अपने निज के जिले कृष्णा से लेकर एजेंसी क्षेत्र तक राजू का प्रभाव असीमित था। उसका प्रभाव उस समय चरम सीमा पर पहुँच चुका था। अब वह पुलिस थानों पर आक्रमण करने की तैयारियाँ करने लगे। उन्होंने बहुत बड़ी संख्या में पर्वतीय लोगों को इकट्ठा कर लिया। वे सब के सब अशिक्षित थे और किसी बड़े काम अथवा घटना के लिए उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता था। राजू को इस बात की चिन्ता और खोज थी कि उनको कुछ योग्य व्यक्ति मिलें जो उनके सहायक के रूप में कार्य कर सकें। उन्हें शीघ्र ही गुदेम के दो प्रमुख व्यक्ति 'गाम मालू डोरे' और 'गाम गौतम डोरे' जो गाम बन्धु के नाम से उस क्षेत्र में प्रसिद्ध थे सहायक के रूप में मिल गए। वे दोनों ताल्लुके के सरकारी अधिकारियों और विशेषकर सरकार की वन संरक्षण नीति से घोर असन्तुष्ट थे। दोनों भाईयों ने इस बात पर राजू को पूरी सहायता और समर्थन देने का वचन दिया कि वह सरकारी अधिकारियों के विरुद्ध विद्रोह खड़ा कर देगा।

राजू ने इस बात को स्वीकार कर लिया उसका परिणाम यह हुआ कि गाम-बन्धु जो पर्वतीय लोगों में बहुत अधिक प्रभावशाली थे उनके राजू के साथ आ जाने से राजू की शक्ति और अधिक बढ़ गयी।

भावी घटनाओं से यह सिद्ध होता है कि एजेंसी विद्रोह में इन दोनों का अत्यन्त महत्वपूर्ण और बड़ा भाग रहा था। अभी तक विद्रोह की तैयारियाँ पूरी तरह परिपक्व नहीं हो पाई थीं कि जिला अधिकारियों ने राजू की गतिविधि और आने जाने पर कुछ प्रतिबन्ध लगा दिए। १६२० के प्रारम्भिक दिनों में रम्पा पहुँचते के

असिस्टट कमिश्नर ने राजू को कृष्णा देवी पेटा से हटाकर पेडी पुत्ता भेज दिया जहां उन्हें कुछ भूमि खेती करने तथा शांतिपूवक रहने के लिए दे दी गई।

वहा रह कर राजू ने असिस्टेन्ट कमिश्नर को प्रभावित कर लिया, वह राजू पर विश्वास करने लगा। २९ जुलाई १९२२ को राजू ने असिस्टेन्ट कमिश्नर से नेपाल भ्रमण के लिए उस पर अपने प्रभाव के कारण पास पोट प्राप्त कर लिया। ४ अगस्त १९२२ को उसे पेडी पुत्ता से प्रस्थान करने की आज्ञा मिल गई। परन्तु वह नेपाल न जाकर गुदेम एजेंसी अपनी पुव योजना को काय रूप में परिणित करने के लिए वापिस लौट आया। मदरास के प्रथम फ़ितूरी विद्रोह में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता था कि राजू के नेतृत्व मे विद्रोही इस बात का बहुत ध्यान और सावधानी रखते थे कि गांव के लोगों तथा स्थानीय अधिकारियो को नाराज न किया जावे। यह स्पष्ट था कि इस बात की सावधानी बरती जाती थी कि लोगो को शारीरिक कष्ट न पहुँचाया जावे। यहां तक कि जो लोग विद्रोहियो के साथ विद्रोह में सम्मिलित होने से इनकार कर देते थे उनके साथ भी दुव्यवहार नहीं किया जाता था। जिन पुलिस अधिकारियों और पुलिस मैनों को गिरफ्तार किया जाता था उनके साथ भी दुव्यवहार नहीं किया जाता था।

जब तक कि राजू और उसके आदमियों व पुलिस में लिंगा पुरम पर सघष नही हुआ था तब तक स्थिति यही थी। उसके उपरान्त ग्रामवासियो को डराया और धमकाया जाने लगा और जो भी पुलिस और मैजिस्ट्रेट आदि अफसर पकडे जाते उनको पीटा जाता था।

जसे जैसे राजू की शक्ति बढती गई वह पुलिस थानों पर अधिकाधिक आक्रमण करने लगा और सरकारी अधिकारियों को सब तरह आतंकित और परेशान करने लगा। राजू राम्पा मे उपस्थित था जो घने जगलों से भरा हुआ प्रदेश था। राजू ने छिपने के लिए उस स्थान को इस कारण चुना था क्योकि वहा गुप्त रूप से रहने के लिए बहुत सी सुविधाए थी। वहा घाटी के समानान्तर पवत श्रेणिया खडी थीं इस कारण जब पुलिस दल आता तो समीपवर्ती घाटियों में रहने वाले राजू के अनुयायी और उनसे सहानुभूति रखने वाले लोग उसे देख लेते और राजू को सावधान कर देते। दूसरी बड़ी सुविधा वहां यह थी कि मैदान में रहने वाली आक्रमणकारी पुलिस उन लोगों के विरुद्ध कुछ कायवाही करने में असमथ थी कि जो पहाड़ी श्रेणियो के पीछे छिपे हुए थे।

राजू और उसके अनुयायियों तथा सशस्त्र पुलिस के बीच कई बार जम कर लडाई हुई। पुलिस की सहायता के लिए सेना बुलाई गई। ६ मई १९२४ को राजू का आसाम राइफिल्स से रेवेल्लू पर जो युद्ध हुआ वह राजू और उसके अनुयायियो के लिए दुर्भाग्यपूर्ण रहा। आसाम राइफिल्स की एक पूरी टुकडी ने राजू पर आक्रमण किया। आसाम राइफिल्स के ३७० सनिक घायल होकर बेकार हो गए। विद्रोहियों के १२ व्यक्ति स्थल पर ही मारे गए। युद्ध में मारे जाने वालों मे स्वय फ़ितूरी नेता अल्लूरी सीताराम राजू भी थे।

इस प्रकार एक ऐसे प्रभावशाली और क्रान्तिकारी व्यक्तित्व का अन्त हो गया जिसने कम से कम पांच वष निरन्तर सरकार को तनिक भी चैन नही लेने दी वह अत्यन्त भयभीत और आतंकित रही।

राजू कई बार बाल बाल पकड़े जाने से बचा। सरकार ने जो उसके सिर

पर बहुत बड़े पुरस्कार की घोषणा कर रखी थी, वह व्यर्थ रहा उसका कारण यह था कि उसके अनुयायियो में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो उस घृणित लोभ के वशीभूत होकर अपने नेता के साथ विश्वासघात करता।

जो युद्ध सीताराम राजू ने आरम्भ किया था वह उनकी मृत्यु के उपरान्त भी समाप्त नहीं हुआ। उस युद्ध को राजू के अत्यन्त विश्वसनीय सहायक गौतम डोरे ने जारी रक्खा।

राजू की मृत्यु के उपरान्त जहां तक एजेंसी–फितूरी विद्रोह का संबंध था गौतम तथा दल के अन्य सदस्यो की गतिविधियां तथा कार्यवाहियां एक मास के लिए बिलकुल बंद हो गई। ७ जून १९२४ को कृष्णा देवी पठ पुलिस का एक गश्त लगाने वाला दल जो फितूरी विद्रोहियो की सम्भावित छिपने के स्थानो की खोज कर रहा था अपने वेकावरा के शिविर के पास यदुमुर्दा नामक गांव के पास एक गहरे खड्ड के समीप पहुँचा। पुलिस के गश्त लगाने वाले दल ने अपने को तीन टुकडियों में बांट लिया और उन्होंने उस क्षेत्र के आस पास सभी स्थानो की बारीकी से खोज आरम्भ कर दी। पुलिस की एक टुकडी ने विद्रोहियो के एक दल को जिसमे सात आठ व्यक्ति थे खोज निकाला किन्तु जब तक कि खोज करने वाला दल भली प्रकार उस विद्रोही दल की पहचान कर सकता विद्रोही भाग खडे हुए। तुरन्त ही पुलिस ने गोली चलाना आरम्भ कर दी और पुलिस की अन्य दोनो टुकडिया भी घटना-स्थल पर पहुच गई और गोली चलाने लगी।

विद्रोहियों की इस अन्तिम बची हुई टुकडी में स्वयं गौतम डोरे भी था। उस असमान युद्ध में उसने अपनी अनुपम वीरता प्रदर्शित की, उसने पुलिस की गोली का उत्तर दिया दोनों ओर से गोली चलने लगीं। दुर्भाग्यवश गौतम डोरे और उसके दूसरे साथी घातक रूप से घायल हो गए। ७ जून १९२४ को राजू के अत्यन्त योग्य सहायक गौतम डोरे की मृत्यु से एजेंसी विद्रोह को गहरा धक्का लगा।

विद्रोह का दीपक फिर भी कुछ देर तक और धीमी रोशनी से चमकता रहा मालू डोरे अन्तिम बचा हुआ विद्रोहियों का नेता था। वह राजू का दाहिना हाथ माना जाता था और लोगो की ऐसी मान्यता थी कि विद्रोह खडा करने में उसका प्रमुख हाथ था। लगभग पुलिस की बीस रिपोर्टों में उसका नाम आया था और इस बात की प्रचुर साक्षी उपलब्ध थी कि विद्रोह के प्रथम दिवस के उस दिन तक कि जब वह गिरफ्तार हुआ, वह विद्रोही दल का सर्वाधिक कार्यशील साधन सम्पन्न और खतरनाक नेता माना जाता था।

वह गिरफ्तार हो गया। गिरफ्तारी के बाद उसका अभियोग चला उसको १९ जून १९२४ को मृत्यु दण्ड दिया गया और फांसी के तख्ते पर उसके जीवन का अन्त हो गया।

बहुतो में से एक

२५ मई १९२४ को जब प्रफुल्ल कुमार राय पुलिस थानेदार जब पल्टन बाजार में गश्त लगा रहा था तो ठीक आधी रात्रि के बाद किसी अज्ञात आक्रमण करने वाले व्यक्ति ने उस पर गोली चलाई।

प्रफुल्ल कुमार राय चीटागांव लूटिंग अभियोग का इचार्ज था जिसमें सूर्य सेन अपने दो योग्य साथियों के साथ अभियुक्त था। उस सब इन्सपेक्टर (थानेदार) ने

चीटा गाव डकती अभियोग की भी जांच पड़ताल की थी जिसमें आसाम बंगाल रेलवे का सत्रह हजार रुपया लूट लिया गया था। प्रफुल्ल को तुरन्त ही अस्पताल ले जाया गया जहां उसकी डाक्टरी जांच के पश्चात उसको ढाका अधिक कुशल सर्जरी की सहायता के लिए ले जाना आवश्यक समझा गया। योग्य चिकित्सकों की देखभाल में वह ढाका को ले जाया जा रहा था कि लक्षाम नामक स्थान पर उसकी मृत्यु हो गई और उसके शव को पुन चीटागाव दाह संस्कार के लिए वापस लाया गया। गोली मारने वाला बच कर निकल गया उसका कोई पता नहीं लग सका।

बिना नाम के (१९२५)

प्रथम विश्व युद्ध के छिड़ने के पूर्व एक तरुण हृषीकेश लट्टा भारत से प्रसिद्ध क्रान्तिकारी सूफी अम्बाप्रसाद के साथ पर्शिया गया। बर्लिन कमेटी के निमन्त्रण पर लट्टा जरमनी गया और वहां से केदारनाथ केरसारुण के साथ वापस पर्शिया (ईरान) आया। भारत में विद्रोह करने तथा विदेशी शक्तियों से उस विद्रोह के लिए सहायता प्राप्त करने के प्रयत्नों में वह लगा रहा। अपनी जन्म भूमि से दूर निर्वासित होकर वह १९२५ में वहीं मर गया (उदम डाक्टर बी एन दत्त— अप्रकाशित स्वाधीनता सग्रामेर राजनीतिक इतिहास पृष्ठ १७८–७९)

दु खद सम्बधन (१९२५)

एक अभागा युवक अम्बिका दा कलकत्ता तथा उसके समीप के क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं की आन्तरिक परिधि में प्रवेश कर गया इस कारण पुलिस उसको शका की दृष्टि से देखने लगी। बाद को अपने अविवेकपूर्ण घुलमिल व्यवहार के कारण उसने अपने साथियों का भी विश्वास खो दिया। १९२४ में उसे गिरफ्तार कर लिया गया और जेल में ठूस दिया गया। अलीपुर सैंट्रल जेल में उसे नजरबंद कर दिया गया। उसके साथ के बंदियों ने देखा कि वह क्रमश उदास और दुखी रहने लगा। सम्भवतया उसके हृदय और मस्तिष्क में जो अन्तर द्वन्द चल रहा था उसी कारण वह दुखी और उदास था। १९२५ के आरम्भ में एक दिन उसने जेल के अन्दर अपने वस्त्रों को मिट्टी के तेल से भिगो कर उनमें आग लगा ली। उसका परिणाम यह हुआ कि वह बुरी तरह जल गया और इस प्रकार उसने अपनी अशान्त आत्मा को शान्ति पहुँचाई।

बब्बर अकाली दल (१९२५)

जलियावाला बाग हत्याकाड के कारण समस्त देश क्षुब्ध हो उठा था। यह स्वाभाविक था कि उसके कारण लोगों में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध घोर कटुता और क्षोभ उत्पन्न हो। उस क्षोभ और कटुता के परिणाम स्वरूप पंजाबियों के एक दल ने जलियां वाला बाग हत्याकाड के प्रतिशोध स्वरूप सरकार के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह खड़ा करने की बात सोची।

इस उद्देश्य से एक सगठन खड़ा करने का विचार सर्व प्रथम जालधर के श्री किशन सिंह गड़गाज के मस्तिष्क म आया। सगठन को मूर्त रूप देने में आरम्भ में ही किशनसिंह के साथ होशियारपुर के धन्ना सिंह थे। यह सगठन बब्बर अकाली दल अथवा चक्रवर्ती के नाम से प्रसिद्ध हुआ। किशन के पीछे सनिक प्रशिक्षण की पृष्ठ भूमि थी क्योंकि वह २ ३५ सिक्ख रजीमेंट मे हवलदार रह चुका था। किशन सिंह इस क्रान्तिकारी दल का केवल मस्तिष्क ही नहीं था वरन सगठन को चलाने तथा उसको कार्यशील बनाने में मुख्य प्रेरक और उसकी आत्मा था। वह अत्यन्त दुस्साहसी

व्यक्ति था और कभी कभी अपने उत्साह में सतर्कता और सावधानी को तिलांजलि दे दे देता था। वह अत्यन्त उत्तेजक भाषण देता था अपने अग्निमय भाषणों में वह देश के प्रशासन की कठोर आलोचना करता और लोगो को बलपूर्वक उसे उखाड़ फेंकने के लिए प्रोत्साहित करता था। दिसम्बर १९२२ में "बब्बर अकाली दोआबा" नामक पत्र निकाल कर उसको मुफ्त सब साधारण मे बांटना संगठन का एक प्रमुख कार्य था।

शीघ्र ही किशन सिंह और उनके साथियों ने दल की समस्त पंजाब में शाखायें स्थापित कर दीं। उनका मुख्य केन्द्र जालंधर था। 'बब्बर अकाली दल' के सदस्य अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए अस्त्र शस्त्र और गोली बारूद इकट्ठा करने लगे। दल के अनुशासन का कठोरता से पालन किया जाता था और समय समय पर खुल्लम खुल्ला हिंसा के कार्य किए जाते थे। यह हिंसा के काम अंग्रेजों के चाटुकारों और सरकार परस्त लोगों के विरुद्ध होते थे। इन लोगो को उन्होंने "झोली चुकम" का नाम दिया था। 'बब्बर अकाली दल' के सदस्यो ने ऐसे अनेक सरकार परस्त देश द्रोहियो को मौत के घाट उतार दिया।

अब पुलिस चौकन्नी हो गई और इन लोगों के नाम गिरफ्तारी के वारंट निकाले गए। उसका परिणाम यह हुआ कि किशन सिंह के कुछ विश्वसनीय व्यक्ति पकड़ लिए गए और जेल में ठूंस दिए गए। किशन सिंह बच कर निकल गए और वहां से हट कर उन्होंने अपना कार्य क्षेत्र दोआबा बना लिया, जहां उन्हें अपने विचार वाले कुछ नवयुवक मिल गए। उन लोगों के मिल जाने से उनकी शक्ति बढ़ गई और उन्होंने सुदूर गांवो की सूची इस उद्देश्य से बनाई कि वह अधिक बड़ी संख्या में लोगों से सम्पर्क स्थापित कर सकें। अब दल का प्रभाव बहुत बड़े क्षेत्र मे जनता पर बहुत अधिक बढ़ गया वे छिपे अथवा खुले रूप में उन क्रान्तिकारियो से सहानुभूति रखते थे जो कि एक अत्यन्त साहसी और जोखिम भरे कार्य में रत थे।

कुछ सरकार परस्त लोगो के मारे जाने के उपरान्त पुलिस ने इन क्रांतिकारियों को पकड़ने के अपने प्रयत्न को और अधिक तेज कर दिया दल को उन्होंने तनिक भी आराम नहीं करने दिया। एक सितम्बर १९२३ को क्रान्तिकारियो का एक दल जिसमें करम सिंह उदयसिंह, बिशन सिंह और महेन्द्र सिंह थे वे कपूरथला रियासत मे बोमेली नामक स्थान के पास से जा रहे थे जबकि उनको पुलिस और सेना ने चारों ओर से घेर लिया और निकलने के सब रास्ते बन्द कर दिए। दोनों ओर से गोली चलने लगी और उस असमान युद्ध मे क्रान्तिकारी दल के सभी सदस्य युद्ध करते हुए मारे गए। कुछ पुलिस के सिपाही भी मारे गए।

होशियारपुर के धन्नासिंह जो कि किशनसिंह के दाहिने हाथ थे उन्होंने अपने कार्य से यह सिद्ध कर दिया कि वे समस्त जीवन जेल में बन्द रहने की अपेक्षा एक वीर की मृत्यु मरना पसंद करते थे। उनके दल का एक विश्वासघाती सदस्य जो कि पुलिस से मिला हुआ था उन्हें धोखा देकर मनहूना गांव ले गया जहां उनको गिरफ्तार करने के लिए पुलिस बहुत बड़ी संख्या में मौजूद थी। पुलिस ने उनको पकड़ लिया और उनके दोनो हाथ पुलिस सैना ने मजबूती से पकड़ लिए। परन्तु युक्ति से वे अपने एक पकड़ने वाले से जोर के साथ टकरा गए उसका परिणाम यह हुआ कि बम जो उनके वस्त्रो में छिपा हुआ था फट गया और वह स्वयं तथा उनको गिरफ्तार करने वाले पांच सिपाही तथा पुलिस दल का एक उच्च यौरोपियन

अधिकारी घटना स्थल पर ही मर गए।

यह दुर्भाग्य की बात थी कि दल में सदस्यों को भर्ती करने में शीघ्रता करने के कारण क्रांतिकारी दल के नेता प्रत्येक व्यक्ति के चुनाव में यथेष्ठ, सावधानी नहीं बरत पाते थे और बिना पूरी छानबीन किए ही उन्हें दल में भर्ती कर लेते थे। दल में कुछ ऐसे व्यक्ति भी थे जो कि सरकार द्वारा दिए गए। लाभ के शीघ्र शिकार हो जाते थे। ऐसे एक सदस्य ने ज्वाला सिंह बनता सिंह और वरियाम सिंह को अपने मकान में शरण देकर पुलिस को सूचित कर दिया। १२ दिसम्बर १९२३ को तीनों को पुलिस के दल से युद्ध करना पड़ा जिसमें ज्वाला सिंह और बनता सिंह मारे गए। वेराम सिंह किसी प्रकार वहां से निकल गया और बड़ी कठिनाई से वह लायलपुर पहुंचा जहां ८ जून १९२४ को पुलिस द्वारा फैलाए हुए जाल में वह फस गया। गिरफ्तारी से मृत्यु को उसने पसंद किया और सिंह की भांति वीरतापूर्वक युद्ध कर वह वीर गति को प्राप्त हो गया।

सरकार ने उन सभी व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया जिन पर दल से सम्बन्धित होने का तनिक भी संदेह था और बब्बर अकाली दल के ९१ सदस्यों के विरुद्ध एक बड़ा षडयन्त्र का अभियोग चलाने की तैयारी कर ली। प्रारम्भिक सामान्य जांच के उपरान्त ४ अप्रैल १९२४ को अभियोग सेशन सुपुर्द कर दिया गया। २ जून १९२४ को अभियुक्तों पर यह आरोप लगाए गए कि उनके पास आयात किये हुए अस्त्र गोली बारूद तथा सैनिक स्टोर इस रूप में उपलब्ध हुआ जिससे पता चलता था कि उनकी इच्छा यह थी कि यह बात किसी भी सरकारी राज कर्मचारी को विदित न हो। वे बिना लाईसेंस के अस्त्र शस्त्र लेकर चलते थे उन्होंने हत्याएं की और हत्या करने के प्रयत्न किए लोगों को गम्भीर रूप से घायल किया, उन्होंने डकैतियां डाली और १९२१ के अन्त में जालंधर के पूर्वी भाग में उन्होंने यह सब किशन सिंह के साथ षडयन्त्र में शामिल होने के परिणामस्वरूप किया। इसके अतिरिक्त उन पर यह आरोप भी लगाया गया कि उन्होंने अराजकता फैलाने वाले भाषण दिए लोगों को धमकी और चेतावनी दी कि वे सरकार को उनकी गतिविधियों के सम्बन्ध में कोई भी जानकारी देकर सहायता न करें। अपने भाषणों के द्वारा उन्होंने सरकार के विरुद्ध सब साधारण में इस उद्देश्य से असंतोष उत्पन्न करने की चेष्टा की कि यहां विद्रोह भड़क उठे और ब्रिटिश सरकार को पंजाब से निकाला जा सके।

अभियोग एक वर्ष तक चलता रहा प्रारम्भिक जांच से फैसला सुनाने तक एक वर्ष लगा उस काल में तीन अभियुक्तों की मृत्यु हो गई और वे सभी प्रकार के दण्ड मृत्यु दण्ड अथवा अन्य प्रकार के दण्ड से बच गए।

मुख्य बब्बर अकाली अभियोग में २८ फरवरी १९२५ को ५४ अभियुक्तों को न्यायालय ने दोषी पाया। उनमें से पांच को मृत्यु दण्ड और ग्यारह को आजीवन काले पानी की सजा दी गई। जिन्हें मृत्यु दण्ड दिया गया वे यह थे —

(१) किशन सिंह को न्यायालय ने संगठन का मुख्य नेता घोषित किया। (२) करम सिंह (३) नंद सिंह को घुरियाल के सूबेदार सिंह की हत्या करने के लिए उत्तरदायी ठहराया गया। (४) संता सिंह षडयन्त्रकारियों में एक प्रमुख षडयन्त्रकारी था। अकेले ही उसने कई हत्याएं की थी और इसके अतिरिक्त उसने डकैतियां और लूटपाट भी की थी। (५) दिलीप सिंह जो केवल अठारह वर्ष का

बालक या उसको हत्यार्थों तथा अन्य अपराधों का दोषी पाया गया।

उच्च न्यायालय में उन पाँचों के अतिरिक्त एक आजीवन काले पानी के अभियुक्त की ओर से अपील की गई। एक जुलाई १९२६ को उच्च न्यायालय ने अपील अस्वीकार करदी और धरम सिंह की सजा को बढ़ाकर मृत्यु दंड में बदल दिया।

उन सभी को २७ फरवरी १९२६ को फांसी दे दी गई।

सर्वोत्कृष्ट वार (१९२६)

यह अन्दाज लगा सकना बहुत कठिन होता है कि क्रांतिकारी भावना अन्तत क्या रूप धारण करेगी। यह अत्यन्त अप्रत्याशित ढंग से अपने को प्रकट करने के उपयुक्त अवसर को खोज करती रहती है। कतिपय तरुण बम अन्य शस्त्र बनाने के लिए आवश्यक रसायनिक द्रव्य संचित करते हैं। उन्हें केवल इतना ही ज्ञात था कि उनका उपयोग उनके उद्देश्य को पूरा करने के लिए होगा। उन्हें यह ज्ञात नहीं था कि किस पर और कहां उनका उपयोग किया जावेगा। काकोरी अभियोग जांच में पड़ताल के समय पुलिस को उस षडयन्त्र की कुछ गंध मिली और उन्होंने १० नवम्बर १९२५ को बरनागोर दक्षिनेश्वर की बाधस्पतिपारा लेन के एक मकान की तलाशी ली। जो नवयुवक वहां मिले उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और उस घर में एक जीवित बम एक दलिब ६ चैम्बर का पूरी तरह कारतूसों से भरा रिवाल्वर एक मजिल लोडिंग हाथ पिस्तौल, बड़ी संख्या में कारतूस, बहुत बड़ी मात्रा में बारूद गोलियां नाइट्रिक तथा सलफ्यूरिक एसिड की कई बोतलें ग्लास ट्यूब, तथा बटरिया इत्यादि मिले। वास्तव में यह गुप्त स्थान बम और विस्फोटक पदार्थ बनाने की फैक्टरी था। वहां कई प्रलेख तथा कागज पत्र मिले।

एक प्रलेख में लिखा था। " वर्तमान में इस प्रयत्न का उद्देश्य यह है कि क्रांतिकारियों के हाथों में ऐसे शस्त्र जो कि अत्यन्त विस्फोटक तथा घातक हो देना— इसके लिए सबसे सरल तथा शीघ्रतम उपाय का चुनाव किया गया है तथा अत्यन्त शक्तिशाली तथा विध्वंसक सामग्री का उपयोग किया गया है।

बंदी बनाए हुए ९ अभियुक्तों के विरुद्ध अलीपुर में २८ नवम्बर १९२५ को एक विशेष अदालत ट्रिब्यूनल (अदालत) के समक्ष अभियोग चलाया गया। १९२५ के बंगाल क्रिमिनल ला एमेंडमेंट अधिनियम के अन्तर्गत यह प्रथम विशेष ट्रिब्यूनल नियुक्त किया गया था। उनको आपराधिक षडयन्त्र में सम्मिलित होने तथा भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा १९ (अ) और (फ) तथा विस्फोटक पदार्थों सम्बन्धी अधिनियम की धारा (४) (ब) और इण्डियन पेनल कोड की धारा १२ (ब) के अन्तर्गत अपराध करने के आरोप लगाए गए। 'अभियुक्तों के पास विस्फोटक पदार्थों का निकलना दुर्भावना पूर्ण तथा गैर कानूनी कार्य था और इससे यह सिद्ध होता था कि उनका उद्देश्य ब्रिटिश भारत में स्वयं अथवा उन विस्फोटक पदार्थों की सहायता से दूसरों के द्वारा कुछ मनुष्यों के जीवन को खतरा पैदा करना तथा सम्पत्ति को हानि पहुँचाना था।"

उस अभियोग में ६ जनवरी १९२६ को फैसला सुनाया गया जिसमें अनन्तहरी मित्र, राजेन्द्रनाथ लाहिरी तथा एक अन्य को दस वर्ष का देश से निर्वासन (काला पानी) तथा शेष को विभिन्न समयों के लिए कठोर कारावास का दण्ड दिया गया।

जिस दिन दक्षिनेश्वर में गिरफ्तारियां हुईं। उसी दिन अर्थात १० नवम्बर १९२५ को सायंकाल के समय सोवा बाजार स्ट्रीट के चार नम्बर वाले मकान की तलाशी में प्रमोद रंजन-चौधरी और एक अन्य युवक गिरफ्तार किया गया। जो वस्तुएं वहां

मिलीं उनमें बलजियम् का बना हुआ पांच चम्बर का एक रिवाल्वर ४४ राऊंड ० ४५० बोर के कारतूस तथा ११ कारतूस ० ३१ बोर के मिले।

वहां पर बहुत सा साहित्य बिखरा पड़ा था। उसमें अंग्रेजी की एक पाडुलिपि थी जिसका शीर्षक था तरुण भारत का निर्माण (Formation of young India) जिसको कई भागों में बाटा गया था। पुस्तक में अंतिम लक्ष्य के सम्बन्ध में लिखते हुए कहा गया था " देश और मानवता की सेवा करना" किंतु तत्कालीन लक्ष्य " देश को स्वतन्त्र बनाना था। " जहां तक साधनों का प्रश्न था सभी सम्भावित उपायों जिनमें सशस्त्र क्रांति भी सम्मिलित थी उनका उपयोग करना अभीष्ट था।

उसके लिए नीचे लिखे उपादानों की आवश्यकता बतलाई गई थी (१) एक संगठन जिसमे (i) बलिदानी युवक तथा (ii) सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति हो (२) धन संग्रह (२) अस्त्र शस्त्र तथा विस्फोटक पदार्थों का संग्रह एक दूसरी पुस्तक जिसका शीर्षक था ' क्रांति कैसे हो " (How to Rise) में बतलाया गया था कि भारत में क्रांति नीचे लिखे अनुसार आवेगी। (१) व्यक्तिगत प्रदर्शन द्वारा अर्थात ऊंचे सरकारी अधिकारियों की हत्या करके सरकारी द्रव्य अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद इत्यादि की लूट कर सरकारी संस्थाओं पुलों को नष्ट कर जेलों के फाटक तोड़कर तथा रेलों को नष्ट कर (२) एक ही समय बहुतों द्वारा प्रदर्शन करके (३) परिद्रोह जिसमें छापा मार युद्ध भी सम्मिलित है उसके द्वारा। (४) विद्रोह के द्वारा लेखक ने इस बात का समर्थन किया था कि जो देश इंगलैंड के शत्रु हैं उनसे सपर्क तथा घनिष्टता स्थापित करना जिससे कि आवश्यकता के समय इनसे सहायता मिल सके। प्रमोद रंजन चौधरी तथा उनके मित्र २ जनवरी १९२६ को अलीपुर में एक विशेष अदालत (ट्रब्यूनल) के समक्ष उपस्थित किए गए। उन पर यह आरोप लगाया गया कि उन्होंने गैर कानूनी ढंग से आम्र्स ऐक्ट विस्फोटक पदार्थ अधिनियम इंडियन पेनल कोड के प्रावधानों के विरुद्ध अस्त्र शस्त्रों का निर्माण करने तथा उनको अपने पास रखने का षड्यन्त्र किया।

यह माना गया कि सोवाबाजार का मकान दक्षिणेश्वर के मकान की सीमा चौकी थी। यह दक्षिणेश्वर के मकान को आदमियों तथा सामग्री भेजने के लिए आश्रय स्थान था। दोनों दलों के व्यक्ति समान उद्देश्य से काम कर रहे थे।

१५ जनवरी २९२६ को अभियोग का फैसला सुना दिया गया और दोनों अभियुक्तों को एक समान दंड अर्थात पांच वर्षों का कठोर कारावास दिया गया।

इस प्रकार फैसला हो जाने पर जब दोनों अभियुक्तों को अलीपुर सेंट्रल जेल में बंद कर दिया गया और राज्य को कतिपय दृढ़ निश्चय वाले युवकों जिनके लिए जीवन में देश की स्वतन्त्रता ही सर्वोपरि महत्व की वस्तु थी के आलुंठन से राज्य की रक्षा कर ली गई तो नाटक का प्रथम भाग समाप्त हो गया।

उसके उपरान्त इस नाटक का दूसरा अत्यन्त रोमांच उत्पन्न करने वाला अंक आरम्भ हुआ।

भूपेंद्र नाथ चटर्जी स्पेशल सुपरिंटेंडेंट पुलिस सी आई डी, इनटलीजेंस ब्रांच कर्तव्यवश नियमित रूप से प्रतिदिन कार्यालय के बंद होने के उपरान्त अलीपुर सेंट्रल जेल में राजनीतिक बंदियों से मिलने और बातचीत करने स्टेट यार्ड में आया करता था। २८ मई १९२६ को उक्त पुलिस अधिकारी जेल के फाटक पर सायंकाल पांच बजकर बीस मिनट पर आया और उसके उपरान्त स्टेट यार्ड की ओर बढ़ा जो कि जेल के फाटक की ओर

जाने वाले मार्ग के सिरे पर स्थित था जो उत्तर से दक्षिण की ओर जाता था। उस मार्ग के पश्चिम की ओर मृत्यु दण्ड प्राप्त बंदियों की सैल थी जहां वे कैदी रक्खे जाते थे जिन्हें मृत्यु दण्ड दिया गया था। उसके दक्षिण में मार्ग के उसी ओर 'हाजत' याड था जहां उन अभियुक्तों को रक्खा जाता था जिन पर अभियोग चल रहा होता था। मार्ग के पूर्व की ओर *बम याड था* जहां दक्षिणेश्वर तथा उससे मिले जुले अभियोगों के अभियुक्त रक्खे गए थे। भूपेन्द्र स्टेट याड लगभग ५ ३० सायंकाल पहुँचा और वहां पहली मंजिल में जो नजर बन्द कैदी थे उनसे आध घण्टे तक बातचीत करता रहा। आध घण्टे बाद वह याड से चला, अभियोजन की साक्षी के अनुसार उस समय बम याड में दस अभियुक्त थे जबकि भूपेन्द्र उस मार्ग से चलकर वहां पहुँचा। याड के वाडर को उन अभियुक्तों ने पकड़ कर जमीन पर गिरा दिया। उस याड के फाटक की चाबी अभियुक्तों ने वाडर से बलपूर्वक छीन ली और चार अभियुक्त बाहर निकलकर झपटे और अन्य चार जमीन पर पड़े वाडर को दबाए रहे जिससे कि वह *उठ न सके। तिजारत वेग से उन्होंने पुलिस अधिकारी* पर लोह दण्ड तथा यन्त्र से आक्रमण कर दिया जो कि उन्होंने वाडर से छीन लिए थे। उसके सर में बाईं ओर पांच तथा दाहिनी ओर दो गम्भीर चोटें आई। खोपड़ी फट गई। लोहे की छड़ नाक में घुस गई और और उसने भेजे को फाड़ दिया। बाईं आंख की पुतली फट गई और आंख की सम्पूर्ण हड्डी टुकड़े टुकड़े होकर चूर हो गई वह कनपटी को फाड़ते हुए खोपड़ी में घुस गई। उसका ऊपर का जबड़ा टूट गया और चेहरा बुरी तरह से विकृत हो गया। भूपेन्द्र ८ ३० पर रात्रि को मर गया।

इस कांड में जिन लोगों ने भाग लिया था उनमें से दो ने इस कहानी को थोड़ी भिन्न रीति से बतलाया। भूपेन्द्र नाथ स्टेट याड से वापस लौट रहा था तो षड्यन्त्र करने वाले सदस्यों ने उस पर ध्यान रक्खा। एक ने वाडर से उसकी सेल के फाटक को खोल देने के लिए कहा जिससे कि वह अपनी धोती जो पहली मंजिल से आंगन में नीचे गिर पड़ी थी उठाले। जैसे ही उसकी सेल का फाटक वाडर ने खोला वह बाहर निकल आया और उसने पुलिस अफसर से 'हैलो' कहा जो कि सेल से कुछ कदम आगे बढ़ गया था जहां बम के बंदी रहते थे और वह मुख्य द्वार की ओर बढ़ रहा था। वह रुक गया और पीछे मुड़ा। *तुरन्त कई उस पर टूट पड़े* उसके कोट के कालर को पकड़ लिया और उसको पर बहुत जोर का घूंसा लगाया जिससे कि उसकी आंखों के आगे अंधेरा छा गया।

वारडार दौड़ कर उसकी सहायता के लिए आया वह चेतावनी की सीटी बजाना भूल गया। प्रमोद रंजन लोहे के डंडे को लेकर बाहर निकला जो कि दो फिट लम्बा और एक इंच मोटा था, जो गुप्त रूप से पहले से ही उपलब्ध कर लिया गया था। उसने वाडर को डराने के लिए उस लोह दण्ड को उठाया—वाडर भयभीत होकर घटना स्थल से तुरन्त भाग गया। एक क्रुद्ध शेर की भांति प्रमोद ने भूपेन्द्र पर कई प्रहार किए *वह पहले ही प्रहार में लड़* खड़ा कर नीचे गिर गया उसका चेहरा बुरी तरह घायल हो गया था। भा॰ ताहरी जिसने वाडर का लकड़ी का डंडा छीन लिया था वह भी भूपेन्द्र पर प्रहार करने में सम्मिलित हो गया। भूपेन्द्र को बुरी तरह से घायल कर दिया गया। उसको मारने के लिए जितने प्रहारों की आवश्यकता थी उससे कहीं अधिक प्रहार उस पर किए गए। दल के प्रत्येक सदस्य ने उस योजना में उसके लिए जो भी निर्धारित कार्य था वह उसने बड़ी होशियारी और दक्षता के साथ एक एक अनुशासित सैनिक की भांति बिना किसी घबराहट के निश्चित होकर किया।

गतरे की घंटी बज उठी। घंटा बहुत तेजी से बज रहा था। उस कांड में जो भी क्रांतिकारी सम्मिलित थे चुप चाप निर्दोष बालकों की भांति अपनी अपनी सेलों में चले गए। उनके चेहरे पर ऐसी निर्दोषता उद्भासित थी कि मानों उनकी सेल की दस मील दूरी पर भी कुछ नहीं हुआ हो। प्रमोद के हाथ रुधिर से सने हुए थे और लोह दण्ड जिससे भूपेन्द्र को मारा गया था उससे खून टपक रहा था। लोहे के डन्डे को तथा हाथों को धोने से यह मालूम हो जाने का भय था कि भूपेन्द्र को किसने मारा है। प्रमोद ने अपने खाने की थाली में लोहे के डन्डे और हाथों को धोया और उसको पी गया। यह उस की अपेक्षा रुधिर अधिक था ऐसा प्रतीत होता था कि मानो भीमसेन ने दुश्शासन को मार कर उसका रुधिर पान किया हो और द्रोपदी के अपमान का प्रतिशोध लिया हो। एक दूसरे साथी ने लोहे के डन्डे को लेकर बंदियों के कुत्ती के अखाड़े के सिरे पर ऐसी सफलता पूर्वक गहरा गाड़ दिया कि प्रथम दो प्रयास उसको ढूंढ निकालने में असफल हो गए।

सशस्त्र पुलिस जेल के अन्दर घुस आई और इससे पहले कि पुलिस बंदियों पर अत्याचार कर सकती जेल सुपरिंटेंडेंट ने हस्तक्षेप किया और समस्त पुलिस को जेल से बाहर निकल जाना पड़ा। पुलिस इस बंदियों पर प्रहार कर उनसे बदला ले सकने में असफल हो जाने के कारण बहुत अधिक क्रुद्ध थी और दांत पीस रही थी। १५ जून १९२६ को उसी विशेष अदालत (ट्रिब्यूनल) के समक्ष बम कांड के दस बंदियों पर पुनः हत्या का अभियोग चला। अभियोग १८ जून को समाप्त हुआ और २१ जून १९२६ को फैसला सुना दिया गया। फैसले में अनन्त हरि मित्र प्रमोद रंजन चौधरी तथा एक अन्य को प्राण दंड दिया गया। अन्यों को विभिन्न समय के लिए कठोर कारावास का दंड दिया गया। इस फैसले के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की गई। २६ जुलाई १९२६ को अभियोग की उच्च न्यायालय के सामने सुनवाई आरम्भ हुई। ९ अगस्त १९२६ को फैसला हुआ। दो जजों की बैंच ने अनन्त हरी के प्राण दण्ड की पुष्टि कर दी परन्तु प्रमोद रंजन के सम्बन्ध में उनमें मतभेद उत्पन्न हो गया। उनमें से एक प्रमोद को आज म काला पानी की सजा देने के पक्ष में था। तीसरे व्यक्ति को छोड़ दिया गया। प्रमोद का मामला एक तीसरे जज को सौंपा गया। उसने २३ अगस्त १९२६ को उसके प्राण दण्ड की पुष्टि कर दी। अनन्त हरी प्रमोद रंजन चौधरी को फांसी दे दी गई उन दोनों की मृत्यु कई अर्थों में १९०८ में कनाईलाल दत्त की मृत्यु के समान थी।

काकोरी रेलवे ट्रेन की डकैती (१९२५-२७)

उत्तर प्रदेश में जो बहुत सी क्रांतिकारी हलचलें हुईं उसमें काकोरी डकैती निस्सदेह प्रमुख और सबसे अधिक महत्वपूर्ण घटना थी। विशेषकर इस दृष्टि से कि इस एक घटना में तीन नहीं चार मूल्यवान जीवन बलिदान हुए।

उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों और बंगाल के कुछ युवक मातृभूमि के प्रति प्रेम के समान बंधन से एक सूत्र में बंध गए। विदेशियों को देश से खदेड़ कर बाहर करने के लिए वे विचार विनिमय करने के लिए मिले। शाहजहांपुर के रामप्रसाद बिस्मिल ने कहा कि अहिंसक संघर्ष से कुछ होने वाला नहीं है देश को दासता से मुक्त करने के अन्य साधनों को काम में लाना होगा। इस षडयन्त्र में सम्मिलित होने वाले लगभग सभी क्रांतिकारी १९२४ के प्रारम्भ में रामप्रसाद बिस्मिल के मकान पर भावी कार्यक्रम निश्चित करने के लिए मिले। उसके पश्चात एक दूसरी मीटिंग में उन्होंने कार्यक्रम की

रूपरेखा निश्चित करली। उनमें से प्रत्येक ने अपना एक नया नाम रख लिया जिससे कि वे अपने संगठन में पुकारे जाते थे। उदाहरण के लिए 'नवाब' गंगाराम क्रिकसिल्वर आदि आदि। दल के नेता रामप्रसाद बिस्मिल के चार नाम थे। अशफाक उल्ला 'कुंवरजी' के नाम से प्रसिद्ध थे और बहुधा हिन्दू लिबास में रहते थे। रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में उनके दल तथा उस दल के सदस्यों के साथ जिन पर मनपुरी षड्यन्त्र के सम्बन्ध में मुकदमा चला था जिसमें गेंदालाल दीक्षित प्रमुख थे ने कई स्थानों पर कार्यवाहियां कीं। बेरगढ़, बिचपुरी, मनपुरी इत्यादि स्थानों पर जो डकैतियां पड़ीं उनमें रामप्रसाद बिस्मिल के दल ने प्रमुख रूप से भाग लिया था। ९ अगस्त १९२५ को लखनऊ जंक्शन से १४ मील की दूरी पर आलमनगर तथा काकोरी स्टेशनों के बीच एक पसेंजर ट्रेन को खतरे की जंजीर खींच कर क्रांतिकारियों ने रोका। उसी दिन आठ बज कर तीस मिनट पर रात्रि को पुलिस में घटना की प्रथम सूचना रिपोर्ट दी गई।

यह पता लगा कि जब काकोरी से ट्रेन लखनऊ के लिए रात्रि में सवा सात बजे चली तो चार व्यक्ति चलती हुई गाड़ी के सेकण्ड-क्लास में घुस गए उन्होंने गार्ड से गाड़ी को रोकने के लिए कहा क्योंकि उनका असबाब काकोरी स्टेशन पर छूट गया है। गार्ड गाड़ी रोकने से इनकार कर दिया। तुरन्त ही दो आक्रमण कारियों ने रिवाल्वर निकाल लिए और गार्ड को उन्होंने बांध दिया। उन्होंने जंजीर खींच दी। जैसे ही गाड़ी रुकी सोलह आदमी ब्रेक वान में घुस आए और गार्ड के डिब्बे में से उस संदूक को ले गए जिसमें कैश (नकद रुपया) था। उनमें से कुछ यात्रियों पर चौकसी रख रहे थे। एक गुरखा यात्री जिसने अपनी राइफिल निकालने की कोशिश की उसको एक आक्रमणकारी ने गोली से मार दिया। एक दूसरे यात्री जिसने खिड़की से झांक कर देखना चाहा रिवाल्वर की गोली से जख्मी हो गया। एक योरोपियन यात्री जिसके पास राइफिल थी उसका पैर जख्मी हो गया क्योंकि वह उन आक्रमणकारियों पर आक्रमण करने के लिए ट्रेन से उतर रहा था। जिस समय कि ट्रेन लूटी जा रही थी उसी समय देहरादून मेल उस खड़ी गाड़ी के पास आ गई, इस कारण विवश होकर आक्रमणकारियों को भागना पड़ा। ब्रेक वैन से जो खजाने के संदूक ले जाए गए थे घटना स्थल से थोड़ी ही दूरी पर दूसरे दिन खाली कर दिए गए।

उत्तर प्रदेश में तथा अन्य स्थानों पर सभी संदेहास्पद व्यक्तियों को २६ सितम्बर १९२५ को गिरफ्तार कर लिया गया। गिरफ्तारियां उत्तर प्रदेश के अनेक स्थानों पर हुई। काकोरी डकैती का सम्बन्ध बंगाल, सिंगापुर तथा अन्य स्थानों के क्रांतिकारियों से जोड़ने के लिए भरसक प्रयत्न किए गए।

छब्बीस व्यक्तियों पर जिनमें रामप्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र नाथ लाहिरी, और रोशनसिंह भी थे दिसम्बर १९२५ में अभियोग चलाया। प्रारम्भिक जांच के उपरान्त १६ अप्रैल १९२६ को अभियोग सेशन भेज दिया गया। एक मई १९२६ से अभियोग लखनऊ में सेशन की अदालत में चलना आरम्भ हुआ। पांच अभियुक्तों को छोड़ दिया गया केवल बीस पर मुकदमा चला कुछ फरार थे उन पर उनकी अनुपस्थिति में मुकदमा चलाया गया। काकोरी डकैती के अतिरिक्त अभियुक्तों को बमरौली की डकैती (२५ दिसम्बर १९२४) बिचपुरी डकैती (पीलीभीत जिला) (९ मार्च १९२५) और द्वारकापुर डकैती (२४ मई १९२५) के लिए भी उत्तरदायी ठहराया।

बहुत लम्बे समय तक अभियोग चलता रहा क्योंकि रामप्रसाद बिस्मिल, रोशन

सेह,¹ तथा राजेन्द्र नाथ लाहिरी ने लम्बे समय तक भूख हड़ताल रक्खी थी इस कारण अभियोग को रोकना पड़ा था। तीनों तरुणों को सेशन न्यायालय से प्राण दंड की सजा दी गई और अन्य अभियुक्तों को विभिन्न समय के लिए कठोर कारावास दिया गया। ६ अप्रैल १९२६ को फसला सुनाया गया अभियुक्तों पर इंडियन पेनल कोड की १२१ अ, १२० ब, ३९६ और ३०२ धाराओं के अन्तर्गत अभियोग चलाया गया था। इसी बीच सितम्बर १९२६ में अशफाकउल्ला भी अन्य साथियों के साथ दिल्ली में पकड़े गए और उन्हीं आरोपों के आधार पर उन पर भी एक पृथक अभियोग चलाया गया। २२ अप्रैल १९२६ को सेशन में अभियोग आरम्भ हुआ। अशफाकउल्ला को कानून में अधिक तम दंड अर्थात मृत्यु दंड की सजा दी गयी। बंदियों को एक दूसरे से पृथक कर दिया गया। रामप्रसाद बिस्मिल को एक अन्य के साथ गोरखपुर के जेल में रखा गया। रोशनसिंह को इलाहाबाद जेल में राजेन्द्रनाथ लाहिरी को गोंडा में और अशफाकउल्ला को फजाबाद जेल में रखा गया।

वायसराय को दया के लिए स्मृति पत्र दिया गया जिसे उसने १० अक्टूबर १९२७ को अस्वीकार कर दिया और बंदियों को सूचना दे दी गई कि उनको १२ अक्टूबर १९२७ को फांसी लगाने की तिथि निश्चित कर दी गई है। किन्तु फासी को इस कारण रोकना पड़ा क्योंकि अभियुक्तों ने प्रिवी काऊंसिल में अपील की जो कि नवम्बर १९२७ के अन्तिम सप्ताह में सुनी गई। १२ दिसम्बर १९२७ को अपील अस्वीकृति हो गई और सभी जेलरों को अपील के परिणाम से सूचित कर दिया गया। (१) १७ अक्टूबर १९२७ को राजेन्द्रनाथ लाहिरी को गोंडा जेल में फांसी दे दी गई। (२) अशफाकउल्ला और (३) रामप्रसाद बिस्मिल को १९ दिसम्बर १९२७ को क्रमश फजाबाद और गोरखपुर जेलों में फांसी दी गई।

२१ दिसम्बर १९२७ को अन्तिम अभियुक्त (४) रोशनसिंह ने नैनीताल जेल में फासी के तख्त पर अपने प्राण दिए। प्रत्येक युवक अभियुक्त ने मृत्यु के सामने भी अभूतपूर्व साहस प्रदर्शित किया। उनके वक्तव्य तथा पत्र भावी पीढ़ी के लिए ग्रहणीय हैं जिन्हें अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता की रक्षा करनी होगी। गोंडा जेल से राजेन्द्र नाथ लाहिरी ने १३ दिसम्बर १९२७ को लिखा "आज प्रात काल जेल सुपरिंटैंडेंट ने मुझे सूचित किया कि प्रिवी काऊंसिल ने मेरी अपील अस्वीकार कर दी, मेरी मृत्यु गौरवपूर्ण होगी, किसी को उसके लिए खेद नहीं करना चाहिए। आप सब भगवान से यह प्रार्थना करें कि मैं पुन जन्म लूं और अपना जीवन मातृभूमि की सेवा में पुन अर्पित करूं।' राजेन्द्रनाथ लाहिरी अपने देशवासियों को उसके बचाव के लिए सभी सम्भावित उपाय करने के लिए धन्यवाद देना नहीं भूला।

राजेन्द्रनाथ लाहिरी के भाई ने जो कि लाहिरी को फांसी के दिन जेल में उपस्थित था। उसने जनता को बतलाया कि राजेन्द्रनाथ बहुत प्रसन्न बदन दिखलाई दे रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो कि वह अपने इस भौतिक शरीर को एक नए तथा अधिक भव्य और गौरवशाली शरीर में परिणित कर रहा हो। उन्होंने प्राणदंड का सामना साहस पूर्ण ढंग और वीरता से किया। उनके मुख मंडल पर दिव्य आभा झलक रही थी। पिछली सारी रात वे भजन गाते रहे तथा भगवत गीता तथा उपनिषदों के श्लोकों का पाठ करते रहे। प्रात काल ६ १५ तक यह क्रम चलता रहा। उसके उपरान्त लाहिरी दृढ़ कदमों से और चेहरे पर मुस्कराहट लिए हुए वार्डरों के

पीछे चले और फांसी के तख्ते पर सीधे तन कर खड़े हुए और प्रसन्न मुद्रा में उन्होंने मृत्यु का सामना किया।

रामप्रसाद बिस्मिल ने जहां क्रांतिकारी जीवन में अद्भुत साहस और कार्य क्षमता का परिचय दिया था अपनी ममता मयी मां को देखकर द्रवित हो उठा जो कि उन्हें फांसी होने के पहले अन्तिम विदा देने आई थी। वह स्थानान्तरित शोक था। रामप्रसाद इस विचार से विह्वल हो उठे कि उनकी ममता मयी मां अपने पुत्र के वियोग से दुखी और व्याकुल रहेगी। मां को अपने पुत्र की आंखों में अश्रु देखकर यह भ्रम हुआ कि वह फांसी के भय से रो रहे हैं उन्होंने कहा कि मुझे तुमसे ऐसी आशा नहीं थी कि तुम ऐसे समय जब कि तुमको असीम प्रसन्नता और साहस के साथ मृत्यु का सामना करना चाहिए तुम द्रवित हो उठोगे। रामप्रसाद ने तुरन्त ही उनकी भूल से अवगत करा दिया और उनके मुख मंडल पर शोक के स्थान पर आत्म गौरव की आभा उद्भासित हो गई। रामप्रसाद ने अपने पिता को यह कह कर सान्त्वना दी कि एक पुरुष होकर और रामप्रसाद के पिता होने के नाते उन्हें रोना शोभा नहीं देता जब कि स्त्री होकर उनकी मां ने अपने प्रिय पुत्र के वियोग के करुण दुख पर साहस और वीरता के साथ विजय प्राप्त कर ली है। रिपोर्ट के अनुसार रोशनसिंह अन्त तक अत्यन्त शान्त और अविचलित रहे। उनके होठों ने जिस अन्तिम शब्द का उच्चारण किया वह 'वन्दे मातरम्' था। अशफाकउल्ला ने अद्भुत साहस और देश प्रेम का परिचय दिया। जो वकील उनके पक्ष की पैरवी कर रहे थे उन्होंने अपने मुवक्किल के व्यवहार और आचरण का जो परिचय दिया वह उन्हें क्रान्तिकारियों में भी बहुत ऊंचा उठा देता है। सरकार ने उनके सामने यह प्रस्ताव रक्खा कि यदि वे अपने क्रान्तिकारी साथियों के अपने सम्बन्ध में और काकोरी कांड में उनका क्या भाग रहा उसके बारे में बयान दें तो उन्हें मुक्त कर दिया जायेगा। उन्होंने अपने साथियों के साथ विश्वासघात के मूल्य पर प्राण रक्षा करने के उस सरकारी प्रस्ताव को घृणा के साथ अस्वीकार कर दिया। अभियोग का परिणाम पूर्व विदित था। रोशन को फांसी की सजा दी जा चुकी थी उनके विरुद्ध और उनको दोषी सिद्ध करने के लिए और अधिक साक्षी जुटा ली गईं थी इस कारण इस बात की किंचित मात्र भी आशा नहीं हो सकती थी कि उनकी गरदन को किसी भी प्रकार रक्षा हो सकती है। इस पृष्ठ भूमि में जिस दिन अभियोग का फैसला सुनाया जाने वाला था उस दिन अशफाकउल्ला न्यायालय में बहुत प्रसन्न मुद्रा में आए थे हलके पीले रंग की पोशाक पहने हुए थे, उनकी भाव भंगिमा उन्नत ग्रीवा और तना हुआ शरीर तथा मिलने वाले दंड के प्रति घोर उपेक्षा जो उन्होंने उस अवसर पर प्रदर्शित की वह उनके ऊंचे आत्मबल की सूचक थी।

अशफाकउल्ला को काकोरी और बिचपुरी कांडों में भाग लेने के अपराध में दो प्राण दंड दिए गए। अन्य अपराधों के लिए विभिन्न काल के लिए कठोर कारावास दिया गया। जब फैसला सुनाया गया तो अशफाकउल्ला के मित्र और सम्बन्धी शोकातुर हो उठे। उसके विपरीत अशफाकउल्ला ने कहा कि इसमें दुखी होने की कोई बात नहीं है। केवल एक बात है जिसके बारे में मैं प्रसन्न नहीं हूं। उत्तर में कहा कि बंदी का वजन बहुत अधिक बढ़ गया है यहां तक कि इस सम्बन्ध में एक को छोड़ कर उसने सब रेकार्ड (मान दण्ड) तोड़ दिए हैं। उस व्यक्ति का वजन अशफाकउल्ला से भी ६ पौंड अधिक बढ़ा था। उसने जेलर को आश्वासन दिया था कि वह किसी को

रेकार्ड को तोड़ने नहीं देगा। परन्तु खेद है कि उसको उस सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने से वंचित कर दिया जावेगा क्योंकि उसको फैसला हो जाने के उपरान्त उस जेल में रख दिया जावेगा जिसमें फांसी की सजा पाने वालों को रक्खा जाता है। यदि उसको 'ब' श्रेणी के राजनैतिक कैदियों के प्रति जैसा व्यवहार होता है और जैसा कि अभियोग चलने के समय उसे प्राप्त था जीवन के शेष थोड़े दिनों में और मिले तो वह इस सम्बन्ध में सबों के और सब समयों के रेकार्ड तोड़ सकता है। फैजाबाद जेल में उसके एक मित्र उसके भाई और भतीजे से अंतिम बार उससे साक्षात्कार करने की आज्ञा उसको मिली थी। उस अंतिम साक्षात्कार में उसने अपने शोकातुर सिसकते हुए सम्बन्धियों से कहा कि उन्हें उस पावन और गम्भीर घड़ी में जब कि अतीव प्रसन्न होने का अवसर है तनिक भी शोक करके उसके महत्व को नष्ट नहीं करना चाहिए। मैं इस बात को अपने लिए महान प्रतिष्ठा और गौरव की बात मानता हूं कि मुझे अपने उन देशवासियों का प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है जिन पर मातृभूमि की स्वतन्त्रता के संघर्ष का उत्तरदायित्व है। उन्हें यह देखकर प्रसन्नता होनी चाहिए कि उनका एक निकट सम्बन्धी भाई और चाचा मातृभूमि के लिए अपने जीवन का बलिदान कर रहा है। उन्हें यह याद रखना चाहिए कि हिन्दू समाज में कन्हाई और खुदी राम जैसे ऊंची आत्मा वाले वीर उत्पन्न हुए हैं। यह उनके लिए और भी विशेष गौरव की बात है कि सम्भवतः मुसलमानों में वह पहला व्यक्ति है कि जो उन अविनाशी प्रसिद्धि वाले शहीदों के चरण चिन्हों का अवलम्बन कर रहा है। यह अत्यन्त खेद और पश्चाताप की बात है कि इन वीर और साहसी युवकों ने अपने को जिस महान गौरव के प्रभा मंडल से आच्छादित कर लिया था उस गौरव-प्रभा को हमारे देशवासी आज अपने अशोभनीय आचरण से धूमिल कर रहे हैं।

विस्तृत क्षेत्र में (१९२८)

मौलवी बरकतउल्ला उस दल के अत्यन्त सक्रिय तेजस्वी और साधन प्राप्त सदस्य थे जो भारत के बाहर देश की मुक्ति के लिए प्रयत्न कर रहा था। अपने यौवन के प्रारम्भिक काल में वे भोपाल से इङ्गलैण्ड अध्ययन के लिए गए थे। वहां उन्होंने स्वतंत्र वायु मंडल का सुख अनुभव किया और वे कार्य करने की एक परिपक्व योजना लेकर देश वापस लौटे। उन्होंने बंगाल के कतिपय क्रान्तिकारियों से सम्पर्क स्थापित किया। बंग भंग के समय उनकी भावना को बहुत ठेस लगी। उनका हृदय रोष से भर गया और उन्होंने बंगालियों के साथ मिल जाने का विचार किया जिन्होंने उस शक्ति के मूल को ही उखाड़ फेंकने का निश्चय किया था जिसने वह विनाश कार्य (बंग भंग) किया था। उन्होंने मुसलमानों में कार्य करना आरम्भ किया और एक सीमा तक वे उनमें राष्ट्रीय भावना की जागृति कर सके जो कि तब तक निरन्तर देश की अन्य जातियों के साथ किसी राजनीतिक आन्दोलन में सहयोग करने से इनकार करते रहे थे।

वह गुप्त रूप से भारत से चले गए। उस समय रंगीन एशिया वासियों की दृष्टि में जापान सैनिक शक्ति का प्रतीक था। उन्होंने वहां अध्यापन कार्य करना आरम्भ किया और अपने सम्पादकत्व में एक पत्र 'यू इस्लाम' प्रकाशित करना शुरू किया। जापान में भी उन्हें शान्ति से नहीं रहने दिया गया क्योंकि ब्रिटिश गुप्तचर विभाग के खूनी कुत्ते (गुप्तचर) उनके पीछे लगे हुए थे। किसी प्रकार वे जापान से निकलकर

संयुक्तराज्य अमेरिका चले गये। वहाँ उन्होंने भारतीयों में राष्ट्रवाद की बढ़ती हुई प्रबल भावना को देखा और देखा कि भारतीय नेता प्रत्येक राष्ट्रीय भावना वाले भारतीय को भारत लौटने और क्रान्तिकारियों के साथ मिल कर काय करने का आह्वान कर रहा है कि जो कि आने वाले स्वतन्त्रता संग्राम की तैयारियां कर रहे थे।

उनको ज्ञात हुआ कि मध्य पूर्व के मुस्लिम देशों को प्रभावित करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं अतएव उन्होंने शीघ्रता पूर्वक संयुक्त अमेरिका से पलायन किया और इस्तम्बुल में १९१५ में इंडो जर्मन टर्किश मिशन में सम्मिलित हो गए। बरकत उल्ला मिशन के साथ काबुल पहुँचे और उसके सदस्यों ने अफगानिस्तान में एक आजाद हिन्दुस्तान की सरकार बनाई। अफगानिस्तान सरकार द्वारा अपना समर्थन वापस ले लेने से मिशन को शीघ्रता पूर्वक अफगानिस्तान छोड़ना पड़ा। बरकत उल्ला जरमनी चले गए। उनको उन भारतीय युद्ध बंदियों को जो कि जरमनी द्वारा युद्ध में बन्दी बना लिए गए थे ब्रिटिश सरकार के प्रति भक्ति और निष्ठा को तिलांजलि देकर क्रान्तिकारियों के साथ आने और काय करने के लिये आन्दोलन चलाने का काय भार सौंपा गया। बरकत उल्ला जरमनी में बर्लिन स्थित इण्डियन नेशनल पार्टी के सदस्य बन गए जो जरमन जनरल स्टाफ से सम्बद्ध थी। प्रथम विश्व युद्ध के समाप्त होने पर बरकत उल्ला ने योरोपियन देशों का दौरा किया व जहां गए वहाँ उन्होंने भारत की स्वतन्त्रता के पक्ष में प्रचार किया। योरोप का दौरा करते १९२१ में रूस में पहुँचे। दूसरे ही वर्ष वे जरमनी वापस लौट आए और अल–इस्लाम' नामक पत्र प्रकाशित करना आरम्भ किया जो कुछ समय प्रकाशित होकर बन्द हो गया। जरमनी से १९२७ में ब्रूसल्स में होने वाले साम्राज्य विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में उन्होंने भाग लिया। वहां उन्होंने उन राष्ट्रों का अपने ओजस्वी और तक पूर्ण भाषण में पक्ष समर्थन किया कि जो साम्राज्यवादी शक्तियों की दासता में बंधे हुए थे।

वर्षों तक अथक परिश्रम करने के उपरान्त मौलाना साहब अत्यन्त श्रान्त और थकावट अनुभव करने लगे। उनकी इच्छा थोड़ा विश्राम लेने की हुई। जब कि वे विश्राम लेने की बात सोच रहे थे कि प्रसिद्ध क्रान्तिकारी राजा महेन्द्र प्रताप उनके स्थान पर आकर मिले। उन्होंने श्री बरकतउल्ला खां को अपने साथ अन्य स्थानों को विश्राम करने के लिए चलने का आग्रह किया और उन्हें राजी कर लिया। उनके सक्रिय जीवन का अन्त समीप आ रहा था। थोड़े दिनों की बीमारी के उपरान्त मां भारती का यह महान पुत्र २७ सितम्बर १९२७ को चिर निद्रा में सो गया।

स्मरणीय समय (१९२८-३१)

एक अप्रत्याशित मोड़

अधिकारियों ने अशान्ति तथा विद्रोह को दबाने के लिए जो कठोर कदम उठाये उनके कारण पंजाब रोष और क्षोभ से तिलमिला रहा था। विभिन्न स्थानों पर समय समय पर फुटकर हिंसक कार्यवाहियां हो रही थीं। उसी समय ३० अक्टोबर १९२८ को साइमन कमीशन लाहौर पहुंचा। साइमन कमीशन के विरुद्ध प्रदर्शन करने के लिए एक विशाल जलूस रेलवे स्टेशन की ओर बढ़ रहा था। वहां पुलिस ने मजबूत लकड़ी के खम्भों में कांटेदार तार लगा कर उसको रोकने के लिए बाड़ बना रखी थी। कांटेदार बाड़ के समीप प्रथम पंक्ति में पंजाब केसरी लाला लाजपतराय तथा अन्य नेता खड़े थे। जलूस नितान्त शांत और अहिंसक था जलूस में किसी के पास हथियार या लाठी आदि

मही थी वह साइमन के आने की शान्ति पूर्ण ढंग से प्रतीक्षा कर रहा था। उसी समय किसी उच्च पुलिस अधिकारी की आज्ञा से उस जलूस पर बिना प्रकोपन का तनिक भी अवसर नहीं दिया था पुलिस ने आक्रमण कर दिया। एक लाठी के प्रहार से लाला लाजपत राय का छाता टूट गया। उन पर कई लाठी प्रहार हुए एक लाठी उनकी छाती में लगी जिससे उनकी छाती में चोट आ गई। उस लाठी प्रहार के सम्बन्ध में लाला जी ने स्वयं ने कहा कि यद्यपि पुलिस के लाठी प्रहार से लगने वाली चोटें बहुत गम्भीर नहीं थीं परन्तु मेरे विचार से उनके परोक्ष प्रभाव से मुझे बहुत गहरा धक्का लगा जिससे मेरे स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। १७ नवम्बर १९२८ को स्नायु शैथिल्य के कारण लाला जी की हृदय गति के रुक जाने से मृत्यु हो गई। उनके चिकित्सक ने कहा कि ३० अक्टोबर को जो उनके चोटें लगी उन्होंने निस्सन्देह उनकी मृत्यु को शीघ्र ला दिया।

लाला जी की दुखद मृत्यु के पश्चात उसका प्रतिशोध लेने में अधिक देरी नहीं लगी। लाला जी की मृत्यु का प्रतिशोध एक युवक समूह ने लिया जो पहले से ही सरकार को उखाड़ फेंकने के लिए विद्रोह खड़ा करने के लिए प्रयत्नशील थे। भगत सिंह तथा उनके पच्चीस साथियों ने हिन्दुस्तान रिपब्लिकन ऐसोसियशन तथा इन्डियन रिपब्लिक पार्टी नामक दो पार्टियाँ स्थापित की थी। जो बाद को हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी में मिल गई। २ अगस्त १९२८ में देहली में विभिन्न प्रान्तों की कार्यवाहियों का समन्वयन करने के लिए एक बैठक हुई और एक केन्द्रीय समिति का गठन किया गया। प्रत्येक प्रदेश का एक नेता नियुक्त किया गया। भगतसिंह तथा सुखदेव को पंजाब का उत्तरदायित्व दिया गया। चन्द्रशेखर शिव वर्मा तथा एक अन्य को उत्तर प्रदेश सौंपा गया। इसी प्रकार बिहार उड़ीसा और राजपूताने तथा अन्य प्रदेशों की व्यवस्था की गई। चन्द्रशेखर आज़ाद ने सैनिक विभाग का कार्य भार सम्भाला। भगवती चरन, भगतसिंह के मुख्य सहायक नियुक्त किए गए। यह निर्णय लिया गया कि अपने अधिकार क्षेत्र में जो भी कार्यवाही हो उसके लिए उस क्षेत्र के अधिकारी उत्तरदायी होंगे यदि किसी प्रान्तीय नेता को प्रान्त के बाहर यदि कोई कार्यवाही करनी हो अथवा बाहर से कोई सहायता लेनी हो तो वह मामला केन्द्रीय समिति के सामने आवेगा। वही उसके सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय करेगी और आज्ञा देगी। सभी अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद केन्द्रीय समिति के पास जमा रहेंगे और जब भी और जहां भी उसकी आवश्यकता होगी वह विभिन्न प्रांतों के सदस्यों को कार्यवाही के लिए दिए जाया करेंगे। इसी प्रकार पार्टी की वित्तीय व्यवस्था के लिए केन्द्रीय समिति जिम्मेदार रहेगी

साडर्स की हत्या

१० दिसम्बर को लाहौर में हिन्दुस्तान सोशलिस्ट पार्टी की काउंसिल की गुप्त बैठक मोजंग हाऊस में अर्थात पंजाब नेशनल बैंक की घटना के कुछ ही दिन बाद हुई उसमें पार्टी की कार्यवाहियों का कार्यक्रम निर्धारित किया गया। बैठक में यह निश्चय किया गया कि लाला लाजपत राय पर लाठी वर्षा के लिए उत्तरदायी श्री स्काट की हत्या कर दी जाय।

११ दिसम्बर को दल के एक सदस्य को उक्त पुलिस आफिसर की गतिविधियों पर नज़र रखने के लिए नियुक्त किया गया। चौदह दिसम्बर को चार बजे सायंकाल कार्यवाही करने का निश्चय किया गया।

इसी बीच उस दिन कार्यवाही करने के लिए उस कार्य के लिए चुने गए अपने

साथियों के साथ भगतसिंह तयारियां कर रहे थे। कार्यक्रम का एक अंग स्वरूप हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी की ओर से लाल रंग के कागज पर छपे हुए परिपत्र बड़े पैमाने पर सर्व साधारण में बांटे गए।

कुछ कारणों से स्काट की हत्या की तारीख बढ़ा कर सत्रह कर दी गई। राजगुरु, भगतसिंह चन्द्रशेखर आजाद तथा एक अन्य सुपरिंटेंडट पुलिस के कार्यालय के पास एकत्रित हुए जो कि मुख्य सड़क पर था जो डी ए वी कालेज तथा कलक्टरी को मिलाती थी। उन्होने भागने के लिए तीन साइकिलें तयार रक्खी थीं। एक व्यक्ति को पदल जाना था। राजगुरु कुछ कदम आगे बढ़ा और ऐसे स्थान पर ठहर गया जहां से वह शिकार पर आक्रमण कर सकता था। आजाद डी ए वी कालेज के फाटक के पास चार दीवारी से सट कर खड़ा हो गया।

सांडस जिसे क्रान्तिकारियों ने भूल से स्काट समझ लिया। सुपरिंटेंडट पुलिस के कार्यालय से तीसरे पहर चार बज कर संतीस मिनट पर बाहर निकला और अपनी मोटर साईकिल पर सवार होने ही वाला था कि राजगुरु हाथ में रिवाल्वर लिए आगे झपटा। उसने सांडस पर गोली चलाई जो उसके सर में लगी। सांडर्स गोली लगते ही पृथ्वी पर गिर गया उसी समय भगतसिंह दौड़ता हुआ उस स्थान पर आया और गिरे हुए सांडस पर पांच या ६ गोलियां चलाईं। आक्रमणकारी में गजब का आत्म विश्वास था। सांडस पर गोली चला कर वह घटना स्थल से घूमा और अपनी जेबों में दोनों हाथ डाल कर इस प्रकार वहां से चल दिया मानो वहां कुछ हुआ ही न हो।

जब कि सांडस पर गोली चलाई जा रही थी तब एक सार्जेंट कार्यालय से बाहर निकला और उसने तथा सांडस के अंगरक्षक चन्नानसिंह ने आक्रमण कारियों का पीछा किया। इन दोनों में से एक ने फिर कर सार्जेंट पर गोली चलाई लेकिन वह उसके पास से निकल गई वह बाल बाल बच गया। फिर भी उसने पीछा करना नहीं छोड़ा। भाग्यवश वह फिसल जाने से गिर पड़ा और उसकी बांह की हड्डी टूट गई।

गोली कांड में हिस्सा लेने वाले सभी क्रान्तिकारी डी ए वी कालेज बोर्डिंग के मुख्य फाटक की ओर बढ़े उस समय उन्होंने देखा कि चन्नानसिंह दौड़ता हुआ उनके बहुत समीप आ गया है। चन्द्रशेखर आजाद जो कि साथियों के बच कर भाग निकलने को संरक्षण देने के लिए उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे उन्होने उस पुलिसमैन पर गोली चलाई। गोली उसके पेट में लगी वह कुछ गज की दूरी तक पीछा करते हुए और दौड़ा, उसके जख्म से रुधिर बह कर पृथ्वी पर टपक रहा था परन्तु कुछ गज जाकर वह धराशायी हो गया।

आक्रमणकारी प्रिंसिपल के बंगले के पास [redacted] समीप के फाटक से डी ए वी कॉलिज में घुसे और एक हाल में से निकल कर वे बोर्डिंग हाऊस पहुंचे। पहली मंजिल में जाकर वे इमारत के पिछले भाग में पहुंचे। वहां पहुँच कर उन्होंने दीवार को फांदा और पृथ्वी पर कूद गए। वहां से उन्होंने अपनी साइकिलें लीं और बोर्डिंग हाऊस की इमारत के पिछले फाटक से निकल गए।

पुलिस ने बाद को जो खोज की तो उन्हें कुछ दूरी पर साइकिलें छोड़ी हुई पड़ी मिलीं और यह ज्ञात हुआ कि नाभा हाऊस के पीछे कहीं मोटर कार उनकी प्रतीक्षा में खड़ी थी जिसमें सवार होकर वे क्रान्तिकारी ग्रामीण क्षेत्र की ओर भाग गए, और

उनके कोई चिह्न नहीं मिले।

इसके उपरान्त उन आक्रमणकारियों की खोज के लिए पुलिस ने आकाश पाताल एक कर दिया। रावी नदी के किनारे सघन वन को पुलिस ने इस उद्देश्य से छान डाला कि सम्भव है कि वहां उस घटना से सम्बन्धित रिवाल्वर अथवा अन्य कोई वस्तु मिल जाय।

अपनी खोज बीन के बीच पुलिस ने कई स्थानों की तलाशी ली। यहां तक कि सर्वेंट आफ इण्डिया सोसायटी (भारत सेवक समिति), डी० ए० वी० कालेज होस्टल दैनिक प्रताप, आदि की भी तलाशी ली गई परन्तु वहां कोई भी आपत्तिजनक वस्तु नहीं मिली। १० दिसम्बर तक बीस से कम गिरफ्तारियां नहीं हुईं जिनमें से कई विद्यार्थी थे।

इसके विरुद्ध लाहौर के ट्रिब्यून दैनिक पत्र के सम्पादक को एक व्यक्ति का पत्र मिला जिसने अपने को भारत की क्रान्तिकारी सेना का प्रधान सेनापति घोषित किया था। उस पत्र में उसने लिखा था कि उसने साडर्स की हत्या की है और वह अब भी स्वतन्त्र और स्वच्छन्द घूम रहा है और पुलिस अब तक उसके किसी सहयोगी को स्पर्श भी नहीं कर सकी। उसके पास अभी भी बहुत बड़ी राशि में गोली, बारूद और कारतूस हैं और वह अपनी कार्यवाही जारी रखने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ है। २२ दिसम्बर १९२८ को लाहौर और शालीमार द्वारों पर एक हाथ का लिखा पोस्टर चिपका मिला वह उन्हीं महानुभाव का था (भारतीय क्रान्तिकारी सेना के प्रधान सेनापति का) उसमें स्वयं अपने को गिरफ्तार करने वाले को सरकार ने जो भी उनकी गिरफ्तारी पर पारितोषिक घोषित किया हो उसके अतिरिक्त पांच हजार रुपए के पुरस्कार देने की घोषणा की थी।

आगे उस पोस्टर में लिखा था कि उसकी रुधिर की प्यास अभी बुझी नहीं है वह अभी लाहौर में पांच दिन और रहेगा। उसने लिखा था कि चानर्नसिंह को मारने की उसकी कोई इच्छा नहीं थी।

इसी सम्बन्ध में अगले सप्ताहों में अनेक पोस्टर विभिन्न स्थानों में चिपके मिले। इस प्रकार के पोस्टरों के जल्दी जल्दी निकलने से यह स्पष्ट हो गया कि लोग मजाक में यह सब कर रहे हैं उसके पीछे कोई गम्भीर योजना नहीं है।

गिरफ्तारियाँ

थोड़े से सदेहास्पद व्यक्तियों की गिरफ्तारियों से पंजाब पुलिस को न तो सतोष ही हुआ और न उन्हें आराम ही मिला। गुप्त रूप से लोगों पर निगाह रखना और जो भी कोई सदेहजनक सूचना उन्हें मिलती उसका पीछा करना उनके लिए नियमित काम बन गया।

६ एप्रिल १९२९ को पुलिस को यह सूचना मिली कि कुछ व्यक्तियों ने लाहौर के लोहे की वस्तुएं ढालने वालों को कुछ लोहे के अण्डाकार वस्तुएं बनाने को दी हैं जो कि दोनों तरफ खोखली हैं। उनको गैस की मशीन का एक भाग बताया गया है। स्थानीय कारीगरों को उस पुर्जे के सम्बन्ध में उत्कण्ठा जागृत हो गई और उन्होंने अपने जान पहचान के एक कांस्टेबिल से यह बात कही। यह सूचना पुलिस के मुख्य कार्यालय में पहुंची। पुलिस अधिकारियों ने सूचना देने वाले को आज्ञा दी कि जिन व्यक्तियों ने उक्त लोहे की वस्तु को बनाने का कारीगरों को आर्डर दिया है उन पर दृष्टि रखें और वे जहां जाते हैं, वहां तक उनका पीछा करें।

पुलिस ने देखा कि लोहे की वस्तुओं को ढालने वाले कारीगरों के पास सुखदेव बहुधा आता था और चुपचाप काश्मीर बिल्डिंग की ओर चला जाता था। वह मकान दिन में बन्द रहता था और ऐसा प्रतीत होता था कि दिन में वह खाली रहता था और रात्रि को खुलता था। पुलिस ने उस मकान पर यह जानने के लिए कड़ी दृष्टि रखी कि उसमें लोग किस समय आते हैं। ध्यान देने पर ज्ञात हुआ कि उस मकान की नालियों में कुछ पदार्थ जमा हो गया जिसमें गंधक के चिन्ह थे। इसी बीच जो देहली से सूचना आई और एसेम्बली में फेंके गये बमों के खोलों से मिलान किया गया तो ज्ञात हुआ कि लाहौर में बने हुए बमों की ही सूरत शक्ल के वे बम भी थे।

अन्त में सूचना मिलने पर १५ एप्रिल को पुलिस ने मैकलियाड रोड पर स्थित काश्मीर बिल्डिंग में कमरे नम्बर ६६ की तलाशी ली जिसे एक महीने पूर्व भगवती चरण ने तेरह रुपए मासिक पर किराये लिया था। उस कमरे में पन्द्रह दिन तक कोई नहीं रहा था उसके पश्चात कुछ छात्र वहां रहते थे। वे उस फ्लैट को दस बजे दिन में छोड़ देते थे और दोपहर बाद वापस आते थे। कभी कभी वे कई दिनों तक अनुपस्थित रहते थे। उस स्थान की तलाशी लेने पर पुलिस को ग्यारह बम २४ कारतूस तथा दो पिस्तौल मिले। मकान का किरायेदार भगवती चरण उस समय वहां मौजूद नहीं था। उस स्थान पर तीन व्यक्ति गिरफ्तार कर लिए गए जिनमें एक सुखदेव थे।

उसी दिन एक व्यक्ति बिलासपुर रेलवे स्टेशन पर गिरफ्तार किया गया जिसके पास सात बम मिले। १३ मई १९२९ को उत्तर प्रदेश मे सहारनपुर में तलाशी लेने पर वहां पांच बम पांच रिवाल्वर तथा दो कारतूस मिले। उस स्थान पर दो गिरफ्तारियां हुईं। उस समय पुलिस के कब्जे में बीस से अधिक व्यक्ति थे जिन्हें उसने गिरफ्तार कर रखा था।

एक कोलाहल पूर्ण अधिवेशन

जब कि मेरठ षड्यन्त्र अभियोग चल रहा था और लाहौर षड्यन्त्र अभियोग चलने वाला ही था कि भारत सरकार ने फरवरी १९२९ को लजिस्लेटिव एसम्बली में एक विधेयक उपस्थित किया जिसके सम्बन्ध मे कांग्रेस दल के नेता ने कहा 'कि उसका लक्ष्य भारतीय राष्ट्रवाद और कांग्रेस पर प्रहार करना है।" विधेयक को आवश्यक संशोधन के लिए सेलेक्ट कमेटी में भेज दिया गया।

एसम्बली के अध्यक्ष श्री वल्लभ भाई जे पटेल ने २ एप्रिल १९२८ को इस बात की सिफारिश की कि जब तक मेरठ षडयन्त्र अभियोग चल रहा है तब तक के लिए विधेयक को स्थगित कर दिया जाय। उन्होंने सुझाव दिया कि वे इस सम्बन्ध में अपनी व्यवस्था दें उससे पूर्व सरकार ट्रेड डिस्प्यूट विधेयक को ले ले। परन्तु गृह सदस्य (होम मेम्बर) ने यह स्पष्ट कर दिया कि यह सार्वजनिक हितों के लिए भयंकर रूप से खतरनाक होगा वे अध्यक्ष के उस परामर्श को मानने के लिए तैयार नहीं हैं।

८ एप्रिल १९२८ को अध्यक्ष ने आरम्भ में ही औद्योगिक अशान्ति सम्बन्धी विधेयक (ट्रेड डिस्प्यूट बिल) के सम्बन्ध में अपनी व्यवस्था दे दी। आगे की कार्यवाही के सम्बन्ध में ज्यों ही उन्होंने कहा 'अब जब कि औद्योगिक अशान्ति सम्बन्धी विधेयक हमारे मार्ग में नहीं है मैं अब "सार्वजनिक सुरक्षा विधेयक" (पब्लिक सेफ्टी बिल) के सम्बन्ध मे अपनी व्यवस्था देता हूँ' उन्होंने अपना वाक्य समाप्त भी नहीं कर पाया था कि ऐसेम्बली के फर्श पर एक के बाद दूसरा दो बम भयानक धड़ाके के साथ फटे और

उसके उपरान्त दो रिवाल्वर की गोलियां चलीं।

यह स्वाभाविक था कि बम फटने से और गोली चलने से एसम्बली के सदस्यों मे आतंक छा गया और दर्शक भयभीत होकर इधर उधर भागने लग गए। ऐसम्बली में भगदड़ पड़ गई।

कुछ लोगो ने देखा कि दर्शकों की दीर्घा मे एक युवक आगे बढ कर रेलिंग के पास आया उस पर झुका और उसने पहला बम फेंका उसके उपरान्त दूसरा तरुण आया और उसने दूसरा बम फेंका।

बम का भयकर प्रभाव विशेषकर दूसरे बम का इतना अधिक हुआ कि जहां फर्श पर बम फूटा था वहा का फर्श टुकडे टुकडे हो गया और दो बेंचें चकनाचूर हो गई।

बम फेंकने के तुरन्त बाद ही दूसरे युवक ने रिवाल्वर निकाल लिया और दो गोलियां चलाई। उसके उपरान्त वह हवा म कुछ विज्ञप्तियां फेंकने लगा जो कि 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन पार्टी का घोषणा पत्र था (परिशिष्ट अध्याय के अन्त म देखें) उनम से एक ने जोरदार शब्दो म कहा 'मैने अपने देश के प्रति कर्तव्य को पूरा किया है और अपने रिवाल्वर को अपने बैठने के स्थान पर फेंक दिया। दूसरे ने भी उसका अनुसरण किया। तभी सार्जेंट लोग दौड कर आए और उन दोनो ने बिना तनिक भी विरोध या प्रतिकार किए अपने को गिरफ्तार हो जाने दिया।

बाद को ऐसा पता चला कि उक्त दोनो युवक जब एसम्बली सभा भवन में कोई भी नही आया था तभी आकर अपनी जगहो पर बैठ गए थे। बमो को कागज मे लपेट कर वे वहा डेढ घन्टे से अधिक प्रतीक्षा करते रहे होगे तब कहीं जाकर उन्होने उनका उपयोग किया।

उन दोनो युवको ने अपने नाम क्रमश भगतसिंह आयु चौबीस वर्ष पजाब निवासी तथा दूसरा युवक बटुकेश्वर दत्त बगाली आयु २२ वर्ष जो पजाब म बस गया था—बताए। भगतसिंह को पुलिस एक दूसरे अभियोग म भी पकड़ना चाहती थी परन्तु उस समय तक भगतसिंह गिरफ्तार होने से बचता रहा।

एक प्रश्न के उत्तर म भगतसिंह ने पुलिस अधिकारियो को बतलाया कि इस संस्था जिसे लोग भारतीय पार्लियामेंट कहते है—के द्वारा राष्ट्र को अपमानित और लांछित किया जाता है अतएव यह अत्यन्त लज्जाजनक और अपमानजनक होता कि उसका गम्भीर और जोरदार विरोध किए बिना उसको चलने दिया जाता। अस्तु उन्होंने यह निश्चय कर लिया था कि इस तमाशे को रोकने के लिए वे अपने जीवन की आहुति दे देंगे और इस नौकरशाही का जनता के समक्ष नकाब उतार कर उसे अपने वास्तविक रूप में प्रकट कर देंगे।

वे दोनो गिरफ्तार युवक नितान्त शान्त और स्थिर चित्त थे मानो कुछ हुआ ही न हो।

१५ एप्रिल १९२९ को बहरों को सुनाने के लिए तेज आवाज' शीर्षक विज्ञप्ति लाहौरी फाटक पर चिपकी मिली।

पुलिस द्वारा इस महीने की सात तारीख को लाहौर म गैर कानूनी कार्यवाही ने हमें आगे कार्यवाही करने के लिए मजबूर कर दिया है। अतएव रिपब्लिकन एसोसियेशन आर्मी के प्रधान सेनापति ने शिमला में यह निश्चय किया है कि लाहौर पुलिस

के भ्राफिसर इन चाज को जिस प्रकार सांडस को मारा गया उसी प्रकार रास्ते से हटा दिया जाय। ग्रतएव क्रम सख्या २०३ तथा १८२ सनिकों को आज्ञा दी जाती है कि वे तु'त कायवाही करें।

आज्ञा से
जी रसूल
निजी सहायक
प्रधान सेनापति - रिपब्लिकन
एसोसियेसन आर्मी आव इंडिया

विज्ञप्ति के नीचे जो कि लाल कागज पर टाइप की हुई थी नीचे लिखा आदेश था —

प्रतिलिपि सनिकों सख्या २०३ और १८२ स्काट सीनियर सुपरिटेंडेंट पुलिस लाहौर, डिप्टी कमिश्नर लाहौर तथा सपादक ट्रिब्यून लाहौर को भेजी जाती है।

भगतसिंह और बटुकेश्वरदत्त ने ६ जून, १९२९ को मजिस्ट्रेट के सामने इस घटना के सम्बन्ध म उसके उद्देश्य और जिन परिस्थितियों में बम फेंके गए उनके सम्बन्ध में बयान देते हुए कहा—

'यह आक्रमण किसी व्यक्ति के विरुद्ध निर्दिष्ट नहीं था वरन वह एक सस्था विशेष के विरुद्ध था। हम मानवता के प्रति प्रेम में किसी से भी पीछे नहीं है ऐसी दशा मे किसी व्यक्ति विशेष के प्रति द्वेष रखने के स्थान पर हम मानव जीवन को अत्यन्त पवित्र मानते हैं हम नम्रतापूवक इतिहास और मानवीय आकांक्षाओं के तथा अपने देश की स्थिति के गम्भीर विद्यार्थी होने के अतिरिक्त अ य किसी बात का दावा नहीं करते और हम पाखण्ड से घृणा करते है।'

यह प्रतिवाद केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा (सेन्ट्रल लजिस्लेटिव एसम्बली) के विरुद्ध केवल उसकी नित्ता त व्यथता के कारण ही नहीं था वरन उसको उसकी कुचेष्टाओं को करने की असीम शक्ति मिली हुई है उसके विरुद्ध भी था।

हमे यह विश्वास हो गया है कि उसका अस्तित्व केवल इसलिए है कि वह विश्व के सामने भारत की अपमानजनक और असहाय अवस्था का प्रदर्शन करे और वह अनुत्तरदायी निरकुश शासन की सर्वोच्च प्रभुता का प्रतीक है।"

अनेकों बार राष्ट्रीय माग को रद्दी के कागजों की डलिया मे फेंक दिया गया है। सभा द्वारा पारित किए हुए सत्यनिष्ठ प्रस्तावों को इस तथाकथित भारतीय पार्लियामेंट के फर्श पर परों के तले रौंदा गया है। जहा दमनकारी तथा निरकुश अधिनियमों को निरसन करने के प्रस्तावों को यहा अत्य त उदात्त घणा के साथ अस्वीकार कर दिया गया वहीं उसके विरुद्ध सरकारी प्रस्तावों तथा उपायों को जि हे चुने हुए सदस्यों ने अस्वीकार कर रद्द कर दिया था कलम की एक रेखा से पुनस्थापित कर दिया गया। यही कारण है कि हमें इस सस्था को 'एक खोखला तमाशा और भ्रम' कहने पर बाधित होना पड़ा।

बयान में आगे उन्होंने कहा —

उन सावजनिक नेताओं की मनोवृत्ति जो भारत की असहाय दासता के इस नाटकीय प्रदर्शन पर जनता का धन और समय नष्ट करते हैं किसी भी व्यक्ति की समझ में नहीं आ सकती। मजदूर आन्दोलन के सभी नेताओं की गिरफ्तारी ने हमारे इस विश्वास को पुष्ट कर दिया है कि भारत के करोड़ों श्रमिक इस सस्था से कोई भाशा

नहीं कर सकते जो कि शोषकों के दम घोट देने की भयानक शक्ति और असहाय मजदूरों की दासता का भयानक स्मारक है।

अब मैं पहले वायसराय की कार्यकारिणी परिषद (ऐग्जीक्यूटिव काऊंसिल) के विधि सदस्य (ला मेम्बर) के शब्दों को उद्धृत करते हुए 'बम इङ्गलैंड को जागृत करने के लिए आवश्यक था" अभियुक्तों ने कहा

हमारा एक मात्र उद्देश्य बहरों को सुनने पर विवश करना तथा उनको जो कि ध्यान ही नहीं देते समय रहते चेतावनी देना था क्योंकि वे यह तेजी से अनुभव करते हैं कि भारतीय मानवता के ऊपर से दिखते हुए शान्त समुद्र में भयंकर तूफान उठने वाला है। हमने तो केवल उन लोगों को चेतावनी देने के लिए कि जो आगे आने वाले भयंकर खतरे की ओर तनिक भी ध्यान न देकर तेजी से भागे जा रहे हैं उनको केवल खतरे की झंडी मात्र बतलाई है।

हमने केवल 'काल्पनिक अहिंसा के युग की समाप्ति को चिन्हित मात्र किया है जिसकी व्यर्थता के सम्बंध में वर्तमान पीढ़ी पूरी तरह से विश्वास करती है।

"काल्पनिक अहिंसा की व्याख्या करने की आवश्यकता है। जब आक्रमक रूप से शक्ति का प्रयोग किया जावे तो उसे हिंसा कहते हैं अतएव नैतिक दृष्टि से वह अनुचित है। परन्तु यदि वह एक न्यायोचित उद्देश्य के लिए उपयोग में लाया जावे तो वह नैतिक दृष्टि से उचित है। सब स्थितियों और सब कुछ सहने पर भी शक्ति का उपयोग न करना काल्पनिक है और जो एक नया आंदोलन देश में उठ खड़ा हुआ है जिसकी हमने चेतावनी दी है उसको प्रेरणा देने वाले आदर्श "पवित्र गुरु गोविन्द सिंह, शिवाजी कमाल पाशा, रजाखां वाशिंगटन, गैरी बाल्डी लफायट्टी तथा लेनिन हैं।"

यदि उनकी इच्छा अधिकतम सम्पत्ति या मानव जीवन का विनाश करना होता तो वे यह अनायास ही सरलता से कर सकते थे क्योंकि उनको ऐसे शक्तिशाली बमों को बनाने का ज्ञान था। वे यदि चाहते तो वे एसम्बली के सभा भवन के ऐसे स्थान पर बम फेंक सकते थे कि जहां अधिकतम भीड़ होती और वे साइमन पर भी यदि चाहते तो बम का प्रहार कर सकते थे क्योंकि वह भी चैम्बर में बैठे हुए थे और उनके आक्रमण की पहुँच के अंदर थे।

आगे वे कहते गए —

उसके उपरांत हम लोगों ने जो कुछ किया उसका दण्ड भुगतने के लिए हमने स्वयं अपने को इसलिए पुलिस के समर्पण कर दिया कि हम साम्राज्यवादी शोषकों को यह बतलादें कि वे विचारों की हत्या नहीं कर सकते। हम जैसी दो महत्वहीन इकाइयों (व्यक्तियों) को कुचल देने से सम्पूर्ण राष्ट्र को नहीं कुचला जा सकता। हम उस ऐतिहासिक पाठ पर बल देना चाहते थे कि 'लैटर्स डी कट चेट और 'बस्टाइल्स जैसे भयानक अत्याचारों के प्रतीक भी फ्रांस के क्रांतिकारी आंदोलन को नहीं कुचल सके। फांसी और साइबेरिया के बंदी शिविर भी रूसी क्रांति की अग्नि को नहीं बुझा सके। क्या अध्यादेश तथा सुरक्षा सम्बन्धी विधेयक भारत की स्वतन्त्रता की अग्नि शिखा को बुझा सकेंगे। षड़यन्त्र के अभियोग, चाहे फिर वह पुलिस द्वारा बनाए गये हों अथवा खोज निकाले गए हों तथा उन सभी नवयुवकों को जेल में ठूस देने से जो कि अपने हृदयों में एक महान आदर्श का प्रतिबिम्ब देखते हैं क्रांति के प्रवाह को नहीं रोका जा सकता।'

नीचे की अदालत ने भगतसिंह से पूछा कि वे 'क्रान्ति' शब्द से क्या अर्थ समझते हैं।

उनका उत्तर था —

"क्रान्ति में रुधिर बहाने वाला संघर्ष हो हो यह आवश्यक नहीं है और न उसमें व्यक्तिगत प्रतिशोध लेने के लिए स्थान है। वह बम और पिस्तौल का पंथ नहीं है। क्रान्ति से हमारा अर्थ यह है कि वतमान समाज व्यवस्था जो स्पष्ट अन्याय पर आधारित है समाप्त होनी चाहिए। उत्पादक अथवा श्रमिक समाज के अत्यन्त अनिवार्य और आवश्यक अंग होने के बावजूद भी उनके शोषकों के द्वारा लूटे जाते हैं। उनके श्रम के फल को उनसे छीन लिया जाता है और उनके अपने मूल अधिकारों से उन्हें वंचित कर दिया जाता है—यह सब बन्द होना चाहिए।

पूंजीपति शोषक अपनी मौज और तरंग पर करोड़ों रुपए व्यय कर देते हैं। यह भयंकर असमानताएं तथा अवसरों की आरोपित असमता विश्व को संकट के समीप ले जा रही हैं वर्तमान समाज व्यवस्था की स्थिति यह है कि मानो समस्त समाज एक ज्वाला मुखी के किनारे आनन्द और मौज मना रहा हो और शोषकों के निर्दोष बच्चे तथा करोड़ों शोषित समान रूप से खतरनाक अत्यन्त ढलवा चट्टान के किनारे चल रहे हों।

इस विनाश की स्थिति से रक्षा करने के लिए परिवर्तन अत्यन्त अनिवार्य आवश्यकता है तथा समाज का समाजवादी आधार पर पुनर्गठन करना आवश्यक है जब तक यह नहीं किया जाता और जब तक मनुष्य का मनुष्य द्वारा शोषण एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र का शोषण, जो साम्राज्यवाद का छद्म वेश धारण कर लेता है उसका अन्त नहीं हो जाता तब तक यह यातना और संहार जिससे समाज आज सशंकित है उसको रोका नहीं जा सकता और युद्धों को रोकने और विश्व शान्ति का युग लाने की समस्त चर्चा आवरण रहित पाखण्ड है।" अप्रकाशित क्रान्ति में सर्वहारा वर्ग की सार्वभौम सत्ता होगी जिससे परिणाम स्वरूप एक विश्व संघ मानव समाज को पूंजीवाद के बन्धन और साम्राज्यवादी युद्धों की विभीषिका से मुक्त कर सकेगी।

अभियुक्तों ने यह कहते हुए अपने वक्तव्य को समाप्त किया —

'यह हमारा आदर्श है और हमारी प्रेरणा के लिए इस प्रदेशवाद के साथ हमने उचित समय रहते तेज आवाज में चेतावनी दे दी है। फिर भी यदि यह चेतावनी अनसुनी कर दी जाती है और वर्तमान शासन प्रणाली उन तटस्थ शक्तियों के मार्ग को अवरुद्ध कर देती है जो उभर रही हैं तो एक निष्ठुर और कठोर संघर्ष अनिवार्य रूप से आरम्भ होगा जो सभी रुकावटों को उखाड़ फेंकेगा और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकवाद को स्थापित करेगा। क्रान्ति मानव समाज का कभी भी नष्ट न किया जा सकने वाला अधिकार है और स्वतन्त्रता सभी का कभी नाश न होने वाला जन्म सिद्ध अधिकार है। श्रम ही वास्तव में समाज को जीवित रखता है जनता की प्रभुसत्ता ही श्रमिकों की चरम नियति है। इन आदर्शों और इस विश्वास के लिए हमें जो भी कष्ट या यातना दी जावे हम उनका सहर्ष स्वागत करेंगे। इस क्रान्ति की वेदी पर हम अपनी तरुणाई को यज्ञ की सुगन्धित सामग्री की भांति अर्पित करने लाए हैं। क्योंकि ऐसे गौरवपूर्ण और शानदार उद्देश्य के लिए कोई भी त्याग या बलिदान बड़ा नहीं है। हम सन्तुष्ट हैं। हम क्रान्ति की प्रतीक्षा कर रहे हैं—क्रान्ति चिरजीवी हो।"

मुकद्दमा

जब प्रारम्भिक जांच पड़ताल समाप्त हो गई तो भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त को देहली से ट्रल जेल में ■ मई १९२९ को एक मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया गया। उन पर इण्डियन पिनल कोड की धारा ३०७ तथा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा ३ तथा हत्या के प्रयत्न के आरोप लगाए गए। दूसरे दिन ८ मई को उन्हें सेशन सुपुर्द कर दिया गया। १० जून १९२९ को सेशन्स में परस्पर निर्णय के सम्बन्ध में मतभेद था। १२ जून को जज ने दोनों को आजीवन देश निष्कासन (काले पानी) का दण्ड सुना दिया। अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय में अपील की। ६ जनवरी १९३० को सुनवाई हुई और १३ जनवरी १९३० को उच्च न्यायालय ने उनकी अपील को अस्वीकार कर दिया।

भावना की विजय

जब १० जुलाई १९३० को लाहौर षड्यन्त्र का अभियोग आरम्भ हुआ उस समय कुछ ऐसे अभियुक्त थे जो पहले ही अनशन कर रहे थे और उनका स्वास्थ्य अत्यन्त गिर गया था। सज़ा हो जाने के उपरान्त भगतसिंह तथा बटुकेश्वर दत्त को बहुत शारीरिक कष्ट दिया गया और उनके साथ जेल में अत्यन्त अपमान जनक व्यवहार किया गया। उनके विरोध की कोई सुनवाई नहीं हुई। अन्त में उन्होंने सरकार के विरुद्ध शक्ति परीक्षण करने का निश्चय किया। उनका इस शक्ति परीक्षण का उद्देश्य यह था कि सरकार राजनीतिक बन्दियों के दर्जे को ऊंचा उठा कर जैसी कि उनकी मांग थी ऊंचे दर्जे के योरोपियन कैदियों के समकक्ष कर दिया जाय। उनका कहना था कि उनसे कठोर श्रम न लिया जाय उनको निम्न स्तर के कठोर अपराधियों से पृथक रक्खा जावे और अपने कारावास के जीवन में उनको पुस्तकें तथा अन्य साहित्य पढ़ने को दिया जाय। उनकी मांग को अत्यन्त घृणा और कठोरता के साथ ठुकरा दिया गया। इन सुविधाओं को मांगने की मूर्खता और धृष्टता के फल स्वरूप उनको और अधिक अपमानित किया जाने लगा। उनके बेड़ियां डाल दी गई और जेल के अनुशासन का भंग करने के अपराध में अनेक नए नए कठोर दण्डों का आविष्कार किया जाता और उन पर उनका प्रयोग किया जाता। अन्त में उन्होंने यह निश्चय किया कि वे अपने को कठोर शारीरिक श्रम करने के अयोग्य बना लेंगे और अपनी इस मांग को मनवाने के लिए उन्होंने भोजन करना बिलकुल बन्द कर दिया जिससे कि उनके शरीर को शक्ति मिलती थी। २३ जून को जेल की सेल से यह सूचना बाहर फूट पड़ी कि पिछले नौ दिनों से बटुकेश्वर ने भोजन करने से मना कर दिया है और इस अपराध के दण्ट स्वरूप अनशन के आरम्भ से ही उनके बेड़ी डाल दी गई हैं। वे इतने निर्बल हो गए हैं कि न तो वे बोल ही सकते हैं और न अपनी टांगों पर खड़े ही हो सकते हैं। ९ जुलाई १९२९ को मियांवाली जेल से लाहौर उन्हें हथकड़ी और बेड़ी डाल कर ले जाया गया। यह ज्ञात हुआ कि उनके अनशन का पच्चीसवां दिन था। १३ जुलाई को बटुकेश्वर को न्यायालय में स्ट्रेचर पर लिटा कर लाया गया क्योंकि वे भोजन न करने के कारण इतने निर्बल हो गए थे कि बैठ ही नहीं सकते थे। अभियुक्त के कठघरे में उन्होंने 'क्रान्ति चिरजीवी हो' साम्राज्यवाद का विनाश हो का घोष किया। उनके साथी बन्दियों ने भी उनकी सहानुभूति में अनशन किया। यतीनदास जो लाहौर जेल में १६ जून १९२९ को पहुंचा था उनमें से एक था। दस दिन तक प्रतीक्षा करने के उपरान्त

जेल के अधिकारियों ने उन्हें भोजन करने पर विवश करने के लिए उन पर बल प्रयोग किया। प्रत्येक सेल में डाक्टर के साथ पांच वार्डर जाते थे बन्दी को जमीन पर पटक दिया जाता था हाथ पांव और सर मजबूती से पकड़ लिए जाते थे जिससे कि वह तनिक भी हिल न सके। उस स्थिति में नाक से ट्यूब के द्वारा दूध पेट में पहुंचाया जाता था। मुंह में इस कारण दूध नहीं पिलाया जा सकता था क्योंकि बन्दी लोग दांतों को किटकिटा कर भींच लेते थे। क्योंकि बन्दियों ने यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि पेट में दूध नहीं पहुंचने देंगे अतएव इस तरीके से दूध पिलाने में उन्हें भीषण संघर्ष करना पड़ता था उस कारण बन्दियों को परिणामतः घोर कष्ट होता था। जेल अधिकारियों की दृष्टि से यह तरीका एक सीमा तक सफल रहा क्योंकि उससे बन्दी लोग जीवित रहे। बन्दी ऐसे उपाय करते थे कि कै हो जावे जिससे कि जो थोड़ा बहुत दूध पेट में पहुंच गया है वह निकल जावे। यतीन की दशा चिन्ताजनक हो जाने के कारण पच्चीस पच्चीस हजार रुपयों की दो जमानतें देने पर जेल से छोड़ देने की आज्ञा २ जुलाई को दी गई। परन्तु दूसरे ही दिन बिना कोई कारण वह आज्ञा रद्द कर दी गई। ११ जुलाई को जब कि बन्दियों को अदालत से वापस लाया गया आठ पठानों को भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त को बल पूर्वक भोजन कराने के लिए रक्खा गया। उस असमान संघर्ष में दोनों को अत्यन्त पीड़ा और कष्ट सहना पड़ा। भगतसिंह को अत्यन्त निर्दयता और क्रूरता से मारा गया उन्होंने अपने शरीर पर मार के चिह्नों को दूसरे दिन अदालत में दिखलाया। अनशन करने वालों ने उस जीवन मरण के संघर्ष को जारी रखने में जो तरीका अपनाया उसको अजय घोष ने अपनी पुस्तक 'भगतसिंह और उनके साथी' शीर्षक पुस्तक में नीचे लिखे शब्दों में व्यक्त किया है। श्री अजय घोष स्वयं एक बन्दी अभियुक्त थे और अनशन में सम्मिलित थे। "जेल अधिकारी इस बात के लिए दृढ़ निश्चय कर चुके थे कि बन्दियों को अनशन तोड़ने पर विवश करना है अतएव उन्होंने हमारी कोठरियों से जल बिलकुल हटा दिया और घड़ों में दूध भरवा कर रख दिया। यह वास्तव में ऐसी कठोर परीक्षा थी कि जिसकी कल्पना भी कोई नहीं कर सकता था। एक दिन के उपरान्त असहनीय प्यास उत्पन्न हो गई। हर बार मैं यह आशा करके घसीट कर घड़े के पास जाता कि उसमें शायद जल हो परन्तु उसमें दूध देख कर पीछे लौट आता। इस स्थिति ने हमें पागल बना दिया था। जिस व्यक्ति ने यह युक्ति खोज निकाली थी यदि मेरे सामने होता तो मैं उसे मार डालता। बाहर गार्ड चुपचाप बिना कुछ कहे तथा हरकत किए प्रत्येक क्षण हम पर नजर रख रहे थे। मैं अधिक देर तक अपने पर विश्वास नहीं रख सकता था। मैं जानता था कि कुछ ही घण्टों में मैं अवश्य ही हार जाऊंगा और दूध पीजूंगा। मेरा गला बिलकुल सूख गया और जबान सूज गई थी। मैंने गार्ड को पुकारा जो कि सीकचों के बाहर दरवाजे पर खड़ा था। मैंने उससे कहा कि कम से कम कुछ बूंदें जल की दे दे उसने उत्तर दिया 'मैं जल नहीं दे सकता मुझे जल देने की आज्ञा नहीं है।" मैं क्रोध से उन्मत्त हो गया। मैंने घड़े को उठा लिया और दरवाजे पर दे मारा। घड़ा टुकड़े टुकड़े हो गया और दूध गार्ड (रक्षक) पर गिरा। उसने सोचा कि मैं पागल हो गया हूं। वह ऐसा समझने में बहुत गलत नहीं था। इसी बीच हम लोगों की सहानुभूति में जहां जहां राजनीतिक बन्दी थे वहां बन्दी अनशन कर रहे थे। हमारी मांगों के समर्थन में एक अत्यन्त शक्तिशाली आन्दोलन उठ खड़ा हुआ था। कुछ दिनों के उपरान्त मेरठ षड्यन्त्र अभियोग के बन्दियों ने भी अनशन कर

दिया यह समाचार कि भारत में राजनीतिक बन्दी अनशन कर रहे हैं और उनके साथ निर्दयता का व्यवहार किया जा रहा है समुद्र पार विदेशों में पहुंचा। इङ्गलैंड में इससे बहुत बड़ी हलचल मची संसार के सभी देशों का ध्यान भारत के कारागारों की अमानवीय प्रशासन प्रणाली पर गया। १३ जुलाई को सरकार ने यह स्वीकार किया कि डाक्टरी आधार पर विशेष भोजन दिया जा सकता है। बंदियों ने अनशन तोड़ना अस्वीकार कर दिया क्योंकि सरकार ने यह स्वीकार नहीं किया कि विशेष भोजन' राजनीतिक बंदियों का अधिकार है। जब कि दूसरे बन्दी धीरे धीरे जीवन से मृत्यु के मुख में जा रहे थे। २४ जुलाई १९२९ को यतीन की दशा यकायक खराब हो गई। दो बार उसकी नब्ज लुप्त हो गई। उसका कारण यह बतलाया गया कि बल पूर्वक जो उसको दूध पिलाया गया और उसने जो थोड़ा बहुत निबल विरोध किया उसकी थकान से ऐसा हुआ है। जब उसकी नाक के द्वारा एक ट्यूब डाला जा रहा था और दूसरा गले के द्वारा डाला जा रहा था तो वह बेहोश हो गया। उससे पिछले दिन उसको चेतावनी दे दी गई थी कि वह नहीं मानेंगे तो उनके साथ और कठोर व्यवहार किया जावेगा। इस मर रहे वीर युवक पर इस धमकी का कोई असर नहीं हुआ परन्तु उसको धमकी की अवहेलना का परिणाम भुगतना पड़ा। २४ जुलाई १९२९ को यतीनदास को जेल के अस्पताल ले जाया गया। २४ जुलाई १९२९ को यतीनदास को हास्पिटल ले जाया गया। सामूहिक भूख हड़ताल के परिणाम स्वरूप कतिपय कैदियों की दशा अत्यन्त गम्भीर है इस समाचार से देश के नेता चिन्तित हो उठे उनके मन उत्तेजित हो उठे। उस समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का इलाहाबाद में अधिवेशन हो रहा था। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने २६ जुलाई को एक प्रस्ताव के द्वारा अपनी चिन्ता प्रगट करते हुए कहा 'कि सरकार ने उन बंदियों के साथ जो तरीके अपनाये हैं वे ऐसे निर्दय और भयानक हैं कि जिनसे असभ्य और बबर देशों को भी आघात लगेगा।" २५ जुलाई को डाक्टरों को यतीनदास को बल पूर्वक भोजन देने का साहस नहीं हुआ क्योंकि डाक्टरों का यह मत था कि यतीन दास के विरोध तथा सघर्ष के कारण बल पूर्वक उन्हें भोजन देने से कोई लाभ नहीं है। यतीनदास को हल्का ज्वर था तथा फेफड़ों के मूल में भारीपन था। २६ जुलाई को यतीन की दशा और अधिक बिगड़ गई। उनको निमोनिया हो गया और ज्वर १०३ डिगरी तक बढ़ गया। ३१ जुलाई को उनकी दशा संकट की अवस्था को पहुंच गई और वे बार बार जल्दी जल्दी बेहोश होने लगे। क्योंकि दवा के साथ पानी मिला दिया जाता था परन्तु यतीन दास ने कोई पेय पदार्थ लेना भी अस्वीकार कर दिया। एक अगस्त को उनकी नाड़ी की धड़कन गिरकर ४५ हो गई। दूसरे दिन उन्होंने अपनी जिव्हा को जो बहुत सूख गई थी तरल करने के लिए जल की कुछ बूंदें ली। ६ अगस्त की रात्रि को वे एक साथ वे चार घंटे तक बेहोश रहे। उसी दिन उनको ऐनिमा दिया गया जिससे वे और अधिक निबल हो गए।

अब यतीन्द्र दास खतरे के बिन्दु से भी आगे बढ़ गए गए थे। २३ अगस्त की रात्रि यतीनदास को अत्यन्त अशान्ति से व्यतीत हुई। २७ अगस्त को उनकी दृष्टि कुप्रभावित हो गई। दूसरे दिन लोगों ने देखा कि उनका मस्तिष्क अत्यन्त निबल हो चला और बायें पैर के हिलने डुलने की शक्ति समाप्त हो गई। ३० अगस्त को उनको किसी प्रकार औषधि लेने के लिए तैयार किया गया जिससे उन्हें बहुत खांसी आई। १८ अगस्त को सरकार ने एक आज्ञा प्रचारित कर न्यायालय से दण्ड प्राप्त तथा अभि

योगाधीन बंदियों सम्बन्धी नियमों की जांच के लिए पंजाब जेल जांच समिति बिठाई। जांच समिति के सदस्यों ने भूख हड़ताल करने वाले बंदियों से भूख हड़ताल समाप्त कर देने की अपील की उनकी इच्छा के प्रति आदर दिखाने के लिए लाहौर षड़यन्त्र के बंदियों ने दो सितम्बर को पांच बजे सायंकाल से भूख हड़ताल तोड़ने का निश्चय किया। यतीन के लिए तब तक बहुत विलम्ब हो चुका था। वे सीधे मृत्यु और स्वतन्त्रता की ओर तेजी से बढ़ रहे थे। एक सितम्बर को यतीन्द्र नाथ दास को कमर से नीचे वाला भाग पूर्ण रूप से निश्चेष्ट हो गया। वे अपनी आंखें भी नहीं खोल सकते थे और उनकी वाणी लुप्त हो गई। तीन सितम्बर को उनका ज्वर बहुत बढ़ गया ताप क्रम बहुत ऊंचा हो गया। नाड़ी की गति अति तीव्र हो गई और रोगी के क्रमश डूबने (समाप्त) होने के चिह्न दृष्टि गोचर होने लगे। ६ सितम्बर को अत्यधिक ज्वर के कारण वे अत्यन्त अशान्त रहे। आठ सितम्बर को सायंकाल सात बजे के लगभग यतीन्द्र नाथ दास के हाथ और पैर पूर्ण रूप से निश्चेष्ट हो गए। दस सितम्बर को बन्दी ने अपने उपवास के ६० दिन पूरे किए। उनका मस्तिष्क अत्यन्त निबल हो गया था, उसके अंग निश्चेष्ट और शिथिल हो चुके थे उनमें शक्ति की शक्ति समाप्त हो गई थी ग्यारह सितम्बर एसम्बली में गृह विभाग के सदस्य ने घोषणा की कि यतीन्द्रनाथ दास की दशा अत्यन्त संकटापन्न है। बारह सितम्बर को प्रातः काल यतीन को खून का वमन हुआ और उनके हाथ पांव ठंडे हो गए। १३ सितम्बर १९२९ को मध्याह्न उपरान्त एक बज कर पांच मिनट पर वह निर्णायक क्षण जिसकी ओर यतीन्द्र नाथ दास ने कामना की थी क्रमश क्षण क्षण पर दृढ़ पगों से आ पहुंचा और उनके कष्टों का अन्त हो गया। उस दिन उनके उपवास का त्रेसठवां दिन था। उस दिन प्रातःकाल दस बजे उनको यथेष्ट होश आ गया उन्होंने अपनी मृत्युशैय्या के पास अपने सभी मित्रों और सहयोगियों को वन्दे कहा और प्रसन्न मुद्रा से सबों से अन्तिम विदा ली। यतीन की मृत्यु के एक दिन पूर्व १२ सितम्बर को एसम्बली के एक प्रमुख मुस्लिम सदस्य ने घोषणा की 'कि जो व्यक्ति भूख हड़ताल करता है वह ऐसा अपनी आत्मा की पुकार के कारण ही करता है।

यतीन ने होश में जो अन्तिम शब्द अत्यन्त कठिनाई से कहे थे "मैं नहीं चाहता कि मेरा अन्तिम संस्कार काली घाटी में प्राचीन बंगाली परम्परा के अनुसार किया जावे। मैं बंगाली नहीं हूं मैं भारतीय हूं।" ढाई बजे बोरस्टाल कारागार से यतीन्द्र का शव एक काष्ट टिकटी पर बाहर लाया गया। उनकी आंखें गहरे गड्ढे में बैठ गई थीं अत्यन्त निबलता के कारण उनके गाल की हड्डी बहुत ऊंची उठी हुई थी और उनका चेहरा अत्यन्त पीला पड़ गया था। समस्त देश यतीन की मृत्यु पर शोकमग्न हो गया। सारे देश के राष्ट्रीय समाचार पत्रों ने यतीन्द्र नाथ दास के बलिदान की प्रशंसा में सम्पादकीय लेख लिखे। उन्होंने अपने लेखों में यतीन के बलिदान क्षुधा और पिपासा के दारुण कष्टों तथा क्षण क्षण आने वाली मृत्यु की छाया जो ६३ दिन के उपवास में गहन होती जा रही थी उसके विरुद्ध अदभुत सहन शक्ति की भूरि भूरि प्रशंसा की। ट्रिब्यून ने यतीन्द्र नाथ दास की मृत्यु पर लिखा 'अन्य कभी एक ऊंचे उद्देश्य के लिए किसी व्यक्ति ने एक वीर तथा बलिदानी मृत्यु को अंगीकार किया तो वह यतीन न्द्र दास थे। शहीदों का खून सभी देशों और सभी कालों में ऊंचे और उदात्त जीवन, तथा उत्तम सामाजिक और राजनीतिक अवस्था को जन्म देता है।" कार्क के लार्ड मेयर और

मकस्वनी जिन्होंने आयरलैंड में समान परिस्थितियों में अपने जीवन का बलिदान कर दिया था उनकी योग्य धर्मपत्नी मेरी ने तार द्वारा संदेश भेजा। टरेंस मकस्वनी का परिवार वीर यतीन्द्र नाथ दास की मृत्यु पर देश भक्त भारतीयों के इस शोक और गौरव के क्षण में उनके साथ है। स्वतन्त्रता अवश्य आयगी। २४ सितम्बर १९२९ को वीर यतीन्द्र नाथ दास तथा अन्य व्यक्तियों का जिस न्यायालय में अभियोग चल रहा था उसकी कार्यवाही आरम्भ हुई तो सरकारी वकील ने उस व्यक्ति (यतीन्द्र नाथ दास) के प्रति अपनी श्रद्धांजली भेंट की जिसकी न्यायालय के द्वारा फांसी के निर्णय के द्वारा वह मृत्यु के लिए प्रयत्न शील था। सरकारी वकील ने कहा। न्यायालय की आज्ञा से मैं अपने तथा अपने सहयोगियों की ओर से उस दुखद और खेदजनक घटना के प्रति अपनी श्रद्धा के पुष्प कुछ शब्द कहना चाहता हूँ कि जो पिछली बार जब कि न्यायालय बैठा था उसके पश्चात घटी थी। मैं सभी की ओर से उस उदभावी खेद और आन्तरिक शोक को प्रकट करता हूँ जो कि हम सब यतीन्द्र नाथ दास की असामयिक मृत्यु पर अनुभव कर रहे हैं। कुछ ऐसे गुण होते हैं जो कि सभी व्यक्तियों को समान रूप से उनकी प्रशंसा करने पर विवश करते हैं उनमें से किसी ऊंचे आदर्श को प्राप्त करने में साहस और स्थिरता के गुण प्रमुख हैं। यद्यपि हम उन आदर्शों को स्वीकार नहीं करते कि जिन आदर्शों को उन्होंने स्वीकार किया था परन्तु हम उन्होंने जो अपना उद्देश्य प्राप्त करने में आश्चर्य जनक इतना साहस और असीम शक्ति प्रदर्शित की उसकी सच्चे दिल से सराहना करते हैं।" भगतसिंह तथा बटुकेश्वर दत्त ने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के प्रस्ताव के प्रति आदर भावना प्रदर्शित करने के लिए ४ अक्टोबर १९२९ को आमरण उपवास को समाप्त कर दिया। जो सन्देहजनक व्यक्ति अभी तक फरार थे उनकी गिरफ्तारी के उपरान्त उनके विरुद्ध दो भागों में अभियोग चलाया गया। एक उन लोगों के विरुद्ध जो काश्मीर बिल्डिंग बम फक्ट्री से सम्बन्धित थे दूसरे भाग में वे लोग थे जो कि सांडर्स की हत्या से अथवा उसके पूर्व तथा पश्चात के अपराधों से सम्बन्धित थे।

२६ जून १९२९ धारा ३०२ १०२-बी तथा १०७ के अन्तर्गत ६ अपराधियों के विरुद्ध जिनमें सुखदेव भी सम्मिलित थे चालान दाखिल किया गया। एक अपराधी की अनुपस्थिति में अभियोग को १० जुलाई तक के लिए स्थगित कर दिया गया। कुछ प्रमुख अपराधी निम्नलिखित थे।

सुखदेव उपनाम दयाल उपनाम स्वामी उपनाम ग्रामीण पुत्र श्री रामलाल लायलपुर जो १५ फरवरी को लाहौर बम फक्ट्री में पकड़े गए। यतीन्द्र नाथ दास पुत्र श्री बंकिम चन्द्र दास भवानीपुर कलकत्ता जो १४ जून १९२९ को कलकत्ता में गिरफ्तार हुए और १६ जून को पुलिस के पहरे में लाहौर लाए गए।

भगतसिंह पुत्र श्री किशनसिंह खवासरियान लाहौर के निवासी जो केन्द्रीय एसम्बली सभा भवन में ८ अप्रैल १९२९ को कैद हुए और एसेम्बली बम काण्ड में दण्डित किए गए। रघुनाथ उपनाम एम उपनाम शिवराम राजगुरु पुत्र श्री हरिराम राजगुरु सदाशिव पेठ पूना के निवासी जो कि १८ अक्टोबर को न्यायालय के समक्ष उपस्थित किए गए और जिन्हें पूना में कुछ दिन पहले गिरफ्तार किया गया था। फरार अभियुक्तों में से दो प्रमुख थे चन्द्र शेखर आजाद उपनाम पंडित जी पुत्र श्री भोजनाथ राम उपनाम सीताराम मिर्जापुर बनारस भगवती चरण उपनाम बी सी वोहरा पुत्र राय बहादुर शिवचरन दास भगतसिंह सांडर्स हत्याकांड में सम्मिलित थे। यह बात एक व्यक्ति

के बयान से ज्ञात हुई जो उसने दशहरा बम विस्फोटों के सम्बन्ध में जाँच के समय दिया था। प्रथम विस्फोट १९२६ और दूसरा १९२८ में रोशन द्वारा (रोशनी) फाटक पर हुआ था। जाँच में यह पता चला कि ओरियन्टल कालेज के दो भूतपूर्व छात्र छात्रावास की इमारत में पहली तथा दूसरी मंजिल में बहुधा आया करते थे जहाँ कि बमों का विस्फोट हुआ था। भगतसिंह के सांडर्स हत्या कांड में सम्मिलित होने इस बात से भी निश्चित हो गया कि जो पिस्तौल उनके पास से एसम्बली सभा भवन में छीनी गई थी उसका बोर वही था जो सत्रह दिसम्बर १९२८ में हुए हिंसा काण्ड में काम में लाई गई थी। सरकार का यह भी कथन था कि अभियुक्त अपने अन्य साथियों के साथ लाहौर तथा ब्रिटिश भारत के अन्य स्थानों पर विभिन्न अवसरों पर १९२४ से उसके गिरफ्तार होने के समय तक सम्राट के विरुद्ध षड्यन्त्र करने में सम्राट के ब्रिटिश भारत में सार्वभौम सत्ता से वंचित करने तथा भारत में कानून द्वारा स्थापित सरकार को पराभूत करने और उलट देने के प्रयत्न में लगा रहा। इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए उन लोगों ने अस्त्र शस्त्र गोली बारूद तथा व्यक्तियों को इकट्ठा किया उसी उद्देश्य से उन्होंने कोष प्राप्त करने के लिए बैंकों और खजानों को लूटा बमों का निर्माण किया उन व्यक्तियों की हत्या की जिन्होंने उनके षड्यन्त्र के उद्देश्य को कार्यान्वित करने में बाधा डाली, रेल गाड़ियों को उड़ाया राजद्रोहात्मक तथा क्रांतिकारी साहित्य को तैयार किया उसे अपने पास रक्खा और उसका प्रचार किया, ऐसे व्यक्तियों को छुड़ाया जो कि राजनीतिक अपराधों के कारण या तो दण्डित हो चुके थे अथवा कानून के अनुसार हिरासत में थे शिक्षित तरुणों को उन्होंने षड्यन्त्र में सम्मिलित करने के लिए बहकाया तथा विदेशों में रहने वाले ऐसे व्यक्तियों से आर्थिक तथा अन्य प्रकार की सहायता प्राप्त की जो कि भारत में विद्रोह कराने में रुचि रखते थे तथा अन्य सभी उपाय किए जिन्हें वे अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए आवश्यक समझते थे। अभियुक्तों के विरुद्ध और भी दोषारोपण किए गए जिनमें से निम्न लिखित का विशेष रूप से उल्लेख किया गया। १३ जनवरी १९२८ को सी आई डी. पुलिस के इनस्पेक्टर की हत्या करने का प्रयत्न किया। दल के उद्देश्य को पूरा करने के लिए २९ जून १९२८ को जिला गोपालपुर के बुरहान गंज डाकखाने के कोष का गबन किया। ४ दिसम्बर १९२८ को पंजाब नेशनल बैंक को लूटने की योजना बनाई गई। १७ दिसम्बर १९२८ को सांडर्स की हत्या की गई। ८ अप्रैल १९२९ को एसम्बली हाल में बम फेंका गया और पिस्तौल से गोली चलाई गई। ७ जून १९२९ को मोलनिया में डाका डाला गया। लाहौर सहारनपुर, बिलासपुर कलकत्ता और आगरा में बम बनाये गए। उस रेलगाड़ी को जो साइमन कमीशन को बम्बई से पूना ले जा रही थी डायनामाइट से उड़ाने का असफल प्रयास किया गया। काकोरी डकैती के मुकद्दमे में जिन व्यक्तियों को सजा हुई थी उनको छुड़ाने की योजना बनाई गई।

'१० जुलाई १९२९ को जब कैदी न्यायालय में लाए गए तो उन्होंने अदालत में घुसते ही "क्रान्ति चिरंजीवी हो—साम्राज्यवाद का नाश हो" का घोष किया और जब भगतसिंह और दत्त आए तो कैदियों ने पुनः इस नारे को दोहराया और एक दूसरे को गले लगाया। आरम्भ में ही एक अभियुक्त ने मजिस्ट्रेट से शिकायत की कि एक पुलिसमैन ने उसको अपशब्द कहे और यदि उस अपराधी सिपाही को नहीं हटाया तो उसको कानून को अपने हाथ में लेने पर विवश होना पड़ेगा। इस

बचाव करने के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी अतएव सरकारी वकील ने १६ जुलाई को सरकार के व्यय पर उन अभियुक्तों के बचाव के लिए वकीलों की नियुक्त करने की आज्ञा प्राप्त करने के लिए अदालत से अपील की। उच्च न्यायालय ने २६ जून को सरकारी वकील के आवेदन को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि उस अभियोग को सुनने के लिए जो विशेष मजिस्ट्रेट नियुक्त हुआ है उसे बिना उच्च न्यायालय की सहमति के भूख हड़ताली बंदियों के लिए वकील नियुक्त करने का अधिकार नहीं है। पुलिस के दुर्व्यवहार से हताश होकर तथा मजिस्ट्रेट द्वारा उन्हें उस दुर्व्यवहार से सुरक्षा न दे सकने के कारण बन्दियों ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि जिसको मजिस्ट्रेट के लिए भी नियन्त्रित कर सकना कठिन हो गया। मजिस्ट्रेट यह आज्ञा दे दी कि प्रत्येक अभियुक्त को एक कान्स्टेबिल के साथ हथकड़ियां डाल कर अदालत में लाया जाय और जब वे अदालत से जावें तो भी उनके हाथों में हथकड़ियां डाल कर ले जाया जावे। अभियोग सरलता से बिना विघ्न बाधा के नहीं चल सका। अभियोग के चलते बहुत सी कठिनाइयां उत्पन्न हो गईं और अभियोग के बार बार स्थगित होने के कारण वह बीच बीच में रुक जाता था। अभियुक्त और कम से कम उनमें से एक अदालत में उपस्थित नहीं हो सका अथवा जान बूझ कर उपस्थित नहीं हुआ। १४ अगस्त १६२६ तक लोग इस बात की अटकल लगाने लगे कि दण्ड प्रक्रिया संहिता (क्रिमिनल प्रोसीजर कोड) की धारा ५४० को को सशोधित किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत अभियुक्त की स्वेच्छा से किए हुए किसी कार्य से उसकी अनुपस्थित होती है जैसे भूख हड़ताल के द्वारा तो उसके विरुद्ध जांच या अभियोग चलाया जा सकता है। उस संशोधन के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट दण्डनायक) या न्यायाधीश (जज) को यह अधिकार भी देने की बात थी कि यदि दण्डनायक अथवा न्यायाधीश को विश्वास हो जावे कि अभियुक्त ने स्वयं अपने ही कृत्य से अपने को अदालत में उपस्थित हो सकने के अयोग्य बना लिया है तो उस अभियुक्त की उपस्थित को आवश्यक न माने और उसकी अनुपस्थिति में भी अभियोग की कार्यवाही जारी रक्खे। इस प्रकार उसकी अनुपस्थित में जांच अथवा अभियोग में अदालत जिस फैसले को दे वह गैर कानूनी नहीं ठहराया जा सकेगा परन्तु अभियुक्त को यह अधिकार होगा कि वह आगे चल कर अपने कानूनी सलाहकार द्वारा अपनी वकालत करवा सके। ■ सितम्बर १६ ६ को दण्ड प्रक्रिया संहित (क्रिमिनल प्रोसीजर कोड) के संशोधन का विधेयक गृह सदस्य द्वारा केन्द्रीय एसम्बली के सामने उपस्थित किया गया।

उस विधेयक के प्रश्न पर विरोधी कांग्रेस दल ने १४ सितम्बर को एसम्बली में एक स्थगन प्रस्ताव रख दिया जिसके द्वारा वे लाहौर षडयन्त्र अभियोग में अभियुक्तों के प्रति अमानवीय व्यवहार की सरकारी नीति की भर्त्सना करना चाहते थे। सरकारी सदस्यों तथा सरकारी चाटुकारों ने उक्त प्रस्ताव का घोर विरोध किया परन्तु सरकार तथा उसके समर्थकों के घोर विरोध करने पर भी वह प्रस्ताव ४७ मतों के विरुद्ध ५५ मतों से पारित हो गया। सरकार की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा और उस बिल को एसम्बली में सीधे रखने के बजाय उसको सदस्यों की जानकारी के लिए परिचलन के लिए इस उद्देश्य से भेज दिया गया "कि परस्पर विश्वास उत्पन्न हो और संशय दूर हो" साथ ही यह धमकी भी दे दी 'कि यदि एसम्बली की अगली बैठक होने से पूर्व आपात स्थिति उत्पन्न हो गई तो सरकार यह अधिकार अपने पास सुरक्षित रखती

है कि वह विधेयक के पारित करने में देरी करने की प्रक्रिया को रोक सके।' इसके उपरान्त अभियोग अत्यन्त अनवहित ढंग से चला। २१ अक्टोबर को एक गवाह जो कि मुखबिर बन गया था साक्षी कक्ष में गिरते देखा गया। उसको एक अभियुक्त ने बड़े वेग से जूता फेंक कर मारा था। दण्डनायक ने आज्ञा दी कि जब तक अभियुक्त अदालत में रहें उनके हथकड़ियां लगा दी जावें। दूसरे दिन अभियुक्तों ने पुलिस थाने से बाहर निकलने और न्यायालय के कक्ष तक आने से मना कर दिया क्योंकि उनके दोनों हाथों में हथकड़ियां डाल दी गई थीं। उनको सिपाहियों ने सशरीर उठा कर कठघरे में रख दिया। २१ अक्टोबर को अभियुक्तों ने पुलिस द्वारा भयानक यातना देने की शिकायत की और मजिस्ट्रेट से सुरक्षा की याचना की। जबकि उन्हें बैरिकों में से निकाल कर लाया जा रहा था तो पुलिस ने उनके दोनों हाथों में हथकड़ी डालने का प्रयत्न किया जिसका उन्होंने विरोध किया। अतएव उन्हें बैरिकों में वापस भेज दिया गया। एक घण्टे के पश्चात् उन्हें पुनः बुलाया गया तो उन्होंने देखा कि लगभग ३०० पुलिसमैन तथा बाहर उनके विरुद्ध बल प्रयोग करने के लिए तैयार खड़े थे। दूसरी बार भी अभियुक्तों ने हथकड़ियां पहिनने से इनकार कर दिया। उनके साथ पुलिस ने अमानवीय पशुता का व्यवहार किया। अमानवीय यातना देने का एक तरीका यह था कि अभियुक्तों की गुदा में अंगुली घुमेड़ी जाती तथा फोतों पर ठोकर से प्रहार किया जाता यह अमानवीय यातना और बेंतों से कठोर प्रहार एक घण्टे से अधिक चलता रहा। जब कि अभियुक्त पूर्ण रूप से अहिंसक थे। अभियुक्तों ने न्यायालय को सूचित कर दिया कि दूसरे दिन अर्थात् २४ अक्टोबर १९२९ से वे अपने बचाव के लिए किसी वकील आदि की सहायता नहीं लेंगे। मई १९३० में सरकार ने एक अध्यादेश निकाल कर अभियुक्तों के प्रारम्भिक अभियोग को बन्द कर दिया और पंजाब उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को यह अधिकार प्रदान कर दिया कि वह तीन जजों का एक ट्रिब्यूनल नियुक्त करे जो इस अभियोग को शीघ्रता पूर्वक समाप्त कर दे। मुख्य न्यायाधीश इसके लिए जिन जजों को चुनें उन्हें यह अधिकार भी होगा कि वे न्याय के प्रशासन में जान बूझ कर विघ्न डालने के प्रयत्नों को उचित दण्ड दे सकें तथा उन प्रयत्नों को व्यर्थ कर सकें। ट्रिब्यूनल ने १७ मई १९३० को अभियुक्तों को अदालत में उपस्थित होने से मुक्त कर दिया उनकी उपस्थिति को आवश्यक नहीं समझा। ११ जुलाई १९३० को ट्रिब्यूनल ने भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं - १२० बी १२१ ए १२२ १२१, और ३०२ तथा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धाराओं ४ ५ ६ के अन्तर्गत चौदह अभियुक्तों पर आरोप लगाए। यह दीर्घ काल तक चलने वाला अभियोग ७ अक्टोबर १९३० को समाप्त हुआ जब कि ट्रिब्यूनल ने अपना फैसला दे दिया। (१) भगतसिंह को भारतीय दण्ड संहिता की धारा १२१ तथा ३०२ के अन्तर्गत तथा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा ४ बी के अन्तर्गत दोषी पाया गया। (२) शिवराम राजगुरु उपनाम एम को भारतीय दण्ड संहिता की धारा १२१ तथा ३०२ के अन्तर्गत अपराधी पाया गया। (३) सुखदेव को भारतीय दण्ड संहिता की धारा १२१, ३०२ १०६ तथा १२० बी के अन्तर्गत अपराधी पाया गया और इन तीनों को प्राण दण्ड की आज्ञा दी गई। अन्य आठ को आजीवन कारावास तथा काले पानी का दण्ड दिया गया। जब फैसला सुना दिया गया तो भगतसिंह ने कहा 'फांसी पर लटक कर मरना जेल में सड़ने और यातनाएँ सहते रहने से कहीं अधिक आनन्द दायक है। किसी कारागार में

ट्रिब्यूनल के निर्णय के विरुद्ध अपील की गई जो ११ फरवरी १९३१ को अस्वीकृत कर दी गई। १३ मार्च १९३१ को जेल अधिकारियों ने मृत्यु दण्ड के बंदियों के सम्बन्धियों से अभियुक्तों से साक्षात्कार करने के लिए कहा। देश में इस समाचार से आशा की लहर फैल गई कि महात्मा गांधी वायसराय से इन क्रांतिकारियों के सम्बन्ध में बात कर रहे हैं तथा उनके दण्ड को कम कराने का प्रयत्न कर रहे हैं। वायसराय ने गांधीजी का संकेत तक नहीं दिया और क्षमा प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया और उन्हें फांसी देने की अंतिम तैयारियां पूरी कर ली गईं। भगतसिंह के पिता को १८ मार्च १९३१ को लाहौर में एक पत्र मिला जिसमें उन्हें सूचित किया गया — मुझे आपको सूचित करने का आदेश हुआ है कि आपका मृत्यु दण्ड प्राप्त अभियुक्त भगतसिंह से साक्षात्कार २३ मार्च को ग्यारह बजे होना निश्चित किया गया है। आप अपने सभी रुधिर सम्बन्धियों को अपने साथ लाने की व्यवस्था करें। इसी प्रकार की सूचना अन्य दो बंदियों के सम्बन्धियों के पास भेजी गई। सोमवार २३ मार्च १९३१ को पौने सात बजे सायंकाल लाहौर सेंट्रल जेल में तीनों वीरों को फांसी दे दी गई।

उनके शवों का दाह संस्कार सरकारी अधिकारियों ने २४ मार्च को किया। शवों को सम्बन्धियों को नहीं दिया गया। क्रूरता की पराकाष्ठा हो गई। जिलाधीशों ने नीचे लिखी सूचना निकाली जो २४ मार्च को प्रातःकाल लाहौर के विभिन्न स्थानों पर पोस्टरों पर छाप कर चिपका दी गई थी। जनता को सूचित किया जाता है कि भगतसिंह राजगुरु और सुखदेव के शवों को जिन्हें कल (२३ मार्च) के सायंकाल फांसी हुई थी जेल से सतलज नदी के तट पर ले जाया गया और उनका सिक्ख तथा हिन्दू रस्म के अनुसार उनका दाह संस्कार कर दिया गया तथा उनकी भस्म तथा अस्थियां सतलज में डाल दी गई। पुलिस ने जेल से सुखदेव द्वारा अपने भाई को भेजे गए एक पत्र को पकड़ लिया जिसमें उनके कार्यों की योजना तथा उद्देश्य का विशद बयान था। वह पत्र अत्यन्त रोचक था। पत्र की भाषा नीचे लिखी थी।

आक्रमक कार्यवाही की योजना

'सबसे पहले हमने सोचा कि एक आदमी को पिस्तौल देकर भेजा जावे वह स्काट को मार कर वहीं उसी समय आत्म समर्पण कर दे। उसके उपरान्त वह अपने बयान में यह कहे कि जब तक कि भारत में क्रान्तिकारी हैं राष्ट्रीय अपमान का इस प्रकार प्रतिशोध लिया जा सकता है। बाद को यह अधिक उपयुक्त समझा गया कि तीन व्यक्तियों को भेजा जावे। इसमें भी निकल भाग सकने का विचार प्रमुख नहीं था। बच कर निकल जाने की इच्छा इसके पीछे नहीं थी। हमारा उद्देश्य यह था कि हत्या कर देने के उपरान्त यदि पुलिस पीछा करे तो उसका सामना किया जाय। जो भी बच जाय और गिरफ्तार हो वह इस प्रकार बयान दे। इस उद्देश्य से हम लोग आक्रमक कार्यवाही के समय डी ए वी कालेज के छात्रावास की छत पर चढ़ गए। व्यवस्था यह की गई थी कि भगतसिंह जो कि स्काट को पहचान सकते थे पहली गोली मारें, राजगुरु थोड़ी दूर पर खड़े रहें और भगतसिंह की रक्षा करें। यदि कोई व्यक्ति उन पर आक्रमण करे तो राजगुरु उसका सामना करें। इसके उपरान्त भगतसिंह और राजगुरु दोनों ही भग जायें। और क्योंकि जब वे भाग रहे होंगे तो वे उन लोगों को गोली नहीं मार सकेंगे कि जो उनका पीछा कर रहे होंगे अस्तु पंडित जी पीछे खड़े रहेंगे और उनकी रक्षा करेंगे। उस समय हम लोगों का यह निश्चय उसको मारने

रा अधिक था और अपने बचाव को कम था हम नहीं चाहते थे कि जिस व्यक्ति को हम मारने का निश्चय करें वह अस्पताल में मरे। यही कारण था कि जब राजगुरु ने गोली मारी तो भी भगतसिंह तब तक गोली चलाते रहे जब तक कि यह निश्चय नहीं हो गया कि वह मर गया है। हत्या करने के उपरान्त भागने की हमारी योजना नहीं थी। हम जनता को यह बतला देना चाहते थे कि यह हत्या राजनैतिक हुआ है और इसको करने वाले क्रान्तिकारी हैं मामलों के साथी नहीं हैं। इसी लिए हमने हत्या के उपरान्त अवश्य पोस्टर चिपकाये और उन्हें छापने के लिए भी भेजा। हमें खेद है कि न तो हमारे नेताओं ने और न समाचार पत्रों ने उस समय हमारी कोई सहायता की। और सरकार को धोखा देने के अभिप्राय से उन्होंने अपने देशवासियों को ही धोखा दिया। हम चाहते थे कि वे साफ साफ शब्दों में लिखें कि वह राजनीतिक हत्या थी और सरकार की उस नीति का परिणाम थी जो इस प्रकार की घटनाओं के लिए उत्तरदायी है। परन्तु यह सब जानते हुए और मेरे बार बार दोहराने पर भी वे ऐसा कहने का साहस न कर सके। यह बहुत अच्छा हुआ कि हम लोग गिरफ्तार हो गए इस कारण जनता को सारी बात स्पष्ट हो गई। प्रिय बन्धु मैं अपनी गिरफ्तारी को इसी कारण अपना सौभाग्य मानता हूँ। इस कार्यवाही के स्वरूप का वर्णन स्पष्ट कर चुकने के उपरान्त मैं उसके पीछे जो नीति है उसको स्पष्ट करना चाहता हूँ। मैं यह दिखलाना चाहता हूँ कि हमारा विचार यह था कि हमारी कार्यवाही ऐसी हो जो जन मानस की इच्छा को पूरी करे और सरकार के विरुद्ध जो जनता की शिकायतें हैं उनके समर्थन में हो जिससे वे जनता की सहानुभूति और सहायता प्राप्त कर सकें। इस विचार से हम जनता में क्रान्तिकारी आदर्शों तथा कार्य प्रणाली का प्रसार करना चाहते थे। ऐसे विचार ऐसे व्यक्ति के मुख से अधिक शोभा देते हैं तथा गौरवयुक्त प्रतीत होते हैं कि जो अपने आदर्शों के लिए फांसी के तख्ते पर खड़ा होता है।"

परिशिष्ट

हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी शीर्षक एक पम्पलेट जिस पर 'बलराज' कमान्डर चीफ आफ आर्मी - प्रधान सेनापति के हस्ताक्षर थे उसकी भाषा नीचे लिखी थी। 'बहरे को सुनाने के लिए चिल्ला कर बोलना पड़ता है" एक ऐसे ही अवसर पर फ्रेंच अराजकतावादी बलिदानी ने यह अमर शब्द कहे थे। क्या हम अपनी इस कार्यवाही को जोरदार शब्दों में उचित ठहराते हैं। शासन सुधारों के क्रियान्वन के पिछले दस वर्षों के अपमानजनक व्यवहार और इस सदन द्वारा जिसे भारत की पार्लियामेंट कहा जाता है न जो भारत की बेइज्जती की है उसका उल्लेख न करते हुए हम यह इंगित करना चाहते हैं कि अब कि सब साधारण साइमन कमीशन द्वारा शासन सुधार के चाह में और टुकड़ों की प्रतीक्षा कर रहे हैं और प्रस्तावित शासन सुधारों रूपी मांस को बांटने के लिए आपस में झगड़ रहे हैं सरकार हम पर सार्वजनिक सुरक्षा, औद्योगिक विग्रह विधेयक जैसे दमनकारी कानून लाद रही है साथ ही प्रेस सम्बन्धी विधेयक एसेम्बली की आगामी बैठक के लिए रख रही है। जो श्रमिक नेता मजदूरों में प्रकट रूप से काम करते हैं उनकी अन्धाधुन्ध गिरफ्तारी से यह स्पष्ट हो जाता है कि हवा का रुख किधर है। इन शोचनीय उत्तेजक परिस्थितियों में हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र परिषद (हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन) ने पूर्ण गम्भीरता पूर्वक अपने उत्तरदायित्व का अनुभव कर यह निर्णय लिया है कि वह अपनी सेना को इस हिंसक

ऽ ाही करने के लिए आज्ञा दे जिससे कि यह अपमानजनक शक्ति प्रयोग बन्द हो। ।ा विदेशी शासन नोकरशाही जो चाहे वह करे परन्तु हम उसे जनता के सामने अपने सही रूप में उपस्थित होने के लिए विवश कर देंगे। जनता के प्रतिनिधियों को अपने प्रभाव क्षेत्र में जाना चाहिए और जनता को आने वाली क्रांति के लिए तयार करना चाहिए। साथ ही सार्वजनिक सुरक्षा तथा औद्योगिक विग्रह विधेयकों का तथा लाला लाजपतराय की निमम हत्या का निस्सहाय भारतीयों की ओर से विरोध करते हुए सरकार को यह बतला देना चाहिए कि तुम व्यक्तियों को मार सकते हो परन्तु तुम विचारों की हत्या नहीं कर सकते। बड़े विशाल साम्राज्य ध्वस हो गए परन्तु सभी विचार जीवित रहे। बौरबा स तथा जारो का पतन हो गया परन्तु क्रांति की जय पताका फ र ई और वह आगे बढ़ी। हमें खेद है कि हम जो कि मनुष्य जीवन को इतना अधिक पवित्र मानते हैं जो एक शानदार तथा समृद्धिशाली भविष्य के स्वप्न देखते हैं जब कि मनुष्य को पूर्ण शांति तथा स्वतन्त्रता से रहने को मिलेगा उन्हें मनुष्य का खून बहाने पर विवश होना पड़ा। परन्तु उस महान क्रांति की वेदी पर जो कि मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को असम्भव बना देगी, व्यक्तियों का बलिदान अवश्यम्भावी है उसे रोका नहीं जा सकता।

क्रांति चिरजीवी हो।

विश्वसनीय सहायक (१९३०)

क्रांतिकारी समाजवादी जनतांत्रिक दल में भगतसिंह के विश्वसनीय सहायक के नाम से प्रसिद्ध लाहौर के भगवती चरण (बोहरा) ने पंजाब के खतरनाक क्रांतिकारी कार्यों में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग लिया था। उन्हीं कार्यवाहियों के कारण भगतसिंह तथा उनके दो साथी सुखदेव और राजगुरु को फांसी हुई थी। वे भगवतीचरण ही थे जिन्होंने १८ मार्च १९२९ को काश्मीरी बिल्डिंग में ६९ नम्बर के कमरे को १३ रु० मासिक किराए पर लिया था। जिसका दल के शस्त्रागार के रूप में उपयोग होता था। १५ अप्रैल को हुई तलाशी के समय भगवती चरण अनुपस्थित थे। पुलिस ने भरसक प्रयत्न किया पृथ्वी आकाश एक कर दिया कि किसी प्रकार भगवती चरण गिरफ्तार हो जावे जिससे कि वह भी लाहौर षडयन्त्र (सांडर्स की हत्या) के अभियोग में अभियुक्त बनाया जा सके परन्तु उनके सब प्रयत्न असफल हुए। भगवती चरण पुलिस के लाख प्रयत्न करने पर भी उसके हाथ नहीं आए। उनको घोषित अपराधी और फरार अभियुक्त घोषित कर दिया गया। पुलिस उनके मकान पर १० मई १९२९ को गई और उनकी सम्पूर्ण चल सम्पत्ति की उसने सूची तैयार कर ली और उनकी पत्नी से पुलिस ने कहा कि वे अपने पति को पुलिस के थाने में भेज दें क्योंकि उनसे कुछ आवश्यक काम है। ६ फरवरी १९३१ को एक मुखबिर के द्वारा (लाहौर षडयन्त्र अभियोग का मुखबीर) पुलिस को ज्ञात हुआ कि भगवती चरण वर्मा रावी नदी के किनारे जंगल में जब प्रयोग कर रहे थे तब बम फट जाने से भगवती चरण गम्भीर रूप से घायल हो गए। बम के विस्फोट से उनके दोनों हाथ उड़ गए। यह घटना जनवरी १९३१ में घटित हुई। उसके परिणाम स्वरूप उनकी तत्काल मृत्यु हो गई। उस परिस्थिति में उनको डाक्टरी सहायता प्राप्त नहीं हो सकी। उनके मित्र जो वहां उपस्थित थे उन्होंने गुप्त रूप से शीघ्र ही उनका अन्तिम संस्कार जिस प्रकार भी वे कर सकते थे कर दिया और भारत माता ने अपना एक वीर आज्ञावान पुत्र खो दिया। उन्होंने क्रान्ति के लिए अपने

जीवन का चुपचाप बलिदान कर दिया और वे विस्मृत कर दिए गए। जब कि लाहौर षड्यन्त्र अभियोग अपनी मंद गति से चल रहा था तो जो भी अभियुक्तों के क्रांतिकारी साथी स्वतन्त्र थे अर्थात् पकड़े नहीं गए थे वे फरवरी १९३० में मिले। उन्होंने लाहौर के रेलवे क्लियरेंस आफिसर पर धन के लिए आक्रमण करने तथा भगतसिंह तथा अन्य अभियुक्तों को छुड़ाने की योजना बनाई। भगवती चरण की वीर पत्नी देवी दुर्गावती ने अपने सब आभूषण तथा मूल्यवान वस्तुयें बेंच कर इस कार्य के लिए तीन हजार रुपए दिए। सरकार बहुत सतर्क और चौकन्नी थी उसने अभियुक्तों पर निगरानी बहुत कठोर कर दी थी, इस कारण योजना सफल नहीं हो सकी।

अति उत्साही अधिकारी (१९२९)

१० मार्च १९२९ को बारीसाल टाउन हॉल में विदेशी वस्तु बहिष्कार के सम्बन्ध में एक सभा हुई और पुलिस का थानेदार ज्योतिषचन्द्र राय उसमें गया क्योंकि मीटिंग की रिपोर्ट लेने के लिए उसकी ड्यूटी लगी थी। जब ६.३० सायंकाल मीटिंग समाप्त हुई तो ज्योतिषचन्द्र राय फकीर बारी सड़क थाने की ओर चला। ज्योंहि वह पुलिस क्लब के तालाब के समीप था तो यकायक उसकी पीठ में किसी ने छुरा भोंक दिया। उससे उसके गहरी चोट आई और उसके परिणाम स्वरूप उसकी वहां मृत्यु हो गई। झालाकाटी पुलिस थाने के अन्तर्गत कीर्ति पाशा का एक चौदह वर्ष का लड़का जो नवीं कक्षा में पढ़ता था इस सम्बन्ध में गिरफ्तार कर लिया गया और उस पर पुलिस अधिकारी की हत्या करने का अभियोग चलाया गया। सरकार का पक्ष यह था कि यह जानबूझ कर राजनीतिक अपराध है। उस हत्या के लिए कोई व्यक्तिगत द्वेष या ऐसा आरोप उस लड़के पर नहीं लगाया जा सकता था। जज ने अपने निर्णय में कहा — 'अभियुक्त को यह अपराध करने के लिए जिस बात ने प्रेरित किया वह उसकी देश भक्ति की भावना थी। यह एक राजनीतिक अपराध है जिसको असाधारण चतुराई से आयोजित और क्रियान्वित किया गया है।" आगे जज ने कहा —

मैं इस साक्षी को स्वीकार करता हूँ कि ज्योतिष का पीछा किया जा रहा था। जख्म के स्वरूप से जो इस प्रकार का था मानो किसी कुशल कारीगर ने किया हो मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि सम्भवतः उसने हत्या करने के लिए छुरे को चलाने का पूर्ण अभ्यास कर लिया था नहीं तो बिना पूर्व तयारी वह इतनी शीघ्रता और कुशलता से हत्या नहीं कर सकता था। यदि यह अपराध निजी शत्रुता अथवा द्वेष से होता तो मुझे चरम दण्ड अर्थात् मृत्यु दण्ड, को कम करने पर विवश होना पड़ता परन्तु यह अपराध वैधानिक प्राधिकार के विरुद्ध किया हुआ प्रतीत होता है और मेरा विचार है कि इन परिस्थितियों में मैं अपने ऊपर यह निर्णय करने का भार नहीं ले सकता कि अभियुक्त पर दया करनी चाहिए और उसके दण्ड को कम कर देना चाहिए। २२ अप्रैल १९२९ को उस लड़के को प्राण दण्ड दे दिया गया। अपील करने पर उच्च न्यायालय ने २६ जुलाई १९२९ को उसके दण्ड को आजीवन काले पानी में परिवर्तित कर दिया।

विस्फोट के शिकार (१९३०)

जब कि अमृतसर के एक कालेज में समारोह हो रहा था तो यकायक बुझ गया और उस स्थान पर अन्धकार छा गया। समारोह में आए हुए व्यक्ति भयानक विस्फोट से चौंक पड़े। जब कि पुनः रोशनी हुई तो सबने देखा कि

के धोखे में एक निर्दोष योरोपियन को अपने जीवन से हाथ धोने पड़े थे। परन्तु अभी तक भी टगार्ट के भाग्य ने उसका साथ नहीं छोड़ा था। जब २५ अगस्त १९३० को उसको मारने का प्रयत्न किया गया तो वह जैसे चमत्कार हुआ हो बाल बाल बच गया। वह जख्मी भी नहीं हुआ। दिन के ग्यारह बजे टगार्ट कीड स्ट्रीट से लाल बाजार में स्थित पुलिस के मुख्य कार्यालय को ट्राम की पटरी के साथ डलहौजी स्क्वायर के बाईं ओर जा रहा था। वह उस सड़क पर पेपरकरेंसी आफिस की उत्तर की ओर कुछ ही गज आगे बढ़ा होगा उसी समय टगार्ट की मोटर की बाईं ओर उसके बहुत समीप भयानक धड़ाका हुआ और एक क्षण बाद ही दूसरी ओर भी भयानक धड़ाके की आवाज़ हुई। लोगों में उस धड़ाके के कारण भगदड़ पड़ गई और वे डलहौजी स्क्वायर के दक्षिण पूर्वी किनारे के चारों ओर दौड़ कर हेर-स्ट्रीट की ओर भागने लगे। प्रथम बम फेंकने वाला भी भीड़ के साथ विदेशी डिलीवरी आफिस के सामने फुटपाथ पर भागा और डलहौजी इंस्टिट्यूट के सामने कारनर से लगभग ५० गज पहुंच गया। वह पूर्ण रूप से थक गया था और शक्तिहीन हो गया था और जैसे ही उसने स्क्वायर की रेलिंग पर बाटर प्रूफ रक्खा कि वह बेहोश होकर चार दीवारी के नीचे गिर पड़ा। उसके सभी वस्त्र खून से भीगे हुए थे शीघ्र ही उस घायल व्यक्ति के शरीर से बहुत अधिक रुधिर बहने लगा। उसको गिरफ्तार कर लिया गया। पुलिस उसे लाल बाजार थाने में ले गई जहां उसकी मृत्यु हो गई। उसके पास ०.४५० बोर का एक रिवाल्वर और दो बम मिले।

इस घटना चक्र में जिसमें तीस सैकेंड लगे होंगे कि एक दूसरा बंगाली युवक भागता दिखाई पड़ा जिसका पीछा ट्रैफिक कांस्टेबिल कर रहा था और जो स्क्वायर के दक्षिण की ओर भागा जा रहा था। वह एक खड़ी हुई टैक्सी में कूद पड़ा परन्तु वहां उसको तार घर के एक कर्मचारी ने पकड़ लिया। उसने अपना रिवाल्वर अपने पकड़ने वाले पर तान दिया और इस प्रकार से छुटकारा प्राप्त कर कौंसिल (?) पलेस की ओर तेजी से भागा। इस बार उसके पीछे एक दूसरा कांस्टेबिल भाग रहा था। वह गवर्नमेंट पलेस में घुसा जहां उसको पकड़ लिया गया और हेर स्ट्रीट पुलिस स्टेशन ले जाया गया। उसके पास ०.३२० बोर का ६ चैम्बर का एक भरा हुआ पिस्तौल एक अधूरा चला कारतूस तथा चार खाली कारतूस तथा अलमीनियम के एक खोके में एक जीवित बम एक सिगार तथा कुछ रुपया मिला। जांच पड़ताल से पता चला कि मृतक व्यक्ति का नाम अनुजा चरण सेन गुप्त' था वह खुलना जिले के सोनाहाटी का रहने वाला था। वह पहले कभी 'हिन्दू संघ' पत्र का सम्पादक था जिसका प्रकाशन अब बन्द हो चुका था। वह अपने भाई के साथ ११।१ करबगा टक लेन में रहता था। जिस व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया उसका नाम दिनेशचन्द्र मजूमदार था वह कलकत्ता विश्व विद्यालय के ला कालेज का छात्र था। वह चौबीस परगने के बशीरहाट का रहने वाला था। वह कलकत्ते में ७ राममोहन रोड पर रहता था।

जिस सर्जन (डाक्टर) ने अनुजा का पोस्टमार्टम किया उसने नगर के मृत्यु न्यायिक (कारोनर) को दो सितम्बर १९३० को बतलाया कि मृतक के पृथक पृथक आठ घाव थे जिनमें बम की किरचें घुसी हुई थीं। उसकी मृत्यु अत्यधिक रुधिर के शरीर से निकल जाने के कारण हुई। ११ सितम्बर १९३० को दिनेश पर अभियोग चलाया गया उस पर नीचे लिखे आरोप लगाए गए। (१) अनुजा चरण गुप्ता के साथ

मिलकर टैगार्ट की हत्या करने का षड्यन्त्र करना। (२) टैगार्ट की हत्या की समान इच्छा को कार्य रूप में परिणित करने का प्रयत्न करना (३) विस्फोटक पदार्थ द्वारा दुर्भावना पूर्ण कार्य में उपसहायक होना (४) ऐसे विस्फोटक पदार्थ रखना कि जिनसे मनुष्य जीवन को खतरा हो। और (५) अपने पास भरा हुआ पिस्तौल रखना। १८ सितम्बर १९३० को प्रथम द्वितीय और चतुर्थ आरोप में से प्रत्येक के लिए दिनेश को आजीवन काला पानी का दण्ड दिया गया और पांचवे आरोप के लिए उसे बीस साल का कठोर कारावास दिया गया। सारी सजाएं एक साथ चलने वाली थीं।

किसी प्रकार दिनेश का जीवन बच गया। ७ अक्टोबर १९३० को उसका स्थानान्तर मदिनापुर जेल में सी श्रेणी के बन्दी की भांति अपनी सजा को वहां रह कर काटने के लिए कर दिया गया। सात फरवरी की अर्द्ध रात्रि और आठ फरवरी के प्रात काल के मध्य दिनेश अन्य चार लम्बी सजा वाले बन्दियों सहित अपनी अपनी कोठरी से गायब पाये गए। पुलिस ने उनका पता लगाने और पकड़ने का अथक प्रयत्न किया, आकाश पाताल एक कर दिया परन्तु वे उसे पकड़ने में सफल नहीं हुए। इसके उपरान्त दिनेश दो बड़े और साहसिक कार्यों में प्रगट हुआ। प्रथम बार ९ मार्च १९३१ को चन्दननगर काण्ड में और दूसरी बार २२ मई १९३१ को कार्नवालीस स्ट्रीट कलकत्ता में।

बड़ा शिकार (१९३०)

क्रान्तिकारियों का गुप्तचर विभाग तथा जासूसी की कला बहुत ऊंचे दर्जे की थी और वे उसका पूरा उपयोग करते थे। ढाका में रिपोर्ट पहुंची कि इन्सपेक्टर जनरल पुलिस एफ जे लोमैन ९ अगस्त १९३० को ढाका आवेंगे अतएव इस अवसर का पूरा लाभ उठाने के लिए आवश्यक तैयारियां शुरू कर दी गई।

ढाका के पुलिस सुपरिंटेंडेंट श्री हडसन के साथ इन्स्पेक्टर जनरल नारायण गंज सदी पुलिस के सुपरिंटेंडेंट को देखने गए थे जो मिर्गी के दौरे के कारण मिलफोर्ड अस्पताल में पड़े हुए थे। जबकि इन्स्पेक्टर जनरल अस्पताल के बरामदे में सुपरिंटेंडेंट हडसन से प्रात काल ८-१४ पर बातचीत कर रहे थे तो प्रहार करने वाला पीछे से दौड़ते हुए आया और पचास फीट की दूरी से उसने इन्स्पेक्टर जनरल हडसन पर गोलियां चलाना आरम्भ कर दिया। प्रहार करने वाले ने गोली चलाने में आश्चर्यजनक तीव्रता और कुशलता प्रदर्शित की साथ ही उसका निशाना भी अचूक था क्योंकि एक भी गोली नहीं चूकी सभी गोलियां निशाने पर लगी। हडसन के तीन और लोमैन के दो गोलियां लगी और घाव हो गए। एक गोली जो लोमैन को लगी उसने शरीर में बाई कोख से घुस गई और रीढ़ की हड्डी में अटक गई। एक ठेकेदार ने प्रहार करने वाले का पीछा किया और उसने उसका हाथ पकड़ लिया परन्तु वह अपना हाथ छुड़ाने में सफल हो गया और वह अपने दो साथियों सहित मेडिकल स्कूल के अहाते से भाग गया। भागते समय वह अपना रिवाल्वर और स्लीपर छोड़ गया।

उस साहसी युवक के पास दो रिवाल्वर थे क्योंकि एक रिवाल्वर से जो उसके पास था वह अपना पीछा करने वालों पर गोली चला कर उन्हें अपने से दूर रख रहा था। इस बात की भी सम्भावना को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि उसका मित्र जो उसके भागने के मार्ग पर दृष्टि रख रहा था उसने भी उस पर पीछा करने वालों के आक्रमण से उसकी रक्षा करने में सहायता की हो। लो मैन का आपरेशन हुआ परन्तु उसका कोई परिणाम नहीं हुआ। ३१ अगस्त, १९३० को प्रात काल ६-१४ पर उसकी

मृत्यु हो गई । अपनी असफलता से निराश और खिन्न होकर पुलिस ने मेडिकल मेसों में अन्दर रहने वालों से बदला निकाला । इसयावन बोर्डरों को पुलिस ने इतनी बुरी तरह पीटा कि उनको अस्पताल में भर्ती करना पड़ा ।

सम सम्भावित गोली (१९३०)

देश में विशेषकर पंजाब और बंगाल में हिंसा फूट पड़ी और जो भी क्रांतिकारी कार्यवाहियों के सम्बन्ध में क्रान्तिकारियों पर दृष्टि रखते उनको गिरफ्तार करने तथा उनके विरुद्ध अभियोग चलाते वे क्रान्तिकारियों की गोली का निशाना बनते और उन पर आक्रमण होता ।

एक ऊंचे पुलिस अधिकारी एक खान बहादुर को जो क्रान्तिकारियों पर अभियोग चलाने वाले विभाग का प्रमुख था । मार्शल-ला (१९१९) बब्बर अकाली (१९२३) लाहौर षडयन्त्र (१९३०) और दशहरा बम (१९२८) के अभियोगों के सम्बन्ध में उसकी की गई सेवाओं के उपलक्ष में उसे खान बहादुर की उपाधि मिली । वह ४ अक्टोबर १९३० को ११ बजे प्रात नहर के किनारे माल-लाहौर के छावनी की ओर अपनी मोटर कार स्वयं चला कर जा रहा था । उसका अर्दली उसके साथ था । उसी समय अज्ञात प्रहार करने वालों ने अकस्मात उस पर आक्रमण किया और उसकी मोटर पर कई गोलियां चलाई । गोलियां उससे बच कर निकल गई परन्तु उसके अर्दली के एक गोली लगी जो उसके शरीर में अटक गई । उसका आपरेशन किया गया और लम्बे समय तक वह मृत्यु से संघर्ष करता रहा और अन्त में १० अक्टोबर १९३० को उसकी मृत्यु हो गई । गोली मारने वाले को गिरफ्तार कराने या उसके सम्बन्ध में सूचना देने वाले को दस हजार रुपए के पुरस्कार की घोषणा की गई परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला । वह पकड़ा नहीं जा सका ।

अन्तिम क्षण तक युद्ध करता रहा (१९३०)

दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज कानपुर के बाहर १ दिसम्बर १९३० को एक बड़ा पुलिस दल बाहर खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था । पुलिस कालेज की तलाशी लेना चाहती थी । कालेज की तलाशी लेने के पूर्व ही पुलिस के आदमियों ने एक व्यक्ति को उस रास्ते से निकलते देखा जिसे उन्होंने पहचान लिया कि वह सालिगराम शुक्ल है जिन्हें पुलिस अभित्रास को रोकने सम्बन्धी अध्यादेश के अन्तर्गत जो उस समय लागू था तलाश कर रही थी । शुक्ला पर पुलिस तुरन्त टूट पड़ी और उनसे कहा गया कि वह उनके बन्दी हैं । सालिगराम ने अपने को पुलिस की पकड़ से छुड़ाने का भरसक प्रयत्न किया तो तुरन्त और पुलिसमैन उनकी सहायता को आ गए कि जिससे वे निकल भाग न सकें । सालिगराम ने एक पिस्तौल निकाल लिया और उन्होंने तीन गोलियां चलाई जो तीन पृथक पुलिसमैनों को लगी जिनमें से प्रेम भल्ला गम्भीर रूप से घायल हो गया । उसकी बाद को मृत्यु हो गई ।

इस पर समान पुलिस दल जिसके साथ दो योरोपियन आफिसर्स भी थे अकेले सालिगराम से भिड़ गए परन्तु फिर भी सालिगराम ने अपने को पकड़ा जाने नहीं दिया एक योरोपियन सारजेंट ने अपने पिस्तौल के हत्थे से उनके सर पर बल पूर्वक प्रहार किया । उस प्रहार के परिणाम स्वरूप शुक्ला पृथ्वी पर गिर गया परन्तु पिस्तौल उसके हाथ में ही रहा । दूसरे योरोपियन आफिसर ने शुक्ला के सर पर एक डंडे से दूसरा प्रबल प्रहार किया उसका परिणाम यह हुआ कि शुक्ला लगभग संज्ञा शून्य हो गया ।

उसको मरा हुआ जान कर पुलिसमैनों ने अपने घायल साथियों की देखभाल और बाव आरम्भ की जिनमें से एक मृत्यु के किनारे था। इतने में शुक्ला को होश आ गया और इतनी शक्ति आ गई कि वह भाग सके। जैसे ही वह भागे कि सार्जेंट ने उन पर दो गोलियां चलाईं। दूसरी गोली से उनकी तत्काल मृत्यु हो गई।

शक्ति के गढ़ में (१९३०-३१)

८ दिसम्बर १९३० के दिन [redacted] १२ ० बजे जबकि बंगाल सरकार के मुख्य कार्यालय राइटर्स बिल्डिंग में भारी चहल पहल थी, सैकड़ों उच्च अधिकारी और उनके सहायक वहां अपने अपने काम में व्यस्त थे उस समय तीन युवक जो योरोपियन पोशाक पहने थे और अपनी गर्दन के चारों ओर मफलर लपेटे थे, इमारत की पहली मंजिल पर पश्चिमीय जीने से चढ़ कर पहुंचे। उनके वस्त्रों के कारण किसी ने भी उनकी ओर ध्यान नहीं दिया। वे तीन युवक जिनका नाम बाद को जांच पड़ताल से ज्ञात हुआ था (१) सुधीर गुप्ता उपनाम 'बादल' (२) विनोय बसु (३) दिनेश गुप्ता उपनाम नसू उन्होंने साहब अर्थात् कर्नल एन. एस. सिम्पसन से साक्षात्कार करने की इच्छा प्रगट की जो कि जेल विभाग के इन्स्पेक्टर जनरल थे। उनके अर्दली ने उनसे परम्परा के अनुसार स्लिप भरने को कहा और जब तक साहब उनको बुला न भेजें प्रतीक्षा करने को कहा। यह सब कुछ करने के बजाय उन्होंने अर्दली को धक्का देकर हटा दिया और वे तेजी से कमरे में घुस गए जहां सिम्पसन अपनी फाइलों में गहरे डूबे हुए थे।

इससे पूर्व कि श्री सिम्पसन आगुन्तकों की क्या इच्छा है यह अनुभव कर पाते अथवा अपनी आत्म रक्षा [redacted] लिए उपाय करते बल पूर्वक कमरे में घुसने वाले युवकों ने अपने रिवाल्वर निकाल लिए और तत्काल पांच या ६ गोलियां दाग दीं। कर्नल सिम्पसन अपनी कुर्सी से लुढ़क पड़े। वे तीनों तेजी से कमरे से निकले और इमारत के पूर्वी भाग की ओर डलहौजी स्क्वायर के सामने के चौड़े बरामदे से होकर भागे। कृषि विभाग के सचिव ने उन आक्रमणकारियों पर कुर्सी फेंकी उन्होंने सचिव पर गोली चलाई। दोनों पक्षों की ही निशाने चूक गए। वे लोग वित्त सचिव के कमरे के सामने पहुंचे और अर्दली से पूछा कि क्या साहब कमरे के अन्दर हैं। अर्दली परिस्थिति को समझ गया उसने कहा कि साहब बाहर गए हैं कमरे में कोई नहीं है। उन तीन में से एक युवक ने कमरे की ओर कुछ गोलियां चलाईं। गोलियां दर्वाजे के शीशों को तोड़ कर निकलीं।

गोलियां चलने की आवाज सुन कर इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस अपने कमरे से हाथ में रिवाल्वर लेकर बाहर निकले और उन्होंने पीछे से उन युवकों पर गोली चलाई परन्तु निशाना चूक गया। एक सार्जेंट ने उनके हाथ से रिवाल्वर ले लिया और भागते हुए युवकों पर उसने गोली चलाई परन्तु गोली दूसरी ओर चली गई। असिस्टेंट इन्स्पेक्टर जनरल ऑफ पुलिस एक दूसरे रिवाल्वर को लेकर आए उन्होंने भी उन भागते [redacted] युवकों पर गोली चलाई परन्तु उनकी गोली नहीं लगी, उनकी गोलियां भी व्यर्थ रहीं उनका कोई परिणाम नहीं हुआ। आक्रमणकारी युवक अब पास पोर्ट कार्यालय में घुस गए और उन्होंने अपने रिवाल्वर में कारतूस भर लिए एक विदेशी यात्री तथा ऑफिस असिस्टेन्ट जो कि उनको पकड़ना चाहते थे उनको उन्होंने रिवाल्वर बताया। वे भय से हट गए और तुरन्त वहां से भाग खड़े हुए। न्यायिक सचिव अपने कमरे के दरवाजे के समीप आया और उसने बाहर झांक कर देखा। उन्हें युवकों ने गोली मार दी, गोली

उसकी जांघ में थम गई। मजिस्ट्रेट लगड़ाता हुआ भागा उसके घाव से बहुत अधिक खून बह रहा ... वह ...

म ... ने कमरे में ... से ... की ... से झांक कर बाहर देखा और पुलिस पर गोली चलाई जो कि अब उस कमरे को घेरे हुए थी। पुलिस ने भी जवाब में गोली चलाई। लाल बाजार पुलिस के मुख्य कार्यालय को समाचार भेजा गया और सर्वोच्च पुलिस अधिकारी बतहाशा भागते हुए घटना स्थल पर पहुंचे। उस समय तक कमरे के अन्दर से गोली चलना बन्द हो गई थी एक ... किस से कहा गया कि वह कमरे में अन्दर देखे और वहां की सही रिपोर्ट दे। तीनों वीरों में से दो फर्श पर पड़े थे और तीसरा कुर्सी पर बैठा था और अपने सिर को सामने की मेज पर टिकाये हुए था। ऐसा प्रतीत होता था कि यदि वह मर नहीं गया था तो मर रहा था। मेज पर दो रिवाल्वर और कई कारतूस पड़े हुए थे और कुछ ... पाउडर उसके चारों ओर पड़ा था। ऐसा प्रतीत होता था कि उसमें से उसने थोड़ा पाउडर खा लिया था। दूसरा युवक जो फर्श पर पड़ा था उसकी ... की बाईं ओर गोली का घाव था।

एक ६ नम्बर वाला रिवाल्वर चलाए गए तथा अधूरे चले कारतूसों के साथ उसकी टांगों के बीच पड़ा था। तीसरे आदमी के सर के दोनों ओर घाव थे। वह उस समय भी होश में था। उसने अपना नाम विनोद बोस बतलाया। विनोद बोस ने पहले व्यक्ति का नाम सुपति राय बतलाया जिसको बाद को पुलिस ने पहचान लिया कि वह सुधीर गुप्ता था। दूसरा व्यक्ति जिसे बिरेन घोष बतलाया गया वास्तव में दिनेश गुप्ता था। विनोद की जेब में बुलडाग की शकल का एक रिवाल्वर तथा चले हुए और पांच जीवित कारतूस मिले। कमरे के फर्श पर तथा सुधीर की जेब में तीन तीन रंग के झण्डे मिले जो कि उस समय इंडियन नेशनल कांग्रेस द्वारा स्वीकृत राष्ट्रीय झण्डे थे। बड़ी संख्या में कारतूस तथा चली हुई गोलियां कमरे में तथा बरामदे में बिखरी हुई थीं जिन्हें अधिकारियों तथा पुलिसमैनों ने उठा लिया।

विनोद और दिनेश को मेडिकल कॉलेज हास्पिटल ले जाया गया। ९ दिसम्बर को उनको जेल (हास्पिटल) की हिरासत में रख दिया गया। इसी बीच १० दिसम्बर को विनोद की दशा खराब हो गई भेजे का मांस तब भी बाहर निकला आ रहा था। दूसरे दिन उसकी दशा और भी अधिक खराब हो गई रात्रि को उसकी दशा संकट की हो गई। जब उसे होश रहता वह औषधि लेने से इनकार कर देता और अपने सिर की पट्टी को जितना गड़बड़ कर सकता था करता। १३ दिसम्बर १९३० को विनोद ने अपने प्राण छोड़ दिए। उसके शव को नीमतल्ला घाट ले जाने दिया गया। परन्तु शव के साथ उसके थोड़े से सम्बन्धियों को ही जाने की आज्ञा मिली और साथ में बहुत बड़ी संख्या में पुलिस थी। विनोद ने मृत्यु के समय मृत्युकालीन घोषणा की कि 'लोमैन' को उसने गोली मारी थी जिससे उसकी मृत्यु हुई। १२ दिसम्बर को दिनेश का आपरेशन हुआ और उसके सर में से एक गोली निकाली गई। उसकी दशा में धीरे धीरे सुधार ... कभी कभी सिर के ... आंतरिक रक्त स्राव के कारण उसकी दशा ... थी। ३१ दिसम्बर १९३० को दिनेश को मेडिकल कालेज हास्पिटल ... उसको पुलिस के ... दिया गया। १७ जनवरी को विशेष ... और उसके ... की गई। २० जनवरी, १९३१

से अभियोग प्रारम्भ हुआ दिनेश पर आर्म्स एक्ट की धारा १९ एफ तथा भारतीय अपराध दण्ड संहिता (इंडियन पनल कोड) की धारा ३०२, ३०७ तथा १२० के अन्तर्गत उस पर आरोप लगाए गए। यह प्रमाणित हो गया कि सिम्पसन को उनके रिवाल्वर से निकली दो गोलियां लगी थीं। १२ फरवरी १९३१ को ५ ३० बजे सायंकाल निर्णय सुना दिया गया। कानून के अन्तर्गत जो अधिकतम और उच्चतम दण्ड था (मृत्यु दण्ड) वह उनको दिया गया। वीरवर दिनेश ने उस दण्ड को एक दार्शनिक की भांति उदासीनता से सुना।

उनके अभियोग को उच्च न्यायालय की पुष्टि के लिए भेजा गया। न्यायाधीश ने १७ और १८ मार्च को अभियोग की सुनवाई की और २७ मार्च १९३१ को निर्णय दे दिया। ट्रिब्यूनल ने जो प्राण दण्ड की सजा दी थी उच्च न्यायालय ने उसकी पुष्टि कर दी। जिस दिन ट्रिब्यूनल ने निर्णय दिया था उस दिन से फांसी के दिन तक दिनेश ने ईश्वर में अटूट विश्वास का आश्चर्यजनक परिचय दिया जो सर्वश्रेष्ठ बहुत ऊंचे योगी के योग्य था। ऐसा प्रतीत होता था कि वह पूर्ण रूप से वीतराग हो गये थे और जीवन तथा जो भी मनुष्य के अस्तित्व के लिए प्रिय वस्तुएं होती हैं उससे उनका कोई मोह नहीं रहा था। ६ फरवरी १९३१ को उन्होंने अपने भाई को लिखा कि इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि उन्हें जीवन में एक अद्भुत अह्लाद का अनुभव हुआ है और जिस प्रकार मेरी मृत्यु होगी वह भी मेरे लिए एक नवीन अनुभव होगा।" इन दिनों उनका वजन बढ़ गया। उन्होंने अपने दूसरे भाई को लिखा 'तुम एक डाक्टर हो। क्या तुम यह विश्वास कर सकते हो कि जब से मुझे मृत्यु दण्ड का निर्णय सुनाया गया है मेरा वजन १२ पौंड बढ़ गया है। भाई ने उनके इस कथन पर जब संदेह प्रकट किया तो जेल के डाक्टर ने उन्हें विश्वास दिलाया कि तौलने वाली मशीन बिलकुल सही और ठीक है दिनेश का वजन वास्तव में बढ़ गया है दिनेश जिसका घर का नाम 'नासू' था भावी भाग्य को लेकर उसकी माता उसके भाई तथा भावजें मन से बहुत दुखी थे उनका अन्तर अत्यन्त कातर हो उठा था। उनकी अत्यधिक याचना पर उनके पत्रों का उत्तर देते हुए 'नासू' ने २९ मार्च १९३१ को लिखा 'मेरे लिये यह वास्तव में असम्भव है कि मैं वे साधन बतला सकूं कि जिनसे वे अपने में शांति प्राप्त कर सकें। क्योंकि मुझे स्वयं इस समस्या के सम्बन्ध में कोई ज्ञान नहीं है" परन्तु उन्होंने यह भी लिखा — 'क्योंकि हम लोगों में मृत्यु का अत्यन्त भय होता है वह भय ही हमें बुरी तरह परास्त कर देता है। यदि हम किसी तरह मृत्यु के भय पर विजय प्राप्त करलें तो मृत्यु हमारे लिए एक नगण्य घटना हो जावेगी। मृत्यु से भयभीत होने के स्थान पर हमें उसका नितान्त शान्त चित्त और भयरहित होकर स्वागत करना चाहिए।' इसके आगे दिनेश ने लिखा — 'हम लोग हिन्दू हैं। यदि मृत्यु के विचार मात्र से ही हम घबरा उठते हैं तो हम पहले पग पर ही जीवन की दौड़ में हार जाते हैं असफल हो जाते हैं। हम जानते हैं कि हम कभी नहीं मरते। जिसकी मृत्यु होनी है वह यह पार्थिव शरीर है। आत्मा मृत्यु रहित है उसकी कभी मृत्यु नहीं होती। मैं वह हूं आत्मा और आत्मा ही भगवान है। जब कि मनुष्य इस तथ्य की अनुभूति कर लेता है तब वह कह सकता है— मैं कभी वृद्ध नहीं होता कभी मरता नहीं मैं सर्वकालीन हूं अमर हूं।" जिन्हें यह पत्र लिखा गया था वे कह सकते थे कि यह केवल यथार्थता का प्राकट्य मात्र है और पूछ सकते थे कि उस स्थिति तक पहुँचने के लिए मार्ग कौन सा है? उसका दिनेश ने उत्तर

अपने पत्र में दे दिया। 'इसके लिए केवल मात्र मार्ग है भगवान को पूर्ण समर्पण इस स्थिति को प्राप्त करने का और दूसरा कोई साधन नहीं है। हम भगवान के नाम का चाहे जितना जप करें उसका नाम जप करके तपस्या करके तथा भाल पर चन्दन का तिलक लगा कर अपने को चाहे जितना भक्ति भाव से सजायें अथवा अन्य प्रकार से उसकी अर्चना करें परन्तु हम वास्तव मे उससे प्रेम नहीं करते। जिस किसी में भगवान के प्रति यथार्थ रूप में भक्ति उत्पन्न करली है मृत्यु उसके लिए एक खोखली ध्वनि है उसमें कोई तथ्य नहीं है। उसको वास्तव में बगाल के निमाई ने प्रेम किया था, जेसस क्राइस्ट ईसा ने किया था जो स्वयं प्रेम का अवतार थे, और उन सभी कम आयु के युवकों ने प्रेम किया था जिन्होंने मुस्कराते हुए मृत्यु का आलिंगन किया।" 'देवी व्यवस्था में किसी को भी सदेह नहीं करना चाहिए।"

'प्रत्येक प्राणी को भगवान के न्याय सिंहासन तक उसके सिंह द्वार तक पहुंचने की छूट है और वहा निरन्तर न्याय की प्रक्रिया चलती रहती है। प्रत्येक प्राणी का वहां न्याय होता है। उसके न्याय में अटूट विश्वास रक्खो। उसके न्याय को शीश झुका कर अत्यन्त विनम्रता और भक्ति से सरलता पूर्वक स्वीकार करो।' ८ अप्रैल १९३१ को नासू ने अपने भाई को अपनी भाषा में लिखा — मेरे लिए मृत्यु कोई साहसिकता का उपक्रम नहीं होगा परन्तु मैं उसे भगवान के आशीर्वाद के रूप में स्वीकार करूंगा। हिन्दू दर्शन शास्त्र कहते हैं कि भगवान का आशीर्वाद सदैव मनुष्य के लिए सांसारिक सुखों के रूप में ही नहीं आते वरन वह मृत्यु और सकट के रूप में भी प्रगट होते हैं। अपनी ममता मई माता के सम्बन्ध में सोच कर नासू भी कठिनाई से अपने को सयमित कर सका उसी पत्र में उसने माता के सम्बन्ध में अंग्रेजी में लिखा —

"To die for me, no terror holds
yet one fear presses my mind
Much I fear that over my corpse
The scalding tears of my mother shall flow"

मृत्यु से मुझे तनिक भी भय नहीं है
फिर भी एक भय मेरे मन पर भार बना हुआ है
मुझे इस बात का भय है कि मेरे शव पर
मेरी माँ की अविरल अश्रुधारा बहेगी"

मै आप सब से प्रार्थना करता हूँ कि आप लोग मेरे शव पर शोक न करें। हम मृत्यु पर विजय प्राप्त करनी चाहिए। हम मृत्यु को अपने पर विजयी नहीं होने देंगे।" नासू को अपनी मृत्यु पर शोक उदासी का चिन्ह भी देखना पसंद नहीं था। उसकी यह हार्दिक इच्छा थी जो उसने नीचे लिखी पंक्तियों में व्यक्त की थी—

Memories of Life and Laughter
Memories of earthly glee
As I go to the hereafter
All my Lullaby shall be

दिनेश ने जो पत्र २२ जून को लिखा उसमें भी उसने मृत्यु के सम्बन्ध में अपने उक्त विचारों को दोहराया। 'मुझे मरने में तनिक भी खेद नहीं है। मै यह बात स्वीकार करता हूँ कि जीवन मधुर है पर कभी कभी मृत्यु मधुरतर होती है। मैं सोना

चाहता हूँ गहरी निद्रा में सोना चाहता हूं। उस निद्रा को अपनाना चाहता हूं कि जो संसार के कभी समाप्त न होने वाले कष्टों दुखों और दुर्भाग्यों से हृदय को शांति प्रदान करती है। मृत्यु मेरी मित्र है मेरी सबसे बड़ी उपकार करने वाली है। मृत्यु मुझे बंधन से छुटकारा दिलाएगी। मृत्यु मुझे स्वतन्त्र कर देगी मेरी स्वतन्त्रता मृत्यु में सन्निहित है मेरे जीवन की अमरता मृत्यु में है।' "जब मैं मरूं तो मैं अश्रुपात पसंद नहीं करूंगा। यदि मुझे कोई प्रेम करता है और यथार्थ में मेरे लिए उसे शोक है तो उसे रोना नहीं चाहिए। मेरी आत्मा को अश्रुओं से संतोष नहीं होगा। असमय और विवशता में पड़ लोगों के खारे पानी से मेरी आत्मा संतुष्ट नहीं होगी।"

दिनेश उस समय गहरी नींद में सो रहे थे जब उन्हें अंतिम यात्रा के लिए तैयार होने के लिए जगाया गया तो उन्होंने अपनी प्रातः काल की नित्य क्रिया अत्यन्त सामान्य ढंग से की स्नान किया और प्रहरी को सूचित कर दिया कि वह तैयार है। वह अत्यन्त दृढ़ कदमों से उन सीढ़ियों पर चढ़े जो फांसी के तख्ते पर जाती थीं। वह उस समय तक जोरदार आवाज में वन्देमातरम् का घोष करते रहे जब तक कि ७ जुलाई १९३१ को प्रातः काल ३ बज कर ४५ मिनिट पर फांसी के क्रूर फंदे ने उनके गले को बिलकुल घोट नहीं दिया जिससे उनकी वाणी बन्द हो गई। दिनेश का आचरण भारत माता के सच्चे पुत्र जैसा था। भारत मां के एक सच्चे पुत्र को जो करना चाहिए था वही उन्होंने किया। डाक्टरों ने उनको मृत्यु के मुख से निकाल कर अपना कर्तव्य पालन किया। ब्रिटिश सरकार ने उनको फांसी देकर न्याय की रस्म को पूरा किया। और भारत की स्वतन्त्रता उनके इस चरम बलिदान से अपने लक्ष्य की ओर लम्बे कदम रख कर बहुत आगे बढ़ी। बाद को यह पता चला कि ढाका में लो मैन पर जो आक्रमण हुआ था उसके लिए यही तीनों मित्र उत्तरदायी थे। तीनों ही कलकत्ता और बरनागोर पहुंचे। कुछ दिनों वे बादल के चाचा के मकान में कुछ रातों रहे उनकी चाची ने उन्हें बहुत प्रेम पूर्वक रक्खा। वहां आस पास के लोग कानाफूसी करने लगे अतएव वहां और अधिक रहना खतरे से खाली नहीं था। बादल कोयले की खानों में चला गया और खान के अन्दर काम करने लगा जिससे पुलिस की दृष्टि से बचा रहे। अन्य दोनों मित्र समीप ही रहते थे और तीनों ही एक दूसरे से यथासम्भव सम्पर्क रखते थे। वे कलकत्ता आए और स्थानीय मित्रों की सहायता से उन्होंने आक्रमण की योजना बनाई। घटना वाले दिन बादल योरोपियन वेश भूषा में अपने चाचा से अंतिम विदा लेने के लिए फैक्टरी में मिला। बाद को सुना गया कि उसने ८ दिसम्बर १९३० को राइटर्स बिल्डिंग (सचिवालय) में अपनी हत्या करली।

विद्या के केन्द्र में (१९३०-३१)

पंजाब विश्वविद्यालय का उपाधि वितरण समारोह २३ दिसम्बर १९३० को १.१५ तथा १.२३ मध्याह्न होपरान्त समाप्त हुआ ही था। उप कुलपति ने कुलपति अर्थात गवर्नर से प्रार्थना की कि वे समारोह की समाप्ति की घोषणा करें। गवर्नर के द्वारा समारोह की घोषणा हो जाने के उपरान्त जलूस चला। एक तरुण पी एस वाल्घेर मरदान उत्तर पश्चिमीय प्रान्त का निवासी प्रतियिक्षा के शुरू होने से पूर्व ही बिना पास के हाल में घुस आया था। जब तक समारोह चलता रहा वह दर्शकों की दीर्घा में बैठा देखता रहा। वह योरोपियन पोशाक में था। जब विश्व विद्यालय के कुलपति पंजाब गवर्नर जियाफे डी मांट मारेन्सी कुछ कदम आगे बढ़े तभी वह मनचला बलात्प्रवेष्टा

'थारावादी' से बहुत दूर परस्थित गाँवों मे भी विद्रोही सक्रिय थे। उदाहरण के लिए 'त्वागबयात' जो रिटक्विन के उत्तर पूर्व मे स्थित है वहाँ भी विद्रोही प्रभावशाली थे। सरकारी सेना को ३ जनवरी १९३१ को विद्रोहियो के एक बड़े और शक्तिशाली दल से युद्ध करना पड़ा। घमासान युद्ध हुआ उस युद्ध म पन्द्रह विद्रोही रण भूमि पर सदा के लिए सो गए।

जनवरी के प्रारम्भ म प्रान्त के कई जिलों से विद्रोहियों के वहाँ सक्रिय होने की खबर आई। इनमे से एक रंगून से २७५ मील की दूरी पर यामेथीन' नामक स्थान था। सरकारी सेना ने उन पर आक्रमण किया, ४ जनवरी १९३१ को घमासान युद्ध हुआ और युद्ध की समाप्ति पर ३९ विद्रोही एक फोयाई' के नेतृत्व मे युद्ध भूमि पर मरे मिले। उसी दिन यामेथीन' से आठ मील दूर दो गावों इना हमासी और वादवा' पर सेना ने आक्रमण किया।

७ जनवरी १९३१ को 'ओक्कान' मे विद्रोहियो के सक्रिय होने की सूचना मिली। पुलिस ने उनसे मुठभेड़ की, दोनों पक्षो मे जमकर लम्बे समय तक युद्ध हुआ, दोनों पक्षों की यथेष्ट जन हानि हुई। इस युद्ध मे ६ विद्रोही वीर गति को प्राप्त हुए।

इसके अतिरिक्त पग्यू' मिनलाग (अमहस्ट जिले म) सानमाडो ओखो ह्याम-बिन्गोन मिं हा तथा अन्य स्थान भी विद्रोह की अग्नि की लपट से बच नही सके।

प्यापान' जिले में देदायो' दूसरा स्थान था जहा ७ जनवरी १९३१ को विद्रोहियों ने आक्रमण किया। इस आक्रमण के सम्बन्ध म यह मा यता थी कि यह विद्रोह के सर्वोच्च नेता के निर्देशन म हुआ था। इस युद्ध म समुद्र के निकट जिले के सुदूर दक्षिण पूर्व के चार पाँच गावा की लगभग सम्पूर्ण जनसख्या ने भाग लिया था। 'थारावादी' के विपरीत जो सघन वनो से आच्छादित थी यहाँ विद्रोहियों ने धान के खेतो के भरे मदानों म अपना डेरा डाला। जब पुलिस वहा आई तो वे भागे नही। शत्रु की बन्दूको की मार स डरे नही वरन उन्होने पुलिस पर आक्रमण कर दिया घमासान युद्ध के उपरान्त उन्ह पीछा हटना पड़ा इस युद्ध में ३० या ४० विद्रोही खेत रहे। जहां तक पता लग सका ५ जनवरी १९३१ तक विद्रोहियों के ३०० वीर योद्धा रण क्षेत्र में युद्ध करते हुए मारे गए और २०० घायल हुए या गिरफ्तार हुए। यह स्पष्ट हो गया कि विद्रोहियों ने बहुत बड़ी सख्या में अस्त्र शस्त्र एकत्रित कर लिए थे। जिनमे बन्दूकें बहुत बड़ी सख्या में थीं। मिं हा ओक्को के समीप बड़ी मात्रा में अस्त्र शस्त्र तथा बन्दूकें सरकारी सेना ने विद्रोहियों से छीन ली थी।

१९३१ के पहले तीन महीनो मे विद्रोहियों ने बिना रुके हुए लगातार एक के बाद दूसरे स्थान पर जो एक दूसरे के निकट नही थे आक्रमण किए। थिनताव्या सुरक्षित वन प्रदेश उनमे से एक क्षेत्र था जहा विद्रोहियो स सेना की मुठभेड़ हुई। जिन नगरों और गांवा पर विद्रोहियों ने आक्रमण किया उनकी सूची लम्बी और अधूरी है उनमें से मुख्य देदाये (प्यापान जिला) यामेथिन गयाले दालचोग, यावागान, जिगोन, त्वागन, मुख्य थे। कुछ स्थानो पर विद्रोही आक्रमण करने वाला का सरकारी सेना ने मुकाबला किया किन्तु अन्य स्थानों पर उनका नाम मात्र का अथवा नही के समान विरोध हुआ। ददाय तथा यामेथिन विद्रोहियो के पचास योद्धा रण भूमि पर सदा के लिए सो गए। विद्रोह का अन्त होने की आशा के विरुद्ध रेलवे मार्ग को नष्ट भ्रष्ट करने की विद्रोहियों की कार्यवाही बढ़ गई। १ मार्च १९३१ को 'इलीवा' और 'सेवाडा' के

मध्य तथा अन्य स्थानों पर रेलवे पुलों और रेलवे लाइन को उड़ाने के लिए डायनेमाइट का उपयोग किया गया। यद्यपि सैनिक सामग्री तथा अस्त्र शस्त्रों के अभाव में विद्रोहियों को अपनी हिंसात्मक कार्यवाहियां करने में बहुत कठिनाइयां होती थीं परन्तु फिर भी विद्रोह की अग्नि के शान्त होने के कोई चिह्न प्रगट नहीं हो रहे थे। थारा ब्रांच लाइन पर स्थित जियू गोम स्टेशन पर विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया इस आक्रमण में स्टेशन मास्टर मारा गया। १३ जनवरी १९३१ को भी पहले की ही भांति थारावादी में विभिन्न स्थानों पर आक्रमण होते रहे। लगभग उसी समय इनसीन पर आक्रमण के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। वर्तमान विद्रोह पर सरकार की गम्भीर चिंता इसी से लक्षित होती थी कि ११ जनवरी १९३१ को एक अध्यादेश जारी किया गया। गया कि जिससे विद्रोहियों के अभियोग शीघ्रता पूर्वक निबटाये जा सकें। इस अध्यादेश में बरमा में एक सबल आतंकवादी संगठन के अस्तित्व को स्वीकार किया गया, जो कि आंशिक रूप से बंगाल के आतंकवादी संगठन से परामर्श लेकर कार्यवाही कर रहा था। सरकार ने उसकी गम्भीरता और भयंकरता पर अपने अध्यादेश में बल दिया था।

३ फरवरी १९३१ को अथवा उसके आस पास विद्रोहियों और सेना में थारावादी जिले के लालादान स्थान पर खुल कर घमासान युद्ध हुआ जिसमें तीन विद्रोही मारे गए और ६ घायल हो गए। लगभग ४४ ग्रामीणों ने इलीवा से दस मील और थारावादी से ४½ मील दूर जगध्वी पर ४० सैनिक पुलिस के सिपाहियों पर आक्रमण कर दिया। अब हेन्जादा की बारी थी। इरगावू का दोदाम पर जो कस्बे का कार्यालय था और हामानदान के कार्यालय पर २३ फरवरी १९३१ को आक्रमण कर दिया गया। इस समय में विद्रोहियों के पक्ष में कुछ मृत्युयें हुईं। पहले स्थान पर ६ तथा दूसरे स्थान पर तीन विद्रोही खेत रहे। विद्रोहियों ने मार्च के अंतिम सप्ताह में अपनी कार्यवाहियां अधिक तेज कर दीं। पुलिस के गश्ती दलों और पुलिस चौकियों पर खुले आम आक्रमण होते और अनेक स्थानों में बहुत बड़ी संख्या में डकैतियां डाली गईं। वन विभाग के डिप्टी कंजरवेटर तथा जिला चिकित्सा अधिकारी को विद्रोहियों ने गम्भीर रूप से घायल कर दिया।

रंगून से लगभग ४० मील दूर पर सड़क पर विद्रोहियों ने एक पेड़ को काट कर डाल दिया और रास्ता रोक दिया। विद्रोही सड़क के समीप पेड़ों और झाड़ियों में छिप गए। जब पुलिस कांस्टेबिलों को लेकर मोटर बस वहां आई तो विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया। २५ मार्च १९३१ को इनसीन जिले में पूर्व प्रोक्कान क्षेत्र में कामपादी पुलिस चौकी पर ६५ विद्रोहियों ने तीसरी बार आक्रमण कर दिया। इस समय में चार विद्रोही धराशायी होकर वीर गति को प्राप्त हुए। जब कि एक पुलिस दल अपने शिविर की ओर लौट रहा था तो विद्रोही पुनः प्रकट हो गए और उनमें से कुछ को इन्होंने गम्भीर रूप से घायल कर दिया। इस समय में उनको अपने दो साथियों को भी खोना पड़ा। उसी समय १५ मार्च १९३१ को जब कि कामपादी का युद्ध लड़ा जा रहा था तो एक पुलिस दल थारावादी के मानाई सुरक्षित वन की जब खोज कर रहा था तो उन्हें वहां एक विद्रोही शिविर मिला। उन्होंने उस पर तुरंत ही आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में २२ विद्रोही मारे गए जिनमें दो प्रमुख स्थानीय नेता थे। पुलिस और सेना द्वारा विद्रोह के दमन के प्रयत्नों से जो परिणाम आए सरकार उनसे पूरी तरह संतुष्ट नहीं [illegible] अतएव मार्च में इसने वायुयानों का विशेषकर थारावादी तथा

पेगू क्षेत्र में विद्रोहियों के अभाव का पता लगाने के लिए उपयोग किया। स्वाभाविक था कि इससे विद्रोहियों का अहित होना था। पर तु उनके सामने प्रश्न यह था कि "जब कि शरीर झुक जाता है तब भी आत्मा बलवती रहती है" अस्तु वे इसकी परवाह न कर डटे रहे। पूर्व घोषित सरकारी विजय के बावजूद ६ एप्रिल १६३१ को थोरावादी और इनसीन की सीमा पर स्थित ओक्कान पुलिस थाने पर विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया और वहां जो भी अधिकारी तथा सैनिक थे मारे गए। इस संघर्ष में विद्रोहियों का एक साथी मारा गया ओक्कामा से थोड़ी ही दूर एक दूसरे संघर्ष में एक विद्रोही और वीर गति को प्राप्त हुआ। पेगू और ताऊ ग जिलों में विद्रोही एप्रिल १६३१ में बहुत सक्रिय थे। यह जिले विद्रोहियों से बहुत अधिक प्रभावित थे। विशेषकर पेंग्वेगांव के उत्तरी भाग में विद्रोही कार्यवाहियों का बहुत असर था जहां कि उन नागरिकों को जिन पर सरकार को सहायता पहुचाने का सदेह था विद्रोहियों के द्वारा बहुत अधिक कष्ट उठाना पड़ा। ९ एप्रिल १६३१ को एक संदेहास्पद व्यक्ति का पीछा करके जो बाजार में खरीदारी कर रहा था पुलिस ने थारावादी के पयुमांगु के जगल में विद्रोहियों के छिपने के स्थान का पता लगा लिया उन्होंने उस शिविर पर जिसमें विद्रोही छिपे हुए थे गोली वर्षा की जिसके फलस्वरूप चार विद्रोही मारे गए उनमे एक नेता भी था। एप्रिल १६३१ के प्रथम सप्ताह में एक तरुण बगाली को जनता में उत्तेजना फलाने वाली वाली विज्ञप्तियां जिनमें सरकार को किसी भी प्रकार प्रत्येक साधन से उखाड़ फेंकने के लिए आवाहन किया गया बांटने के अपराध में तीन वर्ष की कठोर सपरिश्रम सजा हुई। जांच पड़ताल से उस तरुण बगाली का बगाल के क्रांतिकारी सगठनों से घनिष्ट सम्बन्ध होने का पता लगा। ८ एप्रिल १६३१ के सरकारी स देश के अनुसार एप्रिल के प्रथम सप्ताह हलपीवीन थारावादी इनसीन, तथा इनसीन के गांवों की मुठभेड़ों में पद्रह विद्रोही खेत रहे रणभूमि पर सदा के लिए सो गए। थायटम्यो जिले में अशान्त तथा विद्रोह बढ़ता जा रहा था। ११ एप्रिल १६३१ को कामा कस्बे के एक गांव 'पून' पर आक्रमण कर दिया उस मुठभेड़ में गांव का मुखिया तथा एक पुलिस अधिकारी मारा गया और विद्रोही ब दूकें ले गए। विद्रोहियों की भी इस मुठभेड़ में जन हानि हुई। दस अप्रेल को अथवा उसके आस पास क्याकपोक थायटम्यो में स्थित तोन तथा ईजावा में छोटी बड़ी लड़ाइयां होती रहीं। २७ अप्रेल को बलीन थास्टम है मादा (कांजिदा) में युद्ध हुआ। २८ अप्रेल को पुन युद्ध हुआ। २४ मार्च १६३१ को कानयोमा में पांच विद्रोही मारे गए। १२ अप्रेल १६३१ को बो वी' के नेतृत्व मे जलोरे' नामक स्थान पर पुलिस तथा विद्रोहियों का अकस्मात आमना सामना हो गया। युद्ध थोड़ी ही देर चला कि तु उस युद्ध में चार विद्रोही मारे गए। १८ अप्रेल को रिपोर्ट मिली कि 'सीडो' स्थान पर हुए युद्ध में विद्रोहियों के कम से कम पांच शव रण भूमि पर पड़े मिले। थायटम्यो शत्रु के आक्रमण का मुख्य स्थल बिन्दु बन गया था। वहां जल्दी जल्दी कई आक्रमण हुए। २१ अप्रेल १६३१ को एक सौ विद्रोहियों के दल ने सैनिक चौकी पर जिसमें २५ सैनिक थे आक्रमण कर दिया और वे साहस के साथ उस चौकी के बहुत निकट पहुच गए। इस युद्ध में २२ विद्रोहियों ने अपने प्राण गवाए। विद्रोहियों के बहुत क्षति उठा कर हटने पर भी उस क्षेत्र में और अधिक सेना भेजनी पड़ी, पर तु विद्रोहियों ने २३ अप्रेल को पुन इग्वे अथवा इग्वाई पर आक्रमण करके नितान्त दुस्साहस का परिचय दिया। यह स्थान कामा से कुछ मील उत्तर मे स्थित था। अश्वारोही सेना, सेना की

सहायता के लिए एक प्लैटून और भेजा गया और विद्रोहियों को पीछे ढकेल दिया गया। इस युद्ध में ४२ क्रान्तिकारी रण भूमि पर सो गए। क्रमश सरकार को यह अनुभव हो गया कि उस क्रान्तिकारी आन्दोलन की जड़ें बहुत गहरी हैं और जैसा कि पहले सरकार का विश्वास था वह केवल ऊपरी असंतोष मात्र नहीं है। अतएव सरकार को अधिक सेना बुलानी पड़ी। दूसरी मैंचस्टर रेजीमेंट को भारत से बरमा में भेजा गया जिससे कि बरमा की सैनिक शक्ति को अधिक सशक्त बनाया जा सके।

अब इसमें किसी को तनिक भी संदेह नहीं रह गया था कि विद्रोही क्रान्तिकारियों का एक मात्र लक्ष्य अंग्रेजों को तितर बितर कर बरमा से खदेड़ कर प्राचीन राजतन्त्र को पुनः बरमा में स्थापित करना था। १ मई १६३१ को रंगून की एक सूचना में यह बतलाया गया कि कावि-जा के समीप विद्रोहियों की एक बड़ी सेना से मुठभेड़ हुई घमासान युद्ध हुआ जिसमें पांच विद्रोही मारे गए। का-याया के समीप विद्रोहियों के शिविर पर अचानक आक्रमण किया गया जिसमें और दो विद्रोही मारे गए। इन्सीन में पुलिस की गोली से भी दो विद्रोही मारे गए। ५ मई १६३१ बैट्टीगान के समीप म्योमा गांव के पुलिस थाने पर विद्रोहियों ने जिनकी संख्या ६० थी आक्रमण किया और वहां से वे लोग डिप्टी सुपरिंटेंडेंट पुलिस तथा कुछ अन्य पुलिस के आदमियों को पकड़ ले गए। उस थाने की सहायता के लिए सैनिक सहायता द्रुति गति से भेजी गई और विद्रोहियों से जो युद्ध हुआ उसमें सात विद्रोही रण भूमि पर सदैव के लिए सो गए। मई के मध्य से रंगून में इस आशय का समाचार पहुँचा कि थायटम्यो, हेंजादा, ह्यावाडी, देदाए प्यापान इन्सीन थारावादी पर विद्रोहियों ने आक्रमण किया जिसके फलस्वरूप सरकारी सम्पत्ति का बड़ी मात्रा में विनाश हुआ और कई पुलिस अधिकारी हैड कांस्टेबिल मारे गए। ११ मई १६३१ को ब्रिटिश पार्लियामेंट को एक अपुष्ट समाचार के आधार पर सूचित किया गया कि उस समय तक लगभग एक हजार विद्रोही मारे जा चुके हैं और दो हजार गिरफ्तार किए गए हैं। दबैबो और मेम्यो के क्षेत्र में बरमा में बाहर से आने वाली सेना के एक बड़े भाग को वहां स्थित सेना की शक्ति में वृद्धि करने के लिए भेजा गया और १२ मई १६३१ को हेंजादा में कर्फ्यू लगा दिया गया। ६ मई १६३१ को यह सूचना आई कि प्रोम के निकट विद्रोहियों का पीछा करते हुए सम्पूर्ण पुलिस दल जिसमें योरोपियन जिला सुपरिंटेंडेंट भी था विद्रोहियों द्वारा घेर लिया गया। उनमें से एक भी जीवित नहीं मिला। सेना के मुख्य कार्यालय से विद्रोहियों के विरुद्ध अधिक सेना भेजी गई। उस सेना ने समीपवर्ती क्षेत्र में विद्रोहियों की खोज कर उनका शिकार किया सात विद्रोही मारे गए। परिस्थिति का अध्ययन करने वाला का कहना था कि इतनी अधिक संख्या में विद्रोहियों के मारे जाने पर भी विद्रोह की गति में कोई कमी नहीं हुई। विद्रोहियों का दुस्साहस अनुपमेय था। विद्रोहियों की खूनी कार्यवाहियां और अधिक प्रभावशाली होती गईं। थायेटम्यो में मेझाली नामक स्थान पर जो १२ मई के आस पास मुठभेड़ हुई उसमें २१ विद्रोही मारे गए। कोई भी स्थान फिर चाहे वह बड़ा हो या छोटा ने विद्रोहियों के आक्रमण से सुरक्षित नहीं था लेट्टू के पुलिस थाने पर विद्रोहियों ने अधिकार कर लिया चार पुलिस अधिकारी तथा वहां के सभी सिपाही मारे गए। वहां से १५ मई १६३१ को बहुत बड़ी राशि में गोली बारूद तथा कई बन्दूकें विद्रोही ले गए। १८ मई १६३१ को सर्वेक्षण विभाग के एक बहुत ऊंचे योरोपियन अधिकारी को [illegible] में विद्रोहियों ने

घेर लिया और मार डाला और उसका मृत शरीर जो गोलियों से क्षत विक्षत था घटना के स्थान से कुछ दूरी पर पड़ा मिला। १६ मई १६३१ को अथवा उसके आस पास हैं जादा जिले में विद्रोह का दमन करने के लिए जो अनेक सैनिक शिविर स्थापित किये थे उनमें एक पर भयानक विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया। उन्होंने वहां के कई सिपाहियों को मार डाला। इस युद्ध में तीन विद्रोही भी मारे गए। थायेटम्यो में कामा सैनिक टुकड़ी जब एक घने जंगल में विद्रोहियों की खोज में घूम रही थी तो २१ मई को विद्रोहियों ने भीम वेग से आक्रमण कर दिया उसमें सैनिक टुकड़ी का कमाण्डर तथा दो विद्रोही मारे गए। २५ मई को थारावाड़ी जिले इसलागू से सात मील दूरी पर विद्रोहियों के एक शिविर का पता चला। सेना ने उस पर आक्रमण कर दिया भयंकर युद्ध हुआ चार विद्रोही मारे गए शेष बच निकले। शिविर को पूर्ण रूप से ध्वस कर दिया गया। उसी दिन थायेटम्यो में एक और विद्रोही मारा गया। २६ मई १६३१ को विद्रोहियों के एक शीर्षस्थ नेता के गुप्त शिविर पर सेना ने आक्रमण किया युद्ध करते हुए चार विद्रोही मारे गए। उनमें से दो को पहचाना गया कि वे विद्रोह के दाहिने हाथ थे। मई १६३१ के अन्त तक स्थानीय अधिकारियों ने थारावाड़ी की घटनाओं के सम्बन्ध में घोषणा कर दी कि स्थिति अत्यन्त खतरनाक है और यह अत्यन्त आवश्यक है कि भारत से और अधिक सेना की बटालियन बुलाई जावें। मई १६३१ के तीसरे सप्ताह में प्रोम और इनसीन में भयंकर अशान्ति फूट पड़ी और वहां एक बहुत ऊंचा योरोपियन अधिकारी तथा अन्य सरकारी आदमी मारे गए। हैंजादा के समीप विद्रोहियों का एक सुदृढ़ केन्द्र पर आक्रमण किया गया इस युद्ध में कुछ सरकारी सैनिक मारे गए। १८ मई अथवा उसके आस पास थायटम्यो के समीप सेना और विद्रोहियों में भयंकर युद्ध हुआ जिसमें कई विद्रोही धराशायी हो गए।

२१ मई १६३१ को शिमला में सरकारी नोट में स्थिति को अत्यन्त भयानक बताया गया और इस बात की अनिवार्य आवश्यकता बतलाई गई कि निजाम की रियासत से कई इनफन्ट्री ब्रिगेड लाए जावें जिनके पास सिगनल तथा यातायात की भी सुविधा हो जिससे कि बरमा में चिन्ताजनक स्थिति का सामना किया जा सके। एक ब्रिगेड में तीन इनफन्ट्री बटालियन होती थी जिनमें दो भारतीय तथा एक ब्रिटिश बटेलियन होती थी। उस समय सभी ने इस बात को स्वीकार किया था कि बरमा की सेना के लिए परिस्थिति पर अधिकार पा सकना सम्भव नहीं था। अधिकारियों का मानना था कि शीघ्र आने वाले तीन घोर वर्षा के महीनों में विद्रोहियों के अनेक स्थानों पर आक्रमणों का सेना सामना नहीं कर सकेगी। कानयूतकिन टोगू) पर जो कि थारावाड़ी जिले में हैं पांच स्थानों पर विद्रोहियों ने आक्रमण कर उनको नष्ट भ्रष्ट कर दिया वहां जो कुछ था लूट ले गए और अधिकारी कुछ न कर सके। २३ मई १६३१ को अथवा उसके आस पास मिनून कस्बे के समीप युद्ध में दो विद्रोही तथा एक सेना का व्यक्ति मारा गया। चारों ओर से रगून में समाचार पहुंचने लगे कि थारावाड़ी इनसीन हैंजादा थायटम्यो ह्यावाड़ी प्यापोन और कहां नहीं सभी जगह विद्रोहियों की घोर हिंसात्मक कार्यवाहियां फूट पड़ी हैं। ऐसा प्रतीत होने लगा कि राज्य सरकार का शासन समाप्त हो गया और विद्रोही जैसा चाहते हैं वैसा कर सकते हैं। २३ मई १६३१ को हैंजादा जिले में तांग्वोकाक की पुलिस चौकी पर आक्रमण हुआ जिसमें तीन आक्रमणकारियों ने प्राण गंवाए। इसी समय माबिन पर भी विद्रो

द्रियों ने आक्रमण कर दिया। २८ मई १९३१ को प्यापोन म्यायम्या, तथा हेंजादा से यह समाचार आया कि विद्रोहियो ने राजकीय चौकियों पर भीषण आक्रमण किया और निजी मकानों विशेषकर मुखियो के मकानों में आग लगाने की घटनाएं अधिक होने लगीं। तौंगू थारावाडी तथा इंसीन में डकैतिया डाली गई जिनमे बहुमूल्य सम्पत्ति को लूटा गया और विद्रोही पाच राइफिलें ले गए। जब सभी उपाय स्थिति पर अधिकार पाने के लिए अपर्याप्त सिद्ध हुए तो सरकार ने ९८ बर्मी सगठनो को जिनमे ४५ महिलाओं के सगठन थे अपर चिंडविन जिले में क्रिमिनल लॉ के अन्तगत गर कानूनी घोषित कर दिए। थारावाडी जिले मे दस पुलिस चौकिया स्थापित की गई। सभी प्रभावित क्षेत्रो में १९३१ के अन्तिम तीन महीनों में भी पूर्ववत स्थिति गम्भीर रही। बरमा सरकार जब उपलब्ध सैनिक साधनो से स्थिति पर काबू पाने पर नितान्त असमर्थ हो गई तथा और निस्सहाय अनुभव करने लगी तो उसने शिमला को घबडा कर सन्देश भेजा कि एक कैवलरी बटालियन शीघ्र भेजा जावे। भारत सरकार ने बरमा सरकार की इस प्रार्थना को इस कारण अस्वीकार कर दिया कि विद्रोहियों से युद्ध करने मे घोडो की बहुत हानि होती है और वहा घोडों के एक स्थानीय रोग से भी सेना के घोडे बहुत सख्या में मरते हैं। भारत सरकार ने बरमा सरकार को यह परामर्श दिया कि वह बरमा में ही घुड सवार सेना तैयार करे और वहां के घोडों का उपयोग करे जो कि वहा के जलवायु और वहा की विशेष परिस्थितियों मे अच्छा काम दे सकें विद्रोह द्वारा प्रभावित क्षेत्र के निवासियों का सरकार पर से विश्वास उठ गया और वे भाग कर उन नगरों म आकर इकट्ठे होन लगे जो भली भांति सुरक्षित थे तथा समुद्र के किनारे आ गए जहा विद्रोहियों के आक्रमण बहुत कम होते थे। ३१ मई १९३१ को विद्रोहियों की ध्वसात्मक कार्यवाही के कारण एक पुल पर रगून माडले मेल गाडी रगून से ११६ मील दूर पर दुघटना ग्रस्त हो गई। सारी गाडी चकनाचूर हो गई। रेल की पटरी विद्रोहियों द्वारा उखाडे जाने तथा रेलवे क्वाटरों म आग लगाने के समाचार आने लगे। ३१ मई को जब यह समाचार रगून पहुचे तो सरकार अत्यन्त निराश और निस्सहाय अनुभव करने लगी।

एक जून १९३१ को विरनाई इमया तथा अन्य स्थानों से ५०० विद्रोहियों ने बटिंगान पुलिस थाने पर हल्ला लेने की भावना से आक्रमण कर दिया और सरकारी सम्पत्ति को भारी क्षति पहुचाई। सरकारी सेनाओ द्वारा बैटिंगान के दक्षिण मे प्रोम में क्याकटाखी नामक गाव इनसीन कामा ममेयीग्वाग तथा हेंजादा पर आक्रमण किए जाने पर भी विद्रोहियों ने अपनी हिंसात्मक कार्यवाहियो मे कोई शिथिलता या ढिलाई नहीं आने दी। वहां उनके बारह साथी विद्रोही शरणार्थी हो गए और उन्होंने थारावाडी मे भीषण वेग से आक्रमण किया तथा तथा दो दिनों म उन्होंने बहुत से मकानों को विध्वस कर दिया। वे इतने निडर हो गए थे कि उन्होंने एक मकान में निश्चित होकर भोजन किया और जो कुछ उन्हें पसद आया उसे लेकर चले गए। योरोपियनों तथा उन लोगों के मकानों को विद्रोही लूटते थे जिन पर सरकार की सहायता करने का सदेह होता था। कानून की खुली अवहेलना कर वे अंग्रेजो और सरकार के सहायकों के मकान लूटते थे, वास्तव में उस प्रदेश मे कानून समाप्त हो गया था।

२ जून १९३१ को प्रोम जिले में पकवांग के समीप 'थंट्टो' में भयकर युद्ध हुआ उसमें रणभूमि पर गिरे [redacted] १८ शव गिने गए। इस बार में विद्रोहियों ने अपने

अस्त्र शस्त्र तथा रसद भण्डार जमा कर रक्खे थे वह उनका प्रमुख आधारभूत स्थान था।' जून १९३१ में विद्रोहियों की कार्यवाही पूर्ववत चलती रही उसको सरकार द्वारा रोका नहीं जा सका। उस समय सरकार द्वारा बरमा में एक सम्पूर्ण डिवीजन को अन्य सहायक सेनाओं के साथ भेजने का गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया। रंगून मांडले रेलवे लाइन पर नानग्लविन तथा पई के मध्य रात्रि में समस्त ट्रेनों का चलना रोक दिया गया। सभी ट्रेनों को दिन में भी आगे चलने वाली सैनिक ट्रेन अपने साथ ले जाती थी। आगे पायलट मिलिट्री ट्रेन चलती थी और पीछे सवारी गाड़ी चलती थी। जो विद्रोही थामा के आस पास विद्रोही कार्यवाहियां करते थे उन्होंने ६ जून १९३१ को यालेती तथा पदांग पी एस पर आक्रमण किया। वे झाड़ियों में छिपे हुए थे। युद्ध के बाद वे घटना स्थल से चुपचाप चले गए उनका एक साथी मारा गया। उसी दिन प्रोम से, जो उस स्थान से ३० मील दूर था पुलिस ने तेजी से धावा बोला और उस गांव को घेर लिया, युद्ध हुआ जिसमें एक विद्रोही मारा गया।

इसी बीच विद्रोहियों के कार्य कलापों से उत्साहित होकर थावेयाल (प्रोम) के ग्रामीणों ने एक पुलिस दल पर जिसमें एक थानेदार तथा तीस सिपाही थे जून १९३१ के मध्य आक्रमण कर दिया परन्तु दुर्भाग्यवश उनके ग्यारह साथी नेता सहित संघर्ष में मारे गए। १२ जून १९३१ को मिन्डोन तथा थायटमो को विद्रोहियों ने लूट लिया। क्यांग्म्या तथा मौलमीन में सरकार के सहायकों के अनेक मकानों में आग लगा दी गई तथा मारामारी और इन्सीन जिलों में अनेक डकैतियां डाली गईं जिनमें सरकारी तथा निजी सम्पत्ति लूट ली गई।

एक रिपोर्ट के अनुसार १८ जून को विद्रोहियों के छिपने के एक स्थान को पुलिस ने घेर लिया इस संघर्ष में एक विद्रोही मारा गया शेष निकल गए।

जेल को तोड़ने तथा जेल अधिकारियों पर आक्रमण करने की नए प्रकार की प्रवृत्ति का रूप उस समय प्रकट हुआ जबकि न्यांलेबिन सब जेल में पंद्रह बरमी कैदियों ने जिन पर अभियोग चल रहा था जेल के अस्त्र शस्त्रों को लूट लिया और जेल तोड़ कर पहाड़ियों की ओर भाग गए। इस घटना से सम्पूर्ण नगर में आतंक छा गया। जब उन बन्दियों का पीछा किया गया तो उन्होंने गोलियों की वर्षा करना आरम्भ कर दिया और गोली वर्षा के आवरण में वे निकल कर सुरक्षित पहाड़ों में पहुंच गए। दोनों पक्षों के लोग हताहत हुए परन्तु जेल तोड़ कर निकल जाने वाले विद्रोहियों को कोई गम्भीर क्षति नहीं पहुंची उसमें से कुछ बाद को भिन्न भिन्न स्थानों पर गिरफ्तार कर लिए गए। सैनिक कार्यवाही के असन्तोषजनक परिणामों से हताश और निराश होकर (मिमसा जून १९ १९३१) सरकार ने जिन घृणित उपायों को काम में लिया वे मानवता की सीमा को भी पार कर गए। १९ जून १९३१ या उसके आस पास पोक्कांग के गम्भीर वट्टो में पुलिस और विद्रोहियों में जो भयंकर मुठभेड़ हुई उसमें २१ विद्रोही मारे गए। उनमें से १६ के सर काट लिए गए और कटे हुए सरों को लम्बे बांसों के सिरों पर लगा कर गांव भर में इस लिए घुमाए गए कि जिससे वे ग्रामीण आतंकित हो जावें कि उनमें उनके प्रति तनिक भी सहानुभूति का भाव हो। वे फिर प्रोम लाए गए और वहां उनका कई दिनों तक प्रदर्शन किया गया।

१५ जून १९३१ के लगभग पोक्कांग के समीप वट्टो में विद्रोहियों की राज कीय सेना से जो मुठभेड़ हुई उसमें विद्रोहियों को सेना को गम्भीर क्षति पहुंची उसमें

बड़ी संख्या मे जीवन हानि हुई। युद्ध के उपरान्त रण भूमि में २२ विद्रोहियों के शव पडे थे।

जून के तीसरे सप्ताह में सम्पूर्ण अशान्त क्षेत्र मे बहुत बडी संख्या मे डकतियां पडी। पहले की अपेक्षा डकतियो की संख्या बहुत बढ गई थी। विद्रोहियों की सशस्त्र कार्यवाही और अधिक तेजी से फूट पडी।

(रंगून २४ जून १९३१)

२७ जून के एक संदेश के अनुसार जो विद्रोही युद्ध मे घायल हो गए थे और जो पुलिस की निगरानी में अस्पताल में रक्खे गए थे वे निकल भागे और उनका कोई पता नहीं लगा सका।

बरमा के अधिकांश भाग मे विद्रोहियों के छिपने के स्थान तथा उनके केन्द्र फले हुए थे। २९ जून १९३१ को पादांग से कुछ मील पश्चिम ओकपित पहाडियो के सघन वन मे स्थित एक ही विद्रोहियो के छिपने के स्थान पर सरकारी सेना ने आक्रमण किया। घमासान युद्ध हुआ जिसमे चार विद्रोही मारे गए। जुलाई के आरम्भ होते ही थारावाडी, हैंसीन हैजादा, प्यापान थायट्मो और प्रोम म एक साथ भयंकर अशान्ति और अव्यवस्था फूट पडी। यह भयंकर अशान्ति की लहर बहुत बडे क्षेत्र मे फल गई थी और कभी कभी यह सोचना भी कठिन होता था कि उन क्षेत्रो पर पुनः अधिकार कर सकना सम्भव भी हो सकेगा या नही।

सनिक कार्यवाही के अतिरिक्त उन सभी ग्रामीणों के विरुद्ध कडी कार्यवाही की जाती थी कि जिन पर विद्रोहियो को आश्रय देने अथवा उन्हे किसी प्रकार भी सहायता देने का सदेह होता था। बहुत बडी संख्या मे ऐसे सदेहजनक व्यक्तियो को कडी नजरबंदी में रक्खा गया और बहुत बडी संख्या में ऐसे सदेहजनक व्यक्तियों को अपने गाव या नगर से बहुत दूर कदी शिविरों मे ले जाकर रख दिया गया जो इस उद्देश्य से बनाए गए थे।

जुलाई के अन्त तक सरकारी सेना ने अपने आक्रमण के बिन्दुओं की उचित व्यवस्था कर ली और विद्रोहियों की शक्ति के निबल होने के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे परन्तु फिर भी उनके आक्रमण तथा लूट पाट जारी रही। इतना कुछ होने पर भी बसीन, हैंजादा, थायट्मो, पेगू और प्रोम में अनेक डकतियां पडी और प्रोम और बसीन में एक एक विद्रोही मुठभेड में मारा गया। सेना ओनेटचाग तथा तेमकाई कस्बों के घने और गहन जगलों में विद्रोहियो के छिपने के स्थानों को खोज निकालने म सफल हो गई। एक स्थान पर सेना और विद्रोहियो के मध्य खुल कर गोली चली जिसमे एक विद्रोही नेता मारा गया। जुलाई १९३१ के मध्य से विद्रोहिया के मारे जाने की संख्या में वृद्धि होने लगी। प्रोम सड़क के युद्ध में लडते हुए चार विद्रोही मारे गए। थायट्मो मे एक अत्यन्त भयंकर काण्ड हुआ। उस काण्ड मे अनेक ग्रामीण मरे गए और विद्रोहिया द्वारा अनेक डकतियो म बहुत बडी राशि का धन लूट लिया गया। एक मुठभेड मे दो विद्रोही मारे गए। बसीन प्यापोन तथा तौंगू को भी भयंकर लूटपाट को सहन करना पडा। (रंगून १४ जुलाई) उसी प्रकार अन्य जिले भी विद्रोहियों की कार्यवाहियों से त्रस्त हो उठे।

शार्न राज्य मे

शान राज्य भी इस विद्रोह की अग्नि से बच नही सका। जुलाई १९३१ तक

विद्रोहियों और पुलिस में युद्ध होना एक साधारण घटना हो गई। क्रांति की प्रारम्भिक अवस्था एक बरमी क्रांतिकारी हसिपा की एक जागीर हसुमहुआई के दानू गाव मे स्थित माकिना' बौद्ध मठ में आया। माकिना, माडले लाशियो रेलवे लाइन पर मायम्यो से ४५ मील दूरी पर स्थित है।

वह क्रांतिकारी वहां गालोन समिति के नाम से लोगों को भर्ती करने लगा। वहां एक स्थानीय दल खडा किया गया जिसमें बाद को बरमा से आए हुए गालोन सदस्य सम्मिलित हो गए। उसका उद्देश्य हसिया नगर को पदाक्रान्त करना था। क्रांतिकारियों के नेता ने साकसा राज्य में पिंगवा में आगवालेम्यों (विजय का नगर) का निर्माण किया। १ जुलाई १९३१ को उत्तरी शान राज्यों के बटेलियन तथा स्थानीय पुलिस तथा सैनिक अधिकारियों ने उस केन्द्र को घेर लिया। दोनों ओर से घमासान युद्ध हुआ खुल कर गोली चली जिसमे ४० विद्रोही मारे गए वहां बहुत सी बन्दूकें तथा युद्ध सामग्री राज्य की सेना को मिली। ३ जुलाई १९३१ को बलूची बटेलियन ने अपनी सैनिक कार्यवाही आरम्भ की। शान राज्यों में १५० विद्रोहियों पर सेना ने आक्रमण कर दिया उनमें से सत्तर विद्रोही मरे गए। ७ जुलाई अथवा उसके आस पास सेना के लुइस गन सेक्शन ने घुडसवार सेना तथा संकेत देने वाली टुकडी को साथ लेकर विद्रोहियों पर लाठियों से आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में सेना को बहुत क्षति उठानी पडी। दो सैनिक मारे गए और बडी संख्या मे सैनिक घायल हो गए। ६ जुलाई १९३१ को विद्रोहियों ने उत्तरी शान राज्यों में नानखियोगी स्थित सैनिक केन्द्र पर निराशो म त होकर भीषण आक्रमण कर दिया इस संघर्ष मे सेना की बहुत क्षति हुई विशेषकर उसकी प्रतिष्ठा को गहरा आघात लगा। जब वह घमासान युद्ध समाप्त हुआ तो ६ विद्रोहियों के शव रण भूमि पर बिखरे हुए मिले। ८ जुलाई १९३१ थारावाडी स्थित एक कारेन गाव लेलाडान म ग्रामीणों तथा विद्रोहियों में भयंकर मुठभेड हुई। इस मुठभेड म गाव वालों की सेना ने सहायता की और उनकी सम्मिलित शक्ति के कारण लगभग २० विद्रोही मारे गए।

हेजादा के जालूर क्षेत्र में करेन सेना तथा विद्रोहियों के मध्य युद्ध हुआ जिसमें ६ जुलाई को ३ विद्रोही मारे गए। ह्न्थावादी जिले में उसी दिन एक सैनिक कार्यवाही मे विद्रोहियों का नेता ती-सी' मारा गया।

स्थिति पर काबू पाने के पुलिस शक्ति मे तत्काल वृद्धि की गई और दूसरी तथा पाचवी मराठा लाइट इन्फन्ट्री (मराठा घुड सवार सेना) को प्रभावित क्षेत्र मे शीघ्रता से भेजा गया। प्रोम २२ जुलाई १९३१ को वेटिगान क्षेत्र के म्योआ नामक स्थान पर एकायक सेना ने विद्रोहियों पर आक्रमण कर दिया। वहां सेना ने युद्ध सामिग्री को अपने अधिकार मे ले लिया और एक भागे हुए विद्रोही नेता को जिसने सैनिक घेरे से निकल भागने का प्रयत्न किया मार दिया गया। १ अगस्त १९३१ को वायसराय ने बरमा संकट कालीन अधिकार अध्यादेश पांच १९३१ को लागू करने की घोषणा करदी। आरम्भ मे यह अध्यादेश पेगू हा थावाडी थारावाडी, प्रोम बसीन हेंजादा, थायट्मो, माबिन म्यागम्या प्यापान तौगू और इनसीन म लागू किया गया। उस अध्यादेश के अन्तर्गत डाक खानों तथा तार घरों और प्रेस का नियन्त्रण बरमा सरकार ने ले लिया। इसके अतिरिक्त उस अध्यादेश के अन्तर्गत स्थानीय सरकार को यह अधिकार भी दे दिया गया कि जिस किसी व्यक्ति को विद्रोहियों से सम्बन्धित होने का विश्वास हो गिर-

पतार कर लिया जावे।

एक ऐसा भी समय आया कि जब यह गम्भीरता पूर्वक सोचा गया कि बरमा को सैनिक शासन के अन्तर्गत रख दिया जावे क्योंकि कुछ महीनों तक बरमा की स्थिति अत्यन्त गम्भीर और चिन्ता जनक हो गई थी और भारत सरकार तथा स्थानीय सरकार अत्यन्त चिन्तित हो उठी थी। थारावाडी में दिसम्बर १९३० मे जो विद्रोह की अग्नि भड़क उठी वह कई जिलो में फैल गयी थी और इस बात का खतरा था कि वह अन्य क्षेत्रों में भी फल जावे। ब्रह्मदेश के प्रावधानों का उपयोग विद्रोह का दमन करने तथा उसको रोकने के लिए तथा सम्राट की प्रजा के सभी वर्गों के जीवन तथा सम्पत्ति की रक्षा करने के लिए किया जाने वाला था। विद्रोहियों के एक सर्वोच्च नेता की गिरफ्तारी तथा कम से कम तीन प्रमुख नेताओं की सेना की गोलियों से मृत्यु होने के कारण विद्रोहियों को गहरा धक्का लगा। विभिन्न जिला में विद्रोहियो के विरुद्ध मुकदमें चले जिसमें अनेकों अभियुक्तो को मृत्यु दण्ड दिया गया। विद्रोहियों की गतिविधियां अब भी जारी थीं परन्तु उनकी शक्ति बहुत कम हो गई थी। १२ जुलाई १९३१ को पगू नदी के बारह मील दूर ऊपर की ओर एक स्थान पर विद्रोहियों तथा सेना की मुठभेड़ में १२ विद्रोही मारे गए। तथा ६ बन्दूकें छीन ली गई। रंगून से २८ मील दूर एक दूसरी मुठभेड़ में चार विद्रोही रण भूमि पर सदव के लिए सो गए। १० जुलाई को विद्रोहियो ने एक अत्यन्त महत्व पूर्ण ग्राम वट्टू नेयजी पर आक्रमण कर दिया जिसमे दो विद्रोही धराशायी हो गए। ६ अगस्त १९३१ को कामा सीमा के समीप पदांग कस्बे के एक गांव पर विद्रोहियो ने आक्रमण किया। तुरन्त ही एक पुलिस दल घटना स्थल पर भेजा गया। एक विद्रोही घटना स्थल पर ही मारा गया। सेना ने अन्य विद्रोहियो का तेजी से पीछा किया और सेना की गोलियों से दो विद्रोही और मारे गए। अगस्त १९३१ के प्रथम सप्ताह में प्यू सुरक्षित वन प्रदेश हेंजादा तोंगू थायटमो तथा निचले बरमा के अन्य क्षेत्रों म लगातार डकैतियां डाली गई। डकैतियों की यह शृंखला विद्रोहियो द्वारा बदला लेने की भावना से ओत प्रोत थी। १४ अगस्त को थारावाडी से ३२ मील दूर इरावदी नदी के किनारे एक गांव में विद्रोहियो ने गश्त करते हुए एक पुलिस दल पर आक्रमण कर दिया। उस भीषण युद्ध म कई विद्रोही तथा उनके नेता मारे गए। १७ अगस्त अथवा उसके आस पास थारावाडी की पुलिस चौकी पर विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया और उसको जला कर भस्म कर दिया। पुलिस ने दल पर प्रत्याक्रमण किया जिसमें कई विद्रोही मारे गए। हेंजादा क्षेत्र म कई स्थान विद्रोहियो की कार्यवाहियों से आक्रान्त हो गए और प्रमम से एक जगह १७ अगस्त को पुलिस थानेदार मारा गया। विभिन्न स्थानों से डकैतियों के समाचार आ रहे थे उनमे से रंगून नगर में आक्रमण कारियो ने जो डकैती डाली उसमें उन्होंने अपूर्व साहस और शौर्य का परिचय दिया। थायटमा प्रोम इत्यादि स्थानो पर विद्रोहियो के जो शिविर के स्थान थे वे क्रमश सेना के आक्रमणों से नष्ट भ्रष्ट हो गए। उन सभी जिला मे जहां विद्रोही सक्रिय थे वहां पुन उनकी गतिविधियाँ जागृत हो उठी। अब यह विद्रोही कार्यवाही मुख्यत डकैतियां और सरकारी सम्पत्ति की लूट तथा सरकारी चौकियो पर आक्रमण के रूप मे उभर पड़ी। ६ सितम्बर १९३१ को पि झौन से आठ मील दूर विद्रोहियो के दो शिविर देखे गए। सेना न उन पर आक्रमण कर दिया। उस समय मे कई विद्रोही मारे गए उनमें कई उनके नेता भी थे। १५ सितम्बर १९३१ को [illegible] की घाटी में उनी

वि द्रोहियों के सब मा ा बो नेताओं के मारे जाने से विद्रोहियों को गहरा आघात लगा, कुछ अन्य विद्रोही भी इस संघर्ष में मारे गए। सितम्बर १९३१ के अन्तिम सप्ताह में सरकारी सेना ने थायट्मा जिले में विद्रोहियों की चालीस बन्दूकें और बहुत बड़ी राशि में गोली बारूद अपने अधिकार में कर ली।

२५ सितम्बर १९३१ को पीगू जिले के तौफांग नामक स्थान पर हुए एक युद्ध में विद्रोहियों को भयंकर क्षति उठानी पड़ी। उस युद्ध में सात विद्रोही और दो नेता धराशायी हो गए। प्रोम जिले में विद्रोहियों ने एक गांव पर आक्रमण किया और वहां से दो बन्दूकें तथा बहुत से कारतूस ले जाने में सफल हो गए। २४ सितम्बर को सूचना मिली कि प्रोम जिले के पाडी गांव रेलवे स्टेशन पर विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया परन्तु सेना से मुठभेड़ होने पर वे हट गए, उनके चार साथी युद्ध में मारे गए कोई पकड़ा नहीं जा सका। बाद को यह ज्ञात हुआ कि तार प्रणाली को उन्होंने पूरी तरह नष्ट कर दिया है। २६ सितम्बर को प्रोम के पौंगदेह क्षेत्र के एक गांव में चालीस विद्रोही घुस गए। उन्होंने बन्दूक धारियों पर एकायक धावा बोल दिया उनकी बन्दूकें छीन ली। और बहुत बड़ी राशि में गोली बारूद लूट कर ले गए। एक अन्य विद्रोही दल ने उसी जिले में एक वन विभाग के बंगले को नष्ट कर दिया।

२७ सितम्बर १९३१ को कामा से दस मील दूर थायट्मो के सघन वन में एक भयंकर युद्ध हुआ जिसमें दो विद्रोही मारे गए। उनमें से एक नेता था जिसका नाम पो हटेक था वह सायासान के सहायक साया यान का भाई था। १२ अक्टोबर १९३१ को थारावाडी के पूर्व में एक गांव में विद्रोहियों की सेना से मुठभेड़ हुई जिसमें दो विद्रोही मारे गए और एक या दो गम्भीर रूप से घायल हो गए। विद्रोहियों का दूसरा भयंकर आक्रमण प्रोम जिले के इनवागी ग्राम पर हुआ विद्रोहियों ने गांव में भोजन किया और रात्रि को वहां सोये। मानो वे उस भयंकर खतरे की ओर से नितान्त असावधान हो जो उनके सर पर था। दूसरे दिन वे समीपवर्ती गांव में गए वहां उनको गांव वालों ने भोजन कराया और वहां के लोगों से एक अच्छी धन राशि इकट्ठी करके वे चुपचाप वहां से चले गए। १५ अक्टोबर को अधिक संख्या में हिंसात्मक कार्यों की सूचना प्राप्त हुई। एक दिन में ही हिंसात्मक कार्यवाहियों की ग्यारह घटनाएं घटित हुई। यह घटनाएं बोबेलदा कस्बे के समीप तथा आस पास घटी थीं जो प्रोम जिले में स्थित था। वहां विद्रोहियों की एक घुड़ सवार पुलिस की टुकड़ी से मुठभेड़ हो गई। 'इनसीन' की मुठभेड़ में ६ विद्रोही मारे गए और एक प्रोम की मुठभेड़ में मारा गया यह मुठभेड़ें लगभग एक समय एक साथ ही हुई।

२४ अक्टोबर को दो प्लटूनों सेना के तथा पुलिस के बहुत बड़ी संख्या में सिपाहियों ने 'फागीक्याग' नामक मोनेस्टरी को जहां 'टाइगर सेना' छिपी थी को घेर लिया। उस स्थान पर दोनों सेनाओं में भीषण और खतरनाक युद्ध हुआ। विद्रोहियों के सैनिक बड़ी संख्या में खेत रहे। विद्रोहियों के पन्द्रह वीर रण भूमि में सदैव के लिए सो गए जिनमें दो प्रमुख नेता भी थे। 'पो पो हतिन' थारावाडी के नेता थे और बो ता टुन' प्रोम जिले के नेता था। थारावाडी जिले में स्पिनकरलान के उत्तर पूर्व ६ मील दूरी पर एक विद्रोहियों का शिविर था। २४ अक्टोबर को एक सरकारी विज्ञप्ति के अनुसार उस पर आक्रमण किया गया। उस संघर्ष में विद्रोहियों का नेता 'चित सो' तथा अन्य पांच वीर विद्रोही मारे गए। वहाँ बड़ी मात्रा में अस्त्र शस्त्र भी प्राप्त हुए।

र }

सब कुछ करने पर भी स्थिति काबू में नहीं आ रही थी अस्तु बरमा के विद्रोह को दबाने के लिए भारत से और अधिक सेना बुलाने की आवश्यकता पड़ी। अतएव २७ अक्टोबर को चौथी डिवीजनल सिग्नल सेना पूना से बरमा भेजी गई उसके साथ एक बेतार की संचार व्यवस्था भी थी तथा तीसरी भारतीय डिवीजनल सेना की एक और भी टुकड़िया भी भेजी गई। २७ अक्टोबर को एक मुठभेड में यह ज्ञात हुआ कि विद्रोहियों का एक नया सम्प्रदाय जो सूर्य और चन्द्र के नाम से जाना जाता था भी बहुत सक्रिय है। इस संघर्ष मे उसके दो नेता 'सायाचित' तथा 'यान गी याग' जो पादि यायिन के थे मारे गए। ५ नवम्बर १९३१ को थेनाव के एक पुलिस दल ने विद्रोहियों के एक दल पर आक्रमण किया। उस संघर्ष में इरावडी और प्रोम रेलवे के मध्य 'स्वीडाग' पहाड़ियों में फैली हुई विद्रोही सेनाओं का प्रधान सेनापति तथा नेता मारा गया। यह राजकीय पुलिस की एक बड़ी सफलता थी। १३ नवम्बर को थायटमो में 'कासके' स्थित विद्रोही शिविर पर सेना ने आक्रमण कर दिया भयंकर युद्ध हुआ जिसमें एक विद्रोही मारा गया। १६ नवम्बर को प्रोम जिले के एक गांव में बरमा राइफिल्स से मुठभेड में दो विद्रोही और मारे गए। तिनसालान के दक्षिण पश्चिम में एक नदी के समीप ११ नवम्बर को सेना की १० विद्रोहियों से मुठभेड हुई उस युद्ध में विद्रोहियों का नेता वीर गति को प्राप्त हुआ। २२ नवम्बर को सेना की विद्रोहियों के एक दल से मुठभेड हुई जिसमें दो विद्रोही मारे गए यह मुठभेड़ एक सुनसान स्थान पर हुई थी। प्रोम जिले के एक अन्य ग्राम में ग्यारह नवम्बर को एक और सफल सैनिक आक्रमण हुआ जिसमें दो विद्रोही मारे गए और एक तोप मिली। उसी जिले में एक दूसरी मुठभेड़ में एक दूसरा विद्रोही वीर गति को प्राप्त हुआ। २७ नवम्बर को प्रोम जिले के पौंग देह पर सेना ने पुनः आक्रमण कर दिया। इस संघर्ष में विद्रोहियों का एक साहसी व महत्व पूर्ण और प्रमुख नेता काल-कवलित हो गया।

२४ दिसम्बर को पुलिस ने पेगू जिले के एक गांव में जहां विद्रोहियों का शरण स्थल था आक्रमण कर दिया कड़ा मुकाबला हुआ जिसमें एक विद्रोही मारा गया। प्रोम जिले के एक जंगल में विद्रोहियों और सेना में ६ दिसम्बर को भयंकर मुठभेड़ हुई जिसमें एक विद्रोही मारा गया। २७ दिसम्बर को प्रोम में सेना के साथ विद्रोहियों की सबसे अधिक भयंकर मुठभेड़ हुई जिसमें सेना की सिमिथवी टुकड़ी ने विद्रोहियों के एक बहुत बड़े दल पर लुइस गनों से आक्रमण किया। उन विद्रोहियों के समूह का नेता जो 'सिंह सेना' के नाम से प्रसिद्ध थी तथा एक अन्य प्रमुख नेता तथा पांच विद्रोही इस भयंकर युद्ध में सदा के लिए रण भूमि में सो गए। पांच बन्दूकें, बहुत बड़ी राशि में गोली बारूद तथा अन्य वस्तुएं वहाँ प्राप्त हुई। रंगून की २२ जनवरी १९३२ के एक सदेश के अनुसार हैनजादा जिले के विद्रोहियों का नेता बो ग्याव को उस क्षेत्र की सैनिक पुलिस ने गोली मार दी।

प्रोम में एक प्रमुख विद्रोही नेता अपने साथियों सहित ३ फरवरी १९३२ को एक खुले स्थान पर गांव वालों को दिखलाई पड़ा। उस समय तक विद्रोह की गति शिथिल हो चुकी थी विद्रोहियों की शक्ति क्षीण हो रही थी। अतएव ग्रामीणों ने बन्दूकों से उन विद्रोहियों पर आक्रमण करने का साहस किया दोनों ओर से घमासान युद्ध हुआ गोली चली जिसमें कतिपय विद्रोही भी मारे गए। हैनजादा थारावादी सीमा के समीप १५ एप्रिल को एक अत्यन्त कठिन युद्ध में हैनजादा के विद्रोहियों का सबसे महत्वपूर्ण नेता 'बो-बी' युद्ध करते मारा गया। राजकीय सम्पत्ति जिसमें उच्च योरोपियन अधि-

कारियों के बगले भी सम्मिलित थे पर आक्रमण डाक के थलो की लूट रेलो को पटरी से उखाड कर उलटने के प्रयत्न डाके और अग्नि काण्ड तथा अ य विद्रोही काय वाहिया १६३१ के पहले तीन महीनो तक चलती रही। सरकार ने विद्रोह का दमन करने के लिए विशेष सनिक अदालतें स्थापित की जो बहुत जल्दी ही मुकदमा करके दण्ड देती थी। नाम मात्र को याय का नाटक करके बहुत बडी सख्या मे विद्रोहियों का कत्लेआम करना एक ही मुकदम मे चालीस पचास विद्रोहियो को फासी दे देना बरमा प्रशासन के लिए विद्रोह के पश्चात एक साधारण बात हो गई। पूण शान्ति तो कभी भी स्थापित नही हो सकी पर तु १६३२ के मध्य तक स्थिति पर सेना ने नियन्त्रण स्थापित कर लिया।

जो झुका नही (१६२८ १६२६)

जिन क्रान्तिकारियो ने बरमा की जनता के हृदय म स्वतन्त्रता की अग्नि प्रज्व लित की उनमें कयामगोर-बसीन के हुपुनगी यू विजाया' का स्थान सर्वोपरि है। थारा वादी विद्रोह के कुछ ही पहले बरमा म राजनतिक जागरण का सचय बौद्ध भिक्षुओ न चलाया था। उन बौद्ध भिक्षुओ ने सांसारिक माया मोह को तिलांजलि दे दी थी उनके पास कोई सम्पत्ति या धन नही था और वे जनता जनादन अर्थात सव साधारण के कल्याण के लिए ही जीवित रहते थे। विजाया एक बौद्ध भिक्षु थे। पर तु उनकी राजनीतिक गतिविधियों के कारण उनको १० जुलाई १६३१ को बीस महीने की सादी कद प्यापान के मजिस्ट्रेट न दे दी। उनको लगभग बीस महीने की कद दूसरी बार भी हुई जिसको पूरा कर वे २८ फरवरी १६२८ को जेल से मुक्त हुए। दो बार की सजा उनकी भावनाओ और आत्माओ को परास्त नही कर सकी। ४ अप्रेल १६२६ को उनको एक राजद्रोहात्मक भाषण देने के अपराध में पुन गिरफ्तार कर लिया गया और ६ अप्रेल को उ हे अभियुक्त कदी के रूप म जेल मे रख दिया गया। वे केवल ३४ दिन ही जेल के बाहर रह पाये थे कि पुन जेल में पहुच गए।

अभियुक्तों को कानून के अ तगत जो सीमित सुविधाए तथा आजादी मिलनी चाहिए थी जेल अधिकारियों ने उन पर भी अकुश लगा दिया अतएव ६ अप्रैल १६२६ को उन्होने अनशन प्रारम्भ कर दिया। उन्होने (१) राजनीतिक कदी के रूप मे विशेष भोजन पाने (२) विशेष उत्सवों पर बौद्ध भिक्षु के पीत वस्त्रों को धारण करने, (३) तथा एक महीने मे दो बार उपवास करने की सुविधाओं की माग की। पर तु उनकी इस प्रार्थना को जेल के अधिकारियों न मानने से अस्वीकार कर दिया और दनिक भोजन न करके जेल के अनुशासन को भग करने का उन पर दोषारोपण किया। उनके मूल अपराधो का मुकदमा जेल के अ दर ही हुआ और उनको ६ वर्षों की कडी कद की सजा दे दी गई। अपील करने पर सजा घटा कर तीन वष की कर दी गई। परन्तु उन्होंने अपना अनशन जारी रक्खा जो अनशन के इतिहास मे सबसे अधिक लम्बे काल तक चला। उनको बलपूवक दूध पिलाया गया उससे लाभ होने के स्थान पर अधिक हानि हुई और इस प्रकार १६३ दिनो तक अनशन करने के उपरा त यह दृढ प्रतिज्ञ देशभक्त २० सितम्बर १६२६ को इस नश्वर शरीर को छोड कर स्वग को प्रस्थान कर गया। आज कितने लोग हैं जो उस देशभक्त वीर का नाम भी जानते हैं। जिन देशभक्तों ने अपने आत्म बलिदान से अपने देश की स्वतन्त्रता की नीव रक्खी उनके प्रति ऐसी घोर उदासीनता अक्षम्य पाप है। वह वीर विस्मृति के गर्त में समा गया।

अन्त तक युद्ध करते रहे (१९३०-३१)

१९३१ ३२ का बरमा विद्रोह उन सभी विद्रोहों से अधिक महत्वपूर्ण और भयानक था जिसका भारत का शासन करते हुए अंग्रेजों को सामना करना पड़ा था उस विद्रोह को चलाने वाले बहुत से स्थानीय नेता थे जिन्होंने उस अभूतपूर्व विशाल पैमाने के विद्रोह को मूर्त रूप दिया और उसका नेतृत्व किया परन्तु उस विद्रोह को खड़ा करने व उसका अत्यन्त कुशलता पूर्वक सचालन करने का श्रेय मुख्य रूप से एक व्यक्ति को है जिसने उतने विशाल पैमाने पर विद्रोह का सगठन करने, उसका सचालन करने मे विलक्षण कौशल तथा सगठन शक्ति का परिचय दिया।

इस महान देश भक्त वीर का नाम 'सायासान' था। बरमा के इतिहास में 'सायासान' का नाम उन महान वीरों मे स्वर्ण अक्षरों म लिखा जावेगा जिन्होंने बरमा की स्वतन्त्रता के लिए बरमा की भूमि पर अंग्रेजी सेनाओं से भयकर युद्ध किया। 'सायासान' धूमकेतु की गति के समान एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाता और निराश तथा हताश हृदयों मे पुन जोश और उत्साह भरता। देश की स्वतन्त्रता के उस युद्ध के लिए नए क्रान्तिकारी सैनिकों को भरती करता जिससे विजातियों को बरमा की भूमि से निकाल बाहर करने के लिए अस्त्र लेकर युद्ध लड़ा जा सके और जहा आवश्यकता होती वहां अस्त्र शस्त्र तथा सैन्य सामग्री पहुचाता। उसके भक्त और प्रशंसक उसमे चमत्कारी और दैवी शक्ति का होना मानते थे उसका कारण यह था कि उसके कार्य वास्तव में चमत्कारी होते थे। मांडले षडयन्त्र मुकदमे के सोहनलाल के बाद सायासान ही एक ऐसे वीर देश भक्त और क्रान्तिकारी थे जिन्होंने बरमी तथा भारतीय जनता के हृदय म अपना स्थायी स्थान बना लिया था। वे उनको गहरी श्रद्धा करते थे। थारावादी विद्रोह के सम्बन्ध म चर्चा करने पर सब प्रथम सायासान का नाम आता है फिर और किसी का नाम लिया जाता है।

अपनी विलक्षण प्रतिभा, चमत्कारी कार्यों और भूमिगत हो जाने की अद्भुत कुशलता के कारण लोग उनको कई नामों से पुकारते थे और विदेशियों के साथ जब उनके सम्बन्ध में चर्चा होती थी तो उनको बहुधा 'बरमी विद्रोह का रक्तापति शतपुष्प' के नाम से पुकारा जाता था। बरमी लोगो के गोपनीय समूह के दलों मे प्रत्येक व्यक्ति जानता था कि 'स्वर्ण काग (गोल्डन क्राऊ) अथवा 'गैलोंग का राजा' से क्या अर्थ होता है। यह उसके गुप्त नाम थे। अपनी सुरक्षा के लिए और जब वह न्याय की पकड़ से बचने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान को भागते थे तो वे अपने अनेक नाम रख लेते थे। उनका अंतिम छद्म नाम 'थ्याता' था जिस समय कि वे गिरफ्तार हुए थे। उनके माता पिता ने उनका नाम यान झा' रक्खा था। वे ऊपरी बरमा के श्वेबो जिले के निवासी थे जहां से बरमा के राजाओं की सेना को मुख्यत सैनिक प्राप्त होते थे। उन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग निचले बरमा और श्याम म व्यतीत किया और वे अपने पेशे में इच्छानुसार परिवर्तन करते रहे। १९३० मे वे थारावादी में बस गए और उसी वर्ष के नवम्बर मास से वे विद्रोह की तयारियां करने लगे। आरम्भ म उन्होंने थारावादी इनसीन, प्यापान में विद्रोह भड़काने पर अपना ध्यान दिया। राजकीय सेनाएं बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी वे कहा है इसका पता लगाने म नितान्त असफल रहीं उनको उनकी गतिविधियों का तनिक भी पता नहीं चल सका। इसका मुख्य कारण था कि सर्वसाधारण उनको इतना अधिक प्रेम और श्रद्धा करता था कि

कोई आपम म उनके सम्बन्ध म बातों फूसी भी नहीं करता था जिससे कि उनका पता लग सकता और उनके गिरफ्तार होने की सम्भावना हो सकती। राजकीय क्षेत्रो मे 'सायासान' को धारावादी विद्रोह का जनक और एकछत्र नेता माना जाता था। सरकारी क्षेत्रों का मानना था कि विद्रोह गठन करने का विचार उनके मन मे १९२८ मे ही उठा था। कहा जाता था कि उन्होने अपने को बरमा का राजा घोषित कर दिया था। एक अनजाने व्यक्ति का पीछा करते हुए जो कि मलातांग के निजन मार्ग पर जा रहा था पुलिस को एक वन म एक महल मिला जो कि विद्रोहियो का मुख्य केन्द्र था। ३१ दिसम्बर १९३० को सेना ने उस पर आक्रमण कर दिया। वहां बहुत बड़ी राशि म गोली बारूद अस्त्र शस्त्र तथा विदेशी हथियार मिले। उस आक्रमण में लगभग ५ या ६ विद्रोही घटना स्थल पर ही मारे गए और एक व्यक्ति जिस पर साया सान' होने का स देह था पकड लिया गया। बाद को यह पता चला कि पकडा जाने वाला व्यक्ति एक प्रमुख व्यक्ति था पर निस्सन्देह वह साया सान नहीं था। धोखा देकर निकल जाने की कला म दक्षता ने उनको उस अत्यन्त खतरे के समय वहा से चुपचाप निकल जाने म सहायता की। वे समझ गये कि खेल खतम हो गया मृत्यु को धोखा देकर वहां से खिसक गए। उस मलातांग की उस घटना के उपरान्त साया सान एक स्थान से दूसरे स्थान मे छिपते रहे। उन्हे यह ज्ञात हो गया था कि धारावादी उनके लिए अब अरक्षित स्थान था। वे मीलम्यान तथा माडले की पहाडियों पर स्थित प्रसिद्ध मन्दिर में गये वहा उन्होने विद्रोह के लिए लोगों को भरती किया और उनको आशीर्वाद देकर वे उत्तर की ओर चल दिए।

कई बार वे बाल बाल बचे। पुलिस और सेना उनका तत्परता से पीछा कर रही थी व भाग रहे थे। इस प्रकार वे शान राज्य किन्लोइका नामक स्थान पर पहुंचे वे शान राज्य के वन आच्छादित प्रदश में और आगे बढ़े परन्तु अपने अनुयाइयो के पीछे छूट जाने के कारण व शान्त होकर न बैठ सके। उन्होंने वहां और विद्रोहियो को भरती करना आरम्भ किया। उनकी सेना मे धडाधड लोग भरती होने लगे। उन्होने अपने बिखरे हुए अनुयायियों को पुनः एकत्रित कर भारतीय सेनाओं से मुठभेड करने का निश्चय किया कि जिनका नेतृत्व ब्रिटिश अधिकारी कर रहे थे। कई स्थानों पर उन्होंने सेना स मुठभेड की पर तु उसका परिणाम उनके लिए अधिक आशाजनक नहीं हुआ। उस समय 'साया सान' कोंगी स्यामा नाम धारण किए हुए शान राज्यों में घुस गए और वहां से अपने संघर्ष को उन्होंने जारी रखा।

यद्यपि उनके दो सबसे अधिक विश्वसनीय सहायकों की मृत्यु के कारण उनकी शक्ति कम हो गई थी और उनको कठिनाइयों का सामना करना पड रहा था पर तु देश की स्वतन्त्रता के लिए जो उस विषम परिस्थिति में भी युद्ध करने में उत्साह और उल्लास का अनुभव होता था उनको जीवित रखे था और उनके उत्साह को बनाए रख रहा था। ऐसी विषम परिस्थिति म भी वे हताश या निराश नहीं हुए। जुलाई १९३१ के मध्य म यह अफवाहे सुनाई देने लगी कि 'शान' के नेतृत्व मे विद्रोही दल जो अभी तक शान राज्यो म सक्रिय था माडले जिले में खदेड दिया गया है और वे लोग माडले के उत्तर पूर्व में कहीं शिविर लगा कर पडे हैं। मायमेयो तथा अन्य स्थानों से माडले की ओर जाने वाली सभी सडकों पर सनिक चौकियां बिठा दी गई जो उन मार्गों पर कड़ी निगरानी रखती थीं। कोई भी व्यक्ति उन मार्गों पर बिना उसकी जांच पड़ताल

और पूछ ताछ के नही जा सकता था। २९ जुलाई को छावनी पुलिस स्टेशन में पुलिस दल ने मांडले मांडया सडक पर जाने वाली एक बस को रोक लिया। इसमे पुलिस को तीन व्यक्ति मिले जिनमे दो शान और एक बरमी था। पुलिस ने उन्हें संदेह में गिरफ्तार कर लिया और जाच के लिए उन्हें गुप्तचर विभाग में भेज दिया। उन व्यक्तियो को यातना देकर गुप्तचर विभाग ने जो जानकारी बल पूर्वक प्राप्त की उस जानकारी के आधार पर पुलिस को यह सदेह हुआ कि एक विद्रोही गुप्त आश्रय स्थान पर सायासान छिपे हुए है। ३० जुलाई को उस स्थान पर छापा मारा परन्तु उनको पकड़ना सम्भव नही था क्योंकि दूसरी ओर ऊची पवत श्रेणी थी जिसके कारण विद्रोही दल के बच कर निकल जाने के लिए माग सुगम था। परन्तु यहा मूल्यवान युद्ध सामग्री स्टोर और विशेषकर नेता की एक दैनंदिनी (डायरी) मिली जो बहुत मूल्यवान थी। २ अगस्त १९३१ को हसुम्शी राज्य में एक फोंगी मत्यन्त अशक्त दशा में अपने पांच अनुयायियो के साथ पकड़ा गया। जो व्यक्ति सायासान को पहचानने की योग्यता रखते थे उन्हें वहा भेजा गया और यह निश्चित हो गया कि फोंगी और कोई नही वही विद्रोही स्वय सायासान है जिसके पीछे सेना इतने दिनो से पडी थी। उनको सेना ने हसिपान्द के निकट एक साधारण सामान्य व्यक्ति की वेश भूषा मे ९ बजे पकड़ा। उनका स्वास्थ्य अत्यन्त गिरा हुआ था। अभावों कष्टो तथा चिन्ताओं से उनका शरीर जजर हो चुका था और वे अत्यन्त अशक्त हो गए उनका स्वास्थ्य अत्यन्त गिरा हुआ था। इस प्रकार उस व्यक्ति का चमत्कारी धूमकेतु के समान व्यक्तित्व का अन्त हो गया जिसको गिरफ्तार करने के लिए भारत सरकार ने दस हजार रुपए का और शान राज्यो ने एक दूसरा पांच सौ रुपयो का पारितोषिक घोषित किया था। उनको शान राज्य के ता गवियो स्थान पर बंद रखा गया जब तक कि उन्हें एक बन्द रेल के डिब्बे मे थारावादी लाने का प्रबन्ध नहीं हो गया। यह बन्द डिब्बा १४ अगस्त १९३१ को ट्रेन मे जोड़ दिया गया और उसकी रक्षा के एक बड़ा सशस्त्र पुलिस दल साथ भेजा गया।

१५ अगस्त १९३१ को वे विशेष न्यायालय में उपस्थित किए गए और उनको एक विशेष सुरक्षित कठघरे मे जो उनके लिए विशेष रूप मे बनाया गया था खड़ा किया गया। उस समय की प्रचलित परम्परा के अनुसार उनको एक लाल जैकट पहनाई गई जो कि उन व्यक्तियो को पहनाई जाती थी कि जो खून के अपराध के दोषी होते थे।

उनके विरुद्ध मुख्य दोषारोपण नीचे लिखे थे। उन्होंने इ सीन थारावादी और हे जादा मे विद्रोह कराया अलान्ताग की पहाडियो में एक महल बनवाया जिसका उपयोग विद्रोहियो के मुख्य केन्द्र के रूप में किया जाता था उन्होने गलोन समितियो का सगठन किया, उन्होंने विद्रोही सेना को एकत्रित किया और अपने हस्ताक्षरो से बुद्ध राजा के नाम से घोषणा पत्र जारी किया। इसके अतिरिक्त उन पर वन विभाग के इजिनियर तथा एक डिप्टी सुपरिटेंडट को मारने का अपराध लगाया गया। इसके अतिरिक्त उन पर यह दोषारोपण भी किया गया कि उनके अनुयायियो ने अनेक मुखियों और गांव वालों को मारा इनोया रेलवे स्टेशन पर आक्रमण किया तथा अनेक गावो पर आक्रमण किया और उन्हें लूटा।

अपराधों की सूची अभी पूरी नही हुई। उन पर यह दोषारोपण भी किया गया कि उनके अनुयायियों ने सम्राट की सेनाओ जिनमें पजाबी रेजीमेंट भी सम्मिलित

भी आक्रमण किया। अभियोग में उन पर यह भी दोषारोपण किया गया कि उनके प्रचार का उद्देश्य देदाए, मौलमीन, हेन्जादा और पीगू क्षेत्रों को प्रभावित करने का था। सम्राट के विरुद्ध षड्यन्त्र करने तथा युद्ध करने का भी उन पर अपराध लगाया गया।

अभियोग की नियमित सुनवाई २० अगस्त से आरम्भ हुई। अभियुक्त ने अपने बचाव के लिए किसी वकील की सेवाएं लेने से इन्कार कर दिया। उनका सारे अभियोगों का केवल एक मात्र उत्तर यही था कि मैं दोषी नहीं हूँ मैंने अपनी जननी भूमि को स्वतन्त्र करने के लिए संघर्ष किया जिसका प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है। यह उत्तर बरमा के बेताज के बादशाह साया सान जैसे महान क्रान्तिकारी के योग्य ही था। १० अगस्त १९३१ को संक्षिप्त अभियोग के उपरान्त बरमा के जन विद्रोह के उस महान क्रान्तिकारी नेता को प्राण दण्ड दे दिया गया। २८ नवम्बर १९३१ को थरा युद्धों के उस महान क्रान्तिकारी वीर को फांसी दे दी गई। इस प्रकार वह प्रकाश जिसने बरमा के आकाश को कई वर्षों तक प्रकाशवान बनाया था, बुझ गया।

पटाक्षेप
अलन्ताग विद्रोह अभियोग

२२ दिसम्बर और ३१ दिसम्बर १९३० के मध्य जो घटनाएं घटीं उनके सम्बन्ध में एक सम्पूर्ण अभियोग थाराबादी में एक विशेष न्यायालय के समक्ष सत्तीस विद्रोहियों पर चलाया गया। विशेष न्यायालय ने ग्यारह व्यक्तियों को प्राण दण्ड दिया। अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की। उच्च न्यायालय ने नौ व्यक्तियों की सजा को मान्य कर दिया और दो की प्राण दण्ड की सजा कम कर आजीवन कारावास तथा काले पानी की सजा में बदल दिया।

देदाये विद्रोह अभियोग—सात जनवरी १९३१ को प्यापान जिले में देदाए में एक छोटा और संक्षिप्त विद्रोह हुआ। वह विद्रोह साया सान की आज्ञा से उनके अनुयायियों के एक दल ने किया था। वह युद्ध लगभग डेढ़ घन्टे तक चला था जिसमें लगभग ३० या चालीस विद्रोही मारे गए थे। विद्रोहियों में से बचे हुए और उनके समर्थक बड़ी संख्या में गिरफ्तार कर लिए गए। कालान्तर में एक विशेष न्यायालय के समक्ष बहत्तर अभियुक्तों के विरुद्ध सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने तथा षड्यन्त्र करने के अपराध में अभियोग चलाया गया। उनमें से अठारह को प्राण दण्ड की सजा दे दी गई। उच्च न्यायालय ने पन्द्रह की प्राण दण्ड की सजा मान्य कर दी। इसके उपरान्त सरकार से दया की प्रार्थना की गई। चार को छोड़ कर सरकार ने शेष सभी की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। उन चार क्रान्तिकारियों को कुछ समय के उपरान्त फांसी दे दी गई।

हतोहलेग विद्रोह

हतोहलग के साधारण से विद्रोह के अपराध में सत्ताईस व्यक्तियों पर अभियोग चलाया गया। न्यायालय ने दो को प्राण दण्ड दे दिया। उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में उच्च न्यायालय ने कहा कि यू थायासावका के विरुद्ध अभियोग सिद्ध हो गया है अतएव उसकी अपील अस्वीकार की जाती है। दूसरे अभियुक्त की अपील भी अस्वीकार कर दी गई। यथा समय दोनों क्रान्तिकारियों को फांसी दे दी गई।

कामा विद्रोह अभियोग

५ जून १९३१ को क्रान्तिकारियों के एक दल ने यालेगीपदांग पुलिस थाने पर

आक्रमण कर दिया और राजकीय सम्पत्ति को गहरी क्षति पहुंचाई। जब उनकी पुलिस से मुठभेड़ हुई तो उन्हें वहां से हटना पड़ा। इस युद्ध में एक विद्रोही मारा गया। थायट्मो के विशेष न्यायाधीश के समक्ष बहुत बड़ी संख्या में जन विद्रोह के अपराध में अभियोग चलाया गया। जज महोदय ने पचहत्तर अभियुक्तों को प्राण दण्ड की सजा दे दी। ६ अगस्त १६३१ को उच्च न्यायालय ने पतीस के प्राण दण्ड की सजा को घटा दिया और शेष चालीस के प्राण दण्ड की सजा को मान्य कर दिया।

किनपादी विद्रोह अभियोग

इस अभियोग में १२५ व्यक्ति जो गिरफ्तार किए गए उनमें से पचहत्तर के विरुद्ध यह आरोप लगाया गया कि उन्होंने 'कई बिनाला' के मुखिया को मार डाला, किनपादी लकड़ी चीरने की मिल पर नियुक्त पुलिस दल पर आक्रमण किया तथा मगाई सुरक्षित वन में पंजाबी सैनिकों से मुठभेड़ की। १६ अक्टोबर १६३१ को विशेष न्यायालय ने उनमें से तीन को प्राण दण्ड दे दिया। अपील करने पर उच्च न्यायालय ने दो के प्राण दण्ड को मान्य कर दिया।

मिनहोन विद्रोह

मिनहोन में जो विद्रोह हुआ वह उस विद्रोही की शृंखला में से एक था जो कि बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में थारावादी के विद्रोह के सम्बन्ध में बरमा में सर्वदा फली हुई अशान्ति का एक भाग थे। जो भयानक दण्ड इस अभियोग में दिया गया उससे इस विद्रोह की गुरुता और गम्भीरता का अनुमान किया जा सकता है। इस विद्रोह के सम्बन्ध में तथ्य ज्ञात नहीं हैं परन्तु यह पता चलता है कि वह कोई सामान्य घटना नहीं थी। २७ सितम्बर १६३२ को उच्च न्यायालय ने अनेक अभियुक्तों की अपील पर निर्णय दे दिया कि जिनके विरुद्ध सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने षड्यन्त्र करने तथा तत्सम्बन्धी अन्य आरोप थे जिनमें ३० अभियुक्तों को विशेष न्यायाधीश ने प्राण दण्ड की सजा दी थी। उच्च न्यायालय ने उन तीस में से चौबीस के प्राण दण्ड की सजा को मान्य कर दिया और शेष को आजीवन काले पानी के कारावास की सजा में परिणित कर दिया।

थारावादी के अभियोग

(क) यह अभियोग 'सान्दवा' में हुए उस युद्ध के आधार पर चलाया गया जिसमें गांव वालों में और पुलिस में कई मुठभेड़ें हुई थीं। पुलिस प्रति व्यक्ति कर उगाहना चाहती थी और ग्रामीण उसका विरोध कर रहे थे इस विद्रोह की तैयारियां एक नेता (आंग ह्ल) के मकान पर की गई। आंग ह्ल को एक दूसरे अभियोग में आजीवन काले पानी का दण्ड दिया जा चुका था। उनके मकान पर विशेष संस्कार से शान्ति तकारियों में विद्रोही धर्म की दीक्षा दी गई और नए भरती किए जाने वालों को शपथ दिलाई गई। इस युद्ध में अनेक व्यक्ति मारे गए और ६५० व्यक्तियों पर अभियोग चलाया गया। उनके विरुद्ध सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने तथा अनेक अन्य आरोप लगाए गए। ८ मई १६३१ को विशेष न्यायाधीश ने अभियोग के सम्बन्ध में अपना निर्णय दे दिया। सत्तर अभियुक्तों को विशेष अदालत ने दण्डित किया उनमें से पन्द्रह को प्राण दण्ड दिया गया। उन पन्द्रह में जिनको मृत्यु दण्ड दिया गया था वा छीन और हे अदमात सनखान भी थे जो एक अत्यन्त महत्त्व पूर्ण नेता के जिसे लम्बे कारावास का दण्ड हो चुका था पुत्र थे।

(ख) १४ मई १९३१ को एक विशेष न्यायालय के समक्ष ४९ व्यक्तियों पर इनसीन और थारावाडी की सीमा पर विद्रोह खड़ा करने का आरोप लगाया गया। इस विद्रोह मे ग्रामीणो ने अपने समूह बना कर अला ाग की म र कूच किया। माग मे पुलिस चौकियों पर आक्रमण किया और सरकारी सम्पत्ति को लूट लिया। जबकि विद्रोही कूच कर रहे थे तो माग मे उनको सैनिक पुलिस का दस्ता मिला, जिससे युद्ध हुआ। उस मुठभेड मे कम से कम आठ विद्रोही वीर गति को प्राप्त हुए।

(ग) २१ मई १९३१ को एक दूसरे अभियोग मे विशेष न्यायालय के समक्ष ४९ अभियुक्तों को उपस्थित किया गया जिनमे विद्रोह का सगठन करने युद्ध मे सम्मिलित होने पुलिस और सेना को क्षति पहुचाने और समस्त प्रदेश मे विद्रोह खड़ा करने का आरोप लगाया गया था। न्यायालय ने आठ को निर्दोष पाकर छोड़ दिया शेष ४१ पर अभियोग चलाया गया वे सब दोषी पाए गए और उनमें सात को प्राण दण्ड दिया गया विशेष न्यायालय ने अपना यह निर्णय ८ अगस्त १९३१ को दिया था।

उन सातो ने सरकार से दया की प्रार्थना की उनके नाम नीचे लिखे हैं —

(१) मगा पो यून (२) मगा बो माव (३) मगा थान मेंविन (४) मगा पो विट (५) मगा पो साग (६) मगा वा क्वा और (७) मगा पो टटा

गवरनर जनरल ने सातो अभियुक्तो की दया की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया और उन वीर क्रांतिकारियो को फासी दे दी गई। देश की स्वतन्त्रता के लिए सातों वीरों ने फासी के तख्त पर अपने प्राण दे दिए।

(ङ) सरकार ने एक पूरक अभियोग चलाया। जिसमे १५३ अभियुक्त थे उनमें ९४ फरार थे अस्तु ५९ पर विशेष न्यायालय के सामने अभियोग चलाया गया। यह अभियोग भी थारावाडी विद्रोह से सम्बन्धित घटनाओं को लेकर चलाया गया था। बारह अभियुक्तों को प्राण दण्ड और छब्बीस को आजीवन कारावास की सजा दी गई।

थायटम्यो विद्रोह अभियोग—थायटम्यो में तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र मे हुए विद्रोह म कई विद्रोही चार पुलिस के सिपाही तथा दो ग्रामियो की जीवन हानि हुई। सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने तथा अ य गम्भीर अपराधो के लिए बहुत बड़ी सख्या में अभियुक्तो पर अभियोग चलाया गया। उनमे से कई को कानून के अ तगत अधिकतम दण्ड दिया गया। उनम से पन्द्रह अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय में अपील की। उच्च न्यायालय ने १३ जनवरी १९३२ को अपना निर्णय दे दिया। सभी अपीलें खारिज कर दी गई। आठ की प्राण दण्ड की सजा मान्य कर दी। विद्रोहियों का नेता इस विद्रोह के समय हुई मुठभेडो म वीर गति को प्राप्त हुआ।

टाइगर सेना विद्रोह अभियोग

इस अभियोग मे ४६ अभियुक्तो पर जिनम ई ग्यान मुख्य अभियुक्त था १९२७ में पादे सब डिवीजन में कर न देन का आ दोलन करने जिसके कारण पदि नविन' मे दगा हो गया अभियोग चलाया इस दगे मे एक बरमी थानदार मारा गया। इसमें ई ग्यान तथा उसके एक दूसरे साथी को प्राण दण्ड की सजा दी गई।

टाइगर सेना के कुछ अन्य नेता २४ अक्टोबर के थायटवोन की घटना मे मारे गए। बो वी जो विद्रोहियों का नेता था इस सघर्ष में मारा गया और उसके पास से एक बन्दूक तथा पचास कारतूस प्राप्त हुए।

जिगोन विद्रोह अभियोग—प्रोम जिले के सिमिबदे क्षेत्र में जिगोन में १९

दिसम्बर १९३१ को राजकीय सेनाओ और विद्रोहियो में भयकर मुठभेड हुई जिसमें सिंह सेना का नेता (विद्रोहियो के दल का नाम) अपने पाच सहायको के साथ मारा गया। एक विशेष यायाधीश ने थारावादी जेल के_अ दर जिगोन विद्रोह अभियोग की सुनवाई की। १८ अगस्त १९३२ को निर्णय सुना दिया गया। जिसमें ९ अभियुक्तों को प्राण दण्ड दिया गया।

बरमा मे फांसियां—थारावादी विद्रोह के सम्बन्ध मे बरमा सरकार के गृहम त्री ने २४ फरवरी १९३३ को बतलाया कि कुल २७४ विद्रोहियो को प्राण दण्ड दिया गया उनमे से ५१ को फासी दी जा चुकी थी। और विद्रोह मे भाग लेने के कारण आजीवन कारावास का दण्ड भुगतन वालों की सख्या ५३५ थी।

आठवाँ अध्याय

चिटगाँव के शौर्य की कहानी

(१९२६-४२)

धरातल

सम्पूर्ण अविभाजित भारत में सर्वाधिक प्राकृतिक सौन्दर्य की धनी भूभाग जहाँ प्रकृति देवी ने अपनी अपरिमित नैसर्गिक देन को मुक्त हस्त से लुटाया है—जहाँ लह लहाते उत्तम फसलें उत्पन्न करने वाले खेत हैं, सदा बहार वन हैं, जो सदा भरे हरे भरे रहते हैं और जहाँ के पहाड़ वन आच्छादित ही नहीं प्राकृतिक सौन्दर्य की अपरिमित सम्पत्ति के धनी हैं जहाँ हरित परिधान धारण किए हुई पर्वतमालाओं की समाप्त न होने वाली श्रृंखलाओं का तांता लगा है जिसमें असंख्य छोटे बड़े नद और नदियाँ शान्त भाव से बहती हैं और गम्भीर गति से प्रशान्त समुद्र से मिलने के लिए बहती रहती हैं—वह नैसर्गिक सौन्दर्य का अनन्त धनी प्रदेश अत्यन्त वीरतापूर्ण क्रान्तिकारी कार्यों का केन्द्र बन गया जिनकी समता भारत के अथवा विश्व के अन्य किसी देश के क्रान्तिकारी इतिहास में मिलना असम्भव है। उग्र सैनिक राष्ट्रवाद के पुनः फूट पड़ने के समय से चीटा गाँव का राजनीतिक इतिहास अत्यन्त रोमांचकारी और चित्ताकर्षक है।

चीटा गाँव के इस गौरवपूर्ण क्रान्तिकारी इतिहास में सूर्य-सेन का नाम भारत के गौरव को बढ़ाने वाला है और प्रत्येक भारतीय गृह में उनका नाम सब गुणों के लिए कि जो अदम्य वीर साहसी और दृढ़ क्रान्तिकारी योद्धा में होने चाहिए याद किया जावेगा। उनका नाम एक ऐसे वीर क्रान्तिकारी योद्धा के लिए याद किया जावेगा जिसने अकथनीय कष्टों को सहकर भी अपनी मातृ भूमि को विदेशियों की दासता से मुक्त करने के लिए निरन्तर युद्ध किया। उनके वीरोचित कार्यों ने देश को स्वतन्त्रता प्राप्त करने के कठिन मार्ग पर कभी न मिटने वाले चिन्हों को अंकित किया है जो सदैव देश भक्तों को देश के लिए अपने जीवन को उत्सर्ग करने की प्रेरणा देते रहेंगे।

ब्रिटिश शक्ति के उस सुदृढ़ केन्द्र पर जो साहसपूर्ण आघात किया गया उसकी गुरुता को समझने के लिए उस जिले के धरातल की बनावट को तनिक विशद रूप से समझ लेने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त उस आक्रमण के बाद जो अत्यन्त खतरनाक और जोखिम भरा काम उन क्रान्तिकारियों ने वापस लौटाने में किया उसको भली भाँति समझने के लिए भी उस प्रदेश के धरातल की बनावट को जान लेना आवश्यक है। यदि पर्वतमालाएँ, सघन वनों छोटी छोटी नदियों और बिखरी हुई दूर-दूर गाँव और बस्तियों के कारण क्रान्तिकारियों की गतिविधियों और पुलिस द्वारा पीछा करने पर भाग निकलने में बहुत अड़चन और कठिनाई थी तो क्रान्तिकारियों के लिए उनमें पुलिस और सेना के नाक के नीचे ही छिप कर रहने के लिए सुविधा भी थी। सम्पूर्ण जिला एक लम्बी और पतली तटीय पट्टी की भाँति फैला हुआ था। उसकी पीठ के पीछे नीची पहाड़ियाँ थीं जो कि बंगाल की खाड़ी और चिटागाँव और अराकान

पर्वतीय प्रदेश के मध्य में स्थित था । समुद्र तट और पीछे की पहाड़ियों के बीच जो समतल तटीय भूमि है उसमे अनेक छोटी छोटी नदियां हैं जिनमें ज्वार का जल चढ कर फलता है। इस जिले की मुख्य नदियां कर्णफुली और सानगा हैं-दोनो में वर्ष भर नावें चल सकती है । जिले में पाच मुख्य पर्वत श्रेणियां हैं (१) सीताल कुण्ड (२) गोलिबासी (३) सतकानिया (४) मशखल (५) और तेकनाफ पर्वत श्रेणी ।

चिटागांव नगर कर्ण फुली के दाहिने तट पर बसा है और उसके मुहाने से [illegible] भग १२ मील उत्तर मे स्थित है। चिटागांव नगर में अनेक छोटी छोटी पहाड़ियां हैं जो उसके मध्य मे स्थित हैं वे अत्यन्त ढालू हैं। एक या दो के सिवाय किसी के भी अन्य की चोटी पर कोई सवारी नही पहुँच सकती । समीपवर्ती पहाड़ियो की चोटियों स कर्ण फुली पुष्पा की माला के समान प्रतीत होती है। उतरती चढ़ती पगडंडियां ऐसी प्रतीत होती हैं कि मानो बहुत बहुत विशाल और लम्ब सर्प चल रहे हों जो कि झोड़ो पर तथा किनारे की झाड़ियों और ऊचे पेड़ों में कभी कभी गायब हो जाते हो । वे पगडंडियां तथा पहाड़ी मार्ग इतने ऊबड़ खाबड़ हैं कि उनका ठीक विवरण दे सकना सम्भव नहीं है । मुख्य पर्वत श्रेणियों से इस विस्तृत और दूर दूर तक फैले हुए सघन घन आच्छादित प्रदेश का दृश्य अत्यन्त भव्य मनोहर और आकर्षक है। इन ऊंचे स्थानो से देखने पर नीचे जो जगल फैला हुआ है वह एक समतल हरित प्रदेश जैसा प्रतीत होता है जब कि वास्तव मे वह अत्यन्त दुर्गम और दुर्गम प्रदेश है जिसमे से होकर निकलना बहुत कठिन है ।

पृष्ठभूमि

भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन में चिटागांव सदव अगली पंक्ति में रहा है और भारत के राजनीतिक भविष्य के सम्बन्ध में जो भी विचार विमर्श हुए उनमे उसका यथेष्ट प्रतिनिधित्व रहा है ।

कांग्रेस की विचारधारा के अतिरिक्त तरुणों के मन में क्रान्तिकारी विचारों का भी उदय हो रहा था । प्रथम विश्व व्यापी महायुद्ध में चीटागांव के तरुण भी बगाल के सैकड़ा तरुणो के साथ बिना अभियोग चलाये गिरफ्तारी से नहीं बच सके । १६ जून १९१४ को एक सिपाही पर क्रान्तिकारियों ने वार किया परन्तु उसके बजाय उनका एक क्रान्तिकारी साथी मारा गया । क्रान्तिकारी भावना उस समय तक तरुणों में इसी प्रकार प्रवाहित होती रही जब तक महात्मा गांधी एक वर्ष में पूर्ण स्वराज्य [illegible] करने की योजना को अहिंसात्मक उपायों से प्राप्त करने के अस्त्र को भारत के राजनीतिक क्षितिज पर उदय नहीं हुए । यद्यपि शीर्ष [illegible] क्रान्तिकारी नेताओ को इस अहिंसात्मक आन्दोलन की सफलता में तनिक भी विश्वास नहीं था परन्तु महात्मा गाधी के अहिंसात्मक आन्दोलन को उचित अवसर देना आवश्यक था। अतएव क्रान्तिकारियों ने महात्मा जी के आन्दोलन को इस विश्वास के [illegible] समर्थन दिया कि क्रान्तिकारी कार्यवाही केवल थोड़े से [illegible] क्रान्तिकारी कर सकते हैं । क्रान्तिकारी कार्यपद्धति [illegible] केवल थोड़े से ही अनुयायी बन सकते हैं क्योंकि उसमें असीम कष्ट सहन और बलिदान की आवश्यकता होती है परन्तु सर्व साधारण मे राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने के लिए गाधी जी के कार्यक्रम के अधिक सफल होने की सम्भावना और अवसर थे ।

परन्तु सत्याग्रह आन्दोलन से क्रान्तिकारियों ने जो आशाएं की थीं वे सफल नहीं हुई और चीटा गाव के उत्साही और जोशीले क्रान्तिकारी अधीर हो उठे । १९२२

में चीटागांव में क्रान्तिकारियों का एक वृहत् सम्मेलन गांधी जी के राजनीतिक आन्दोलन के परिणामों का मूल्यांकन करने तथा भावी कार्यक्रम निर्धारित करने के लिए हुआ। जब कि सम्मेलन समाप्त हो गया तो हिंसात्मक उपायों के समर्थकों ने आपस में निश्चय किया कि वे अपने हिंसात्मक क्रान्तिकारी मार्ग पर ही चलेंगे और उस कार्य को आगे बढ़ाने के लिए धन एकत्रित करने के उपाय सोचे गए। इसी अभिप्राय से १९२३ में परायकोरा डकैती डाली गई। उसी वर्ष २३ दिसम्बर को क्रान्तिकारियों ने रेलवे की एक बहुत बड़ी धन राशि लूट ली। यह डकैती 'नोआपारा' स्थान पर हुई थी इस कारण 'नोआपरा' डकैती के नाम से प्रसिद्ध है। इसी बीच इस बात का भी प्रयत्न किया गया कि उस क्रान्तिकारी दल से हाथ मिलाया जावे जो अखिल भारतीय आधार पर सशस्त्र विद्रोह कराने के लिए संगठन कर रहा था और उस दिशा में प्रयत्नशील था।

नेताओं ने इस विचार को अधिक पसन्द नहीं किया। इसके अतिरिक्त क्रान्तिकारी कार्यों के लिए धन इकट्ठा करने के लिए निजी अथवा राजकीय धन को लूटने के सम्बन्ध में भी उनका मत परिवर्तन हो गया। क्योंकि डाका डालने में अपने सहयोगियों का न्यायालय में बचाव करने के लिए व्यय करना पड़ता था दौड़ धूप करनी पड़ती थी और इस बात की भी सम्भावना रहती थी कि सजा हो जावे जिससे कि लम्बे समय के लिए सक्रिय क्रान्तिकारी योद्धा को दल खो दे। अतएव यह निर्णय किया गया कि धन और यदि सम्भव हो तो हथियार भी दल के सदस्यों की सहायता से उनके घरों से ही प्राप्त किए जावें। उसी समय १९२४ में बिना अभियोग चलाए केवल सन्देह पर बड़ी संख्या में गिरफ्तारियों और क्रान्तिकारियों को जेल में रखने की दूसरी लहर आई। उन सारे के सारे क्रान्तिकारी नेताओं को सरकार ने जेल में रख दिया और अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिए उन्हें अपनी रिहाई अर्थात् १९२८ तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। इस सरकार द्वारा आरोपित निठल्लेपन और क्रियाशून्यता के समय में बन्दियों को अन्य जिलों से आए हुए बन्दियों से मिलने का तथा जिन जिलों में तैयारियां पूरी हो जावें उन जिलों में सशस्त्र विद्रोह किस समय खड़ा किया जावे इस सम्बन्ध में विचार विमर्श तथा चर्चा करने का अवसर मिला। १९२८ में इंडियन नेशनल कांग्रेस का जो विराट अधिवेशन कलकत्ता में हुआ। उसमें जो नेताजी सुभाषचन्द्र के नेतृत्व में पूर्ण सैनिक वर्दी से युक्त बहुत बड़ा स्वयं सेवक दल खड़ा किया गया उससे चीटागांव के क्रान्तिकारी नेताओं को प्रेरणा मिली और बहुत जल्दी ही इन्होंने भी एक पूर्ण वर्दीधारी क्रान्तिकारियों का सैनिक दल अपना भी खड़ा कर लिया। १९२५-२८ के बीच चीटागांव के क्रान्तिकारियों को जो सन्देह में गिरफ्तार कर लिया गया था उनमें एक क्रान्तिकारी की छूटने के पूर्व ही मृत्यु हो गई। एक क्रान्तिकारी की बलि चढ़ गई। १९२८ में जब कि बन्दियों की रिहाई शुरू हो हुई थी तब कर्नेन्दु अनुरूपचन्द्र सेन की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु उसकी रिहाई की तारीख से कुछ सप्ताह पहले हुई। उसकी मृत्यु ४ एप्रिल १९२८ को मनडाज की जेल में हुई थी। १९२९ में चीटागांव जिले में क्रान्तिकारी कार्यवाही करने के लिए क्रान्तिकारी अधीर हो उठे। सम्पूर्ण जिले में क्षोभ और रोष व्याप्त था। परन्तु क्रान्तिकारियों को अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन के समर्थकों के कड़े विरोध का सामना करना पड़ रहा था। ११, १२ और १३ मई १९२९ को जो जिला युवक सम्मेलन हुआ उसमें दोनों दलों का यह मतभेद स्पष्ट हो गया और ऊपर आया। वास्तव में यह मतभेद उस असंतोष की छिपी हुई धारा का प्राबल्य था कि

जो उस समय प्रत्येक जिले के राजनीतिक कार्यकर्ताओं को झकझोर रही थी। वर्ष के अन्त तक स्थिति बेकाबू हो गई जब कि उस दुर्भाग्यपूर्ण घातक आक्रमण की सृष्टि हुई। उस घातक आक्रमण से भविष्य में होने वाली घटनाओं का पूर्व संकेत मिलता था।

अहिंसा के समर्थकों की हिंसा

अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन के असफल हो जाने पर चीटागांव कांग्रेस कमेटी के नेताओं ने जिले को अधिकारियों के विरुद्ध क्रान्तिकारी संघर्ष के लिए तैयार करने का विचार किया। इसके सहायक उपाय के रूप में यह आवश्यक हो गया कि चीटागांव कांग्रेस कमेटी पर उनका प्रभावकारी नियन्त्रण स्थापित हो जिससे कि वे जिले को आने वाले क्रान्तिकारी संघर्ष के लिए तैयार कर सकें। सूर्यसेन ने इस अभिप्राय से अर्थात क्रान्तिकारी संघर्ष के लिए दल को संगठित करना आरम्भ किया और वार्षिक कार्यकारिणी के चुनावों के लिए वे तैयार होकर आए थे। २१ सितम्बर १९२९ को चुनाव हुए और अहिंसात्मक आन्दोलन के समर्थकों की पराजय हुई। भविष्य में आने वाले अहिंसात्मक आन्दोलन जिसकी उस समय तेजी से चर्चा चल रही थी के समर्थकों की चुनाव में पराजय हुई। यह कांग्रेस कमेटी की बैठक तूफानी बैठक थी जिसमें विरोधी पक्षों में बहुत गरमा गरमी हुई और एक दुर्भाग्यपूर्ण और भद्दी घटना ने उस दिन के क्षुब्ध वातावरण को कलंकित कर दिया। बात यह हुई कि कुछ स्थानीय गुण्डों ने सूर्यसेन, निर्मल सेन और पन्द्रह वर्षीय सुखदेव विकास दत्त पर छुरों से आक्रमण कर दिया। सूर्यसेन तथा निर्मलसेन को चोटें बहुत गम्भीर और गहरी नहीं थीं पर तु सुखदेव की रीढ़ में एक लोहे के डंडे से गहरा आघात लगा था लोहा गहरा धंस गया था।

चिटागांव में जो भी चिकित्सा की सहायता उपलब्ध थी उससे सुखदेव के स्वास्थ्य में सुधार नहीं हुआ। उसके लिए यह आवश्यक समझा गया कि उसको अधिक कुशल चिकित्सकों की देख रेख में रखा जावे इस कारण उसको ९ अक्टोबर १९२९ को कलकत्ता ले जाया गया और कारमाइकेल मेडिकल कॉलेज हास्पिटल में रखा गया। वहां उसको सभी प्रकार की अच्छी से अच्छी सम्भावित चिकित्सा की सुविधा दी गई परन्तु १३ अक्टोबर १९२९ के आस पास सुखदेव की दशा तेजी से बिगड़ने लगी। उसके पैर पूरी तरह से चेष्टा रहित और गतिहीन हो गए थे उसकी स्थिति चर्चाकार गली हो गई थी। वह पेट में भयंकर पीड़ा की बराबर शिकायत करता था और डाक्टरों ने उसकी किडनी के विषाक्त हो जाने की बात कही। पन्द्रह वर्ष के उस बालक सुखदेव को बंगाल के दीपस्व सब मा य ता जिसमें श्री सुभाषचन्द्र बोस भी थे घेरे खड़े थे। २७ अक्टोबर १९२९ को प्रातः १० बज कर १७ मिनट पर उस अभागे बालक ने सबों के सामने प्राण छोड़ दिए। उसके शव की नीमतल्ला श्मशान घाट पर दाह क्रिया की गई। उसके दाह सस्कार में बहुत बड़ी संख्या में कांग्रेस जन तथा उसके प्रिय मित्र तथा प्रशंसक प्रशासक सम्मिलित हुए थे। इस प्रकार तरुण सुखदेव उस आन्दोलन की पहली बलि था जिसने आगे चल कर अनेक बलिदान लिए। सुखदेव का श्राद्ध देवान बाजार में २९ नवम्बर १९२९ को हुआ।

शस्त्रागार पर आक्रमण

प्रारम्भिक—ऊपर की घटनाओं से तनिक भी विचलित न होते हुए उत्साही युवक क्रान्तिकारी बड़ी क्रान्तिकारी कार्यवाही की तयारी में जुट गए जिससे कि विश्व को यह बतलाया जा सके कि सोता हुआ सिंह अब जाग गया है। मास्टर-दा के नेतृत्व

में जो क्रान्तिकारी युवकों की टोली थी वह अधिक सक्रिय और उत्साही थी। मास्टरदा के चुने हुए सहयोगी उस समय बहुत सक्रिय हो उठे। उन्होंने कई स्थानों पर कठोर शारीरिक व्यायाम के केन्द्र स्थापित करना, पद चालन (रुट मार्च) लोहे की छड़ों को मोड़ देना, चलती मोटर गाड़ी को पकड़ कर रोक लेना, लाठी, तलवार, छुरा, चलाना तथा मुक्केबाजी (बाक्सिंग) इस नवीन शारीरिक व्यायाम की लहर के मुख्य अंग थे। उनके कार्य पुलिस की दृष्टि को आकर्षित किए बिना नहीं रहे। नवम्बर १९२९ के मध्य में चौटागांव में २४ अतिरिक्त सिपाही सन्देह जनक व्यक्तियों पर कड़ी निगाह रखने के लिए भेज दिए गए। फरवरी १९३० में सीता कुण्ड में एक मेला हुआ उसमें क्रान्तिकारियों के नेता खाकी ब्रिजिस तथा कोट पहने हुए तथा सर पर लोहे का शिरस्त्राण और कन्धों पर सैनिक बिल्ले लगाए देखे गए जिस प्रकार सेना के कप्तान पहिनते हैं। मार्च १९३० के अन्त तक और अतिरिक्त २२ कांस्टेबिल चौटा गांव में एक नई योजना के अन्तर्गत जिले में चौकसी रखने के लिए भेजे। भूतपूर्व नगर के क्रान्तिकारियों तथा उनके सहयोगियों की कार्यवाहियां तथा गतिविधियां उस समय तक इतनी अधिक तेज हो गई थी कि उन पर निरन्तर निगरानी रखना अत्यन्त आवश्यक हो गया। रात्रि को भी यह क्रान्तिकारी सैनिक वेष में तथा खाकी वर्दी में घूमते थे वे अपने दल के लिए कोष इकट्ठा करते, मोटर चलाना सीखते, बड़ी टार्च लाइट तथा पानी की बोतलें इत्यादि खरीदते दिखलाई पड़ते थे। पुलिस इस बात से तो प्रसन्न थी कि वे युवक नगर के आस पास कुख्यात गुण्डों को नियन्त्रण में रखते थे और उनके प्रभाव के कारण सड़क पर चलते गुण्डागर्दी आक्रमण लूटपाट अपहरण, तथा बलात्कार तथा अन्य अपराधों की संख्या बहुत कम हो गई। २१ मार्च १९३० को जात्रा मोहन हाल में सत्याग्रह की सभा हुई उसमें भाषण कर्ताओं ने घोषणा की कि वे नमक कानून तथा राजद्रोह सम्बन्धी कानून को शीघ्र ही तोड़ने जा रहे हैं और उन्होंने श्रोताओं से उनके इस श्रेष्ठ और महान लक्ष्य के लिए सब प्रकार से सहायता करने की अपील की। नगर में तथा अन्य स्थानों पर सभा में व्यक्त किए गए विचारों के समर्थन में विज्ञप्तियां वितरित की गई। २६ मार्च १९३० के रात्रि के पौने तीन बजे त्रिपुरा सेन जिस पर पुलिस को सन्देह था खाकी कमीज तथा कोट पहने सर पर टोप लगाए और हाथ में टार्च लाइट लिए साइकिल पर म्यूनिस्पल स्कूल के उत्तर की दिशा से आता दिखलाई पड़ा। जैसे ही उसने अपने रास्ते में एक चौकीदार सिपाही को देखा उसने एक दूसरी पृथक गली की ओर साइकिल मोड़ दी और गायब हो गया। क्रान्तिकारियों के मिलने के स्थान कांग्रेस दफ्तर, सरदारगढ़ फिजिकल कल्चर क्लब (व्यायाम शाला) सरदारगढ़ जटी, लोटस सिनेमा पलेस और नेताओं के मकान थे। जहां क्रान्तिकारी मिलकर चर्चा किया करते थे।

क्रान्तिकारियों का यह दल इंडियन रिपब्लिकन आर्मी चिटागांव शाखा के नाम से प्रसिद्ध था। दल ने इस बात की पूरी व्यवस्था की थी कि दल के अत्यन्त विश्वसनीय और अत्यन्त मेधावी कुशाग्र बुद्धि सक्रिय सदस्य जिले के गुप्तचर विभाग पर निगाह रखें। प्रमुख नेताओं की एक गुप्त बैठक में वह दिन (क्रान्ति दिवस) निश्चित कर दिया गया और सभी क्रान्तिकारी युवक अनुयायियों को चेतावनी भरा आज्ञा दे दी गई कि वे उस महान कार्य के लिए तैयार हो जावें जिसमें या तो वह महान गौरव के भागी होंगे या फिर कब्र में सो जावेंगे। परन्तु फरवरी १९३० में रामकृष्ण विश्वास के मकान में बम

के फट जाने से क्रांति की तयारी में कुछ देरी हो गई। इस बम विस्फोट म रामकृष्ण विस्वास और अमरेन्द्र न दी गम्भीर रूप से जल गए उनके समस्त शरीर पर जलने के घाव हो गए। इसके उपरात एक दूसरे बम विस्फोट में अरधेन्दु दस्तीदार जल कर घायल हो गया। रामकृष्ण और अमरेन्द्र शरीर पर घाव होने के कारण आक्रमण में सम्मिलित होने के योग्य नही रहे परन्तु अरधेन्दु न आक्रमण मे भाग लिया यद्यपि उनके घाव पूरी तरह ठीक नहीं हुए थे।

आक्रमण

आक्रमण की पूरी तैयारिया हो चुकी थीं, किन किन स्थानो पर आक्रमण किया जावेगा उसका एक विस्तृत चार्ट तैयार कर लिया गया था उसमें इस बात की भी जानकारी दी गई थी कि सेना कहा है हथियार तथा विस्फोटक पदार्थ कहां कहा हैं। योजना यह थी कि एक साथ ही शस्त्रागार, मगजीन गार्ड रूम पुलिस लाइन की बैरकों पर आक्रमण किया जावे और उन पर अपना अधिकार कर लिया जावे। पहाड़ वाली पोलो ग्राऊंड मे स्थित ब्रिटिश सहायक सेना के शस्त्रागार मगजीन तथा गार्ड रूम पर आक्रमण किया जावे।

टेलीफोन कार्यालय, तारघर पर आक्रमण किया जाय और उन्हें नष्ट कर दिया जावे और इन दोनो सचार प्रणालियों के तारों को जहां भी दिखाई दें काट डाला जावे। धूम के समीप रेल की पटरियां उखाड़ दी जावें जिससे कलकत्ता या ढाका से सनिक सहायता न आ सके। सभी योरोपियनों का कत्लेआम कर दिया जावे जिससे कि वे इतने आतंकित और भयभीत हो जायें कि पुलिस की सहायता करने के स्थान पर चीटागाव स भागने की सोचें। इंडियन रिपब्लिकन आर्मी चीटागांव शाखा में ६२ क्रान्तिकारी थे जिनम अधिकांश बीस वष के नीचे या लगभग थे। वे अधिकतर स्कूल अथवा कालेजों के नए छात्र थे। उनके पास केवल १४ पिस्तौल एक दजन ० १२ बोर रीवलोवर गन और थोड़े से बम थे। इसके अतिरिक्त उनके पास और कोई हथियार नहीं थे।

क्रान्तिकारी सैनिकों को ले जाने और आक्रमण के विभिन्न बिन्दुओं से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए मोटर गाड़ियों की आवश्यकता थी। शस्त्रागार के फाटक पर आक्रमण कर उसको विध्वस करने के लिए अत्यन्त शक्तिशाली मोटर की आवश्यकता थी। क्रान्तिकारियों ने मोटर गाड़ियों के ड्राइवरों से बल पूर्वक गाड़ियां छीन ली और कुछ को उन्होंने क्लोरोफाम सुघा कर बहोश कर दिया और उनकी गाड़ियां छीन ली। घटना के एक दिन एक मोटर उन्होने खरीदी थी। १८ अप्रैल १९३० को ८ ३० बजे रात्रि को आक्रमण करना निश्चय किया गया। परन्तु यथेष्ट सख्या मे मोटर गाड़ियां मिलने में कुछ अड़चन होने के कारण आक्रमण रात्रि को १० ३० पर आरम्भ हुआ। बात यह थी कि नाजिर अहमद टैक्सी चालक (ड्राइवर) को मार कर उसकी गाड़ी क्रांतिकारियों ने अपने अधिकार में करली तब यथेष्ट सख्या में उनके पास मोटर गाड़ियां हो गई। आक्रमण करने वाले मुख्य दो दल निश्चित समय पर निजाम पल्टन पर मिले। क्रान्तिकारी सेना के जन तथा उनके कुछ सहायक पूरे सनिक वेष में थे और उनके कन्धे तथा वर्दी पर तारा तथा सनिक सम्मान सूचक अलकरण भी लगे हुए थे। उनकी उस सनिक वेष भूषा म व बहुत प्रभावोत्पादक तथा भव्य लग रहे थे। उस महान घटना के अनुकूल ही उनका वेष और अलकरण था। सभी नेता आवश्यक

और उपलब्ध संख्या में आक्रमण के विभिन्न केन्द्रों पर निश्चित समय पर पहुंच गए और ठीक रात्रि के साढ़े दस बजे जैसा पहले से ही निश्चित था आक्रमण प्रारम्भ हो गया। नगर के सुदूर सिरे पर पुलिस लाइन का शस्त्रागार स्थित था। क्रांतिकारी वहां अपनी मोटरों में पहुंचे और जब संतरी ने उनको ललकारा तो उन्होंने उसे वहीं गोली से मार दिया। अन्य संतरी भय तथा घबराहट के कारण भाग खड़े हुए और उन्होंने उस शस्त्रागार को क्रांतिकारियों के अधिकार में छोड़ दिया कि वे जैसा चाहें करें। क्रान्तिकारियों ने शस्त्रागार के अस्त्र शस्त्र तथा गोली बारूद सब लूट लिए। यूनियन जैक को उतार कर फेंक दिया और ब्रिटिश शासन तथा सत्ता के चिन्ह मिटा दिए।

ठीक इसी प्रकार का आक्रमण सहायक सेना के मुख्यालय पर किया गया। संतरी को गोली से मार दिया गया। सारजेन्ट मेजर फरल को भी मार दिया गया। शस्त्रागार का वह कक्ष जहां अस्त्र शस्त्र रखते थे उसका ताला तोड़ दिया गया। ताला तोड़ने के लिए क्रांतिकारियों ने यह युक्ति की कि दरवाजे के ताले में मोटी रस्सी बांधी और उस रस्से का दूसरा सिरा नई खरीदी गई मोटर कार के पीछे बांध कर मोटर को एक साथ तेजी से चलाया इससे ताला टूट गया और दरवाजा खुल गया। शस्त्रागार को लूटने में जो कुछ विरोध हुआ उसको उन्होंने सरलता से समाप्त कर दिया और दोनों ही दलों ने एक साथ मिलकर अपनी सफलता पर हर्ष और प्रसन्नता प्रगट की। जो भी मोटर गाड़ियां पहाड़तली सड़क से गुजरीं उन पर क्रान्तिकारियों ने आक्रमण किया। जिलाधीश जो उस सड़क पर आ रहा था अपनी मोटर वहीं छोड़ कर भाग गया इस कारण बाल बाल बच गया। उसका अरदली क्रांतिकारियों की गोली से मारा गया। धूम धूमा और जरारगंज जो चिटागांव से पचास मील दूर है के बीच रेलवे लाइन को सफलतापूर्वक उखाड़ दिया गया और एक वैगन को पटरी से उतार दिया गया जिसके कारण रास्ता रोक दिया गया।

तार घर और टेलीफोन के कार्यालयों पर आक्रमण किया गया और संचार व्यवस्था के दोनों केन्द्रों को पूरी तरह नष्ट भ्रष्ट कर दिया गया। ईस्टर की छुट्टी होने से योरोपियन क्लब में कोई नहीं था इस कारण क्रान्तिकारियों का दल निराश और उदास मन होकर लौट आया। क्रान्तिकारी चार घन्टों तक मन मानी करते रहे। उनको रोकने या उनका विरोध करने वाला कोई भी नहीं था। चार घन्टों के उपरान्त वाटर वर्क्स की ओर से उन पर मशीन गन से गोलियों की बौछार हुई। उसका उत्तर क्रान्तिकारी आक्रमण कारियों ने लगातार गोलियां चला कर दिया यहां तक कि उनकी मार के कारण शत्रु की गोलियां चलना बन्द हो गई। इंडियन रिपब्लिकन आर्मी की चीटागांव शाखा की इस सफलता के उपरान्त उन्होंने १८ अप्रैल १९३० को अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार की सूर्यसेन की अध्यक्षता में स्थापना कर दी। उस क्रान्तिकारी सरकार का तात्कालिक कार्य शत्रु पर प्राप्त की विजय को स्थायी बनाने और उसकी रक्षा करने, सम्पूर्ण देश को स्वतन्त्र बनाने और उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाना था। उसके उपरान्त क्रान्तिकारियों पर मशीनगनों से आक्रमण हुआ जिसको क्रान्तिकारियों ने तुरन्त ही सफलता पूर्वक और प्रभावशाली ढंग से विफल कर दिया। सरकार की सहायता के लिए डबल मूरिंग जेट्टी सारसरी से सेना आई परन्तु क्रान्तिकारियों ने उसको भी परास्त कर दिया। उसका उन्होंने सफलता पूर्वक सामना किया।

पासा पलटा

पुलिस लाइन शस्त्रागार पर जो आक्रमण हुआ उसमें एक लडके के भाग लग गई, और उसको घटना स्थल से हटना पड़ा। उसको वहां से हटाने में क्रांतिकारी सेना के चार सैनिक मुख्य सेना से पृथक हो गए और दूर पड गए ये अभियुक्तों के कठघरे में ही फिर अपने साथियो से मिले। शत्रु (सरकार) प्रथम प्रबल आघात के कारण एक बार तो हतप्रभ हो गया। सरकार ने विभिन्न श्रोतो से सहायता एकत्रित करके अपनी शक्ति को बढाया परन्तु यह सब शीघ्र नही हो सका, कुछ समय के उपरान्त ही सम्भव हो सका। जब २० एप्रिल को गुरखा सेना बाहर से आ गई और वह क्रान्तिकारियों की खोज में फिरने लगी तब उस क्षेत्र में पुन सरकार का प्रभाव स्थापित हुआ। गुरखा सेना की शक्ति को और अधिक बढ़ाने के उद्देश्य से और अधिक सेना बुलाई गई कि जिससे क्रांतिकारी सेना का मुकाबिला किया जा सके, जिसने सरकार की प्रतिष्ठा को उस क्षेत्र में समाप्त कर दिया था।

पीछे हटना

२१ अप्रेल को सेना क्रांतिकारियो का पीछा करती हुई उनके समीप पहुँच गई। क्रांतिकारी पुलिस स्काऊटिंग दस्ते से दो मील से अधिक दूर नही थे। सरकार की सुरक्षा वली लाइट हार्स और ईस्टर्न फ्रन्टियर राइफिल्स की टुकड़ियो के आ जाने से जिनमें १५०० गुरखा सैनिक थे, शक्ति बहुत बढ गई। क्रांतिकारियों ने १६ अप्रेल को शुलुक बहार पहाडी पर आश्रय लिया। २० अप्रेल को वे फतेहाबाद पहाड़ियो की ओर चले गए और बड़ी कठिनाई से उनको बहुत कम खाना व भोजन प्राप्त हुआ। जो कुछ भी थोड़ा भोजन उन्हें मिला वह उन भूखे और प्यासे वीरों के लिए बहुत ही कम और अपर्याप्त था बडी होशियारी और परिश्रम से और बहुत बडी जोखिम उठा कर संदेशवाहक कस्बे में भेजे गए जो परिस्थिति का मूल्यांकन करें, परिस्थिति की जांच करें और अन्य क्रांतिकारी समूहों से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयत्न करें। परन्तु उनका यह प्रयत्न सफल नहीं हुआ।

जलालाबाद—क्रांतिकारियो के लिए यह आवश्यक था कि वे उन पर्वत श्रेणियो के झमघट से निकल जावें कि जहां कोई मार्ग नही थे और किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंच जावें। जबकि वे यह प्रयत्न कर रहे थे तो २२ अप्रेल को वे जलालाबाद की पहाड़ियो के पास पहुंचे जो कि चीटागांव से केवल ३ मील दूर थी। जलालाबाद की पहाडियों के समीपवर्ती क्षेत्र में जो गुप्तचर और भेदिए फैले हुए थे उनको क्रान्तिकारियों की उस क्षेत्र में उपस्थित का पता चल गया। उन्होने तुरन्त ही मुख्यालय को संदेश भेज दिया। चीटागांव के वे वीर क्रांतिकारी तीन ओर से पुलिस और सेना से घिर गए। पुलिस और सेना रेलवे ट्रेन तथा अन्य साधनों से पहाड़ियो के पास अपनी राइफिलें और लुइस गन लेकर पहुंच गई। सायंकाल पांच बजे दोनों पक्षो में युद्ध आरम्भ हो गया। दोनों ओर से तेज गोली वर्षा हुई। युद्ध ऐसा विकट और घमासान था कि अंग्रेजी सेनाएं आश्चर्य चकित थी भारत में उतना भयंकर युद्ध को लडना ब्रिटिश सेनाएं भूल गई थीं। इस भयानक युद्ध का प्रथम शहीद युवक हरगोपाल बाल (टेगरा) था जब उसका शरीर गोली से विदीर्ण हो गया तो भी उसने अपने साथियो को उत्साहित करते हुए कहा आत्म समर्पण न करना, लड़ाई जारी रखना। हरगोपाल धोती तथा कमीज पहने था उसके शरीर पर तीन घाव थे (१) वक्षस्थल की दाहिनी ओर का ६ इंच लम्बा तीन इंच

गहरा था (२) बाई जांघ और घुटने पर (३) तथा दाहिने घुटने पर एक गोलाकार घाव था। उसने पुलिस लाइन के शस्त्रागार की लूट में भाग लिया था।

त्रिपुरा सेन दूसरे शहीद थे। वे ढाका के निवासी थे, उनके वक्षस्थल के मध्य में एक घाव था बाहर की ओर कोई घाव उनकी पीठ पर नहीं था। वे खाकी कोट, कमीज, पट और मोजें पहने थे। शस्त्रागार पर आक्रमण करने में वे हरगोपाल के साथ थे। वीर गति प्राप्त करने वालों में चौथे व्यक्ति विधु भूषण भट्टाचार्य थे। उनकी बाईं जंघा में एक आर पार घाव था और उनके सिर की बाईं ओर गोली का जख्म था। वे खाकी नेकर और कमीज पहने थे। इसके उपरान्त मशीन गन की गोली वर्षा से घातक रूप से घायल होकर नरेश राय धराशायी हो गए। उनकी छाती में एक ओर से दूसरी ओर आर पार गोली का घाव था। वे खाकी नेकर कट तथा मोजे पहने थे। वे मैमनसिंह के निवासी थे और उनको योरोपियन क्लब पर आक्रमण करने के लिए नियुक्त किया गया था। जलालाबाद की पहाड़ियों के उस चिरस्मरणीय युद्ध में उस दिन नीचे लिखे व्यक्ति वीर गति को प्राप्त हुए वे युद्ध करते हुए रण भूमि में सो गए—शशांक दत्त, मधुसूदन दत्त, पुलिन विकाश घोष (गोशाल डांगा) जितेनदास गुप्त (गोवरागा) तथा प्रभास बाल। रात्रि के साढ़े सात बजे वह घमासान भयंकर युद्ध समाप्त हुआ। चटगांव के इन वीर क्रांतिकारियों की विकट मार के कारण पुलिस और सेना को वहां से हटना पड़ा। २१ एप्रिल के प्रातःकाल प्रकाश होते ही सेना और पुलिस वहां वापस आई। उन्हें रण भूमि पर दस शव मिले। गम्भीर रूप से घायल लोगों में मतीलाल कानूनगो थे। जब उनसे पूछा गया तो उन्होंने अपना नाम बतलाया। कुछ ही क्षण के उपरान्त उन्होंने 'हरि बोल' का उच्चारण किया और अपनी मातृ भूमि की स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। उनके पेट की बाईं ओर एक गोली का घाव था जो कि पीठ पर रीढ़ की हड्डी के पास कमर के कुछ इंच ऊपर आर पार निकल गया था। उनकी छाती में बाईं ओर दूसरा घाव था। वे खाकी नेकर तथा कमीज पहने थे। इन वीरों के शवों को एक जगह इकट्ठा किया गया और जलालाबाद पहाड़ी की चोटी पर उनका दाह संस्कार किया गया। जलालाबाद पहाड़ी की वह चोटी अविभाजित भारत में सबसे अधिक पवित्र स्थान बन गया जहां उन स्वतन्त्रता युद्ध के वीरों का दाह संस्कार हुआ था।

विघटन

जब कि सेना उस युद्ध के उपरान्त हट कर उस क्षेत्र को छोड़ कर चली गई तो परिस्थित वश इण्डियन रिपब्लिकन आर्मी बिखर गई एक दल दूसरे से पृथक हो गया। अतएव प्रत्येक समूह ने चटगांव के विभिन्न भागों में अपने अपने ढंग से शरण ली। एक समूह कलकत्ता की ओर चला गया। दूसरा समूह बरमा चला गया। इन समूहों की पुलिस और सेना से विभिन्न स्थानों पर मुठभेड़ें हुईं उनमें भी क्रांतिकारी वीर धराशायी हुए। उन मुठभेड़ों का भी विशेष उल्लेख आवश्यक है। जो भी फुटकर मुठभेड़ें हुईं उनमें इण्डियन रिपब्लिकन आर्मी की चटगांव शाखा की बहुत अधिक जन हानि हुई। रिपब्लिकन आर्मी ने चटगांव नगर पर अपना अधिकार जमाए रखने का पूरा प्रयत्न किया किन्तु उनका प्रयत्न विफल हो गया। सरकारी सेनाओं की शक्ति बढ़ती गई। वे अधिक प्रभावशाली हो गई और क्रांतिकारी सेना का सत्र समाप्त हो गया।

क्रांतिकारी सेना ने ऐसी विपरीत परिस्थितियों में जब कि वे चारों ओर से भयंकर शत्रु से घिरे हुए थे उस युद्ध को चलाते रहना उनके अदम्य साहस और चतुर

रण कौशल का एक सुन्दर उदाहरण था। पुलिस मुख्यालय तथा सेना की बरकों को उड़ा देने के लिए क्रान्तिकारियों ने विपुल मात्रा में विस्फोटक सामग्री एकत्रित की थी। उनकी योजना यह थी कि जेल की ऊंची दीवार को तोड़कर क्रान्तिकारियों को जो जेल में बन्द थे छुड़ा लिया जावे। ११ मई १६३१ को एक सन्देहजनक पार्सल में जिसको किसी ने अपनी सम्पत्ति नहीं बताया दिगारा छोड़ वस्तुओं के कार्यालय से आई। उस पार्सल को जिलाधीश के पास आसाम बंगाल रेलवे प्रशासन ने भेजा। जब वह पार्सल एक सब डिवीजनल आफिसर के सामने खोला गया तो उसमें ३०० जीवित तथा २० बाल कारतूस निकले। एक खाली मकान जो जमालखाना में स्थित था उसको कुछ व्यक्तियों ने फर्जी नाम से किराए पर ले लिया था। जब कुछ स्त्रियां एक कमरे को साफ करने के लिए उसमें गई तो उन्हें कुछ तार जमीन से निकले हुए दिखलाई दिए। जब पुलिस वहां आई और उसने खोज बीन की तो पता चला कि वहां तीन कनस्तर मोमजामे में लपेटे हुए हैं जिनमें बहुत विनाशकारी विस्फोटक पदार्थ भरा हुआ था वे कनस्तर ठीक उसी प्रकार के थे जैसे कि कुछ दिन पूर्व कचहरी पहाड़ी पर पाए गए थे।

जो अन्तर तक क्रान्तिकारी था

अर्धेन्दु दस्तीदार एक दूसरे क्रान्तिकारी समूह का सदस्य था। जब वह बालक ही था तभी उसने अपने पिता का आश्रय छोड़ दिया क्योंकि राजनीतिक मामलों में उसके पिता के विचारों में गहरा मतभेद था। वह मास्टर-दा के सुयोग्य नेतृत्व में चीटागांव के क्रान्तिकारी दल का सक्रिय सदस्य बन गया। शस्त्रागार को लूटने के कुछ दिनों पूर्व ही वह अत्यन्त शक्तिवान विस्फोटक बम बनाने के उपयोग में आने वाले पिकरिक एसिड पाउडर बनाते समय दुर्घटना वश गम्भीर रूप से जल गया। उसके घाव पूरी तरह से ठीक नहीं हुए थे कि वह उस क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हो गया जिसने १८ तारीख को पुलिस लाइन पर आक्रमण किया था। क्रान्तिकारियों के मुख्य दल के साथ वह जलालाबाद की पहाड़ियों में चला गया। वहां अंग्रेज सिपाहियों से जो युद्ध हुआ और गोलियों का आदान प्रदान हुआ उसमें वह छटा व्यक्ति था जो घायल हुआ। उसके पेट में एक घातक घाव हो गया जिससे कि वह बेहोश हो गया और उसको मरा हुआ समझ रण भूमि पर ही छोड़ दिया गया।

कुछ समय के उपरान्त उसको होश आया और उसने देखा कि उसका एक दूसरा साथी भी उसी की तरह मरा हुआ समझ कर छोड़ दिया गया था उठने का प्रयत्न कर रहा था और उस स्थान से जाना चाहता था। मृत्यु की बाट जोहने वाले उस वीर ने उससे अपने पास आने को कहा अशक्त अर्धेन्दु ने उस ऊबड़ खाबड़ पहाड़ी पर बहुत चेष्टा करके भी कुछ गज ही सरक पाया। उसका प्रयास यह था कि कुछ समय के उपरान्त सम्भवतः उसमें इतनी शक्ति आ जावे कि वह अपने साथी के साथ उस स्थान से जा सके। उसके लिए चल सकना असम्भव था अतएव उसने वहां से जाने की आशा छोड़ दी और अपने को भाग्य के भरोसे छोड़ दिया। जब उसने देखा कि उसका मित्र साथी उसे ऐसी अवस्था में छोड़ जाने से हिचक रहा है तो अर्धेन्दु ने उससे हाथ जोड़ कर प्रार्थना की, उसे शीघ्रातिशीघ्र अपने को खतरे से बचाने के लिए वहां से चले जाना चाहिए। उससे अपने मित्र द्वारा विदा लेते समय उसने अन्तिम प्रार्थना यह की कि वह मृदय मास्टर दा से कह दे यदि भाग्य उसको उनसे मिलाए कि अर्धेन्दु को अन्तिम सांस तक अपने नेता के वे शब्द याद थे 'स्वाधीनता अथवा मृत्यु।'

अरधेन्द्र के एक घाव दाहिने हाथ के मध्य था उसके दाहिने हाथ की छोटी अंगुली टूट गई थी और उसके पेट की बाई ओर घातक घाव था। उसकी दाहिनी जांघ के घाव पर पट्टी बंधी थी। वह उसके विस्फोट में जल जाने के कारण घाव हुआ था। युद्ध के दूसरे दिन अर्थात २३ अप्रेल को एक छोटा सा दल पहाड़ी की चोटी पर चढ़ कर आया और उसने अरधेन्द्र को मरणासन्न अवस्था में पाया। वे लोग उस वहां से दस बजे के पूर्व उठाकर ले गए। उसको एक सशस्त्र ट्रेन में चीटागांव ले जाया गया और उसी दिन मध्याह्नोपरान्त उसे एक बज कर चालीस मिनट पर जनरल हास्पिटल में दाखिल करा दिया गया। पुलिस ने उससे बहुत कुछ पूछा परन्तु उसने अपना और अपने पिता का नाम बताने के अतिरिक्त और कुछ बतलाने से इनकार कर दिया। पुलिस तथा गुप्तचरों ने बहुत सर पटका कि उसके गांव का नाम वह बतला दे परन्तु वे सफल नहीं हुए उनके सारे प्रयत्न और युक्तियां विफल हो गईं। अरधेन्द्र ने यह भी बतलाने से इनकार कर दिया कि उसको ये घाव कैसे लगे। पुलिस और गुप्तचरों के समक्ष वह एक कठोर चट्टान के समान अडिग बना रहा। जब पुलिस तथा गुप्तचरों ने सारे हथकण्डों का प्रयोग कर लिया और वे असफल रहे तो सदर सब डिवीजनल आफिसर जो कि मरने वाले अथवा मरे हुओं से अपराध स्वीकार करने के वक्तव्य लिखवा लेने के लिए प्रसिद्ध था और कुख्याति अर्जित कर चुका था रात्रि को उसके पास आया। उसने आते ही प्रत्येक व्यक्ति से यहां तक कि सर्जन जो कि अरधेन्द्र की गम्भीर दशा के कारण उसकी निरन्तर देख भाल कर रहा था उसके कमरे से बाहर निकल जाने के लिए कहा। सब डिवीजनल आफिसर ने प्रगट रूप में उन लोगों को कमरे से बाहर निकल जाने के लिए यह बहाना लेकर कहा कि कमरे में शोर गुल होने से रोगी को बहुत कष्ट और असुविधा हो रही है। आदेशानुसार सभी लोग यहां तक नर्स को भी बाहर जाना पड़ा। पीछे क्या हुआ कोई नहीं जानता।

जब मुकदमा हुआ तो मजिस्ट्रेट ने अरधेन्द्र का एक पूरा अपराध स्वीकारोक्ति का बयान अदालत में प्रस्तुत कर दिया जिसमें अन्य कई अभियुक्तों को षड्यन्त्र में सम्मिलित बताया गया था। असिस्टेंट सर्जन को कई बार रोगी को इसके बाद उस थोड़े से समय के अन्तर्गत देखने आना पड़ा क्योंकि उसका जीवन दीपक बुझ रहा था। सरकारी वकील संसार को यह कह कर धोखा देना चाहता था कि अरधेन्द्र ने स्वत अपनी इच्छा से वह अपराध स्वीकारोक्ति का बयान दिया है। इससे बड़ा धोखा और झूठ और क्या हो सकता था। अरधेन्द्र मृत्यु से कुछ घण्टे और युद्ध करता रहा और रात्रि में एक बज कर पचास मिनट पर २४ अप्रेल १६३० को (२३ अप्रेल की रात्रि और २४ अप्रेल के प्रातःकाल के मध्य) उसकी मृत्यु हो गई। मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए अरधेन्द्र जिया मरा। ऐसे ही बलिदानियों की नींव पर भारत की स्वाधीनता का भवन खड़ा हुआ है।

प्रमाद का दण्ड

जबकि अग्निगिलियरी सेना के शस्त्रागार पर सफलता पूर्वक आक्रमण किया गया तो यह निश्चय किया गया था कि उसको आग लगादी जावे जिससे कि जो अस्त्र शस्त्र वहां बच रहें नितान्त बेकार हो जावें। हिमांशु विमल सेन ने अपने ऊपर यह भार लिया था कि वे शस्त्रागार के अन्दर पेट्रोल छिड़का देंगे जिससे कि शस्त्रागार के विनाश का काम सरल हो जावेगा। उसने यह काय अवश्य ही पूरा कर दिया परन्तु वह स्व

करने मे उन्होने अपने वस्त्रो पर भी असावधानी से कुछ पट्रोल के छींटे पड़ने दिए। जैसे ही उन्होने आग लगाई शस्त्रागार तथा उनका शरीर दोनो एक साथ जल उठे। उनका समस्त शरीर बुरी तरह जल गया उनको उनके चार साथियो द्वारा उन्हें घटना स्थल से उठा कर ले जाना पड़ा। उन चार मे से दो शीर्षस्थ नेता थे जिन्होने आक्रमण का सचालन किया था और उस आक्रमण की योजना बनाई थी। घायल हिमांशु विमल सेन को चन्दनपुरा क्षेत्र म ले जाया गया वहा एक ऐसे मकान में जिसके स्वामी ने उसे छोड रखा था उन्हें रखकर उनकी देखभाल के लिए जो भी उस परिस्थिति और उस समय उनके मित्र तथा प्रशसक मिल सकते थे-उन पर छोड दिया गया। सूचना मिलने पर पुलिस उस स्थान की खोज करने के लिए वहा १९ अप्रेल १९३० को आई। अधिकारी ने मकान के मुख्य द्वार पर देखा कि ताला लगा है तो उसको इस बात की आशका और सदेह हुआ कि उस मकान मे कोई व्यक्ति है भी या नही। इत्तफाक से उसको घर के अन्दर किसी व्यक्ति के पलग पर बिछी चादर पर हिलन डुलने का शब्द सुनाई दिया। उसने मुख्य द्वार को खटखटाया तो एक दूसरा दरवाजा खुला। मकान के अन्दर एक व्यक्ति चारपाई पर लेटा था। जिसके चेहरे हाथ और पैरो पर जलने के बहुत चिन्ह थे। एक युवक रोगी के पलग के पास बठा था। दोनो को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और मकान की अच्छी तरह तलाशी लेने के बाद उनको पुलिस कोतवाली ले गई। कोतवाली से उन्हे चीटागाव जनरल अस्पताल में ले जाया गया। अस्पताल में उन्हें सायकाल सवा सात बजे भर्ती किया गया।

उनके समस्त शरीर पर मिट्टी पोत दी गई जिसको धोने से उन्हें मर्मान्तिक पीड़ा होती थी। हिमांशु ने २० अप्रेल को एक बयान दिया जबकि उनके असहाय पीडा हो रही थी और उनके स्नायु मडल पर दबाव था। उनका अपने स्नायु तन्तुओं पर नियन्त्रण नहीं रहा था। २१ अप्रेल को रोगी को ज्वर हो गया। यह इस बात का द्योतक था कि उनको सप्टिक हो गया है। रोग बढता गया और उसी रोग से २८ एप्रिल १९३० को जेल हास्पिटल मे उनकी रात्रि को साढे नौ बजे मृत्यु हो गई।

स्वयं अपने द्वारा अपने शरीर पर घावो से मृत्यु

युवक अमरेन्द्र नदी उस दल के साथ था जिसने पुलिस लाइन के शस्त्रागार पर हमला किया परन्तु वह मुख्य दल से हट कर किसी प्रकार दूर चला गया। अपने अन्य साथियो की तरह वह भी सुरक्षित नही था क्योंकि पुलिस नगर के कोने कोने पर दृष्टि गडाए हुए थी। २४ अप्रेल १९३० को वह ग्रेजुयेट हाई स्कूल में दिखलाई दिया। उस समय स्कूल बिलकुल खाली था। उसके हाथो में एक रिवाल्वर और एक पिस्तौल था। पुलिस ने उसका पीछा किया वह स्कूल की इमारत से निकल कर मुख्य सड़क (सरदारगढ सडक) पर भागा और अलकरान लेन म एक पुलिया के नीचे उसने शरण ली। पुलिस भी तुरन्त ही वहा पहुच गई। अमरेन्द्र ने जिस स्थान पर आश्रय लिया और जिस स्थान अर्थात् पुलिया के नीचे वह छिपा था वहा से गोली चलाना आसान नही था। उसको उस विशेष स्थिति के कारण उसके लिए पुलिस वालो से युद्ध कर सकना कठिन था पर फिर भी उसने पुलिस से बड़ा मुकाबला किया। पुलिस ने कई बार उससे आत्म समर्पण करने के लिए अनुरोध किया परन्तु उसने आत्म समर्पण करना अस्वीकार कर दिया। जब अमरेन्द्र की ओर से गोली चलना बन्द हो गया और सब शान्त हो गया तो पुलिस उसको उसके आश्रय स्थान से निकाल कर ले आई। उसके शरीर पर गोली-

कि जख्म थे। पुलिस उसे हास्पिटल ले गई परन्तु वहां पहुंचने के कुछ समय के उपरान्त ही वह वीर चल बसा। सिविल सर्जन की रिपोर्ट के अनुसार उसके जख्म घातक थे क्योंकि उसने एक गोली जो ठुड्डी पर मारी थी वह उसके सर से निकली थी और दूसरा कारण यह था कि उसकी खाल काली पड़ने लगी थी। उसकी छाती पर भी घाव था। छाती पर अमरेन्द्र ने जो गोली मारी उससे उसकी मृत्यु नहीं हुई तो उसने दूसरा फायर ठोडी पर किया जो कि सफल हुआ।

फालर पोल का युद्ध

जब क्रान्तिकारियों की सेना बिखर गई तो जो मुख्य दल से बिछुड़ गए थे छोटे छोटे दल बना कर भाग खड़े हुए। उन छोटे क्रान्तिकारियों दलों ने सरकार की शक्ति के व्यक्तिगत थे ट्रो पर आक्रमण करने की योजना बनाई। इस प्रकार के एक छोटे से दल ने जिसमें ६ युवक थे—स्वदेश राय राजतसेन, देवप्रसाद गुप्ता, मनोरंजन सेन तथा अन्य दो युवक थे—वे अपने छिपने की जगह से चले और ६ मई १६३० को सामपान (एक प्रकार की नाव) के द्वारा योरोपियन क्लब पहुंचने का कार्यक्रम बनाया जिससे उस पर आक्रमण किया जा सके।

यह सूचना कि कुछ सदेहास्पद व्यक्ति सामपान द्वारा कर्णफुली नदी में सदेहजनक ढग स जा रहे हैं कोतवाली पहुंची। यह खबर मिलने पर कुछ पुलिस अधिकारी कुछ सशस्त्र सैनिकों को साथ लेकर नाव के द्वारा उनकी खोज में दौड़े और उन्होंने सामपान का पीछा किया। सामपान ने इन युवकों को साम्पूर हाट पर उतार दिया। जबकि पुलिस की नाव नदी के बीच में पहुंची तो उस पर एक टार्च की रोशनी पड़ी जिन युवकों का पुलिस पीछा कर रही थी व नदी के दूसरे किनारे पर पहुंच चुके थे और पुलिस ने पांच या ६ व्यक्तियों को नदी के किनारे से फालर पोल की ओर जाते देखा। गावों वालों ने तथा यूनियन बोर्ड के अध्यक्ष ने जो एक मुसलमान था ने देखा कि ६ युवक तेजी से गांव की सड़क पर जा रहे हैं प्रत्येक के हाथ में एक पिस्तौल भी है और उनकी पोशाकें भिन्न भिन्न प्रकार की थी। अतएव उन भागने वाले युवकों का गाव ने पीछा किया और कठिन कोशिशों पर वे उनको ललकारते थे तथा उन पर आक्रमण करने का प्रयत्न करते थे। युवकों ने अपने को पकड़े जाने से बचने के लिए कुछ गोलियां या ही चलाई जिससे पांच मिनट के अन्तर में दो व्यक्ति मर गए। दो युवकों जिनमें से एक फनीन्द्र नन्दी था—को गाव वालों ने धर दबाया। एक पुलिस कान्स्टेबिल असभ्य बरुआ ने उनमें से एक युवक को पकड़ने का प्रयत्न किया तो उन्होंने उस पर गोली चलाई जिसके परिणाम स्वरूप वह ६ मई की ठीक मध्य रात्रि को मर गया। अब चार युवक जो अब स्पष्ट रूप से देखे जा सकते थे उन्होंने अपना रास्ता पूर्व को कर लिया और व तेजी से खेतों में से होकर आगे बढ़े क्योंकि उनका पीछा करने वाले तथा अन्य लोग पश्चिम से आ रहे थे। कुछ समय तक यह दौड़ होती रही और इसी बीच एक बड़ा पुलिस दल उच्च पुलिस अधिकारियों के नेतृत्व में वहां पहुंच गया। जब कि उन चार क्रान्तिकारियों का पुलिस दल पीछा कर रहा था तो दो दो चार चार करके थोड़ी थोड़ी संख्या में लोग उस मार्ग पर आ गए और उस मार्ग पर जिस पर कि क्रान्तिकारी आगे बढ रहे थे एक बहुत बड़ी भीड़ उनके आगे इकट्ठी हो गई। पुलिस दल जब जुल्दा नामक स्थान पर पहुंचा तो लोगों ने उन्हे बांसो का झुरमुट दिखलाया जहां बांसों के झुरमुट में चार व्यक्ति एक दूसरे से सटे हुए लेटे थे। ऊपर

की किरण फूटने से पूर्व समीरपुर गांव में दोनों ओर से कुछ देर के लिए तेज गोली चली परन्तु बाद को बांसों के झुरमुट से गोली चलना पूरी तरह बन्द हो गया। प्रात काल होने पर जब पुलिस उन क्रांतिकारियों के आश्रय स्थल पर पहुंची तो उसने देखा कि तीन क्रांतिकारी युवक देवप्रसाद, रजत और मनोरंजन मर चुके थे और चौथा स्वदेश मृत्यु की बाट जोह रहा था। पुलिस ने उसको गिरफ्तार कर लिया परन्तु गिरफ्तार होने के उपरान्त कुछ ही घण्टों में उसकी मृत्यु ने उसको भावी सभी कष्टों और परेशानियों से मुक्त कर दिया।

उनके शरीर को देखने से पता चलता था कि अन्य जख्मों तथा चोटों के अतिरिक्त अपने स्वयं के द्वारा लगाए गए घाव चारों के शरीरों पर विद्यमान थे जिससे इस बात का संकेत मिलता था कि पुलिस के बन्दी बनने की अपेक्षा उन्होंने स्वयं अपने हथियारों से ही अपनी मृत्यु बुलाना अधिक पसंद किया। यह चारों युवक १८ एप्रिल १९३० के उस बड़े आक्रमण में सम्मिलित थे जिसने युद्ध के एक दूसरे क्षेत्र में इतिहास का निर्माण किया था। स्वदेश और मनोरंजन पुलिस लाइन पर आक्रमण में शामिल थे और रजत' अग्निकलियरी सेना के शस्त्रागार के आक्रमण में सम्मिलित था। कालार पोल में गिरफ्तार होने वाले दो क्रांतिकारियों तथा अन्य दस क्रांतिकारियों पर सरकार ने जो अभियोग चलाया उसमें १ मार्च १९३२ को फैसला सुना दिया गया। बारहों अभियुक्तों को आजीवन कारावास तथा काले पानी का दण्ड दे दिया गया।

चन्दर नगर पर सहसाक्रमण

बाल बाल पुलिस से बचते हुए तथा अकथनीय कष्टों को सहते हुए चार क्रांतिकारी कलकत्ता पहुंच गए। उस कठिन परिस्थिति में उनका स्नेह पूर्ण स्वागत हुआ और कई गुप्त आश्रय स्थलों को बदलने के उपरान्त विशेष कर ६ राजा बसन्त राय रोड कालीघाट में आश्रय पाकर अन्तत उनको फ्रेंच अधिकार में चन्दर नगर में एक दुमंजिले मकान में रख दिया गया। वह मकान एक एकाकी स्थान पर था। वह हुगली नदी से १२० गज पश्चिम में डाइलपारा नामक स्थान में स्थित था। ग्राड ट्रंक सड़क से निकली हुई कई गलियां वहां तक जाती थी और मकान के चारों ओर एक नीची दीवार थी जो उसे घेरे हुए थी। कलकत्ते से एक पुलिस दल अपने कप्तान की आधीनता में अर्ध रात्रि को चलकर २ सितम्बर १९३० को प्रात काल (अंधेरे में) २ १५ पर चन्दर नगर पहुंचा। ढकी हुई टार्चों की रोशनी में पुलिस दल उस अन्धकार में आगे बढ़ता गया और मकान की दीवार को कूद कर उसने उस मकान को चारों ओर से घेर लिया। पुलिस ने उस मकान का घेरा इतना कड़ा किया कि किसी के निकल भागने की सम्भावना ही समाप्त हो गई। फ्रेंच शासन से पहले हुई बातचीत के अनुसार आक्रमणकारी पुलिस दल के प्रमुख ने चन्दर नगर के पुलिस अधिकारी से सम्पर्क स्थापित कर उससे कहा कि वे वह अपने आदमियों के साथ वहां आक्रमण में उपस्थित हों और उनकी सहायता करें यदि उनको सहायता की आवश्यकता पड़े। आक्रमणकारी पुलिस दल का मुख्य अधिकारी दूर नहीं गया था कि दोनों ओर से तेज गोलियां चलाना शुरु हो गई और वह आगे न जाकर घटना स्थल पर वापस लौट आया। उस मकान के अन्दर जो क्रान्तिकारी थे उन्होंने देख लिया कि अपरिचित लोग अर्ध रात्रि को दीवार कूद कर अहाते में घुसे हैं परन्तु वे वस्तु स्थिति को तुरन्त ताड़ गए। चारों क्रांतिकारियों ने दक्षिण में पीछे के दरवाजे से निकल जाने का प्रयत्न किया जो कि तालाब के किनारे था। साथ ही वे

पुलिस पर गोली भी चलाते जाते थे। एक दो मिनट दोनों ओर से तेज गोलियाँ चलीं जब कि घिरे हुए क्रान्तिकारियों का एक दल तालाब के किनारे एक झाड़ी में छिपा दिखलाई दिया और पुलिस ने उनको गिरफ्तार कर लिया। अन्य दो को पुलिस ने बिना युद्ध किए ही कुछ मिनटों में ही गिरफ्तार कर लिया। चौथा व्यक्ति 'जीवन' जिसका उपनाम मक्खन घोषाल था वह जब निकल भागने का प्रयत्न कर रहा था तालाब के किनारे पर पुलिस द्वारा घायल हो गया। वह तालाब में गिर पड़ा और डूब गया। उस कमरे में जिसमें वे फरार क्रान्तिकारी रहे थे वहां भिन्न भिन्न प्रकार के बहुत से औजार मिले उदाहरण के लिए बड़ी संख्या में वहां वाइस छेनी रेती आरे सीमे के टुकड़े बहुत बड़ी राशि में अलूमीनियम एलाय तथा पीली मिट्टी मिली। जिन क्रान्तिकारियों को पुलिस ने वहां गिरफ्तार किया उन्हें पुलिस चीटागाव ले गई और जो शस्त्रागार पर आक्रमण का मुख्य अभियोग विशेष न्यायालय के सामने चल रहा था उसके अभियुक्तों में उनको भी सम्मिलित कर दिया गया।

आंशिक सफलता

जब कि उनका अस्तित्व ही खतरे में था और उनके प्राण पतले डोरे से लटक रहे थे तो भी १८ एप्रिल, १९३० में शस्त्रागार पर आक्रमण करने वाले वे क्रान्तिकारी वीर उस युद्ध को जो उन्होंने छेड़ा था उसको बन्द करना नहीं चाहते थे। अपने छिपने के स्थान से वे पुलिस की गतिविधियों को जानने का प्रयत्न करते रहते, उनके कार्य कलापों की सूचना प्राप्त करते और यदि उनको अवसर मिल जाता तो वे उनका पीछा करते थे। उनके पास यह समाचार पहुंचा कि इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस का निरीक्षण करने के लिए दौरे पर निकले हुए हैं तुरन्त ही क्रान्तिकारियों ने यह निर्णय कर लिया कि दौरे में उन पर आक्रमण किया जावे। यह कार्य रामकृष्ण विश्वास और उसके साथियों के सपुर्द किया गया। वे लोग भयानक खतरे की तनिक भी परवाह न कर जो उनके प्रत्येक कदम पर उनका पीछा कर रहा था अपने छिपने के स्थान से बाहर निकले।

इन्स्पेक्टर जनरल चीटागाव का दौरा समाप्त करने [redacted] उपरान्त कलकत्ता जाने वाली डाक गाड़ी से लकशम और चांदपुर के मार्ग से ढाका की ओर चला। गाड़ी लकशम दो बजे रात्रि को पहुंची। इन्स्पेक्टर तरनी मुकर्जी जो रेलवे पुलिस से सम्बद्ध था इन्स्पेक्टर जनरल की चांदपुर में अगवानी करने के लिए लकशम में गाड़ी में चढ़ा। उसी दूसरे दर्जे के डिब्बे भरे थे दूसरे दर्जे में उसको कोई स्थान नहीं मिला। अस्तु तरनी इन्स्पेक्टर जनरल के पास प्रथम श्रेणी के कूपे में चला गया। एक क्रान्तिकारी आक्रमणकारी ने अपने को हरे और दूसरे ने अपने को लाल रपर से ढक रक्खा था। वे चाय की स्टाल की ओर से आए इन्स्पेक्टर जनरल के डिब्बे को पार कर इन्स्पेक्टर जनरल जिस डिब्बे में था उससे आगे वाले डिब्बे में चढ़ गए। गाड़ी एक दिसम्बर १९३० को चांदपुर प्रातः काल ४ बजे पहुंची। जैसे ही गाड़ी रुकी इन्स्पेक्टर तरनी मुकर्जी ने अपने कूप की खिड़की खोली और चांदपुर के राजकीय रेल्वे पुलिस के सब इन्स्पेक्टर पुलिस से अपना दरवाजा खोलने को कहा। जब उसके डिब्बे का दरवाजा खुल गया तो तरनी गाड़ी से उतरा। उसका चेहरा गार्ड के डिब्बे की ओर था। स्टेशन पर जो पुलिस अधिकारी थे उन्होंने उसे सल्यूट किया। कुछ ही सेकिण्डों में तीसरे दर्जे के कम्पार्टमेंट की ओर से वहां दो युवक प्रगट हो गए और उन्होंने पीछे के पीछे से कई गोलियां चलाई।

घायल इन्सपेक्टर तरनी लड़खड़ाते हुए रेलवे पुल की ओर भागा जिससे कि पुल की सीढ़ियों के नीचे वह आश्रय ले सके परन्तु वह प्लेट फार्म पर गिर पड़ा। सब इन्सपेक्टर, तथा इन्सपेक्टर का अंग रक्षक दोनों ही भाग खड़े हुए और वे अपनी सुरक्षा के लिए स्टेशन के एक कक्ष में घुस गए। दोनों युवक क्रांतिकारियों ने उनका कुछ दूर तक अपने हाथों में रिवाल्वर लिए हुए पीछा किया। इन्सपेक्टर जनरल ने जब गोली चलने की आवाज सुनी तो उसने अपने डिब्बे की खिड़की खोली और तरनी के प्लेट फार्म पर गिरे हुए शरीर पर आक्रमण का दृश्य देखा। उसने खिड़की से गोली चलाई किन्तु निशाना चूक गया। उसने दूसरी बार गोली चलाने की कोशिश की तो उसका स्वचालित पिस्तौल खराब हो गया जम गया चला नहीं। उसके सेवक ने भी उन दोनों युवकों पर कुछ गोलियां चलाई, वे चूक गई।

इन्सपेक्टर जनरल ने अपने सशस्त्र अंगरक्षक के साथ दोनों क्रांतिकारी युवकों का पीछा किया। दोनों युवक स्टेशन के उत्तर की ओर भागे जहां रेल के डिब्बों की लम्बी पंक्ति खड़ी थी जिससे कि उनका पीछा करने वालों को वे दिखलाई नहीं दिए और वे दोनों अंधेरे में गायब हो गए। तरनी को जब स्थानीय अस्पताल में ले जाया जा रहा था तो उसकी मृत्यु हो गई। युवक क्रांतिकारियों का अन्य पुलिस अधिकारियों ने पीछा करना जारी रक्खा। उन अधिकारियों को उस दुखान्त घटना की इस बीच खबर मिल गई थी और वे घटना स्थल पर पहुंच गए थे। अतिरिक्त पुलिस सुपरिंटेंडेंट अपनी मोटर कार में चादपुर की ओर चला जैसे ही वह मेहर कानी रेलवे स्टेशन के पास से निकला जो चादपुर से बीस मील और लगभग इतनी ही दूर पर कोमिल्ला से था तो उसने दो युवकों को जो कि हरे और लाल रेंगिंग में थे उसको बचा कर निकलने का प्रयत्न करते हुए देखा पुलिस अधिकारी उनके पास पहुंच गया और उसने उनसे जो प्रश्न पूछे उन्होंने जो उत्तर दिए उससे उसके मस्तिष्क में जो उनके प्रति संदेह उत्पन्न हो गया था वह दूर नहीं हुआ।

पुलिस अधिकारी ने साधारण रूप से रामकृष्ण के शरीर की तलाशी ली तो उसको एक कठोर वस्तु का आभास हुआ जो कि उसकी कमर में छिपी हुई थी। जब उसके साथी की कमीज को उठाया गया तो एक पूरी तरह भरा हुआ रिवाल्वर दिखलाई दिया। जब रामकृष्ण की भी इसी प्रकार तलाशी ली गई तो उसके पास भी एक दूसरा भरा हुआ रिवाल्वर तथा एक अलूमोनियम बम मिला। उनको दोपहर १२.४५ के समय गिरफ्तार कर लिया गया। दोनों बंदियों को ३ जनवरी १९३१ को एक विशेष न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया गया। २४ जनवरी १९३१ को निर्णय सुना दिया गया। जज ने रामकृष्ण विश्वास को प्राणदण्ड और उसके साथी को आजन्म कठोर कारावास और काले पानी की सजा दे दी। फैसले की पुष्टि के लिए अभियोग को उच्च न्यायालय में भेजा गया। उच्च न्यायालय सत्रह मार्च को बैठा और उसने ७ मार्च को विशेष न्यायालय के निर्णय की पुष्टि कर दी।

रामकृष्ण विश्वास को अलीपुर के सेन्ट्रल जेल में ४ अगस्त १९३१ को एक बजे रात्रि को फांसी दे दी गई। रामकृष्ण अनेक गुणों का धनी था। वह अपने स्कूल का अत्यन्त मेधावी छात्र था और जिले में १९२८ के मैट्रिक्यूलेशन की परीक्षा में प्रथम रहा था। वह एक अत्यन्त कुशल खिलाड़ी था और प्रत्येक प्रकार के शारीरिक श्रम में वह औरों से कहीं आगे रहता था। सभी प्रकार के शारीरिक श्रम के कार्यों में वह दक्ष

था उसकी क्रान्तिकारी भावना की गहनता के सम्बन्ध में इतना कहना ही पर्याप्त है कि शस्त्रागार पर आक्रमण के पूर्व बम तैयार करने के लिए पिकरिक एसिड बनाते समय जल गया था। वह उससे ठीक हो गया। परन्तु ऐसे खतरनाक काम जिनमें प्राणों की जोखिम थी उसे अपने निर्धारित क्रान्तिकारी मार्ग से विचलित न कर सके।

एक साथ छुटकारा

अनेक क्रान्तिकारी युवकों के साथ जिन पर पुलिस अधिकारियों की कोपदृष्टि थी सत्रह वर्षीय युवक सुबोध-दे भी १८ अप्रैल १६३० के शस्त्रागार पर आक्रमण के सम्बन्ध में गिरफ्तार हुआ। उसको बंगाल दण्ड विधि संशोधन अधिनियम (बंगाल क्रिमिनल अमेंडमेंट एक्ट) के अन्तर्गत गिरफ्तार कर धीदागांव जेल में कैद कर दिया गया था। वहा से नवम्बर १६३० में उसको प्रेसीडेंसी जेल में भेज दिया गया। वह बीमार पड़ गया। डाक्टरी जांच से पता चला कि उसको मोतीझरा (टाइफाइड) का ज्वर है जेल में डाक्टरी चिकित्सा से उसके स्वास्थ्य में सुधार के जब कोई चिन्ह दृष्टि गोचर नहीं हुए तो अप्रेल के प्रथम सप्ताह में उसको मेडिकल कालेज के अस्पताल में स्थानान्तरित कर दिया गया। वहां उसकी दशा और भी अधिक बिगड़ती गई। १५ अप्रेल १६३१ को उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के दो चार दिन पूर्व सरकार ने उसको जेल से मुक्त कर दिया। मानो सरकार ने उसको दूसरी दुनियां स्वर्ग में जाने के लिए उसके पैरों में जो पुलिस की बेड़ियां पड़ी थीं उनको खोल दिया हो।

सुबोध दे के दुखी और शोकातुर सम्बन्धी उसके शव को नीमतल्ला घाट दाह संस्कार के लिए ले गए वहाँ उसके सम्बन्धियो मित्रों और प्रशंसकों ने उसका दाह संस्कार किया। सभी जन उस समय तीव्र शोक से व्याकुल हो उठे थे।

भयंकर शूटिंग

सूर्य सेन अपने गुप्त आश्रय स्थान से अपने प्राणों को अपनी हथेली में लेकर सैनिकों, जो कि कम उमर के युवक थे के द्वारा युद्ध का संचालन कर रहा था। उसने पुलिस इन्स्पेक्टर अशानुल्ला की हत्या कराने की योजना बनाई और एक लड़के को यह कार्य करने के लिए चुना। उसने अपने शिष्य को रिवाल्वर चलाने और लक्ष्य पर निशाना लगाने की शिक्षा दी। ३० अगस्त १६३१ को टाऊन क्लब और कोहिनूर टीम में मैच था। अशानुल्ला का टाऊन क्लब की टीम से गहरा सम्बन्ध था और वह उसमें गहरी रुचि रखता था। खेल समाप्त हो चुका था। अपनी टीम के विजयी होने और रेलवे कप को प्राप्त करने के उपलक्ष में अशानुल्ला अत्यन्त हर्षित और प्रफुल्लित हो रहा था कि एक लड़का उसके पास आ या तेजी से उसने रिवाल्वर निकाला और एक के बाद दूसरी चार गोलियां दाग दीं। एक गोली ने अशानुल्ला के हृदय को विदीर्ण कर दिया। अशानुल्ला पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसका मुंह नीचे की ओर था और उसकी पीठ से अत्यधिक रुधिर तेजी से निकल रहा था। अशानुल्ला की इस लिए हत्या करने का निर्णय लिया गया क्योंकि शस्त्रागार पर आक्रमण के मुकदमें में जांच करने तथा मुकदमा चलाने के लिए प्रमाण तथा गवाही आदि जुटा कर मुकदमा चलाने का काम उसके सुपुर्द किया गया था और वह उन क्रान्तिकारियों को ढूंढने में जो कि भाग कर भूमिगत हो गए थे खोज करने में अत्यधिक उत्साह दिखा रहा था।

घटना के उपरान्त गोली चलाकर हत्या करने वाले लड़के ने भागने का प्रयत्न नहीं किया। अशानुल्ला के अत्यन्त निकट तीन व्यक्ति खड़े थे जिसमें से एक उसको

उत्साह से बधाई देता हुआ ओर से हाथ मिला रहा था। लड़के को निश्चय हो गया था कि उसकी गोली ने अपना काम कर दिया है अस्तु वह बिना हिले डुले वहीं खड़ा रहा। जसे ही अशानुल्ला भूमि पर गिरा समस्त खेल का मदान खाली हो गया सारी भीड चली गई थी अस्तु उसके लिए यह सम्भव नहीं था कि खेल के मैदान के चारों ओर जो दर्शकों की भीड थी वह उनमें मिलकर गायब हो जाता। उसको एक पुलिस अधिकारी ने जो उस स्थान पर घटना के बाद आया गिरफ्तार कर लिया। उसको इतनी निममता और अमानवीय ढग से पीटा गया कि वह बेहोश हो गया और बेहोशी की दशा में ही थाने ले जाया गया। इस घटना के बाद चीटागांव तथा उसके उपनगरों पर मानो रौरव नरक उतर आया हो। एक जाति विशेष के मकानों पर पुलिस नगर तथा समीपवर्ती कुख्यात गुण्डों को साथ लेकर गई। जो भी १४ वर्ष से लेकर ४५ वर्ष के पुरुष थे उनको अत्यन्त निममता से पीटा गया और उन्हें सड़क पर घसीट कर थाने तक ले जाया गया। जिस बन्दी गृह मे इन कैदियों को बोरों की तरह एक दूसरे पर ठूस दिया गया उसकी नाली से रुधिर बहने लगा।

पुलिस ने दूकानों तथा अन्य निजी सम्पत्तियो को नष्ट भ्रष्ट कर दिया और मन माने ढग से लूटा और बहुतों म आग लगा दी। पुलिस ने इस नशस और घणित लूट पाट को साम्प्रदायिक दगा प्रसिद्ध कर दिया। यह लूटपाट अग्नि काण्ड तीन दिन तक कल्पनातीत नृशसता से चलती रही और शान्ति और सुव्यवस्था रखने वाली पुलिस के दर्शन भी नहीं हुए। लोगों को छुरे से मारने की घटनाओं की रिपोर्ट जिला केन्द्र में पहुचती रही परन्तु अधिकारियों ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया। १६ सितम्बर १९३१ को सदर सब डिवीजनल आफिसर ने अभियुक्त पर हत्या करने और गर कानूनी शस्त्र रखने के आरोप लगाए और उसको सशन सपुर्द कर दिया। १४ अक्टोबर १९३१ को ज्यूरी ने अभियुक्त को निर्दोष घोषित कर दिया। परन्तु सेशन जज ने ज्यूरी से असहमति प्रगट की और मुकदमें को उच्च न्यायालय में भेज दिया। उच्च न्यायालय ने अभियुक्त के बहुत छोटी उमर होने के कारण उसको आजीवन कारावास तथा काले पानी का २२ सितम्बर १९३२ को दण्ड दे दिया।

घोर विपत्ति—इस बात को जानते हुए कि क्रान्तिकारियों को जो कि भागे हुए हों मरने घर में छिपाना अत्यन्त जोखिम को मोल लेना है सम्भ्रान्त महिलाएं जिनका परिवार होता था, बहुधा उन क्रान्तिकारियों को अपने मकान में आश्रय देती थीं जिनको पकड़ने पर पुरस्कार की घोषणा हो चुकी होती थी एक स्थान से दूसरे को भागते और छिपते हुए सूर्यसेन अपने दो वीर सहायकों निर्मल सेन और अपूर्व सेन तथा एक अन्य युवक के पास ढालाघाट पहुचा। यह स्थान पाटिया सनिक शिविर के उत्तर में लगभग ४ मील था और चीटागांव शहर से दस मील दूर था। १३ जून १९३२ को लगभग ६ बजे प्रात काल जब कि मास्टर दा और उसके साथी भोजन समाप्त कर चुके थे और उठने ही वाले थे उस गृह की एक छोटी लड़की (इन कार्यों में प्रत्येक परिवार के सबसे छोटे सदस्यों ने सदव बहुत अधिक चतुराई और अनुशासन दिखलाया) ने सकेत किया कि बहुत बड़ी सख्या में अपरिचित व्यक्ति उस स्थान पर आ गए हैं।

वह मकान कच्चा और दो मंजिला था। पुलिस ने मकान को घेर लिया। अट्ठाइसवीं गुरखा सेना का कप्टेन कैमरा तथा एक हवलदार जो उस पुलिस दल का नेता था उन्हें यह निश्चय था कि सदेहास्पद व्यक्ति निश्चित रूप से उस मकान में है

बाहर के जीने से ऊपर की मंजिल में गए। सूर्यसेन तथा उसका तरुण साथी रसोई के ऊपर पड़ी हुई टीन पर एक बांस की सीढ़ी के द्वारा चढ़ गए और उस पर से नीचे जमीन पर कूद कर भाग कर गायब हो गए। हवलदार कप्तेन से आगे था और जब कि वह एक तंग दरवाजे में से निकल रहा था उसको सीढ़ी पर से धक्का दे दिया गया जिससे कि वह धड़ाम से जमीन पर आ गिरा। एक तरुण युवक जो कि अपूर्व सेन था और जिसके पास रिवाल्वर था उसने कैप्टेन कैमरा को एक गज की दूरी से गोली मार दी। कमेरों को मार कर वह नीचे तेजी से उतरा जहाँ कम्पाऊंड में एक राइफिल मैन ने उसको ललकारा। जसे ही उसने भागने का प्रयास किया कि राइफिलमैन ने गोली मार दी और वह घटना स्थल पर ही मर गया। तभी दूसरा व्यक्ति निर्मल ऊपरी मंजिल से कूद कर भागने की कोशिश करता हुआ दिखलाई पड़ा। उस पर गोली चलाई गई और वह जख्मी हो गया। वह तुरन्त अपने बचाव के लिए कमरे में छिप गया। रात अधिक हो गई जब हवलदार ने पातिया सैनिक शिविर से कुमक लाने का विचार किया। वह शीघ्र ही प द्रह अतिरिक्त राइफिल धारियों और एक लुइस गन लेकर वापस आ गया। उसने मकान के चारों ओर अधिक गार्ड लगा दिए और उस कमरे में जिसमें कि क्रान्तिकारी छिपा हुआ था उसके विरुद्ध कार्यवाही शुरू की। उसने लुइस गन से खिड़की पर निशाना लगाया खिड़की से तीन रिवाल्वर शाट चलाए गए परन्तु वे गोलियां किसी के नहीं लगीं। लुइस गन से कुछ समय तक लगातार गोलियां चलती रहीं कुछ समय के उपरान्त उस कमरे में सभी हलचल में चिन्ह बन्द हो गए। शेष रात्रि मकान की चौकसी रखी गई, सनिक पहरा देते रहे। प्रात काल मकान के समीप ही एक झाड़ी मे उस युवक का शव मिला। जिसने कप्टेन कमेरा पर आक्रमण किया था। उसके पास दो रिवाल्वर थे। एक रिवाल्वर उसके हाथ में था और दूसरा उसकी कमर की बल्ट में था। ऊपर की मंजिल में निरमल सेन मरा हुआ पड़ा था उसके शरीर पर अनेक घाव थे।

घर की स्वामिनी विधवा उसका पुत्र तथा उस घर में दो और व्यक्ति थे जिन्होंने उन भागने वाले क्रान्तिकारियों को आश्रय और शरण दी थी पकड़ लिए गए, उन पर मुकदमा चला और २४ अक्तूबर को उनमें से प्रत्येक को चार चार वर्ष की कठोर कैद की सजा दे दी गई।

जो प्रशिक्षण में था —वह केवल एक तरुण बालक था जो उन पुराने क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में आया जो अपने छिपने के स्थान से क्रान्तिकारी कार्यों का संचालन करते थे। सुकुमार कानूनगो ने उनसे क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित होने की उत्कृष्ट और दृढ़ इच्छा व्यक्त की। उसको क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित होने के भय कर खतरे से अवगत कर दिया गया परन्तु वह दल में सम्मिलित होने का दृढ़ आग्रह करता रहा अस्तु उसको दल में सम्मिलित कर लिया गया। उसको रिवाल्वर चलाने और निशाना लगाने की शिक्षा दी गई। घटना वाले दिन उसने गोली चलाने की प्रैक्टिस समाप्त की और अपने दो साथियों सहित समीप के तालाब में स्नान करने गया। सुकुमार समझ रहा था कि उसने अपने रिवाल्वर की सब गोलियां चलाकर समाप्त करदी हैं और खिलवाड़ में रिवाल्वर की नली को अपने गले की ओर करके निशाना लगा रहा था। वह अपने मित्रों को यह दिखला रहा था कि आपातकाल में कद होने से पूर्व वह अपने किस तरह मारेगा। उसने जैसे ही घोड़े को घुमा कि अन्तिम गोली जो रिवाल्वर में

शेष थी चल गई और वह उसके गले में घुस गई जिससे वह घटना स्थल पर ही मर गया।

पछताये के फल स्वरूप —अपने क्रान्तिकारी साथियों के साथ अच्छा काम करने के कारण क्रान्तिकारी दल में क्रमश यह माना जाने लगा कि शैलेश्वर चक्रवर्ती को उत्तरदायित्व पूर्ण काम सौंपा जा सकता है। दल ने यह निश्चय किया कि सितम्बर १९३२ को एक निश्चय तारीख को पहाड़वाली योरोपियन क्लब पर आक्रमण किया जावे। शलेश्वर को यह जिम्मा दिया गया कि वह क्लब के बहुत निकट सुविधाजनक स्थान पर छिपा रहे और निश्चित समय बम तथा अन्य शस्त्रों सहित प्रगट हो जावे। निर्धारित समय हो गया, आक्रमण के लिए चुने हुए क्रान्तिकारी भी यथा स्थान पहुच गए परन्तु शलेन्द्र का कहीं पता नहीं था। उन व्यक्तियों के लिए जो कि वहा एक मात्र उद्देश्य अर्थात क्लब पर धावा बोलने के लिए एकत्रित हुए थे, यह अत्यन्त आतंकजनक स्थिति थी। उनके पास उस समय जितने भी हथियार थे उनकी गिनती करने के उपरान्त तथा सारी परिस्थिति का विश्लेषण करके उन्होंने निश्चय किया कि वे लोग वहा से चले जावें। शलेश्वर निश्चित स्थान और समय पर उपस्थित था परन्तु किसी कारणवश उपयुक्त क्षण पर उपस्थित नहीं हो सका। दल के जो लोग वापस लौट रहे थे वह उनमें से कुछ के साथ हो लिया। इन लोगों ने अपने अपने घरों को लौटने के बजाय एक झोंपड़े में आश्रय लिया जो निर्जन था वे सोने की चेष्टा करने लगे परन्तु नींद इस कारण नहीं आ रही थी कि उन्होंने क्रान्तिकारी कार्यवाही की तयारी की थी उसकी उत्तेजना के उपरान्त कुछ न कर सकने की असफलता के कारण प्रयत्न करने पर भी नींद नहीं आई। एक साथी ने जो सोने के पहले देखा कि शलेन्द्र चटाई पर छाती के बल लेटा हुआ एक कागज पर कुछ लिख रहा था। जब रात्रि के दो बजे तो साथियों ने शैलेन्द्र को उसी स्थिति में पड़े देखा उसका सिर झुक गया था और चेहरा पृथ्वी को छू रहा था। परीक्षा करने पर ज्ञात हुआ कि वह मर चुका है। उसके समीप ही थोड़ा सा सफेद पाऊडर बिखरा पड़ा था उससे ज्ञात हुआ कि उसने पोटेशियम साइनाइड विष खाकर आत्म हत्या कर ली है। यह स्वाभाविक ही था कि जब दल क्लब से वापस लौटा तो उससे यह तो पूछा गया कि वह समय पर क्यों नहीं पहुचा परन्तु किसी ने भी उसको इसके लिए भला बुरा नहीं कहा। उस घटना के उपरान्त लोगों ने अनुमान लगाया कि उसके आत्म हत्या करने का क्या कारण हो सकता है तो पता चला कि उसको प्रथम बार आक्रमण की कार्यवाही के संचालन का उत्तरदायित्व दिया गया परन्तु जिस दिन आक्रमण करना निश्चय किया उस दिन ईस्टर की छुट्टी थी और क्लब बन्द था और क्रान्तिकारी दल को बिना कोई कार्यवाही किए ही वापस लौटना पड़ा। अब यह दूसरी बार आक्रमण करने की तयारी थी इसमें मुख्यत शलेन्द्र की असावधानी से असफलता मिली उसने अपने मित्रों से त्याग में कहा कि वह अवश्य ही अशुभ व्यक्ति है और कोई उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य करने के अयोग्य है। यह विचार उसके मस्तिष्क तथा हृदय पर एक भारी बोझ बनकर रहा होगा जिसके कारण उसने अपने हाथों से ही अपने जीवन को समाप्त कर दिया।

एक महिला की बारी —शस्त्रागार पर हुए आक्रमण से जो अशान्ति और उथल पुथल हुई थी वह बहुत कुछ शान्त हो चुकी थी और योरोपियन तथा ऐंग्लो इण्डियन निश्चिन्त होकर आराम की सांस ले रहे थे। उस समय पहाड़ताली बंगाल क्लब जो पहाड़ताली इन्स्टिट्यूट के नाम से प्रसिद्ध था और जो कोटाणाव से तीन मील दूर था

वहां २४ सितम्बर को १० बजे सायंकाल तीस चालीस के लगभग व्यक्ति एकत्रित हुए। उनमें से कुछ लोग व्हिस्ट ताश का खेल खेलने के लिए बैठ गए। यकायक रात्रि के ११.३० पर एक बम खुली हुई खिड़की से फेंका गया जो हॉल के फर्श पर आकर फटा। पहले बम के बाद शीघ्र ही दूसरा और तीसरा बम फेंका गया साथ ही बन्दूक तथा रिवाल्वरों की गोलियां लगातार चलने लगीं। बमों के फटने तथा गोलियों के चलने से दस बारह व्यक्ति घायल हो गए और एक वृद्ध योरोपियन महिला के शरीर में एक गोली घुस जाने से उसकी मृत्यु हो गई। यह आक्रमण विद्युत गति से किया गया था। आक्रमण करने वाले दस पन्द्रह व्यक्ति थे जो विभिन्न प्रकार की पोशाकें पहने थे और उनके चेहरे मुखौटे से छिपे हुए थे। जब तक कि लोग सम्हलें और स्थिति को समझें और कोई कार्यवाही कर सकें वे तेजी से भाग गए। एक पुरुष वेश में महिला को छोड़कर सब आक्रमणकारी भाग गए। पुरुष वेश में वह महिला घटना स्थल से एक सौ गज की दूरी पर मरी हुई पड़ी थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उसने स्वयं विष खाकर आत्महत्या की थी। बाद को उस महिला को पहचाना गया। उसका नाम प्रीतिलता वादेदार था। वह कलकत्ता विश्वविद्यालय की स्नातिका थी और नन्दनकानन गर्ल्स स्कूल की मुख्य अध्यापिका थी। २४ जून १९३२ की ढालाघाट काँड के उपरान्त वह गायब थी। वह निश्चय पूर्वक उस आक्रमण में उपस्थित थी परन्तु वहां से वह निकल भागने में सफल हो गई थी। घटनास्थल के समीप खोज करने से तीन भरे हुए बन्दूक के कारतूस कई राउंड रिवाल्वर की गोलियां एक स्वचालित पिस्टल मगजीन तथा अनेक खाली चले हुए बन्दूक और रिवाल्वर के कारतूस बिखरे पाए गए। बरान्दे में तथा बिलियर्ड खलन के कमरे में एक-एक बम जो फटे नहीं थे, मिले। उस स्थान की अधिक सावधानी से खोज करने पर बहुत सी लाल स्याही में लिखी हुई विज्ञप्तियां मिली जिन्हें भारतीय क्रान्तिकारी सेना ने निकाला था उन विज्ञप्तियों में युवकों को क्रान्तिकारी सेना में सम्मिलित होने तथा योरोपियन तथा ऐंग्लो इंडियनों को मारने के लिए आमन्त्रित किया गया था। घटना जिस रात्रि को हुई उसी दिन सायंकाल को वे विज्ञप्तियां समीपवर्ती बस्ती में खूब बांटी गई। एक विज्ञप्ति का प्रारम्भ चौटागांव और हिजली में किए गए अंग्रेजों के अत्याचार से हुआ था और उसमें "भयानक सोमवार" का उल्लेख भी था अर्थात् ३१ अगस्त जिस दिन अहसानुल्ला की हत्या के पश्चात चौटागांव का कांड हुआ। एक दूसरी विज्ञप्ति में अन्त में लिखा था जो भी योरोपियन या एंग्लो इण्डियनों को जीवित या मरा हुआ भारतीय क्रान्तिकारी सेना के मुख्यालय में लाएगा उसको पारितोषिक दिया जावेगा। सरकार ने उस समस्त क्षेत्र पर सामूहिक जुर्माना इस आधार पर किया कि स्थानीय लोगों ने अधिकारियों को आक्रमणकारियों को गिरफ्तार करने में यथेष्ट सहायता नहीं दी।

दुस्साहसी दल —यदि क्रान्तिकारी जो फरार हो गए थे बहुत सतर्क थे तो पुलिस भी बहुत सक्रिय हो गई थी। भेदियों और गुप्तचरों द्वारा सूचना पाकर पुलिस ने यकायक २७ नवम्बर १९३२ को पातिया के निकट जगलखेन में एक टूटे फूटे मकान को घेर लिया। उनको यह सूचना मिली थी कि शस्त्रागार पर आक्रमण करने वालों में से कुछ वहां छिपे हैं। मकान में बिलकुल शान्ति थी, पुलिस ने मकान के अन्दर जो लोग थे उनको चेतावनी दी कि वे बिना किसी विरोध के शान्तिपूर्वक आत्म समर्पण करदें। एक तरुण श्यामकुमार नन्दी ने पुलिस के घेरे को तोड़कर निकल भागने का प्रयत्न किया पुलिस ने उसे गोली से मार गिराया, इस बीच दूसरा युवक निकल कर भाग गया। उस

मकान की तलाशी ली गई तो एक युवक जिसके जलने के घाव थे और एक डाक्टर एक कमरे के अन्दर मिले उन दोनों को गिरफ्तार कर लिया गया और नगर में ले जाया गया। कुछ एसिड जिनसे यह संकेत मिलता था कि वहां बम बनाए जाते थे उस घर में मिले।

नौसिखिए का भाग्य—क्रान्तिकारी दल के कुछ नेताओं के कैद हो जाने से कुछ के गिरफ्तार होकर उन पर मुकदमे चलने के कारण और कुछ को फांसी लग जाने से, जो बचे हुए नेता थे वे छिप कर आगे कार्यवाही करने की योजना बना रहे थे। उसके लिए नए क्रान्तिकारियों को भर्ती करना अत्यन्त आवश्यक था। विरेन दे कम उमर का लड़का था वह उन छिपे हुए क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में आया। उसने उन लोगों की सहायता करने की उत्कट इच्छा प्रगट की कि जो देश के लिए कल्पनातीत त्याग और बलिदान कर रहे थे। उसको गोली चलाना और निशाना लगाना सिखाया जाने लगा। उसको यह ज्ञात नहीं था कि उसके रिवाल्वर में एक गोली बची हुई है। इत्तफाक से गोली चल गई और उसके पेट के नीचे के हिस्से में घुस गई। डाक्टरी सहायता मिलना कठिन था। अस्तु घाव से जो रुधिर बहा वह रुक न सका और घाव विषाक्त होकर खराब हो गया उससे उस लड़के की मृत्यु हो गई। वह अपने काम को अधूरा छोड़ कर सभी क्रान्तिकारी साथियों को दुख से कातर करके इस संसार से चल बसा।

मास्टर दा विलक्षण बुद्धि के धनी—चौटागाव काण्ड की जो प्रसिद्धि हुई उस काण्ड में जो सैनिक तैयारी और चमत्कारी कार्य हुआ वह मुख्यतः सूर्यसेन के मस्तिष्क का चमत्कार था। उन्होंने उस योजना को अपने कतिपय सहयोगियों के सहयोग से तयार किया और उसको ऐसे तरुणों जो कि बीस वर्ष के नीचे थे, के द्वारा कार्यान्वित कराया। प्रथम आक्रमण में पराभूत हो जाने के उपरान्त सरकारी सेनाओं ने और शक्ति संग्रह की अधिक सेना बुलाई गई और उसने सम्पूर्ण नगर और समीपवर्ती गावों को क्रान्तिकारियों की खोज में रौंद और छान डाला। जब खुला युद्ध सर्वथा असम्भव और मूर्खतापूर्ण हो गया तो वह दुबला पतला पुरुष एक गांव का अध्यापक विभिन्न मकानों में आश्रय लेने के लिए विवश हो गया। पुलिस सूर्यसेन का अपनी समस्त शक्ति लगा कर पीछा कर रही थी और वह विलक्षण प्रतिभा वाला व्यक्ति हर बार पुलिस से बच कर निकल जाता। पुलिस से बच निकलने की उसकी युक्तियां उस प्रदेश में कहानियां बन कर प्रसिद्ध हो गई थीं। कभी वह मुसलमान फेरी वाला बन कर, कभी साधारण किसान के रूप में और कभी स्त्री का वेष धारण कर तथा जैसा समय हो वैसा ही वेष धारण कर पुलिस की आंख में धूल झोंक कर बच निकलता था, ऐसा प्रतीत होता था कि मानो कोई दैवी शक्ति उसकी रक्षा कर रही हो। क्योंकि अनेक बार ऐसा हुआ कि वह पकड़े जाने से बाल बाल बच गया। विशेषकर १३ जून १९३२ को ढालघाट में जब पुलिस ने उसे घेर लिया और वह पुलिस के घेरे से निकल गया और जब कि उसके दो अत्यन्त कुशल योग्य और विश्वसनीय सहयोगी खेत रहे तब तो लोगों के आश्चर्य की सीमा नहीं रही। ३० अगस्त १९३१ को अहसानउल्ला की हत्या के उपरान्त पुलिस ने उस व्यक्ति जिसने अहसानउल्ला को गोली मारी थी, निर्मम यातना देकर यह कहलवा लिया कि मास्टर दा ने समस्त योजना तयार की थी और उन्होंने ही उसे शस्त्र दिया था। उसके उपरान्त पुलिस जहां भी उसे तनिक भी खबर लगती उनका बेतहाशा पीछा करती परन्तु हर बार असफल होती। जो लोग, सूर्य सेन के सम्बन्ध में जानकारी दे

सकते थे वे या तो अपने प्राणों के भय के कारण जानकारी देने से मना कर देते और अधिकतर वे इस कारण उनकी गतिविधियों की जानकारी देने से मना कर देते क्योंकि वे उन्हें अत्यन्त श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे और उनके प्रशंसक थे। सूर्यसेन अपने तीन साथियों के साथ पाटिया पुलिस स्टेशन से पांच मील दूर गोयराला गांव में आश्रय लिया।

एक देशद्रोही ने पुलिस को सूचना दे दी कि मेरे मकान के समीप वाले मकान मे कुछ फरार व्यक्ति ठहरे हुए हैं और वह १६ फरवरी १९३१ को उन्नीसवी गोरखा राइफिल्स की एक टुकडी को बुला लाया। जब कि सेना उस मकान को चारों ओर से घेर रही थी तो सेना पर सर्च लाइट का प्रकाश पड़ा और उस प्रकाश मे उन्होने देखा कि मकान के उत्तर की दिशा से तीन व्यक्ति अपने रिवाल्वरो से सेना पर गोली चला रहे हैं। सेना ने भी जवाब मे गोली चलाई और शीघ्रता पूर्वक मकान की घेरा बन्दी पूरी की। दोनों ओर से थोडी देर तक शांति रही, कुछ देर के बाद दो व्यक्तियों ने सेना पर पुन गोली वर्षा की और घेरे को तोड कर निकल भागने की चेष्टा की। सेना उस समय गोली नही चला सकती थी क्योंकि भय था कि कहीं उनके दल के लोग ही गोली से न मारे जायें। रात्रि के ११ बजे थे जब कि मास्टर दा ने उस दीवार को जो मकान के चारो ओर थी उत्तर की दिशा में पार कर लिया परन्तु जसे ही वह दीवार से कूदे सामने ही हवलदार खडा था उसने उन्हें पकड लिया। घिरे हुए क्रान्तिकारियों ने मकान की दक्षिण दिशा से सेना पर गोली चलाई सेना ने गोली चलाकर उत्तर दिया इसी बीच एक चीख की आवाज आई और समीप के तालाब मे छपाके का शब्द हुआ आक्रमणकारी सेना ने देख भाल की परन्तु कुछ पता न चला और न किसी को पकड़ा जा सका। प्रातः काल पृथ्वी पर एक खून की धारा दिखलाई दी जो कुछ दूरी तक जाकर गायब हो गई। एक खून के धब्बो वाली साडी, स्त्री के वस्त्र, एक जोडी सडिल और कुछ आपत्तिजनक कागज प्राप्त हुए। उस मकान के पास जो जगल था उसको साफ कर दिया गया और एक खाई मिली जिसमे कि कुछ कागज पत्र मिले उस मकान में जो अन्य लोग थे उनको प्रात काल होते ही गिरफ्तार कर लिया गया और शहर ले जाया गया।

सूर्य सेन को एक रेलवे ट्रेन मे ले जाया गया जो घटना स्थल से कुछ दूरी पर खडी थी। उनको एक छोटे से स्टेशन शोलाशहर पर उतार लिया और वहा से उनको पहरे में एक मोटर तक ले जाया गया और वहा से शहर ले जाया गया। जब कि सूर्य सेन जेल मे थे तो मास्टर दा की विलक्षण बुद्धि ने जेल के बाहर जो उनके क्रान्तिकारी साथी थे उनसे सम्पर्क स्थापित कर लिया था और वे अपने साथियों को जेल से आदेश तथा अन्य आवश्यक पत्र यहाँ तक एक पुस्तक की सामग्री की पाडुलिपि भी भेजते रहते थे। यह रहस्य एक खोज मे पता चला जब कि डालघाट मे वे कागज पकड़े गए। उन कागजों से यह निश्चय पूर्वक यह प्रमाणित हो गया कि मास्टर-दा तथा प्रीतिलता उस समय मकान मे मौजूद थे जबकि सेना ने उस मकान को घेरा था। मास्टर दा को जेल से छुडाने के लिए एक अत्यन्त साहसिक योजना तयार की गई। उनके साथियों ने जेल की इमारत के एक भाग को डाइनेमाइट से उड़ा कर मास्टर-दा को जेल से निकाल लेने की योजना तयार की और वह उस समय पकड़ गई कि जब जेल की इमारत को उड़ा देने की योजना लगभग पूरी हो चुकी थी। सूर्य सेन और तारकेश्वर दस्तीदार

जो कि १६ मई १६३१ को गिरफ्तार हुए और जिन पर पुलिस इस्पेक्टर को १६ मार्च १६३१ को गोली से मारने का आरोप था दोनों को १५ जून १६३३ को स्पेशल ट्रिब्यूनल के समक्ष उपस्थित किया गया। चीटागाव पुरानी कलक्टरी की इमारत जिसमें मुकदमा प्रारम्भ हुआ उस पर सेना का कड़ा पहरा लगा दिया गया था।

इस अभियोग मे शस्त्रागार पर आक्रमण से लेकर पहाड़तली के काण्ड तक का सारा इतिहास बतलाया गया और यह घोषित किया गया कि मास्टर दा ही निश्चयपूर्वक क्रान्तिकारी दल तथा भारतीय जन तान्त्रिक सेना (इण्डियन रिपब्लिकन आर्मी) की चीटागाव शाखा के नेता थे। मुख्य अभियुक्त (सूय सेन) ने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध प्रत्येक सम्भावित उपाय तथा साधन से युद्ध करने का सम्पूर्ण उत्तर दायित्व अपने ऊपर ले लिया। उन्होंने जो 'विरहा' कविता बनाई थी और जिसे पुलिस ने छीन लिया था और साक्षी के रूप में न्यायालय में उपस्थित किया था उसमें सूयसेन ने लिखा था कि इस सगठन से मेरा अटूट और दृढ सम्बन्ध है और इसके जन्म से ही मैं अपने हृदय की गहनता से इसके साथ हूं। मैंने अपने अनेक निकट के मित्रों तथा स्नेह शील भाइयों और बहिनों की बिजय (उन्होने अपनी कविता म विजोय लिखा था) के दशन किए है और मै उन सब कार्यों की सम्पूर्ण जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता हूँ। दूसरे अभियुक्त तारकेश्वर के विषय में यह कहा गया कि उसका क्रान्तिकारी षडयन्त्र से आरम्भ से ही सम्बन्ध था। वह गोहिरा म क्रान्तिकारी दल का मुखिया था और उस समय सूय सेन की गिरफ्तारी के पश्चात सरकार के विरुद्ध युद्ध करने के षडयन्त्र में उसने सक्रिय सहयोग दिया। १४ अगस्त १६३३ को अभियोग समाप्त हो गया और दोनों अभियुक्तों को उसके अतिरिक्त और कोई दूसरी आशा नहीं थी। मृत्यु दण्ड दे दिया गया। १२ जनवरी १६३४ को अध रात्रि के समय जब मास्टर-दा से तैयार होने के लिए कहा गया तब जेल अधिकारियों ने देखा कि वे ध्यान मग्न समाधि लगाए ईश्वर प्राथना में तल्लीन हैं। उन्हें बहुत कुछ झकझोरा गया तब उनकी समाधि टूटी और उनको वस्तु स्थिति से अवगत कराया। वे उठ खड़े हुए और जब व चले तो उन्होने बड़े जोर से वन्दे मातरम्' का घोष किया जो चीटागाव के छोटे से जेल में सवत्र गूज गया। प्रति उत्तर मे प्रत्येक कोठरी से जिसमें शस्त्रागार के आक्रमणकारी तथा उसके पश्चात के काण्डो के क्रान्तिकारी कैदी बन्द थे उनमें भी वन्दे मातरम् का घोष गुजरित होने लगा। समस्त जेल में वन्दे मातरम् का घोष प्रतिध्वनित होने लगा। जेल के सभी कैदियों को ज्ञात हो गया। मास्टर-दा के अन्तिम प्रयाण का क्षण आ गया और सभी बड़े उत्साह से 'वन्दे मातरम्' का घोष करने लगे।

जेल के अधिकारी इस स्थिति के लिए तयार नहीं थी। जैसे ही मास्टर दा वन्दे मातरम् का उच्चारण करते बारबार उन पर प्रहार करते। हर बार वन्दे मातरम् उच्चारण करने पर उन पर लाठी और डंडे का प्रहार होता। यह क्रम उस समय तक लगातार चलता रहा जब तक कि उस निमम मार के कारण उनका दुबला पतला शरीर अधिक मार सहन न कर सका और वे गिर कर बेहोश हो गए। उस समय समस्त जेल अन्य क्रान्तिकारी कैदियो के वन्दे मातरम् के घोष से प्रतिध्वनित हो रहा था जो पिंजड़े में बन्द सिंह के समान दहाड़ रहे थे। चीटागांव के उस क्रान्तिकारी युद्ध का वह सवमान्य नेता, जिसके नेतृत्व में अनेक युद्ध लड़े गए थे और जिसका नाम अत्यन्त शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध सफलता पूर्वक अनेक युद्धों का सफल नेतृत्व और

सचालन करने के साथ जुड़ा रहेगा, उसको जेल के वारडरों ने मार मार कर बेहोश कर दिया अथवा मार डाला गया। सत्य क्या था जानने का कोई साधन नही है क्योकि वहां कोई साक्षी नही था परन्तु वास्तविक तथ्य यह था कि वह जिसके नाम से ही भारत स्थित ब्रिटिश सेना म जो अत्यन्त वीर सनिक थे उनके शरीर मे कपकपी उत्पन्न हो जाती थी और सुदूर कलकत्ते के सुदृढ प्रशासनिक केन्द्र के वरिष्ठ प्रशासक यर्राते थे वही वीर क्रान्तिकारी सेनानी सूर्यसेन को जल वारडर पकड़ कर फांसी के तख्ते पर ले गए और उस प्राण दण्ड पाने वाले अभियुक्त सूर्य सेन के गले में उन्ही ने फांसी का फदा डाला जिसने विदेशियो की दासता से अपने देश को स्वतन्त्र करने का प्रयत्न किया था अपने नेता का आजीवन साथी तारकेश्वर दस्तीदार ने भी अपने नेता का उसी रात्रि (१२ जनवरी १६३२) में अनुमरण किया। उन्हें भी चीटागांव जल म फांसी दे दी गई। भारत में कानून और व्यवस्था के सचालकों ने दबी हुई विश्राम की सांस ली कि ब्रिटिश सरकार का सबसे बड़ा शत्रु समाप्त हो गया। परन्तु उन दोनों क्रान्तिकारियों के मृत शवों का क्या किया जावे? उनके पार्थिव अवशेषो न अधिकारियो के लिए एक जटिल समस्या खड़ी कर दी। यदि उनके मृतक शरीरों का अग्नि सस्कार करते है तो उनकी भस्म से कही फोयनिक्सों की भांति सकडों वार न उत्पन्न हो जावें जो मातृ भूमि के घोषित शत्रु से युद्ध करें। अतएव सूर्य सेन और उनके मृत शरीरों को प्रात काल होने के पहले एक युद्धपोत (जहाज) पर रक्खा गया। यह जहाज ईस्ट इंडिया की सेना के बड़ा का पथ एम एस ऐपि थम युद्धपोत था। उस जहाज को सुदूर समुद्र मे ले जाया गया वहा दोनों शवों का भारी पत्थरों से अच्छी तरह बांध कर समुद्र के तल म पहुचा दिया गया जिससे कि गहरे समुद्र के जन्तु उनके शरीर को खा जावें।

पातिया काण्ड

जब कि चीटागाव के चप्पे चप्पे को पुलिस तथा सेना घेरे हुए थी और प्रत्येक तरुण पर कड़ी निगरानी रक्खी जा रही थी तो जिस व्यक्ति ने सूर्य सेन के छिपने के स्थान की सूचना पुलिस को दी थी और उसक साथियो से प्रतिशोध लिए बिना उसको यो ही छोड़ा नही जा सकता था। पातिया थाने के मुख्य अधिकारी मक्खनलाल दीक्षित को क्रान्तिकारियो ने मास्टर दा और तारकेश्वर दस्तीदार की गिरफ्तारी के लिए उत्तर दायी ठहराया और उससे प्रतिशोध लने का निश्चय किया। मक्खनलाल दीक्षित ने मुख्यालय को सूचना भेजकर एक सैनिक टुकड़ी जिसम पचीस सनिक थे, तीन असिस्टेंट सब इस्पेक्टर व तीन कास्टेबिल थे, बुला भेजा था। यह सनिक तथा पुलिस दस्ता एक उच्च योरोपियन सनिक अधिकारी के आधीन सदेहास्पद व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए शीघ्रता पूर्वक गोमराला की ओर रवाना हुआ। चीटागांव के शेष क्रान्तिकारी योद्धाओ को कुछ समय के उपरान्त पता चला कि मास्टर दा सूर्य सेन तथा तारकेश्वर दस्तीदार को पकड़वाने म मक्खनलाल दीक्षित का हाथ था। अतएव २६ मार्च १६३३ को गोधूली के उपरान्त सायकाल के सात बजे उन्होंने मक्खनलाल को उसके क्वार्टर में गोली से मार दिया और बिना किसी की दृष्टि मे पड़े वे चुपचाप उसको मार कर निकल गए।

अकस्मात आक्रमण—कुछ परिवार उन भागे हुए क्रान्तिकारियो को जिनके सर पर भारी पुरस्कार घोषित किया हुआ था भयकर खतरा उठा कर भी उनको अपने घर में आश्रय देते थे। एक रात्रि के कुछ समय के उपरान्त पुलिस ने जगल की झाड़ी मे

परकी प्रकाश स्तम्भ के समीप अनवारा थाने में 'गोहिरा' गांव जो कि चीटागांव से १३ मील दूर था 'पूरना ताल्लुकदार' के मकान को घेर लिया। पुलिस को सूचना मिली थी कि उस मकान में ६ व्यक्ति छिपे हुए हैं जिनकी पुलिस को खोज थी और उनमें तारकेश्वर दस्तीदार और मनोरंजन दास भी हैं। पुलिस ने उस मकान को १६ मई १९३३ को घेर लिया। अपपलायक-भागे हुए क्रान्तिकारी पुलिस के आगमन को जान गए और उन्होंने पुलिस पर गोलियां चलाई पुलिस ने भी उत्तर में गोलियाँ चलाई। इस द्वन्द्व और गड़बड़ में दो क्रान्तिकारी बच कर निकल गए। प्रातःकाल चार बजे पुलिस ने घिरे हुए क्रान्तिकारियों से आत्म समर्पण के लिए कहा। तब गोली चलना बन्द हुआ और उस घर से चार क्रान्तिकारी गिरफ्तार किए गए। दो आदमी पूर्णचन्द्र ताल्लुकदार गृह स्वामी और भागे हुए क्रान्तिकारी मनोरंजन दास पुलिस की गोलियों से मारे गए। पूर्णचन्द्र का शव उनके घर वालों को दाह संस्कार के लिए दे दिया गया। मनोरंजन दास के शव को उस समय किसी ने भी नहीं पहचाना यहां तक कि उनके मित्रों तथा सम्बन्धियों ने भी नहीं पहचाना। तारकेश्वर दस्तीदार पर बाद को शस्त्रागार पर आक्रमण में सम्मिलित होने के आरोप में अभियोग चलाया गया और १२ जनवरी १९३४ को उनको मृत्यु दण्ड दे दिया गया।

मरुभूमि की वायु में—राजपूताने में देवली का बन्दी शिविर अपने अल्पकालीन जीवन में ही अनेक क्रान्तिकारियों की मृत्यु के कारण कुख्यात हो गया था। हिजली बन्दी शिविर के एक बन्दी श्री शैलेशचन्द्र चटर्जी को बहुधा मलेरिया ज्वर हो जाता था और उनका वजन निरन्तर कम होता जा रहा था। उनको १२ सितम्बर, १९३२ को देवली शिविर में स्थानान्तर किया गया। स्वयं शैलेश तथा उनके सम्बन्धियों ने उनके स्थानान्तर का विरोध किया परन्तु सरकार ने उनके विरोध को अनसुना कर दिया। पुलिस तथा बन्दी शिविर की गोपनीय रिपोर्ट के अनुसार शैलेशचन्द्र चटर्जी क्रान्तिकारी दल के एक प्रमुख और महत्वपूर्ण व्यक्ति थे अतएव बंगाल में उनका रहना राज्य की सुरक्षा की दृष्टि से खतरनाक था। शैलेश चटर्जी के अभागे पिता उस समय कोमिल्ला में थे जब जिलाधीश ने तार द्वारा उन्हें सूचित किया कि उनके पुत्र की जेल के अस्पताल में सत्रह अक्टूबर १९३३ को मृत्यु हो गई। यह ज्ञात हुआ कि रोगी पर भयंकर मलेरिया ज्वर का आक्रमण हुआ, उनका एक अनुभवी कम्पाउण्डर के मना करने पर भी डाक्टर ने इन्ट्राविनस अधिक कुनीन का इन्जेक्शन दे दिया और तुरन्त ही रोगी की मृत्यु हो गई।

क्रिकेट खेल मैदान का काण्ड—सात जनवरी १९३४ को एक क्रिकेट मैच योरोपियन क्लब मैदान (पलटन) में खेल को देखने के लिए भारी संख्या में योरोपियन आए जिनमें स्त्रियां और बच्चे भी थे। मैच समाप्त हुआ ही था और दर्शक छोटे-छोटे समूहों में बट गए थे वे इस बात से नितान्त अनभिज्ञ थे उनके साथ क्या घटना बीतने वाली है। मैच देखने के उपरान्त सुपरिंटेंडेंट जो कि एक योरोपियन था क्लब में वापस चला गया। जबकि वह लगभग सायंकाल साढ़े पांच बजे अपने बंगले की ओर कार से जा रहा था तो उसने दो युवकों को जो मजदूरों की सी पोशाक पहने थे क्लब के समीप देखा। उन्हें देख कर उसको सन्देह हुआ उसने अपनी मोटर कार रोक कर उनकी तलाशी लेना चाही उसी समय उनमें से एक ने उस पर बम फेंका। बम फटा परन्तु उससे सुपरिंटेंडेंट को कोई चोट नहीं आई वह बच गया। उसने दो बम उन पर फेंके परन्तु वे

फटे ही नहीं। सुपरिंटेंडेंट तुरंत ही अपने ऊपर बम फेंकने वाले पर टूट पड़ा और उससे गुथ गया और उसके शोफर ने उस युवक नित्यरंजन सेन को गोली मारी जिससे कि नित्यरंजन सेन घटना स्थल पर ही मर गया परंतु पुलिस आफिसर के हाथ में भी थोड़ी चोट लगी। उस समय इस घटना से समस्त भीड़ में सनसनी फैल गई। मोटर कार और पहाड़ी की ढाल के मध्य जो गड़बड़ फैल गई उसके कारण दूसरे युवक हिमांशु विमल चक्रवर्ती ने अपने को छुड़ा लिया और उस भीड़ में से निकल कर भागा जो कि उसके चारों ओर भीड़ इकट्ठी हो गई थी। उस पर दो बार गोली चलाई गई दूसरी गोली घातक सिद्ध हुई।

दो अन्य युवकों कृष्णचन्द्र चौधरी और हरेन्द्रनाथ चक्रवर्ती ने एक साथ मिल कर पविलियन पर जो कि खेल के मैदान के दूसरी ओर था आक्रमण कर दिया। उन्होंने खेमे और नगर के पुलिस इन्स्पेक्टर के बंगले के बीच बम फेंके परंतु वे फटे नहीं। हरेन्द्र कुछ आगे बढ़ा और उसने अपने रिवाल्वर से गोली चलाई जो कि दूर चली गई किसी के भी नहीं लगी। उसका साथी निकल भागा परन्तु उसका पीछा किया गया और उसको पकड़ लिया गया। उसकी पूरी तलाशी लेने पर उसकी बाईं जेब में एक बम तथा कुछ अन्य वस्तुएं मिलीं और दाहिनी जेब में उसके कैपसूल मिला। अंत में यह मालूम हुआ कि दोनों आक्रमण कारियों के पास एक रिवाल्वर चार बम तथा कई राउंड कैपस्यूल और कारतूस थे। दोनों गिरफ्तार युवकों पर अभियोग चलाया गया। कृष्णचन्द्र चौधरी की आयु २१ वर्ष की थी वह मुख्य शस्त्रागार पर आक्रमण करने वालों में से था जो फरार हो गया था। दूसरा युवक हरेन्द्र नाथ चक्रवर्ती अठारह वर्ष का था। उन दोनों को विशेष न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया गया गवर्नमेंट हाऊस के दरबार हाल में २३ जनवरी १९३४ को अभियोग आरम्भ हुआ। हाल पर कड़ा पहरा लगा दिया गया था।

कृष्णचन्द्र चौधरी और हरेन्द्र नाथ चक्रवर्ती दोनों पर सम्मिलित रूप से २६ जनवरी १९३४ को धारा ३०७/३४ इंडियन पेनल कोड के अंतर्गत अभियोग चलाया गया। जिसमें कि १९३२ के क्रिमिनल ला एमेंडमेंट एक्ट (फौजदारी कानून संशोधन अधिनियम) की धारा ६ (१) में अधिक दण्ड का प्रावधान था। योरोपियनों जिनमें स्त्रियां और बच्चे भी सम्मिलित थे उन पर ७ जनवरी १९३४ को बम फेंक कर तथा रिवाल्वर से गोली चला कर उनको मारने की इच्छा से आक्रमण किया गया था। यदि उससे किसी की मृत्यु हो जाती तो वे खून के अपराधी होते। उन पर दूसरा अभियोग विस्फोटक पदार्थ कानून की धारा ४ए और ४ बी के अन्तर्गत चलाया गया। उन्होंने बम फेंका था जिससे मनुष्य के जीवन को खतरा हो सकता था और जो १९३२ के बंगाल अधिनियम की धारा २ ए के अन्तर्गत अधिक दण्ड के भागी थे। तीसरा आरोप केवल अकेले हरेन्द्र चक्रवर्ती के विरुद्ध शस्त्र अधिनियम (आर्म्स एक्ट) की धारा १९ एफ के अन्तर्गत लगाया गया, कि वे बिना लाइसेंस के रिवाल्वर रखने तथा भरे हुए कारतूस रखने के अपराधी थे। १९३२ बंगाल अधिनियम २१ और आर्म्स एक्ट की धारा १३-ए के अंतर्गत वे अधिक दण्ड के भागी थे।

विशेष न्यायालय ने ३१ जनवरी को अपना निर्णय सुना दिया और दोनों अभियुक्तों को प्राण दण्ड दे दिया गया। दोनों युवक अधिक दंड अधिनियम के प्रथम शिकार हुए। दोनों अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय में अपील की। १ अप्रैल को उच्च

न्यायालय ने अपील सुनी और उसने अपील अस्वीकार कर दी। उच्च न्यायालय ने विशेष न्यायालय के निर्णय को मान्य कर दिया और प्राण दन्ड की पुष्टि कर दी। दोनों युवक अधिक दृढ अधिनियम के प्रथम शिकार हुए। उन्हें हत्या करने के प्रयत्न में प्राण दंड की सजा दी गई। ५ जून १९३४ को कृष्णचन्द्र तथा हरेन्द्र को मिदनापुर जेल में फांसी दे दी गई।

उसी के घर में —सूर्यसेन की गिरफ्तारी के उपरान्त उनके दल के थोड़े ही क्रान्तिकारी युवक बचे थे जो अपनी सुरक्षा के लिए भागते फिरते थे उनका कोई मार्ग दर्शक या नेता नहीं रहा था। फिर भी वे फरार युवक उन व्यक्तियों को पाठ पढ़ाने से नहीं चूकते थे कि जो देशद्रोही थे और सरकार को सूचना देते थे।

यह साधारण चर्चा का विषय था कि नरेन्द्र रन्जन सेन जो पोयराला के बड़े जमींदार थे मास्टर-दा की १६ फरवरी १९३४ को गिरफ्तारी के लिए जिम्मेदार थे। मास्टर दा की गिरफ्तारी ऐसा भयकर धक्का था जिससे कि भागे हुए क्रान्तिकारी अभी तक सम्हल नहीं पाए थे। फिर भी ८ जनवरी १९३४ को जबकि नरेन्द्र रन्जन अपने घर के अन्दर भोजन कर रहे थे तो एक या दो अपरिचित युवक अकस्मात प्रगट हो गए और उन्होंने नरेन्द्र रंजन को छुरों से छेद कर मार डाला। नरेन्द्ररंजन को मार कर वे उसी तेजी से गायब हो गए जो कि उन्होंने आने में दिखलाई थी।

जिसने स्वयं ही मुक्ति चाही —चीटागांव में पकड़ा जाकर ब्रजेन्द्रलाल चौधरी जो कि कानूनगोपाड़ा का रहने वाला था जनवरी १९३४ में बरहामपुर बन्दी शिविर में भेज दिया गया। जब २७ अगस्त १९३४ को रात्रि में ६.४५ पर कैदियों की गिनती की जा रही थी तो ब्रजेन्द्रलाल अपनी कोठरी में नहीं था। इस पर उसकी खोज हुई तो वह युवक कामन-रूम की छत की लोहे की छड़ से एक बटी हुई धोती से लटकता मिला। उसके पैरों के नीचे एक कुर्सी उल्टी पड़ी थी। ब्रजेन्द्र और उसके जो उस बन्दी शिविर में थे उनमें से अनेक आज नहीं हैं अतएव वे कुछ भी बता नहीं सकते। कोई भी इस सम्बन्ध में प्रकाश नहीं डाल सकता। केवल अनिश्चित काल तक बन्दी रहने की कल्पना ही स्वयं अपने हाथों अपने जीवन को समाप्त करने का कारण हो सकती है।

निर्ममता का कार्य —जब सब कुछ सामान्य हो गया तब भी पुलिस की बदला लेने की भूख शान्त नहीं हुई। पातिया थाने के चक्रशाला गांव में एक माता अपने पुत्र प्याज काजी चौधरी को भोजन परोसने की व्यवस्था कर रही थी कि एक सी आई डी (जासूसी विभाग) का एक कान्स्टेबिल आया और बिना कुछ कारण बताए उससे थाने को चलने को कहा। चिन्तित और घबड़ाई हुई माता ने हस्तक्षेप किया और कान्स्टेबिल से कहा कि क्षण भर के लिए ठहरकर प्रतीक्षा करे जिससे कि उसका पुत्र भोजन करले और तब जावे। पुलिस मैन ने भोला बनकर कहा कि मामला बहुत साधारण है और उसे लौटने में अधिक देर नहीं लगेगी। थोड़ी देर में वापस आकर वह भोजन कर लेगा। प्याज देर हो जाने पर भी नहीं लौटा। मां ने थाने पर पूछ ताछ की परन्तु कुछ पता नहीं चला उसके सारे प्रयत्न व्यर्थ हो गए। दूसरे दिन प्रातः काल जब मां ने जो रात भर सोई नहीं थी मकान के द्वार खोले तो उसे अपना पुत्र बेहोशी की अवस्था में मिला और फिर वह कभी होश में नहीं आया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति सबसे बड़ी आवश्यकता थी

चीटागांव जिले के "धोरोला" गांव का वह हृष्ट पुष्ट युवक जिसमें देशभक्ति

की अग्नि धधक रही थी और जो अत्यन्त प्रतिभाशाली था वह पुलिस की कुदृष्टि से नहीं बच सका। निरेन्द्रलाल भट्टाचार्य बंगाल क्रिमिनल ला अमेंडमेंट ऐक्ट (बंगाल फौजदारी कानून संशोधन अधिनियम) के अन्तर्गत गिरफ्तार करके स्थानीय जेल में ठूँस दिया गया। उसके कुछ समय के उपरान्त उसको हिजली बन्दी शिविर में स्थानान्तरित कर दिया गया। उसका भय यह था कि उसका भविष्य अन्धकारमय हो गया।

अनिश्चित काल तक बन्दी बने रहने की सम्भावना ने उसमें वहां से निकलकर स्वतन्त्र मनुष्य की भांति मातृभूमि की सेवा करने की आकांक्षा उत्पन्न कर दी। उसने सबसे सरल रास्ता चुना क्योंकि सरकार उसे कब छोड़ेगी यह अत्यन्त अनिश्चित था उसने आत्महत्या करली। २७ फरवरी १९३६ को वह मुख्य जीने की दीवाल में खिड़की की लोहे की सलाखों से लटका हुआ मिला।

मृत्यु के द्वार को —१२ मार्च १९३२ को महेन्द्रनाथ राय को गिरफ्तार कर जेल में रख दिया गया। उनका स्वास्थ्य जेल में लगातार गिरता ही गया। अस्तु उनको ३१ मई १९३६ को प्रेसीडेंसी जेल में स्थानान्तरित कर दिया गया। प्रेसीडेंसी जेल में भेजने के पहले उनको ३० अप्रैल से ३१ मई तक बुना डिटैंशन शिविर में रक्खा गया था। प्रसीडेंसी जेल में भी उनका स्वास्थ्य गिरता ही गया। उनके स्वास्थ्य की दशा इतनी गम्भीर हो गई कि उनको मेडिकल कालेज में ले जाना पड़ा जहां उस देशभक्त वीर ने मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने को भेंट चढ़ा दिया। ४ फरवरी १९३७ को मेडिकल कॉलिज में उनका स्वर्गवास हो गया।

अन्तिम गान —रामकृष्ण चक्रवर्ती जब गिरफ्तार हुआ तो वह फेफड़ों के क्षय रोग से पीड़ित था और उसका स्वास्थ्य अत्यन्त गिरा हुआ था। परन्तु उसकी अन्तर आत्मा उसके दुबले पतले निर्बल नाशवान शरीर की अपेक्षा बहुत सबल थी अतएव वह भारी कष्टों की सम्भावना की ओर से निश्चिन्त उदास था। उस समय के अत्यन्त कुख्यात जेल मिदनापुर की गदी और अंधेरी कोठरी में और वह भी अधिकांश समय हथकड़ी और बेड़ियों में रहने के कारण उसका स्वास्थ्य तेजी से गिर गया। दयावान सरकार ने उसकी माता सावित्री देवी को जो भागे हुए क्रान्तिकारी को आश्रय देने के अपराध में अभियुक्त थी उसी जेल में स्त्रियों के खंड में रख दिया था। उसको केवल यही संतोष था कि वह अपने पुत्र के समीप उसी जेल में है जो कि मृत्यु शय्या पर पड़ा था। मां ने बार बार प्रार्थना पत्र दिए कि उसे अपने क्षय रोग से ग्रस्त पुत्र से साक्षात्कार करने की आज्ञा दी जावे परन्तु उस उदार सरकार ने मां की उस प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। दुखी मां का वात्सल्य पूरित हृदय अपने पुत्र के गिरते हुए स्वास्थ्य की खेदजनक सूचना से विदीर्ण हो उठा परन्तु सरकार का हृदय नहीं पसीजा। रामकृष्ण की शक्ति क्षीण होती गई और बढ़ती हुई थकावट के चिन्ह प्रगट होने लगे परन्तु उसको रोकने के लिए जेल अधिकारियों ने कोई गम्भीर प्रयत्न नहीं किया। अतएव वह और अधिक निर्बल होता गया। यद्यपि रामकृष्ण का शरीर अशक्त हो गया था परन्तु उनकी आत्मा में आत्मगौरव की भावना उच्चतम शिखर पर थी। जेल अधिकारियों ने बहुत कुछ प्रयत्न किए परन्तु उन्होंने अपमान जनक शर्तों को घृणा पूर्वक ठुकरा दिया। १९३६ में अपनी मृत्यु के पूर्व वे जेल अनुशासन को भंग करने के अपराध में सजा भुगत रहे थे। अन्त में उनकी पाचन क्रिया बिगड़ गई जो कि क्षय रोग का अन्तिम लक्षण होता है और एक दिन वे फर्श पर मरे पड़े मिले। उनके हाथों में उस समय भी हथकड़ियां पड़ी हुई थीं।

उनकी माता को अत्यन्त अनुकम्पा करके सरकार ने अपने पुत्र के अन्तिम दर्शन करने की आज्ञा दी जो कि अब इस संसार मे नही था। मा को उनके शव के समीप नहीं जाने दिया गया। रामकृष्ण की कोठरी की सुदृढ लोहे की छड़ें उनकी मां को अपने वीर पुत्र के शव पर मां के अश्रु बहाने से रोके हुए थी। रामकृष्ण की मा सावित्री देवी के शोक की गहनता को एक ममतामई माता ही जान सकती है। सरकार ने उसे जो कारावास का दंड दिया था उससे यह दंड (अपने पुत्र के शव पर आसू न बहा सकने का दंड) कहीं अधिक भयानक था। धरमेन्द्र को द्वितीय वीर भूमि अभियोग में ३० अप्रेल १९३५ को सजा हुई थी उसकी पूरी जेल मे २ अप्रेल १९.७ को मृत्यु हो गई।

सूची में वृद्धि हुई —सात मई १९३० को जो कालरपोल में युद्ध हुआ उसमें चार क्रान्तिकारी वीरो ने वीर गति प्राप्त की और दो को पुलिस ने बन्दी बना लिया। फणिभूषण-नन्दी जो कि अमरेन्द्रनाथ नन्दी का चचेरा भाई था उन दो में से एक था। जो अभियोग चला उसमें फणिभूषण को आजीवन निर्वासन काले पानी का दण्ड मिला। उसको जेल में फेफड़ो का क्षय हो गया और अलीपुर सेन्ट्रल जेल में १९३७ में उसकी मृत्यु हो गई।

पागलपन मे भी एक तरीका था —भवानी कुमार गुहा जो कि हिजली बन्दी शिविर में एक बन्दी था उसमे विक्षिप्तता के चिन्ह प्रगट हो गए और उसको मिदनापुर जेल में स्थान्तरित कर दिया गया। वहां उसमे सुधार के चिन्ह प्रगट होने के बजाय उसकी दशा बिगड़ती गई। अन्त में उनको पुलिस की चौकसी मे राची के पागलखाने में रख दिया गया। पागलपन की चिकित्सा करने का यह अत्यन्त निकृष्ट तरीका था। ऐसा प्रतीत होता है कि भवानी अपने पागलपन की अवस्था में भी आत्महत्या की भावना पर विजय नहीं पा सका। एक बन्दी के जीवन से मुक्ति पाने के लिए उसने पुलिस की आंख बचाकर जो हर समय उसकी चौकसी करती थी फांसी लगाकर राची के पागल खाने में आत्म हत्या करली।

सुदूर देश मे —हरिपद महाजन जो कि चीटागांव शस्त्रागार पर आक्रमण में उपस्थित था और जिसकी गिरफ्तारी के लिए भारी पुरस्कार था, भारत की सीमा को पारकर अक्याब पहुच गया। वह आठ महीने तक पुलिस द्वारा आक्रान्त चीटागांव में छिपा रहा था। हरिपद का लक्ष्य बरमा था। पुलिस के गुप्तचर उसका पीछा कर रहे थे वह अत्यन्त कठिनाइयों का सामना करते हुए तीन दिन कठिन यात्रा कर अक्याब पहुँचा। बरमा में उसका जीवन अत्यन्त कष्टमय और अभावग्रस्त था। वह अपने अभावों और कठिनाइयों से एक वीर योद्धा की भांति जीवन के अन्त तक संघर्ष करता रहा। अन्त में १९४२ में उसकी मृत्यु हुई। वह वीर अपनी मातृभूमि से बहुत दूर जिसको स्वतन्त्र करने के लिए उसने अपने जीवन को ही समर्पण कर दिया था। अज्ञात दशा में मरा।

अनिश्चित अस्तित्व —बिहारीलाल बरुआ जो चीटागांव का रहने वाला था फरार हो गया था, २८ अक्टूबर, १९३४ को गिरफ्तार कर लिया गया। ५ जुलाई १९३५ को गिरफ्तारी से बचने के लिए सरकारी आज्ञा की अवज्ञा करने के अपराध में उसको पांच वर्ष का कठोर कारावास का दंड दिया गया। जेल में उसे क्षय रोग हो गया और २७ नवम्बर, १९३७ को अलीपुर सेंट्रल जेल में उनकी मृत्यु हो गई।

अध्याय ६

न रुकने वाला प्रकोप (१९३१-४२)

जबकि देश राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के नेतृत्व में देश व्यापी सत्याग्रह आन्दोलन की तैयारियां कर रहा था, उस समय क्रांतिकारी कार्यवाहियां अपने उच्चतम शिखर पर पहुंच रही थीं। क्रांतिकारी योद्धा विशेषकर उत्तर भारत में अत्यन्त सक्रिय हो उठे थे और अपने लक्ष्यों पर सफलता पूर्वक आक्रमण कर रहे थे। क्रान्तिकारी कार्यवाहियों की यह प्रक्रिया बिना रुके अबाध गति से चल रही थी। इन क्रान्तिकारी कार्यवाहियों के फल स्वरूप दोनों हो दलों में यथेष्ट जीवन हानि हुई। दमनकारी अध्यादेशों तथा कानूनों का कोई प्रभावकारी परिणाम नहीं निकला। मिदनापुर में लगातार तीन योरोपियन मैजिस्ट्रेटों की हत्या, चीटागांव में शस्त्रागार तथा अन्य सरकारी भवनों पर सफल आक्रमण भारत के वीर पुत्रों के क्रान्तिकारी प्रयत्नों की इस काल में चरम उपलब्धि थे।[1]

दबी हुई शिकायत (१९३१)

पंजाब की क्रान्तिकारी घटनाएं लाहौर जिले के वलतोहा गांव के सज्जनसिंह के मस्तिष्क में उथल पुथल मचा रही थीं अतएव उसने १९३० में किसी ब्रिटिश आफिसर को मारने के स्पष्ट उद्देश्य से पंजाब की प्रशिक्षण बटालियन में अपना नाम लिखा लिया। वह तीन महीने तक उपयुक्त अवसर की बाट जोहता रहा परन्तु उपयुक्त अवसर प्रगट नहीं हुआ।

२० जनवरी १९३१ को मैजिस्ट्रेट के सम्मुख जो कि उसके अभियोग की सुनवाई कर रहा था सज्जनसिंह ने कहा कि वह अपने गांव से लाहौर छावनी के कर्नल की हत्या करने के उद्देश्य से चला। उसको बतलाया गया था कि मुगलपुरा में कैप्टेन कर्टिस के बंगले में अपेक्षित सैनिक अधिकारी रहता है। उसने तुरन्त निश्चय कर लिया कि वह सीधा बंगले घुस कर उसको मार देगा। उसने मकान का पता लगा लिया और १६ जनवरी १९३१ को मध्याह्न के उपरान्त वह मकान में घुस गया और अपनी कृपाण से मिसेज कर्टिस और उनकी दो तरुण लड़कियों पर कई वार किए। इसके उपरान्त उसने कर्नल की तीव्रता से खोज की परन्तु कर्नल वहां नहीं था। श्रीमती कर्टिस की अस्पताल में मृत्यु हो गई और दोनों लड़कियां किसी प्रकार बचाली गईं। सज्जनसिंह पर श्रीमती कर्टिस का खून करने और उनकी दोनों पुत्रियों को गम्भीर चोटें पहुंचाने के आरोप लगाए गए। सात फरवरी १९३१ को सज्जनसिंह को मृत्यु दंड दे दिया गया जो उसने बिना तनिक भी उद्विग्नता प्रदर्शित किए सुना। एक प्रश्न के उत्तर में सज्जनसिंह ने कहा कि उसने बच्चों पर वार इसलिए किया, क्योंकि जलियां वाला बाग और पेशावर में भारतीय बच्चों को अत्यन्त निर्दयतापूर्वक मारा गया था। आठ अप्रैल, १९३१ को सज्जनसिंह ने लाहौर सन्ट्रल जेल में कानून के अन्दर सर्वोच्च दंड प्राप्त किया। जब वह फांसी के तख्ते पर चढ़ा तो वह बराबर "भगतसिंह जिन्दाबाद" के नारे लगाता रहा।

शतयुद्धों का वीर (१९३१)

चन्द्रशेखर आजाद उत्तर प्रदेश और पंजाब की दो सरकारों के लिए भयंकर

घातक था। उसका नाम पुलिस को भयभीत कर देने के लिए यथेष्ट था क्योंकि वह अपने लक्ष्य पर सफलतापूर्वक आक्रमण करने के लिए प्रसिद्ध था। उसके सम्बन्ध में यह भी प्रसिद्ध था कि वह ऐसे अवसर पर जो गिरफ्तारी से बच निकलने में सिद्ध हस्त था कि जब कि पुलिस यह समझती थी कि उसके अब बच निकलने की किंचित मात्र भी सम्भावना नहीं है। बालकपन में उसका नाम चन्द्रशेखर था परन्तु असहयोग आन्दोलन में उसने सेन्ट्रल हिन्दु हाई स्कूल से अपनी पढ़ाई छोड़ी तो अपने नाम के साथ आजाद जोड़ लिया। महात्मा गांधी के नेतृत्व में जब असहयोग आन्दोलन छिड़ा तो चन्द्रशेखर ने स्कूल छोड़ दिया। यद्यपि चन्द्रशेखर मुख्यतः भेलूपुर वाराणसी में रहते थे परन्तु अपने यौवन में उन्होंने उत्तर प्रदेश तथा पंजाब के विस्तृत क्षेत्र को अपना कार्य क्षेत्र बना लिया था। वे अपने साथियों के लिए जो कि प्रान्त के सुदूर भागों में कार्य कर रहे थे एक सम्पर्क कड़ी का कार्य करते थे और उन सभी साथियों के लिए प्रकाश देने वाले तारे की भांति थे। अहिंसक असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के दण्ड स्वरूप उन्हें कोड़े से पीटे जाने का दण्ड दिया गया। परन्तु बाद को उन्होंने सशस्त्र तथा सैनिक कार्यवाही पर अधिक बल दिया और जब कि असहयोग का तेज प्रवाह बह रहा था तो उस समय का उपयोग उन्होंने सशस्त्र विद्रोह की तैयारी करने के लिए किया कि जिससे अनुकूल अवसर पर देश को स्वतन्त्र बनाने के लिए सशस्त्र क्रान्ति की जा सके।

उत्तर प्रदेश की हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी की सेना के वे एक प्रमुख नेता थे और सेना के प्रधान सेनापति थे। जब कभी यह क्रान्तिकारी सेना कोई आक्रमण या कार्यवाही करती, चन्द्रशेखर आजाद सदैव आगे की पंक्ति में रहते थे, और ऐसी कोई महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी कार्यवाही नहीं थी जिसमें वे स्वयं सम्मिलित न हुए हों और अपने साथियों का नेतृत्व न किया हो। काकोरी देहली और लाहौर की घटनाओं में उनके नेतृत्व में ही क्रान्तिकारियों ने कार्य किया था। पुलिस ने जो जांच की उससे ज्ञात हुआ कि इन सभी कार्यवाहियों में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। कई वर्षों तक वे पुलिस की आंख में धूल झोंक कर बचते रहे। पुलिस उनकी टोह में थी परन्तु वे उसके हाथ नहीं आए और वे कभी मोटर ड्राइवर तो कभी नाविक का काम करते थे। १६ अक्तोबर, १९३० को सरकार ने 'लाहौर षड्यन्त्र' के अभियोग में वांछित व्यक्तियों तथा कुछ अन्य व्यक्तियों के सम्बन्ध में जिनको एक विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए षड्यन्त्र के सम्बन्ध में जिसके बारे में पंजाब में जांच हो रही है पुलिस पकड़ना चाहती थी—आवश्यक जानकारी या खबर देने पर जिससे कि वे लोग गिरफ्तार हो सकें, भारी पारितोषिक देने की घोषणा की।

सरकार को जिस व्यक्ति की विशेष रूप से तलाश थी उसके सम्बन्ध में जो विज्ञप्ति में जानकारी दी गई वह इस प्रकार की थी चन्द्रशेखर आजाद उपनाम पण्डित जी उपनाम सीताराम जाति ब्राह्मण जो पहले बैजनाथ टोना डाकखाना भेलूपुरा बनारस में रहता था। यह उस व्यक्ति का विवरण था जिसकी सरकार को आवश्यकता थी। उस दिन निर्धारित दिन अर्थात २७ फरवरी १९३१ को वे अपने एक साथी के साथ ऐल्फ्रेड पार्क इलाहाबाद में बैठे हुए थे। समय लगभग प्रातःकाल ६॥ बजे था। वहां कुछ पुलिस के भेदिए उन पर निगाह रख रहे थे उन्हें संदेह हो गया कि वे संदेहजनक व्यक्ति हैं उन्होंने कोतवाली को सूचना भेज दी। जो पुलिसमैन पार्क की रखवाली कर रहे थे धीरे धीरे अपने शिकार की ओर बढ़ने लगे। जब कि वे आजाद से बीस गज की

दूरी तक पहुंच गए तो आजाद ने अपना रिवाल्वर निकाला और जो पुलिसमैन उनके सबसे अधिक पास था उस पर निशाना लगाया। उन्हें थोड़ी देर हो गई। पुलिस ने उनको बहुत पहले ही देख लिया था। उससे पहले कि आजाद को पुलिस की उपस्थिति का ज्ञान हुआ पुलिस इसके लिए पहले से ही तयार थी अतएव आजाद जब तक अपने रिवाल्वर से गोली छोड़ें उससे एक सैकिण्ड से भी कम पहले पुलिस ने गोली चला दी। ऐसा प्रतीत होता था कि उनकी टांग में कहीं गोली लगी क्योंकि उन्हें उठने में कठिनाई हुई। उसके बाद दोनों ओर से गोली चलने लगी और सम्भवत आजाद के बायें हाथ में दूसरी गोली लगी उनका साथी कुछ कदम दौड़ कर एक पेड़ के पीछे छिप गया। आजाद कठिनाई से रेंग कर एक मोटे वृक्ष की आड़ में चले गए।

दो पुलिसमैन आजाद के बहुत समीप एक खाई के समीप तक रेंग कर पहुंच गए। अब आजाद उनकी गोलियों की बौछार के सामने थे। यह घमासान युद्ध लगभग पन्द्रह मिनिट तक चलता रहा। उसी समय एक गोली लगने से आजाद गम्भीर रूप से घायल हो गए और वे पीठ के बल गिरते हुए देखे गए। इस युद्ध में तीन पुलिसमैन जख्मी हो गए एक अत्यन्त गम्भीर रूप से घायल हो गया था। आजाद का साथी जो उनसे कुछ ही गज की दूरी पर प्रतीक्षा कर रहा था उसने पेड़ के आश्रय को छोड़ कर उस योरोपियन आफिसर पर आक्रमण करना चाहा जो पुलिस दल का नतृत्व कर रहा था। आजाद ने जोर से चिल्लाकर उससे कहा "मैं मरने वाला हूं भगवान के लिए भाग जावो मेरे लिए न रुको" परन्तु अनिच्छा पूर्वक साथी को अपने नेता की आज्ञा शिरोधार्य करनी पड़ी और वह समीप ही खड़े हुए एक विद्यार्थी से उसकी साइकिल छीन कर उस पर चढ़ कर भागा। घायल व्यक्ति (आजाद) ने अपनी पिस्तौल उठाई और कनपटी पर गोली चला दी। उनकी तुरन्त ही मृत्यु हो गई। उस दशा में उन पर एक दूसरे कांस्टेबिल ने गोली चलाई। गोली ने उनकी जांघ को बेध दिया।

आजाद की दाहिनी टांग के निचले हिस्से में दो घाव थे जिनके कारण जांघ की हड्डी टूट गई थी। एक दूसरी गोली दाहिनी जांघ से निकाली गई। घातक घाव सिर की दाहिनी ओर था और एक घाव छाती पर भी था। आजाद का शव रसूलाबाद घाट पर दाह संस्कार के लिए भेज दिया गया। पुलिस की निगरानी में उनकी दाह क्रिया कर दी गई।

इस प्रकार एक अत्यन्त प्रकाशवान नक्षत्र देश की राजनीतिक दासता के अंधकार को अपने तेज प्रकाश से अपने जीवनके अल्प समय में आलोकित कर अनन्त काल के गर्भ में अस्त हो गया। अपने पीछे वे अपना नाम यश छोड़ गए जो इतिहास के पृष्ठों को अलंकृत करता रहेगा। २८ फरवरी १९३१ की पोस्ट मार्टम रिपोर्ट के अनुसार यह ज्ञात हुआ कि चार गोलियां और पांचवीं गोली का एक टुकड़ा उनके शरीर से निकाला गया।

नोट—आजाद का जन्म २३ जुलाई १९०६ को पूर्व अलीराजपुर राज्य के भावरा ग्राम में हुआ था। सांडर्स हत्या काण्ड में आजाद ने ही उस सिपाही को अपने रिवाल्वर से मारा था कि जो सांडर्स की हत्या करने वालों का पीछा कर रहा था। काकोरी रेलवे डकैती तथा अन्य सभी क्रान्तिकारी कार्यवाहियां उनके निर्देशन में ही हुई थीं। भगतसिंह द्वारा जो बम काण्ड हुआ वह भी उनके निर्देशन में ही हुआ था। अमर शहीद दत्त राजगुरु, सुखदेव तथा भगतसिंह इत्यादि सभी उन्हें अपना सर्वमान्य नेता स्वीकार करते थे।

श्रेणी में प्रथम (१६३१)

स्थानीय स्कूल के मुख्य अध्यापक के निमन्त्रण को स्वीकार कर मिदनापुर के जिलाधीश जेम्स पेडी सात एप्रिल १६३१ को मिदनापुर कालिजियेट स्कूल के प्रबंधकों द्वारा जो शिक्षा प्रदर्शनी आयोजित की गई थी उसको देखन गए। जिलाधीश एक शिकार अभियान के लिए गए हुए थे और उसी दिन कस्बे म शिकार से वापस लौट थे। जब उन्होंने प्रदर्शनी कक्ष में प्रवेश किया तो कोई घटना नहीं घटी और वे चुपचाप दूसरे कक्ष में चले गए। उन्होंने प्रदर्शनी में अपनी गहरी रुचि प्रदर्शित की। कुछ ही सैकिण्डों के उपरान्त सायंकाल के साढे सात बजे दो आक्रमणकारी जो उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे उन्होंने उनके बहुत समीप से उन पर गोलियां चलाईं। उत्तर की ओर दरवाजे की चौखट के पास से जो कि जिलाधीश से तीन फीट से अधिक दूरी पर नहीं थी वहां से वे गोली चला रहे थे। आक्रमणकारी दल में एक लड़का था जिसकी आयु बीस वर्ष से कम थी और जो धारीदार धूमर रंग की कमीज पहने था। सब मिला कर उस छोटे से कक्ष में कुल सात या आठ गोलियां चलाई गई और उसका परिणाम यह हुआ कि वहां भगदड़ पड़ गई। उस समय किसी की भी मन स्थिति ऐसी नहीं थी कि वह सम्मानीय अतिथि के सम्बन्ध में पूछताछ करता और न ही वे यह देख सके कि वे कहां चले गए। जब स्थिति में कुछ सुधार हुआ तो श्री पेडी को लोगों ने सटे हुए कमरे मे एक दीवार के सहारे लगा पाया ऐसा प्रतीत होता था कि गोलियां लगने के उपरान्त वे बीच के दरवाजे से उस कक्ष में चले गए होंगे। यह आश्चर्य की बात थी कि यद्यपि तीन गोलियां उनकी पीठ म और दो दोनों हाथों में घुस गई थी परन्तु पेडी की चेतना नष्ट नहीं हुई। उन्हें तुरन्त एक घोड़ा गाड़ी म डाल कर मिदनापुर अस्पताल में ले जाया गया उनके शरीर से बहुत अधिक रुधिर बह रहा था। एक स्पेशल गाड़ी से कलकत्ता से सर्जन और नर्स तुरन्त भेजी गई जो प्रात २॥ (ढाई) बजे मिदनापुर पहुंची। सर्जन ने तुरन्त ही आपरेशन किया और उनके शरीर से एक गोली निकाली गई। दूसरे दिन १० बजे प्रात काल पेडी का दुबारा आपरेशन हुआ। रोगी की दशा मे सुधार के कोई चिन्ह दृष्टि-गोचर नहीं हुए क्रमश उनकी दशा गिरती गई और तीसरे पहर ५.१० पर उनकी मृत्यु हो गई।

बचन मे मृत्यु (१६३१)

दो संदेहजनक व्यक्ति जिनमें से एक देहली षडयन्त्र अभियोग का फरार था लखनऊ से पटना में आए। स्थानीय पुलिस ने उन पर निगाह रखना शुरू कर दिया क्योंकि लखनऊ की पुलिस ने जो हुलिया तथा अन्य विवरण दिया था उससे वे दोनों मिलते जुलते थे। पटना पुलिस ने उनकी गिरफ्तारी का प्रबंध और व्यवस्था की।

लगातार दो दिन सायंकाल के समय वे पटना नगर को निचली सड़क पर देखे गए और २८ जून १६३१ को रात्रि के नौ बजे वे अपनी साइकिलों पर परिवहोरे याने कि नयाटोला स्थान पर पहुंचे। वहां पुलिस ने उन्हें ललकारा। पुलिस दल की उपेक्षा कर दोनों ने जी जान से भाग जाने की चेष्टा की थी। उस भगदड़ और संघर्ष में उनमे से एक सन्देहजनक व्यक्ति ने एक बम फेंका जिससे थानेदार रामनारायण सिंह घायल हो गया और वो बाद को जनरल हास्पिटल में मर गया। एक दूसरा सिपाही बम से बुरी तरह घायल हो गया जिसे अत्यन्त खतरनाक स्थिति म हास्पिटल ले जाया गया। उन

दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध चलाए जाने वाले अभियोग के मध्य यह ज्ञात हुआ कि राम ललित नामक एक व्यक्ति जिसे क्रान्तिकारी लोग पुलिस का जासूस मानते थे क्रान्तिकारी दल द्वारा पकड़ कर बाग में मार दिया गया, और एक कार्यकर्ता ने जब कि वह एक अग्नि दाडिम (बारूद भरा अनार) भर रहा था तो दुर्घटना हो गई और वह कार्यकर्ता स्वयं अपनी भूल से मर गया। इन घटनाओं का विस्तृत ब्यौरा उपलब्ध न हो सका। गिरफ्तार व्यक्तियों में से एक को आजन्म कठोर कारावास और निर्वासन (काला पानी) की सजा दी गई और दूसरे को सात वर्ष की कठोर कैद दे दी गई।

लाहौर गार्डन का युद्ध (१९३१)

पुलिस दीर्घकाल से जगदीश और उनके साथी दो क्रान्तिकारियों की खोज में थी। पुलिस उनकी खोज लाहौर षड्यन्त्र अभियोग के सम्बन्ध में कर रही थी। उन पर पुलिस एक विस्तृत क्षेत्र में नजर रख रही थी। लगातार खोज बीन करने के उपरान्त ३ मई १९३१ को पुलिस ने उन्हें शालीमार गार्डन (लाहौर) की ओर जाते देखा। यह समाचार शीघ्र ही विभिन्न पुलिस केन्द्रों को पहुँचा दिया गया। जब तक कि वे संदेहजनक अवस्था में बाग में पहुंचे समस्त बाग को पुलिस ने घेर लिया। जगदीश तथा उनके साथी को उस समय तक कोई संदेह नहीं हुआ। जगदीश एक बहते हुए कृत्रिम नाले के किनारे बैठ गए और उनका साथी पास ही लेट कर आराम करने लगा। पुलिस ने एक पुरुष को बुर्के में स्त्री के वेष में अपने शिकार को बातचीत में उलझाए रखने के लिए भेजा। एक स्त्री के आने से दोनों को संदेह हो गया और वे खुले संघर्ष के लिए तैयार हो गए। दोनों ओर से गोलियां चलने लगीं। इस गोली विनिमय में एक गोली जगदीश की गर्दन में लगी। जगदीश गोली के लगने से नाले में गिर पड़ा और उसकी तुरन्त मृत्यु हो गई। उसका मित्र गम्भीर रूप से घायल हो गया और गिरफ्तार कर लिया गया।

दुर्घटना के शिकार (१९३१)

दो मित्र चाननसिंह और उनके एक दूसरे साथी होशियारपुर से खतरनाक ढंग से यात्रा कर रहे थे उनके असबाब में तेज विस्फोटक बम छिपे थे। ३१ मई १९३१ को वे वहां किस उद्देश्य से उतरे यह स्पष्ट नहीं है। जब कि वे सड़क के किनारे बैठे हुए थे तब उनमें से एक ने असावधानी से अपने असबाब को धक्का दे दिया उसका परिणाम यह हुआ कि घोर गर्जना के साथ बम फट गया और चाननसिंह बुरी तरह घायल हो गए जिससे कुछ ही घण्टों में उनकी मृत्यु हो गई।

उनके साथी ने भागने की चेष्टा की परन्तु वे गिरफ्तार कर लिए गए। उन दोनों के मकानों की पुलिस ने तलाशी ली तो उनके यहां विस्फोटक पदार्थ बड़ी मात्रा में मिले।

अस्त्र शस्त्रों का लोभ (१९३१)

देहली और पंजाब में जो क्रान्तिकारी भावना की लहर आई और जिसके परिणाम स्वरूप जो बड़ी संख्या में अनेक क्रान्तिकारियों को फांसी दी गई उसका भारत के अन्य भागों के भावना प्रधान युवकों पर गहरा प्रभाव पड़ा। क्रान्तिकारियों की मनोभावना बम्बई में भी प्रवेश कर गई और वहां भी क्रान्तिकारी काण्ड होने आरम्भ हो। जैसा कि एक युवक ने घटना के उपरान्त बतलाया कि कतिपय युवक भगतसिंह आदि के सम्बन्ध में साहित्य पढ़ते रहे थे और उन्होंने भगतसिंह के साहसिक कृत्य को

दोहराने का निश्चय किया। उसके लिए उन्हें बम और रिवाल्वरों की आवश्यकता थी। वे अपने विचार को मूर्त रूप देने के लिए उपयुक्त अवसर की खोज में थे। २३ जुलाई १९३१ को तीन मित्र यशवन्त सिंह देव नारायन तिवारी तथा एक अन्य तीसरे ने खडवा में एक रेल के डिब्बे म एक योरोपियन को अपने सामान तथा राइफिल के साथ अकेले देखा। उन्होंने तय किया कि उस योरोपियन के सामान को लूट लिया जावे और राईफिल को छोड़ कर उसको बेच कर उसके रुपए से रिवाल्वर खरीदे जावें। अतएव वे तीनों उस गाडी मे चढ गए वह गाडी पजाब मल थी। गाडी मे चढ कर उन्होंने लफ्टीनेन्ट 'जी आर हैक्सट पर आक्रमण कर दिया। लफ्टीनेन्ट बम्बई होकर पूना के सकेत विद्यालय (सिगनल स्कूल) को जा रहा था। चार बजे प्रात का समय था डाक गाड़ी डोंगरे गाव और माडवा के मध्य दौड़ रही थी बम्बई से वह स्थान तीन सौ मील की दूरी पर था। लैफ्टीनेन्ट हैक्सट के साथ उसका कुत्ता भी था जो जोर से भूका और उसने हैक्सट को जगा दिया। उसने दो अजनबी व्यक्तियों को अपने डिब्बे मे देखा जिनके हाथों मे छुरे थे। जैसे ही उसने उठने का प्रयत्न किया दोनों ने उस पर आक्रमण कर उसको चेतना शून्य कर दिया।

हैक्सट के साथ एक दूसरा यात्री भी था। वह २८वी फील्ड ब्रिगेड का लफ्टीनेन्ट था, जो लाहौर से पूना की यात्रा कर रहा था। उसने डिब्बे में तीन व्यक्तियों को देखा और वह एक व्यक्ति से भिड गया। उसने उस छुरे के फल को जिससे उस पर आक्रमण किया गया था हाथ से पकड लिया। छुरा टूट गया और उसका बड़ा टुकड़ा उसके हाथ में रह गया। जब दूसरे व्यक्ति ने उस पर आक्रमण किया तो उसने उस टूटे हुए छुरे से वीरता पूर्वक उसका सामना किया। उसने बिजली का बटन दबा कर प्रकाश कर दिया और जोर से चिल्ला कर हैक्सट को पुकारा कि वह जजीर खींच दे। उसको पता चला कि हैक्सट की दशा गम्भीर है वह लगभग मृत प्राय था अस्तु उसने स्वय ही जजीर खींच दी, और गाडी की गति धीमी हो चली तभी आक्रमणकारी चलती हुई गाडी से कूद कर भाग गए। गाडी घटना स्थल से कुछ दूर पर अन्त मे जाकर रुकी।

हैक्सट् को अस्पताल ले जाया गया, उसकी दशा खतरनाक थी। २४ जुलाई १९३१ को मध्याह्न उपरान्त उसकी मृत्यु हो गई। आक्रमणकारियों का गाडी से भागने के उपरान्त तेजी से पीछा किया गया। सभी पुलिस स्टेशनों को सदेश भेज दिया गया और सभी पुलिस स्टेशनों तथा अधिकारियों को आज्ञा दी गई कि वे आक्रमणकारियों की खोज करें। एक पीछा करने वाला सब इन्स्पेक्टर पुलिस जिसे समीप के थाने में सबसे पहले सूचना मिली थी तुरन्त भुसावल की ओर चल पड़ा। उसे कुछ स्पष्ट ज्ञान नहीं था कि उसे क्या करना चाहिए और क्या न करना चाहिए परन्तु उन सभी को जो उसे मिले यह आज्ञा दी कि जो भी सदेहास्पद व्यक्ति मिलें उसे गिरफ्तार कर लो। ३३१वें मील पर उस पुलिस अधिकारी को सड़क पर काम करने वाले गैंग (मजदूर दल) के लोग मिले। उन्होंने उसे बतलाया कि एक व्यक्ति जो काला कोट तथा पन्ट पहने है और कनवस के जूते पहने है माडवा की ओर एक घन्टे पहले जाता दिखाई दिया था।

जब कि सब इन्सपेक्टर मजदूरों से बात कर रहा था कि एक मोटर ट्राली उसकी ओर आती दिखलाई दी। उसमें बम्बई के डिप्टी चीफ इजीनियर तथा भुसावल के डिवीजनल इन्जीनियर तथा एक अन्य अधिकारी निरीक्षण के लिए दौरे पर आ रहे थे।

सके तो उसे भारी पारितोषिक दिया जावेगा परन्तु सब व्यर्थ हुआ। उस घटना वश एक व्यक्ति से जिसे उसने सन्देह में गिरफ्तार किया था अनायास ही विमल गुप्त के सम्बन्ध में पता चल गया। यद्यपि वह व्यक्ति आसानी से पुलिस को विमल गुप्त के सम्बन्ध कुछ भी बताने को टाल सकता था परन्तु दर्प और शौर्य के अभिमान में उसने पुलिस को बतलाया कि उस युवक का नाम कन्हईलाल भट्टाचार्य था और वह चौबीस परगने में जयनगर थाने के माजिलपुर गांव का निवासी था। पुलिस ने बहुत प्रयत्न किया कि उसका किसी क्रान्तिकारी से सम्बन्ध जोड़ा जावे, परन्तु उसको कोई प्रमाण नहीं मिले, पुलिस को बिना अभियोग चलाए अनेक युवकों को गिरफ्तार कर जेल में डालने का अवसर मिल गया।

सिंह की गुफा के समीप (१९३१)

अभी अंधेरा छाया ही था कि ३१ जुलाई १९३१ को पटना सिटी पुलिस स्टेशन के निकट ही एक विस्फोट की भयंकर आवाज सुनाई दी। पता लगा कि राम (बाबू) धरमशाला गेट घाट में एक बम को लिए हुए था कि बम का विस्फोट हो गया जिसके कारण उसका हाथ बहुत अधिक जख्मी हो गया और वह कक्ष (कमरा) भी बुरी तरह प्रतिग्रस्त हो गया। उसको अस्पताल ले जाया गया, जहां ७ अगस्त १९३१ को उसकी मृत्यु हो गई। राम बाबू सूरज नाथ चौबे का घनिष्ट मित्र तथा सहयोगी था। सूरज नाथ चौबे को १८ एप्रिल १९३१ को मृत्यु दण्ड दिया गया था। दोनों ने मिल कर षड्यन्त्र किया और थानेदार रामनारायण (ललित) सिंह को कंकर बाग रोड पटना में मार डाला था।

योजना के अनुसार (१९३१)

थोड़े समय से हिजली नजरबन्दी शिविर के क्रान्तिकारी कैदियों तथा शिविर अधिकारियों के बीच खिंचाव और कलह चल रहा था। और शिविर के निम्न कोटि के अधिकारियों की नाराजगी के रूख से स्पष्ट था कि कैदियों पर कहर टूटने वाला है। सायंकाल के समय एक नजरबन्द और संतरी में मध्य कहा सुनी हो गई। दोनों ने एक दूसरे को धमकी दी। यह भी अपवाद लगाया कि एक नजरबन्दी कैदी ने एक सिपाही की बिच को तीसरे पहर छीन लेने का प्रयत्न किया। १६ सितम्बर १९३१ को प्रात काल ९ बजे पचास पुलिस मैन तथा दो दर्जन सिपाही लाठियों और डन्डों से लैस होकर नजरबन्दियों की बैरकों पर टूट पड़े और कमरों के अन्दर बिना किसी भी प्रकार की पूर्व सूचना दिए उन्होंने गोली चलाना आरम्भ करदी। नजरबन्दी कैदी इस आक्रमण के लिए तनिक भी सचेत नहीं थे उन्हें इस प्रकार बिना सूचना दिए घातक प्रहार होगा इसका तनिक भी भान नहीं था अस्तु वे अपने को लाठी किर्चों और गोलियों से बचाने के लिए सुरक्षित स्थान पर पहुँचने के लिए बेतहाशा इधर-उधर भागने लगे।

अल्पकाल में ही उन क्रूर सिपाहियों ने शिविर तथा अस्पताल के उस भाग में जहां कि कतिपय बीमार नजरबन्द कैदियों को सुरक्षा के लिए भर्ती किया गया था सो गोलियां दाग दी। आठ चौकियों के संतरियों और उन पहरेदारों ने जो कि स्नान गृहों के पास तैनात थे तथा उन सिपाहियों ने भी जो कि शिविर की सीमा के बाहर पहरेदारी पर नियुक्त थे–एक साथ गोलियां चलाना शुरू कर दिया। उस समय कुछ नजरबन्द कैदी डाईनिंग हॉल में बैठे भोजन कर रहे थे। उनमें से कम से कम एक कैदी को गोली आकर लगी। कैदियों के नौकरों ने घबराहट और भय से डाईनिंग हाल को रोशनी

बुझा दी तब कहीं जाकर गोली चलना बन्द हुई क्योंकि जहां सतरियों की चौकी थी वहां से हाल के अन्दर कोई दिखलाई नहीं दे सकता था।

इस भयकर काड मे कम से कम बीस नजरबन्द जख्मी हो गए। उनमे से चार गम्भीर जख्मी हो गए थे। दो नजरबन्द कदी 'सतोष कुमार मित्र–कलकत्ते के और गोयला बारीसाल के तारकेश्वर सेन मारे गए। तारकेश्वर सेन दूसरी मन्जिल के बरामदे से देख रहे थे कि साथी कदियो के साथ क्या हो रहा है? उनके माथे पर गोली मारी गई जिससे उनकी तत्काल घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई। सतोष कुमार मित्र पहली मन्जिल म अपने कमरे की ड्योढी पर खडे हुए थे। उनके पेट म दो गोलिया घुस कर पार हो गईं और वे वहीं मरकर गिर पडे। कुछ सिपाही ऊपर चढ गए और जो भी उन्हें मिला उनको खूब पिटा। एक तरह से जेल के सतरियो और सिपाहियो ने भयानक मारधाड शुरू कर दी थी। उस क्रूर व्यवहार की तीव्रता सिपाहियो के अपमानजनक शब्दो से और भी अधिक स्पष्ट हो गई। सिपाही चिल्ला रहे थे 'हुकुम मिल गया, रामजी की जय साला लोग को मारो।''

सिपाहियो को निशस्त्र कैदियों पर इस क्रूर हिंसात्मक कार्यवाही से रोकने के लिए कोई उच्च अधिकारी वहां उपस्थित नहीं था। वे निशस्त्र कदी सरकार और उसके आज्ञावर्ती सेवको की दया पर आश्रित थे परन्तु उनके प्रति किए गए इस निर्मम हिंसात्मक व्यवहार से उनकी रक्षा करने वाला कोई नहीं था। यद्यपि कमाडेंट वहा से दो मिनट की दूरी पर ही था परन्तु वह घटना के एक घटे बाद घटना स्थल पर आया। उसके इस व्यवहार से जनता के मन में यह सदेह और गहरा तथा पक्का हो गया कि उसे इस योजना का आरम्भ से ही ज्ञान था और वह जानबूझ कर नहीं आया। सरकार ने इस क्षोभजनक घटना की जाच करने के लिए जो कमेटी नियुक्त की उसकी रिपोर्ट १६ अक्टूबर १९३१ को प्रकाशित की गई। कमेटी ने तथ्यो का विवरण इस प्रकार दिया था। 'एक सतरी ने प्रकोपन के कारण खतरे की घटी बजादी इस पर अन्दर के फाटक से सशस्त्र सिपाही दौड पडे और हवलदार की आज्ञा से उन्होने उन नजरबन्द कदियो पर आक्रमण कर दिया और उन्हें धकेल दिया जो कि इधर उधर घूम रहे थे।''

रिपोर्ट म आगे कहा गया —''पहले सतरियो ने गोलिया चलाई उसके उपरान्त नजरबन्द कदियों ने कुछ थोड़ा बहुत प्रतिशोध करने की चेष्टा की। इस पर सिपाहियों ने धावा बोल दिया और अधाधुन्ध बिना रुके गोलियां चलाना आरम्भ कर दी जिसका तनिक भी औचित्य नहीं था। उन्होंने मुख्य इमारत पर आक्रमण कर दिया और अन्धाधुन्ध गोलिया चलाई परिणाम स्वरूप दो नजरबन्द कैदी मारे गए और अन्य अनेक घायल हो गए। कमेटी ने यह भी कहा कि कतिपय सिपाही बिना किसी औचित्य या कारण के इमारत म घुस गए और कुछ नजरबन्द कदियों को लाठियो और सगीनों से मारा, उन्होंने कुछ गोलिया भी चलाई और उसके उपरान्त वे चले गए।''

रिपोर्ट से स्पष्ट है कि यह नृशस हत्याकाड बिना किसी कारण के किया गया। इस पर कोई टिप्पणी करना व्यर्थ है।

महिलाएं भी (१९३१)

भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास म श्री सी जी बी स्टीवेन्स कोमिल्ला तथा तिपरा के मजिस्ट्रेट तथा कलेक्टर और त्रिपुरा राज्य के पोलिटिकल

एजेंट की हत्या सरकारी अधिकारियों और उनके एजेंटों की हत्या की कड़ी में एक उल्लेखनीय विचलन है। यह प्रथम अवसर था जब बंगाली लड़कियों ने उस कार्य को अपने हाथों में लिया जो अभी तक पुरुषों की कठोर भुजाओं के लिए ही सुरक्षित थे। सुश्री ? परिवारों की दो लड़कियां जो फर्जुल्ला राजकीय हाई स्कूल में आठवीं कक्षा में पढ़ती थीं १४ दिसम्बर १९३१ को लगभग दस बजे प्रातःकाल एक घोड़ा गाड़ी में जिलाधीश के निवास स्थान पर आईं। उन्होंने घोड़ा गाड़ी को फाटक पर ही छोड़ दिया और जिलाधीश से मिलने पैदल बंगले तक गईं। उन्होंने एक विजिटिंग कार्ड जिस पर उनमें से एक लड़की के हस्तलेख में इलासेन और मीरादेवी नाम अंग्रेजी में लिखे थे, स्टीवेंस के पास उनसे साक्षात्कार करने के लिए भिजवाया। स्टीवेंस उस समय दफ्तर में था और एस डी ओ (डिप्टी कलक्टर) से बात कर रहा था। दोनों अधिकारी दफ्तर के कमरे के दरवाजे पर आए और लड़कियों से मिले। उन्होंने लड़कियों से उनके आने के उद्देश्य के सम्बन्ध में थोड़ी बातचीत की। प्रारम्भिक बातचीत के उपरान्त लड़कियों ने एक याचिका मजिस्ट्रेट के हाथ में दे दी जो स्कूल के तरणताल में बंगाली लड़कियों के तैरने देने के सम्बन्ध में थी। उस याचिका को लेकर स्टीवेंस बगल वाले कमरे में अपनी मेज पर गया और याचिका पर निम्नलिखित पृष्ठांकन किया 'मुख्य अध्यापिका महोदया के सुझाव के वास्ते।' वह उसे लेकर लड़कियों के पास आया और मौखिक रूप से उनसे कहा कि वे मुख्य अध्यापिका के द्वारा उनकी सहमति से जावें तभी प्रस्तावित तैराकी प्रतिस्पर्द्धा की व्यवस्था की जा सकती है। एक लड़की जब कि याचिका को स्टीवेंस के बढ़े हुए हाथ से अपने हाथ में लेने ही वाली थी तभी दूसरी लड़की ने रिवाल्वर निकाल लिया और मजिस्ट्रेट की छाती पर केवल डेढ़ फीट की दूरी से गोली दाग दी। इस प्रकार गोली लगने से स्टीवेंस अपने बचाव के लिये पीछे हटा जिससे कि डाइनिंग रूम से होकर वह रसोई घर के कमरे में घुस जावे। जब कि वह पीछे भाग रहा था तो उस पर एक दूसरी गोली दागी गई परन्तु वह उसे न लग कर दूर चली गई। बाद को स्टीवेंस रसोई घर के कमरे में भूमि पर पड़ा मिला उसके प्राण पखेरू उड़ गए थे। दोनों लड़कियों को नौकरों की सहायता से एस डी ओ ने गिरफ्तार कर लिया और उन्हें पुलिस के हवाले कर दिया। लड़कियों ने जिन रिवाल्वरों का उपयोग किया था वे गैर लाइसेंस के थे। वे वेलजियम के निर्मित थे और ०.३२ बोर के थे। स्टीवेंस की शव परीक्षा से ज्ञात हुआ कि उसके हृदय के नीचे घातक घाव था और दोष गोलियां जो कि घबराए हुए हाथों से दागी गई थीं उसके नहीं लगीं। जांच के बाद को यह ज्ञात किया गया कि दो या तीन युवकों ने उस घोड़ा गाड़ी को किराया किया था जिसका लड़कियां ने उपयोग किया था। वे उन लड़कियों को लेकर फौजदारी अदालत की बिल्डिंग इस आशा से गए कि स्टीवेंस वहां मिलेगा। जब स्टीवेंस वहां नहीं मिला तो उन युवकों ने गाड़ी को छोड़ दिया। वे उतर गए और लड़कियां गाड़ी में बैठी रहीं उन्होंने गाड़ीवाले को लड़कियों को जिलाधीश के बंगले ले जाने के लिए कहा। १८ जनवरी १९३२ को लड़कियों पर अभियोग चलाया गया। उन पर हत्या करने के लिए षडयन्त्र करने तथा हत्या करने के आरोप लगाए गए। २७ जनवरी १९३२ को निर्णय दिया गया। अभियुक्त सोलह वर्ष की आयु से अधिक की नहीं थीं अतएव उन सिद्धान्तों को ध्यान में रख कर जो कि कम उमर के तथा किशोर अवस्था के अपराधियों के सम्बन्ध में लागू किए जाते हैं उन्हें फांसी की सजा न देकर आजन्म काले पानी का दण्ड दिया गया।

पुष्प झड़ गया

सात जनवरी १९३१ को बारीसाल जिले के मग्सियानपुर गांव म एक गन्ने के खेत मे कुछ क्रांतिकारी तरुण बम बना रहे थे। एक भयकर विस्फोट हुआ। उस विस्फोट के फल स्वरूप कृष्णकान्त दास के शरीर पर गम्भीर घाव हो गए और असमय मे ही उस क्रांतिकारी युवक की मृत्यु हो गई।

विरोरो स्थान से (१९३२)

शीतल प्रसाद पाडे पुलिस विभाग में चौबीस परगना म परिवीक्षाधीन (प्रोबेशनरी) कांस्टेबिल था। पुलिस विभाग को छोड कर शीतल प्रसाद पाडे क्रांतिकारी राजनीतिज्ञों के साथ आ गया और शीघ्र इतना महत्वपूर्ण हो गया कि सरकार उसको गिरफ्तार करने के लिए आकाश पाताल की खोज करने लगी। यह सूचना मिलने पर एक व्यक्ति बिना लाइसंस के रिवाल्वर के साथ यात्रा कर रहा है, रेलवे पुलिस सब इन्स्पेक्टर मजहर हुसन जमीरहि स्टेशन पर सियालदा देहली ऐक्सप्रेस म चढा। जब ३ अप्रेल १९३२ को प्रात काल ६ बजे गाडी झाझा स्टेशन पर रुकी तो उसको एक आदमी 'शीतल प्रसाद' जिसकी पुलिस को तलाश थी बतलाया गया। कर्तव्य परायण पुलिस अधिकारी सूचना देने वाले के साथ उस डिब्बे मे घुसा जिसमे शीतल प्रसाद बठा था। घुसते ही थानेदार ने शीतल प्रसाद से पूछा तुम्हारा नाम क्या है क्या तुम शीतल प्रसाद हो और क्या तुम्हारे पास बिना लाइसेंस का रिवाल्वर है। उसने उत्तर दिया कि मैं शीतल प्रसाद हूँ और लाइसंस निकालने के बहाने उसने अपनी जेब से कारतूसों से भरा एक रिवाल्वर निकाल लिया और एक के बाद दूसरी अत्यन्त शीघ्रता स चार गोलिया सब इन्स्पेक्टर पर और सूचना देने वाले पर दाग दी। थानेदार मजहर हुसैन की तत्काल मृत्यु हो गई और सूचना देने वाला गम्भीर और खतरनाक रूप से घायल हो गया। उसने अपने सहयात्रियों को उसकी गिरफ्तारी होने के लिए अधिक समय नही दिया। उस भीड़ भरी गाडी में उसने आश्चर्य चकित यात्रियो के सामने ही स्वय को गोली मार ली और मृत्यु का आलिंगन कर लिया।

क्रूर भाग्य (१९३२)

ढाका के इस्लामपुर गाव मे एक निस्तब्ध और शान्त गृह मे रहने वाले सतीश चन्द्र मुकर्जी अपने एकाकी कक्ष में एक दिन अत्यन्त खतरनाक दशा में पाए गए। उनका शरीर बुरी तरह जल गया था विशेषकर नाक। एक बम बनाते समय उसके फट जाने के कारण उनकी यह दशा हुई थी। १५ अप्रेल १९३२ को सतीश को मिटफोड अस्पताल में भर्ती किया गया। जहा उसकी बाई हथेली और दाहिने हाथ की दो अगुलिया काट दी गई। रोगी को फिर चेतना नही हुई और १७ अप्रेल, १९३२ को घावों के परिणाम स्वरूप उसने महाप्रयाण किया।

गलत योजना (१९३१-३२)

पांच तरुण जिनमे क्रांतिकारी भावना कूट कूट कर भरी थी १४ मार्च १९,२ को चार मुरियां डाकखान के पास आए और दौड कर उस कमरे म घुसे जहां कि पोस्ट मास्टर तथा उसके सहायक मेज पर बैठ अपना कार्य कर रहे थे। उनम से दो के पास रिवाल्वर थे और एक के पास छुरा था। उन्होने पोस्ट मास्टर से उस समय पोस्ट आफिस मे जितना भी रुपया था तत्काल मांगा और उनमे स एक ने वह सब नकद रुपया और बीमे के लिफाफे जो मेज पर पड़े थे, उठा लिए। आक्रमणकारी कच

के बाहर निकल आए और उन्होंने उस व्यक्ति का अनुसरण किया कि जो कि अपने हाथ में रिवाल्वर लिए पहले ही जा चुका था। फिर उन सबों ने डाकखाने की ईमारत को छोड़ दिया और सड़क पर आ गए। जब कि डाक खाने के कर्मचारी उस अकस्मात आक्रमण व धक्के से सचेत हुए तो उन्होंने आक्रमण कारियों का पीछा किया और क्रमश उनके साथ कुछ गांव वाले भी सम्मिलित होते गए। आक्रमण कारियों में से एक व्यक्ति मनोरंजन भट्टाचार्य पकड़ा जाने वाला ही था कि उसने पहले उसका पीछा करने वाले और उसके बाद एक सिपाही के छुरा मारा। इतने पर भी गांव वालों ने पीछा करना नहीं छोड़ा और अन्त में उन्होंने सभी आक्रमण कारियों को पकड़ लिया। उनके पास से भी लूट का माल बरामद कर लिया। चारों अभियुक्तों पर विशेष अदालत में अभियोग चलाया गया। विशेष अदालत में मनोरंजन भट्टाचार्य को भारतीय दण्ड संहिता (इण्डियन पेनल कोड) की धारा ३०२, ३२६, २६६ तथा शस्त्र अधिनियम की धारा १६ एफ के अन्तर्गत अपराधी पाया गया और उसको प्राण दण्ड की सजा दी गई तथा शेष चारों को सात सात साल का कठोर कारावास दिया गया। मनोरंजन की अपील की सुनवाई ४ जुलाई १६३२ को उच्च न्यायालय की एक विशेष बंच के सामने हुई। उसकी अपील अस्वीकार कर दी गई और नीचे की अदालत के निर्णय की पुष्टि कर दी गई। बारीसाल जेल में २२ अगस्त १६३२ को फरीदपुर थाने के इदिलपुर गांव के मनोरंजन भट्टाचार्य को फांसी दे दी गई।

मुक्ति के लिए निराशान्ध प्रयास

एक हैड कांस्टेबिल भी अन्य कांस्टेबिलों के साथ अण्डमन से वापस भेजे गए पच्चीस आजीवन कैदियों को ले जा रहे थे। इन कैदियों को पंजाब जेल को स्थानान्तर करने की आज्ञा दी गई थी और वे २३ एप्रिल १६३२ को ६१ अपट्रेन से यात्रा कर रहे थे। जब कि ट्रेन नरवाना और जींद तथा देहली के मध्य जा रही थी तभी यकायक २३ एप्रिल को रात्रि के एक बजे कैदियों ने कांस्टेबिलों पर आक्रमण कर दिया और उन्हें विवश कर दिया। कैदियों ने वैकुअम ब्रेक जंजीर को खींचकर गाड़ी को रोक लिया और उनमें से दस कैदी कांस्टेबिलों की चार बन्दूकें और कारतूस लेकर भाग गए। भागने वाले कैदियों का पंजाब सरकार की रेलवे पुलिस पेट्रोल ने जो कि उस गाड़ी से यात्रा कर रहा था सामना किया परन्तु वे कैदियों को भागने से रोकने में असफल नहीं हुए। दोनों दलों में जम कर गोली चली। गोलियों के इस आदान प्रदान में हैड कांस्टेबिल अमरनाथ को घातक भयंकर चोट आई और एक दूसरा कांस्टेबिल भी भयंकर और गम्भीर रूप से जख्मी हो गया। कोई भी कैदी पकड़ा न जा सका।

प्रतिशोध—१६ मार्च, १६३१ को गुप्तचर विभाग के इन्स्पेक्टर ससमका भट्टाचार्य को अमरेन्द्र नाथ नदी ने गोली मार कर उसको यम लोक पहुंचा दिया।

जो अन्त में को चला गया—अखिल चन्द्र बानिका ममनसिंह जिले की सराय यादा डकैती के अभियोग में पकड़ा गया। उस पर अभियोग और उसको पांच वर्ष का कठोर कारागार का दण्ड दे दिया गया। जब कि वह अपना दण्ड भुगत रहा था तो ममनसिंह जिला जेल में सात और आठ जून १६३२ के मध्य उसकी मृत्यु हो गई। १५ फरवरी १६३२ को इयानगेल (ममनसिंह) में डकैती डालते समय डाका डालने वाले क्रान्तिकारी समूह के वीरेन्द्रकुमार दत्त के शरीर में विरोध करने वालों द्वारा फेंका गया भाला घुस गया। वीरेन का पेट चिर गया और दूसरे दिन सोलह फरवरी १६३२ को

इयानगिल के अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई।

२ शृंखला मे दूसरी घटना (१९३२–३३)

मिदनापुर जिले के जिलाधीश श्री रोबर्ट डोगलास जो श्री जे पैडी के जिलाधीश नियुक्त हुए अपने जीवन के लिए शंकित थे। जब वे मिदनापुर जिले के जिलाधीश नियुक्त हुए और कार्य भार सम्हाला तो उनका मन भावी संकट की आशंका से भरा था। जिस खतरे की आशंका उनको थी वह सही सिद्ध हुआ। उन्होंने ५ अगस्त १९३१ को अपने भाई को लिखा था "सम्बद्ध तथ्य यह है कि मेरा जीवन वास्तविक तथा गम्भीर खतरे में है।" यह आशंका और भय अकारण नहीं था। इसी बीच उन्हें एक धमकी भरा पत्र मिला था। उन्हें सदैव हत्यारे की गोली की आशंका बनी रहती थी इसलिए वे अपनी सुरक्षा के लिए विशेष सतर्कता और सावधानी बरतते थे। परन्तु एक जिलाधीश तथा दण्डनायक होने के नाते उन्हें राजकीय कार्यों तथा जिला बोर्ड के पदेन अध्यक्ष के नाते अपने कर्त्तव्य को पूरा करने के लिए आना जाना तो पड़ता ही था। ३० एप्रिल १९३२ को डोगलास जिला बोर्ड की बैठक की अध्यक्षता कर रहे थे। वहां जिला बोर्ड के सदस्य बड़ी संख्या में उपस्थित थे और सायंकाल ५.३० तक बैठक की कार्यवाही सुचारू रूप से चल रही थी। जब कार्यक्रम (एजेंडा) के नवें पद (आइटम) पर पहुंचे उस समय डोगलास एक मेज के ऊपर झुके हुए जिला बोर्ड के कुछ कागजों पर हस्ताक्षर कर रहे थे। उसी समय दो युवक पश्चिमी फाटक से इमारत के बरामदे में आए। और उनमें से एक डोगलास के दाहिनी ओर और दूसरा बाईं ओर उनसे केवल चार गज की दूरी पर खड़ा हो गया। बिना तनिक भी समय नष्ट किए उन्होंने एक के बाद दूसरी तेजी से ६ गोलियां दाग दीं। उनमें से तीन गोलियां जिलाधीश के क्रमशः बांह छाती और पेट में लगीं उनको तुरन्त हास्पिटल ले जाया गया। खड़गपुर से सिविल सर्जन और नर्सें तुरन्त भेजी गईं परन्तु डोगलास की रात्रि को ९.४५ पर मृत्यु हो गई। डोगलास के चार गोली घुसने के और तीन गोली निकलने के जख्म थे और उनकी मृत्यु गोलियों के लगने से निकलने वाले रुधिर तथा मानसिक आघात से हुई। दोनों आक्रमणकारी जिनमें से एक प्रद्योत कुमार भट्टाचार्य था जिस कमरे में जिला बोर्ड की बैठक हो रही थी उसके उत्तरी दरवाजे से निकल कर मुख्य फाटक की ओर भागे और उन्होंने भाग को दौड़ कर पार कर लिया। अब डिवीजनल आफिसर तमलुक ने रिवाल्वर लेकर उनका पीछा किया। इस घातक आक्रमण के होने से पूर्व 'ब्रिटिश उच्छेद' समिति मिदनापुर लगातार समय-समय पर पोस्टर निकालती रही थी। फरवरी १९३२ में एक ऐसा पोस्टर थाने पर चिपका हुआ था। उसका शीर्षक था 'प्राण के बदले प्राण।' उस पोस्टर की पीठ पर जो कि डोगलास को भेजा गया था लिखा था "डोगलास हम यह जानना चाहते हैं कि क्या तुम्हारी आज्ञा से अथवा क्या तुम्हें यह ज्ञात है कि मुखिया तथा अन्य थानों के अन्तर्गत कांग्रेस के स्वयं सेवकों के विरुद्ध पुलिस ने अत्यन्त कठोर दमन चक्र चला रखा है और पुलिस भयानक दमन कर रही है। अपना कार्य आरम्भ करने के पूर्व हम यह आवश्यक समझते हैं कि यह स्पष्ट करलें कि क्या यह सब तुम्हारी आज्ञा से अथवा तुम्हारी जानकारी में हो रहा है। इसके उपरान्त हम प्रतीक्षा करेंगे और देखेंगे कि इस भयंकर दमन को संतोषजनक ढंग से रोकने के लिए तुम कोई आज्ञा निकालते हो या नहीं। यदि तुम ऐसी कोई आज्ञा नहीं निकालते तो हमें विवश होकर, तुम्हारी पुलिस के विरुद्ध कार्यवाही करनी होगी और तुम्हें यह ध्यान

में रखना चाहिए कि जल्दी या देर से तुमको इसके भयंकर परिणाम भुगतने होंगे।
—हुक्मसर भाई बी पी

जिला बोर्ड के कार्यालय से निकलने के उपरान्त दोनों आक्रमणकारी थोड़ी दूरी तक साथ भागे और अमर लाज के समीप दो सड़कों के मिलन स्थान पर वे अलग हो गए। उनमें से एक उत्तर पूर्व की ओर भागा और दूसरा दक्षिण की ओर चला गया। प्रद्योत कुछ झोंपड़ियों के समूह में घुस कर सबसे भीतर के कमरे में घुस गया। दो पुलिस के अर्दलियों तथा दो अन्य सिपाहियों ने निकलने के रास्तों को रोक लिया। डोगलास के सशस्त्र अर्दली ने झोंपड़ी के दरवाजे के चौखटे में से गोली चलाना आरम्भ किया। उस चौखटे में कोई पत्तियां नहीं थी। प्रद्योत ने देखा कि वह आश्रय स्थान सुरक्षित नहीं है अतएव वह उस झोंपड़ी से निकल कर उत्तर की ओर भागा। पीछा करने वालों ने उस पर दो गोलियां चलाईं और वह कांटेदार झाड़ी में घुस पड़ा और बुरी तरह भूमि पर गिर पड़ा। उसको पीछा करने वालों ने जमीन पर ही दबोच लिया और उसको बहुत मारा गया। उसकी, जैसी कि इन परिस्थितियों में तलाशी ली जाती है तलाशी ली गई। उसकी दाहिनी जेब में एक कागज का स्लिप मिला, जिस पर नीचे लिखा हुआ था। 'यह हिजली के नृशंस और भयानक अत्याचारों के विरुद्ध एक निर्बल प्रतिवाद है। इन व्यक्तियों की मृत्यु से ब्रिटेन पाठ पढ़े और और हमारे बलिदानों से भारत जाग उठे।" यह यहां बतला देना आवश्यक है कि ७ सितम्बर से २१ सितम्बर १९३१ तक डोगलास ने हिजली गोलीकाण्ड के मामले की जांच की थी जिसमें दो नजरबन्द कैदी मारे गए थे। एक दूसरे कागज के टुकड़े पर एक पंक्ति लिखी थी 'हमारी प्रारम्भिक गणित" जिसका अर्थ सरकार ने यह लगाया कि प्रतिशोध की शृंखला में यह प्रथम कार्यवाही थी। उसके पास से पुलिस ने ६ चेम्बर का एक रिवाल्वर छीन लिया जिसमें पांच जीवित कारतूस भरे थे। केवल चेम्बर खाली था। बाद को यह पता चला कि प्रद्योत के पास जो रिवाल्वर मिला उसकी गोली से डोगलास की मृत्यु नहीं हुई थी।

इसके अतिरिक्त दूसरे दिन अमर लाज के मार्ग पर जिस ओर दूसरा आक्रमणकारी भागा था एक गोली मिली थी। उससे यह निश्चयपूर्वक सिद्ध हो गया कि उसके पास ०.३८० बोर का रिवाल्वर था और डोगलास की मृत्यु उस व्यक्ति की गोली से हुई कि जो साफ बच कर निकल जाने में सफल हो गया। प्रद्योत के साथी का कोई पता नहीं चला। उसको २४० गज तक पीछा करने वालों ने भागते देखा उसके उपरान्त वह गायब हो गया और उसका पीछा करने वालों की दृष्टि से ओझल हो गया। २१ मई को उसको गिरफ्तार करने अथवा उसके बारे में ऐसी सूचना देने जिससे कि वह गिरफ्तार किया जा सके के लिए पांच हजार रुपयों का पारितोषिक घोषित किया गया परन्तु उसके सम्बन्ध में तनिक भी कुछ ज्ञात नहीं हो सका। कम से कम अभियोजकों को अपने मतलब की कोई जानकारी उसके सम्बन्ध में प्राप्त नहीं हुई। प्रद्योत के साथ अमानवीय व्यवहार किया गया उसको भयकर शारीरिक यातना और कष्ट दिए गए कि वह अपने साथी का नाम बतलादे। प्रद्योत ने बहुत अधिक शारीरिक यातना सहने के उपरान्त ४ मई को उसका नाम "सिताशंस बोस बतलाया जो कि जांच करने पर नकली नाम निकला। प्रद्योत ने शारीरिक यातना से छुटकारा पाने के लिए एक फर्जी नाम बतला दिया।

प्रद्योत पर एक विशेष अदालत के समक्ष अभियोग चलाया गया। विशेष

अदालत ने अभियोग की सुनवाई ८ जून १९३२ से आरम्भ की। १० जून को अभियुक्त पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा ३०२ जो कि धारा १०२ बी के साथ पढ़ी जानी थी और धारा ३०२ जो धारा ३४ के साथ पढ़ी जानी थी के अन्तगत आरोप लगाए गए। इन धाराओं के अनुसार उस पर हत्या के लिए षडयन्त्र करने और हत्या करने के लिए समान इच्छा से कार्य करने के आरोप लगाए गए थे। २२ जून को अभियोग समाप्त हो गया। विशेष अदालत ने मिरजापुर में २५ जून १९३२ को अपना निर्णय दे दिया और अभियुक्त को इस लिये आधार पर प्राण दण्ड दे दिया कि "हत्या जानबूझ कर की गई तथा वह निर्मम थी। अभियुक्त ने अपने रिवाल्वर से डोगलास पर निशान लगाया था परन्तु उसके रिवाल्वर की गोली चूक गई अतएव वास्तविक हत्यारे और उसके सहयोगी के दण्ड में कोई अन्तर नहीं किया जा सकता जिसने एक रिवाल्वर की गोली चलाई जो चूक गई।' उच्च न्यायालय में इस निर्णय के विरुद्ध अपील की गई। उच्च न्यायालय ने १९ अगस्त को अपील सुनना आरम्भ किया और २२ अगस्त को निर्णय दे दिया। उच्च न्यायालय ने विशेष अदालत के निर्णय की पुष्टि कर दी।

सात अक्टूबर को जब प्रद्योत की माता उससे पहली बार साक्षात्कार करने गई तो वह अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में था और उसने अपनी मां से कहा उसे किसी प्रकार की कोई शिकायत नहीं है। अन्तिम साक्षात्कार ११ जनवरी १९३३ को उसके उन सम्बन्धियों के साथ हुआ जिन्हें सरकार ने उससे मिलने की अनुमति दी थी। मिदनापुर जेल के अन्दर १२ जनवरी १९३३ को प्रात काल पांच बजे प्रद्योत को फांसी दे दी गई। प्रद्योत का वजन अभियोग का आरम्भ होने से फांसी के बीच में यथेष्ट बढ़ गया था। इससे ज्ञात होता है कि उसका मन कितना प्रफुल्लित था। मातृभूमि की बलिवेदी पर अपना शीश चढ़ाने वाले मृत्यु से भय नहीं खाते।

दुस्साहस (१९३२)

१७ मई, १९३२ को जिला बोर्ड की सड़क पर जो कि स्टीमर स्टेशन की ओर जाती थी एक डाक हरकारे पर आक्रमण कर तरुणों के एक दल ने उसके डाक के थैले को छीन लिया। आक्रमणकारी जबकि सड़क के किनारे की खोल को पार कर रहे थे तो खेतों में काम करते हुए किसानों ने उनको देख लिया। उन किसानों ने उनका तेजी से पीछा किया और वे बचने के लिये भागे। एक पीछा करने वाले के पास तेता (भाले के अनुरूप एक अस्त्र) था जिसे उसने ज्योतिमय मित्र के ऊपर फेंक कर मारा जो कि आक्रमणकारियों में से एक था। तेता से ज्योतिमय के पेट में एक गहरा घाव लग गया और वह भूमि पर गिर गया। बाद को जो और लड़ाई हुई उसके परिणाम स्वरूप उसके पेट का जख्म और फट गया और वह खतरनाक हालत में मदारीपुर अस्पताल में ले जाया गया। १८ मई १९३२ को उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार दुस्साहस के कारण एक मूल्यवान जीवन समाप्त हो गया।

मरुभूमि की वायु में (१९३२)

बंगाल सरकार को ग्रीष्म राजधानी दार्जिलिंग से एक संदेश मिला जिसे समाचार एजेंसी ने प्रसारित किया। समाचार एजेंसी ने ६ जून १९३२ को हृन्मय ढंग से प्रसारित किया कि देवली (राजस्थान) के नजरबन्दी कैदियों के शिविर में मृणाल कान्तीराय चौधरी ने आत्म हत्या कर ली। और भी कई नजरबन्दी कैदियों ने अज्ञात भवितव्यता से अपनी रक्षा करने के लिए मृणाल कान्ती घोष का अनुसरण किया।

किसी के जाने उस स्थान से निकल गया। वह वापस लौट कर दूकान मे प्रात काल आया स्नान किया और पुन अस्पताल गया मानों वह अपने मित्र को देखने गया हो। लौट कर उसने पुन दूकान मे विश्राम किया।

लगातार कई बार बन्दूक चलने की आवाज सुनकर अतिथेय एस डी ओ दौड़ कर जीने से नीचे आए और उन्होंने देखा कि उनके अतिथि मरे हुए पडे हैं। पलग पर चार खाली कारतूस पडे थे और एक उस नाली मे पडा था जो कि इमारत के चारों ओर बनी थी। कामाक्षा प्रसाद सेन के एक जख्म ठोढी पर था दो घाव छाती की दाहिनी ओर थे और एक पेट म था। आस पास के सभी स्थानो को छान डाला गया परन्तु हत्या करने वाले का कोई पता नही लगा और न कोई सकेत या चिन्ह मिला। जिलाधीश हत्या करने वाले को ढूढने के सभी उपाय कर रहा था। उसने पुलिस के आदेश पर पोस्ट आफिस को यह निर्देश दिया कि सदेहजनक तारो पर दृष्टि रक्खे और यदि ऐसा कोई तार आवे तो पुलिस को तुरन्त सूचित कर दे।

सायकाल २ बजे के लगभग एक व्यक्ति आया उसने एक तार दिया जिसमे निम्न लिखित सदेश था। कामाक्षा का आपरेशन सफल हो गया कोई चिन्ता की बात नही है। यह तार इच्छापुर के शारदा मेडिकल हाल के एक डाक्टर को दिया था। भेजने वाला था सुरेन्द्र मोहन चक्रवर्ती ७ पटुआटोली ढाका। पुलिस को तुरन्त सूचना दी गई और वह फौरन पोस्ट आफिस पहुची। तार के लाने वाले को रोक लिया गया था और पुलिस ने आते ही उसको गिरफ्तार कर लिया। पुलिस के साथ वह व्यक्ति लौट कर दूकान में गया और उसने कालीपद को बतला दिया जो वहा उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। पुलिस ने उसको गिरफ्तार कर लिया और उसे वे कोतवाली ले गए। बाद को पता चला कि कालीपद ने इससे पूव भी एक तार इच्छापुरा के उसी व्यक्ति को इस आशय का दिया था।

"मुकर्जी की हड्डी गम्भीर रूप से टूट गई है आपरेशन असफल हुआ उसको कलकत्ते भेज रहे हैं। भेजने वाला हिन्दू मुकर्जी।" पुलिस की हिरासत म अभियुक्त ने नीचे लिखा वक्तव्य दिया। मैंने कामाक्षा प्रसाद सेन का मातृभूमि के काय के लिए उसको गोली मार कर सदर सब डिवीजनल आफिसर के मकान मे वध किया है।" "दीवार को फलाग कर मैं प्रात ३ और ४ के मध्य खिडकी के रास्ते उस कमरे मे घुसा जिसमें कामाक्षा प्रसाद सेन सो रहा था। मैं अकेला इस हत्या के लिए उत्तर दायी हू। यदि मातृभूमि को प्रेम करना अपराध है तो मैं अवश्य ही अपराधी हू।" २७ तारीख को मैंने सुरेश गगोली को तार भेजा था क्योंकि बाजार म केवल मात्र वही अकेला व्यक्ति था जो निश्चित था और जब समाचार पत्रों मे इस हत्या का समाचार प्रकाशित होता तो वह तार का अथ समझ जाता।

'एस डी ओ के मकान को किसी ने मुझे नही दिखलाया मैंने स्वय उसे खोजा।' मैं उस व्यक्ति का नाम नही बतलाऊगा जिसने मुझे पिस्तौल दिया था, जिसे मैंने नदी में फेंक दिया। मैंने कामाक्षा प्रसाद सेन का वध इस लिए किया क्योंकि उसने असहयोग आन्दोलन के सम्बन्ध म घोर अत्याचार किया था विशेषकर उसने महिलाओं के साथ अभद्र व्यवहार किया था। मैने यह उचित समझा कि देश की भलाई के लिए उसे समाप्त कर दिया जाय। न तो मुझे यह कहने के लिए सिखाया गया है और न मैं भयवश यह कह रहा हूँ। मैं यह अपराधस्वीकरण इस लिए कर रहा हू कि जिससे पुलिस

निर्दोष व्यक्तियों को व्यर्थ में तंग न करें। १ नवम्बर १९३२ को कालीपद को ढाका के विशेष जज के समक्ष उपस्थित किया गया। जज के समक्ष उसने पुलिस को दिए गए अपने वक्तव्य को वापस ले लिया जिसमें उसने अपने अतिरिक्त और किसी को भी सम्मिलित नहीं किया था। ४ नवम्बर को उस पर हत्या करने का अपराध लगाया गया और ८ नवम्बर को उसको मृत्यु दण्ड दे दिया गया। ९ दिसम्बर १९३२ को उच्च न्यायालय ने मृत्यु दण्ड की पुष्टि कर दी। १६ फरवरी १९३३ को उस युवक ने अपने अविवेक पूर्ण कार्य का मूल्य चुकाया जब कि उस दिन सुबह तड़के उसको ढाका सेन्ट्रल जेल में फांसी दे दी गई। उसके मृत शरीर को पूर्वीय बंगाल ब्राह्मण सभा को उसका अग्नि संस्कार करने के लिए दे दिया गया।

अन्त में (१९३२)

२३ अप्रैल १९३२ को रतनसिंह नामक एक बब्बर अकाली अभियुक्त भटिण्डा के निकट रेल में अपने दस अन्य साथियों के साथ जो पुलिस दल उनको लेकर जा रहा था उस पर आक्रमण कर निकल भागा। हैड कांस्टेबिल जो कि पुलिस दल का नायक था और कदियों के चाज में था मारा गया। सरकार ने भागने वाले अभियुक्तों के नेता रतनसिंह की गिरफ्तारी पर तीन हजार रुपए पारितोषिक की घोषणा कर दी। १५ जुलाई १९३२ को होशियारपुर जिले के कड़वी गांव में वह एक झोपड़ी में मिला। पुलिस ने गांव वालों की सहायता से सायंकाल को उस मकान को घेर लिया और दोनों पक्षों में युद्ध आरम्भ हो गया। रतनसिंह ने पुलिस के आक्रमण का जम कर तीन घंटे तक सामना किया। इस युद्ध में तीन पुलिस कांस्टेबिलों और एक गांव वाले को रतनसिंह ने मार दिया। अन्त में पुलिस की गोली से रतनसिंह घातक रूप से घायल हो गया और वह जीवित रहते गिरफ्तार होने से बच गया। आत्म समर्पण करने की अपेक्षा मृत्यु उसके लिए अधिक सम्मानजनक थी।

जातीय घृणा (१९३२)

२२ वर्ष का एक मुसलमान युवक लेडी रीडिंग हास्पिटल पेशावर में अर्दली था। उसको १९३२ में धरना देने के अपराध में थोड़े दिनों की सजा हो चुकी थी। जबकि २२ जुलाई १९३२ को डब्लू. जे. कोल्डस्ट्रीम अस्पताल के सिविल सर्जन अपने कार्यालय से बाहर निकल कर आपरेशन रूम की ओर जा रहे थे, आक्रमणकारी अब्दुल रशीद ने उन पर एक छुरे से आक्रमण कर दिया और उनकी गर्दन के दाहिनी ओर गहरा घाव कर दिया। कोल्डस्ट्रीम अब्दुल रशीद से भिड़ गया और उसको हाथ से पकड़ लिया। परन्तु अब्दुल रशीद ने अपने को उसकी पकड़ से छुड़ा लिया और बच कर निकल भागने के उद्देश्य से हास्पिटल के मुख्य फाटक की ओर भागा। कोल्डस्ट्रीम कुछ दूरी तक उसके पीछे भागा परन्तु लड़खड़ा कर पृथ्वी पर गिर गया। कुछ ही देर में उपरान्त अत्यधिक खून बह जाने के कारण उसकी मृत्यु हो गई। जांच से ज्ञात हुआ कि इस घटना के पूर्व आक्रमणकारी का नवजवान भारत सभा के दो कार्यकर्ता सदस्यों से सम्बन्ध था जिन्हें पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। परन्तु उनके विरुद्ध इस षड्यन्त्र में सम्मिलित होने का कोई सन्तोषजनक प्रमाण नहीं मिला अतः उनको छोड़ दिया गया। अब्दुल रशीद का सेशन जज की अदालत में २६ जुलाई को अभियोग आरम्भ हुआ और २८ जुलाई १९३२ को उसको मृत्यु दण्ड दे दिया गया। उसको पेशावर की जेल में १ सितम्बर को फांसी दे दी गई।

चतुराई का कार्य (१६३२)

२६ जुलाई १६३२ को जब कोमिला के अतिरिक्त पुलिस सुपरिंटेंडेंट ई० को ऐलीसन अपनी साईकल पर कार्यालय से मध्यान्ह के उपरान्त अपने बगले की ओर वापस लौट रहे थे तो उन्हें एक पटाखे छूटने की आवाज अपनी साइकिल के बहुत ही समीप सुनाई दी। जैसे ही कि उन्होंने मुड कर देखने का प्रयत्न किया कि क्या हुआ, पीछे से एक युवक ने उनकी बांह पीठ और पेट में गोली मारी। ऐलीसन साइकिल से उतर पड़े और यद्यपि वे गम्भीर रूप से घायल हो चुके थे परन्तु फिर भी उन्होंने आक्रमणकारी युवक पर गोली चलाई परन्तु युवक बच कर निकल गया। घायल ऐलीसन एक सप्ताह तक अपने जीवन के लिए संघर्ष करता रहा। उसको चिकित्सा के लिए ढाका ले जाया गया परन्तु उसके जीवन की रक्षा करने के सभी प्रयत्न विफल हुए और उसकी ५ अगस्त १६३२ को मृत्यु हो गई।

भयंकर विपत्ति (१६३२)

बंगाल में क्रांतिकारी कार्यवाहियों के तेज होने के साथ साथ योरोपियन ऐसोसियेशन, सरकार के भक्त भारतीय, तथा गैर भारतीय दोनों सामन्त वर्ग के लोग सभी चिल्लाने लगे कि इस सशस्त्र राष्ट्रीय भावना को कुचलने के लिए ब्लैक तथा टैन उपाय तथा कठोर दमन करने की नितान्त आवश्यकता है। अधिकारी लोग इस मांग को स्वीकार करने के लिए पहले से ही तैयार थे, उन कतिपय चाटुकारों की चीखलाहट को उन्होंने जनता के सच्चे जनमत की संज्ञा दी और कहा कि यह बंगाल भर का जनमत है।

'स्टेटसमन' जिसकी ग्राहक संख्या बहुत अधिक थी और उस समय की सरकार पर जिसका असीम प्रभाव था (आज तक भी उसका सरकार पर प्रभाव है) वह उस समय बंगाल तथा देश के अन्य भागों के क्रान्ति विरोधी संगठनों का मुखपत्र बना हुआ था। इस क्रांतिकारी विरोधी प्रचार को रोकने के लिए तथा अन्य समाचार पत्रों के सामने जो कि सरकार को दमन के लिए कठोर कदम उठाने की सलाह दे रहे थे के सामने एक उदाहरण उपस्थित करने के लिए स्टेटसमन के सम्पादक वाट्सन पर आक्रमण करने का निश्चय किया गया। ५ अगस्त १६३२ को एलफ्रेड वाट्सन लगभग ३ बजे मध्यान्होपरान्त दोपहर का भोजन कर कार्यालय के लिए लौट रहे थे उस समय एक बंगाली युवक अतुल कुमार सेन—जैसा कि बाद को उसका नाम ज्ञात हुआ, ने फाटक पर मोटर कार की धीमी गति का लाभ उठाकर यकायक दौड कर आगे बढकर अपना हाथ सामने की खिडकी से कार में घुसेड दिया और एक गोली दाग दी। गोली वाटसन की कनपटी को छीलती निकल गई और कार के पीछे के शीशे को उसने तोड दिया।

आक्रमणकारी के हाथ से रिवाल्वर छूट गया क्योंकि उसको भान हो गया था कि उसका प्रयत्न विफल हो गया। उसको फाटक पर के दरबान ने दबोच लिया जिसकी सहायता के लिए गोली चलने की आवाज सुनकर उसी समय एक कान्स्टेबिल भी वहां पहुंच गया था। वाटसन अपनी कार से उत्तर पड़े और उन्होंने गिरफ्तार किए गए युवक को कम्पाऊंड के अन्दर ले चलने का आदेश दिया। अतुल ने पकड़ने वालों के कड़े बंधन से अपने हाथ को छुडाने के लिए घोर प्रयत्न किया और एक क्षण के लिए वह अपने हाथ को छुडाकर अपने मुंह में कुछ रखने में सफल हो गया। इससे पहले कि अतुल को स्टेटसमन के कार्यालय में ले जाया जा सकता कि उसको चक्कर

सा आया परन्तु उसको दोनों व्यक्ति मजबूती से पकड़े हुए थे इस कारण वह गिर तो नहीं सका परन्तु सब शून्य हो गया। जब तक कि उस युवक को अस्पताल ले जाया गया उसकी मार्ग में ही मृत्यु हो गई। वह खुलना जिले के सेनहाटी नामक स्थान का रहने वाला था और उस समय कलकत्ते के नरकेल बागानलेन के दस नम्बर में ठहरा हुआ था। अतुल जिस दल का सदस्य था वह दृढ़ निश्चयी प्रतीत होता था क्योंकि २८ सितम्बर १९३२ को पुनः वाटसन को मारने का प्रयत्न किया गया। दिन भर के कठिन परिश्रम के उपरान्त वाटसन अपनी महिला सक्रेटरी के साथ कार में लगभग ६.३० बजे सायंकाल कार्यालय से चला। वाटसन की कार आकूरलोनी रोड, इडन गार्डन रोड, स्ट्रड रोड होती हुई नेपियर रोड पहुँची। मैदान पर हेस्टिग्स के समीप क्लाइड रोड के मिलन स्थान पर एक खुली हुई टुर्गरिंग कार जिसका हुड नीचे गिरा हुआ था और जिसकी पीछे की सीट पर तीन व्यक्ति बैठे थे और एक व्यक्ति उसको चला रहा था उसके पीछे आई। उस मोटर में बैठे हुए व्यक्तियों ने एक के बाद दूसरी तेजी से वाटसन की कार की दाहिनी खिड़की से तीन गोलियां चलाई। दो गोलियां वाटसन के कन्धे में लगी। वाटसन ने ड्राइवर से गाड़ी को तेजी से चलाने के लिए आदेश दिया परन्तु एक घोड़ा गाड़ी ने उनका मार्ग रोक रक्खा था।

जैसे ही कि सड़क साफ हो गई और भीड़ छट गई वाटसन की गाड़ी क्लाइड रोड के किनारे मुड़ी और कठिनाई से बीस गज आगे होगी कि आक्रमणकारियों की मोटर कार तेजी से आई और वाटसन की मोटर से भीड़ गई। दोनों मोटर गाड़ियां एक दूसरे से गुथ गई थीं और वाटसन की गाड़ी पर गोलियों की वर्षा हो रही थी। दो आक्रमणकारी जो कि वाटसन की ओर झुके हुए थे जिससे कि वे ठीक निशाना लगा सकें, उस पर गोलियां चला रहे थे। एक पुलिस सार्जेंट जो कि समीप ही ड्यूटी पर था गोली चलने की आवाज सुनकर दौड़ कर वाटसन को बचाने के लिए आया और आक्रमणकारियों पर अपने रिवाल्वर से उसने फायर किया। आक्रमणकारी अब समझ गए कि खेल समाप्त हो गया अतः उन्होंने अपनी मोटर को अलहदा कर लिया और भयानक तेज गति से दक्षिण की ओर भागे। सेंट ज्वाज गेट रोड और लोअर सर्क्यूलर रोड से निकल कर उन्होंने जीरत पुल को पार कर अन्त में शाहपुर पहुंचे। मोटर में सामने कोई रोशनी नहीं थी और उसका विद्युति संचालित हॉर्न (ध्वनि) बिना रुके बज रहा था। उसने एक ट्रैफिक के कांस्टेबिल के रुकने के संकेत की उपेक्षा की और उसको गिरा दिया। सारजेंट ने कार का कुछ दूरी तक वाटसन की गाड़ी में पीछा किया किन्तु वह गाड़ी अन्धकार में अदृश्य हो गई। वाटसन और उनकी महिला सचिव दोनों को हास्पिटल ले जाया गया वहां जाकर ज्ञात हुआ कि उनके जख्म साधारण हैं गम्भीर नहीं हैं।

इसके उपरान्त आक्रमणकारियों को कार लगभग सात बजे सायंकाल मजेरहाट के समीप दिखलाई दी। जब कार "बड़ा शिवटोला पहुँची तो वहां दो बैलगाड़ियां और एक घोड़ा गाड़ी के कारण मार्ग अवरुद्ध था। बिना तनिक भी देरी किए निकल जाने की शीघ्रता में कार एक खम्भे के खम्भे से टकरा गई और गम्भीर रूप से क्षतिग्रस्त हो गई। आक्रमणकारी उस मोटर को छोड़कर भागे। उस छोड़ी हुई गाड़ी में ६ चेम्बर वाला रिवाल्वर पांच जीवित और ४ खाली कारतूस मिले। रिवाल्वर पूरी तरह चार कारतूसों से भरा था। चारों आदमी पूर्व में रायबहादुर रोड की ओर भागे। इनमें से

एक दक्षिण की ओर बचकर निकल भागा और शेष तीनो दौडते ही चले गए और वे एक बडी चावल की मिल के पास पहुचे जहा वे पकड लिए गए । दो आक्रमणकारी जिन्हें बाद को पहचाना गया कि वे मनोलाहरी और अनिल बहादुरी थे सडक पर मर कर गिर पडे और तीसरा व्यक्ति एक टक्सी में निकल भागा । उस केस के सम्बन्ध म कई व्यक्ति गिरफ्तार हुए और अभियोग चला । उनम से कुछ को आजीवन कालापानी हुआ और थोडो को लम्बे समय का कारावास हुआ ।

२६ अगस्त १६३० को बारीसाल में एक अत्यन्त रुग्ण क्रान्तिकारी को पुलिस ने गिरफ्तार किया वह कई जेलो में रक्खा गया अन्त मे उसे भोवाली सेनीटोरियम (उत्तर प्रदेश अल्मोडा जिले मे क्षयरोग का अस्पताल) भेजा गया जहा उसकी १७ अगस्त १६३२ को मृत्यु हो गई ।

एक विस्फोट (१६३२)

वह उनमें से एक था जिन्होने खतरनाक वस्तुओ को बिना उनको काम में लाने के ज्ञान और अनुभव का उपयोग किया और अपने जीवन का बलिदान कर दिया । सुधांशु शेखर नन्दी की २४ अक्टोबर १६३२ को बम विस्फोट से लगने वाले जख्मों के कारण मृत्यु हो गई । उसके अतिरिक्त उस विस्फोट के कारण तीन युवक गम्भीर रूप से जख्मी हो गए ।

व्यर्थ की सुरक्षा (१६३२ ३४)

सरकार ने उसके बचाव का पूरा प्रबन्ध कर दिया था । उसको २४ घन्टे के लिए पहरेदार तथा अगरक्षक और रिवाल्वर दे दिया गया था । यह सब अपने क्रान्तिकारी मित्रो के विरुद्ध भेदी साक्षी (एप्रूवर) की महत्व पूर्ण सेवाओ के उपलक्ष मे किया गया था । उसने कई राजनीतिक अभियोगो में अपन मित्रो और सहयोगियों के विरुद्ध साक्षी देकर कई को फासी और अनेको को लम्बे समय के लिए कारावास का दण्ड दिल वाया था । भगतसिंह राजगुरु और सुखदेव के विरुद्ध लाहौर षडयन्त्र अभियोग मे मौलनिया डकती अभियोग तथा पटना षडयन्त्र अभियोग में फणी घोष अभियोजक साक्षी के रूप में अत्यन्त महत्व का साक्षी था जिसका पुलिस ने खूब ही उपयोग किया वह 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन पार्टी" का सदस्य था और वह उस क्रान्तिकारी दल के रहस्यों और भेदो को जानता था जिसका पुलिस अभियोजकों ने इन अभियोगो में क्रान्तिकारियों के विरुद्ध पूरी तरह उपयोग किया । फणी को सरकार ने अपने निजी व्यापार करने के लिए यथेष्ट धन भी दिया जिससे उसने बेतिया म एक दूकान खोली जहा कि पुलिस पहरेदार निरन्तर उसकी सुरक्षा [redacted] लिए पहरा देता था । घटना वाले दिन ६ नवम्बर १६३२ को सायकाल सात बजे वह एक समीप की दुकान के सामने बठा था और अपने मित्र गणेश प्रसाद गुप्त से बात कर रहा था । उसी समय पीछे से आक्रमणकारी ने भुजाली से उसके सिर पर प्रहार किया । गणेश ने उसको पकडने की कोशिश की तो एक दूसरे व्यक्ति ने जो पहले की भाति अस्त्र स सज्जित था, गणेश के सिर पर भी प्रहार कर दिया । चोट खाकर भी गणेश चुप नही हुआ इस पर आक्रमणकारी ने उसके सर पर दो प्रहार और किए फिर भी गणेश ने दोना आक्रमणकारियो का दक्षिण दिशा मे कुछ दूरी तक पीछा किया । थोडे से अन्य दुकानदार भी उनका पीछा करने मे सम्मिलित हो गए ।

म्यूनिसिपल सडक पर लम्प के खम्भे से टिकी हुई दो साइकिलें रक्खी थीं ।

स्पष्ट था कि आक्रमण कारियो ने उस घटना के पूर्व उन्हे वहा रखा था। वे दोनों साइकिलों की ओर दौड़े परन्तु उन्होंने देखा कि पीछा करने वाले बहुत ही समीप आ गए हैं। एक आक्रमणकारी भागने वाले ने अपने साथी से कुछ कहा जो कि उससे आगे था और दो में से एक साइकिल पर सवार होने ही वाला था। इस पर दोनों ही साइकिलो की दिशा से मुड़े और दक्षिण की ओर दौड़ते हुए अधकार म लुप्त हो गए। दोनों घायल व्यक्तियों को तुरन्त ही अस्पताल मे ले जाया गया जहा फणी का १७ नवम्बर को और गनेश का २० नवम्बर १९३२ को देहान्त हो गया। अनेक बार समय समय पर फणी को 'उसके कुकृत्यो के भयकर परिणाम होंगे" ऐसी धमकिया मिल चुकी थीं। एक लम्बे समय के लिए कारावास भुगतने वाले कैदी द्वारा हजारी बाग जेल से एक पत्र गुप्त रूप से उसके पास भेजा गया जिसमें लिखा था कि उसका जीवन सम्पूर्ण खतरे म है।

घटना के लगभग पाच दिन बाद दो पोस्टर जो हिन्दी म लाल रोशनाई से लिखे गए थे १४ नवम्बर को समस्तीपुर म्यूनिसपैलटी (नगर पालिका) के कार्यालय की इमारत पर चिपके पाए गए। उनकी शब्दावली भिन्न थी उनमें लिखा था "क्रान्ति दीर्घजीवी हो-भगतसिंह राजगुरू और सुखदेव को फासी पर लटकाने का प्रतिशोध। मैंने दल अखिल भारतीय रिपब्लिकन एसोसियेशन की अनुमति से विश्वासघाती देशद्रोही को दण्डित किया है। क्रान्ति ही स्वतन्त्रता प्राप्ति का सच्चा मार्ग है शान्त चित्त से उसका स्वागत करो। स्वतन्त्रता के मार्ग म विध्वस एक खतरनाक ध्येय है। आत्मिक बल के द्वारा आगे बढ़े चलो।" एक साइकिल के लगेज करियर पर जिसे आक्रमणकारी छोड़ गए थे एक कपड़े का बडल था जिसे पुलिस को दे दिया गया था। इस बडल में एक खजर कुछ स कुन तेल आदि और एक धोती थी जिस पर धोबी का विशेष चिन्ह अंकित था। पुलिस द्वारा गहरी छान बीन करने पर ज्ञात हुआ कि धोती दरभगा मेडिकल स्कूल क छात्रावास के एक छात्र की थी जहां ४ और ५ नवम्बर को बैकुठ और उसका साथी ठहरा था।

अभियुक्तो के नाम बकुठ शुक्ल और दूसरे का नाम मडिकल स्कूल के एक छात्र से पुलिस को ज्ञात हुए। पुलिस को इस बात की पूर्व सूचना थी कि बैकुठ हाजीपुर गांधी आश्रम म काम करता है और उसका प्रशिक्षण हिन्दुस्तान सेवा दल मुजफ्फरपुर मे हुआ है। वह फणी की तरह हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी का सदस्य था। १९ अक्टोबर १९३२ को अर्थात भेदी साक्षी फणी पर आक्रमण करने से तीन सप्ताह पूर्व वह अपने पैतृक गृह जलालपुर गया जो मुजफ्फरपुर जिले में लालगज थाने मे था। वह बहुधा अपने साथ एक बडल रखता था और जब वह एक समीपवर्ती तालाब में स्नान करने गया तो उस बडल की एक थानेदार ने तलाशी ली जो वहा सदेह पर आया था। उसको बडल म एक रिवाल्वर छिपा हुआ मिला। उस समय से बकुठ भूमिगत हो गया और क्योंकि उसके ठौर ठिकाने का कोई पता नहीं था अतएव उसको उद्घोषित अपराधी घोषित कर दिया गया। उसकी सम्पत्ति को सरकार ने जब्त कर लिया परन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला। हत्या की घटना के उपरान्त नियमित रूप से पुलिस उसको पकड़ने के लिए जुट गई। ६ जुलाई १९३३ तक वह गिरफ्तार होने से बचता रहा। ६ जुलाई १९३३ को जब वह सोनेपुर के गडक नदी के पुल को पार कर रहा था तो पुलिस ने उसको देखा। उसके कुर्ते में छाती के बाई ओर की जेब मे नारियल का

जीवित बम या पुलिस से बकुंठा की बड़ी भिड़न्त हुई और यह अपनी छोयी ओर से भूमि पर गिर पड़ा और उसके सोधी ओर गम्भीर चोट लग गई। जब उसको पकड़ा गया तो उसने चिल्ला कर 'जिन्दाबाद' भगतसिंह की जय' का उद्घोष किया। बैकुंठ को छपरा जेल म अभियोग की सुनवाई तक के लिए बन्द कर दिया गया।

पुलिस की दृष्टि म बैकुंठ खतरनाक अपराधी था और सेशन की खुली अदालत म उसका अभियोग सुना जाना उसकी अभिरक्षा के लिए अपर्याप्त समझा गया। बिहार उड़ीसा के राजपत्र (गजट) के असाधारण अंक म २४ नवम्बर को घोषणा की गई कि सेशन की अदालत मोतीहारी जेल के अन्दर बठेगी। सेशन की अदालत में ४ दिसम्बर १९३३ को अभियोग आरम्भ हुआ। २३ फरवरी १९३४ को फैसला सुना दिया गया और अभियुक्त को भगतसिंह तथा अन्यों की मृत्यु का प्रतिशोध लेने के लिए फणी अभिसाक्षी की हत्या करने के अपराध में बैकुंठ को प्राण दण्ड दे दिया गया। ६ मार्च १९३४ को पटना उच्च न्यायालय में सेशन के फसले के विरुद्ध अपील की गई जो १८ एप्रिल १९३४ को अस्वीकार कर दी गई। वह देश की स्वतन्त्रता का वीर योद्धा १४ मई १९३४ को गया सेन्ट्रल जेल म प्रात काल बहुत तड़के फांसी के तख्ते पर प्रसन्नता पूर्वक खड़ा हो गया और उसको फांसी दे दी गई।

अल्पकाल की स्वतन्त्रता (१९३२)

दीनाजपुर के सथालो के एक समूह ने ब्रिटिश नियन्त्रण से मुक्त होकर एक स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने का विचार किया। अपने दो प्रमुख नेताओं जीतू छोटका' और सामू जिनमें से एक को गांधी के नाम से पुकारा जाता था—के नेतृत्व म कुछ सो बलिष्ठ सन्थालो ने अदिना मस्जिद म अपना डेरा जमाया और स्थानीय राज्य अधिकारियों की अवज्ञा कर दिसम्बर १९३२ को अपने स्वतन्त्र राज्य की घोषणा करदी। यह सूचना पाकर जिलाधीश, पुलिस सुपरिटेन्डेंट और एक बड़ा सशस्त्र पुलिस दल शीघ्रता पूर्वक इस चुनौती का सामना करने के लिए १४ दिसम्बर १९३२ को वहां पहुचा। कुछ समय तक वहा भयकर युद्ध हुआ। सथालो ने अपने परम्परागत अस्त्रों तीर कमान का उपयोग किया। उन्होने अपने तीरो से एक कास्टबिल को मार गिराया और बहुतो को घायल कर दिया। पुलिस ने अन्धाधुन्ध गोली वर्षा की और घटना स्थल पर ही चार सन्थाली वीर धराशायी हो गए। १८ दिसम्बर १९३२ को एक सन्थाली वीर की अस्पताल म गोली से फेफड़े के छिद जाने से मृत्यु हो गई। एक दूसरे सन्थाल की छाती म गोली लगी और उसका फेफड़ा भी छिद गया। उसके इतना अधिक रुधिर बहा कि वह रुका ही नही और उसकी किसी भी क्षण मृत्यु होने की आशका हो गई।

मृत्यु से खिलवाड़ (१९३३)

हैदराबाद के पुलिस सब इन्स्पेक्टर की मृत्यु के लिए उत्तरदायी सज्जनसिंह के साथी जगुराम जो कि नानकाना बम केस का अभियुक्त था, फरार हो गया। मृत्यु उसके पीछे दौड़ रही थी। २८ जनवरी १९३३ को जगुराम लाहौर आया और रणजीत सिंह की समाधि पर आकर ठहरा। एक फरवरी १९३३ को दस बजे प्रात काल के लगभग एक भयकर विस्फोट से वह स्थान हिल उठा। उस समाधि का पुजारी उस भयकर धड़ाके का कारण जानने के लिए भागकर वहा आया। जगू उस कमरे से लड़खड़ाता बाहर निकला उसके समस्त शरीर से रुधिर बह रहा था। वह एक बच पर बैठ गया। दयावान पुजारी ने उसको खड़ा होने को कहा जिससे कि वह उसकी चोटो की

परीक्षा कर सके। जगू उसके कहे अनुसार जैसे ही खड़ा हुआ। उसी क्षण वह पृथ्वी पर गिर गया और उसकी मृत्यु हो गई।

स्थान का परिवर्तन (१९३३)

चन्दननगर जहां २ सितम्बर १९३० को एक फरार क्रान्तिकारी की जीवन लीला समाप्त हुई वहां उसका एक पुलिस कमिश्नर भी मिदनापुर जेल से भागे हुए क्रान्तिकारी की गोली से मारा गया। फरवरी १९३३ के अन्त में आधे दर्जन युवक चन्दननगर आए और बाजार के समीप 'केंडुघाट गली" में उन्होंने एक पुराना और टूटा फूटा मकान किराए पर लिया। वे दिन में बहुत कम मकान से बाहर जाते थे और जो कुछ भी वे करते थे वह रात्रि के उस समय किया करते थे जबकि सड़कों पर सुनसान होती कोई चलता फिरता नहीं था। कालान्तर में यह खबर पुलिस के प्रधान कार्यालय तक पहुंची। ६ मार्च १९३३ को सायंकाल ५ बजे पुलिस कमिश्नर एम क्विन एक पुलिस दल के साथ उस मकान की तलाशी लेने के लिए पहुंचा। जैसे ही क्विन मकान के पास पहुंचा एक व्यक्ति जो मकान के सामने बैठा था वह अन्दर की ओर अपने साथियों को सचेत करने के लिए दौड़ा। एक मिनट के अन्दर ही तीन युवक जो धोती और कोट पहने थे बच कर निकल जाने के लिए तेजी से दौड़ते हुए बाहर निकले। उनमें से एक सड़क के किनारे खड़ी एक झाड़ी से टकरा कर गिर गया और तत्काल गिरफ्तार कर लिया गया किन्तु शेष दो बड़ी तेजी से भागे और आंखों से ओझल हो गए। एक अरुण बंगाली जो सामने अर्थात विरोधी दिशा से आ रहा था। उसने एक भागने वाले युवक को पकड़ने का प्रयत्न किया। उसको उस युवक ने गोली मार दी और वह गिर पड़ा उसके घाव से बहुत अधिक रुधिर बह रहा था।

क्विन जिस साईकिल पर तलाशी के लिए वहां आया था उसी साईकिल पर सवार होकर उसी दिशा में चला जिस ओर उन युवकों के भाग कर जाने की अधिक सम्भावना थी। जबकि वह साइकिल पर सवार होकर जा रहा था तो उसने देखा कि दो पैदल चलने वाले राहगीर ग्रांड ट्रंक रोड की ओर जा रहे हैं। वह उन्हें पार कर आगे निकल गया। दस गज आगे जाकर वह साइकिल से उतर पड़ा। वह उन दोनों से पूछ कर यह जानना चाहता था कि वे कौन हैं। जबकि वह उनके बहुत समीप आ गया तो उनमें से एक पैदल राहगीर ने रिवाल्वर निकाल लिया और बहुत नजदीक से पुलिस कमिश्नर पर गोली चला दी। पुलिस कमिश्नर की छाती पर और चेहरा जख्मी हो गया। एक कान्स्टेबिल जो पुलिस कमिश्नर की सहायता के लिए आया उसको भी गोली मार दी गई। क्विन को तुरन्त अस्पताल ले जाया गया दूसरे दिन उसकी मृत्यु हो गई। उसके मृत शरीर को वायुयान से कब्र में दफनाने के लिए फ्रांस ले जाया गया। जिस युवक को गिरफ्तार किया गया वह बाद को पहचाना गया। वह वाटसन पर आक्रमण कर उसका वध करने वाला था। यह पता लगा कि उन दो युवकों में से एक दिनेशचन्द्र मजूमदार था जो सात और आठ फरवरी १९३२ की मध्य रात्रि को मिदनापुर जेल से निकल भागा था। दिनेशचन्द्र चन्दननगर से किसी प्रकार बच कर निकल गया और उसने अपने मित्र के पास १३६/३ बी कार्नवालिस रोड में आश्रय लिया। खोजियों द्वारा सूचना दिये जाने पर २२ मई १९३३ को अधिकारियों सहित एक बहुत बड़ा पुलिस दल जो शस्त्रों से भली भांति सज्जित था प्रातःकाल ४ बजे ११६/४-ए कार्नवालिस स्ट्रीट, कलकत्ता पहुंचा। सभी निकटवर्ती मकानों अर्थात ११६/

३-ए, १३६/३-बी और १३६/४-बी को पुलिस के दस्तों ने घेर लिया। एक पुलिस दल १३६/३ बी की छत पर चढ़ा और एक दूसरा पुलिस दल १३६/४ ए की छत पर चढ़ गया। पहले मकान की छत पर पहुंच कर उन्होंने उस कमरे के दरवाजे को खट खटाया जिसमें दो संदिग्ध व्यक्तियों के होने की पुलिस को खबर मिली थी। एक सब इन्स्पेक्टर दरवाजे के पास वाली खिड़की के पास गया। तत्काल खिड़की खुली और कमरे के अन्दर से एक गोली चली जो थानेदार के कंधे में घुस गई।

उसके उपरान्त दोनों ओर से गोलियां चलने लगीं। स्थिति यह थी कि पुलिस कमरे में तिरछे होकर कोण से गोली चला रही थी। स्वयं वे दीवाल से सटे हुए थे जिससे कि कमरे से आने वाली गोलियों से बच सकें। गोलियों के चलने के कारण जो गड़बड़ उत्पन्न हो गई उसमें एक क्रान्तिकारी एक पतले लकड़ी के खम्भे पर चढ़कर जो कि बरामदे को सहारा दे रहा था बड़ी कुशलता से निकट के मकान की छत पर चढ़ गया परन्तु क्योंकि समीपवर्ती मकानों को भी पुलिस घेरे हुए थी वह तुरन्त गिरफ्तार कर लिया गया। कमरे में जो क्रान्तिकारी बच गये उनसे बार बार आत्म समर्पण करने के लिए कहा गया। परन्तु अन्दर से उसका कोई उत्तर नहीं मिला। अवश्य ही कभी कभी अन्दर से गोली चलती और सनसनाती हुई आक्रमणकारी पुलिस दल के आदमियों के सिरों के पास से निकल जाती। जैसे ही प्रातःकाल की सुबह पौ फटी कमरे में छिपे हुए लोगों ने चिल्लाकर आत्म समर्पण करने के लिए कहा और उसकी गारन्टी स्वरूप उन्होंने उस खिड़की के नीचे अपने रिवाल्वर रख दिए जिससे कि वे गोली चला रहे थे। उन्होंने कमरे का दरवाजा खोल दिया और शान्तिपूर्वक गिरफ्तार हो गए। दिनेशचन्द्र मजूमदार और उसके साथियों का अभियोग अलीपुर में ५ अक्टूबर १९३३ को आरम्भ हुआ। १० अक्टूबर १९३३ को दिनेशचन्द्र मजूमदार को प्राण दण्ड दे दिया गया। दिनेशचन्द्र पर आरोप यह था कि ऐसे बंदी के सहयोग से जो आजीवन कारावास की सजा भुगत रहा था और जेल से निकल भागा था की सहायता से उसने एक पुलिस आफिसर की हत्या करने का प्रयत्न किया। जज की दृष्टि में ऐसी कोई ब्रह्य परिस्थिति नहीं थी जिससे दण्ड की कठोरता को कम करने की गुंजाइश हो। जज के फैसले के विरुद्ध उच्च न्यायालय को अपील की गई जो १५ जनवरी, १९३४ को अस्वीकार कर दी गई। दिनेशचन्द्र को जून, १९३४ को अधरात्रि के समय अलीपुर सेन्ट्रल जेल में फांसी दे दी गई।

अविवेकपूर्ण कार्य (१९३३-३४)

१३ मार्च १९३३ को सायंकाल पांच बजे हरीगंज के इंगलोरा डाकखाने से एक डाक हरकारा डाक के थैले को थाने को रेल्वे स्टेशन ले जा रहा था। जबकि वह स्थानीय बोर्ड आफिस से कुछ दूर ही गया होगा एक व्यक्ति अपने हाथ में एक बोतल लिए हुए प्रकट हुआ। एक मिनट के उपरान्त एक दूसरा व्यक्ति उत्तर की ओर से आया और डाक हरकारे के पीछे पीछे जाकर उसने उस पर आक्रमण कर दिया। डाक हरकारा पृथ्वी पर गिर पड़ा उस समय उन्होंने उसको लोहे की छड़ों से पीटा। चार व्यक्ति जो कुछ दूरी पर प्रतीक्षा कर रहे थे पूर्व की ओर से आए उन्होंने थैले को उठाया और भाग गए। वे बहुत दूर नहीं गए थे कि उस कांड को देखने वालों के शोर मचाने से बहुत से लोग घटना स्थल पर एकत्रित हो गए और उन्होंने भागने वालों का तेजी से पीछा किया। जब कि भागने वाले लगभग पकड़े जाने वाले थे कि उनमें से एक ने गोली

चलाई जिससे कि एक रेल का कर्मचारी मर गया। इस पर गांव वालों ने और भी अधिक दृढ़ता और तेजी के साथ उनका पीछा करना जारी रक्खा और अन्त में रेलवे का बाहरी सिगनल (जो दूर होता है) पर उन ६ व्यक्तियों को पकड़ लिया। गिरफ्तार व्यक्तियों में एक व्यक्ति 'सिलहट' का था—शेष सभी 'तिपरा' के थे।

उन सभी पर २२ जुलाई १६,३ को अभियोग चलाया गया जिसमें प्रथित भट्टाचार्य को प्राण दण्ड और अन्य सभी को आजीवन कारावास तथा काले पानी का दंड दिया गया। उच्च न्यायालय ने २४ जुलाई १६३३ को नीचे की अदालत से दिए हुए दंड की पुष्टि कर दी। अभियुक्तों की अल्प आयु—उनकी आयु केवल उन्नीस वर्ष की थी—के आधार पर दण्ड की कठोरता को कम करने के तर्क पर उच्च न्यायालय ने कोई ध्यान नहीं दिया। मां की दया की याचना को भी आसाम के गवर्नर ने २६ जून १६३४ को अस्वीकार कर दिया। २ जुलाई १६३४ को सिलहट जेल में भारी पुलिस के प्रबंध में जिससे जनता प्रदर्शन न कर सके उन्नीस वर्ष के बालक को फांसी दे दी गई। 'प्रथित' के सम्बन्धियों की यह प्रार्थना भी अस्वीकार कर दी गई कि प्रथित के मृत शरीर को उन्हें दाह संस्कार के लिए दे दिया जाय।

कूच पर एक बटालियन (१६३३)

जेलों तथा कभी शिविरों में साधारण कैदियों से अधिक अच्छे व्यवहार के लिए दृढ़ निश्चयी अभियोगाधीन राजनीतिक बन्दियों के समूहों को समय समय पर नियमित युद्ध और संघर्ष करना पड़ता था जिसके परिणाम बहुधा सर्वनाशी होते थे। जब सर्व प्रथम अंडमन में राजनीतिक अपराधी और कैदी आए तब से समय समय पर उनमें और अधिकारियों में कठोर संघर्ष होता रहता था। साधारण सुविधाओं और सहूलियतों के लिए भी उन राजनीतिक बन्दियों को अकथनीय कष्ट उठाने पड़ते थे और कभी कभी उन कष्टों के परिणाम स्वरूप उनको मृत्यु का आलिंगन करना पड़ता था। इस शताब्दी के तीसरे दशाब्द में समस्त भारत से और विशेषकर पंजाब और बंगाल में बहुत बड़ी संख्या में राजनीतिक बन्दी अंडमन आए। राजनीतिक बन्दियों और अधिकारियों में उन छोटी सुविधाओं के लिए संघर्ष आरम्भ हो गया जिन्हें राजनीतिक बन्दी उन कोठरियों में दीर्घकाल तक उनमें रहने और अस्वास्थ्यकर वातावरण की दृष्टि से अनिवार्य और आवश्यक समझते थे। व्यक्तिगत दृष्टि से भी वे उन सुविधाओं को आवश्यक समझते थे। इस संघर्ष में बन्दियों के पास केवल मात्र एक ही अस्त्र था कि वे भूख हड़ताल करें और अपने शरीर को भयंकर कष्ट दें। १२ मई १६३३ को कुछ बन्दियों ने उस समय तक भोजन या अन्य किसी प्रकार के पौष्टिक पदार्थ लेना अस्वीकार कर दिया जब तक कि उनकी आपत्तियां नहीं मिटाई जातीं।

उन बन्दियों में एक महावीर सिंह था जो अनेक लाहौर षड्यन्त्र अभियोग में से एक में दण्डित हुआ था। १२ मई से भूख हड़ताल आरम्भ करके १६ मई तक वह बिलकुल ठीक ठाक था यद्यपि वह कुछ निर्बल अवश्य हो गया था। वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी (सर्जन) ने १७ मई को उसको देखा और उसने कृत्रिम रूप से भोजन देना—उसके जीवन की रक्षा के लिए आवश्यक बतलाया। उसी दिन प्रातः काल ग्यारह बजे उसे नाक के द्वारा रबर ट्यूब की सहायता से दूध और चीनी का भोजन बलपूर्वक दिया गया। रोगी ने अपनी सम्पूर्ण शक्ति से इस प्रकार बलपूर्वक भोजन देने के लिए कड़ा संघर्ष किया तो घंटा के अन्दर ही महावीर में गहरे मानसिक आघात के चिन्ह

प्रगट हो गए और १८ मई १९३३ को रात्रि के एक बजे उसका जीवन समाप्त हो गया। मध्य रात्रि के कुछ ही समय उपरान्त वह वीर सदैव के लिए चिर निद्रा में सो गया। अधिकारियों की ओर से यह कहा गया कि उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे भोजन देने में कोई गलती नहीं की गई परन्तु निर्बलता की स्थिति में रोगी द्वारा बलपूर्वक भोजन देने पर जो संघर्ष किया गया उससे उस पर बहुत अधिक परिश्रम पड़ा और थकावट के कारण वह समवस न हो गया और उसकी मृत्यु हो गई। महावीर अपने इस महाप्रयाण में एकाकी नहीं था उसका मित्र मोहनकुमार नामदास जो सल्यूलर जेल में बंगाल का बन्दी था उसने भी महावीर का अनुसरण किया।

उसने १६ मई को भूख हड़ताल आरम्भ की। १७ मई को उसे बल पूर्वक कृत्रिम भोजन दिया गया। १९ मई को उसे अस्पताल में निमोनिया के लिए भर्ती किया गया और २६ मई १९३३ को उसकी जीवन लीला समाप्त हो गई। इसी शृंखला में एक तीसरी मृत्यु भी हुई। मोहित मोहन मित्र २ फरवरी १९३२ को संकटकालीन अधिकार अध्यादेश के अन्तर्गत गिरफ्तार किया गया था। वह अपर सक्यूलर रोड पर स्थित एक मकान से गिरफ्तार हुआ था क्योंकि उसके पास बिना लाइसेंस के पांच चेम्बर वाला एक रिवाल्वर तथा ग्यारह कारतूस मिले थे। उसको पाँच वर्षों के लिए निर्वासन और कठोर कारावास का दण्ड दिया गया और उसे अण्डमान भेज दिया गया। अपने साथियों के साथ ही उसने भी १२ मई १९३३ को भूख हड़ताल आरम्भ की। उसे भी बल पूर्वक कृत्रिम रूप से भोजन दिया गया। रबर ट्यूब से जो दूध दिया गया वह पेट में न जाकर सांस की नली में गया जिसके परिणाम स्वरूप उसे निमोनिया के चिह्न दृष्टि गोचर हो गए। स्पष्ट है कि मानकृष्ण के साथ भी यही हुआ और २८ मई १९३३ को मोहित की अस्पताल में मृत्यु हो गई।

निर्मम हत्या (१९३३)

पुलिस द्वारा राजनीतिक संदेहास्पद व्यक्तियों की जान बूझ कर योजनाबद्ध हत्या कोई असाधारण बात नहीं थी। ऐसे मामलों में पीड़ित व्यक्ति को अधिकारियों से न्याय नहीं मिलता था। जमालपुर के धीरेन दे अपने घर से लापता हो गए। दो दिन तक बहुत कुछ खोज करने पर भी उनका कोई पता नहीं चला। २३ अगस्त १९३३ को गवर्नमेंट स्कूल के खेल के मैदान में गोलियों से क्षत विक्षत उनका मृत शरीर पड़ा मिला। उनके अभागे और दुखी पिता ने जो अधिकारियों को याचिका दी उससे उस जघन्य अपराध की कल्पना की जा सकती है। याचिका में पिता ने लिखा था — 'यह स्पष्ट है कि यह घटना नगर (जमालपुर) के बाहरी क्षेत्र में एक सुनसान स्थान पर जो कि सड़क के किनारे था हुई और मृत्यु गोलियों के लगे घावों से हुई, यह भी स्पष्ट है। गहराई से जांच करने से यह स्पष्ट हो जावेगा कि वह भयानक कृत्य उस स्थान पर नहीं हो सकता था जहां कि मृत शरीर पाया गया और न रिवाल्वर की गोलियों से ही उसकी मृत्यु हुई।'

'गोलियों के घावों के अतिरिक्त उसके पेट तथा शरीर के अन्य भागों पर भिन्न प्रकार की चोटों के निशान भी थे जिनसे उसकी मृत्यु हो सकती है। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय और आश्चर्यजनक है कि मृतक के कपड़ों में रुधिर का कोई धब्बा तक नहीं था। इन तथ्यों से यह सम्भावना प्रतीत होती है कि घटना और कहीं घटी और आक्रमणकारियों ने मृत शरीर को वहां से हटा कर उस स्थान पर डाल दिया। उनका

उद्देश्य पकड़ जाने से बचना और इस घटना को क्रांतिकारियों के आक्रमण का रूप देकर छिपाना था।" पिता ने आई बी सब इंस्पेक्टर उनके सशस्त्र गार्ड और एक अन्य स्थानीय गुण्डे पर दोषारोपण किया और प्रार्थना की कि बिना तनिक भी देरी किए उचित ढंग से इसकी जांच आरम्भ कर दी जावे। यह रहस्य रहस्य ही बना रहा क्योंकि अधिकारियों ने इस रहस्य के उद्घाटन का कोई प्रयत्न ही नहीं किया।

विशाल सेना में से एक (१९३३)

देवली बन्दी शिविर (राजस्थान) में लम्बे समय तक ऐसे जलवायु में जिसमें कि वे रहने के अभ्यस्त नहीं थे--रहने के कारण बड़ी संख्या में बन्दियों का स्वास्थ्य गिर जाता था। हरप्रसाद वागची उन अनेकों में से एक था। वह बुलसा बन्दी शिविर में नजरबन्द था और उसको बहुत से रोग लग गए थे। कुछ समय में उसके रोग को पेफड़ों का क्षय घोषित कर दिया गया था। उसको मुक्त न करके सरकार ने उसको राजपूताने की मरुभूमि में अपने जीवन के शेष दिन व्यतीत करने के लिए भेज दिया। उसका विक्टोरिया अस्पताल में अन्त्र पुच्छ शोथ (अपेंडिसाइटिस) का आपरेशन हुआ, उसके कुछ दिनों बाद ही उसको निमोनिया हो गया जिससे कि २२ अगस्त १९३३ को उसकी जीवन लीला समाप्त हो गई। जिससे कि सरकार का एक बड़ा सिरदर्द दूर हो गया। उनके मृत शरीर को स्थानीय कांग्रेसजनों को दाह संस्कार के लिए दे दिया गया।

शृंखला में तीसरा (१९३३-३४)

ऐसा प्रतीत होता था कि मिदनापुर के तरुण क्रांतिकारियों को योरोपियन जिलाधीशों तथा मजिस्ट्रेटों के जीवन से आसक्ति हो गई थी। मई १९३२ में मार्ज डोगलास की हत्या के उपरान्त बी ई जे बुग मिदनापुर के जिलाधीश नियुक्त हुए। नवम्बर १९३१ में उन्होंने हिजली बन्दी शिविर के कमांडेंट के पद पर कार्य किया था। सरकार ने उच्च राजकीय अधिकारियों के जीवन की रक्षा करने के लिए जो बहुत कठोर कदम उठाए थे और तत्कालीन बंगाल गवर्नर द्वारा इस सम्बन्ध में जो आश्वासनों की घोषणा हुई थी उससे यह आशा थी कि क्रांतिकारियों के यह आक्रमण बिलकुल बन्द हो जावेंगे। बुग अपने बंगले से बाहर बहुत कम निकलता था। परन्तु वह फुटबाल का उत्साही था। वह स्वयं मैचों में खेलता था और मिदनापुर में कलकत्ते की प्रसिद्ध फुटबाल टीमों के साथ मैच कराने की व्यवस्था करता था।

दूसरी ओर इस प्रकार की अफवाह थी कि ६ नवम्बर १९३२ को कर बन्दी आन्दोलन के विरुद्ध जो कठोर कदम उठाए गए और उनके फल स्वरूप घोर दमन हुआ वह आज्ञा बुग ने निकाली थी। अतएव कुछ तरुणों ने जिनकी आयु बीस वर्ष से कम थी उन अत्याचारों का प्रतिशोध लेने के लिए जो सरकार ने जनता पर किए थे और भारत की स्वतन्त्रता के आन्दोलन को बल देने का निश्चय किया। वे जो संख्या में अधिक नहीं थे समय-समय पर मिला करते और भिन्न स्थानों पर अपने लक्ष्य को पूरा करने के उपायों पर विचार विमर्श करते थे। वे बहुत सावधानी बरतते थे क्योंकि पुलिस बहुत सतर्क और सजग थी क्योंकि जिलाधीश पर इससे पूर्व दो आक्रमण हो चुके थे। उन्होंने कलकत्ते से हथियार लाने का निश्चय किया। मृगेन्द्र कुमार दत्त, अनाथ बन्धु पंजा और एक अन्य तीनों कलकत्ता गए और अपने मुख्य संगठन केन्द्र में रिवाल्वर चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त किया। मृगेन्द्र, अनाथ, निमल, जीवन, फणी, व्रजकिशोर चक्रवर्ती तथा रामकृष्ण राय कलकत्ते से ट्रेन द्वारा रिवाल्वर खड़गपुर लाए और उन्हें बोर्डिंग हाउस

(छात्रावास) में छिपा कर रक्खा और वहां से साईकिलों द्वारा मिदनापुर लाए। वे अस्त्र शस्त्र भद्र गृहणियों और सुसंस्कृत महिलाओं के पास छिपा कर रक्खे गए। कुछ ही महीनों में उन्होंने पांच रिवाल्वर और थोड़े से छुरे एकत्रित कर लिए। इतनी तैयारी कर चुकने के उपरान्त गोप पहाड़ियों में जो कि चारों ओर जंगल से घिरी हुई थी वहां एक टूटे फूटे खंडहर जैसे मकान में उन्होंने अपनी बैठकें कीं। वहां वे क्रान्तिकारी समय समय पर रिवाल्वर से लक्ष्य वेध का भी अभ्यास करते थे। पहले दो बार — एक बार जब बुग बाढ़ राहत कार्य की मीटिंग की अध्यक्षता कर रहा था और दूसरी बार जब ३१ अगस्त को वह एक फुटबाल का मैच देखने गया तब पुलिस की अत्याधिक चौकसी और सावधानी के कारण उस पर आक्रमण करने के सारे प्रयत्न विफल हो गए।

२ सितम्बर १९३३ को टाऊन क्लब जिसका बुग अध्यक्ष था और मुहमडन स्पोटिंग क्लब के बीच से ट्रल जेल के खेल मैदान में मैच होने वाला था। निर्मल जीवन को टाऊन क्लब के सेक्रेटरी से यह पता चल गया कि बुग उस मैच में स्वयं खेलेगा। निर्मल, जीवन घोष, ब्रजकिशोर चक्रवर्ती, अनाथ बन्धु पंजा, मृगेनदत्त तथा एक अन्य एक सितम्बर को पावेत ताल के किनारे पर मिले और यह निश्चय किया कि दूसरे दिन मैच के आरम्भ होने पर बुग को मार दिया जावे। यह निश्चय किया गया कि ब्रजकिशोर के संकेत करने पर अनाथ और मृगेन रिवाल्वर से बुग को गोली मार देंगे। एक ताम्रीघेरिया रेलवे स्टेशन पर और निर्मल मिशन गर्ल स्कूल के समीप चौकसी के लिए खड़ा रहेगा। अन्य साथी महत्वपूर्ण युद्धावश्यक स्थानों पर डटे रहेंगे जिससे कि आक्रमणकारियों के भागने का आच्छादन कर सकें। निर्मल अनाथ मृगन तथा एक अन्य पुलिस के खेल के मैदान की ओर चले जहां कि मैच होने वाला था। क्रान्तिकारियों का एक दूसरा दल कलक्टरी की इमारत के भाग से उसी गन्तव्य स्थान को गया।

अब फुटबाल मैच तथा बुग की हत्या के हिंसा कार्य के लिए मंच तैयार हो गया। पुलिस के सभी उच्च अधिकारी वहां उपस्थित थे, कुछ तो मैच में भाग लेने वाले थे और कुछ मैच को देखने के लिए आए थे। असिस्टेंट पुलिस सुपरिटेंडट खेलने वाला था और यो०रोवियन रिजर्व इन्सपेक्टर खेल को रफरी करने वाला था। मृगेन्द्र और अनाथ खेल के मैदान में विरोधी दल अर्थात मुहमडन स्पोटिंग क्लब के साथ थे। विरोधी दल मैच आरम्भ होने से पूर्व फुटबाल (गेंद) से अभ्यास कर रहे थे। ऐसे कई खिलाड़ी थे जो धोती पहने हुए थे और किसी के लिए भी अ थो से उनका विभेद करना कठिन था। पुलिस अधिकारी कुछ पहले आ गए थे। बुग अपनी मोटर में अपने दो व्यक्तिगत अंगरक्षकों के साथ आया। अपनी मोटर कार को खेल के मैदान के पूर्व की ओर छोड़कर अंगरक्षकों को उसने खेल के मैदान की बाहरी रेखा पर छोड़ दिया और वह खेल मैदान के मध्य गया। अनाथ और मृगेन खिलाड़ियों के साथ खेल के मैदान में थे व दक्षिणी गोल पर पहले से फुटबाल की किक कर रहे थे। जैसे ही बुग खेल के मैदान में पहुंचा वे उस पर झपटे उनके हाथ में स्वचालित पिस्तौल था और उन्होंने दो या तीन गज की दूरी से उस पर आक्रमण कर दिया।

एक ने बुग की पीठ में रिवाल्वर से पांच गोलियां दाग दीं और दूसरे ने अपने स्वचालित से तीन गोलियां बुग के सामने से मारी। बुग के ६ गम्भीर घाव लगे वह पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसकी तत्काल मृत्यु हो गई। एक असिस्टेन्ट पुलिस सुपरिटेन्डट जो कि लगभग दस गज की दूरी पर खड़ा था गोली चलने की आवाज सुनकर घूमा और तुरन्त ही वह मृगेन एक आक्रमणकारी पर झपटा इस पर मृगेन ने अपना रिवाल्वर

उसकी ओर ताना परन्तु असिस्टेंट पुलिस सुपरिटेंडेंट उसके रिवाल्वर को नीचे गिरा देने में मग्न हो गया और उससे निकली गोली उसकी टांगों के बीच से निकल गई। अब जो दोनों में गुत्थम गुत्था हुई तो दोनों पृथ्वी पर गिर पड़े और इस दशा में जिलाधीश के दो व्यक्तिगत अंगरक्षक दौड़ पड़े उन्होंने आक्रमणकारी को जख्मी कर दिया और उसको पकड़ लिया। अनाथ—दूसरे आक्रमणकारी का रिजर्व इन्स्पेक्टर ने सामना किया और उसे घटना स्थल पर ही गोली से मार दिया। मृगेन को सदर अस्पताल ले गए जहां दूसरे दिन प्रातः काल अर्थात ३ सितम्बर को उसकी ८.३० पर मृत्यु हो गई। सम्पूर्ण मैदान को पुलिस ने घेर लिया और घटना स्थल पर ही सदेह के कारण चार व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया। इस घटना के उपरान्त पुलिस ने आतंक और कठोर दमन का दौर दौरा प्रारम्भ कर दिया। नगर के विभिन्न भागों में घरों की तलाशी और गिरफ्तारियों की धूम मच गई। पुलिस ने कठोर दमन का ताण्डव नृत्य प्रारम्भ कर दिया।

सामान्य जांच पड़ताल तथा पूछ ताछ के उपरान्त और असमान्य निर्दयतापूर्वक यातना देकर बलपूर्वक उनसे अपराध अंगीकार कराकर पुलिस ने ३ जनवरी १९३४ को तेरह तरुणों पर अभियोग चलाया। इस अभियोग को सुनने के लिए सरकार ने एक विशेष न्यायाधिकरण की स्थापना की उसके समक्ष ३ जनवरी १९३४ को अभियोग प्रारम्भ हुआ। मुख्य अभियुक्त मिदनापुर कालेज के प्रथम वर्ष इन्टर आर्टस के छात्र निर्मल जीवन घोष, ब्रजकिशोर चतुर्वेदी जिन्होंने १९३२ में पढ़ना छोड़ दिया था और जो मिदनापुर कालेज में द्वितीय वर्ष तक पढ़े थे और रामकृष्ण राय जिन्होंने हिन्दू स्कूल में मैट्रिक तक पढ़ा था, मुख्य अभियुक्त थे। । अभियुक्तों पर यह आरोप लगाया गया कि मिदनापुर जिलाधीश तथा मिदनापुर जिले के अन्य उच्च अधिकारियों को मारने के उद्देश्य से आपराधिक षडयन्त्र में सम्मिलित हुए।

१० फरवरी १९३४ को निर्णय सुना दिया गया। निर्मल ब्रजकिशोर और रामकृष्ण को प्राणदण्ड दिया गया तथा अन्य चार को आजीवन निर्वासन का दण्ड दिया गया। अभियुक्तों ने न्यायाधिकरण के निर्णय के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की जिसकी सुनवाई १३ अगस्त १९३४ को समाप्त हुई। उच्च न्यायालय ने अपील अस्वीकार कर दी और ३० अगस्त १९३४ को न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए दण्ड की पुष्टि कर दी। ब्रजकिशोर और रामकृष्ण को २५ अक्तूबर को तथा निर्मल को २६ अक्तूबर १९३४ को प्रातः तड़के मिदनापुर से दूर सेन्ट्रल जेल में फांसी दे दी गई। मिदनापुर के तरुण क्रान्तिकारी राष्ट्रवादियों का यह विशेष उल्लेखनीय वीरतापूर्ण कार्य था कि उन्होंने तीन जिलाधीशों को मार दिया अर्थात पैडी को सात अप्रैल १९३१ को, डोगलास को ३० अप्रैल १९३२ को और बुर्ज को २ सितम्बर १९३३ को मारा गया। उन तरुणों के इस साहसी कार्य से अपने साहस और कार्य क्षमता के लिए प्रसिद्ध ब्रिटिश अधिकारियों के हृदय भय से थर थर कांपने लगे। इंग्लैंड में उनके सगे सम्बन्धियों ने आकाश पाताल एक कर दिया वे प्रतिशोध के लिए पागल होकर चिल्लाने लगे। उन्होंने निर्मम दमन की मांग की साथ ही ऐसे कठोर कदम उठाने का सुझाव दिया जिससे समस्त बंगाल प्रसीडेन्सी बंगाल के निवासियों के लिए एक वृहद कारागार बन जाता।

कारागार की प्राचीरों के अन्दर (१९३३)

बम्बर षड्यन्त्र अभियोग में दंडित भाई गुरदित्तसिंह को लम्बे समय के कारा-

वास का दण्ड दिया गया था। अन्त में उनको मुलतान के पुराने सेन्ट्रल जेल मे कैद कर दिया गया। बाह्य जगत को उनकी मृत्यु का समाचार १७ अक्टूबर, १६३३ को एक कैदी से ज्ञात हुआ जो उस जेल से मुक्त हुआ था। उसने लोगो को बतलाया कि भाई गुरुदित्तसिंह कुछ दिन पूर्व ही कारागार के भीतर ही महाप्रयाण कर गए।

मृत्यु से संघर्ष (१६३३)

मैमनसिंह जिले के जमालपुर क्रान्तिकारी दल के एक तरुण सदस्य वीरेन दे को दिसम्बर १६३३ को तंगेल तहसील के सागरदीपाड़ा में डाका डालने के लिए घुमा गया। जब कि वे उस मकान में बलपूर्वक घुसने का प्रयत्न कर रहे थे जिसमें डाका डालने का निश्चय किया गया था उनकी पीठ एक बल्लम से चिर गई। वहां जो बहुत से गाव वाले इकट्ठे हो गए थे, उनमें से एक ने वह भाला जिसमें कई नोकें थी उन पर फैंका था। वह (वीरेन दे) पीछे फिरे और उसके बल्लम के सिरे को अपने हाथ से पकड़ लिया और उस स्थान से तेजी से भागा, उसके पीछे एक छोटी सी भीड़ भी भागी। उन्होंने उसको बच कर निकल भागते देख लिया था। वह बहुत दूर तक दौड़ गया। वह लगभग उस नदी के किनारे तक पहुंच गया जहां कि उसे वापस ले जाने के लिए नाव उसकी प्रतीक्षा कर रही थी।

बल्लम का घाव बहुत गहरा था और बहुत अधिक रुधिर बह चुका था। वह थकावट और पीड़ा से चूर होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसका पीछा करने वालों ने उसको पकड़ लिया। पुलिस को सूचना दी गई। पुलिस वीरेन दे को अस्पताल ले गई। वहां भाले का फल उसके शरीर से निकाल लिया गया। परन्तु वहां वीरेन दे को पुलिस द्वारा दी जाने वाली निर्दयता पूर्ण यातना को सहन करना पड़ा। वे उससे बल पूर्वक अपराध अंगीकार कराना चाहते थे। परन्तु वह वीर टस से मस नहीं हुआ। तीन दिन तक अपने घावों की पीड़ा और पुलिस के निर्दयतापूर्ण अत्याचार को वह सहन करता रहा उसके उपरान्त मृत्यु ने उसको शारीरिक पीड़ा और पुलिस की यातना से मुक्ति कर दी।

बिना जमानत के रिहाई (१६३४)

पुलिस की जब किसी पर कुदृष्टि पड़ जाती थी तो उस व्यक्ति को कब्र तक ले जाकर छोड़ती थी। जिला मैमनसिंह की तहसील जमालपुर के बागबेर गांव के जतीन्द्र नाथ दत्त को शस्त्रों सम्बन्धी अधिनियम के प्रावधानों को भंग करने के आरोप में गिरफ्तार किया गया। पुलिस के लिए जतीन के विरुद्ध अभियोग स्थापित करना कठिन था अतएव उसको छोड़ना पड़ा परन्तु उसे तत्काल दण्ड प्रक्रिया संहिता (क्रिमिनल प्रोसीड्योर कोड) की धारा ११० में पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। ४ अप्रैल १६३४ को जतीन के सम्बन्धियों को बन्दी की गम्भीर बीमारी के सम्बन्ध मे सूचित किया गया। दूसरे ही दिन जमानत पर छोड़ने की याचिका की गई। अतिरिक्त जिलाधीश ने पांच सौ रुपए की दो प्रतिभूतियों (जमानतियों) पर जितेन को जमानत पर छोड़ दिये जाने की आज्ञा दे दी। दो जमानती उपस्थित किए गए और पुलिस को आज्ञा दी गई कि उन जमानतियों की योग्यता की जांच करें। जतीन की दशा तेजी से गिरी और ६ अप्रैल १६३४ को उसने महाप्रयाण किया। उसी दिन मध्यान्ह उपरान्त पुलिस ने रिपोर्ट दी कि वे जमानती स्वीकार योग्य नहीं है। पुलिस की यह रिपोर्ट बेचारे जतीन को कारागार से मुक्त किए जाने से नहीं रोक सकी। जतीन का शव उसके सम्बन्धियों को इस स्पष्ट शर्त पर दिया गया कि उसके दाह संस्कार के सम्बन्ध में कोई भी प्रदर्शन नहीं होगा।

विधि का मजाक

१० अप्रेल १९३४ को नारायनगंज कस्बे के समीप के गांव देवभोग के कुछ मुसलमान गांव वाले सड़क के किनारे के एक बरामदे में रात्रि के दो बजे बैठे थे। उन्होंने सड़क पर तीन हिंदू युवकों को जाते हुए देखा। किसी के कहीं जाने का वह असामान्य समय था फिर उनके पर नंगे थे वे जूते नहीं पहने थे परन्तु उनकी वेशभूषा उत्तम थी इससे उन मुसलमान गांव वालों को संदेह हुआ उन्होंने युवकों से पूछा कि वे कौन हैं और कहां जा रहे हैं। उनमें से एक युवक रुक गया जो कि देवभाग गांव का ही रहने वाला था उसका नाम मातीलाल मलिक था। शेष युवक धीरे धीरे आगे चलते गए। मातीलाल ने अपने से प्रश्न करने वालों को बतलाया कि अन्य तरूण उसके साथी हैं जो कि उसके मकान पर भोजन करके वापस जा रहे हैं। एक मुसलमान मातीलाल के साथ उनके पास गया और एक टार्च की मदद से उनके चेहरों को देखा। टार्च से देखते समय उसे मातीलाल की बगल में एक पोटरी (बंडल) दिखलाई दिया उसने उस पोटरी को मातीलाल की बगल से खींच लिया और तीन टोपियां पृथ्वी पर गिर पड़ीं। इस घटना से उनका संदेह और अधिक बढ़ गया और उसने एक युवक को पकड़ लिया और दो अन्य मुसलमान गांव वालों ने शेष अन्य दो को पकड़ लिया। पहले युवक ने बायें हाथ से एक रिवाल्वर निकाला और अपने को पकड़ने वाले मुजफ्फर पर फायर कर दिया। तीसरे युवक ने रमजान की गर्दन में गोली मार दी। मातीलाल ने अपनी कमर में से एक छुरा निकालने का प्रयत्न किया।

माती और उसके दो साथियों ने अपने को उन मुसलमानों से छुड़ा लिया और घटना स्थल से भाग जाने में सफल हो गए। जख्मी व्यक्तियों ने भागने वालों का कुछ दूरी तक पीछा करने का प्रयत्न किया। वे सहायता के लिए और उन भागने वालों को पकड़ने के लिए चीख चीख कर पुकार रहे थे। यह शोर सुन कर गांव वाले अपने झोंपड़ों से बाहर निकल आए और उन्होंने उन युवकों का तेजी से पीछा किया। मातीलाल पकड़ा गया और गांव वालों ने उसको उसी स्थान पर अत्यन्त निर्दयता पूर्वक पीटा बाद को पता चला कि मुजफ्फर के घाव से बहुत अधिक रुधिर बह रहा है और रमजान की मृत्यु हो गई है। मातीलाल को गांव वालों ने पुलिस के सुपुर्द कर दिया। पुलिस ने अपराध अंगीकार कराने और साथियों के बारे में सब कुछ बताने के लिए उसको अत्यन्त निर्दयता पूर्ण यातनाएं देना आरम्भ कर दिया। वीर मातीलाल यह सब सहन करता रहा परन्तु उसके अधरों पर मानो मौनव्रत की मुहर लगी थी। पुलिस वाले उसको कठोर से कठोर यातनाएं देकर हार गए परन्तु उससे कुछ भी जान न सके। मातीलाल मलिक के तथा एक अन्य के विरुद्ध ३० जुलाई १९३४ को अभियोग आरम्भ हुआ। मातीलाल के विरुद्ध शस्त्र अधिनियम की धारा १९ ई (१८७८ का ग्यारहवां अधिनियम–छुरा रखना) और उसी अधिनियम की धारा २० ए जैसी कि वह बंगाल के अधिनियम १९३४ के द्वारा संशोधित हो चुकी थी, जिसको भारतीय दण्ड संहिता की धारा ३४ के साथ मिलकर पढ़ा जाने पर अपराध स्थापित होता वे आरोप लगाए गए। कारण यह बताया गया कि क्योंकि उसका तथा उसके अन्य दो साथियों का अभिप्राय एक समान था और उसके वे दोनों साथी भारतीय शस्त्र अधिनियम (१८७८ का ग्यारहवां अधिनियम) की धारा तेरहवीं के प्रावधानों का उल्लंघन कर रिवाल्वर लेकर गए थे और जो परिस्थितियां प्रगट हुईं, उससे यह इंगित होता था कि उन सभी का

अभिप्राय यह था कि वे रिवाल्वर उपयोग में लाए जावें और हत्या की जावें। उस पर विभिन्न अधिनियमों की नीचे दी हुई धाराओं के अन्तर्गत आरोप लगाए गए — भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा १६ ए जिस प्रकार वह बंगाल के १६३२ के इक्की सवें अधिनियम के अनुसार संशोधित हुई और भारतीय दण्ड संहिता की धारा ३४ के साथ पढ़ी जावे। भारतीय दण्ड संहिता की धारा ३०२ जो कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा ३४ के साथ पढ़ी जाय। भारतीय दण्ड संहिता की धारा १२० बी जो १६३२ के ग्यारहवें भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा १६ ए के साथ पढ़ी जाय। भारतीय दण्ड संहिता की धारा १२० बी जो १६३४ के सातवें भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा २० ए के साथ पढ़ी जाय।

६ अगस्त १६३४ को विशेष न्याय अधिकरण ने मातीलाल को सभी आरोपों का अपराधी पाया और उसे प्राण दण्ड दे दिया। २७ सितम्बर १६३४ को उच्च न्याया लय ने अपील की सुनवाई की। अपील की सुनवाई के समय डिप्टी लीगल रिमेम्बरसर ने शस्त्र अधिनियम के अन्तर्गत मृत्यु दण्ड के प्रश्न पर ही अधिक बल दिया। उसकी सम्मति में उस प्रकार के अभियोग में प्रश्न यह नहीं था कि जिस व्यक्ति के पास रिवाल्वर था उसकी इच्छा व्यक्ति विशेष को मारने की थी अथवा वे शस्त्र केवल इसलिए लिए जा रहे थे कि वे बलाचरण के द्वारा अथवा बलाचरण का प्रदर्शन करके बच कर निकल जाना चाहते थे। प्रश्न यह था कि जब वे साहसिक कार्य के लिए निकले तो अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए यदि आवश्यकता पड़े तो हत्या करने का अभिप्राय भी उनके मन में था फिर चाहे उद्देश्य कुछ भी हो। आवश्यकता पड़ने पर हत्या करने का अभिप्राय शस्त्र अधिनियम की धारा २० ए के अनुसार अपराधी को मृत्यु दण्ड देने के लिए पर्याप्त है।

एक अक्टोबर १६३४ को उच्च न्यायालय ने विशेष अधिकरण के निर्णय की पुष्टि कर दी। आरोप यह था कि वह अन्वयाश्रित था प्रलक्षित हत्या है। उच्च न्याया लय ने मातीलाल के कार्य को यह स्वीकार किया कि मानो उसने स्वयं अपने हाथ से गोली चलाई हो। इस प्रकार संशोधित कानून व्यक्तियों को फांसी के तख्ते पर भेज सकता था जबकि उस अधिनियम के अन्तर्गत केवल दो या तीन वर्ष के कठोर कारावास की अधिकतम दण्ड की व्यवस्था थी। मातीलाल को ढाका सेन्ट्रल जेल में १५ दिसम्बर १६३४ को प्रातः काल ६ बजे फांसी दे दी गई।

अवधि से पूर्व रिहाई (१६३४)

पुलिस द्वारा जो बंगाल में सदेह पर ही अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियां हुई उसमें सैकड़ों की संख्या में देशभक्त युवकों को पकड़ लिया गया। उन सैकड़ों युवकों में नन्दा दुलाल घोष भी गिरफ्तार कर लिया गया और अन्यों के साथ हिजली बन्दी शिविर में अनिश्चित काल के लिए बन्द कर दिया गया। १५ अप्रेल १६३४ को नन्दा दुलाल घोष ज्वर से पीड़ित हुआ और कई दिन हो गए ज्वर नहीं उतरा। डाक्टरों ने उसे चेचक निकलने की घोषणा कर दी और उसे २७ अप्रेल को बन्दी शिविर के अस्पताल में भेज दिया गया। उसके पिता को जब यह ज्ञात हुआ तो वह अपने पारिवारिक चिकित्सक को साथ लेकर दौड़ा आया। उस चिकित्सक पर समूचे परिवार का पूर्ण विश्वास था। पिता चाहता था कि उसके पुत्र की चिकित्सा उसका विश्वसनीय पारिवारिक चिकित्सक करे। परन्तु जेल अधिकारियों ने आज्ञा नहीं दी। वह युवक २६ अप्रेल १६३४ को जेल के

अस्पताल मे ही मर गया गया। जेल के उसके साथियो ने अपने प्रिय मित्र साथी के मृत शरीर को ले लिया और स्थानीय श्मशान घाट पर उसका दाह संस्कार किया।

अथक योद्धा—चम्पाकुमार पिलाई जो केवल सत्रह वर्ष का बालक था भारत की स्वतन्त्रता के लिए कार्य करने के उद्देश्य से १६०८ म भारत से जरमनी गया। प्रथम विश्व युद्ध म उसने जरमनी की नो सेना मे प्रवेश किया। वह ऐमडन जहाज (पनडुब्बी) का नाविक था जिसने मद्रास पर बम वर्षा की थी जब जरमनी में हिटलर का उदय हुआ और वह सत्ता में आया तब जरमन अधिकारियो को उस पर यह सदेह हो गया कि वह जरमनी की अपेक्षा भारत के हित में ही कार्य करता है। अतएव उसकी स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया वह नजर बन्द कर लिया गया। क्रमश उसका स्वास्थ्य गिरने लगा। ऐसा सदेह किया जाता है कि उसको धीमे विष से मई १६३४ में मृत्यु हो गई। उसको धीमा विष देकर मार दिया गया।

हिमालय की ऊचाई पर (१६३४ ३५)

आयरलड में क्रान्ति की गति को मोडने के लिए भयकर और निर्दयता पूर्ण दमन का परीक्षण किया गया था। उसका क्या परिणाम निकला ? उसकी पुष्टि तो केवल इतिहास ही करेगा। पर सर जान ऐन्डरसन के 'ब्लैक एण्ड टन" के कारनामो ने आयरलैंड मे तथा इङ्गलड के अन्य आधीनस्थ देशो म ब्रिटिश शासन को लाञ्छित और अपमानित अवश्य किया था। अवश्य ही ब्रिटिश सरकार उस दमन से प्रसन्न और सन्तुष्ट हुई होगी। कम से कम ब्रिटिश सरकार इस विचार से अभिभूत अवश्य थी कि एक महान शक्तिवान कठोर शासक जिसे कि कठोर उपायो से शान्ति और व्यवस्था का अनुभव है उसके दमन से कायर बगाली चुपचाप आत्म समर्पण कर देंगे। अतएव अशान्त और क्षुब्ध बगाल के मुख्य प्रशासक के रूप में ब्रिटिश सरकार ने ऐन्डरसन को बगाल में भेजा। सरकार का विचार यह था कि यदि क्रान्ति को दबाया नही जा सका तो कम से कम सरकार को यह आशा अवश्य थी कि ऐन्डरसन ऐसे भयकर दमनकारी उपायो को आरम्भ करेगा कि जो भारत मे पहले कभी भी नही बरते गए थे। ऐन्डरसन के बगाल मे आते ही, अध्यादेशों के द्वारा प्रशासन प्रचलित अपराध सम्बन्धी कानूनो का सशोधन राजनीतिक स देहात्मक व्यक्तियो से व्यवहार करने मे उनका पीछा कर गिरफ्तार करने म सभ्य तरीकों को तिलाञ्जलि दे देना, शस्त्र अधिनियमो तथा विस्फोटक पदार्थों सम्बन्धी अधिनियम क प्रावधानों का उल्लघन करने पर मिलने वाले दण्ड मे वृद्धि करने, भारतीय दण्ड सहिता के कतिपय प्रावधानो मे दी हुई सजा को बढा देने इत्यादि कठोर दमनकारी उपायो का ऐन्डरसन के बगाल म आते ही बोलबाला हो गया। जिन लोगो ने मातृभूमि के लिए सवस्व दाव पर लगा दिया हो और जो लोग मातृभूमि के लिए सवस्व बलिदान करने के लिये, यहा तक कि प्राणों का उत्सर्ग करने के लिये भी तैयार थे। वे ऐन्डरसन को पृथ्वी से विदा करने के लिए सक्रिय हो गए।

ढाका मे जयदेवपुर के कतिपय युवकों ने इस प्रश्न पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया और अपने विचार को मूर्त रूप देने के लिए वे अनुकूल अवसर ढूढने मे व्यस्त हो गए। ऐन्डरसन के चारो ओर कडा पहरा रहता था और उसकी सुरक्षा के लिए अनेक कुशल अगरक्षक नियुक्त कर दिए गए थे अतएव ऐन्डरसन के समीप पहुचने का कोई अवसर पाना कठिन था अतएव यह निर्णय लिया गया कि उसका सामना लेबांग दार्जलिंग के घुडदौड के मैदान म किया जावे। २२ अप्रेल १६३४ को ढाका मे

एक गुप्त बैठक हुई भवानी प्रसाद भट्टाचार्य और उसके जोड़ीदार को आवश्यक शस्त्र दे दिए गए। वे ३० अप्रेल १९३४ को और अधिक अनुदेश प्राप्त करने के लिए कलकत्ता गए। कलकत्ते से वे पुन: जयदेवपुर वापस लौटे और २ मई को एक दूसरी बैठक में कार्यवाही की योजना पूरी तरह तैयार करली गई और उस महान भयंकर नाटक के दोनों पात्र दार्जलिंग को चल दिए। वे अपने निर्दिष्ट स्थान दार्जलिंग ४ मई को पहुंच गए और लुइस जुबली सैनिटोरियम मे ठहर गए।

दो अन्य क्रान्तिकारी सीधे कलकत्ता से दार्जलिंग पहुँचे और एक दूसरे होटल म ठहर गए। भवानी प्रसाद को 'स्नो व्यू होटल" में ५ मई १९३४ को उसका रिवाल्वर प्राप्त हुआ। यह निश्चय हुआ कि फूलों की प्रदर्शनी में अवसर की ताक में रहा जावे जहां कि ऐंडरसन जाने वाला था। परन्तु उस अवसर का उपयोग नहीं किया जा सका क्योंकि वहां प्रवेश पाने मे बहुत कठिनाई थी। ८ मई १९३४ को होने वाली घुड़दौड़ के लिए दो टिकट खरीद लिए गए और भवानी प्रसाद तथा उनके साथी जो योरोपियन वेशभूषा मे थे, वे ऐन्डरसन की कुर्सी के दाहिने और बाये कुछ ही गजों की दूरी पर पब्लिक स्टैंड में जम गए। ऐन्डरसन की (सीट) कुर्सी ग्रांड स्टैंड के बिलकुल नीचे स्टीवड बाक्स के समीप थी। गवरनर कप की घुड़दौड़ लगभग समाप्त ही हुई थी और ऐंडरसन उठ कर खड़ा हो गया था। उसी समय भवानी प्रसाद कुछ कदम आगे बढ़ा और उसने अपने दाहिने हाथ को सीमेंट कांक्रीट की दीवार पर रक्खा जो कि गवरनर और जनता के बीच पार्थक्य करती थी। भवानी ने अपना रिवाल्वर बाहर निकाल लिया और अपने लक्ष्य पर गोली चलाई जो उससे आठ या नौ फीट पर खड़ा था। गोली निशाना चूक गई। भवानी को बदले मे चार घाव लगे जो उन लोगों के गोली चलाने से लगे थे जो कि वहां उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त एक आदमी भवानी पर कूदा और उसको जमीन पर गिरा लिया।

दूसरे आदमी ने जब भवानी को गोली चलाते देखा तो वह अपनी जगह से आगे बढ़ा कुछ कदम चला और उसने गवरनर पर गोली चलाई। वह गवरनर से केवल ५ फीट ही दूर था। एक दर्शक जो कि पास ही खड़ा था उस पर टूट पड़ा और उसको पकड़ लिया। उसको एक सार्जेंट के रिवाल्वर से निकली गोली भी लग गई। भवानी की तलाशी लेने पर उसके पास रिवाल्वर की ०.३२ बोर के दस कारतूस और उसके साथी के पास उसी बोर के ■ कारतूस मिले।

जो रिवाल्वर भवानी से छीना गया था उसमें पांच कारतूस थे एक चल गया था एक जो चला नहीं और तीन जीवित कारतूस थे और दूसरे व्यक्ति के रिवाल्वर में ६ जीवित कारतूस थे। रिवाल्वर में कुल सात कारतूस भरे जा सकते थे। भवानी ने पुलिस को दिए गए अपने बयान में कहा कि वह गवरनर को मारने के लिए आया था मेरे ज्ञान और विश्वास के अनुसार मैंने कोई अपराध नहीं किया।" मुझे बहुत दुख है कि वह बिना जख्मी हुए जीवित है म बहुत प्रसन्न होता यदि म उसे मार सकता।" दार्जलिंग में १४ अगस्त १९३४ को विशेष न्याय अधिकरण के समक्ष अभियुक्तों पर अभियोग आरम्भ हुआ। उन पर हत्या करने के अभिप्राय से षडयन्त्र करने तथा बिना लाइसैंस के अग्नि शस्त्र रखने के आरोप लगाए गए। उन पर शस्त्र अधिनियम की धारा २० ए के अन्तर्गत अभियोग चलाया गया जिसके अनुसार उन परिस्थितियों में दण्ड को बढ़ा कर प्राण दण्ड की व्यवस्था की गई थी।

इन परिस्थितियों में प्राण दण्ड देने के सिद्धान्त का समावेश ऐंडरसन ने ही किया था अस्तु उस सिद्धान्त को लागू करने के लिए यह अभियोग उपयुक्त था क्योंकि सिद्धान्त के जनक से ही उसका सम्बन्ध था। यह यहां बता देना आवश्यक है कि दण्ड विधि संशोधन अधिनियम के अन्तर्गत जैसा कि वह धारा ६ के द्वारा १९३२ में संशोधित हुआ था उसके अनुसार हत्या का प्रयत्न करने पर मृत्यु दण्ड की व्यवस्था की गई थी। १२ सितम्बर १९१४ को निर्णय दे दिया गया। भवानी और उसके दोनों मित्रों को प्राण दण्ड दिया गया। उच्च न्यायालय ने ३ दिसम्बर, १९३४ को भवानी तथा एक दूसरे को प्राण दण्ड की पुष्टि कर दी किन्तु तीसरे के मृत्यु दण्ड को घटा कर आजीवन कठोर कारावास और निर्वासन में बदल दिया। गवर्नर ने जो उसको दया करने का अधिकार था उसका उपयोग कर २४ दिसम्बर, १९३४ को दूसरे अभियुक्त के प्राण दण्ड को घटा कर आजीवन कारावास का दण्ड कर दिया क्योंकि उसने इस बात पर गहरा खेद प्रगट किया था कि उसने दूसरों के प्रभाव में आकर जो कुछ किया और विशेषकर उस व्यक्ति को मारने का प्रयत्न किया जिसे वह अपने पिता के समान मानता है उसे वास्तविक खेद है। तीन अभियुक्तों में से जिन्हें विशेष न्याय अधिकरण ने प्राण दण्ड दिया था अकेले केवल भवानी प्रसाद को राजशाही जेल में ३ फरवरी १९३५ को फांसी दे दी गई।

सम्बन्धी सावधान रहें (१९३४)

एक पुलिस अधिकारी जो सुपरिटेंडेंट पुलिस था और जो अभियोजन की सहायता के लिए काकोरी डकैती के अभियोग में सरकार द्वारा नियुक्त किया गया था मनीन्द्र नाथ बनर्जी का मामा था। काकोरी डकैती के अभियुक्तों को अत्यन्त कठोर दण्ड दिया गया उसने उस संवेदनशील और शीघ्र प्रभावित होने वाले युवक के मस्तिष्क को झकझोर दिया। मनीन्द्र नाथ बनर्जी ने १२ जनवरी, १९२८ को एक रिवाल्वर से अपने मामा पर आक्रमण कर दिया और उनको मार दिया। अभियोग में उसको दस वर्ष का कठोर कारावास हुआ। उस पर सदोष मानव हत्या का, जो कि हत्या के समान नहीं हो आरोप लगाया गया था।

मनीन्द्र फांसी के फंदे से बच गया। परन्तु जब वह कारावास का दण्ड भुगत रहा था तब उसको निमोनिया हुआ और २० जून १९३४ को फतेहगढ़ सेन्ट्रल जेल में उसकी मृत्यु हो गई। कोमिल्ला के सहाय सम्पद चौधरी को तेरह जून १९३३ को गिरफ्तार करके २२-८-३३ को पाबना में नजरबन्द कर दिया गया। उस युवक की तनिक भी देखभाल नहीं की गई केवल एक चौकीदार उसकी निगरानी करने के लिए रक्खा गया था, १८ फरवरी १९३४ को निस्सहाय चौधरी का उस झोंपड़े में मृत्यु ने अन्त कर दिया। चौधरी के अतिरिक्त अन्य कई नजरबन्द क्रांतिकारी इसी प्रकार मृत्यु के शिकार हो गए।

अभिजात मिलन (१९३४)

सत्यवान गुहा एक तरुण था जिसमें विलक्षण साहित्यिक प्रतिभा थी। साहित्यिक प्रतिभा का धनी होने के साथ ही वह खतरनाक राजनीति में भी सक्रिय था। साहित्यिक प्रतिभा और क्रान्तिकारी राजनीति का उसमें अपूर्व सम्मिलन था। यद्यपि वह बहुत ही अल्प आयु का तरुण था परन्तु अपने समय के सर्वश्रेष्ठ दैनिक पत्रों तथा मासिक पत्रिकाओं में राजनीति, अर्थशास्त्र तथा जीवन चरित्र सम्बन्धी अत्यन्त महत्व-

पूर्ण और विद्वता पूर्ण उसके लेख प्रकाशित होते थे। उसने कई बहुत उत्तम कोटि की पुस्तकें लिखी जिनमें से अधिकांश पुस्तकों को उनमें लिखित अत्यंत उग्र राजनीतिक विचारों के कारण सरकार ने उन्हें जब्त कर लिया।

ऐसा व्यक्ति स्वाभाविक था कि अधिक दिनों तक जेल के बाहर नहीं रह सकता था। बीस वर्ष की अल्प आयु में १९३१ में वह कलकत्ता में गिरफ्तार कर लिया गया और एक बन्दी की भांति बंगाल दण्ड विधि संशोधन अधिनियम के अन्तर्गत राजशाही जेल में भेज दिया गया। उसकी क्षुब्ध आत्मा जेल के कठोर और अमानवीय नियमों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थी। इस कारण नियमों की अवहेलना करने के कारण उसे बार-बार दण्ड भुगतना पड़ता था। नियमों का उल्लंघन करने के परिणाम स्वरूप जो अतिरिक्त सजा दी जाती थी उनमें एक बार वह बीमार पड़ा उसके फलस्वरूप १९ दिसम्बर, १९१४ को उसकी मृत्यु हो गई। उसको पेट की शिकायत हुई थी और उसी के कारण वह अपने जीवन के लक्ष्य को आंशिक रूप से पूरा किए बिना ही महाप्रयाण कर गया। मां भारती के चरणों में एक मूल्यवान और सुगंधित कलिका जो अभी खिली भी नहीं थी, चढ़कर समाप्त हो गई।

अन्तिम आश्रय (१९३५)

पुलिस द्वारा गिरफ्तार हो जाने और उसके परिणामों के खतरों की परवाह न कर शम्भु नारायण १३ नवम्बर १९३४ को देहली से अजमेर यात्रा कर रहा था। उसके पास एक रिवाल्वर और पांच कारतूस थे। यात्रा करते हुए वह बीच में ही गिरफ्तार कर लिया गया। उसके घर की तलाशी ली गई तो एक देशी पिस्तौल और क्रांतिकारी साहित्य उसके मकान में मिला। उस पर अभियोग चलाया गया। उसको अपराधी दण्ड संहिता की धारा ११० और शस्त्र अधिनियम के अन्तर्गत अभियोगाधीन बन्दी के रूप में अजमेर जेल में रक्खा गया। जेल की यातनाओं और अत्याचारों के कारण उसका मस्तिष्क विकृत हो गया और उसने ५ जनवरी १९३५ को स्वयं फांसी लगाकर अजमेर जेल में अपनी आत्महत्या करली और इस प्रकार उन यातनाओं से अपना छुटकारा कर लिया।

सहन शक्ति का अन्त हो गया (१९३५)

रोहिनी बरुआ अठारह वर्ष का बालक था। उसे फरवरी १९३३ में सन्देह के कारण गिरफ्तार कर लिया गया। उसको गोलुण्डा थाने के अत्यन्त अस्वस्थकर स्थान फरीदपुर में एक अत्यन्त कठोर और अनुदार थानेदार सैयद इरशाद अली की दया पर रख दिया गया। इरशाद को रोहिनी को परेशान करने, उसे क्षुब्ध करने में आनन्द आता था। वह प्रतिदिन रोहिनी को व्यथित और परेशान करने की नई-नई युक्तियां करता। बेचारा बन्दी अपने माता पिता और सम्बन्धियों से दूर उसके अत्याचार को सह रहा था। उसको यह भी ज्ञात नहीं था कि उसे कितने समय तक उस गन्दे अस्वस्थ कर तथा सहानुभूति शून्य क्षुब्ध वातावरण में रहना होगा। इसी बीच जनवरी में उसकी माता की मृत्यु का समाचार उसे मिला कुछ ही दिनों के उपरान्त उसकी भाभी की मृत्यु का समाचार आया। अपने इन स्नेही सम्बन्धियों की मृत्यु से उसके मन को गहरा आघात लगा। वह नजरबन्द था उसकी स्नेहशीलता मातेश्वरी और भाभी स्वर्गवासिनी हो गई वह अन्तिम समय उनके दर्शन भी न कर सका, इसने उसके हृदय में आक्रोश उत्पन्न कर दिया।

थानेदार इरशाद को सम्भवत यह भान नही था कि प्रत्येक व्यक्ति की सहन शक्ति की एक सीमा होती है। रोहिनी अपने बन्दी जीवन का समय अध्ययन मे व्यतीत करता था। उसने बन्दी दशा में ही मैट्रिक्युलेशन परीक्षा उत्तीर्ण की, परन्तु कुटिल थानेदार इरशाद ने उसे शान्तिपूर्वक नही रहने दिया। कई बार उसके मन में आत्महत्या कर लेने की भावना का उदय हुआ। बहुत विचार मथन करने के उपरान्त उसने यह निश्चय किया कि वह आत्म हत्या करके नही मरेगा। वरन उस व्यक्ति को मार कर मरेगा जिसने उसके साथ इतना अभद्र व्यवहार किया है। १५ जून १९३५ को प्रात काल आठ बजे वह दृढ निश्चयी युवक इरशाद अली थानेदार के कमरे मे घुसा। यदि वह थानेदार को अवसर देता तो उसको और अधिक अपमान सहन करना पडता। जब वह थानेदार के कक्ष में घुसा तो उसके हाथ मे 'दाओ' था। उसका शिकार (थानेदार) बैठा काम कर रहा था। उसने घुसते ही थानेदार इरशाद की गर्दन पर शीघ्रता पूर्वक तीन वार किए। उसका सिर लगभग धड से अलग हो गया और उसकी तत्काल मृत्यु हो गई।

रोहिनी पर एक विशेष न्याय अधिकरण के समक्ष अभियोग चलाया गया। विशेष न्याय अधिकरण के समक्ष १६ जुलाई १९३५ को उसका अभियोग आरम्भ हुआ। १८ जुलाई को जज ने उस लडके को प्राण दण्ड दे दिया। उच्च न्यायालय मे अपील की गई। २५ नवम्बर १९३५ को उच्च न्यायालय ने निर्णय दे दिया। रोहिनी की अपील अस्वीकार कर दी गई। प्राण दण्ड सजा की पुष्टि कर दी गई। १८ दिसम्बर १९३५ को फरीदपुर जेल में रोहिनी को फासी दे दी गई। उसके मृत शरीर को जेल के अधिकारियो ने जला दिया। हृदयहीन सरकार ने उस युवक को परणोपरान्त भी यह सुविधा और अधिकार नहीं दिया कि उसके सम्बन्धी उसका विधिवत् दाह संस्कार कर सकते। हृदयहीनता और निष्ठुरता का अतिक्रम हो गया।

जिसका अन्त शीघ्र हो गया (१९३५)

ढाका जिले के जगीबारी के मनी गोपाल सरकार को गिरफ्तार कर ११ १० ३१ को जेल में रख दिया गया। बरहामपुर जेल से २७ ३ ३३ को वह जसोर ■ गाव मे भेज दिया गया। जेल की कष्ट यातना तथा रोग के आक्रमण से उस पुण्य के सामान सुन्दर युवक क्रान्तिकारी का अन्त २१ दिसम्बर १९३५ को उसी गाँव में हो गया।

मृत्यु के साथ खिलवाड (१९३५)

दरभगा से बीस मील दूर मधुबनी थाने मे मौजा मोहर में 'अशरफी' नामक युवक जिसको बम बनाने की कला का पूरा ज्ञान नहीं था बिना किसी चिकित्सा सहायता तथा सहाय के बम बनाने में जुटा हुआ था। ६ जुलाई १९३५ को रात्रि को किसी को भी नहीं मालूम कि अशरफी की दुर्घटना से मृत्यु कब हो गई। वह एक सूनसान कमरे में मरा हुआ पड़ा मिला। उसके चेहरे और छाती पर बम के विस्फोट से लगने वाले गम्भीर जख्म थे। उस मकान की तलाशी लेने पर पुलिस को एक पुस्तक 'पजाबेर हत्याकांड' की एक प्रति तथा एक हस्तलिखित पुस्तक 'अग्रेज के खूनी करनामे' प्राप्त हुई। वह वास्तव में युवक भी नहीं था छोटा लडका ही था और उस वर्ष होने वाली मैट्रिक परीक्षा में पन्डोल हाई स्कूल से बैठ रहा था।

बिना किसी प्रकार की सहायता के (१९३५)

ढाका के अन्तर्गत मुन्शीगंज का उपेन्द्र नाथ दत्त नामक एक छोटी उमर का

लड़का नवम्बर १९३१ में गिरफ्तार हुआ। उपेन्द्र को अन्य सकड़ो बंगाली युवकों की भांति उसे केवल सदेह पर गिरफ्तार कर लिया गया और बुक्सा बन्दी शिविर मे लगभग तीन वर्ष तक बन्दी बनाकर रक्खा गया। उसे १९३५ मे मुर्शिदाबाद के अन्तर्गत लाल गोला नामक एक अत्यन्त अस्वस्थकर स्थान पर बन्दी बना कर रक्खा गया। उपेन्द्र को दोष युक्त मलेरिया का प्रकोप हुआ और इससे पूर्व कि थाने में सरकार की उसकी चिकित्सा कराने की आज्ञा पहुंचो वह बन्दी उसी वर्ष उसी स्थान पर मृत्यु का शिकार हो गया। उसको किसी भी प्रकार औषधि नही दी गई और न उसको किसी प्रकार की चिकित्सा की सुविधा ही दी गई।

एक कलुषित कार्य (१९३६)

एक पुलिस के अत्याचार से अत्यन्त पीडित परिवार जिसके प्रति पुलिस की प्रतिशोध की भावना अत्यन्त गहन थी का नव जीवन घोष नामक युवक जो निमल जीवन घोष का भाई था नवम्बर १९३३ को अपने जिले से जहा उसका घर था निष्कासित कर दिया गया। जबकि वह कलकत्ता में था तो फरवरी १९३४ मे उसको बगाल सशोधित आपराधिक अधिनियम के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया और उसे बरहामपुर बन्दी शिविर मे भेज दिया गया। जून या जुलाई १९३६ को फरीदपुर जिले मे गोर लगज थाने मे नजरबन्द बन्दी के रूप मे स्थानान्तरित कर दिया गया। अधिकारियो द्वारा यह कहा गया कि उसने २२ सितम्बर १९३६ को आत्म हत्या कर ली। उसका मृत शरीर अपने कमरे की एक बल्ली से लटका हुआ था। स्थानीय लोगो का कहना था कि बहुधा उसका स्थानीय पुलिस अधिकारियो से दुर्व्यवहार के कारण झगडा होता रहता था और बहुधा उसको निर्दयतापूर्वक पीटा जाता था। स्पष्ट था कि जब कि पुलिस द्वारा उसको इतना मारा गया कि वह मानवीय सहन शक्ति से भी अधिक हो गया तो नवजीवन की मृत्यु हो गई सक्षेप में यदि कहें तो वह निर्दयापूर्वक हत्या करने का मामला था।

थाने के चाज मे जो अधिकारी था, उसने दो पत्र लिखे थे, जो वह छोड गया। एक पत्र उसके पिता के नाम था और दूसरा सरकार के नाम था। पिता के बार-बार प्रार्थना करने पर कि उसे वह पत्र पढने दिया जाय तब डिवीजनल आफिसर ने उस दुःखी पिता को वह पत्र पढ़ने के लिए नही दिया। बन्दी की उस अत्यन्त सदेहजनक मृत्यु को छिपाने के लिए जो कोहरा उत्पन्न किया गया वह इतना हल्का था कि उससे सत्य के प्रकाश को छिपाया नहीं जा सका वह दूर से भी दिखलाई दे गया। (सदर्भ — बी जे घोष [ब्रिटिश मजिस्ट्रेट की हत्या] मरडर आफ ब्रिटिश मजिस्ट्रेट पृष्ठ ६९ सस्करण १९६२)।

मरूभूमि में मृत्यु (१९३६)

देवली (राजस्थान) के बन्दी शिविर मे जीवन कितना असहनीय और यातनामय होगा इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि बड़ी सख्या मे युवक जिनका स्नायु संस्थान फौलाद के समान सबल और दृढ था, वे भी वहा एक के बाद दूसरा आत्म हत्या करने पर विवश हो गए। यह आत्म हत्याए बहुत अन्तर से नही हुई। सतोषचन्द्र गगोली एक वीर युवक था। जो कि देवली बन्दी शिविर में बन्दी था। वह उन बन्दी क्रान्तिकारियों की विशाल सेना मे से एक था। १७ अक्टूबर, १९३६ को उसने आत्म हत्या करके अपने जीवन का अन्त स्वयं अपने हाथों से कर लिया। सरकार

ने उसकी मृत्यु के सम्बन्ध मे जहा कि वह सदैव लीपा पोती की विज्ञप्तियां निकालती थी उसकी आत्म हत्या के सम्बन्ध में भी निकाली जिसको किसी भी प्रकृतिस्थ और सही दिमाग के मनुष्य ने सही, नही माना । वे आत्म हत्या के कारणो को अच्छी तरह से जानते थे । अतएव इस झूठी विज्ञप्ति से किसी को ■ खा नही हुआ ।

विशिष्ट क्रान्तिकारी (१६३७)

यह बहुत कम प्रकाश म आते थे । सावजनिक समारोहो, समस्याओ मे वे बहुत कम भाग लेते थे और न वे कांग्रेस की विचारधारा का और जन आ दोलनों का ही बाहर जनता में आकर समथन करते थे । वे कभी सावजनिक सस्थाओ म कोई पद भी ग्रहण नहीं करते थे जिससे उसका नाम यश, प्रतिष्ठा, हो या धन की प्राप्ति हो । वे शान्त प्रकृति के पर तु ज म जात नेता थे । उनम नेतृत्व के सभी गुण विद्यमान थे । उनका नाम 'सतकारी बनर्जी" था वे चौबीस परगने के महीनगर के निवासी थे । बगाल के क्रान्तिकारी सगठन मे वे अपने प्रारम्भिक जीवन से मृत्यु पयन्त एक महान शक्तिशाली व्यक्तित्व थे । उनके शक्तिशाली व्यक्तितत्व का क्रा तकारी सगठन पर गहरा प्रभाव था । उनका हृदय अत्य त दयाद्र और पीडितो के लिए करुणा से भरा हुआ था । उनका दयालु हृदय पीडित मानवो के लिए फिर वे चाहे किसी भी जाति, धम, सम्प्रदाय, स्त्री हो या पुरुष अथवा समाज म उनकी ऊची या नीची किसी भी स्थिति क्यों न हों दयाद्र हो उठता था । उनको पीडित और कष्ट मे देखकर वे दुखित हो उठते थे । उनका व्यक्तित्व इतना अधिक आकषक और चुम्बकीय था कि जो भी उनका गाव वाला या सहयोगी युवक मित्र उनके सम्पक में आता वह उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रहता था । वे लोग उनके सकेत मात्र पर किसी भी विपत्ति या खतरे का सामना करने से नहीं हिचकते थे । उनका एक शब्द उनके लिए ब्रह्म वाक्य था ।

वे अत्य त गम्भीर मसलो पर भी अल्प समय मे ही निणय कर लेते थे । यहाँ तक कि जिन मामलो मे मानव की सबसे बहुमूल्य सम्पत्ति जीवन पर भी जोखिम आने की सम्भावना हो उसमें भी विनिश्चय करने म उन्हें देर नही लगती थी । जब एक बार वे कोई विनिश्चय कर लेते तो फिर उसको पूरा करके रहते, उनका किया हुआ विनिश्चय निसन्देह पूरा होता था । अपने साथियो और सहयोगियो मे वे किसी भी प्रकार की कमजोरी, ढीलापन और निश्चय से पीछे फिरने की भावना को सहन नहीं करते थे । जहां तक क्रान्तिकारी हलचलो और कृत्यो का प्रश्न था वे इस प्रकार की मानसिक प्रवृत्ति को भी कठोरता पूवक दबा देते थे जो कि साहसिक विचारो और जोखिम भरे दिलेरी के कार्यों के विपरीत हो ।

वे साथियों से कहते 'मत आओ यदि तुममें साहस नहीं है।" यदि तुम सगठन के अन्दर आते हो उसमें सम्मिलित होते हो तो तब तुम्हे अ त तक उसके साथ रहना होगा यही उनका मूल मन्त्र था । अपने सम्पूण जीवन काल में सतकरी जिन्हें उनके बड़े प्रिय सत्त्' और छोटे सतदा' कहते थे—ने एक अनुशासित जीवन जिया, सभी अनावश्यक आराम की वस्तुओं को त्याग कर तपस्वी का जीवन व्यतीत किया । वे केवल उतनी ही वस्तुओं का उपभोग करते थे कि जो स्वस्थ और शक्तिवान जीवन के लिए नितान्त आवश्यक हों । एक क्रान्तिकारी की हैसियत से 'सतकरी' अपने शत्रु से अपने लिए कोई अनुग्रह या सुविधा की कभी याचना नही करते थे फिर जेल के अन्दर अथवा बाहर

उन्हें चाहे कितना भी कष्ट और यातना क्यों न सहन करना पड़े। उन्हें अत्यन्त अस्वस्थकर स्थानों और अस्वस्थकर परिस्थितियों में नजर बन्द और कैद रखा गया परन्तु उन्होंने जेल अधिकारियों से किसी प्रकार की सुविधा की आकांक्षा नहीं की। वह अपने माता पिता से साक्षात्कार करने के लिए कभी जेल अधिकारियों से प्रार्थना नहीं करते थे। न वे कभी अपने परिवार के लिए आर्थिक अनुदान प्रतिशोधात्मक नियमों की कठोरता को कम करने नजरबन्दी के नियमों को ढीला करने चिकित्सा सम्बन्धी सुविधा और सहायता, अन्य किसी भी प्रकार की सुविधा को जेल अधिकारियों से प्रार्थना करते थे। पुलिस के पास जो उनकी फाइल थी उसमें उनके क्रान्तिकारी जीवन के तीस वर्षों का इतिहास अंकित था। उस फाइल में केवल उनकी गिरफ्तारी, नजरबन्दी और रिहाई की आज्ञाएं भर थीं और उनके हाथ की लिखी एक पर्ची भी नहीं थी। वे बंगाल के क्रान्तिकारी योद्धाओं में भीम थे। उनका जीवन केवल भारत की स्वतन्त्रता के लिए ही पूरी तरह समर्पित था। वह महान क्रान्तिकारी सतकरी देवली (राजस्थान) में बन्दी गृह में इस नश्वर शरीर को छोड़ कर महा प्रयाण कर गए। देवली का बन्दी शिविर बंगाली क्रान्तिकारियों के लिए उसके प्रतिकूल जलवायु के कारण मृत्यु द्वार के समान था। वहां जाकर कितने ही क्रान्तिकारी पुष्प असमय में ही मुर्झा कर सूख गए और झड़ गए। सतकरी की भयंकर खूनी बवासीर से ६ फरवरी १९०७ को मृत्यु हो गई। उस मरुभूमि में चिकित्सा की कोई समुचित व्यवस्था नहीं थी।

एक नौसिखिए का कृत्य (१९३८)

अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से ही हरेन्द्र नाथ मुन्शी क्रान्तिकारी संगठन का सदस्य बन गया था और शीघ्र ही १९३४ में अन्तर प्रान्तीय षड्यन्त्र अभियोग के सम्बन्ध में वह गिरफ्तार हो गया। उसको षड्यन्त्र करने के अपराध में पांच वर्ष का कठोर कारावास हुआ और उसको डायमण्ड हारबर सब जेल में भेज दिया गया कुछ समय के उपरान्त उसको ढाका सेन्ट्रल जेल में अपने कारावास काल को काटने के लिए स्थानान्तरित कर दिया गया। २१ जनवरी, १९३८ को उसने भूख हड़ताल आरम्भ कर दी। अधिकारियों द्वारा नासिका से उसको भोजन देने की क्रिया से उसको हानि हो गई। रबर ट्यूब उस नली में न जाकर जिसमें कि भोजन जाता है श्वास की नलिका में चला गया। जिस व्यक्ति ने उसके ट्यूब डाला था वह सम्भवतः नौसिखिया था उसने कभी नलिका नाक के द्वारा न तो स्वयं कभी डाली थी और न किसी को डालते देखा था। उसका परिणाम यह हुआ कि बेचारे हरेन को निमोनिया हो गया और उसकी १० जनवरी, १९३८ को मृत्यु हो गई।

ऐतिहासिक प्रतिशोध (१९४०)

ऐसे उदाहरण बहुत कम मिलते हैं कि जब निर्दोष व्यक्तियों के प्रथम कत्ल के रूप में राष्ट्रीय अपमान और पीड़ा को उस प्रान्त का एक पुत्र एक चौथाई शताब्दी तक याद रखे जहां कि वह जघन्य अपराध हुआ हो और उस व्यक्ति से भयानक प्रतिशोध ले जिसने वह हत्या काण्ड किया और जो हत्यारा रिटायर होकर जीवन का आनन्द भोग रहा हो। और वह प्रतिशोध उस देश में ले कि जहां कि वह हत्यारा रिटायर होकर आनन्द से अपना जीवन व्यतीत कर रहा हो और जिसे स्वप्न में भी यह सन्देह या कल्पना न हो कि उसको अपने कुकृत्य का न्यायोचित दण्ड उस देश के व्यक्ति के द्वारा मिलेगा जहां कि उसने वह कुकृत्य किया था। १९१९ में पंजाब में जो

निर्मम हत्या काण्ड और अत्याचार हुए थे उसके लिए माइकेल ओडायर प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी था। उसने पंजाब के गवर्नर के पद से २६ मई को मुक्ति प्राप्त की और भारत के तट से ३० मई १६१६ को प्रस्थान किया। भारतीयों पर जो उसने कल्पनातीत अत्याचार किए थे उससे भारत के मानस को जो पीड़ा थी उसमें राष्ट्रीय अपमान को जोड़ देने के लिए ओडायर के प्रशंसक और कृतघ्न देशवासियों ने उसके इंगलैंड पहुँचने पर उसको बीस हजार पौंड की थैली भेंट की। उसने भारत के प्रति अपनी शत्रुता और घृणा को तनिक भी कम न कर अपनी पुस्तक 'इण्डिया एज आई नो इट' (भारत जैसा कि मैं उसे जानता हूँ) में उस कड़वी घृणा को उडेल दिया। उस पुस्तक में उसने सरकार द्वारा उन सैनिक और सिविल अधिकारियों को दण्ड दिए जाने की कड़ी आलोचना और शिकायत की, कि जिन्होंने उस निर्मम अत्याचार में निर्दयता का परिचय दिया था।

परन्तु प्रतिशोध की देवी निरन्तर उसके पीछे चल रही थी। १३ मार्च,१६४० को वह अपने किंग्स्टन के घर से 'गुडबाई' कह कर तथा यह कह कर कि मैं पाँच बजे चाय पीने के समय तक वापस लौट आऊँगा, निकला। वह अपने गृह से सीधा उस सभा में गया जिसकी व्यवस्था रायल सेन्ट्रल एशियन सोसायटी और ईस्ट इण्डिया एसोसियेशन ने संयुक्त रूप से की थी और जिसमें 'अफगानिस्तान' पर एक व्याख्यान होने वाला था जिसे सुनने के लिए ओडायर वहां गया। जैसे ही सभा के अध्यक्ष लार्ड जेटलैण्ड ने सभा की कार्यवाही आरम्भ की अभियुक्त अनेक व्यक्तियों को पार कर बीच के रास्ते में खड़ा हो गया। उसकी पीठ दीवार की ओर थी और उसके सामने प्लेट फार्म (मंच) था जिस पंक्ति के सामने सामने वह खड़ा हुआ था वह सामने से चौथी या पाँचवीं पंक्ति थी।

सभा की कार्यवाही ४-३० सायंकाल समाप्त हुई। धन्यवाद का मत दिया ही गया था और सभा में सम्मिलित होने वाले व्यक्ति एक दूसरे से विदा लेकर जाने ही वाले थे कि आक्रमणकारी शीघ्रतापूर्वक मंच की ओर बढ़ा और उसने एक के बाद दूसरी शीघ्रता पूर्वक लगातार पांच या ६ गोलियां चलाईं। यह स्वाभाविक ही था कि लोग फाटक की ओर भागे और फाटक पर भीड़ हो गई। एक काला हृष्ट पुष्ट व्यक्ति ऊधमसिंह जिसने कि गोलियां चलाई थीं, द्वार की ओर लपका और वह निरन्तर जोर से चिल्ला कर कह रहा था मार्ग से हट जाओ यह कहते हुए वह भीड़ से भरे हुए रास्ते से द्वार की ओर भागा। उसको तुरन्त ही दो व्यक्तियों ने पकड़ लिया और पृथ्वी पर गिरा लिया। ऊधमसिंह ने अपने को उनकी पकड़ से मुक्त करने के लिए कड़ा संघर्ष किया परन्तु उसके शरीर पर बहुत से व्यक्ति बैठ गए और उसको पूरी तरह से दबोच लिया जिससे कि वह अपने हाथ पर भी नहीं हिला सकता था।

ओडायर की पीठ में दो गोलियां एक दूसरे के नीचे लगी थीं और वे शरीर में समान्तर दूरी पर घुसती हुई चली गईं। एक गोली बाईं ओर निकली और एक खुला घाव बन गया। दूसरी गोली पेट में रह गई। पहली गोली प्रभावकारी सिद्ध हुई और ओडायर की तत्काल मृत्यु हो गई। आक्रमणकारी मुहम्मद सिंह आजाद एक इंजीनियर था। पुलिस ने प्रारम्भिक जांच पड़ताल तथा पूछताछ के उपरान्त उसको १४ मार्च, १६४० को मैजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया उसने उसे [illegible] की प्रतिरक्षा में एक सप्ताह के लिए भेज दिया। जबकि आजाद अदालत के [illegible] में पूछा तो आजाद

मुस्करा रहा था और उन दो अधिकारियों से बात चीत कर रहा था जो कि उसके साथ चल रहे थे और उनमें से एक उसकी हथकड़ी की डोरी पकड़े था। अभियुक्त ने किसी से कोई प्रश्न करना अस्वीकार कर दिया और अदालत की कार्यवाही दो मिनट में ही समाप्त हो गई।

यह बाद को ज्ञात हुआ कि आक्रमण कारी का नाम ऊधमसिंह है जो कि पंजाब का रहने वाला है। वह भारत में अपने को मुहम्मद सिंह आज़ाद कहता था। वह जन्म से सिक्ख था और एक आपत्तिजनक पूर्ण भाषण देने के कारण भारत में थोड़े समय के लिए कैद काट चुका था। अभियुक्त को २ एप्रिल १६४० को न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया गया। ओडायर के विरुद्ध जो उसकी लम्बे समय से घृणा अन्तर में घनीभूत हो रही थी वह इस बात से स्पष्ट थी कि ऊधमसिंह ने अपने शिकार का नाम और पता 'सर माइकेल ओडायर सनी बैंक, थलसटम साऊथ डैवन' नवद खाते (कश एकाऊन्ट) के पृष्ठ पर लिख रक्खा था। उसकी १६३६ और १६४० की दोनों डायरियों में ठीक उसी पृष्ठ पर दोनों वर्ष ओडायर का नाम और पता लिखा हुआ था।

ऊधमसिंह ने अपने वक्तव्य में कहा —'मैंने उसे मारा क्योंकि मुझे उससे रंजिश थी। वह उसी (मृत्यु) का पात्र था। मुझे कोई चिन्ता नहीं है मैं मरने से नहीं डरता और न उसकी परवाह करता हूं। इससे क्या लाभ कि मरने के लिए वृद्धावस्था की प्रतीक्षा की जावे। जब कि हम युवक हों तभी मरना चाहिए। यही ठीक है। यही मैं कर रहा हूं। मैं अपने देश के लिए मृत्यु का आलिंगन कर रहा हूं। क्या लार्ड जटलैंड की मृत्यु हो गई? उनकी मृत्यु हो जानी चाहिए क्योंकि मैंने ठीक उस स्थान पर (अपने पेट की ओर इंगित करके) दो गोलियां मारी थीं।" ऊधमसिंह को जब गिरफ्तार किया गया तो उनके पास अमेरिका का बना ६ नम्बर का ०४४५ बोर का रिवाल्वर मिला जो ५५ वर्ष पूर्व ब्रिटिश सरकार के लिए बनाया गया था। इसके अतिरिक्त उनके पास २५ राऊंड कारतूस और छुरा था। ये कारतूस भी लगभग ३० वर्ष पुराने थे उसके परिणाम स्वरूप कुछ कारतूस रिवाल्वर में ढीले रहते थे कारण पूरी तरह फिट नहीं होते थे। जब कि मैजिस्ट्रेट ने उसका नाम पुकारा तो उसने कहा "महोदय मेरा नाम ऊधमसिंह नहीं है। उसके मित्र उसको राम मुहम्मद सिंह आजाद के नाम से जानते थे।

२१ अप्रैल १६४० को अभियुक्त पर बाऊस्ट्रीट पुलिस अदालत में सर माइकेल ओडायर की जानबूझ कर हत्या करने का आरोप लगाया गया। एक पुलिस आफिसर ने उससे कहा था कि उसको नजर बन्दी रक्खा जावेगा तो उसने उत्तर दिया कि यह करने की कोई आवश्यकता नहीं है। सब समाप्त हो गया और उसने अपना बयान जारी रक्खा। 'मैंने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अन्तर्गत भारत में लोगों को क्षुधा से पीड़ित देखा है। मैं उसका इस प्रकार प्रतिवाद करने के लिए तनिक भी दुखी नहीं हूं। अपनी मातृभूमि के हित में मेरा यह कर्त्तव्य था। मुझे इसकी चिन्ता नहीं है कि मुझे क्या दण्ड दिया जाता है—दस, बीस, पचास वर्ष अथवा फांसी।" उसको 'ओल्डर बली सेन्ट्रल क्रिमिनल कोर्ट के सुपुर्द कर दिया गया जिसने उसको प्राण दण्ड दे दिया। भारत माता के महान सुपुत्र ऊधमसिंह को १२ जून १६४० को फांसी दे दी गई। (स्रोत:—जन सम्पर्क विभाग तथा पर्यटन विभाग, पंजाब) इस प्रकार लन्दन में भारत

माता के उस महान क्रान्तिकारी पुत्र का अन्त हुआ। उसका नाम उन स्वतन्त्रता के बलिदानी वीरों की सूची में सदव अमर रहेगा जिन्होंने केवल मात्र जननी जन्म भूमि की सेवा से जो देशभक्तों को हृप होता है उस हृप के लिए बिना किसी क्षतिपूर्ति अथवा प्रतिशन की आशा किए अपने प्राणों की आहुति दे दी।

रोष अथवा यातना (१९४१)

सक्रिय जीवन के आरम्भ से ही अपनी राजनीतिक गतिविधियों के कारण जितेन्द्र नाथ मलिक के लिए पुलिस की दृष्टि से बच सकना कठिन था। पुलिस उनके पीछे थी और वे पुलिस के द्वारा उत्पीड़ित थे। कभी तो वे पुलिस से छिपते, गिरफ्तारी से बच जाते तो कुछ ही सप्ताहों के उपरान्त जेल में ठूंस दिए जाते। उनको जेलों में बन्दी बनाया गया। बन्दी शिविरों में नजरबन्द रक्खा गया और यहां तक कि अस्वस्थकर ग्राम्य क्षेत्र में कई बार बन्दी बना कर रक्खा गया। पुलिस उनको कभी चैन की सांस नहीं लेने देती थी। वह कभी फरारी का जीवन व्यतीत करते तो कभी जेल में जबकि वे फरार थे उस समय वे दिसम्बर १९४१ मे लखनऊ पहुंचे वहां उनको भयंकर आन्त्रज्वर ने धर दबाया वे रोग शय्या पर पड गए। ऐसी असहाय और रोग ग्रस्त अवस्था में पुलिस ने उनको १३ दिसम्बर १९४१ को गिरफ्तार कर लिया और उसी दिन उन्हें सेन्ट्रल जेल भेज दिया। सभी की राय में रोगी की दशा गम्भीर और चिन्ताजनक थी। लेकिन फिर भी जेल जीवन की कठोरता मे तनिक भी कमी या ढिलाई नहीं की गई। रोगी की जेल मे दो दिन के उपरान्त अर्थात १५ दिसम्बर १९४१ को मृत्यु हो गई। जेल मे यह आम अफवाह थी कि जतीन के साथ निर्दयतापूर्ण पाशविक शारीरिक अत्याचार किया गया जिससे उसकी मृत्यु हो गई। मृत शरीर को उनके सम्बन्धियों को दाह संस्कार करने के लिए नहीं दिया गया वरन स्थानीय आय समाज को अन्तिम संस्कार करने के लिए दे दिया गया।

जिनके भाग्य के बारे में ज्ञात नहीं (१९४५)

जिन क्रान्तिकारियों के बारे में हमें बहुत कम ज्ञात है उनमें एक कुसुम रंजन पाल था। जबकि वह कालेज का छात्र था उसने असहयोग आन्दोलन में भाग लिया और कुछ समय के लिए उसको जेल हो गई। वह अपने जीवन यापन के लिए पैसे की तलाश में इंगलण्ड चला गया और वहां जाकर भारतीय खनिज का व्यापार करने लगा। द्वितीय महायुद्ध के समय वह प्रातः स्मरणीय नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के निकट सम्पर्क में आया और व्यापार छोड कर उनके दल में सम्मिलित हो गया। वह भारत की स्वतन्त्रता के कार्य को आगे बढाने के लिए आजाद हिंद रेडियो से प्रसारण करता था। जबकि जर्मनी ने आत्म समर्पण किया कुसुम रंजन पाल को गिरफ्तार कर लिया गया और सोवियत रूस ले जाया गया। तबसे उसके सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं है। इस सम्बन्ध में कुसुम के पहले वीरेन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय रूसियों के हाथ पड़ गए थे। सम्भवत रूसियों ने इन दोनों को व्यर्थ जीवित रखने की झंझट को मोल लेना पसद नहीं किया और सम्भवत उन्होंने इन दोनों भारतीय क्रान्तिकारियों को समाप्त कर दिया। वे दोनों क्रान्तिकारी देश भक्त अनिश्चित द्वार से अनन्त में विलीन हो गए।

अध्याय-नवां (अ)

उचित स्थान से पृथक

मुख्य धारा की उर्मिकाएं

इस खण्ड में अनेक शहीदों के नाम देने का एक मात्र कारण यह है कि उनके बारे में खोज और जानकारी देर से मिली इस कारण उनको और कहीं स्थान नहीं दिया जा सका। ऐसे प्रकरण और घटनाएं जिनके सम्बन्ध में अधिक विस्तृत जानकारी नहीं है उनका उल्लेख इस आशा से किया गया है कि यदि इन हुतात्माओं (शहीदों) के कोई मित्र या सम्बन्धी हो और वे इनके नामों के कवाल को विस्तृत जानकारी कभी मास से हक सके तो आगे चलकर उनके सम्बन्ध में अधिक लिखा जा सके। ऐसे व्यक्तियों के सम्बन्ध में लिखने में जिनके बारे में कोई लेख नहीं है केवल जनश्रुति ही प्रचलित है जिसकी किसी अन्य स्रोत से पुष्टि नहीं हो सकती बड़ी कठिनाई है। इसमें बड़ी जोखिम है। अण्डमन में एक राजनीतिक कैदी की मृत्यु की एक अत्यन्त विश्वसनीय मित्र ने जानकारी दी और उनके सम्बन्ध में प्रेस के लिए लेख तयार कर लिया गया। एक दूसरे मित्र ने उस लेख की पाँडुलिपि को पढ़ कर कहा कि अमुक स्थान पर उस हुतात्मा के सम्बन्ध में जांच कर लेना उचित होगा। उस पते पर लिखने से अत्यन्त हर्ष का समाचार मिला। उक्त क्रांतिकारी सज्जन यद्यपि अत्यन्त वृद्ध हो गए थे परन्तु पूर्ण स्वस्थ थे। यदि अनजाने में किसी अन्य क्रांतिकारी के सम्बन्ध में ऐसी भूल हो गई हो और वे जीवित हों तो लेखक की यही कामना है कि वे दीर्घायु हों। इसके साथ ही इस बात की जोखिम को भी हमें नहीं भूल जाना चाहिए कि ऐसा नाम जो कि सभी प्रकार बलिदानों की प्रशस्ति में सम्मिलित किए जाने योग्य है जहां तक सम्भव हो छूट न जावे।

उत्तमसिंह—उत्तमसिंह गदर पार्टी के सदस्य थे। वे संयुक्त राज्य अमेरिका से भारत वापस लौटे और उन्होंने फौजी छावनियों में सेनाओं में क्रांतिकारी और विद्रोह की भावना को फैलाना आरम्भ किया। वे १५ सितम्बर १९१५ को जब कि एक गांव में विश्राम कर रहे थे गिरफ्तार कर लिए गए। उनको प्राण दण्ड दिया गया और फांसी दे दी गई। (सदर्भ —स्वामी केशवानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ पृष्ठ १९१ ९२)

प्रबोध भट्टाचार्य—प्रबोध भट्टाचार्य राजशाही कालेज का छात्र था जो ललितेश्वर बस्ती में १९१६ में नियरा में मारा गया (सदर्भ पक्रसी अग्निदिनेर कथा १९४७ पृष्ठ ५७)

हरिदास दास—हरिदास दास डायमण्ड हारबर थाने में सेतालामपुर के निवासी थे। पुलिस का कहना था कि वे भवानीपुर क्रांतिकारी दल के सदस्य थे। अन्य बहुत से सन्देहास्पद लोगों के समान उन्हें भी गिरफ्तार करके राजशाही जिले के पुतिया थाने के बरोई पारा नामक स्थान पर नजरबन्द कर दिया गया। यह घटना १९१६ की है।

वह स्थान अत्यन्त अस्वस्थ कर होने के लिए कुख्यात था और उन्हें सरकार जो भत्ता देती थी वह भी बहुत ही कम और अत्यन्त अनियमित था। अपनी दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करना ही उनके लिए अत्यन्त कठिन था, औषधियों के लिए

व्यय कर सकने का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। कभी कभी उन्हें भूखे ही सो जाना पड़ता था। अपनी कठिनाइयों को दूर करने के लिए उन्होंने जो भी प्रतिवेदन दिए उन पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। उन्हें ऐसी कठिनाई मे देखकर उनके पुलिस गार्ड ने अपने पास के साधनों से उनके लिए भोजन बना देने का प्रस्ताव रक्खा यदि दरोगा साहब उसके व्यय के भुगतान की गारन्टी दे दें। परन्तु दरोगा ने उसके प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। जुलाई म हरिदास पुतिया गैस्ट हाऊस पुलिस जानकारी में गया और ६ जुलाई को वापस लौटकर आया तो भीषण ज्वर था। वास्तव में उसे पहले भी ज्वर आया था परन्तु बीच में उतर गया था कुछ दिनो के अन्तर से उसे पुन भयकर ज्वर हो गया। पुलिस अधिकारी ने उसे १७ जुलाई और उसके दूसरे दिन भी आकर देखा। उसने पुलिस अधिकारियो से अपनी कष्ट गाथा सुनाई। परन्तु स्थान परिवतन के लिए उनके सारे प्रयत्न व्यथ सिद्ध हुए। अन्त में निराश और हताश हरिदास ने १८ जुलाई १९१७ को अपनी आत्म हत्या फासी लगा कर करली। सरकार ने सन्तोष की सांस ली उनके सिर का दद कम हुआ।

सरकार ने हरिदास के पिता, हरिदास की पत्नी और समस्त परिवार को उनकी मृत्यु से जो शोक और आघात पहुँचा उसके लिए मगरमच्छ के आसुओ की तरह सहानुभूति भी प्रकट की। पत्र में यह भी सूचित किया गया था कि इसमें धोखे बाजी का कोई सदेह नहीं है।

शिशिर कुमार गुहा —शिशिर ने २३ दिसम्बर १९०७ को एक अत्यन्त वीर और वीरतापूण काय किया जबकि गोअन्डो म उसने, श्री ऐलन की पीठ में बहुत से आदमियों के बीच म गोली मार दी। श्री ऐलन की मृत्यु नहीं हुई वे ढाका के जिलाधीश थे। वह गिरफ्तार होने से बच निकला। इस घटना के उपरान्त वह एक साधु बन गया और सात वर्षों तक चुप चाप शान्त जीवन व्यतीत करता रहा। १९१४ में उसको गिरफ्तार कर लिया गया और उसको एक वष का कठोर कारावास हो गया। एक वर्ष के कारावास की अवधि के समाप्त होने पर जब वह जेल से मुक्त हुआ तो उसको पुन गिरफ्तार कर लिया गया और एक गाव मे नजरब द कर दिया गया। दुनिया को यह प्रकट किया गया कि शिशिर अपने गांव में मर गया। (सदभ टी यस चक्रवर्ती विप्लवी बगाल १७५७–१९१२ पृष्ठ १९६) शिशिर के सम्ब ध मे और अधिक कोई जानकारी उपलब्ध नही है।

रेवती चरण नाग —जिन पर सदेह होता ऐसे राजनीतिक क्रान्तिकारियो की मृत्यु रहस्यमयी होना कोई असाधारण बात नही थी। परन्तु रेवती चरण की जिस प्रकार मृत्यु हुई उसकी तुलना मे अन्य सभी रहस्यमयी मृत्यु नगण्य सी प्रतीत होती है। रेवती ने १९१५ में कोमिला जिला स्कूल से मट्रीक्यूलेशन परीक्षा प्रथम श्रेणी म उत्तीर्ण की। उसके पिता की आर्थिक स्थिति खराब थी अतएव उनकी इच्छया थी कि वह कोई नौकरी करले जिससे कि वह कुछ कमाए और परिवार को आर्थिक सहायता पहुँचा सके। रेवती चरण ने १९१५ म अपने घर को छोड दिया और उसके घर से निकल जाने के उपरान्त यह पता चला कि उसकी इच्छया एम ए पढने की थी और एम ए करके ही वह कोई अच्छी नौकरी करना चाहता था जिससे कि समृद्धिशाली जीवन व्यतोत कर सवे। वह अपना घर छोड़कर भागलपुर चला गया और उसने स्थानीय कालेज म इन्टर मीडियेट में अपना प्रवेश ले लिया। उसको कासिमबजार राज्य से एक छोटी सी छात्र

वृत्ति मिल गई थी और वह एक सम्भ्रान्त परिवार में दो छोटे बच्चों का ट्यूटर नियुक्त हो गया था। वह उन्हीं के यहां दो छोटे बच्चों के अभिभावक शिक्षक की भांति रहता था। इस प्रकार वह अपनी पढाई का खर्च चलाता था। किसी कारणवश उसने १८ अक्टूबर, १६१६ को भागलपुर छोड दिया और उसके कुछ ही दिनों बाद वहां पुलिस उसको गिरफ्तार करने का वारंट लेकर आई। जिस कमरे में वह रहता था उसकी बहुत अच्छी तरह से तलाशी ली गई और उसकी सभी वस्तुओं को पुलिस ले गई। ऐसी मान्यता थी कि उसके नोमिल्ला स्कूल छोडने के समय स्कूल के हैडमास्टर की हुई हत्या के सम्बन्ध में पुलिस उसको गिरफ्तार करना चाहती थी। उस हैडमास्टर के सम्बन्ध में लोगों की धारणा थी कि वह पुलिस का भेदिया है। रेवतीचरण के सम्बन्ध में किसी को कुछ भी ज्ञात नहीं हुआ कि वह कहां चला गया। दीर्घकाल के तीन वर्षों के उपरान्त एक पुलिस आफिसर ने रेवती के एक दूर के रिश्तेदार को भिगरा रेलवे स्टेशन पर बुलाया जो उसके पतृक गांव तिपरा में 'उपालता' गांव से बहुत ही दूर था। उस पुलिस आफिसर ने रेवती के उस दूर के रिश्तेदार को वे ८६ चीजें सौंप दीं जो कि उसके भागलपुर के कमरे में पुलिस को मिली थीं और उससे यह सदेश कहा कि जनवरी १६१७ में उसकी उसके दल वालों ने भागलपुर में हत्या कर दी।

वह रहस्य और भी गहन हो गया जबकि सेडीशन कमेटी—१६१८ की रिपोर्ट प्रकाशित हुई (पृष्ठ ८६) और उसमें यह लिखा था कि रेवती चरण की उसके साथियों ने सिराजगंज में अनतिकता के अपराध में हत्या कर दी। जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं कि फरवरी १६२० तक अर्थात् मृत्यु के तीन साल बाद तक न तो उसके पिता और न अन्य रिश्तेदारों को उसकी मृत्यु की सूचना दी गई। उसी रिपोर्ट में यह भी लिखा था कि (पृष्ठ १२८ १३०) रेवती बिहार के क्रान्तिकारी दल का एक प्रमुख और महत्वपूर्ण सक्रिय सदस्य था। वास्तविकता तो यह थी कि वह उन व्यक्तियों में से था कि जो दूसरों को प्रभावित कर सकते हैं और उसने अनेक युवकों को क्रान्तिकारी दल के सदस्य बनने के लिए प्रेरित किया था। उस पर अनतिकता का आरोप लगाना अत्यन्त घृणास्पद था। उसके चरित्र के सम्बन्ध में जो विभिन्न स्रोतों से ज्ञात हुआ अर्थात् वे सज्जन जिन्होंने उसे भागलपुर में उसे आश्रय दिया था, एक अध्यापक जो उसको बहुत समीप से जानते थे और उसके अभिन्न मित्र ने एक स्वर से कहा कि उसका चरित्र निष्कलंक था। उसके चरित्र में कभी कोई ऐसी बात नहीं मिली कि जिसके कारण उसके दल वाले उसकी हत्या कर देते।

इसके अतिरिक्त उसके पिता को भाउसैं में एक पत्र मिला जहां वे अपनी आजीविका उपार्जन के लिए कार्य करते थे। उस पत्र पर ईस्ट रंगून के डाकखाने की १६ माच १६२० की मुहर लगी हुई थी। पत्र में लिखा था कि रेवती चरण को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया था और उससे अपराध स्वीकार कराने के लिए उसको उन्होंने यातना देकर मार डाला। रेवती चरण के निष्कलंक चरित्र के सम्बन्ध में जो कुछ ज्ञात है उससे पत्र में लिखी सूचना का पूरा मेल खाता है। रेवती की मृत्यु की सूचना देने का संदेहजनक तरीका और मृत्यु कहां हुई उस स्थान में भेद—पुलिस ने बताया कि भागलपुर में हुई रिपोर्ट में मृत्यु का स्थान सिराजगंज बताया गया। जब सिराजगंज में यह जांच पडताल की गई तो वहां के स्थायी रहने वालों से पता चला कि जनवरी १६१७ में वहां कोई हत्या नहीं हुई। रेवती चरण की मृत्यु के पहले और पश्चात इस प्रकार

की संदेहजनक मृत्युओ के लेख हैं कि जिनकी एक मात्र कारण पुलिस थी परन्तु पुलिस उस क्रान्तिकारी के मस्तिष्क में विकार हो जाने के कारण आत्म हत्या कर लेने अथवा साथियो द्वारा मार दिए जाने का झूठा बहाना बताकर अपने कुकृत्य पर पर्दा डालती थी।

सुरेन्द्र (सौरेन्द्र) कुसारी

■ मई १९१७ को क्रान्तिकारी दल ने आरमीनियन स्ट्रीट की एक दुकान को लूटा। उसमे दो व्यक्ति मारे गए और दो गम्भीर रूप से जख्मी हो गए। सुरेन्द्र (सौरेन्द्र) कुसारी आक्रमणकारी दल मे था उसको अपने साथी की ही एक गोली लग गई। उसके साथी उसको एक सुरक्षित स्थान पर उठा कर ले गए। परन्तु अन्तत उसकी उस जख्म के कारण मृत्यु हो गई। (सदम एन के गुहा बगालया विलपववाद–पृष्ठ ३०१)

गौरव गरिमा—बगाल लजिस्लेटिव काऊंसिल मे सरकार के गृह सदस्य ने नीचे लिखा उत्तर दिया था—सुरेन्द्रनाथ कार ने जेल मे आत्म हत्या कर ली। केशवलाल देव की टायफाइड ज्वर से मृत्यु हो गई। जतीन्द्रनाथ राय की हैजे से मृत्यु हो गई। धीरेन्द्र मोहन मुकर्जी की हैजे से मृत्यु हो गई। (अमृत बाजार पत्रिका, ५ जुलाई १९१८)

मानसिह—मानसिंह लाहौर षडयन्त्र अभियोग में एक अभियुक्त था। कहा जाता है कि अभियोग के मध्य एक भेदिए से झगडा हो जाने के कारण उसकी मृत्यु हो गई। (अमृत बाजार पत्रिका ८ जनवरी १९१७)

शान्ति चक्रवर्ती—शान्ति क्रान्तिकारी दल का एक अत्यन्त सक्रिय सदस्य था। कलकत्ता की मिर्जापुर स्ट्रीट की एक दुकान मे बाहर से फेंके हुए बम के विस्फोट के सम्बन्ध में वह सदेह में १९२३ म गिरफ्तार कर लिया गया। वह एक मैजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया गया किन्तु विश्वसनीय साक्षी के अभाव में अदालत ने उसे निर्दोष कह कर छोड दिया। एक दिन विशेष को–एक गुप्त सन्देश के अनुसार जो वह छोड गया था–वह अपने निवास स्थान से अपने एक मित्र से मिलने गया जिसने उसके पास शान्ति की सम्भावित गिरफ्तारी के पूर्व जमा किए हुए अस्त्र शस्त्र वापस लौटाने का वचन दिया था। शान्ति रात्रि को वापस लौट कर नहीं आया। जिन मित्रों को उसके जाने का कारण मालूम था, उसके सम्बन्ध में बहुत चिंतित और आशंकित हो गए और उन्होंने उसकी खोज की। कुछ समय खोज करने के उपरान्त उन्हें शान्ति का मृत शरीर दमदम रेलवे स्टेशन से अधिक दूर नहीं, रेल की पटरी पर मिला। उसके शरीर पर कई गहरे घाव लगे। (जी एन चन्दा अविस्मरणीया पृष्ठ ६९)

उधमसिंह कासेल—जबकि उधमसिंह सयुक्त राज्य अमेरिका मे था वह गदर पार्टी में सम्मिलित हो गया था और १९१४ में वह तोसा मारू' जहाज से भारत वापस लौटा। कलकत्ते में जहाज से उतरते ही उसको पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और उसको पजाब ले जाया गया। बाद को उसको एक लाहौर षडयन्त्र मे अभियुक्त बनाया गया और सजा हो जाने पर १० दिसम्बर १९१५ को उसे अडमन सलूलर जेल में भेज दिया गया। जेल का दण्ड और सेलूलर जेल का कठोर श्रम उसकी अन्तर की अग्नि को मद न कर सका। जबकि एक साथी कदी को नारियल की अपने हिस्से की जटा तैयार न कर सकने पर जेलर ने गाली दी तो उधमसिंह से सहन नहीं हुआ। उसने जेलर को उसके कार्यालय में ही जाकर खूब पीटा, उसके परिणाम स्वरूप ऊधमसिंह को भी निर्दयता पूवक मारा पीटा गया।

उसी समय सरकार की नीति मे प [illegible] और ऊधमसिंह को भारत

वापस भेज दिया गया और उसे बलारी जेल में रख दिया गया। वह किसी प्रकार जेल से भागने में सफल हो गया और अकथनीय कष्टों को सहन करते हुए वह किसी प्रकार पंजाब पहुंच गया। जबकि उसे लगा कि उसके लिए अपने गुप्त आश्रय स्थल पर और अधिक ठहरना बहुत कठिन हो गया है तो वह १६२ में भारत की सीमा को पार कर काबुल (लालपुरा) पहुंच गया और वहां वह कुछ समय तक छिपा रहा। कुछ ही महीनों में उसके तीन साथी उससे आ मिले और उन्होंने नकली नाम रख कर जनता में मार्क्सवाद का प्रचार करने के लिए 'कीर्ति' नामक पत्र निकालना आरम्भ किया। (सदभ देशभक्त यादां नवम्बर १६६३ पृष्ठ १६) उसका शेष जीवन रहस्य के गर्भ में छिपा है।

नृपेन्द्रनाथ दत्त और बीरेन्द्रनाथ चक्रवर्ती—जलपाइगुरी में जब दो युवक नृपेन्द्रनाथ और बीरेन्द्रनाथ १६३० में एक निश्चित स्थान पर तारों को काटने के लिए रेलवे लाइन के साथ साथ जा रहे थे, जिससे कि संचार व्यवस्था ठप्प हो जावे तब एक तेजी से आने वाले रेलवे इंजन के नीचे आने से उनकी मृत्यु हो गई। रेलवे इंजिन उनके बिना जाने तेजी से उन पर आ गया वे हट न सके। (सदभ जी एन चन्न अविस्मरणीय पृष्ठ १५६)

पीतम खां—एक ट्रेन डकैती के अभियोग में पीतम खां को प्राण दण्ड दिया गया और फांसी के तख्ते पर उनका महाप्रयाण हुआ। (सदभ अखिल भारतीय क्रांतिकारी शहीद कमेटी अलबम पृष्ठ ५६)

मनेगीलाल खास्ता—बनारस षड्यन्त्र अभियोग में एक अभियुक्त मनेगीलाल को दीर्घकाल का कारावास हुआ। जब कि वे जेल में अपने कारावास का दण्ड भुगत रहे थे तो वहीं उनकी मृत्यु हो गई। (वही पृष्ठ १२)

मेहरसिंह—मेहरसिंह के सम्बन्ध में इससे अधिक और कुछ ज्ञात नहीं है कि उनकी मृत्यु जेल में हुई। (वही पृष्ठ ५६)

रवीन्द्रमोहन कार—जबकि राजनीतिक अभियोग में दण्डित होकर वे कारागार में थे तब वहां बीमारी से उनकी मृत्यु हो गई। (एम एन गुप्ता काकोरी सराजानेर स्मृति पृष्ठ ६५)

पाठके—सिंगापुर में जो सेना ने विद्रोह किया वह मुख्यत गदर पार्टी के सदस्य पाठके के प्रयत्नों का परिणाम था। उनको गिरफ्तार कर सैनिक न्यायालय में उन पर अभियोग चलाया गया और उनको प्राण दण्ड की सजा देकर फांसी दे दी गई। (शर्मा तथा कुमार इंडियन फ्रीडम स्ट्रगिल सेंटीनरी पृष्ठ २२६)

चक्रवर्ती—चटरमन की मदगास में एक बम के विस्फोट हो जाने के परिणाम स्वरूप मृत्यु हो गई। (पी दास गुप्ता विप्लावर पाथे पृष्ठ १७४)

धीरेन्द्रनाथ दे—धीरेन्द्र को पुलिस ने संदेह पर गिरफ्तार कर लिया और ममनसिंह के जमालपुर कस्बे के पुलिस थाने में रखा गया। पुलिस ने थाने के लाकअप में उनको निर्दयता पूर्वक यातना देकर मार डाला। (वही संख्या ७५)

मनीन्द्र उकील—मनीन्द्र को १६३० में संदेह पर गिरफ्तार कर लिया गया और बंगाल की अनेक जेलों में रह चुकने के उपरान्त अंत में मनीन्द्र राजपूताने (वर्तमान राजस्थान) के देवली बन्दी शिविर में पहुंचा। उन्हें पेचिश का रोग हो गया और जब वे मृत्यु के निकट पहुंच गए तो बन्दीगृह के बाहर मरने के लिए छोड़ दिया गया।

जसोदालाल—जगदा बदि ऐवर के बम अभियोग में एक अभियुक्त थे। जब

उनको बहुत लम्बे कारावास का दण्ड दिया गया तो उनके स्वास्थ्य की दशा अत्यन्त गिरी हुई थी। जेल में जब उनकी दशा मरण तुल्य हो गई तो उन्हे समय से पहले रिहा कर दिया गया। परन्तु वे स्वास्थ्य लाभ न कर सके और उनकी मृत्यु हो गई।

बीरेन्द्रनाथ दे—बीरेन्द्रनाथ दे दिसम्बर १९३३ में तंगेल सब डिवीजन के संपालिया थाना में क्रान्तिकारियों की एक टुकड़ी में दल के लिए धन एकत्रित करने की कार्यवाही करने के लिए सम्मिलित हुए। उस कार्यवाही में एक ग्रामीण द्वारा फेंका हुआ बल्लम उनके शरीर में घुस गया। उस बल्लम को हाथ से पकड़े हुए वे भागते चले गए। नदी के किनारे जहां उनको भगा ले जाने के लिए एक नाव तैयार खड़ी थी वहां पहुंच कर रुधिर के बहने के कारण वे मर कर गिर पड़े।

जन श्रुति सचीन्द्रनाथ राय—पुलिस की कुदृष्टि से बचने के लिए १९१५ में भूमिगत हो गए उसके उपरान्त उनके सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं हुआ। गोपेनचन्द्र राय—पाथार प्रतिमा स्थान पर नजरबन्दी की दशा में मरे। महेश बरुआ—को बाघुआ डकैती के सम्बन्ध में कारावास का दण्ड मिला था। जेल में उनकी मृत्यु हुई।

बारीसाल के सुनील चक्रवर्ती—की राजशाही जेल में मृत्यु हुई। बारीसाल के जितेन समादार—की नजरबन्दी की दशा में मृत्यु हुई।

हरन चक्रवर्ती—जब रेल की लाइन के किनारे एक क्रान्तिकारी दल की कार्यवाही में (आक्रमण) भाग लेने के लिए वासुदेवपुर की ओर जा रहे थे तो एक चलती हुई गाड़ी के नीचे आ गए और उनकी मृत्यु हो गई।

धीरेन्द्रनाथ बरुआ—को पीटा गांव में क्रान्तिकारी नारे लगाने के अपराध में इतनी निर्दयता से पुलिस ने पीटा जिसके कारण उनकी मृत्यु हो गई।

रामजी कलहाटकर—को १९१६ में गिरफ्तार किया गया था। उनकी गिरफ्तारी नासिक षड्यन्त्र अभियोग के सम्बन्ध में हुई थी। उस समय वे क्षयरोग से पीड़ित थे। जेल के कठोर जीवन ने उनको लाञ्छन और कष्ट से मृत्यु के द्वारा मुक्ति दिला दी।

सुशील दत्त—पुलिस से हुई एक मुठभेड़ में उत्तर भारत में १९१६ में वीर गति को प्राप्त हुए।

मनीन्द्र बोस—१९१५ में मैमनसिंह में पुलिस की गोली से मारे गए।

जो अजेय था

यह उन दिनों की बात है जबकि मेवाड़ के सिंहासन पर महाराणा सज्जनसिंह राज्य शासन कर रहे थे। वे प्रगतिशील स्वाभिमानी और कुशल शासक थे। स्वामी दयानन्द के भक्त और प्रशंसक थे। उनके मन्त्री ठाकुर कृष्णसिंह बारहट थे वे भी स्वामी दयानन्द के भक्त और प्रशंसक थे और स्वामी के राष्ट्रीय विचारों के प्रति श्रद्धा रखते थे। देशी नरेशों पर अंग्रेजी सरकार कठोर अंकुश रखती थी। विदेशी विभाग प्रत्येक राज्य में कुछ अंग्रेज अधिकारी नियुक्त करवा देता था जो एक प्रकार से महाराजा पर अंकुश रखते थे। मेवाड़ में भी विदेशी विभाग के घोषित कतिपय अग्रज अधिकारी थे। महाराजा सज्जनसिंह उनके व्यवहार से दुखी था। ठाकुर कृष्णसिंह के सुझाव पर उन्होंने श्यामजी कृष्ण वर्मा को जो आक्सफोर्ड से उच्च शिक्षा प्राप्त तथा लन्दन से बार एट ला करके आए थे मेवाड़ का प्रधानमन्त्री नियुक्त कर लिया। श्याम जी कृष्ण वर्मा उद्भट विद्वान राजनीति विशारद क्रान्तिकारी विचारों के देशभक्त थे। स्वामी दयानन्द से उनकी घनिष्ठता थी परन्तु ठाकुर कृष्णसिंह बारहट के प्रस्ताव, तथा स्वामीजी के

समर्थन से वे मेवाड के दीवान पद पर नियुक्त हुए। उन्होंने उदयपुर आते ही अंग्रेज अफसरों को चतुराई और युक्ति से निकाल बाहर किया।

ठाकुर कृष्णसिंह के तीन पुत्र केशरीसिंह बारहट और जोरावरसिंह बारहट थे। केशरीसिंह बारहट को प्रकाण्ड पांडित्य, देशाभिमान देशप्रेम अपने पूर्वजो से विरासत मे मिला था। श्यामजी कृष्ण वर्मा जैसे क्रांतिकारी महान राजनीतिज्ञ और उद्भट विद्वान के सहवास तथा स्वामी दयानन्द के उपदेशों के फलस्वरूप उनमें क्रांतिकारी विचार उत्पन्न हुए और उनका देश के प्रमुख क्रांतिकारियों से निकट का सम्बन्ध स्थापित हो गया। पिताश्री के स्वर्गवासी होने पर वे उदयपुर मे उनके पद पर नियुक्त हुए। उनकी योग्यता की प्रशंसा सुनकर कोटा नरेश ने उन्हें अपने दरबार मे बुला लिया। ठाकुर केशरीसिंह का महाविप्लवी नायक श्री रासबिहारी बोस से घनिष्ठ सम्बन्ध था। वे राजस्थान मे क्रांतिकारी दल के स्तम्भ बन गए। क्रांतिकारी कार्यों की शिक्षा लेने के लिए उन्होने अपने छोटे भाई ठाकुर जोरावरसिंह बारहट पुत्र प्रतापसिंह बारहट और जामाता ईश्वरदान आसिया को रासबिहारी बोस के क्रांतिकारी दल के प्रमुख नेता श्री अमीरचन्द के पास दिल्ली भेजा। कालान्तर मे ठाकुर केशरीसिंह बारहट को आरा षड्‌यन्त्र के मुकदमे मे आजीवन कारावास का दण्ड दिया गया। परन्तु छोटे भाई जोरावरसिंह भूमिगत हो गए और २५ वर्षों तक ब्रिटिश शासन को चुनौती देते हुए अज्ञात रह कर क्रांतिकारी कार्य करते रहे।

जब देहली मे लार्ड हार्डिंग पर रासबिहारी के क्रांतिकारी दल ने बम फेंका तो ठाकुर जोरावरसिंह अपने भतीजे प्रसिद्ध क्रांतिकारी प्रतापसिंह बारहट के साथ उसमे सम्मिलित हुए। बात यह थी कि बंगाल के क्रांतिकारी दल के साहसपूर्ण कार्यों से भारत सरकार चिन्तित हो उठी थी अस्तु उसने भारत की राजधानी कलकत्ता से हटा कर दिल्ली लाने का निश्चय कर लिया था। उस समय ब्रिटिश कूटनीतिज्ञों ने सरकार को यह परामर्श दिया था कि अत्यन्त प्राचीनकाल से इन्द्रप्रस्थ-दिल्ली भारत की राजधानी रही है। भारत की जनता का दिल्ली के साथ भावात्मक सम्बन्ध रहा है। कलकत्ता जिसका निर्माण अंग्रेजो ने किया उसका भारत के जन मानस से कोई सम्बन्ध नहीं है अस्तु यदि उसके स्थान पर दिल्ली को भारत की राजधानी बनाया जावे तो भारत की जनता पर उसका अच्छा मनोवैज्ञानिक प्रभाव पडेगा। यही कारण था कि १२ दिसम्बर १९११ को स्वयं सम्राट जार्ज पांचवें ने दिल्ली दरबार में यह घोषणा की कि कलकत्ते के स्थान पर दिल्ली भारत की राजधानी होगी बंग भंग को समाप्त कर बंगाल को एक प्रान्त बना दिया जावेगा। सम्राट ने नई दिल्ली का शिलान्यास अपने हाथो से किया। उस समय जो दरबार किया गया था उसकी शान शौकत ने ब्रिटिश सरकार की महान शक्ति और वैभव का भारत की जनता के मानस पर मनोवाञ्छित प्रभाव डाला था। ब्रिटेन अजय है, कोई शक्ति उसको हिला नही सकती ऐसी भावना भारत में दृढ हुई थी।

जब नई राजधानी का निर्माण पूरा हो गया और कलकत्ता से राजधानी को दिल्ली लाने का प्रश्न उठा तो भारत सरकार ने राजधानी के उदघाटन समारोह को भी दिल्ली दरबार के समान ही शान शौकत से करना निश्चित किया जिससे कि भारतीय जन मानस पर यह छाया पड़े कि ब्रिटिश सरकार महान शक्तिशाली है उसको कोई शक्ति नही कर सकती।

जब लार्ड हार्डिंग की सजी हुई स्पेशल ट्रेन कलकत्ते से वायसराय को लेकर दिल्ली पहुँची तो उनका सम्राट के समान ही स्वागत किया गया। तोपों की गगन भेदी गर्जन के साथ स्वर्ण सज्जित हौदे में बैठकर जब लार्ड हार्डिंग का सुसज्जित हाथी चला, भारत के सैकड़ों देशी राज्यों के नरेश अपने अंग रक्षकों के साथ उनके पीछे चल रहे थे भारतीय सेना सजधज के साथ कूच कर रही थी। सैनिक बैंड मोहक ध्वनि बजा रहे थे और भारत सरकार के सभी अधिकारी जलूस में चल रहे थे। जब यह जलूस चांदनी चौक में घंटाघर से आगे बढ़ कर पंजाब नेशनल बैंक के सामने पहुँचा तो एक गगन भेदी भयानक धड़ाका हुआ और एक बम हौदे के पिछले भाग पर आकर फटा। हौदे का पिछला भाग ध्वस्त हो गया। छत्रधारी जमादार महावीरसिंह मर कर हौदे के पीछे लटक गया। वायसराय गम्भीर रूप से घायल होकर थोड़े समय के लिए बेहोश हो गए।

बम फेंकने वाले ऐसे गायब हुए कि ब्रिटिश स्काटलैंड यार्ड के संसार प्रसिद्ध गुप्तचर और भारत सरकार की पुलिस और गुप्तचर बम फेंकने वालों का पता न लगा सके। लाखों रुपये के पारितोषिक घोषित किए गए। समस्त सरकारी तन्त्र ने सारे प्रयत्न कर लिए परन्तु वे असफल रहे। आज तक यह प्रश्न विवाद ग्रस्त प्रश्न बना है कि बम किसने फेंका था। जापान में महाविप्लवी नायक रासबिहारी बोस की पुत्री ने कहा था कि मेरे पिता ने मुझे बतलाया था कि बम उन्होंने फेंका था। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि समस्त योजना रासबिहारी के मस्तिष्क की उपज थी और वे वहां स्वयं मौजूद थे उनकी देख रेख में ही बम फेंका गया। चन्दननगर से बम मंगाने की व्यवस्था भी उन्होंने की थी। अस्तु उनको इसका श्रेय दिया जाना चाहिए। परन्तु क्या वास्तव में बम उन्होंने फेंका? यह कहना कठिन है। क्रान्तिकारी दल के वे सर्वमान्य नेता थे उन्होंने ही बम फेंकने की व्यवस्था कर ब्रिटिश सरकार की शक्ति और प्रभाव को चुनौती दी थी।

क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास लिखने वालों से कुछ ने बसंत विश्वास द्वारा बम फेंके जाने की बात कही है। 'रोल आफ आनर' के प्रसिद्ध लेखक श्री कालीचरण घोष की भी यही मान्यता है। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी स्वर्गीय जोगेश चटर्जी ने भी अपनी पुस्तक 'इन सर्च आफ फ्रीडम" में बसन्त विश्वास द्वारा बम फेंका जाना स्वीकार किया है। बंगाल के अधिकांश क्रान्तिकारी भी इसी विचार को स्वीकार करते हैं। ठाकुर केसरीसिंह बारहट के जामाता ईश्वरदान आसिया जो मास्टर अमीरचन्द के पास जोरावरसिंह बारहट तथा प्रतापसिंह बारहट के साथ क्रान्तिकारी शिक्षा लेने गए थे और जिनका रासबिहारी से सम्पर्क था उन्होंने उदयपुर में लेखक को बतलाया कि मास्टर अमीरचन्द ने फांसी होने के पूर्व उन्हें बतलाया कि बम बसन्त विश्वास ने फेंका था। श्री कालीचरण घोष ने लेखक को सूचित किया है कि लाला हनुमन्त सहाय जिनको क्रान्तिकारियों के निकल भागने की व्यवस्था करने का कार्य दिया था और जो आज भी जीवित हैं उन्होंने किसी व्यक्ति से कहा है कि बम फेंकने का कार्य बसन्त विश्वास को सौंपा गया था।

परन्तु प्रताप बारहट जो कि रासबिहारी बोस के अत्यन्त विश्वास पात्र और प्रमुख सहायक थे और जिन्हें अंग्रेज सरकार ने यातना देकर बरेली जेल में मार डाला उनके अपने मित्र तथा सहपाठी श्री रामनारायण चौधरी जो राजस्थान के परिचित और

प्रसिद्ध पत्रकार लेखक और राजनीतिक नेता हैं उन्होंने लेखक से कहा कि प्रतापसिंह बारहट ने उन्हें बतलाया कि बम ठाकुर जोरावरसिंह ने फेंका था। ठाकुर केशरीसिंह के पुत्र अर्थात कुंवर प्रतापसिंह बारहट के छोटे भाई की पुत्री को सन १९३७ में वीरवर जोरावरसिंह ने दिल्ली में पहली बार बम काण्ड के २५ वर्ष बाद बतलाया था कि लार्ड हार्डिंग पर बम उन्होंने फेंका था और चांदनी चौक के उस स्थान को भी दिखलाया था कि जहां से उन्होंने बुर्का पहन कर बम चलाया था। उस समय ठाकुर केशरीसिंह बारहट की पौत्री श्रीमती राजलक्ष्मी देवी चौदह वर्ष की बालिका थी उनके पति श्री फतेह सिंह ने जो कोटा में नायब दण्डनायक थे, लेखक को पत्र लिखकर इस कथन की पुष्टि की है।

वीरवर जोरावरसिंह ने लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका उसके एक साक्षी और हैं वे हैं श्री मणिराजसिंह जागावत। जब जोरावरसिंह बम फेंक कर दिल्ली से निकले और फरार हो गए तो सरकार ने सारे प्रयत्न कर लिए किन्तु वे पकड़े नहीं जा सके। २५ वर्षों तक लगातार वे राजस्थान तथा मध्य भारत के जंगलों में फिरते थे। उन्होंने अपना नाम अमरदास बैरागी रख लिया था और साधुवेश में रहते थे। जीवन के अन्तिम दिनों वे सीतामऊ राज्य में अधिक रहे और श्री मणिराज जागावत उनके निकट सम्पर्क में आए। श्री जागावत ने लेखक को लिखा है कि ठाकुर जोरावरसिंह ने उन्हें बतलाया कि लार्ड हार्डिंग जब हौदे पर बैठ कर निकले तो मैंने एक ऊंचे मकान से बम फेंका। बम फेंककर जब हम दिल्ली से निकले तो एक दिन में हम चालीस मील चले। एक गुप्तचर हमारे पीछे हो गया। वह हमारा पीछा कर रहा था। कुछ दिनों के उपरान्त जब हम बांसवाड़ा (दक्षिण राजस्थान में एक छोटा राज्य) की सीमा पार कर रहे थे तब उस गुप्तचर ने जोर से पुकार कर नाकेदार से कहा कि इस व्यक्ति को पकड़ लो। जोरावरसिंह ने उस नाकेदार को तुरन्त मार गिराया और वहां से निकल गए। जबकि वे सीतामऊ के जंगलों और पहाड़ों में अज्ञात रूप से रह रहे थे तब तत्कालीन सीतामऊ महाराजा को यह पता चल गया कि जोरावरसिंह सीतामऊ के जंगलों में छिपे हुए हैं परन्तु उनके मन में यह भावना उदय हुई कि उन्हें पकड़ कर यदि ब्रिटिश सरकार को सौंप दिया जावे तो वे ब्रिटिश सरकार के विशेष कृपापात्र बन सकेंगे। जब जोरावरसिंह को सीतामऊ नरेश की इस मनोभावना का पता चला तो उन्होंने एक दोहा लिखकर उनके पास भिजवाया। उस दोहे को पढ़कर सीतामऊ नरेश के मन में जो निबलता आ गई थी वह दूर हो गई और उन्होंने उस विचार को हृदय से निकाल दिया।

लेखक का मत है कि महाविप्लवी नायक रासबिहारी बोस ने सम्भवतः दो व्यक्तियों बसन्त विश्वास तथा वीरवर ठाकुर जोरावरसिंह को बम फेंकने के लिए नियुक्त किया था जिससे कि यदि एक का वार खाली जावे तो दूसरे का बम वायसराय को लगे, अतएव बम दोनों व्यक्तियों ने चलाया। बसन्त विश्वास कुछ दिनों के बाद गिरफ्तार हो गए, उन पर अभियोग चला। पहले तो न्यायाधीश ने उन्हें आजन्म कैद का दण्ड दिया परन्तु सरकार ने उच्च न्यायालय में अपील की। उच्च न्यायालय ने उनको प्राण दण्ड की आज्ञा दे दी और उनकी फांसी का दिन निश्चित हो गया तो उस क्रान्तिकारी वीर युवक ने अपने किसी क्रान्तिकारी मित्र अथवा सम्बन्धी को बतलाया कि बम उसने फेंका था परन्तु बंगाल में यह बात सभी क्रान्तिकारियों को ज्ञात हो गई।

परन्तु जोरावरसिंह बम काण्ड के उपरान्त पच्चीस वर्षों तक जंगल और पहाड़ों

में फिरते रहे, गिरफ्तार नहीं हुए व किसी से यह कैसे कह सकते थे कि बम उन्होंने फेंका था। जीवन के सन्ध्या काल में उन्होंने ठाकुर केसरीसिंह की पौत्री तथा अपने मित्र मणिराज जगावत को कहा था। पच्चीस वर्ष के दीर्घकाल तक यह बात गुप्त रही इस कारण वह प्रचारित न हो सकी और लोग वीरवर जोरावरसिंह को भूल गए। उनके जीवन काल में वे लोग भी यह प्रगट नहीं कर सके, जो जानते थे। जीवन के सन्ध्या-काल में वे रोग ग्रस्त हुए, कहीं चिकित्सा तो वे करा नहीं सकते थे और न उनकी सेवा सुश्रुषा ही हो सकती थी। इस प्रकार उस क्रान्तिकारी ने अपने प्राणों को मातृभूमि की बलि वेदी पर उत्सर्ग कर दिया। जब कि वे अमरदास वैरागी नाम से अज्ञात वास में पच्चीस वर्षों तक पहाड़ों और जंगलों में घूमते थे तब भी वे राष्ट्रीय विचारों और देश भक्ति की कविताएं बनाकर, उन्हें गाकर सर्व साधारण में देश भक्ति की भावना भरते रहे।

जो दो चार व्यक्ति जानते थे कि उन्होंने लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका था वे भी उनके जीवित रहते यह बात प्रकाश में नहीं ला सकते थे। यही कारण था कि जोरावर सिंह बारहट विस्मृत कर दिए गए। आज जो सत्ता में हैं और जो अपनी देश भक्ति का विज्ञापन कर अपनी यशकीर्ति फैलाने का प्रयत्न करते हैं उन्होंने इन बलिदानी वीरों को भुला दिया। कृतघ्न देश ने इन वीरों की स्मृति को चिरस्थायी करने का कोई प्रयत्न नहीं किया। न जाने और कितने जोरावरसिंह जिन्होंने मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए अपने को बलिदान कर दिया भुला दिए गए। (अनुवादक)

नोट —लार्ड हार्डिंग पर बम चलाने के कार्य में जो लोग सम्मिलित थे उनमें से आज केवल दिल्ली के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी महाविप्लवी नायक रासबिहारी बोस के विश्वास पात्र लाला हनुमन्त सहाय ही जीवित हैं। पुस्तक के लेखक श्री कालीचरण घोष ने मुझे (अनुवादक) को सूचित किया था कि लाला हनुमन्त सहाय ने किसी सज्जन से कहा था कि बम फेंकने का कार्य बसन्तविश्वास के सुपुर्द किया गया था। श्री कालीचरण को ऐसा लिखने पर मैंने लाला हनुमन्त सहाय से सम्पर्क स्थापित किया। लाला हनुमन्त सहाय ने मुझे लिखा – मैं इस विवाद में नहीं पड़ना चाहता कि लार्ड हार्डिंग पर बम किसने फेंका।" खेद की बात है कि जो व्यक्ति साधिकार इस प्रश्न पर प्रकाश डाल सकते हैं वे मौन ही रहना चाहते हैं। (शंकर सहाय सक्सेना-अनुवादक)

अध्याय दस

अंतिम प्रहार

सिंह जो किसी भी बन्दी कोष्ट के लिए बहुत बड़ा था

भारत के क्रान्तिकारी युद्ध में अग्रिम पंक्ति के क्रांतिकारियों में केवल एक ही महान क्रान्तिकारी था जिसे भारत तथा विदेश में ब्रिटिश साम्राज्य की अत्यन्त कुशल तथा समस्त पुलिस कारावास में नहीं भेज सकी, और न एक दिन के लिए भी उसे नजर बन्द कर सकी। सच तो यह है कि महाविप्लवी नायक रासबिहारी बोस की इस दृष्टि से यह एक अपूर्व विशेषता थी। ऐसे अनेक क्रान्तिकारी और थे जिन्होंने गिरफ्तारी से बचने के लिए हंसते हुए मृत्यु का आलिंगन कर लिया। परन्तु जीवित क्रांतिकारियों में कोई भी गिरफ्तार होने से नहीं बच सका। उस दिन से जिस दिन से रासबिहारी बोस ने क्रांतिकारी क्षेत्र में पदार्पण किया—उस दिन तक जिस दिन मृत्यु ने उनके क्रान्तिकारी कार्य में हस्तक्षेप नहीं किया वे केवल अपनी मातृभूमि को स्वतन्त्र करने के लिए विचार ही नहीं करते रहे वरन उसके लिए खतरनाक तरीके से सक्रिय रहे। उनके जीवन का उद्देश्य उनके नीचे लिखे वाक्यों से लक्षित होता है।

"भारत को स्वतन्त्र अवश्य होना है क्योंकि समस्त विश्व के पुनर्जनम के लिए उसका स्वतन्त्र होना नितान्त आवश्यक है। यह स्वयं में कोई अंतिम लक्ष्य नहीं है वरन वह एक लक्ष्य प्राप्ति का साधन है। वह लक्ष्य है साम्राज्यवाद और सैनिकवाद का विनाश और हम सभी मानव मात्र के लिए रहने के लिए अधिक उत्तम विश्व का निर्माण।" १६११ से उन्होंने भारत में विप्लव कराने के लिए काम किया और इस उद्देश्य से उन्होंने उत्तर पश्चिम से उत्तर पूर्व तक अपना सम्पर्क स्थापित कर लिया था। उन्होंने अपना मुख्यालय लाहौर को चुना जो कि देहली पंजाब और बंगाल के क्रान्तिकारियों को जोड़ने की कड़ी का काम करता था। बंगाल से आतंकवाद को उत्तर भारत में लाने के लिए रासबिहारी बोस को उत्तरदायी ठहराया जाता है। उस क्रांतिकारी आंदोलन का उद्देश्य जैसा कि स्वयं रास बिहारी बोस के शब्दों में इस प्रकार था— 'अंग्रेज अधिकारियों के विरुद्ध आक्रमणकारी घटनाओं के द्वारा सर्व साधारण को इस तथ्य से अवगत करना और इस बात की जागृति उत्पन्न करना कि वे एक विदेशी शासन में रह रहे हैं। ऐसा होने पर उनमें खुले विद्रोह के लिए प्रबल इच्छा फूट पड़ेगी।" उन्होंने सदैव अपनी घोषित नीति के अनुसार कार्य किया और उन्होंने आक्रमक कार्यवाहियों की एक शृंखला बद्ध घटनाओं का सगठन किया। कभी कभी तो वे इन कार्यवाहियों में गिरफ्तार हो जाने और उसके तनिक परिणाम स्वरूप प्राण दण्ड तक की जोखिम उठाने से नहीं हिचकते थे।

२३ दिसम्बर १६१२ को तत्कालीन वायसराय और गवरनर लार्ड हार्डिंग पर बम फेंकने की घटना में पुलिस की मान्यता थी कि निश्चय पूर्वक श्री रास बिहारी बोस का हाथ था। देहली, लाहौर और बनारस षडयन्त्र के अभियोगों में वे अभियुक्त थे। और उनके जीवित या मृत पकड़ने के लिए असाधारण ऊंची राशि के पारितोषिकों की

घोषणा की गई थी। यद्यपि वे देहरादून की वन अनुसंधान शाला (फारेस्ट रिसर्च इंस्टिट्यूट) में हेडक्लर्क के पद पर काम करते थे फिर भी यह सत्य व आश्चर्य की बात है कि उन्हें गुप्त क्रान्तिकारी राजनीतिक कार्यों के करने तथा क्रांतिकारी संगठन को खड़ा करने के लिए समय मिल जाता था।

रासबिहारी ने अपने पास एक अत्यंत निष्ठावान कार्यकर्त्ताओं का समूह एकत्रित कर लिया था। जैसे मास्टर अमीरचंद, अवधबिहारी, बालमुकन्द पिंगले, बसन्त कुमार विश्वास, प्रतापसिंह बारहट, जोरावरसिंह बारहट, छोटेलाल इत्यादि और भी अनेक उनके सहयोगी थे जिन्होंने बाद को या तो फांसी के तख्ते पर अपने जीवन का बलिदान कर दिया अथवा उससे बाल बाल बच कर आजीवन कारावास और देश से निर्वासन अथवा लम्बे कारावास की सजा भुगती। बंगाल के क्रांतिकारियों से उनका अत्यन्त घनिष्ट सम्पर्क स्थापित था। बने बनाए बमों के लिए वह नितान्त उन्हीं पर निर्भर थे। उनके परामर्श से ही पंजाब और देहली के कुछ युवक बंगाल के क्रांतिकारियों से बम बनाने की तकनीक सीखने के लिए गए थे। यद्यपि रासबिहारी अपने दल के सदस्यों को हिंसात्मक कार्यों के लिए तैयार कर रहे थे परन्तु वे क्रान्तिकारी साहित्य उत्पन्न कर पुस्तकों, विज्ञप्तियों गुप्त समाचार पत्र द्वारा क्रांतिकारी विचार धारा के प्रचार की ओर से भी उदासीन नहीं थे। वे गुप्त क्रांतिकारी पत्र निकालते थे और शिक्षण संस्थाओं में और सेना में उसको पहुंचाते थे। अपने में उन्हें अपरिमित विश्वास था और उन्होंने आवश्यकता पड़ने पर अपने दल के सदस्यों को बम पहुंचाने अथवा बम बनाने के लिए आवश्यक सामग्री पहुंचाने की व्यवस्था का उत्तर दायित्व अपने ऊपर ले रक्खा था।

यह विलक्षण बात थी कि यद्यपि उनकी गिरफ्तारी के लिए बहुत बड़ा पुरस्कार घोषित किया गया था और छाया चित्र (फोटो) सभी स्थानों पर भेजे गए थे। वे १९१४ के पूरे वर्ष वाराणसी में रहने में सफल हो गए और पुलिस को उनके वहां रहने का पता नहीं लग सका। वे अधिकतर रात्रि में बाहर निकलने की सावधानी बरतते थे। परन्तु वाराणसी में ठहरने के प्रारम्भिक काल में वे दिन में विक्टोरिया पार्क अथवा अन्य किसी बाग में अपने साथियों से मिलते थे। जोगेश्वर प्रेस के पीछे मिसरी पोखरा में बोस के लिए एक मकान किराए पर ले लिया गया था, वहां वे फरवरी १९१४ से नवम्बर १९१४ तक रहे। जब वे वहां रहते थे तो सभी प्रान्तों के क्रान्तिकारी दल के सदस्य जिनमें बंगाल और पंजाब के क्रांतिकारी भी सम्मिलित थे बहुधा उनके पास मन्त्रणा करने के लिए आते रहते थे। १८ नवम्बर १९१४ की रात्रि को दो बमों की टोपियों की जब वे जांच कर रहे थे तो उनमें से एक फट गया और उसके विस्फोट में वे गम्भीर रूप से घायल हो गए। उन्होंने तुरन्त ही अपना निवास स्थान बदल दिया वे वहां से हट कर बंगाली टोला चले गए। उसी समय वहां दो महान क्रांतिकारियों रासबिहारी बोस तथा जतीन मुकर्जी की चिरस्मरणीय बातचीत हुई थी। जतीन मुकर्जी जिस प्रकार के युवक दल में आ रहे थे उनसे वे निराश हो हतोत्साहित से रहे थे और उनकी यह धारणा बन रही थी कि अब क्रान्ति का समय अभी दूर है। जबकि वे रासबिहारी बोस से वार्तालाप कर रहे थे तो उस चर्चा में भाग लेने के लिए विष्णु गणेश पिंगले को आने दिया गया। पिंगले ने जो कुछ कहा उससे जतीन बहुत ही अधिक प्रभावित हुए और उन्होंने रासबिहारी से कहा कि पिंगले के

बात करने के उपरांत मेरे मन मे परिवतन हुआ है। क्योंकि आज भी पिछले जसे युवक हैं जिन पर गम्भीर क्रांतिकारी कार्यों के लिए पूरी तरह निभर रहा जा सकता है और जिन पर पूरी तरह विश्वास किया जा सकता है।

जब कोई गम्भीर खतरा होता उस समय रासबिहारी बोस मे असीम और चमत्कारी साहस उत्पन्न हो जाता और उनका मस्तिष्क इतनी तेजी और धय से काम करता कि वे उस खतरे से बच निकलने म सफल हो जाते। एक बार पुलिस ने उस मकान को सदेह म घेर लिया जहा रासबिहारी बोस थे। उसी समय मेहतर शौचालय की सफाई करने आया हुआ था। उन्होने उसके कपडे पहने और मैले की टोकरी अपने सर पर रखी और बिना किसी दुविधा के दरवाजे से निकल गए। कलकत्ते में वे जब छिपे हुए गुप्त रूप से रहे तो उ होने किसी तग गली अथवा निजन एकांत मकान को चुनने के बजाय धरमतल्ला पोस्ट आफिस के ऊपर एक कमरे को अपने रहने के लिए चुना। वह स्थान कलकत्ते का सबसे अधिक जनसकुल और व्यस्त स्थान था। श्री रासबिहारी बोस भेष बदलने मे अत्यन्त दक्ष थे। जब वे भेप बदले होते तो कभी कभी उनके अत्य त निकट के सहयोगी भी उन्हे पहचान नही सकते थे। लाहौर मे वे पजाबी वेष धारण करते और वे एसे लगते मानो कि उनका ज म और लालन पालन पजाब मे ही हुआ है। वे जिस भी प्रा त के वस्त्र धारण कर लेते वही के रहने वाले लगने लगते थे। उनका कई भाषाओ पर अधिकार था जिस प्रान्त का वे वेष धारण करते उसी प्रा त की भाषा भी धारा प्रवाह बोलते थे। यद्यपि उनके बहुत उपनाम थे परन्तु अधिकतर उनके दल में उनको 'सती श चन्द्र' अथवा "मोटे बाबू" पुकारा जाता था। ऐसे बहुत कम लोग थे जो उनके सही नाम को जानते थे।

यद्यपि जब वे स्कूल म थे तब वे अध्ययन की ओर से नितान्त उदासीन रहे परन्तु बाद को उन्होने विभिन्न विषयो को बडे ही मनोयोग से पढ़ा और विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त किया। विभिन्त विषयों का उन्हे गहन ज्ञान था। अपनी मातृ भाषा बगाली के अतिरिक्त वे अग्रेजी हिन्दी पजाबी, गुजराती और मराठी धाराप्रवाह बोलते थे। बहु भाषा बोलने में पारगत होने के कारण उनका क्रांतिकारी काय करने मे तथा गिरफ्तारी से बचने मे उ हें बडी सहायता मिलती थी। रास बिहारी बोस ने समस्त देश में सेनाओं द्वारा सशस्त्र विद्रोह की जो २१ फरवरी १९१५ की तारीख निश्चित की थी उसको बदल कर १९ फरवरी करना पडा क्योंकि क्रांतिकारियों म मिले हुए एक भेदिये ने इस विद्रोह की सूचना पुलिस को पहुँचा दी थी। तारीख बदलने की सूचना सभी केन्द्रों को पहुँचाना सम्भव नही था तथ सरकार को पूव सूचना मिलने के कारण वह सतर्क हो गई थी और उसने विद्रोह को रोकने के लिए सभी आवश्यक सावधानी के उपाय कर लिए थे अतएव इस देश व्यापी विद्रोह की योजना असफल हो गई। उस समय रास बिहारी के विश्वसनीय और कमठ सहयोगी जिनका उस भावी जिन विप्लव से सम्बन्ध था बडी सख्या मे पकड लिए गए। ८

देहली राजद्रोह अभियोग जो १७ माच १९१४ को प्रारम्भ हुआ कि प्रारम्भिक जाच पडताल के उपरान्त राम बिहारी बोस पर भारतीय दण्ड संहिता (इण्डियन पेनल कोड) की धारा १०२ वी और ३०२ के अन्तगत आरोप लगाया गया। उनकी गिरफ्तारी का वारन्ट वापिस लौट आया क्योंकि रासबिहारी का कही पता नहीं था। देहरादून फारेस्ट रिसच इन्स्टट्यूट जहा पर वे नौकर थे, उन्होंने छुट्टी ले रखी थी। रासबिहारी

बोस को उद्घोषित अपराधी घोषित करने के लिए अदालत ने पुलिस की याचिका स्वीकार कर ली और उन्हें एक नए उपनाम 'विनोद बिहारी बोस' के नाम को जोड़ कर उद्घोषित अपराधी घोषित कर दिया गया। २७ मार्च १९१४ को एक परिपत्र रासबिहारी का पूरा विवरण देते हुए निकाला गया उसमें लिखा था 'कि यह व्यक्ति लगभग ३० वर्ष का है, रंग गोरा है वह लम्बा है उसकी आँखें बड़ी है और एक हाथ की अंगुली मुड़ती नहीं है उस पर चोट के चिन्ह है जो किसी दुर्घटना में उसके लगी थी।

भारत का सम्पूर्ण विशाल पुलिस दल उस एक व्यक्ति की तुलना में नितान्त हतप्रभ और पराजित दिखलाई पड़ रहा था कि जिसने उसको विश्व के समक्ष हास्यास्पद बना दिया था। पुलिस की अकुशलता और निकम्मेपन के लिए उसकी उच्च सत्ता से भर्त्सना की जा रही थी और भारत सरकार पर ब्रिटिश सरकार का गहरा दबाव पड़ रहा था कि किसी भी प्रकार क्यों न हो उस भयंकर क्रान्तिकारी को अवश्य गिरफ्तार किया जावे। इसका परिणाम यह हुआ कि सम्पूर्ण देश में पुलिस ने उस रहस्यमय क्रान्तिकारी को ढूंढने के लिए आकाश पाताल एक कर दिया। सम्पूर्ण देश की पुलिस उनकी खोज में लग गई। सरकार की सारी शक्ति और सम्पूर्ण राज्यतन्त्र अपनी असफलता के कारण बौखला उठा और भागने वाले उस विद्रोही को गिरफ्तार करने की विस्तृत योजना बनाई और उनके चारों ओर पुलिस का जाल बिछ गया। पुलिस का जाल अब उनके चारों ओर कड़ा होता जा रहा था।

अब भारत में उनके लिए ठहरना किसी भी प्रकार भी सुरक्षित नहीं था। जब मित्रों और सहयोगियों का बहुत जोर पड़ा तो रासबिहारी बोस भारत को छोड़कर विदेश जाने के लिए चन्दरनगर आए। पी. एन. टैगोर के रखे हुए नाम से एक पासपोर्ट बनवा लिया गया। उस समय वे छद्मवेश में थे उन्होंने अपनी वेष भूषा इस प्रकार बदल रखी थी कि कोई भी उन्हें पहचान नहीं सकता था। १२ मई को रासबिहारी बोस ने जापानी जहाज 'सानुकी मारु' जो कलकत्ता के 'मैन ऑफ वार जट्टी' से चलने वाला था—पर सवार हो गए और उन्होंने अपनी मातृभूमि को अंतिम नमस्कार किया। वे २२ मई १९१५ को सिंगापुर पहुंच गए। भारत में रहकर श्री रासबिहारी बोस ने मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए जो कुछ किया था वह भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में उनके लिए एक प्रमुख स्थान प्राप्त करने के लिए पर्याप्त था। परन्तु उनकी आत्मा तब तक शान्ति का अनुभव नहीं कर सकती थी कि जब तक उनके जीवन का लक्ष्य पूरा न हो जाता अथवा निर्दयी मृत्यु उनको अपने कार्य क्षेत्र से न हटा देती। फिर चाहे उनका कार्य क्षेत्र भारत में हो या विदेश में।

सिंगापुर से वे जून १९१५ के आरम्भ में टोकियो पहुंचे। वे भारत के क्रान्तिकारियों की सहायता करने के लिए आतुर थे। वे जून के मध्य में इसी उद्देश्य से शंघाई गए। भारत में गुप्त रूप से अस्त्र शस्त्र पहुंचाने की उन्होंने एक योजना तैयार की थी उसी को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से वे वहां गए थे। उन्हें इन प्रयत्नों का ज्ञान था कि जो जरमनी की सहायता से भारत में अस्त्र शस्त्र भेजने के किए जा चुके थे। इन्हीं प्रयत्नों के संदर्भ से वे शंघाई में जरमन अधिकारियों से मिले और भारत में अस्त्र शस्त्र भिजवाने के सम्बन्ध में अपनी योजना उनके सामने रखी। परन्तु वह प्रयत्न विफल हुआ। जो जहाज अस्त्र शस्त्र लेकर चला वह बीच में ही रोक लिया गया और अस्त्र शस्त्र भारत के क्रान्तिकारियों के पास न पहुंच सके। रासबिहारी बोस ने अब यह

निश्चय किया कि वे जापान के निवासियों को भारत की समस्याओं से अवगत करायें और उन्हें बतलाए कि भारत की ब्रिटेन के शासन में क्या दयनीय स्थिति है। अस्तु उन्होंने २७ नवम्बर १६१५ को एक सभा बुलाई और एक भाषण दिया जिसमें उन्होंने भारत में अंग्रेजी शासन की अत्यन्त कठोर निन्दा की।

इस सभा के उपरान्त रासबिहारी बोस ने जो पी एन टैगोर का छद्म नाम और वेष धारण कर रक्खा था वह हट गया। ब्रिटिश गुप्तचरों ने पता लगा लिया कि यह रासबिहारी बोस हैं। अस्तु ब्रिटिश सरकार ने जापान की सरकार पर दबाव डाला कि वह रासबिहारी बोस को उनके सुपुर्द कर दे। ब्रिटिश सरकार से जापान की सरकार दब गई और रासबिहारी बोस तथा एक अन्य बंगाली जो उनके साथ था उसके लिए आज्ञा निकाली गई कि वे पुलिस कार्यालय में उपस्थित हों। पुलिस के पास जाने का अर्थ होता अंग्रेजों के चंगुल में फंस जाना। अस्तु रासबिहारी बोस भूमिगत हो गए। पुलिस ने उनको खोजने का बहुत प्रयत्न किया। परन्तु सब व्यर्थ हुआ, वे नहीं मिले। रास बिहारी बोस को श्री 'आइजो सोमा' के परिवार ने आश्रय दिया और उन्हें छिपा लिया। यह आश्रय जापान के शीर्ष राजनीतिक और सामाजिक नेता 'श्री तोयामा' के संकेत पर उन्हें आइजोसोमा के परिवार ने दिया था। श्री तोयामा एक अत्यन्त प्रभावशाली राजनीतिक दल के सर्वेसर्वा थे और जापान में वे अत्यन्त श्रद्धा और आदर के साथ देखे जाते थे।

जब रासबिहारी पुलिस को नहीं मिले तो पुलिस ने प्रत्यर्पण आज्ञा निकाली कि रासबिहारी बोस पांच दिनों के अन्दर जापान देश की भूमि से चले जावें और यह आज्ञा स्थान-स्थान पर चिपका दी गई। परन्तु प्रत्यर्पण की आज्ञा व्यर्थ हो गई क्योंकि रासबिहारी बोस का कहीं भी पता न लग सका। तब भारत सरकार ने एक अत्यन्त कुशल और दक्ष पुलिस अधिकारी को १६१५ में एक विशेष उद्देश्य से जापान भेजा। वह विशेष उद्देश्य यह था कि वह यह पता लगाए कि सुदूर पूर्व में भारतीयों के मन में राजद्रोह की भावना कितनी गहन है परन्तु मुख्य रूप से उसको भेजने का लक्ष्य था कि वह रासबिहारी बोस का पता लगावे कि वे कहां हैं। उस पुलिस अधिकारी ने १६१७ में सुदूर पूर्व में भारतीय राजद्रोह के सम्बन्ध में रिपोर्ट देते हुए लिखा 'कि रासबिहारी बोस यहां गुप्त रूप से छिपे हुए रह रहे हैं और उनके जीवन यापन की वर्तमान स्थिति उनके षड्यन्त्र कर सकने की कुशलता और क्षमता को अवश्य कम करेगी। जुलाई के अन्तिम सप्ताह में रासबिहारी बोस टोकियो से एकदम गायब हो गए क्योंकि उनका आश्रय स्थान जहां कि वे छिप कर रहते थे ब्रिटिश अधिकारियों को ज्ञात हो गया था। पूरी पूरी और होशियारी से जांच करने पर पता लगा कि वह 'ओकिरस' नामक पूर्वी तट पर 'कस्तुरा' नगर के समीप एक गांव में हैं।

जैसे ही बोस को ज्ञान हुआ कि ब्रिटिश अधिकारियों को उनके आश्रय स्थान का पता चल गया है उन्होंने तुरन्त उस स्थान को छोड़ दिया और वे टोकियो चले गए ऐसा विश्वास किया जाता है कि वे वहां जापान सम्राट के महलों के प्रबंधक लार्ड हाई चैम्बरलेन के गृह के प्रांगण में छिपे हुए हैं। यद्यपि यह भी सम्भव है कि उस उच्च अधिकारी के किसी कर्मचारी ने उन्हें बिना अपने स्वामी की जानकारी के आश्रय दिया हो। बोस के पत्रों को जो अवरुद्ध (बीच में ही रोक लेना) किया गया उससे यह निश्चयपूर्वक सिद्ध होता है कि वे अब भी अमेरिका में षड्यन्त्र के प्रमुख नेताओं जैसे

नरेन भट्टाचार्य आदि से घनिष्ठ और निकट सम्पर्क स्थापित किए हुए हैं इत्यादि उन पत्रों से यह भी स्पष्ट है कि वे अब भी क्रान्तिकारी कार्यों में लगे हुए हैं—जहां तक कि उनकी वर्तमान स्थिति की निर्योग्यता उन्हें यह कार्य करने की इजाजत देती है। उनका महत्व किसी भी प्रकार कम नहीं हुआ है। उनके क्रिया कलापों पर जो भी बंधन हैं वह एक आकस्मिक घटना है जो उनकी वर्तमान स्थिति की लोकप्रियता के कारण है।

तारकदास जब जापान में थे तो उनका बोस से सम्पर्क था। और ऐसा भी ज्ञात हुआ है कि वे बोस को अपने से बहुत ऊंचा एक महान व्यक्ति के रूप में देखते थे। ऐसा कहा जाता है कि उन दोनों ने समुद्री जहाजों में विस्फोटक पदार्थ रख कर उन्हें डुबोने की एक योजना तैयार की थी। परन्तु जहां तक ज्ञात हुआ है कि वह योजना चर्चा के स्तर से आगे नहीं बढ़ी। अपने अदृश्य होने काल में रासबिहारी बोस ने अपना जापानी नाम 'हयाची इचरो' रख लिया था, वे इसी नाम से जाने जाते थे। यहां यह विश्वास किया जाता है कि तारकनाथ दास उस नाम से अवगत थे।

भारतवर्ष के सौभाग्य से और भारत की स्वतन्त्रता के लिए अनुकूलता उत्पन्न करने के लिए एक ब्रिटिश जहाज ने एक जापानी स्कूनर (समुद्री पोत) पर आक्रमण कर उसे नष्ट कर दिया। घटना के परिणाम स्वरूप इंग्लैण्ड के प्रति जापान का दृष्टिकोण सर्वथा बदल गया। इंग्लैण्ड के प्रति जापान में तीव्र रोष उत्पन्न हो गया। जापान सरकार ने रासबिहारी बोस के विरुद्ध निष्कासन आज्ञा वापस ले ली तो एप्रिल १९१६ में रासबिहारी बोस प्रकट हो गए उन्हें अब भूमिगत रहने की कोई आवश्यकता नहीं थी। दो वर्ष के अन्दर ही जुलाई १९१८ में आइजो और कोक्को सोमा की पुत्री तोशिको से उनका विवाह हो गया जिन्होंने रासबिहारी बोस को आश्रय दिया था अपने यहां छिपा कर रक्खा था और उनकी सभी खतरों से रक्षा की थी। तोशिको ने रासबिहारी के इस क्रान्तिकारी जीवन में उनकी केवल सहायता ही नहीं की वरन भारत के स्वतन्त्रता के कार्य में अपने को लगा दिया। बोस अब जापान में जापानियों की भांति ही रहने थे उन्होंने जापानी जैसी कठिन भाषा चार महीनों में ही सीख ली थी। वे जापान के जन जीवन में घुल मिल गए थे।

रासबिहारी बोस को २ जुलाई १९२३ को जापानी नागरिकता मिल गई और वे उगते सूर्य के उस देश के पूर्ण नागरिक बन गए। उनकी जीवन संगिनी जिन्होंने उनके दुःख और कष्ट के जीवन में संकट के समय उनके एक मित्र तथा रक्षक का कठिन कार्य किया था उनकी ३ मार्च १९२५ को मृत्यु हो गई। सच तो यह है कि रासबिहारी बोस को नागरिकता प्राप्त होने (१९२३) के पूर्व जैसा संकटमय जीवन व्यतीत करना पड़ता था, कभी-कभी उन्हें सूचना मिलने पर कि वे गिरफ्तार होने वाले हैं तुरन्त अपना मकान छोड़ कर भागना पड़ता और कहीं छिपना पड़ता था, उसकी सारी व्यवस्था उनकी पत्नी तोशिको करती थी। ऐसे खतरे के जीवन को व्यतीत करने के कारण उनका शरीर थक गया और असमय में ही उनकी मृत्यु हो गई। उन्होंने अपने महान क्रान्तिकारी पति के लिए अपने को बलिदान कर दिया। भारत उस देवी का चिर ऋणी रहेगा।

अपनी प्रिय जीवन संगिनी का वियोग महाविप्लवी रासबिहारी बोस के लिए अत्यन्त भयंकर आघात था परन्तु अपनी मातृभूमि के प्रति जो उनकी असीम भक्ति थी और उसको स्वतन्त्र कराने की जो उनके अन्तर में अमिट और तेजवान पिपासा थी

उसने उन्हें उस देवी आघात को धैर्य के साथ सहन करने की क्षमता प्रदान की और वे भारत की स्वतन्त्रता के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में जुट गए। नागासाकी में एक अगस्त १६२६ को जो एशिया के देशों का सम्मेलन हुआ उसमें रासबिहारी केवल उपस्थित ही नहीं हुए वरन उन्होंने उसमें प्रमुख कार्यकर्त्ता के रूप में भाग लिया। उस सम्मेलन में चीन, भारत, अफगानिस्तान, फिलीपाइन्स, वियतनाम और जापान के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे (बी बी दास कमवीर रासबिहारी बोस पृष्ठ १६६) और वहां एशिया की समस्याओं के सम्बन्ध में विचार विमर्श हुआ था कि किस प्रकार उन देशों को पश्चिमीय साम्राज्यवाद से मुक्त किया जाय।

१६३७ में जब चीन जापान युद्ध छिड़ गया तो श्री रासबिहारी बोस के प्रयत्नों से 'रेनबो' में तीस भारतीय एकत्रित हुए और उन्होंने 'इण्डियन इण्डिपैंडेंस लीग' की स्थापना की जो एशिया में भारतीय स्वातन्त्र्य आन्दोलन को अधिक तेजवान और शक्ति शाली बनाने के लिए संगठित की गई थी। श्री रासबिहारी बोस ने एक दूसरा सम्मेलन 'अखिल एशियाई तरुण सम्मेलन' किया। यह सम्मेलन २८ अक्टोबर १६३७ को टोकियो में 'सानकेडो' में हुआ था। (जे जी ओषावा टू ग्रेट इण्डियन्स इन जापान पृष्ठ ३७ जापान में दो महान भारतीय)

भारत की स्वतन्त्रता के लिए जापान और एशिया के अन्य देशों में समर्थन और सहायता प्राप्त करने के लिए रासबिहारी ने बहुत बड़ी संख्या में पुस्तकें लिख कर प्रकाशित कीं और दो पत्रिकायें एक जापानी और दूसरी अंग्रेजी में प्रकाशित कीं। उन पुस्तकों और पत्रिकाओं द्वारा वे भारत के पक्ष में अनवरत आन्दोलन करते रहे। सुदूर पूर्वी एशिया में राजनीतिक घटनाएं तीव्र गति से घट रही थीं और परिवर्तन बड़ी तेजी से हो रहे थे और जब जापान ने ८ दिसम्बर १६४१ को अमेरिका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी तो उसकी चरम सीमा पहुंच गई। महाविप्लवी रासबिहारी बोस ने देखा कि मातृभूमि को स्वतन्त्र कराने का अनुकूल अवसर आ गया है अस्तु वे अधिक सचेत और सतर्क हो गए। उन्होंने घोषणा कर दी कि इण्डियन इण्डिपैंडेंस लीग के दो मुख्य लक्ष्य हैं प्रथम भारत पर जो विदेशी आधिपत्य है उसको समाप्त कर देना और द्वितीय जापान द्वारा विजित देशों में भारतीयों की रक्षा करना। इस घोषणा के तुरन्त बाद ही ११ दिसम्बर १६४१ को 'कोटो बाकू' में श्री रासबिहारी ने एक ऐतिहासिक समारोह में जहां ब्रिटिश सेना में काम करने वाले भारतीय सैनिक अधिकारी और भारतीय नेता एकत्रित हुए थे आजाद हिन्द सेना (इण्डियन नेशनल आर्मी) का निर्माण किया (स्रोत श्री देवनाथ दास आई एन ए)

चतुर जापानियों ने श्री रासबिहारी के नेतृत्व में आजाद हिंद सेना का संगठन खड़ा करने में सहायता दी। मलाया में जब ब्रिटिश सेनाओं ने आत्म समर्पण किया तो बहुत बड़ी संख्या में भारतीय सैनिक गिरफ्तार हुए थे। जापानी सेना का एक जनरल १/१४ पंजाब रजीमेंट के श्री मोहनसिंह से मिला और उन्हें १७ दिसम्बर १६४१ को जापान के प्रधान सेनापति के पास ले गया जापान के प्रधान सेनापति से श्री मोहनसिंह की लम्बी वार्ता होने के पश्चात समस्त भारतीय कैदी सैनिकों को जनरल मोहनसिंह के नियन्त्रण में रख दिया गया। वे भारतीय सैनिक जनरल मोहनसिंह के नेतृत्व में इण्डियन नेशनल आर्मी (आजाद हिन्द सेना) में सम्मिलित हो गए। जापान के प्रधान सेनापति के साथ लम्बी वार्त्तालाप के पश्चात यह निश्चय हुआ कि आजाद हिन्द सेना (इण्डियन नेशनल आर्मी) अंग्रेजों को भारत

से खदेड़ बाहर करने के लिए जापान से सहयोग करेगी। १५ फरवरी १९४२ को जापान के आक्रमण के फलस्वरूप सिंगापुर का पतन हो गया। दूसरे ही दिन जापान की इम्पीरियल डाइट (जापान की पार्लियामेंट) में जापान के प्रधानमन्त्री 'तोजो' ने भारत को स्वतन्त्र बनाने के लिए आजाद हिन्द सेना की सहायता करने का आश्वासन दिया। और १० मार्च १९४२ को मलाया के विभिन्न भागों से आए हुए प्रमुख भारतीयों की एक बैठक में रासबिहारी बोस ने यह प्रस्ताव रक्खा कि प्रतिनिधि भारतीयों का एक सम्मेलन टोकियो में बुलाया जावे। रासबिहारी बोस के सुझाव के अनुसार पूर्वी एशिया के प्रमुख भारतीयों की दूसरी बैठक टोकियो में रासबिहारी बोस की अध्यक्षता में २८ से ३० मार्च १९४२ तक तीन दिन हुई। उस बैठक के बाद इण्डियन इण्डिपेंडेंस लीग जो अभी तक प्रारम्भिक तथा अस्थिर रूप में विद्यमान थी उसको औपचारिक रूप से विश्व के लिए घोषणा की गई। साथ ही इण्डियन इण्डिपेंडेंस लीग ने प्रत्येक सदस्य को यह आदेश दिया कि वह पूर्व एशिया में प्रत्येक वर्ग के भारतीयों में भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन को आरम्भ कर दें। उस सम्मेलन में नीचे लिखा प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

'भारत के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही केवल इण्डियन नेशनल आर्मी (आजाद हिन्द सेना) करेगी और वह केवल भारतीय सेनापतियों की अधीनता में ही युद्ध करेगी। जापान सरकार से वह स्थलीय, सामुद्रिक और वायु सेना सम्बन्धी उतनी ही सहायता और उतना ही सहयोग लेगी जिसकी शीघ्र ही स्थापित होने वाली इण्डियन इण्डिपेंडेंस लीग की संग्राम समिति जापान से प्रार्थना करेगी और स्वतन्त्र भारत के भावी संविधान का निर्माण कार्य सम्पूर्ण रूप से केवल मात्र भारत की जनता के प्रतिनिधियों के लिए छोड़ दिया जावेगा।"

सम्मेलन के अन्त में यह निश्चय किया गया कि जून १९४२ के आस पास बैंकाक में एक बृहद और अधिक प्रतिनिधायी सम्मेलन किया जावे जो कि अधिकृत रूप से स्वतन्त्रता आन्दोलन को आरम्भ करेगा। इस निर्णय के अनुसार १५ से २३ जून १९४२ तक नौ दिन बैंकाक में भारतीयों का बृहद सम्मेलन हुआ। उस सम्मेलन में जापान, हांगकांग मन्चूकाओ बर्मा, बोर्नियो जावा, मलाया, और थाईलैंड के एक सौ भारतीय प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। सम्मेलन में स्वीकृत मुख्य प्रस्ताव की प्रस्तावना में कहा गया था कि वृहद एशिया के युद्ध ने एशिया में ब्रिटिश साम्राज्यवाद को विनाश कर समाप्त करने का तथा भारत को पूर्ण स्वतन्त्र राष्ट्र बनाने के लक्ष्य को प्राप्त करने का महान अवसर प्रदान कर दिया है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इण्डियन इण्डिपेंडेंस लीग की स्थापना की गई है जो कि भारतीय सैनिकों में से एक सेना का संगठन किया करेगी जिसका नाम इण्डियन नेशनल आर्मी [आजाद हिन्द सेना] होगा। उसी सम्मेलन में एक संग्राम समिति (काऊंसिल आफ ऐक्शन) बनाई गई जिसके प्रथम अध्यक्ष महाविप्लवी रासबिहारी बोस निर्वाचित हुए उनके अतिरिक्त उसके चार सदस्य और भी थे। उस समिति ने नीचे लिखा निर्णय लिया।

'इण्डियन नेशनल आर्मी का निर्माण संचालन नियन्त्रण और संगठन भारतीयों के अधिकार में स्वयं उनके द्वारा होगा।" सम्मेलन की इच्छा और मान्यता है कि सरकार (जापान सरकार) इस आशय की औपचारिक घोषणा करे। ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त होकर पृथक होने के तुरन्त बाद ही जापान की सरकार यह घोषणा करे कि वह भारत की प्रादेशिक अखण्डता को मान्य करेगी और किसी भी प्रकार के राजनीतिक

सैनिक अथवा आर्थिक प्रभाव, नियन्त्रण अथवा हस्तक्षेप के बिना वह भारत को पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राष्ट्र के रूप में स्वीकार करेगी।" एक दूसरे प्रस्ताव के द्वारा सम्मेलन ने जापान सरकार से निम्नलिखित प्रार्थना की। 'भारतीयों द्वारा युद्ध की विभीषिका के कारण जो अपनी सम्पत्ति छोड़ दी गई है उसको जापान सरकार संग्राम समिति (काऊंसिल ऑफ ऐक्शन) को दे दे। सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रस्ताव (जो सम्मेलन के कार्यक्रम की संख्या ३१ के सम्बन्ध में था) यह था कि श्रीयुक्त सुभाषचन्द्र बोस से प्रार्थना की जावे कि वे कृपा कर पूर्वीय एशिया में आवें और जापान सरकार से यह प्रार्थना की गई कि वह श्री सुभाषचन्द्र बोस को पूर्व एशिया में लाने [illegible] लिए आवश्यक प्रबन्ध करे। रासबिहारी बोस ने उस प्रस्ताव का आशय रेडियो टेलीफोन द्वारा श्री सुभाषचन्द्र बोस को बतलाया और स्वयं अपनी तीव्र इच्छा कि वे आकर आन्दोलन का नेतृत्व करें, अपने उत्तराधिकारी से व्यक्त कर दी। साथ ही अपना आग्रह भी उस प्रस्ताव के साथ जोड़ दिया। श्री सुभाषचन्द्र बोस ने उस आमन्त्रण को सहर्ष स्वीकार कर लिया।

ठीक उसी समय बैंगकाक सम्मेलन के प्रस्तावों को जापान सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान करने के सम्बन्ध में गत्यारोध उत्पन्न हो गया। जापान सरकार विशेष रूप से बैंगकाक सम्मेलन के आई एन ए सम्बन्धी प्रस्ताव — उसका जापान की सेना से सम्बन्ध उसकी स्थिति और उसके नियन्त्रण के प्रश्न को लेकर बैंगकाक के प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए तैयार न थी। जनरल मोहनसिंह ने कड़ा प्रतिरोध किया। उन्होंने जापान सरकार की इस प्रार्थना को कि आजाद हिन्द सेना मलाया से बरमा भेज दी जावे मानने से इन्कार कर दिया। उन्होंने जापान सरकार से स्पष्ट कह दिया कि जब तक बैंगकाक सम्मेलन के सभी प्रस्तावों को सरकार स्वीकार न कर ले और उनके सम्बन्ध में अपनी नीति का स्पष्टीकरण न कर दे वे आजाद हिंद सेना को बरमा भेजने के लिए तैयार नहीं थे। जापान सरकार इन प्रस्तावों के सम्बन्ध में अधिक अधिक से अधिक जितना कुछ मानने को तैयार थी वह भारतीयों की न्यूनतम आकांक्षाओं से भी कम था। इस तथा अन्य प्रश्नों को लेकर रासबिहारी बोस के अतिरिक्त काऊंसिल आफ ऐक्शन के सभी सदस्यों ने त्याग पत्र दे दिया। जनरल मोहनसिंह तथा अन्य ने ८ दिसम्बर १९४२ को त्याग पत्र दे दिया और वे जापानियों द्वारा एक प्रकार से उनके बंगले में नजरबन्द कर लिए गए।

जून और दिसम्बर १९४२ के मध्य रासबिहारी बोस अपने मुख्यालय जो कि बैंगकाक में था से निकले उन्होंने थाईलैंड मलाया बरमा, जावा, सुमात्रा तथा अन्य सुदूर पूर्व के देशों का विस्तृत दौरा किया, जहां भारतीय रहते थे। वे सभी स्थानों पर गए और भारतीयों को इंडियन इंडिपेंडेंस लीग को सहायता देकर भारत को [illegible]तन्त्र करने के अमूल्य अवसर का लाभ उठाने के लिए प्रेरित किया। वे लगातार आकाशवाणी से भारतीयों के नाम भारत में अपना संदेश प्रसारित करते थे। उन्होंने महात्मा गान्धी तथा अन्य भारतीय राजनीतिक नेताओं से अपने रेडियो सन्देश द्वारा अपील की, कि इस अवसर से लाभ उठाकर भारत को स्वतन्त्र कर लेना चाहिए। उन्होंने भारत के सभी राजनीतिक नेताओं से अपील की कि वे शत्रु का सामना करने के लिए अपने मत भेदों को भूल कर संयुक्त मोर्चा बनालें। उन्होंने कहा कि भारत भूमि जो भी स्वतन्त्रता का युद्ध छेड़ेगी, लीग उसकी भरसक सहायता करेगी। जनरल मोहनसिंह और जापान

सरकार के बीच जो कटुता और मतभेद उत्पन्न हो गया था उसके परिणामस्वरूप मोहनसिंह ने आई एन ए के विघटन का निर्णय कर लिया था। स्थिति अत्यन्त नाजुक थी। इंडियन इंडिपेंडेंस लीग तथा आजाद हिन्द सेना विघटन के कगार पर खड़ी थी। रासबिहारी बोस का शरीर अस्वस्थ और जर्जर हो गया था। यदि और कोई होता तो निराश होकर कार्यभार से मुक्त हो चुप बैठ जाता। परन्तु सौ युद्धों को लड़ने वाला वह योद्धा, जापान और ब्रिटेन के युद्ध ने जो भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त करने का अमूल्य अवसर प्रदान किया था, उसको खोना नहीं चाहता था। अस्तु, कल्पनातीत अतुलित निष्ठा और दृढ़ता के साथ उन्होंने अत्यन्त धैर्य और वीरता के साथ इंडियन इंडिपेंडेंस लीग के इस तूफान का सामना किया। उन्होंने इस बात की भी चिन्ता नहीं की कि लीग के कुछ सदस्य तथा साधारण भारतीय उनके सम्बन्ध में गलत धारणा बना सकते हैं। क्योंकि उनके जापान सरकार से घनिष्ठ सम्बन्ध थे और उन्होंने संगठन को टूटने नहीं दिया। वे उस डगमगाती नाव को उस भयंकर अंधड़ में भी न डूबने देने के लिए मजबूती से पतवार पकड़े रहे। ३ एप्रिल को आजाद हिन्द सेना को विघटन से बचाने के लिए और सैनिकों में जो अशान्ति और क्षोभ उत्पन्न हो गया था उसको दूर करने के लिए उन्होंने सर्वाधिकार अपने हाथ में ले लिए और असीमित धैर्य तथा निरन्तर अथक परिश्रम के द्वारा उन्होंने आजाद हिन्द सेना को विघटन से बचा लिया। रासबिहारी बोस ने लीग का मुख्यालय बैंकाक से हटा कर सिंगापुर में स्थानान्तरित कर दिया। वहाँ पहुँच कर रासबिहारी बोस नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की अगवानी करने और उन्हें भारतीय स्वतन्त्रता के द्वितीय युद्ध का संचालन कर उसके तार्किक परिणाम अर्थात् स्वतन्त्रता प्राप्ति तक उसको ले जाने के लिए उन्हें एकल अधिकार तथा अपरिमित उत्तरदायित्व से मंडित करने की तैयारी में लग गए।

एप्रिल १९४३ में रासबिहारी बोस अपने सिंगापुर के मुख्यालय से टोकियो गए। सुभाषचन्द्र बोस १३ जून १९४३ को टोकियो पहुँचे। सम्पूर्ण पूर्वी एशिया में भारतीयों के प्रतिनिधियों का एक वृहद् सम्मेलन सिंगापुर में ४ जुलाई १९४३ को बुलाया गया। रासबिहारी और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ३ जुलाई को सिंगापुर पहुँच गए। ४ जुलाई १९४३ को सिंगापुर के सिटी हाल के सामने के मैदान में पुराने और नए नेता—दोनों ने आजाद हिन्द फौज का निरीक्षण किया। उसके उपरान्त उस ऐतिहासिक सम्मेलन की कार्यवाही आरम्भ हुई। समस्त पूर्वी एशिया के देशों से आए हुए असंख्य भारतीयों के समक्ष भारतीय स्वातन्त्र्य आन्दोलन के दो महान नेता एक साथ खड़े थे। वे असंख्य भारतीय अपने उन महान क्रान्तिकारी नेताओं को एक साथ देखकर उत्साह और उल्लास से गद्गद हो गए। उस विशाल भारतीय जन समूह में सभी आयु के स्त्री पुरुष मौजूद थे जो विभिन्न भाषाएं बोलते थे और जिनके विभिन्न धर्म थे परन्तु वे भारत की स्वतन्त्रता के लिए अपने महान नेताओं की आज्ञा पालन कर अपने प्राणों का भी बलिदान करने के लिए तैयार थे। रासबिहारी बोस ने अपने हृदय के गहन तल से निकले उद्गारों से उस विशाल भारतीय जनसमूह को नीचे लिखे शब्दों में सुभाषचन्द्र बोस का परिचय दिया।

मित्रो और भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध में मेरे सैनिक साथियो ! अब आप लोग मुझ से पूछ सकते हैं कि टोकियो में अब तक मैं आपके लक्ष्य की प्राप्ति के लिए क्या करता रहा। मैं आपके लिए कौनसी भेंट वहां से लाया हूं। अच्छा, मैं बतलाऊं मैं

आपके लिए (नेताजी सुभाष की ओर घूम कर उनकी ओर संकेत कर) यह भेंट लाया हूं। श्रीयुक्त सुभाषचन्द्र बोस का आप सबको भारत को और विश्व को परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं है। वे भारत में जो कुछ सर्वोत्तम है अभिजातिता है उच्चतम साहसिकता है और जो भारत की तरुणाई में अधिकतम गतिशीलता है वे उस सब के सुन्दरतम प्रतीक हैं। 'भारत में जो कुछ सर्वोत्तम है वे उसका प्रतिनिधित्व करते हैं।" मित्रो और स्वतन्त्रता के युद्ध में मेरे साथियो आज आप सबों की उपस्थिति में मै अपने पद को छोड़ता हू और श्रीयुत सुभाषचन्द्र बोस को पूर्व एशिया में भारतीय इंडिपेंडेंस लीग का अध्यक्ष नियुक्त करता हू।

विशाल भारतीय जन समूह के समक्ष यह भारी उत्तरदायित्व स्वीकार करते हुए श्री सुभाषचन्द्र बोस ने इस अवसर के उपयुक्त एक भाषण में श्री रासबिहारी बोस के प्रति अपनी सहज गहरी श्रद्धा प्रकट की और मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए की गई उनकी महान सेवाओं का बखान किया। उन्होंने श्री रासबिहारी बोस को अपनी श्रद्धांजलि नीचे लिखे शब्दों को कह कर दी। 'भारत की मुक्ति के अन्तिम युद्ध में अपने जीवन को भयंकर खतरे में डाल कर जो आश्चर्यजनक साफल्य उन्होंने अर्जित किया है वह हमारी स्मृति में ही ताजा नहीं है वरन ब्रिटिश साम्राज्यवाद के लेखागार में अभिलेखों में भी मौजूद है।' नेताजी ने श्री रासबिहारी बोस को अवकाश प्राप्त नहीं करने दिया। नए अध्यक्ष ने उन्हें अस्थायी आज़ाद हिन्द सरकार का मुख्य परामर्शदाता नियुक्त कर दिया।

वह दृश्य वास्तव में अनोखा था जब महाविप्लवी नायक श्री रासबिहारी बोस ने स्वेच्छा से उस उच्चतम पद को मातृभूमि की स्वतन्त्रता के उस अन्तिम युद्ध को अधिक शक्तिवान और तेजवान बनाने के लिए नेताजी सुभाष को सौंप कर कुर्सी से उतर जाने का संकल्प किया। श्री एस ए अय्यर ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'अन टू ए विटनेस'' में उस दृश्य को देखकर लिखा 'मैं उस समय अपने मन में सोच रहा था इनमें से कौन अधिक महान है श्रेष्ठ है। मेरा मन दोनों के प्रति गहन और अगाध श्रद्धा से भर गया।" अनुवादक के हृदय में इस दृश्य की कल्पना कर यह विचार उठता है कि भारत के दीर्घकालीन हजारों वर्षों के इतिहास में ऐसे अद्भुत त्याग के उदाहरण कितने देखने को मिल सकते हैं। आज हमारे राजनीतिक कर्मियों में जो अशोभनीय पदलोलुपता और आपाधापी देखने को मिलती है वह इस अनुपम त्याग के प्रकाश में कितनी कुरूप और काली दिखती है।

निरन्तर थका देने वाला परिश्रम वह भी अत्यन्त कठिन और अनिश्चित परिस्थितियों में करते रहने तथा अपने शरीर की तनिक भी चिन्ता न कर भारत की स्वतन्त्रता के अन्तिम युद्ध के संचालन के भार को वहन करने के कारण जबकि श्री रासबिहारी बोस मधुमेह के पुराने रोगी थे और अपनी प्रिय पत्नी तथा बाद को उनके प्रिय पुत्र मसाहिदे के स्वर्गवासी हो जाने से जिनका हृदय शोक सन्तप्त था उनका शरीर जर्जर हो गया था। वह सौ युद्धों का महान वीर योद्धा जिनका पग और हृदय कभी भयंकर से भयंकर खतरे को सामने देख कर भी कभी विचलित नहीं हुआ था, जिसने दशाब्दों तक निरन्तर देश को अंग्रेजों की दासता से मुक्त कराने के लिए संघर्ष किया और अपने शरीर को एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं दिया वह जनवरी १९४५ में रोग शय्या पर पड़ गया और चिकित्सा के लिए उन्हें हास्पिटल में ले जाना पड़ा।

महाविप्लवी नायक रासबिहारी बोस जब अस्पताल मे रोग शय्या पर पडे थे तब जापान के सम्राट ने उगते हुए सूर्य का दो किरणों वाले सेकिण्ड आडर ऑफ मेरिट से उन्हे विभूषित किया। अपने जीवन की अंतिम श्वास तक उनके हृदय में केवल एक ही विचार उनको उद्वेलित करता था कि उनकी मातृभूमि की दासता की शृंखलाए कब टूटेंगी और वह अंग्रेजो की दासता से कब मुक्त होगी। २१ जनवरी १९४५ को किसी समय जापान की हिन्दू महासभा का अध्यक्ष महान भारतीय क्रांतिकारी, भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध का वीर सेनानी शांतिपूर्वक महाप्रयाण कर स्वर्ग का वासी हो गया। अन्त समय तक उस महान वीर की एक ही हार्दिक इच्छा थी जिस इच्छा को हृदय के गहन तल मे दबाये वे चिरनिद्रा मे सो गए वह इच्छा यह थी कि वे अपनी जन्मभूमि जहा उनका जन्म हुआ अपने बालकपन के क्रीडास्थल और अपने प्रौढ अवस्था की युद्ध भूमि के दर्शन करते। उन्होने नीचे लिखे ऐतिहासिक शब्दो मे अपने जीवन दर्शन का मानो सार ही कह दिया था जब उन्होंने २५ अप्रेल १९४२ को अपने सम्बन्ध म कहा था —

'मैं एक योद्धा हूँ
एक युद्ध और
अंतिम और सर्वोत्तम"

- -अस्थायी आजाद हिन्द सरकार के प्रधान नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने रास बिहारी बोस—अस्थायी आजाद हिन्द सरकार के सर्वोच्च परामर्शदाता को नीचे लिखे शब्दो मे अपनी भाव भरी श्रद्धांजलि अर्पित की—'श्री रासबिहारी बोस की दुखद मृत्यु भारत की स्वतन्त्रता के संग्राम के अतिरिक्त मेरी तथा मेरे सहकर्मियो की व्यक्तिगत हानि है। स्वर्गीय रासबिहारी बोस केवल एक महान जन्मजात क्रांतिकारी ही नहीं थे वे एक महान मानव भी थे। जब मैं बालक था तब श्री रासबिहारी बोस के भारत में ब्रिटिश विरोधी कार्यवाहियो में उनके साहसिक कार्यों की कहानी सुनकर मेरा हृदय भावातिरेक से उद्वेलित हो उठता था।

तीस वर्षों के उपरान्त जब मेरा उनसे पूर्वी एशिया में व्यक्तिगत निकट सम्पर्क हुआ तो मुझ पर उनके ज्वलन्त उत्साह और असीम आशावादिता की गहरी छाप पड़ी। न तो उनकी बढती हुई वृद्धावस्था और न उनका गिरता हुआ स्वास्थ्य उनकी स्वतन्त्रता का युद्ध करने की गहरी और तीव्र भावना को कुठित कर सका। भारत स्वर्गीय रासबिहारी बोस का चिर कृतज्ञ रहेगा। उन्होंने एक पीढी युव जापान में रह कर भारत की स्वतन्त्रता के लिए जो महान सेवा की उसके लिए भारतवासी उनके चिर ऋणी रहेंगे। यह प्रत्येक भारतीय याद रखेगा कि जब विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टगोर जापान के भ्रमण के उपरान्त भारत वापस लोटे तो उन्होने, रासबिहारी बोस ने भारत को स्वतन्त्र करने के लिए जो निस्वार्थ सेवाए की थी उनके प्रति उन्होने अपनी भाव भरी श्रद्धांजलि अर्पित की थी और श्री रासबिहारी बोस को भारत की स्वतन्त्रता के लिए की गई अनुकरणीय सेवाओ की भूरि भूरि प्रशंसा की थी। जापान में भारत के लिए जो सद्भावना सहानुभूति और मित्रता की भावना का निर्माण किया उसका फल भारत को उस समय प्राप्त हुआ जबकि वृहद् पूर्वी एशिया मे युद्ध छिडा और जापान की सरकार तथा जापानियों ने भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध के लिए पूर्ण सहायता देने का वचन दिया।

'स्वर्गीय रासबिहारी बोस को जो पूर्वी एशिया में भारत के स्वतन्त्रता आन्दो

लन का जनक कहा जाता है वह यथार्थ है । जब से वृहद् पूर्वी एशिया युद्ध छिड़ा है तब से एशिया निवासी तथा पूर्वी एशिया में भारत की स्वतन्त्रता के आन्दोलन के जनक के रूप में ही देखते हैं। उनके सम्बन्ध में यह कहना अक्षरशः सत्य होगा कि व भारत की स्वतन्त्रता के लिए जिए और भारतीय स्वतन्त्रता के लिए मरे । अपनी मातृभूमि के प्रति उनकी जो महान सेवाएं थीं उनमें उन्होंने बंकाक सम्मेलन में जो प्रमुख भाग लिया और समस्त पूर्वी एशिया में इंडियन इंडिपेंडेंस लीग जिसका मुख्यालय बंकाक में था की स्थापना उनकी महती सेवाओं में अग्रणी गिनी जावेंगी। यदि पिछले कुछ महीनों में वे रोगग्रस्त न हुए होते तो वे अस्थायी आजाद हिन्द सरकार के संचालन में अधिक सक्रिय भाग लेते । जब मैं पिछले दिनों टोकियो में था और अनेक बार उनके दर्शन करने आया तो उनकी रोग शय्या के पास आकर जो रोमांच उत्पन्न करने वाला दृश्य उपस्थित हुआ था वह आज भी मेरी आंखों के सामने घूमता है। मैं उस दबी आभा को कभी नहीं भूल सकता । उनके मुखमण्डल पर दृढ़ आशा की रेखायें उभरी हुई थीं और प्रथम आक्रमण में इम्फाल को हम जो विजय करने में असफल रहे उससे उनके मन में किंचित् मात्र भी निराशा नहीं थी । अपने जीवन की अन्तिम श्वास तक भारत और भारत की स्वतन्त्रता ही एकमात्र उनका विचार था।

रासबिहारी बोस का स्वर्गवास हो गया परन्तु उनकी अजेय आत्मा और भावना सदैव हमारे हृदयों में विद्यमान रहेगी और हम उस समय तक भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध को लड़ते रहने की प्रेरणा देती रहेगी जब तक कि भारत की पवित्र भूमि पर से अन्तिम अंग्रेज खदेड़ नहीं दिया जाता और भारत पूर्ण स्वतन्त्र नहीं हो जाता जो कि रासबिहारी के जीवन का दिव्य स्वप्न था।' २५ जनवरी १९४५ को नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने समस्त पूर्वी एशिया की इण्डियन इंडिपेंडेंस लीग की शाखाओं को आदेश प्रसारित किया कि २६ जनवरी १९४५ को जिस दिन टोकियो में श्री रासबिहारी बोस का अन्तिम संस्कार हो व भारतीयों की आम शोक सभा बुलाएं ।

२५ जनवरी १९४५ को अस्थायी आजाद हिन्द सरकार के मुख्य कार्यालय में अस्थायी आजाद हिन्द सरकार के मन्त्रिमण्डल तथा परामर्शदाताओं की बैठक बुलाई गई । महामहिम नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने अध्यक्षता की । मन्त्रिमंडल ने श्री रासबिहारी बोस के निधन पर एक मत से नीचे लिखा प्रस्ताव स्वीकार किया । समस्त मन्त्रिमण्डल ने खड़े होकर उनकी आत्मा की शान्ति के लिए एक मिनट का मौन धारण किया । अस्थायी आजाद हिन्द सरकार के मन्त्रिगण तथा परामर्शदाता श्री रासबिहारी बोस के असामयिक तथा खेदजनक निधन पर अपना गहरा शोक प्रकट करते हैं और उनकी उन महान और उल्लेखनीय सेवाओं के प्रति अपना आदरभाव प्रकट करते हैं जो उन्होंने भारत को स्वतन्त्र बनाने के लिए आज म की । स्वर्गीय श्री रासबिहारी बोस की पावन स्मृति के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही हो सकती है। अतएव यह मन्त्रिमंडल पुनः एक बार दृढ़ निश्चय करता है कि वह भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध को अधिक तेजी के साथ जारी रखेगा जब तक कि भारत पूर्ण रूप से स्वतन्त्र नहीं हो जाता और श्री रासबिहारी बोस के जीवन का लक्ष्य पूरा नहीं हो जाता ।"

ऊपर लिखे प्रस्ताव को स्वीकार करने के उपरान्त मन्त्रि मण्डल ने एक मत से एक नए प्रशंसा चिन्ह "तमगए आजाद हिन्द' की स्थापना की और उस प्रशंसा चिन्ह

का प्रथम श्रेणी का अलंकरण श्री रासबिहारी बोस को भारत को स्वतन्त्र करने के उनके प्रयत्नों के लिए श्रद्धा सहित मृत्योपरान्त प्रदान किया गया। मन्त्रिमण्डल ने 'श्री रास बिहारी बोस पदक' की भी सृष्टि की जो उस सेना छात्र को प्रदान किया जाता जो टोकियो की सैनिक अकादमी में सर्वश्रेष्ठ घोषित होता। भारत की स्वतन्त्रता के उस महान योद्धा की स्मृति में उन मुट्ठी भर भारतीयों ने जिनके चारों ओर भयंकर खतरा था और जिनका अस्तित्व ही खतरे में था ऊपर लिखे निर्णय किए परन्तु उनके देशवासियों ने भारत में जब वह सार्वभौम सत्ता प्राप्त कर स्वतन्त्र हो गया तो क्या किया। जो स्वतन्त्रता श्री रासबिहारी बोस की भस्मी तथा उन देशभक्तों की भस्मी पर निर्मित हुई जिन्होंने देश के लिए अपने को बलिदान कर दिया उनके लिए स्वतन्त्र भारत और भारतीयों ने क्या किया?

यह हम पहले ही कह आए हैं कि जापान के सम्राट ने श्री रासबिहारी बोस के रोगग्रस्त होने पर हास्पिटल में दो किरण वाले उगते हुए सूर्य के द्वितीय अलंकरण से उन्हें अलंकृत किया था। यह जापान का उच्चतम अलंकरण था और जब उनकी मृत्यु हो गई तो सम्राट ने उनके शव को ले जाने के लिए शाही शव वाहन भेजा जिसमें जापान के सम्राटों के शव अन्तिम संस्कार के लिए ले जाए जाते थे। जापान के सर्वोच्च शासक सम्राट ने भारत की स्वतन्त्रता के उस महान योद्धा को जापान का सर्वोच्च सम्मान प्रदान किया परन्तु हम भारतीय स्वतन्त्र होने के उपरान्त भी उस महान देश भक्त वीर योद्धा को भूल गए जो अपने जीवन की अन्तिम श्वास तक भारत की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करता रहा। भारत में श्री रासबिहारी बोस का कोई स्मारक नहीं बना। स्वतन्त्र भारत की राष्ट्रीय सरकार ने उनको मृत्योपरान्त किसी अलंकरण से अलंकृत नहीं किया, उनके नाम का डाक टिकट भी नहीं निकाला। जो व्यक्ति यह स्वप्न देखता था कि मृत्योपरान्त उसकी भस्मी भारत की मिट्टी में मिलेगी, जो जीवन भर अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करता रहा और विदेश में पड़ा रहा। मृत्यु के उपरान्त उनकी भस्मी को भारत लाकर उनकी इस इच्छा को भी हम भारतीयों ने पूरा करने का प्रयत्न नहीं किया। कृतघ्नता का ऐसा कुत्सित उदाहरण ढूंढने से भी संसार के इतिहास में नहीं मिलेगा। हमारे इस आचरण पर स्वयं कृतघ्नता भी लज्जित हुई होगी।

विमान दुर्घटना के शिकार (१९४२)

मलाया इण्डियन इण्डिपेंडेंस लीग के चार प्रमुख सदस्य बैंकाक के श्री सत्यानन्द पुरी, प्रीतमसिंह और मलाया के अकराम तथा नीलकण्ठ अय्यर ने १३ मार्च १९४२ को सिंगापुर से भारतीय स्वतन्त्रता सम्मेलन में भाग लेने के लिए टोकियो को प्रस्थान किया। विमान अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुँचा और दुर्घटनाग्रस्त हो गया। इस दुर्घटनाग्रस्त वायुयान का एक एप्रिल १९४२ को पता लग सका। दुर्घटना के कारण भारतीय स्वतन्त्रता के युद्ध के उन चारों वीरों की मृत्यु हुई। उनका अन्तिम संस्कार पूर्ण सैनिक सम्मान के साथ ६ एप्रिल १९४२ को किया गया।

वे मृत्यु का आलिंगन करने वापस लौटे (१९४२-४३)

इण्डियन इण्डिपेंडेंस लीग ने मातृभूमि के भीतरी भागों में अपने स्वातन्त्र्य वीरों को भेजने का अत्यन्त जोखिम भरा और साहस का पग उठाया था। उन देशभक्त स्वातन्त्र्य वीरों को भारत की भूमि पर भेजने का उद्देश्य यह था कि वे भारत में विद्रोह

भड़काने के लिए कार्य करें और वहां के समाचारों को लीग के पास पहुंचाते रहें। वे संख्या में १४ थे। उन चौदह को चार टुकड़ियों में बांट दिया गया। दो टुकड़ियां स्थल के मार्ग से और दो समुद्र के मार्ग से भारत में प्रवेश करें—यह निश्चय किया गया। पांच व्यक्तियों का एक दल कालीकट में उतरा। उसमें एम ए कादिर एस ए आनन्दन और तीन अन्य सदस्य थे। पांच व्यक्तियों का दूसरा दल जिसमें सत्येन बधन थे काठियावाड़ के तट पर पहुंचा।

वे एक सब मरीन (पनडुब्बी) के द्वारा आए और तट से पांच मील दूर एक रबर की नाव में स्थानान्तरित कर दिए गए। उस समय समुद्र में भयंकर लहरें उठ रही थीं। उनकी थपेड़ों से साधारण व्यक्ति भयभीत हो सकता था परन्तु जिन्होंने देश के लिए अपने जीवन को उत्सर्ग कर देने का व्रत ले लिया हो, उनकी गति को समुद्री तूफान कहां रोक सकता था! इक्कीस घंटों तक उन भयानक समुद्री लहरों से युद्ध कर वे भारत के तट पर पहुंचे। सत्येन के पास एक ट्रांसमीटर था जिसके द्वारा समाचार भेजने की कला का वह विशेषज्ञ था। तट पर उतर कर इससे पूर्व कि वे किसी गुप्त स्थान पर सुरक्षित रूप से छिप सकते वहां उपस्थित व्यक्तियों ने उन्हें देख लिया। उन्हें संदेह हो गया और उन्होंने पुलिस को सूचित कर दिया। पुलिस ने उन्हें तट पर उतरने के कुछ घंटों के अंदर ही गिरफ्तार कर लिया।

दो दल जो स्थल मार्ग से चले थे उनमें से पहला दल २६ अक्तूबर १९४२ को चिटागांव पहुंचा। दूसरा दल जिसमें ६ सैनिक थे और फौजासिंह उनमें से एक था, आसाम के मार्ग से भारत में आए। ब्रिटिश सरकार के गुप्तचरों और भेदियों ने जिनका उस क्षेत्र में जाल बिछा हुआ था पुलिस के मुख्यालय को सूचित कर दिया कि नेताजी द्वारा भेजा सैनिकों का दल भारत में घुसा है। यह सूचना मिलते ही पुलिस ने उनको पकड़ने के लिए घेरा डाल दिया और कुछ दिनों में ही वे गिरफ्तार हो गए। जो दो दल भारत के पूर्वी और पश्चिमी समुद्र तट पर पकड़े गए थे वे मदरास के किले में रखे गए और चिटागांव तथा आसाम में गिरफ्तार होने वाले दोनों दलों को भी कुछ समय के उपरान्त मदरास भेज दिया गया।

सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने के अपराध में अभियुक्तों पर मुकदमा चलाया गया। उन पर इसके अतिरिक्त इंडियन पेनल कोड तथा ८ मार्च १९४३ को युद्ध संकट-कालीन अध्यादेश के अन्तर्गत शत्रु के एजेंट का कार्य करने का भी आरोप लगाया गया। १ अप्रैल १९४३ को फैसला दे दिया गया। त्रावणकोर के श्री अब्दुल कादिर बंगाल के एस ए आनन्दन और सत्येन बधन, पंजाब के फौजासिंह और एक अन्य को प्राणदण्ड की सजा दी गई। पांचवें व्यक्ति की अपील सफल हुई और वह प्राणदण्ड से बच गया। चारों वीर आजाद हिंद सेना के बहादुर सैनिकों को मदरास के शोघालय कारागार में १० सितम्बर १९४३ को फांसी दे दी गई। फांसी के पूर्व वाली रात्रि को सारी रात वह कारागार वन्दे मातरम की ध्वनि से गूंजता रहा। वह दृश्य अद्भुत था जब वे चारों साहस और दृढ़ता के साथ फांसी के तख्ते पर वन्दे मातरम का घोष करते हुए चढ़ गए। जब तक उनका फांसी का फन्दा इतना कड़ा नहीं हो गया कि उनका श्वास बन्द हो गया तब तक वे चारों वीर वन्दे मातरम का घोष करते रहे। अब्दुल कादिर ने अन्तिम श्वास में सुभाष बाबू की जय ब्रिटिश साम्राज्यवाद का विनाश हो, जय हिंद का घोष कर अपने प्राणों की आहुति मातृभूमि की बलिवेदी पर चढ़ा दी।

जब वे चारो देशभक्त वीर फासी के तख्ते पर भारत की विजय की कामना कर झूल गए तो वहा की वायु ने उनके उस सदेश को भारत के कोने कोने म पहुँचा दिया और उन वीर बलिदानी शहीदों की भस्मी और हड्डियों पर भारत की स्वतन्त्रता के भवन को खड़ा होने में देर नही लगी। भारत उन शहीदों की अन्तिम इच्छा के अनुरूप शीघ्र स्वतन्त्र हो गया। इन चारो बलिदानी वीरों के सम्बन्ध मे जो थोडी जानकारी उपलब्ध है उससे ज्ञात होता है कि वे पूर्वी एशिया के विभिन्न भागों मे अपने श्रम से अपनी आजीविका का उपार्जन कर रहे थे। जब प्रात स्मरणीय नेताजी ने भारतीयों का आजाद हिन्द सेना मे भर्ती होने का आह्वान किया तो वे स्वयसेवक के रूप में उसमे भर्ती हो गए। जब जापानी सेनाओं ने मलाया को पदाक्रान्त किया उस समय सत्येन बधन डाक तार विभाग में काम कर रहे थे। कुछ समय के लिए सत्यन बधन सेवामबोम में घिर गया। जैसे ही वह वहा से निकल सका वह इडियन इडिपेंडस लीग में सम्मिलित हो गया। लीग ने उसको युद्ध सम्बन्धी प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए पनाग भेज दिया। जहा वह प्रशिक्षण के लिए भेजा गया था उस इस्टीट्यूट में अब्दुल कादिर और फौजासिह पहले से ही प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे। वह उनका साथी प्रशिक्षणार्थी बन गया। जब आजाद हिन्द सेना का गठन हुआ तो सत्येन बधन उसमे भर्ती हो गया। उसको युद्ध का प्रशिक्षण देन के अतिरिक्त भारतीय और जापानी विशेषज्ञो ने रेडियो द्वारा समाचार भेजने का विशेष प्रशिक्षण दिया। सत्येन बधन ने अपने भाई और मामा को जो उसके साथ अभियुक्त थे अपने अन्तिम पत्र मे नीचे लिखे शब्द लिखे थे —

मुझे आपको कुछ कहने या लिखने के लिए शेष नही है मुझे अत्यन्त हर्ष है और मैं इस बात के लिए गौरव अनुभव करता हू कि परम पिता परमेश्वर ने मुझे अपनी मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने प्राणों का बलिदान चढ़ाने क लिए चुना है। यदि कभी आपको अवसर मिले तो देश के शत्रुओ से प्रतिशोध लेने का प्रयत्न करना। देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणों की आहुति देना बगालियों के लिए कोई नई बात नहीं है।

आपका भाग्यशाली

कानू

परिशिष्ट

१ अब्दुल कादिर द्वारा अपने पिता को लिखे पत्र की प्रतिलिपि

मदरास जेल

९ सितम्बर, १९४१

मोहतरिम (परम श्रद्धास्पद) अब्बाजान,

यह आखरी वक्त है जबकि मैं आपको यह खत लिख रहा हूँ। बहुत बार और बहुत तरीको से हमें वक्त-वक्त पर ऐसी हालतों और घटनाओ का सामना करना पड़ता है जो दर्दनाक और दिल को तोड देने वाली होती हैं। जिन्दगी के सफर मे हमें बहुत बार गम गरीबी, नाउम्मेदी नाकामयाबी और यहा तक कि अपने वजूद के लिए खतरे का सामना करना पड़ता है। वैसी हालत मे हमारे लिए यह शोभा नहीं देता कि हम उसके बारे म भला बुरा कहे और किसी को कसूरवार ठहराये। इसके

खिलाफ उन आफतों को हमें खुदा ताला का आशीर्वाद मानकर स्वीकार करना चाहिए। हमारा फर्ज यह है कि हम उसकी इच्छा को बिना चूं चरा किए मानलें और बिना हिचकिचाहट के उनका इस्तकबाल करें और बिना शिकायत किए इन्हें अपनी जिन्दगी का हिस्सा बनालें। पवित्र कुरान भी हमें यह सबक देती है। बहुत बार जब हमारे सामने ऐसी पेचीदा कठिनाइयां आरजी (अस्थायी) तौर पर आती हैं तो अल्लाह हमारे दिमाग को एसी ताकत देता है कि हम हिम्मत से आसानी के साथ उसको पार कर लेते हैं।

वह हमें ऐसी हालत में कभी नहीं जाने देता जो हमारी बरदाश्त के बाहर हो। क्योंकि वह इतना मेहरबान है। हम पर वह इतना मेहरबान है कि उसकी कोई इन्तहा नहीं है। प्यारे वालिद मैं बहुत शुक्रगुजार हूँ कि अल्लाह ने मुझे एसा दिमाग दिया जो कभी भी घबड़ा कर होश नहीं खोता और हमेशा शान्त रहता है। जब हम जिन्दगी में सबसे ज्यादा गमनाक हादसे का सामना करना पड़े तो हमारे लिए यह शोभा नहीं देता कि हम उसकी (अल्लाह) की इच्छा के खिलाफ कोई विरोध या मुखालफत करें या अपने मन में थोड़ी भी दुर्भावना रक्खें। मेरी जिन्दगी का यह सबसे शानदार लम्हा (क्षण) है जबकि मैं खुदा की इच्छा को स्वीकार कर उसकी वेदी पर अपनी जिन्दगी को कुर्बान कर दूंगा। मेरे दिमाग में हर लम्हा (क्षण) जन्नत (स्वर्ग) की ताकत बिना मिलावट की खुशी और एक अनोखी शान्ति भरी रहती है।

मुझे मुकम्मिल यकीन है कि मेरा यह खत आपको जो पहले ही बहुत ज्यादा गमजदा थे उस गम को और भी ज्यादा बढ़ा देगा। मैं अब यह महसूस करता हूं कि आपकी आंखों ने मेरे लिए न रुकने वाले आंसुओं का दरिया (नदी) बहाया है तो मैं अपने ऊपर काबू नहीं रख पाता हूं। शायद आपके मन में यह ख्याल होगा कि जब मैं मलाया पहुंचूंगा तो जवानी की उद्दण्डता भूल जाऊंगा और शायद आपकी कुछ मदद कर सकूंगा। आज की हालत में मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ? आप खुदा से पूछिये उसके कदमों में दुआ कीजिए आपको इसका जवाब मिल जावेगा। और सभी मखलूकातों (प्राणियों) की तरह आदमी को भी एक तयशुदा (निश्चित) समय पर मरना होता है। लेकिन उसमें एक बहुत बड़ा फर्क है। अपनी जिन्दगी के दौरान में आदमी अपनी जिन्दगी का एक मतलब और मिशन कायम करता है और उससे वह दूसरे मखलूकातों (प्राणियों) से अपने को ऊंचा उठाता है। ऐसी मिसालों की कोई कमी नहीं है कि जब वह मजबूती के साथ उन आदर्शों को पकड़े रहता है और मौत को भी चुनौती देकर अपने मकसद की तरफ बढ़ता है। अपने आदर्श में अटूट विश्वास रखकर निराश होकर किसी भी स्थिति का सामना करने के लिए वह अपने को तयार कर लेता है। जो जिन्दगी की इस असलियत (वास्तविकता) को जानता है वह इस भौतिक शरीर (दुनियावी जिस्म) की जरा भी फिक्र या चिन्ता नहीं करता। हमारे मुकदमे का फैसला एक अप्रेल को सुना दिया गया था। मुझे इण्डियन पेनल कोड की १२१ वीं दफा (धारा) मातहत (मातहत) पाच साल की सजा और संकटकालीन (इमरजेंसी) कानून के मातहत (मातहत) मौत की सजा मिली है। कल दो बजे रात्रि के पहले जिन्दगी के चिराग की लौ सदा के लिए बुझ जावेगी। यह हाथ फिर कभी लिखने के लिए कलम नहीं पकड़ेगा। पवित्र रमजान के महीने में सातवें दिन सुबह के और ६ घण्टों के बीच जिन्दगी अपना अन्त देख लेगी।

सेना में विद्रोह (१९४३)

यह बड़े दुःख की बात है कि विद्रोहियों के एक दल के सम्बन्ध में जिन्होंने प्रयत्न किसी ढंग से सेना में भारत की स्वतन्त्रता के लिए विद्रोह की भावना जागृत करने का कार्य किया हमें कुछ भी ज्ञात नहीं है। सच तो यह है कि सेना में साधारण सैनिक के मन में विद्रोह तथा प्रतिशोध की भावना उत्पन्न होने तथा समय आने पर ब्रिटिश सरकार की सेना को छोड़ देश की मुक्ति के लिए जो भी लोग प्रयत्न करें उनसे मिल जाने की भावना के बलवती हो जाने के कारण ही विदेशी सरकार यह अनुभव करने लगी कि भारत जैसे विशाल महादेश पर बिना राजभक्त भारतीयों की सहायता के जो भारत की मिट्टी में उत्पन्न हुए हों केवल अकेले गोरे वेतनभोगी कर्मचारियों द्वारा शासन कर सकना असम्भव है।

सैनिक गुप्तचर विभाग ने उच्च अधिकारियों को यह रिपोर्ट दी कि चौथी मदरास तटीय सुरक्षा सेना (फोर्थ मदरास कोस्टल डिफेन्स बैटरी) का एक दल जहां भी सम्भव हो तोड़ फोड़ करने तथा सैनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थानों में आग लगाने, सेना की राजभक्ति को नष्ट करने, सैनिकों को सेना छोड़ कर भाग जाने की भावना जागृत करने, उन सैनिकों में जो सेना के बैरकों में रहते हैं उनमें परस्पर मनमुटाव तथा प्रतिद्वंद्विता उत्पन्न करने का प्रयत्न कर रहा है। इस रिपोर्ट का परिणाम यह हुआ कि १८ अप्रैल १९४३ को सैनिक पुलिस ने लगभग बारह विद्रोहियों को सरकार के विरुद्ध कार्यवाही करने तथा युद्ध के प्रयत्नों में रुकावट डालने और युद्ध के प्रयत्नों पर कुप्रभाव डालने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया। ६ जुलाई और ५ अगस्त १९४३ को सैनिक अदालत (कोर्ट मार्शल) बंगलौर के सेंट ऐंड्रयूज गिरजाघर में बैठी और उसने सभी अभियुक्तों को सजा दे दी। उनमें से नौ बंगाली सैनिकों को जिनके नाम नीचे दिये हैं सैनिक अदालत ने प्राणदण्ड की सजा दी।

(१) मान कुमार बसु ठाकुर (आयु २१ वर्ष), (२) नन्द कुमार दे (२५ वर्ष) (३) दुर्गादास राय चौधरी (२५ वर्ष), (४) निरंजन बरुआ (२३ वर्ष), (५) चित्तरंजन मुखर्जी (२४ वर्ष), (६) फणी भूषण चक्रवर्ती (२३ वर्ष) (७) सुनील कुमार मुखर्जी (२२ वर्ष), (८) कालीपद भादुड़ (२३ वर्ष), और (९) निरेन्द्र मोहन मुखर्जी (२१ वर्ष) दो को आजीवन कालापानी और एक को सात वर्ष का कठोर कारावास दिया गया। उन नौ कैदियों को जिन्हें प्राणदंड दिया गया उनको मैसूर में फांसी दी जानी थी। परन्तु क्योंकि प्राणदण्ड की सजा ब्रिटिश सैनिक अदालत (कोर्ट मार्शल) ने दी थी अस्तु मैसूर राज्य की सरकार ने उनको मैसूर राज्य की भूमि पर फांसी देने में आपत्ति की। क्योंकि इन वीर देशभक्तों को किसी भी अन्य स्थान पर आसानी से मारा जा सकता था अतएव ब्रिटिश सरकार ने उन्हें मदरास के भोष कारागार में जहां पहले ही चार (या ६)
२ अन्य देशभक्तों को एक महीना पूर्व फांसी दी जा चुकी थी, रवाना तुरन्त कर दिया। फांसी के लिए अपनी कोठरियों (सैल) से जब वे देशभक्त युवक दो दो के समूह में ले जाए गए तो उनके मुखों पर प्रसन्नता खेल रही थी और उन्होंने आश्चर्यजनक साहस का परिचय दिया। इन सबों ने एक साथ मिल कर उच्च आवाज में 'वन्दे मातरम्' का घोष किया। हर एक ने एक दूसरे को प्रसन्न वदन आलिंगन कर विदा ली और प्रसन्न चित्त फांसी के तख्ते पर झूल कर २७ सितम्बर १९४३ को उसी प्रकार मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने प्राण दे दिए जिस प्रकार रणभूमि में योद्धा अपने प्राण देते हैं।

विशाल समुद्र में (१९४५)

महाविप्लवी नायक रासबिहारी बोस के थोड़े से योग्य सहायकों में श्री डी यश देशपांडे योग्यतम सहायक थे जिन पर रासबिहारी बोस का अटूट विश्वास था। देशपांडे जापान १९३० में गए और कुछ ही दिनों के उपरान्त शीघ्र ही वे अपने नेता के सम्पर्क में आ गए। जो भारतीय विद्याध्ययन के लिए जापान जाते थे उनको सहायता करने में उनकी विशेष रुचि थी। रासबिहारी बोस भारत से जापान जाने वाले विद्यार्थियों के लिए उनके जापान में रहने के लिए निवास तथा अन्य सुविधायें उपलब्ध कराते थे। श्री देशपांडे उनके इस काम में विशेष सहायक थे। जब रासबिहारी बोस इंडियन नेशनल आर्मी (भारत की राष्ट्रीय सेना) का संगठन कर रहे थे और उसके लिए रासबिहारी बोस को दक्षिण पूर्व एशिया का दौरा करना पड़ता था तो हर बार भी देशपांडे उनके साथ जाते थे। एक बार जब अपने परिभ्रमण से वे अप्रैल १९४५ में वापस जापान लौट रहे थे तो अमेरिकनों ने उनके जहाज को टारपीडो कर डुबा दिया और एक मूल्यवान जीवन समुद्र के गर्भ में विलीन हो गया। (स्रोत रामसिंह रावत का लेख हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड के विशेषांक में)

शत्रु के व्यूह का भेदन

तीर्थयात्री जो रणक्षेत्र के लिए पूर्व निर्दिष्ट था (१९१४-४५)

यद्यपि सुभाषचन्द्र बोस अपनी मातृ शिक्षण संस्था के अत्यन्त मेधावी छात्र थे फिर भी अपने छात्र जीवन के प्रारम्भिक काल में उन्होंने जो चरित्र की दृढ़ता और तेजस्विता प्रदर्शित की वह चरित्र की दृढ़ता और तेजस्विता उनकी तरुणाई और उनके घटना बहुल जीवन के अन्तिम दिनों में और भी अधिक मुखरित हो उठी थी। अपने यौवन काल में वे आध्यात्मिक जीवन की ओर आकर्षित हुए और अप्रैल १९१४ में एक सम्पन्न परिवार के सुविधाजनक गृह को त्याग कर वे आध्यात्मिक गुरु की खोज में निकल गए जब कि वे यौवन के द्वार में प्रवेश कर रहे थे तब उन्होंने अपने को अत्यन्त कठोर जीवन के लिए तैयार कर लिया था। सुविधाजनक सम्पन्न गृह को त्याग कर अपरिचित प्रदेश में नितान्त अपरिचित व्यक्तियों में रहना और नियमित रूप से भोजन और आश्रय न मिलने की सम्भावना की चिन्ता न कर वे अपनी अन्तर की पुकार को सुन चल पड़े थे। बहुत दिनों तक हिमालय तथा उत्तराखण्ड में तथा अन्य स्थानों पर 'गुरु' की खोज में फिरने पर भी उन्हें सद्गुरु नहीं मिला जो उनकी आध्यात्मिक क्षुधा को शान्त कर सकता। अस्तु वे उस ओर से निराश होकर घर वापस लौट आए।

मैट्रिकुलेशन तथा इण्टरमीडियेट परीक्षाओं में वे प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। जब वे कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कालेज में बी ए के तृतीय वर्ष में अध्ययन कर रहे थे तब १५ फरवरी १९१६ को असाधारण परिस्थितियों में एक अंग्रेज प्रोफेसर को पीटने की घटना घटी जो उनके जीवन में विशेष महत्वपूर्ण स्थान रखती थी। जब सुभाष बाल-पन में कटक के प्रोटेस्टेंट स्कूल में पढ़ते थे तो स्कूल के योरोपियन सहपाठियों के जातीयता के अहंकार को उन्होंने देखा था। उक्त अंग्रेज प्रोफेसर में वह जातीय अहंकार चरम सीमा में था और वह भारतीयों को नितान्त हेय समझता था। सुभाषचन्द्र बोस पर इस काण्ड में सम्मिलित होने का आरोप लगाया गया। उन्होंने न तो स्वयं अपराध स्वीकार किया और न उन छात्रों के नाम ही बतलाए जो इस घटना के लिए उत्तरदायी थे। अस्तु, उनको कालेज से दो वर्ष के लिए बहिष्कृत (रस्टिकेट) कर दिया गया।

इस घटना का तनिक विस्तार से वर्णन करना इसलिए आवश्यक है क्योंकि यह घटना श्री सुभाषचन्द्र बोस के जीवन में एक महान परिवर्तन लाई। अनेक वर्षों के उपरान्त १ दिसम्बर १९२९ को एक छात्र सम्मेलन में अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए उन्होंने नीचे लिखे महत्वपूर्ण विचार प्रकट किए थे—"मुझे आज भी वह दिन स्पष्ट रूप से याद है जब कि मेरे प्रिंसीपल (आचार्य) ने मुझे अपने समक्ष बुला कर कॉलेज से मुझे बहिष्कृत किए जाने की घोषणा की और उनके शब्द आज भी मेरे कानों में गूंज रहे हैं। उन्होंने कहा 'तुम कॉलेज में सबसे अधिक शैतानी करने वाले छात्र हो" वास्तव में वह दिन मेरे लिए एक अत्यन्त शुभ और भाग्यशाली दिन था। अनेक प्रकार से वह मेरे जीवन में वह महान परिवर्तन लाने वाला सिद्ध हुआ जबकि किसी उद्देश्य या लक्ष्य के लिए कष्ट सहने का प्रथम बार हर्ष या आनन्द का अनुभव हुआ। वह आनन्द ऐसा सुखद होता है जिसकी तुलना में जीवन के अन्य सभी प्रकार के आनन्द तुच्छ और व्यर्थ प्रतीत होते हैं। वह मेरे जीवन में पहला अवसर था—जब कि मेरी सद्धांतिक नैतिकता और सद्धांतिक देशप्रेम की परीक्षा ली गई—वास्तव में वह अत्यन्त कठोर परीक्षा थी और जब मैं उस परीक्षा में से बिना खरोंच लगे सफलतापूर्वक उत्तीर्ण हो गया तो मेरे भावी जीवन का मानचित्र सदैव के लिए निश्चित हो गया।"

प्रिंसीपल पर किए गए उस आक्रमण में वे सम्मिलित थे क्योंकि वे कहा करते थे कि 'योरोपियनों को केवल शारीरिक बल ही समझ में आता है। यह वह समय था जबकि भारतीयों ने घमण्ड का जवाब घूंसे से देना आरम्भ कर दिया था और जब भारतीय मारते तो उसका तत्काल प्रभाव होता था।"

सन् १९१७ में सुभाषचन्द्र बोस ने कलकत्ता विश्वविद्यालय के ट्रेनिंग कोर (सनिक प्रशिक्षण) में अपना नाम लिखवाया। ट्रेनिंग कोर में अपना नाम लिखाने का उनका उद्देश्य यह था कि नतिक और बौद्धिक क्षेत्र में, दर्शन और संस्कृति के विभागों में तथा अन्य सभी क्षेत्रों में भारतीय अंग्रेजों से किसी भी तरह हीन नहीं हैं। केवल शारीरिक बल और स्वास्थ्य में वे अंग्रेजों की तुलना में पीछे हैं अतएव शारीरिक दृष्टि से भी उन्हें अंग्रेजों के समान शक्तिशाली होना चाहिए। अतएव सुभाषचन्द्र बोस अग्नि शस्त्रों के साथ सैनिक प्रशिक्षण के इस अवसर को छोड़ना नहीं चाहते थे। जहां तक राइफल और अग्नि शस्त्रों का प्रश्न था बहुत थोड़े से भारतीयों को छोड़ कर वे भारतीयों के लिए वर्जित थे।

सनिक शिविर का कठोर जीवन उन्हें शान्त जीवन से जिसमें कुछ करने के लिए नहीं होता उन्हें अधिक सुखद प्रतीत होता था। वे शान्त जीवन को नीरस मानते थे। उन्हें बेलघुरिया शिविर की वह घटना बहुत ही पसन्द आई जब कि हवा तेज बह रही थी, मूसलाधार वर्षा हो रही थी जिससे खेमों में पानी भर गया था और प्रातःकाल लक्ष्य भेद का अभ्यास आरम्भ हुआ था। सायंकाल साढ़े चार बजे तक गोली चलाने और निशाना लगाने का अभ्यास होता रहा। उससे श्री सुभाषचन्द्र बोस को अतीव प्रसन्नता हुई क्योंकि उससे किंचित् मात्र सनिक प्रशिक्षण तथा युद्धक्षेत्र का अनुभव होता था। उन्हें अत्यन्त कठोर कार्य करना जैसे खेमे गाड़ना शौचालयों का निर्माण करना, दूर से जल लाना और सबसे अधिक रात्रि को सेवा तथा सतरी के रूप में रात भर पहरा देना बहुत सुखद और मधुर प्रतीत होता था। शिविर जीवन का अनुभव

उनका बहुत पसंद था और उनका विश्वास था कि उस प्रशिक्षण में जो थोड़ा बहुत सैनिक प्रशिक्षण मिलता है उससे प्रत्येक छात्र को कुछ न कुछ अवश्य लाभ होता है। सच तो यह है कि जैसा उन्होंने ३० अप्रैल १९१८ में लिखा—उन्हें उस समय कल्पनातीत गौरव का अनुभव हुआ कि जब गोली चलाने की प्रतिद्वंद्विता में बंगाली छात्र अपने अंग्रेज शिक्षकों से श्रेष्ठ प्रमाणित हुए।

जब वे विश्वविद्यालय के प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के पाँचवें वर्ष की कक्षा के छात्र थे उनसे अगली आई सी एस परीक्षा के लिए तैयारी करने के लिए कहा गया जिसके लिए केवल ६ महीने ही शेष थे। ११ सितम्बर १९१९ को वे भारत से इंग्लैंड गए और उन्होंने आई सी एस परीक्षा में बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त किया। उसी अवधि में उन्होंने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से दर्शनशास्त्र में आनर्स उपाधि भी ले ली। उन्होंने इंडियन सिविल सर्विस से त्यागपत्र दे दिया और १६ जुलाई १९१६ को भारत वापस लौट आए। भारत में वापस आते ही वे भारत के राजनीतिक जीवन में कूद पड़े और देशबन्धु चितरंजन दास के सहायक के रूप में कार्य करने लगे। कांग्रेस में अनेक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य करने के अतिरिक्त वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संगठन के कैप्टेन भी नियुक्त किए गए।

वे क्रांतिकारी आंदोलन के जन्म उसके विकास तथा हिंसात्मक प्रदर्शनों का अध्ययन करने के लिए बहुत उत्सुक थे। कारण यह था कि क्रांतिकारी आंदोलन का सरकार पर गहरा प्रभाव पड़ा था। कलकत्ता पहुँचने के कुछ ही दिनों बाद वे इंडो जरमन षड्यन्त्र के प्रमुख नायकों तथा क्रांतिकारी कार्यों के पुराने और प्रमुख नेताओं से मिलने के लिए अपने पैतृक ग्राम कोडालिया' जो चौबीस परगने में स्थित है गए। अपने पैतृक ग्राम के क्रांतिकारी मित्रों से वे निरंतर गुप्त रूप से सम्पर्क बनाए रहे और धीरे धीरे उन्होंने विस्तृत बंगाली क्रांतिकारी संगठनों से अपना सम्पर्क स्थापित कर लिया जिन्होंने भारत में ब्रिटिश अधिकारियों के हृदय में भय का आतंक उत्पन्न कर दिया था। १० दिसम्बर १९२१ को कांग्रेस के सविनय अवज्ञा आंदोलन में वे गिरफ्तार हो गए और उन्हें ६ महीने का कारावास हो गया। महात्मा गांधी के नेतृत्व में चलने वाले असहयोग आंदोलन के प्रभाव क्षेत्र तथा उसके विस्तार की जाँच करने के उद्देश्य से भारतीय क्रांतिकारियों ने असहयोग काल में अपनी कार्यवाहियों को स्थगित कर दिया था।

जब असहयोग आन्दोलन शिथिल होने लगा तो गुप्त क्रांतिकारी संगठनों ने पुनः अपनी शक्तियों को पुनर्संगठित करना आरम्भ कर दिया। सरकार ने सुभाष जी को क्रांतिकारियों से गठबंधन करने के संदेह में २५ अक्तूबर १९२४ को गिरफ्तार कर लिया। उनके साथ सैकड़ों प्रमुख क्रांतिकारियों को भी पकड़ लिया गया जो कि भावी क्रांतिकारी आंदोलन में प्रथम पंक्ति में रह कर उसका नेतृत्व करने वाले थे। सुभाषजी को तीन महीने बंगाल की जेलों में रख कर २५ जनवरी १९२६ को उन्हें माण्डले जेल में भेज दिया गया। जब वे माण्डले जेल में थे तो उनके नेतृत्व में सैकड़ों राजनीतिक बंदियों ने अपने धार्मिक कृत्यों तथा त्योहारों को जिनमें दुर्गा पूजा भी सम्मिलित थी को जेल में मनाने के अधिकार को स्थापित करने के लिए वह ऐतिहासिक अनशन किया था। सुभाष जी तथा उनके कुछ साथी बंदियों का जेल में स्वास्थ्य बहुत अधिक खराब हो गया। विवश होकर सुभाष जी को सरकार ने १६ मई १९२७ को छोड़ दिया।

उनके जेल से छूटने पर वे बगाल प्रा तीय काग्रेस कमेटी के अध्यक्ष चुने गए। जेल से छूटने पर कुछ दिनो मे ही सुभाष जी के स्वास्थ्य मे थोडा सुधार हुआ कि उन्होंने बगाल राजनीतिक सम्मेलन का सभापतित्व किया। इसके अतिरिक्त अनेक राजनीतिक युवक तथा छात्र सम्मेलनो के अध्यक्ष पद से उन्होंने भाषण दिए। वे भारत के विभिन्न भागो में गए और उन्होने देश की पूर्ण स्वतन्त्रता की साहस और तेजस्विता के साथ माग की और उस विचारधारा के पक्ष में धुआधार प्रचार किया। वे जहा जाते देशवासियों का देश की स्वतन्त्रता के युद्ध के लिए तैयार रहने का आह्वान करते। अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा (काग्रेस) का वार्षिक अधिवेशन १६२८ मे कलकत्ता में होने वाला था और उससे सम्बन्धित अनेक कार्यों तथा खुले अधिवेशन की व्यवस्था करने के लिए एक पूर्ण अनुशासित स्वयसेवक सगठन खडा किया गया और श्री सुभाषच द्र बोस उसके सर्वोच्च कमाण्डर नियुक्त किए गए।

कतिपय अत्यन्त दूरदर्शी राजनीतिज्ञो ने उसी समय ही यह घोषणा कर दी थी कि वे देश के भावी नेता होगे, वे देश की भावी आशा हैं। कलकत्ता के पत्र "दी वलफेयर" ने नीचे लिखे भविष्यवाणी के शब्दो मे १६२८ के काग्रेस अध्यक्ष के जुलूस के सम्बन्ध म अपने विचार प्रकट किए थे। " प्रात काल होने से पूर्व ही काग्रेस अध्यक्ष का जुलूस जिस माग से निकलने वाला था उसके दोनों ओर फुटपाथ पर दर्शनार्थियो की भारी भीड धैर्य और सयम से खडी थी। प्रत्येक उत्तल बरांडा झरोखा तथा खिडकी की इच-इच जगह उत्सुक दर्शनार्थियों ने घेर रक्खी थी।" इसमे कोई सदेह नही कि वह अपार जनसमूह काग्रेस अध्यक्ष का स्वागत करने के लिए उमड पडा था किन्तु 'अवश्य ही वे उससे भी अधिक मूल्यवान और अभिजात राष्ट्रीय महत्व की वस्तु का स्वागत करने के लिए एकत्रित हुए थे। वह थी एक असैनिक जाति म सैनिक आचरण की तीव्र और गहन इच्छा। सच तो यह है कि बगाल के लिए वह एक नवीन दिवस का प्रभात था। उस दिन एक नवीन परम्परा को जन्म देने का प्रयास किया गया। आशा और अपूर्व उत्साह के उस प्रवाह ने पर्दो को उसी तरह दूर हटा दिया जिस प्रकार कि प्राचीन काल म विजयी राष्ट्रवीर विजयी सेनाओं के साथ रणभूमि में विजय प्राप्त कर विजयोल्लास से जब लौटते थे तो निमम बुरका अनायास ही हट जाता था और छज्जों और कमरो की खिडकियां चौडी खुल जाती थी जिससे पर्दे मे रहने वाली स्त्रिया भी उन विजेताओ पर अपना प्रेम स्नेह समादर प्रशसा और फूला तथा शुभकामनाओं की वर्षा कर सकें। उसी प्रकार उनकी उस दिन वर्षा हुई। लोगो ने उसी प्रकार पुष्पो और शुभकामनाओ की बौछार की। स्त्रियो और पुरुषो ने स्वयसेवक दल के सर्वोच्च कमाण्डर के गर्व से ऊचे शीश पर जब कि वह मोटरकार में वीर वेश में स्वयसेवक दल का सचालन करते हुए खडे थ अपनी आशा और हर्ष की वर्षा की। वह उस दिन प्रात काल के वीर योद्धा की भांति दिखलाई पड रहे थे जिन्होंने अपार जन समूह की उदासीनता और कायरता पर तुरही और डके की चोट से विजय प्राप्त की थी। उस अपार जन समूह में एक व्यक्ति की आंख भी उसको अनदेखा या उपेक्षा नहीं कर सकती थी। कोई कमरा उसका चित्र लिए बिना नहीं रह सकता था। वह वीर वेश मे एक कमाण्डर की भान्ति सचालक के रूप में खडा था। जब कार धीरे धीरे रेंगती हुई आगे बढ़ती तो वह कभी-कभी अपने हाथ के उसी भांति सकेत से निर्देशन कर देता जिस प्रकार एक जनरल सैन्य सचालन के समय देता है। वह प्रत्येक दृष्टि एक सेनापति की भांति

दिखलाई दे रहा था—उनके मुखमंडल और समस्त व्यक्तित्व पर एक विजयी योद्धा का स्व चतन्य, स्व आश्वासन की मूक दृष्टि और स्व सतोष की आभा अंकित थी। वह एक दर्शनीय दृश्य था। नहीं, वह एक दृष्टि कल्पना थी। भविष्य की एक महान आशा थी।"

जब कांग्रेस अधिवेशन समाप्त हुआ तो सुभाष जी कांग्रेस के महामन्त्री निर्वाचित हुए। अपने आराम की तनिक भी चिन्ता न करने वाले जोखिम उठाने के लिए सदैव तत्पर और कारागार के कष्टों के प्रति नितान्त उदासीन सुभाष को जनवरी १९३० को नौ महीने का कठोर कारावास हो गया। अगस्त १९२९ म उन्होंने जो एक जुलूस का नेतृत्व किया था उस सम्बन्ध में यह कारावास उन्हें दिया गया। २३ सितम्बर १९३० को वे कारागार से मुक्त किए गए।

कई बार सुभाष जी को सरकार ने गिरफ्तार कर कारागार में बन्द कर दिया। कभी उन पर मुकदमा चलाया जाता और कभी बिना मुकदमा चलाये ही उनको जेल में ठूस दिया जाता। उनकी स्वतन्त्रता मे हस्तक्षेप की इन अवधियों मे वे दो बार अखिल राष्ट्रीय महासभा (इंडियन नेशनल कांग्रेस) के अध्यक्ष चुन गए। एक बार १९३८ में और दूसरी बार १९३९ में। जेल में लम्बे समय तक रहना तथा जेल जीवन उनके स्वतन्त्रता प्रिय मस्तिष्क के लिए विशेष अहितकर सिद्ध हुआ और वे कम से कम दो बार गम्भीर रूप से अस्वस्थ हो गए। विशेषज्ञों द्वारा उपचार के लिए २३ फरवरी १९३३ को प्रथम बार वे योरोप भेजे गए। अपने पिता की गम्भीर बीमारी का समाचार सुन कर, मृत्युशय्या पर उनको देखने के लिए वे शीघ्रतापूर्वक भारत लौटे और अपने पिता की मृत्यु के एक दिन बाद ही ३ दिसम्बर, १९३४ को कराची पहुँचे। भारत वापस लौटकर उन्होंने योरोप मे उपचार के लिए जो उन्हें जाने दिया गया था उसकी शर्तों को उन्होंने तोड़ा था। अतएव वे पुन बन्दी बना लिए गए और १८ नवम्बर, १९३७ को वे हवाई जहाज द्वारा पुन योरोप भेज दिए गए।

जबकि उन्हे बलपूर्वक अपने देश से निर्वासित कर दिया गया, तो उस काल में उन्होंने योरोप की कूटनीतिक परिस्थिति का समीप से अध्ययन किया। वे अनेक यूरोपीय देशों में गए और वहा के सर्वोच्च तथा शीर्ष राजनीतिक नेताओं से मिले। आगे चल कर उन राजनीतिक नेताओं तथा राजनीतिक परिस्थिति का ज्ञान उनके लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ। उस राजनीतिक ज्ञान का भारत के हित में उपयोग कर, उन्होंने भारतीयों को योरोप के राजनीतिक रंगमंच पर होने वाले परिवर्तनों से, आने वाले कष्टों और दु खो से सदैव सावधान करने का प्रयत्न किया। भारत मे २ जुलाई, १९४० को वे अंतिम बार गिरफ्तार किए गए। अपने दो पत्रों में जिन्हे वे अपना राजनीतिक सदेश या इच्छापत्र कहते थे जो उन्होने बगाल की सरकार को लिखे थे उन्होंने अपने भावी कार्यक्रम की रूपरेखा का सकेत किया था। उनके भावी कार्यक्रम मे मृत्यु पर्यन्त अनशन रखना भी सम्मिलित था। ५ दिसम्बर १९४० को वे कारागार से मुक्त किए गए और कलकत्ते के उनके एलगिन रोड के मकान मे पहुचा दिए गए। सुभाषजी ने अपने को अपने निजी कमरे मे बन्द कर लिया। क्रमश उन्होंने लोगो से भी मिलना जुलना बन्द कर दिया। यहा तक कि वे अपने निकट सम्बन्धियों से भी नहीं मिलते थे। उनके लिए खाना उनके

पर्दे के समीप बाहर की ओर रख दिया जाता था और वे अपनी सुविधा के अनुसार उसे ले लेते थे तथा भोजन कर थाली आदि को पुनः उसी स्थान पर सरका देते थे। एक दो व्यक्ति जिन्हें उनसे मिलने की आज्ञा थी, वे यह देखकर आश्चर्य करते थे कि उन्होंने अपने साफ सुथरे चेहरे पर दाढ़ी बढ़ा ली थी। वे दुबले हो गए थे और उनके दोनों ओर गीता तथा चंडी की एक एक प्रति रखी रहती थी। जब उनसे पूछा जाता कि दाढ़ी क्यों बढ़ा रखी है, तो वे उत्तर देते कि उनकी चाची की मृत्यु हो जाने के कारण वे शोक में हैं और एक धार्मिक हिन्दू होने के नाते हजामत नहीं बना सकते। अर्द्ध रात्रि के उपरान्त उनके एक मित्र, जिन्हें वे समय समय पर बुलावा भेजते थे वे महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करते थे। अपनी अनुपस्थिति में जो योजना कार्यान्वित करनी थी, उस योजना के सम्बन्ध में विस्तार से चर्चा होती थी।

यह उल्लेखनीय है कि वे अपने दो अथवा अधिक से अधिक तीन मित्रों के माध्यम से उन व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित कर सके कि जो उन्हें उत्तर पश्चिमी सीमा प्रान्त में मिलने वाले थे और उन्हें अफगानिस्तान पहुंचाने वाले थे। कलकत्ता से निकलने में दो महीने की देरी हो जाने के कारण उन्हें काबुल से निकालकर रूसी प्रदेश में पहुंचाने की जो व्यवस्था की गई थी, वह इस देरी के कारण भंग हो गई। यह एक प्रकार से अन्धकार में कूदना था, इस सुदूर सम्भावना से कि वे भारत से निकल कर पेशावर और काबुल होकर मास्को पहुंच सकेंगे। श्री सुभाषचन्द्र बोस १७ जनवरी, १६४१ को रात्रि के समय घर से निकल पड़े। अपने एलगिन रोड के मकान को छोड़ने के उपरान्त क्या हुआ, यह उनके भतीजे डॉक्टर अशोक नाथ बोस ने इस प्रकार बतलाया है—

"१७ जनवरी, १६४१ को प्रातःकाल ६ बजे जबकि मैं और मेरी पत्नी बरारी धनबाद में प्रातःकाल के जलपान (ब्रेकफास्ट) के लिए खाने की मेज पर बैठने की तैयारी कर रहे थे कि हमने अपने भाई डाक्टर शिशिर बोस को हमारे पिता की एक मोटर में बंगले में घुसते देखा। उन्होंने मुझे बतलाया कि वे कलकत्ते से नेताजी को छद्म वेश में गुप्त रूप से निकाल कर लाए हैं। उन्होंने अर्द्ध रात्रि के कुछ समय उपरान्त ही कलकत्ता छोड़ दिया और सारी रात वे ग्राण्ड ट्रंक रोड पर मोटर चलाते रहे। मेरे बंगले के समीप पहुँचने पर एक मील दूर उन्होंने नेताजी को मोटर से उतार दिया, जिससे कि मेरे नौकरों को इसका तनिक भी संदेह न हो कि मेरे भाई का उनसे कोई वास्ता है। मेरे भाई के पहुँचने के कुछ मिनटों के उपरान्त ही नौकरों ने सूचना दी कि एक अपरिचित व्यक्ति आए हैं। वे सिर से पैर तक एक सम्भ्रान्त पठान के वेश में थे। उनकी वेशभूषा, सर पर फज टोपी और कई महीनों की बढ़ी हुई दाढ़ी, जो उन्होंने एकांतवास में बढ़ा ली थी—सब मिलाकर उनका छद्म वेश इतना पूर्ण था कि किसी के लिए भी पठान वेश में नेताजी को पहचान सकना असम्भव था। उन्होंने दिन भर मेरे बंगले में आराम किया। किसी को किसी प्रकार का संदेह न हो, इसलिए उन्हें अतिथियों के लिए सुरक्षित कमरे में ठहराया गया और ऐसा प्रकट किया गया कि वे मानो अजनबी व्यक्ति हों। हम में जो भी बात होती वह केवल अंग्रेजी में होती थी। सायंकाल होने पर बाह्य रूप से उन्होंने हम से विदा ली और बंगले से

समीप के टक्सी स्टैंड तक जाने के लिए पैदल चल पड़े। आधा घण्टे के बाद मैं मेरे भाई और मेरी पत्नी तीनों ही मोटर से चले और उन्हें मार्ग में मोटर में ले लिया। उसके उपरान्त हम ग्राण्ड ट्रंक रोड पर गमोह की ओर चले। गमोह के पास पहुँच कर हम लोग सड़क पर एक एकांत और सुनसान जगह पर एक घण्टे लिए रुक गए क्योंकि गमोह स्टेशन पर ट्रेन अर्द्ध रात्रि के पूर्व आने वाली नहीं थी। हम लोग आपस में घरेलू बातचीत करते रहे। उन्होंने हमसे कहा कि वे उस समय पेशावर जा रहे हैं और काबुल तथा मास्को होकर अन्त में बर्लिन जाने का उनका विचार है। उन्होंने कहा कि यदि मेरे निकल भागने का भेद आठ या नौ दिन छिपाया जा सका तो मैं ब्रिटिश सरकार की पहुँच के बाहर निकल जाऊंगा। उन्होंने हम से यह भी कहा कि मेरे निकल जाने के परिणाम विशेषकर परिवार के सदस्यों के लिए बहुत गम्भीर हो सकते हैं। उन्होंने हमसे कहा कि यदि ऐसा हो तो उसके परिणामों को साहस और धैर्य से सहन करना। उनके निकल भागने की योजना हम में से किसी को भी समूची ज्ञात नहीं थी। केवल दो व्यक्ति ही उनकी सम्पूर्ण योजना को जानते थे। अर्थात् मेरे माता पिता को ही, उनके निकल जाने की पूरी योजना ज्ञात थी। मुझे उनके इष्ट स्थान का इससे पूर्व कोई पता नहीं था और न मुझे पहले से यह मालूम था कि वे मेरे यहाँ कब और कैसे पहुँचेंगे।

क्योंकि देहली–कालका मेल के आने का समय नजदीक आ रहा था, अस्तु, हम लोग स्टेशन की ओर चले और स्टेशन पहुँचकर हम जल्दी से उन्हें उतार कर मोटर को तेजी से आगे आध मील की दूरी पर ले जाकर खड़ा किया और गाड़ी के चले जाने के उपरान्त आधा घण्टे तक और इन्तजार करते रहे। जब हमें विश्वास हो गया कि वे गाड़ी में सुरक्षित बैठ गए तब हम मोटर से वापस धनबाद लौट आए। यात्रा में कोई उल्लेखनीय घटना नहीं घटी तथा श्री सुभाषचन्द्र बोस बिना किसी विघ्न बाधा के पेशावर पहुँच गए जहाँ कि पूर्व निश्चित व्यवस्था के अनुसार एक सहानुभूति रखने वाले सहायक मित्र ने उनका स्वागत किया। सुभाषजी तथा उनके मित्र को पेशावर में दो दिन व्यतीत करने पड़े। वहाँ से वे काबुल की ओर चले। उन्होंने भारतीय सीमा को पार किया और दो मस्कों को भर कर तथा उन्हें बाँध कर एक कृत्रिम नाव बनाकर अत्यन्त कठिनाई से उन्होंने काबुल नदी को पार किया। क्योंकि स्थानीय बोलचाल की भाषा से सुभाषजी अनभिज्ञ थे अस्तु उन्हें गूंगे और बहरे व्यक्ति का ढोंग करना पड़ा। वे गूंगे और बहरे बन गए।

अफगानिस्तान की सीमा में घुसना आसान था परन्तु काबुल पहुँचना बहुत ही कठिन था। शाम हो गई थी, उस निर्जन स्थान पर और बे वक्त समय कोई भी उन्हें उनको बिठा लेने के लिए नहीं रुकी। सुभाषजी और उनके साथी ने कम से कम उस रात्रि को काबुल जाने के लिए कोई भी सवारी पा सकने के सम्बन्ध में लगभग सारी आशायें छोड़ दीं। सवारी न मिलने का विकल्प—प्रतीक्षा करना—बर्फीले शीत से मृत्यु होना था क्योंकि उस समय चारों ओर बिना रुके बर्फ गिर रही थी। अन्त में माल से पूरी तरह लदे हुए एक ट्रक ने उनकी प्रार्थना पर ध्यान देकर उनको चढ़ा लिया। उन्हें ऊपर चढ़ कर सामान के ऊपर सिकुड़ कर बैठना पड़ा और यह बहुत खतरनाक। यही नहीं कि उन्हें शीत वायु का सामना करना पड़ रहा था और उन पर बर्फ गिर रही थी वरन सड़क के दोनों ओर खड़े वृक्षों की झुकी हुई डालियों से यह खतरा था कि वे

दोनों यात्री को माल के बोरों पर बैठे थे वृक्ष की झुकी डालियों से टकरा कर कहीं ऊपर से गिर न पड़ें। इस प्रकार अकथनीय कष्ट और खतरे से निकल कर दोनों यात्री सूम छिपने पर काबुल पहुंच गए। कभी कभी ऐसी घटना घटी है जिसे हम 'चमत्कार' कहते हैं वैसी ही घटना सुभाष के साथ घटी। उन्हें काबुल में उत्तमचन्द का आदरपूर्ण आतिथ्य मिला जहां वे ४३ दिन रहे। अवश्य ही उनके वहां रहने के सम्बन्ध में अंग्रेजी सरकार को भेद ज्ञात हो जाने और उनके गिरफ्तार हो जाने की सम्भावना बनी हुई थी। श्री सुभाष ने रूसी दूतावास से सम्बन्ध स्थापित करने की भरसक चेष्टा की परन्तु सारे प्रयत्न विफल हुए। इटैलियन दूतावास का रुख अधिक अनुकूल रहा यद्यपि उनको भी सुभाष जी को भिजवाने में बहुत देरी हुई। लम्बे दिनों तक मन और शरीर को झकझोर देने वाली प्रतीक्षा के उपरान्त सुभाष जी ने १८ मार्च को काबुल छोड़ दिया और वे रात्रि को रूसी प्रदेश में पहुंच गए। २० मार्च १९४१ को वे मास्को पहुंचने और वहां जरमन राजदूत से मिले। मास्को स्थित जरमन राजदूत के एशियाई राजनीति के गहन ज्ञान ने सुभाष जी को बहुत अधिक प्रभावित किया। वह महान भगोड़ा (सुभाषजी) २८ मार्च को बर्लिन पहुंच गया। धुरी राष्ट्रों ने सुभाष जी का हृदय से स्वागत किया क्योंकि हिटलर ने रूस पर आक्रमण करने का निश्चय कर लिया था और भारत का भी प्रश्न उसके ध्यान में था। भारत से भागे हुए इस महान क्रान्तिकारी का पहला प्रस्ताव बर्लिन रेडियो से ब्रिटेन विरोधी प्रचार करने का था। उनका दूसरा कार्य युद्ध बन्दियों में से ब्रिटिश विरोधी कार्य करने के लिए उपयुक्त व्यक्तियों का चयन करना तथा सहायकों को भर्ती करना था। बोस द्वारा स्थापित इण्डियन लिजन में बड़ी संख्या में भारतीय सम्मिलित हुए और जरमनी सैनिक विशेषज्ञों की देखरेख में उनको ऊंचे दर्जे का सैनिक प्रशिक्षण दिलाया गया। सुभाष जी ने इन सभी कार्यों में गहरी रुचि प्रदर्शित की। कतिपय चुने हुए व्यक्तियों को गुप्तचर सेवा का प्रशिक्षण दिया गया जिससे कि भारत में ब्रिटिश प्रचार के विरुद्ध प्रचार कर सकें। उनको प्रशिक्षण देकर वायुयान द्वारा चुने हुए भारतीय क्षेत्रों में अंग्रेजों द्वारा युद्ध के लिए जो भी भारत में प्रयत्न चल रहे हैं उसको रोकने और विफल करने के लिए और यदि सम्भव हो तो स्थानीय विद्रोह का संगठन करने के लिए भेजे जाने वाले थे। भारत के सम्बन्ध में जरमनी का रुख स्पष्ट नहीं था और दोनों ओर मन में कुछ बातें छिपी हुई थी। परन्तु सुभाष जी के इण्डियन लिजन की स्थापना के प्रयत्न को जरमनी ने पूर्ण समर्थन और प्रोत्साहन दिया और विभिन्न युद्ध क्षेत्रों से भारतीय युद्ध बन्दियों को उन्होंने ड्रसडेन के समीप प्रशिक्षण शिविर में भेज दिया। जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया यह स्पष्ट हो गया कि सुभाष जी एकाकी जरमनी की सहायता करने के लिए कुछ भी करने को तैयार नहीं हैं और वे जरमनी के सहयोग का भारत के हित में अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न कर रहे हैं। जरमन युद्ध का परिणाम क्या होगा, उन्होंने इस सम्बन्ध में आश्चर्यजनक और उल्लेखनीय दूरदर्शिता का परिचय दिया। १९४२ में जबकि जरमनी के युद्ध तन्त्र के निर्बल होने के कोई भी चिन्ह प्रगट नहीं हुए थे उन्होंने उच्चतम नौ सेना अधिकारियों में से एक ऐडमिरल कनारी से कहा था "आप जानते हैं और मैं भी जानता हूं कि जरमनी इस युद्ध में विजयी नहीं हो सकता परन्तु इस बार विजयी ब्रटेन भारत को खो देगा। विजयी हो जाने पर भी ब्रटेन अपने वचन अर्थात भारत पर से अपने प्रभुत्व को उठा देने को तोड़ नहीं सकेगा। यह वचन उन्होंने स्वतः अपनी स्वतन्त्र इच्छा से १९४० में दिया था।" (लियर कुहिन की जरमन मिलीटेंरी इन्टलिजेंस १९५४ पृष्ठ १८८)

उन्होंने यह प्रस्ताव रखा था कि उपयुक्त भारतीयों में से तीन पदाति (इ फन्ट्री) बटालियन खड़ी की जावें जो जरमन सेनाओं से सहयोग करें और जबकि जरमन सेनाएं अफगानिस्तान की ओर आगे बढ़ें तो भारतीय सेनाओं का एक बड़ा भाग उत्तर पश्चिमी सीमा प्रान्त में घुस सकेगा और उन क्रान्तिकारियों और विद्रोहियों से मिल जावेगा जो कि भारत के अन्दर कार्य कर रहे हैं। विश्व को यह जानने में अधिक देर नहीं लगी कि बाज रूपी बटेन का शिकार (सुभाष जी) जरमनी को भाग निकलने में सफल हो गया जहां वह स्वयं आरोपित इटलियन नाम "सिगनर आरलैंडो भोजाट्टा" के नाम से प्रसिद्ध है। उनके पुराने और नए सहयोगियों और मित्रों में अन्य सभी अभिवादनों का स्थान 'जय हिन्द' ने ले लिया। यह वास्तविकता है कि इन दो शब्दों का भारतीयों के मस्तिष्क पर 'वन्दे मातरम' के बाद जो भारत के स्वतन्त्रता के अहिंसक और हिंसक वीरों का पवित्र मन्त्र था—सबसे अधिक प्रभाव पड़ा। अपने साथियों में सभी उन्हें प्रेम पूर्वक 'नेता जी' के नाम से पुकारते थे। बाद को वे इसी नाम से प्रसिद्ध हुए। अंग्रेजों के इस घणित और झूठे प्रचार कि सुभाष चन्द्र बोस धुरी राष्ट्रों के पिट्ठ हैं—का उन्होंने २० अप्रेल १९४२ को दृढ़ता पूर्वक उत्तर देते हुए कहा कि जब मैं अपने देश वासियों से बात करता हूं तो मुझे अपनी सच्चाई का प्रमाण पत्र देने की आवश्यकता नहीं है इसका कारण यह है कि 'मेरा सम्पूर्ण जीवन ब्रटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध बिना किसी प्रकार का समझौता किए अनवरत संघर्ष करने का रहा है।" मेरे सद्‌भाव और सच्चाई की यही सबसे बड़ी गारंटी है। मेरे सम्पूर्ण जीवन में मैं भारत का सेवक रहा हूं और मेरे जीवन के अन्तिम क्षण तक मैं भारत का ही सेवक रहूंगा। मेरी भक्ति और निष्ठा सदैव भारत के प्रति रही है और भविष्य में केवल मात्र भारत के लिए ही रहेगी फिर मैं चाहे विश्व के किसी भाग में क्यों न रहूं। नेताजी ने थोड़े ही समय में ही यह अनुभव कर लिया कि उनके जरमनी में ठहरे रहने से विशेष लाभ नहीं है विशेषकर जबकि पूर्वी एशिया में जापान एक के बाद दूसरी महान विजय प्राप्त कर रहा है। वह अपने कार्य क्षेत्र को बदलने के लिए उत्सुक हो उठे और अनुकूल अवसर की तलाश में थे कि उसी समय सुदूर पूर्व से श्री रासबिहारी बोस का निमन्त्रण आया कि वे भारत की राष्ट्रीय सेना का सेनापतित्व स्वीकार करें और पूर्वीय एशिया में आवें। भारत की राष्ट्रीय सेना का रासबिहारी बोस के नेतृत्व में पहले ही संगठन हो चुका था। सुदूर पूर्व से आई हुई इस पुकार को नेताजी सुभाष चन्द्र बोस न नहीं कर सके वह पुकार ऐसी थी जिसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता था। जरमन सरकार से नेताजी की यात्रा के लिए एक यू-बोट (पन डुब्बी) देने की प्रार्थना की गई। अपने एक अत्यन्त विश्वास भाजन सहायक (श्री आबिद हसन शफरानी) को लेकर नेताजी ८ फरवरी १९४३ को कील में गहरे समुद्र में उतर गए। यह यात्रा अत्यन्त जोखिम भरी थी क्योंकि इस बात का निरन्तर खतरा था कि शत्रु के समुद्री जहाज जो चारों ओर गश्त लगा रहे थे वे उस पन डुब्बी को देख लें और नष्ट कर दें। वह सब मरिन २८ अप्रैल १९४३ को मडागास्कर के समीप पहुँची। उसके यात्री एक रबर की नाव से जापानी सब मरिन में उतर गए। जापानी सब मैरिन पहले से ही उनकी पूर्व सूचना और व्यवस्था के अनुसार उनकी प्रतिक्षा कर रही थी। जब वह सब मरिन २ जून को पनांग पहुँच गई तो वह जोखिम भरी यात्रा समाप्त हो गई। पनांग से नेता जी १३ जून १९४३ को हवाई जहाज द्वारा टोकियो पहुच गए। टोजो से भारत के सम्बन्ध में नेताजी का पूर्ण मतैक्य हो गया। १६ जून को जापान के

प्रधानमन्त्री ने भारतीयों के उनके स्वतन्त्रता के संघर्ष में बिना किसी शर्त के सहायता देने के वचन को पुनः दोहराया। नेताजी ने जापान में पहुंचते ही कार्य आरम्भ कर दिया। २१ जून १९४३ को उन्होंने प्रथम बार जापान से ब्राडकास्ट किया २ जुलाई को नेताजी सुभाषचन्द्र सिंगापुर गए और पूर्वीय एशिया के भारतीय प्रतिनिधियों के सम्मेलन में ४ जुलाई १९४३ को नेताजी सुभाषचन्द्र ने इंडियन इंडिपेंडेंस लीग के अध्यक्ष पद को श्री रासबिहारी बोस से स्वीकार कर लिया। जापान के प्रधान मंत्री ने लीग को नेताजी को अपना अध्यक्ष चुनने पर बधाई दी और नेताजी को अध्यक्ष चुने जाने पर बधाई दी। ५ जुलाई को आजाद हिंद फौज की स्थापना की औपचारिक घोषणा की गई और नेताजी ने भारत की मुक्तिवाहिनी (सेना) के सैनिकों का एक प्रेरणादायक और महत्त्वपूर्ण भाषण द्वारा उद्बोधन किया। नेता जी ने कहा कि यह मेरे जीवन का सबसे अधिक गौरवपूर्ण दिन है क्योंकि परमेश्वर की असीम कृपा से उनको भगवान ने समस्त विश्व को यह सूचित करने की अपूर्व प्रतिष्ठा प्रदान की है कि भारत की मुक्ति सेना की स्थापना हो गई है। नैपोलियन बोनापार्ट की दैनिक आज्ञाओं की स्मृति कराने वाले भावनापूर्ण शब्दों में नेताजी ने कहा—'साथियों मेरे सैनिकों तुम्हारा रणघोष होना चाहिए 'दिल्ली चलो चलो दिल्ली" इनमें से कितने इस स्वतन्त्रता के युद्ध में व्यक्तिशः जीवित रहेंगे, मैं नहीं जानता। किन्तु मैं इतना भर जानता हूँ कि अन्त में हमारी विजय होगी। और हमारा कार्य उस समय तक समाप्त नहीं होगा जब तक हमारे युद्ध से जीवित बचे हुए योद्धा ब्रटिश साम्राज्य के एक दूसरे श्मशान भूमि—प्राचीन दिल्ली के लाल किले में अपनी विजय परेड नहीं करते। मैं तुम्हें यह वचन देता हूं कि मैं घोर अन्धकार और सूर्य के प्रकाश में तुम्हारे साथ रहूंगा। तुम्हारे सुख दुख में तुम्हारा साथी रहूंगा कष्टों और विजय में तुम्हारे साथ रहूंगा। इस समय मैं तुम्हें सिवाय भूख प्यास, कष्ट लम्बी मार्च और मृत्यु के और कुछ नहीं दे सकता। इस बात का कोई महत्व नहीं है कि हममें से भारत को स्वतन्त्र देखने के लिए कौन जीवित रहेगा। यही पर्याप्त है कि भारत स्वतन्त्र होगा और उसको स्वतन्त्र करने में हम अपना सर्वस्व अर्पण कर देंगे। 'उठो हमारे पास एक क्षण भी खोने के लिए नहीं है। अपने शस्त्र उठाओ। तुम्हारे सामने वह सड़क है जिसे हमारे अग्रगामियों ने निर्मित किया है। हम उस सड़क पर कूच करेंगे। हम शत्रु की पंक्तियों में से अपना मार्ग निकालेंगे और यदि ईश्वर की ऐसी इच्छा हुई तो हम शहीदों की मौत मरेंगे, 'और अपनी अन्तिम चिर निद्रा में हम उस सड़क का चुम्बन करेंगे कि जो हमारी सेना को दिल्ली पहुँचावेगी। दिल्ली जाने वाली सड़क ही स्वतन्त्रता की सड़क है। चलो दिल्ली।" ६ जुलाई १९४३ को पूर्ण सैनीकरण की स्थिति की घोषणा करते हुए उन्होंने स्वयं के भारत से निकलने का कारण बताते हुए कहा था कि स्वतन्त्रता का जो संघर्ष देश के अन्दर चल रहा है मैं उसकी अनुपूर्ति बाहर से करने के लिए देश से निकला हूँ। उनकी मान्यता थी कि जब एक ऐसी भारतीय सेना का संगठन किया जा सकेगा जो कि भारत स्थित ब्रटिश सेना पर आक्रमण करने की शक्ति और क्षमता रखती होगी तो केवल भारत की नागरिक जन संख्या में ही नहीं भारतीय सेना में भी विद्रोह फूट पड़ेगा। इस प्रकार जब ब्रटिश सरकार पर बाहर और भीतर दोनों तरफ से आक्रमण होगा तो उसका पतन हो जावेगा और तब भारतीय अपनी चिरवाञ्छित स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकेंगे। "मित्रो, पूर्वीय एशिया के तीस लाख भारतीयों का नारा होना चाहिए

"सम्पूर्ण युद्ध के लिए पूर्ण सैन्यीकरण पूर्वीय एशिया में पूर्ण सैन्यीकरण होने दो तो मैं दूसरा मोर्चा खोलने का वचन देता हूं—भारत की स्वतन्त्रता के लिए एक वास्तविक दूसरा मोर्चा खुलेगा।" वास्तव में उनकी भविष्य वाणी सत्य सिद्ध हुई। कुछ समय उपरांत बम्बई में रायल इंडियन नौ सेना में जो हड़ताल हुई उससे यह निस्सन्देह प्रमाणित हो गया कि ब्रिटेन के भारतीय साम्राज्य का भवन नींव तक हिल गया है। १० जुलाई १६४३ को काऊथान क्लब अर्थात क्रिकिट क्लब सिंगापुर में पहला संवाददाता सम्मेलन हुआ उसमें नेता जी ने कहा कि भारत की स्वतन्त्रता के लिए वह समय आ गया है जबकि पूर्वीय एशिया के भारतियों को हथियार उठा लेना चाहिए और निपन (जापान) के योद्धाओं के सहयोग से इंगलैंड पर प्रहार करना चाहिए। इसी उद्देश्य से मैंने पूर्वीय एशिया में इंडियन इंडिपेन्डेंस लीग का अध्यक्ष पद तथा भारतीय राष्ट्रीय सेना का सेनापतित्व स्वीकार किया है। इसके अतिरिक्त जापान से समानता के आधार पर सम्बन्ध स्थापित करने के लिए मैं बहुत शीघ्र स्वतन्त्र भारत की अस्थायी सरकार की स्थापना का विचार कर रहे हैं।

जापानी पत्रों के संवाददाताओं को यह भी सूचना दी गई कि भारत की राष्ट्रीय सेना के अंग स्वरूप एक महिला रजीमेंट भी गठित की गई है। १२ जुलाई १६४३ को विश्व ने आश्चर्य चकित होकर सुना कि भारत की राष्ट्रीय सेना 'आजाद हिंद फौज में महिलाओं की भी एक रजीमेंट होगी और वे भी पुरुषों के समान ही युद्ध करेंगी। यह एशियावासियों की सेनाओं के इतिहास में एक उल्लेखनीय घटना थी। अब स्थिति बहुत तेजी से बदल रही थी। एक अगस्त को बरमा स्वतन्त्र घोषित कर दिया गया। भारत की राष्ट्रीय सेना आजाद हिंद फौज" को आधुनिक सनिक स्तर का बना दिया गया और काम को अधिक सुविधापूर्वक चलाने के लिए नेता जी सुभाषचन्द्र बोस ने २५ अगस्त १६४३ को सेना की सीधी कमान अपने हाथ में ले ली। यह चिर स्मरणीय घटना का विवरण रेडियो पर समस्त विश्व के लिए प्रसारित किया गया। नेता जी ने सिपह सालार सर्वोच्च सेनापति का पद स्वीकार करते हुए—उस अवसर तथा अपने योग्य एक भाषण दिया—उन्होंने कहा "भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन तथा आजाद हिन्द सेना के हित में आज से मैंने हमारी सेना की सीधी कमान अपने अधिकार में ले ली है।" मेरे लिए यह अत्यन्त हर्ष और गौरव की बात है। क्योंकि एक भारतीय के लिए भारत की मुक्ति सेना का सेनाध्यक्ष होने से अधिक प्रतिष्ठा की और कोई बात नहीं हो सकती। किन्तु मैं उस गुरुतर काम की गुरुता के प्रति जागरूक हूं। जो कि मैंने अपने कंधों पर लिया है और मैं उस महान उत्तर दायित्व के भार से दबा हुआ अनुभव करता हूं। जो मैंने अपने ऊपर लिया है।" "मैं अपने कर्तव्य का इस प्रकार पालन करने के लिए कटिबद्ध हूं जिससे कि अड़तीस करोड़ देशवासियों के हित मेरे हाथों में सुरक्षित रहें और प्रत्येक भारतीय मुझ में पूर्ण विश्वास रख सकने की स्थिति में हो।" आजाद हिंद सेना के तत्कालीन लक्ष्य की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा। 'हमें अपने को एक ऐसी सेना में ढाल लेना चाहिए जिसका केवल एक मात्र लक्ष्य—भारत की स्वतन्त्रता हो और हमें हममें से प्रत्येक भारत की स्वतन्त्रता के लिए काम करने अथवा मरने के लिए तयार हो। हम जब खड़े हों तो आजाद हिंद फौज ग्रेनाइट (ग्रेनाइट) की दीवार की भांति सुदृढ़ हो, जब हम कूच करें तो आजाद हिंद फौज एक स्टीम रोलर की भांति हो।" यद्यपि नेताजी का ध्यान मुख्यतः सेना पर था

परन्तु अन्य आवश्यक तथा महत्वपूर्ण प्रश्नों को उन्होंने भुलाया नहीं। इण्डिया इण्डिपेंडेंस लीग आकार और विस्तार में बहुत बढ़ गई थी और उसमें जन धन और द्रव्य का एक प्रवाह आ रहा था परन्तु नेताजी ने मलाया और बरमा में अनेक स्थानों पर प्रशिक्षण शिविर स्थापित कर दिये जहां स्वयं सेवकों को अग्नि परिक्षा के लिए प्रशिक्षित किया जाता था और वे वहां से स्वतन्त्रता के अनुशासित और वीर सैनिक बन कर निकलते थे। श्री देवनाथ दास के शब्दों में "इण्डियन इंडिपेंडेंस लीग के मुख्य कार्यालय को विभिन्न विभागों में बांट कर उसका पुनर्गठन किया गया।" लीग के विभिन्न कार्यों के लिए एक पृथक विभाग स्थापित कर दिया गया अर्थात सचिवालय और वित्त, हिसाब, आय व्यय लेखा परीक्षण (आडिट) सैनिकों की भर्ती और प्रशिक्षण सप्लाई, शिक्षा तथा संस्कृति, महिला गृह, तथा यातायात, स्वास्थ्य, समाज कल्याण, प्रादेशिक शाखाओं और विदेशी विभाग स्थापित किए गए। इसी प्रकार भारत की राष्ट्रीय सेना आजाद हिन्द फौज का शक्ति और गतिशीलता में युद्ध स्तर के लिए पुनर्गठित किया गया। सम्पूर्ण जन और धन के साधनों का एकत्रीकरण किया गया। इस प्रकार वह ऐतिहासिक क्षण आया जबकि आजाद हिंद की अस्थायी सरकार स्थापित हुई और अपने मंत्रिमंडल तथा परामर्श दाताओं के साथ नेताजी सुभाषचन्द्र बोस राज्य के अध्यक्ष बने। आजाद हिन्द (यद्यपि अस्थायी) सरकार की २१ अक्टोबर १९४३ को स्थापना हुई। सिंगापुर के साथ सिनेमा भवन में पूर्वीय एशिया के भारतीय प्रतिनिधियों की सभा में पूर्ण सत्य निष्ठा के साथ अस्थायी आजाद हिंद सरकार की स्थापना तथा मंत्रीमंडल के सदस्यों के नामों की विधिवत घोषणा की गई। उस ऐतिहासिक अवसर पर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने राज्याध्यक्ष प्रधान मन्त्री, युद्ध मंत्री, विदेश मंत्री और भारत की राष्ट्रीय सेना के सर्वोच्च सेनाध्यक्ष के हस्ताक्षरों से एक उद्घोषणा निकाली। इसमें भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन का ब्रिटिश द्वारा भारत पर अधिकार स्थापित करने से उस समय का इतिहास दिया गया और यह बतलाया गया कि हम भारतीयों के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि हम भारत से बाहर एक अस्थायी सरकार स्थापित करें और उस सरकार के तत्वावधान में भारत की स्वतन्त्रता के अन्तिम युद्ध को लड़ें क्योंकि भारत के सभी नेता इस समय जेल में बन्द हैं इस कारण भारत में अस्थायी आजाद हिंद सरकार की स्थापना नहीं की जा सकती थी। उद्घोषणा का अन्त भारत में रहने वाले तथा भारत के बाहर भारतीयों से एक जोशीली अपील के साथ किया गया। 'ईश्वर के नाम पर उन हमारे पूर्वजों की पीढ़ियों के नाम पर जिन्होंने हम भारतीयों को एक राष्ट्र में ढाला और उन मृत वीरों के नाम पर जिन्होंने हम वीरता और बलिदान की परम्परा उत्तराधिकार में छोड़ी है कि आप सब भारत की अस्थायी सरकार के झंडे के नीचे इकट्ठे होकर भारत की स्वतन्त्रता के लिए शत्रु पर प्रहार करें। शत्रु पर प्रहार करने का यही उपयुक्त समय है इसमें तनिक भी देर नहीं की जा सकती। जापान ने २३ अक्टोबर को नव निर्मित आजाद हिंद सरकार को मान्यता प्रदान कर दी। अस्थायी आजाद हिंद सरकार ने उसी दिन मंत्री मंडल की बैठक में निर्णय किया और यूनाईटेड किंगडम तथा संयुक्त राज्य के विरुद्ध युद्ध की घोषणा २४ अक्टोबर १९४३ को १२ बज कर पन्द्रह मिनट पर कर दी गई। इसके उपरांत क्रमश: बरमा ने २४ अक्टोबर, क्रोएशिया ने २६ अक्टोबर, जरमनी ने २६ और चीन की राष्ट्रीय सरकार ने एक नवम्बर को, मंचूकाऊ ने भी उसी दिन, इटली ने ६ नवम्बर को, थायीलैंड ने १६ नवम्बर को

आजाद हिंद सरकार को मान्यता प्रदान कर दी। महान एशियाटिक राष्ट्रीय एसेम्बली का टोकियो मे ५ नवम्बर १६४३ को अधिवेशन आरम्भ हुआ। तोजो ने ७ नवम्बर को एसम्बली मे जापान ■ अदमन और नीकोबार द्वीपो को भारत को सुपुर्द कर देने के निर्णय की घोषणा कर दी। अधिवेशन की कार्यवाही के सम्बन्ध मे लम्बी चर्चा करने के उपरात नेताजी १८ नवम्बर को टोकियो से रवाना हो गए और २३ नवम्बर को सिंगापुर वापस लौटे। २६ दिसम्बर १६४३ को नेताजी अदमन द्वीप गए जहां जापानी ऐडमिरल ने उनका पोर्ट ब्लेयर पर स्वागत किया और दूसरे दिन उन्होंने जापान के प्रधान सेनाध्यक्ष से विचार विमर्श किया। उसके उपरात वे ऐतिहासिक सल्यूलर जेल जो भारत का बस्ट लाई था देखने गए। वहा की रोती हुई दीवारो ने निस्तब्ध आवाज में उन बन्दियो के अकथनीय कष्टो की गाथा तथा उनकी साउच साहसिकता दृढ साहस और दृढ भावना की उस खोज की कथा सुनाई जिसने वहा के अधिकारियो की नृशस क्रूरता को उसी प्रकार सहन किया जिस प्रकार वे प्राचीन चट्टानें युगो युगों से तेज वायु और लहरो के प्रहारों को सहन करती रही हैं।

दूसरे दिन ३० तारीख को नेताजी ने मुक्ति की गई भारत भूमि पर राष्ट्रीय ध्वज पहराया यह भारत में ब्रिटिश शासन के इतिहास मे सव प्रथम अपने ढग का काय था। शत्रु द्वारा पहले छीनी हुई भूमि को पुन उसके कब्जे से निकाल कर पुन अपने अधिकार में लेने की सभी औपचारिक रस्मे पूरी की गई। उस समारोह मे जो भी लोग एकत्रित हुए थे उन्होंने सहगान के साथ राष्ट्रीय गीत गया उसने उस अवसर की महान गम्भीरता को और भी बढ़ा दिया। रास द्वीप में स्थित अग्रेज चीफ कमिश्नर के निवास गृह के ऊपर उस दिन भारत का राष्ट्रीय ध्वज फहराया गया और वह दिन भर उस मकान पर चढ़ता रहा। नेताजी ने उस दिन यह आशा व्यक्त की थी, जो कि सत्य हुई कि एक दिन राष्ट्रीय ध्वज नई दिल्ली के वायसराय भवन पर भी फहरायगा। १६४४ के प्रथम चतुर्मास मे एक प्रेस इटरव्यू मे अदमान की पुन भारतीयो द्वारा प्राप्ति के महत्व पर बल देते हुए नेताजी ने कहा था —

इस भूभाग पर अपना अधिकार स्थापित कर लेने से अस्थायी सरकार नाम और वास्तविकता दोनो में ही एक राष्ट्रीय इकाई बन गई है। अदमान द्वीपो की मुक्ति इस कारण अत्यन्त सांकेतिक महत्व की है क्योंकि अग्रेजो ने अदमान द्वीप समूह का सदव भारत के राजनीतिक बदियो के लिए कारागार के रूप म उपयोग किया था। जिस प्रकार फासीसी की क्राति के समय मे पेरिस के बेस्टलाई जल को सव प्रथम मुक्त किया गया था और वहा के राजनीतिक कदियो को मुक्त कर दिया गया उसी प्रकार अदमान जहा हमारे देश भक्तो ने कष्ट झेले और आजीवन बन्दी रहे वह भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध मे सव प्रथम मुक्त हुआ। एक के बाद भारत का दूसरा भाग मुक्त होगा परतु जो भाग सव प्रथम मुक्त होता है उसका विशेष महत्व है।" शहीदो और बलिदानियों की स्मृति म अन्दमान द्वीप समूह का नाम शहीद" और नीकोबार द्वीप समूह का नाम नेताजी ने 'स्वराज्य' रक्खा। सुविधा की दृष्टि से ७ जनवरी १६४४ को अस्थायी आजाद हिंद सरकार का मुख्यालय बरमा मे ले जाया गया और मन्त्री मण्डल के प्रमुख सदस्य भी बरमा मे मुख्यालय के साथ ही आ गए। ४ फरवरी १६४४ को आजाद हिंद सेना ने भारत बरमा सीमा के समीप अराकान पर्वतीय प्रदेश पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। टौंग बाजार पर आजाद हिंद सेना ने उसी दिन अधिकार

कर लिया । कालादान क्षेत्र मे 'पैलाविन' पर एक मार्च को और स्वयं कालादान पर ५ मार्च को आजाद हिंद सेना का अधिकार हो गया। फोर्ट व्हाइट का ८ मार्च को हर लानाकाट का १२ मार्च को पतन हो गया। अब कनेडी की चोटी से भारत की पवित्र भूमि का हृदय उन विजयी वीरों की दृष्टि के सामने था। कनेडी पहाड़ियों पर आजाद हिंद सेना ने १८ मार्च १९४४ को अधिकार कर लिया और दूसरे दिन (१९ मार्च १९४४) भारत भूमि पर भारत का राष्ट्रीय ध्वज गाड़ दिया गया जो कि भारत सरकार के घेरे में उस समय भी ब्रटिश के अधिकार में था। अंदमान और नीकोबार द्वीप समूहों का शासन औपचारिक रूप से आजाद हिंद सरकार का १७ फरवरी १९४४ को हस्तान्तरित कर दिया गया। बिना किसी रुकावट तथा व्यवधान के आजाद हिंद सेना भारत में घुसने लगी। उसने २० मार्च को तामजान और २१ मार्च को उकरुल पर अधिकार कर लिया। विजयी आजाद हिंद सेना के बढ़ते हुए चरण २२ मार्च को टिडिडम और मोलोन पहुँच गए, वे उसके अधिकार में आ गए। २४ मार्च को 'सागाक' तथा ११ मार्च को 'मोरह' पर भी आजाद हिन्द सेना का अधिकार हो गया। एप्रिल के महीने मे भी आजाद हिन्द सेना आगे बढ़ती गई। ७क एप्रिल को उसका ताम्मू और 'कबाऊ पर अधिकार स्थापित हो गया और ५ एप्रिल को 'हुँगतान' का भी पतन हुआ तथा उसने उस पर भी अधिकार कर लिया। ६ एप्रिल को भयंकर युद्ध और कड़े प्रतिरोध के उपरांत 'कोहिमा' में भी बृटिश सेना ने आजाद हिन्द सेना के सामने हथियार डाल दिये और उसका भी पतन हो गया। अब आजाद हिंद सेना के लिए आगे बढ़ना सरल हो गया और उसने क्रमश ७ अप्रैल को 'बप्रानोंग्गी', १८ एप्रिल को 'मोयरांग' और २० एप्रिल को 'पलेटवा' और सेंगना पाल' पर अधिकार कर लिया। ७ मई १९४४ का वह चिरस्मरणीय दिवस था कि जब आजाद हिंद सेना के दूसरे अग ने दक्षिण की ओर से भारत बरमा की सीमा को पार कर लिया। २२ मार्च को जापान के प्रधान मंत्री तोजो ने जापान की 'डाइट' (पार्लियामेंट) मे भारत के विजित प्रदेशों के सम्बन्ध में नीचे लिखे शब्दो में जापान की सरकारी नीति को स्पष्ट किया।

"यह स्वाभाविक है कि भारत के अन्तर्गत उन सम्पूर्ण भूभागों को जिन पर आजाद हिन्द सेना कूच करती है अस्थायी आजाद हिन्द सरकार का पूर्ण शासन स्थापित हो। व पूर्ण रूप से अस्थायी आजाद हिंद सरकार के शासन में रख दिए जाय। ४ एप्रिल १९४४ को रेडियो द्वारा भारतीयों से आजाद हिन्द सरकार की सब प्रकार से सहायता करने की अपील की गई।" "भारत की एकमात्र विधि सम्मत सरकार जिसको केवल एक मिशन ही पूरा करना है–वह मिशन है भारत की पवित्र भूमि पर से बृटिश तथा अमेरिकन सेनाओं को सैनिक शक्ति द्वारा निकाल बाहर करना और तत्पश्चात स्वतंत्र भारत की स्थायी राष्ट्रीय सरकार का भारतीयों की इच्छा के अनुसार स्थापना करना।" ४ जुलाई १९४४ को अपने श्रोताओं को याद दिलाते हुए नेताजी ने कहा 'दूसरा मोर्चा' खोलने की मेरी शपथ को मैंने पूरा कर दिया है अब आप कमर कस कर जो काम आगे हमारे सामने है उसके लिए तैयार हो जाइये।" आगे नेताजी ने बोलते हुए कहा —

'आज हमारी केवल एक इच्छा होनी चाहिए कि हम मरें जिससे भारत जीवित रहे—एक शहीद की तरह मृत्यु का सामना करने की इच्छा जिससे कि स्वतन्त्रता का पथ शहीदों के रुधिर से प्लावित हो।" 'मित्रों और इस मुक्ति के युद्ध में मेरे साथियों

भाज मैं तुमसे अन्य सभी वस्तुओं को छोड़ कर केवल एक वस्तु मांगता हूं। मैं तुम्हारा रुधिर मागता हू। केवल रुधिर ही उस रुधिर का प्रतिशोध ले सकता है जो हमारे शत्रु ने बहाया है। केवल रुधिर से ही स्वतन्त्रता का मूल्य चुकाया जा सकता है। मुझे रुधिर दो और मैं तुम्हे स्वतन्त्रता देने का वचन देता हू।" अब आजाद हिन्द सेना के सामने एक भयकर अवरोध प्रकट हो गया जिसन उसकी गति को रोक दिया। साधन और आवास के अभाव में ग्रस्त आजाद हिन्द सेना के सैनिको पर मानसून की भयकर घोर गजन करती हुई वर्षा टूट पडी। इस प्राकृतिक कोप के कारण आजाद हिन्द सेना जिस कठिनाई का सामना कर रही थी उसमे और वृद्धि हो गई। सघन वन प्रदेश में मार्गों की कठिनाई प्रबन्ध और व्यवस्था की शोचनीय स्थिति तथा दूरदर्शिता की कमी के कारण युद्ध के अग्रिम मोर्चे के आधार स्थल पर युद्ध की आवश्यक सामग्री और अस्त्र शस्त्र की भारी कमी हो गई। युद्ध सामग्री आवश्यकतानुसार वहां नही पहुँच सकी। २२ जुलाई १९४४ से जापानी और आजाद हिन्द सेना को उस भारत बरमा सीमा प्रदेश को छोड़ कर पीछे हटना पड़ा। इस असफलता और विध्वस के कारणों को गिनाते हुए नेताजी ने १४ अगस्त १९४४ को अपनी सेना के समय भाषण देते हुए कहा कि हमे इस असफता से सबक लेना चाहिए। आगे उन्होने कहा–' इस वष माच महीने के मध्य आजाद हिन्द सेना की अग्रिम टुकडियो ने भारत बरमा सीमा को पार किया और तब भारत की स्वतन्त्रता का युद्ध भारत की भूमि पर आरम्भ हुआ।

"सभी तयारियां पूर्ण करली गई थी और इम्फाल पर अन्तिम आक्रमण करने के लिए सेना पूरी तरह तैयार हो चुकी थी उसी समय भयकर मूसलाधार वर्षा ने हम पर आक्रमण कर दिया और इम्फाल पर आक्रमण कर सकना असम्भव हो गया।

'उन देशभक्त वीर योद्धाओ की आत्मा जो इस युद्ध मे वीर गति को प्राप्त हुए हैं हमे भारत की मुक्ति के युद्ध के दूसरे चरण में वीरता और शौय के अभिजात कृत्यों को करने की प्रेरणा दे।" जब विध्वस की स्थिति सामने मुह बाए खड़ी थी तो १६ अक्टोबर १९४४ को एक युद्ध परिषद का गठन किया गया। २९ अक्टोबर को नेताजी टोकियो गए उसके परिणाम स्वरूप ५६ नवम्बर १९४४ को जापान से कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित हुए। जापान ने यह स्वीकार कर लिया कि आजाद हिन्द सेना पर जापानी सनिक कानून लागू नही होगा। आजाद हिन्द सना केवल अपने कठोर अनुशासन दण्ड विधान स ही शासित होगी।

अन्तिम दौर

१९४५ के नव वर्षारम्भ के दिवस पर आजाद हिन्द सेना के अपने सैनिक साथियों के सामने भाषण करते हुए नेताजी ने उनकी पिछली सफलताओं तथा प्रशसनीय वीरतापूर्ण कार्यों की याद दिलाते हुए वष के लिए नीचे लिखे शब्दो में एक नया नारा दिया। वीर साथियों हमारे अमर वीरो ने भारत की स्वतन्त्रता के मूल्य को अपने रुधिर से चुकाया है। हमको उनके लिए गौरव अनुभव होता है। परन्तु हमे भी उस सर्वोच्च बलिदान के लिए तैयार रहना चाहिए। आजाद हिन्द सेना तभी अपने नाम को चरिताथ करेगी जबकि वह अपने अन्तिम सनिक तक युद्ध करने और मृत्यु का आलिंगन करने को तयार हो। हम अपना रुधिर देना होगा और अपने शत्रुओ का रुधिर बहाना होगा। अतएव १९४५ के वष के लिए तुम्हारा नारा और युद्ध घोष होना चाहिए "रुधिर, रुधिर, रुधिर।"

१४ दिसम्बर को नेताजी मलाया वापस लौटे और १२ जनवरी, १६४५ को शीघ्रता पूर्वक उन्होंने बरमा की ओर प्रस्थान किया। १८ फरवरी १६४५ को वे रंगून से युद्ध के मोर्चे पर गए। आजाद हिन्द सेना के ऊपर जो विनाश एक भयानक महा प्रपात की भांति उतर रहा था उस प्रलयकारी ज्वार को रोकने के लिए कुछ भी कर सकना अब सम्भव नहीं था। २५ फरवरी, १६४५ को जो समाचार मिले वे वास्तव में अत्यन्त चिन्ताजनक थे। सभी मोर्चों पर जापानी तथा आजाद हिन्द सेना को पीछे हटना पड़ा था। जब नेताजी को उनके जनरलों ने स्वयं अपने को भयंकर खतरे में झोंकने से मना किया तो नेताजी ने हँस कर कहा इंगलैंड ने ऐसा कोई बम नहीं बनाया जो मुझे मार सके।' अब वह समय आ गया जब कि नेताजी को अपनी युद्धरत सेना से विदा लेना था। उन्होंने अपनी सेना से २४ अप्रिल १६४५ को विदा ली और उनके लिए एक संदेश छोड़ गए जो उनके हृदय के गहन तल से निकला था। 'आजाद हिन्द सेना के वीर जवानो और अधिकारियो! मैं भारी हृदय से बरमा को छोड़ रहा हूँ। यह वह भूमि है जहां तुमने फरवरी, १६४४ से अनेक वीरता पूर्ण युद्ध किए और आज भी युद्ध कर रहे हो।

साथियो! इस संकट की घड़ी में मेरे पास केवल आपको आदेश देने के लिए एक ही शब्द है। वह यह है कि यदि आपको अस्थायी रूप से थोड़े समय के लिए नत होना है तो बहादुरों की भांति नत होइए। अपनी इज्जत और अनुशासन के चरम उत्कर्ष को लेकर नत होइए। भारत की भावी पीढ़ियाँ जो कि तुम्हारे अभूतपूर्व और प्रचण्ड बलिदान के फल स्वरूप दासता में जन्म न लेकर स्वतन्त्र भारतीय के रूप में जन्म लेंगी तुम्हारे नाम को कृतज्ञता से याद करेंगी और विश्व को गौरव के साथ सर ऊँचा करके बतलावेंगी कि तुमने—उनके अग्रजों ने—स्वतन्त्रता के लिए युद्ध लड़ा था और मणीपुर, असम और बरमा के युद्धों को हार गए थे परन्तु उस अस्थायी असफलता से तुमने अन्तिम सफलता और गौरव श्री के मार्ग को प्रशस्त कर दिया था। जहां तक मेरा प्रश्न है मैं उस शपथ को दृढ़ता से अपने मन में पोषित करता रहूँगा जो मैंने २१ अक्टोबर १६४३ को ली थी कि मैं अपने ३८ करोड़ देश वासियों के हितों की सेवा यथा शक्ति करूंगा और उनको दासता से मुक्त करने के लिए युद्ध करूंगा। उपसंहार करते हुए अन्त में मैं आप सबों से अपील करूंगा कि मेरी तरह आप भी आशावादी बनें और इस बात का विश्वास करें कि प्रात:काल के प्रकाश के पूर्व सबसे अधिक गहन अन्धकार के क्षण आते हैं। भारत अवश्य ही स्वतन्त्र होगा—और शीघ्र स्वतन्त्र होगा उसके स्वतन्त्र होने में अधिक देरी नहीं है।

इनकलाब जिन्दाबाद - जयहिन्द!

अब ऐसा प्रतीत होने लगा कि मानो सब कुछ समाप्त हो गया। २७ फरवरी, १६४५ को जो निर्णय लिया गया था कि पाइनमाना की अन्त तक रक्षा की जावे सम्भव नहीं हो सका। चारों ओर से युद्ध क्षेत्रों से जापान की पराजय के समाचार आ रहे थे। अतएव आजाद हिन्द सेना के युद्ध करते हुए अन्तिम अविशेष घटकों ने पीगू में १३ मई, १६४५ को आत्म समर्पण कर दिया। अपने परामर्श दाताओं की परिषद की सलाह से २४ अप्रेल, १६४५ को नेताजी ने रंगून छोड़ दिया और सप्ताह के अन्त में ३ मई को रंगून ने शत्रुओं के सामने आत्म समर्पण कर दिया। जापान के साथ नेताजी के घनिष्ठ सम्बन्धों को लेकर भारत में एक वर्ग ऐसा था जिसके लिए ब्रिटेन का युद्ध

प्रचार [redacted] वाक्य के समान पवित्र तथा मान्य था वस्तुतः वे नेताजी के जापान से घनिष्ट सम्बन्धों को लेकर उनकी आलोचना करते थे। २५ जून, १९४५ को नेताजी ने सम्पूर्ण विश्व के लिए एक घोषणा प्रसारित की।

'मैं निपन (जापान) से सहायता लेने के लिए लज्जित नहीं हूँ निपन (जापान) ने भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता को मान्य किया था और अस्थायी आजाद हिन्द सरकार को उसने औपचारिक मान्यता प्रदान की थी उस आधार पर मैं निपन से सहायता लेने के लिए तनिक भी लज्जित नहीं हूँ।" भारत की राष्ट्रीय सेना के विधान स्वरूप और स्वरूप की व्याख्या करते हुए नेताजी ने कहा —निपन (जापान) में हम भारत की राष्ट्रीय सेना का संगठन करने के लिए जो कि ऊपर से लेकर नीचे तक शुद्ध भारतीय है अस्त्र शस्त्र दिए इस आजाद हिन्द सेना का प्रशिक्षण भारतीय शिक्षकों ने भारतीय भाषा में किया है। यह सेना भारत का राष्ट्रीय ध्वज लेकर चलती है उसके नारे भारत के राष्ट्रीय नारे हैं। इस सेना के स्वयं अपने भारतीय उच्च सैनिक अधिकारी हैं और स्वयं अपने अधिकारी प्रशिक्षण स्कूल हैं जो एक मात्र भारतीयों द्वारा संचालित हैं और रणभूमि में यह सेना अपने निज के भारतीय सेनापतियों की आधीनता में युद्ध करती है उनमें से कुछ जनरल की श्रेणी तक पहुँच गए हैं। यदि कोई व्यक्ति कठपुतली सेना की बात करता है तो ब्रिटिश भारतीय सेना को एक कठपुतली सेना कहना ठीक होगा क्योंकि वह सेना ब्रिटिश सैनिक अधिकारियों की आधीनता में ब्रिटिश साम्राज्य वादी युद्ध लड़ रही है।'

एक समान परिस्थिति से तुलना करते हुए नेताजी ने अपनी नीति का औचित्य बतलाते हुए कहा—"मैं निपन (जापान) से सहायता लेने के लिए लज्जित नहीं हूँ। मैं आगे बढ़ कर यह कहना चाहता हूँ कि जबकि पहले का महान शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य अपने घुटनों के बल भिक्षा पात्र लेकर संयुक्त राज्य अमेरिका से सहायता प्राप्त करने के लिए जा सकता है तब कोई कारण नहीं है कि हम जो गुलाम और निशस्त्र राष्ट्र हैं अपने मित्र राष्ट्रों से सहायता न लें।" नेताजी ने निर्भीकता से कहा कि उनके काम पर इतिहास की स्वीकृत मुहर है। मुझे अत्यन्त हर्ष होता, 'यदि मैं बिना विदेशी सहायता के अपना काम चला सकता। लेकिन मुझे इतिहास में एक भी ऐसा उदाहरण खोजना है कि एक गुलाम राष्ट्र ने बिना विदेशी सहायता के अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त की हो। परतन्त्र भारत के लिए यह अधिक सम्मान और प्रतिष्ठा की बात है कि वह ब्रिटिश साम्राज्य के पोषक ब्रिटिश राजनीतिक दलों के नेताओं के अनुग्रह के लिए प्रयत्न करने के बजाय ब्रिटिश साम्राज्य के शत्रुओं से हाथ मिलाए।' नेताजी को अपने में असीम आत्म विश्वास था। उन्होंने अपने आलोचकों को करारा उत्तर देते हुए कहा कि जापान द्वारा दुरंगी नीति के दोषारोपण के प्रति वे पूरी तरह जागरूक हैं। उन्होंने एक रक्षा कवच के सम्बन्ध में अच्छी तरह सोच लिया है और अपने साथियों को प्रदान कर दिया है। उन्होंने कहा —

'क्या आप लोग इस पर विश्वास करेंगे कि मुझमें इतनी बुद्धि है कि वे मुझे मूर्ख नहीं बना सकते ? तब मेरे शब्दों पर विश्वास करिए जब मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि जापानी हमें धोखा नहीं दे सकते। वे यह तभी कर सकते हैं कि जब हम अपनी स्वतन्त्रता [redacted] युद्ध को लड़ने के लिए एक अच्छी भारतीय सेना खड़ी करने में असफल हो जाते। हमको जागरूक, सतर्क और सावधान रहना होगा। हमें केवल अपने

ु अर्थात ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध ही नही वरन् हमें साम्राज्यवादी दृष्टिकोण
ने वाले जापानी अधिकार वर्गियों और उस प्रकार के भारतीयों से भी सावधान और
क रहना होगा। अनुशासन के साथ हमें प्रत्येक बलिदान के लिए तैयार रहना
हिए। प्रत्येक व्यक्ति काय करने के लिए तैयार रहे। काय काय काय ही तुम्हारा
र मेरा एक मात्र भार है।"

नेताजी इसके उपरान्त श्याम गए। उन्हें तथा उनके साथ थोड़े आजाद हिन्द
ना के अधिकारी तथा सनिकों को शत्रु की न रुकने वाली बम वर्षा के कारण अकथनीय
ठिनाइयों तथा खतरों में से होकर गुजरना पड़ा। अपने साथ जाने वाले साथियों की
नजी देखभाल तथा उनकी कठिनाइयों और कष्टों को उनके साथ रहकर स्वयं झेलने
फल स्वरूप उनकी कठिनाइयों और दुखों को उन्होंने बहुत कुछ कम कर दिया। अपने
वा काल में व अपने छोटे से छोटे स्वय सेवक की तथा सहकर्मी की स्वय अपने लिए
शेष सुविधाओं को अस्वीकार कर जसी देख भाल करते थे उनकी वह प्रवत्ति इन कष्ट
ौर जोखिम भरे क्षणों में भी उनसे केवल छूटी ही नहीं वरन उस समय वह अपनी
रम उत्तमता के साथ प्रगट हुई जब वे इस सकट के क्षणों में कूच कर रहे थे। कोई
ो काय उनके लिए नीचा नहीं था। जब मोटर का पहिया दल दल या कीचड में फस
जाता तो वे उसको स्वय निकालने में भी नही हिचकिचाते थे। यदि कोई औषधि जो
उस समय कम राशि म उपलब्धी थी उन्हें और एक साधारण सैनिक को एक साथ
एक ही समय चाहिए होती तो वह निश्चित रूप से सनिक को ही दी जाती थी। उनके
साथियों को उन कष्टों निराशा और अधकार क क्षणों मे भी उनके साथ रहने में
एक आन्तरिक आनन्द का अनुभव होता था।

नेताजी मीलमीन के मार्ग से १५ मई को बैंगकाक पहुचे। ८ जुलाई को
सिंगापुर मे उन वीर शहीदों की स्मृति म जो वीर गति को प्राप्त हुए थे स्मारक की
आधार शिला रखकर वे मलाया गए और पुन १३ अगस्त, १९४५ को वे सिंगापुर
वापस लौटे। इसके उपरान्त भारत सरकार व नेताजी की जो कथा जनता के समक्ष
उपस्थित की उसको सभी लोग स्वीकार नही करते हैं। उस कहानी के अनुसार नेताजी
१७ अगस्त को बैंगकाक से एक हवाई जहाज म रवाना हुए और उसी दिन सायकाल
को फ्रेंच कम्बोडिया म 'तोरेन' पहुच गए। दूसरे दिन वे फारमोसा के तहाकू हवाई
अड्डे पर मध्याह्न उपरान्त दो बजे पहुचे। आध घन्टे के उपरान्त व पुन व युआन मे
चढ़े जिसका गन्तव्य स्थान क्या था किसी को ठीक-ठीक ज्ञात नही है। किसी को भी
यह नहीं बतलाया गया कि विमान चालक को क्या निर्देशन था। जब कि विमान जो
अधिक ऊचा नहीं पहुचा था तभी वह विमान जो बाम्बर (बम फेंकने वाला) था उसमे
आग लग गई नेताजी बुरी तरह स जल गए। इसके अतिरिक्त उनके सर में गहरी चोट
लगी थी। उन्हें समीप के सैनिक अस्पताल मे ले जाया गया जहा उनकी १८ अगस्त
को रात्रि के आठ और नौ बजे के बीच मृत्यु हो गई।

इसके विरुद्ध दूसरा मत यह है कि नेताजी का फारमोसा जाने का विचार कभी
नहीं हो सकता था क्योंकि उन्हें कभी उस देश म जाने का अवसर ही नहीं हुआ और न
उनके मन म वहा स सहायता आश्रय, अथवा इस प्रकार की अन्य कोई सहायता पाने
की कल्पना ही थी। स्वय नेताजी की सहमति से यह उस योजना और व्यवस्था का
एक अंग मात्र था कि विश्व को उनके सम्बन्ध मे गलत जानकारी दी जावे। वे [illegible] भी

अपनी शक्ति को निरन्तर बढ़ाते रहने के लिए काम में लाना पड़ता है। जब तक कि क्रान्ति का लक्ष्य (स्वतन्त्रता) प्राप्त न हो जावे। उनमें से कतिपय घटनाओं का लेखा, यहां प्रस्तुत किया गया है —

विश्वासघातों का पुरस्कार

जिन व्यक्तियों ने दल के उद्देश्यों के प्रति विश्वासघात किया उन के सदस्यों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही का यह प्रथम कार्य था। सुकुमार चक्रवर्ती पहले 'अनुशीलन समिति' से कुछ समय तक सम्बंधित रहने के कारण गिरफ्तार कर लिया गया था। अपना छुटकारा कराने के उद्देश्य से उसने कतिपय नेताओं को फंसाने तथा दल के संगठन के कुछ रहस्यों को बतलाते हुए एक बयान दिया। सुकुमार जमानत पर छोड़ दिया गया। बहुत शीघ्र वह लापता हो गया और यह पता न चल सका कि वह कहां चला गया। बाद को यह पता चला कि वह आगे और अधिक दुष्टता न कर सके, इसलिए उसकी १४ नवम्बर १९०८ को ढाका के रमना स्थान पर हत्या कर दी गई और उसके शव को गुप्त रूप से ठिकाने लगा दिया गया।

जो खतरनाक रास्ते पर चल रहे थे

नवम्बर १९०८ में केशवचन्द्र-डे और आनन्द प्रसाद घोष जो पहले क्रान्तिकारी संगठन के सदस्य थे वे समिति के साथी सदस्यों द्वारा ढाका में मार डाले गए क्योंकि उनकी गतिविधियों और पुलिस से घनिष्ट सम्पर्क ने उन सदस्यों के मस्तिष्क में गम्भीर संदेह उत्पन्न कर दिया था कि जो क्रान्तिकारी संगठन की भलाई और उसके सदस्यों की सुरक्षा में रुचि रखते थे।

दूसरे के पाप के लिए

क्रान्तिकारी प्रतिहिंसा कभी कभी औचित्य की सीमा का भी उल्लंघन कर जाती थी। प्रारम्भिक काल में जब सरकार तथा भारतीय उग्र राष्ट्रवाद को आमने सामने टक्कर था उस समय एक ऐसी घटना घटी जिसने उन व्यक्तियों के मस्तिष्क में भी खेद की रेखा खींच दी जो उस कृत्य के लिए उत्तरदायी थे। डकैती के मामले में एक निर्बल मन का आदमी जब गिरफ्तार हुआ तो उसने फरीदपुर के जिलाधीश के सामने एक बयान देकर बहुत से व्यक्तियों को फंसा दिया उनमें कुछ नितान्त निर्दोष व्यक्ति थे। ढाका में जन्माष्टमी को छुरा भोंकने के मुकदमे में भी उसने पुलिस की सहायता की और इस आचरण के कारण उसने अपने को क्रान्तिकारियों के आक्रमण का लक्ष्य बना लिया।

४ जून १९०९ को आक्रमणकारी दोषी व्यक्ति के मकान पर गए और भूल से उन्होंने उसके भाई प्रियोनाथ चटर्जी जो कि केवल सोलह वर्ष की आयु का बालक था और बारीसाल के ब्रजमोहन कालेज का छात्र था, मार दिया। वास्तविक दोषी प्रियो का भाई निकल भागने में सफल हो गया।

एक गवाह का भाग्य

ढाका षड्यन्त्र तथा मुन्शीगंज बम के मुकदमे में पुलिस ने मनमोहन दे से एक अत्यन्त उपयोगी साक्षी प्राप्त कर लिया था और उसकी साक्षी अभियुक्तों के बहुत विरुद्ध जा रही थी। अस्तु यह उचित और आवश्यक समझा गया कि उसको और अधिक शैतानी करने से रोक दिया जाय। इसके लिए एक अत्यन्त साहसिक कदम उसके घर में ही उसको मार देने का कदम उठाया गया। १९ अप्रैल, १९११ को लगभग रात्रि के

ग्यारह बजे जब कि मनमोहन अपने कक्ष में सो रहा था कुछ व्यक्तियों ने उसको बाहर से नाम लेकर पुकारा, मनमोहन को सदेह हो गया और उसने दरवाजा नहीं खोला। इस पर तीन व्यक्ति जो कि हरीकेन लालटेन लेकर आए थे उन्होंने कुल्हाड़ी से दरवाजे को खोल दिया, वे मनमोहन के कक्ष मे दौड़ कर गए और उसको उसके बिस्तर में ही उसकी पत्नी और बच्चों के सामने रिवाल्वर से मार दिया। उसको तीन गोलियां लगी। एक गोली उसके वक्ष को चीर कर निकल गई। आक्रमण कारी दोषी व्यक्तियो का कोई पता नही चला वे गिरफ्तार न हो सके।

अनुशासनात्मक हत्या

दल को छोड़ देना यद्यपि बहुत बुरा माना जाता था परन्तु उसको सहन कर लिया जाता था, परन्तु विश्वासघात को किसी दशा में भी सहन नहीं किया जाता था। शारद चक्रवर्ती नोआखली जिले के फेनी स्थान के क्रान्तिकारी दल का सदस्य था। दल के लिए उसकी घातक कार्यवाहियों के लिए उसके विरुद्ध कार्यवाही करना आवश्यक समझा गया। जून १९१२ के महीने मे वह मरा हुआ पाया गया। यह पता न चला सका कि उसको मारने वाला कौन था। यह हत्या अत्यन्त वीभत्स थी। उसका शीश उसके शरीर से काट कर पृथक कर दिया गया था और सिर को बहुत दूरी पर एक तालाब मे फेंक दिया गया जिससे वह पहचाना न जा सके। उसको अनुशीलन समिति के लिए आवश्यक अनुशासनात्मक हत्या की सजा दी गई।

संदेह पर

एक तरुण पर यह सदेह हो गया कि उसने अपने नेता के सम्बन्ध में पुलिस को सूचना दी जिसके कारण उसका (नेता) गिरफ्तार कर लिया गया। सुकुमार चक्रवर्ती जो चन्दरफून का रहने वाला था, ११ फरवरी, १९१२ को ढाका से पुलिस के सर्वोच्च अधिकारी से दूसरे दिन अर्थात १३ फरवरी को मिलने चला। उसी दिन मृत शरीर अत्यन्त छिन्न भिन्न दशा में एक अत्यन्त सुनसान स्थान मे पड़ा मिला।

आयातित आक्रमणकारी

सरकार ने संदेहास्पद क्रान्तिकारियों तथा उन व्यक्तियों के विरुद्ध जो कि उग्र विचारों के राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं से सहानुभूति रखते थे अभियोगों की एक माला ही (अर्थात अनेक अभियोग) आरम्भ कर दी। मनमोहन घोष क्रान्तिकारियों तथा अन्य राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं के सम्बन्ध में गुप्त जानकारी प्राप्त करने तथा अभियोजकों की सहायता करने के लिए अत्यन्त उपयोगी पुलिस के एजेन्ट तथा भेदिये का कार्य कर रहा था। जैसा कि बाद को पता चला कि ११ दिसम्बर १९१३ को उन लोगों ने जो ढाका से बारीसाल घटना स्थल पर आए थे—उन्होंने स्थानीय लड़कों की सहायता से उसको मार डाला। मनमोहन के लापता हो जाने का तब तक रहस्य ही बना रहा जब तक कि बारीसाल में एक षडयन्त्र के अभियोग में भेदी साक्षी (एप्रूवर) ने इस तथ्य को अपनी साक्षी मे नहीं बतलाया।

स्वयं अपने जाल में

नवम्बर १९१२ में एक स्वर्णकार के मकान में कतिपय युवक गिरफ्तार किए गए। उनके विरुद्ध आरोप था कि उनके पास रिवाल्वर तथा अन्य ऐसे उपकरण तथा औजार थे कि जो साधारणतया डकैतियों में काम आते थे। जो चौदह अभियुक्त गिरफ्तार हुए थे उनमें देवेन्द्र नाथ घोष भी एक अभियुक्त था। वह स्थानीय मुखबिर की

अदालत के एक वरिष्ठ प्लीडर (वकील) का पुत्र था। पुलिस उसको प्रभावित करने में सफल हो गई। उसने अपराध अंगीकार करते हुए एक बयान दे दिया जो अन्य सभी अभियुक्तों के हितों के लिए अत्यन्त घातक था। १४ जनवरी १९१३ को देवेन्द्र कोमिल्ला शहर के एक एकान्त मार्ग से जा रहा था कि तीन या चार व्यक्तियों ने उस पर अकस्मात आक्रमण कर दिया और उनमें परस्पर संघर्ष हुआ जिसे एक राहगीर ने एक सुरक्षित स्थान से देखा। उसने देखा कि एक आक्रमणकारी ने रिवाल्वर निकाला—देवेन्द्र को गोली मार कर घटना स्थल पर ही मार दिया और चुपचाप भाग कर गायब हो गया।

गलत पहचान

जो प्रहार एक पुलिस के भेदिए पर होना था वह एक निर्दोष व्यक्ति पर हुआ इसका केवल मात्र कारण यह था कि वह उस व्यक्ति के साथ रहता था कि जो क्रान्तिकारियों का लक्ष्य था। १९ जून १९१४ को आठ बजे रात्रि को सदर घाट सड़क पर ढालाघाट' के सत्येन्द्र नाथ सेन को गोली से मार दिया गया। वह ढाका षड्यन्त्र अभियोग के भेदी साक्षी (एप्रूवर) के साथ टहल कर अपने मकान की ओर लौट रहा था। भेदी साक्षी (एप्रूवर) क्रान्तिकारी दल की घृणा और रोष का शिकार था। भेदी साक्षी का अन्त करना दोषी था इस कारण वह सदैव चौकन्ना और सावधान रहता था उसने दूर पर किसी के पैरों की आहट सुनी। उसने घूम कर देखा तो एक व्यक्ति को अपनी पीठ पर पीछे से रिवाल्वर से निशाना लगाते पाया वह तुरन्त बैठ गया और इस प्रकार आघात से बच गया जबकि गोली सत्येन के लगी और वह तुरन्त मर गया।

नेता की आज्ञा से

एक अत्यन्त सीधा और साधारण व्यक्ति अकस्मात अत्यन्त सक्रिय हो उठा और ढाका के राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं के बहुत निकट आने की चेष्ठा करने लगा क्रान्तिकारियों को उस पर सन्देह हो गया कि वह डिप्टी सुपरिटेंडेंट बसन्तकुमार चटर्जी के पूर्ण प्रभाव में है। ढाका शहर के मध्य १९ जुलाई १९१४ को जब 'रामदास' पुलिस का भेदिया सायंकाल वकनड बन्द पर टहल रहा था उसे गोली से मार दिया गया। जैसा कि उस समय ऐसी घटनाओं में बहुधा हुआ आक्रमणकारी बच कर निकल भागने में सफल हो गया। यही नहीं कि वह उस समय गिरफ्तार नहीं हुआ वरन भविष्य में भी गिरफ्तार नहीं हुआ।

अप्रकट व्यवस्था

श्री आखली का शिरीशचन्द्र राय चौधरी जो औसत छात्र की आयु से बहुत बड़ा था ६ जनवरी १९१५ को पच्चीस वर्ष की आयु में राजकुमार जुबली स्कूली से मैट्रिक्यूलेशन परीक्षा में परीक्षार्थी के रूप में बैठने के लिए भेजा गया। इसी समय उसको रिषर पुलिस सब इंसपेक्टर के लिए सरकार ने मनोनीत कर दिया क्योंकि उसने सरकार की प्रशंसनीय सेवाएं की थी और परीक्षा के उपरान्त वह पुलिस ट्रेनिंग स्कूल में थानेदारी का प्रशिक्षण लेने के लिए प्रविष्ट होने वाला था। मैट्रिक की परीक्षा देना सम्भवतः थानेदार के पद के लिए अनिवार्य आवश्यक शैक्षणिक योग्यता होगी। दस जनवरी को प्रातःकाल ६ बजे जब कि जाड़ा में झुटपुटा होता है उसको कुछ व्यक्तियों ने बाहर बुलाया। उन व्यक्तियों को पहचाना नहीं जा सका कि वे कौन थे। अपने घर से आधे मील की दूरी पर वह मरा हुआ पड़ा मिला।

प्रातः काल तड़के एक के बाद दूसरी तीन गोलियों के चलने की आवाज़ के कारण स्थानीय व्यक्ति घटना स्थल पर आए। उन्होंने एक व्यक्ति को उसके शरीर पर अनेक स्थानों पर गोली के लगे घावों से मरा पड़ा देखा। एक गोली गर्दन के पीछे से निकल गई थी और दो अन्य गोलियां उसकी दाहिनी और बाईं भुजा के अग्र भाग को फाड़ कर निकली थीं। उसका रैपर जो वह ओढ़े था और कोट में जलने के जगह–जगह निशान थे उससे यह प्रतीत होता था कि गोलियां बहुत पास से मारी गईं। इस घटना के सम्बन्ध में कोई गिरफ्तारी नहीं हुई।

अवाच्छिन्न कार्य

राष्ट्रीयता की भावना से कोमिल्ला जिला स्कूल के छात्र भी नहीं बच सके। इस स्कूल के हैड मास्टर शरतचन्द्र बोस जो अंग्रेजी सरकार के अनन्य भक्त थे उनके विचार छात्रों तथा स्थानीय जनता के विचारों से तनिक भी मेल नहीं खाते थे। जनवरी १९१५ के आरम्भ में एक विज्ञप्ति 'राजभक्ति और ऐम्यूलस कोर्स' शीर्षक से स्कूल के छात्रों तथा अध्यापकों के पास भेजी गई। हैड मास्टर के विचार से वह विज्ञप्ति अत्यन्त राजद्रोह पूर्ण थी। वह केवल अपने विचार व्यक्त करके ही चुप नहीं रहे वरन उन्होंने उस विज्ञप्ति को पुलिस को भेज दिया और दो छात्रों के बारे में रिपोर्ट कर दी जिनका उनकी सम्मति में विज्ञप्ति को बांटने में हाथ था। ३ मार्च १९१५ को जब हैड मास्टर शरतचन्द्र बोस ६ बजे सायंकाल अपने मकान की ओर आ रहे थे तब युसुफ स्कूल के सामने 'नतुआ दिग्गी' के उत्तरी तट पर सार्वजनिक मार्ग पर तीन व्यक्तियों द्वारा जो साइकिलों पर आ रहे थे उन्हें गोली से मार दिया गया। उनके नौकर को भी बन्दूक की गोली से घाव लगे जिनके परिणाम स्वरूप कुछ दिनों के बाद उसकी भी मृत्यु हो गई।

अपने पुत्र के पाप के लिए

"अमरपारा" में २ अगस्त १९१५ को जो राजनीतिक डकैती डाली गई थी उसके अभियोग में सोलह वर्ष के एक बालक को साक्षी के रूप में पुलिस ने उपस्थित किया। उस लड़के को अपने कृत्य के कारण उसके लिए खतरा हो सकता था उसको चेतावनी दे दी गई थी। २५ अगस्त १९१५ को उत्तम वस्त्र धारण किए हुए एक युवक रात्रि के दस बजे उसके मकान पर आया और मुरारी मोहन मित्र उस लड़के के पिता को पुकारा। उससे कहा कि वह एक अत्यन्त आवश्यक कार्य के लिए बाहर आ जावे मुरारी मोहन मित्र एक बच्चे को गोद में लिए हुए बाहर निकले और आगन्तुक ने लगभग आधे दर्जन बार उन पर गोली चलाई। मुरारी वहीं मर कर गिर पड़े। बच्चे के भी थोड़ी चोट आई पर वह गम्भीर नहीं थी हल्की थी। आक्रमणकारी गोली मार कर बरकपुर ट्रंक रोड की ओर भागा जहां एक मोटर कार और उसके कुछ मित्र उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जबकि क्रान्तिकारियों का वह दल भागने ही वाला था कि दो कान्स्टेबिलों ने जो कि वहां मौजूद थे उन्हें रोकना चाहा। परिणाम यह हुआ कि उन दोनों पुलिसमनों को भी गोली मार कर घायल अवस्था में सड़क पर छोड़ कर वे चले गए। कोई गिरफ्तारी नहीं हो सकी।

मित्र भी नहीं बख्शे गए

ऐसे साथी जिन्होंने उल्लेखनीय सेवा की थी और कष्ट सहा था—भी नहीं बख्शे गए जब यह स्पष्ट हो गया कि वे दल के हितों के विरुद्ध कार्य कर रहे हैं। एक

पच्चीस वर्ष का युवक जो कि बजीतपुर डकैती अभियोग में पकड़ा जाकर एक वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड भुगत चुका था। १६ नवम्बर १९१५ को सात बजे सायकाल बगला बाजार सडक पर जहाँ वह प्रतापचन्द्र लेन से मिलती है गोली से मार डाला गया। बसन्तकुमार भट्टाचार्य के रिवाल्वर की चार गोलियां जिनमें एक उसकी छाती के बायें वक्षस्थल पर घुस गई और दूसरी उसके दाहिने कंधे के पीछे पीठ को चीरती हुई निकल गई। गोली का शिकार बसन्तकुमार भट्टाचार्य एक स्थानीय स्टीमर कम्पनी में प्रोवेशनर था उसके सम्बन्ध में दल को यह सन्देह हो गया कि वह अपने गत कष्टों के इतिहास को भूल गया और अपने पुराने साथियों का विश्वास भाजन बने रहने की अपेक्षा वह पुलिस का विश्वास भाजन बनना अधिक लाभदायक समझने लगा था।

देशद्रोही का भाग्य

यद्यपि पुलिस कर्मचारियों की ओर से क्रान्तिकारियों ने अपना ध्यान नहीं हटाया परन्तु उनके एजेन्टों को भी उस काल में देश की स्वतन्त्रता के योद्धाओं के साथ बहुत बुरे दिनों का सामना करना पड रहा था। बंगाल के सभी जिलों में ममनसिंह ने इस सम्बन्ध में विशेष प्रसिद्ध प्राप्त कर ली। विशेषकर प्रथम विश्व युद्ध के दिनों में वहाँ अनेक घटनाएं घटी थी। वीरेन्द्र (देवेन्द्र) नाथ विश्वास नामक युवक अपनी तरुणाई के प्रथम उत्साह में और बिना यथोचित प्रशिक्षण लिए बीजापुर के क्रांतिकारी दल में सम्मिलित हो गया। बाद को अपने अन्तर्निहित स्वभाव वश वह पुलिस के पास जाने लगा और उनके गुप्तचर तथा भेदिए का काम करने लगा। १९ दिसम्बर १९१५ को मैमनसिंह में सासर डिग्घी में वह मार डाला गया। यह पता नहीं चल सका कि मारने वाला कौन था। उस समय की प्रायः इस प्रकार घटनाओं की भांति इसका भी कोई पता नहीं लग सका और न अपराधी पकडा जा सका।

समान भाग्य

मैमनसिंह के क्रांतिकारी दल के नेताओं को यह ज्ञात हुआ कि ससी (सरसी) चक्रवर्ती दोहरी चाल चल रहा है। अर्थात दल में सम्मिलित होकर पुलिस के भेदिए का का काम करता है। अतएव यह आवश्यक हो गया कि उसके द्वारा सरकार को जो मूल्यवान सहायता मिल रही है उससे सरकार को वंचित कर दिया जाय। कुछ कार्यकर्ताओं को यह आज्ञा दी गई कि उसको प्रथम अवसर मिलते ही मार दिया जाय। १९ जनवरी, १९१६ को आदेश का पालन किया गया और उसको ममनसिंह जिले के बजीतपुर स्थान पर मार दिया गया।

द्वितीय हैडमास्टर

एक अध्यापक अपने कर्तव्य की ओर से उदासीन रह कर अपने छात्रों के राजनीतिक विचारों तथा कार्यों की ओर अधिक रुचि प्रदर्शित करने लगा, उसका परिणाम यह हुआ कि अपने इस अविवेकता पूर्ण कार्य का दण्ड मृत्यु से चुकाना पड़ा। मलदा जिला स्कूल का हैडमास्टर नवीन चन्द्र बसु स्थानीय क्रान्तिकारियों में अत्यन्त अप्रिय हो गया क्योंकि वह अपने छात्रों की देश भक्ति को भावनाओं को दबाने में सरकार की निरन्तर सहायता करता था। सर्वप्रथम वह जमालपुर में सरकारी सहायता प्राप्त एक अंग्रेजी हाई स्कूल का हैड मास्टर बन कर आया। १९१० में उसने ढाका षडयन्त्र अभियोग में साक्षी दी जिसमें अनेक युवकों को सजा हुई। १९११ में उसने अपने स्वय के विद्यार्थी के विरुद्ध गवाही दी जिस पर बुरे तरीके से जीवन यापन करने का आरोप

था। क्रान्तिकारियों को गिरफ्तार करने के लिए और उन पर अभियोग चलाने के लिए दण्ड प्रक्रिया संहिता (क्रिमिनिल प्रोसीजर कोड) की यह धारा अत्यन्त सुविधा जनक थी। १५ जुलाई, १९११ को समस्त जमालपुर कस्बे में उसकी निन्दा से भरे पोस्टर चिपके मिले। उसको वहां से स्थानांतरित कर दिया गया और वह ५ मई, १९१२ को मालदा पहुंचा। वहां उसने छात्रों के तथा अध्यापकों के नाम जो राजद्रोहात्मक साहित्य आया उसको रोक कर सुपरिंटेंडेंट पुलिस को दे दिया।

२८ जनवरी, १९१६ को नवीन एक अन्य अध्यापक के साथ टहलने गया। टहल कर वापस लौटने पर सुपरिंटेंडट पुलिस के बंगले के पास वे दोनों अलग अलग हो गए। समय पर नवीन घर नहीं पहुंचा और उसके सम्बन्धी घबरा गए। खोज करने पर उसका मृत शरीर सायंकाल ६ ३० और सात बजे के लगभग गुरू ट्रेनिंग कालेज के पास मिला। उसके शरीर पर अनेक छुरा भोंकने के घाव थे और अत्याधिक रुधिर शरीर से निकल जाने के कारण उसकी मृत्यु होना बतलाया गया। इस सम्बन्ध में एक लड़का गिरफ्तार किया गया। उस पर अभियोग चलाया गया और उसे आजीवन निर्वासन (काले पानी) का दण्ड दे दिया गया।

ट्रंक वध

क्रान्तिकारी दल उपेन घोष नामक एक व्यक्ति पुलिस के भेदिए के रूप में बहुत अधिक कुख्यात हो गया। यह पता चला कि १० अगस्त, १९१६ को उपेन उपनाम देवव्रत ब्रह्मचारी सिन्थी नामक स्थान पर एक उद्यान में मार डाला गया। (पोस्ट मारटेम जांच) शव परीक्षा से पता चला कि उसका गला घोंट कर मारा गया। उस मृत शरीर को एक ट्रंक में बन्द कर रेल के एक डिब्बे में रख कर छोड़ दिया गया। व देल स्टेशन पर प्रतीक्षा करने पर भी जब किसी ने उस ट्रंक को अपना स्वीकार नहीं किया तो पुलिस ने उस ट्रंक को अपने अधिकार में ले लिया। बहुत समय के उपरान्त उस शव को पहचाना जा सका कि यह किसका शव है। इस सम्बन्ध में तीन अभियुक्तों पर अभियोग चलाया गया जो लम्बे समय तक अभियोग चलने के बाद मुक्त हो गए।

राज भक्तों का आक्रोश

१९३०-३२ में विशेषकर योरोपियनों तथा उनके आज्ञाकारी भक्तों के विरुद्ध हिंसात्मक कार्यवाहियां बहुत अधिक बढ़ गई। उनमें से केवल एक घटना को हम अन्यों से पृथक करके उसका वर्णन केवल इस लिए करेंगे कि जिससे हम यह बतला सकें कि देशद्रोहियों के विरुद्ध इन कार्यवाहियों के प्रति बंगाल में रहने वाले राज भक्तों जो मुख्यतः योरोपियन थे—की प्रक्रिया कैसी हुई। यह घटना कलकत्ते में २९ अक्टोबर, १९३१ को घटी थी। जब कि एक युवक जो फज टोपी और पट पहने था एक व्यापारिक संस्थान के कार्यालय में उसके अध्यक्ष के कक्ष में घुसा जो कि स्थानीय योरोपियन ऐसोसियेशन का अध्यक्ष भी था। उसने तीन गोलियां चलाई। दो तो निशाना चूक गई और तीसरी उसकी पीठ में लगी। आक्रमणकारी को पकड़ लिया गया और पुलिस के सुपुर्द कर दिया गया। उसी दिन समस्त योरोपियनों तथा उनके समर्थकों समाचार पत्रों के स्वामियों तथा उनके सम्पादकों में एक विज्ञप्ति बांटी गई जिसमें नीचे लिखे शब्द अंकित थे जिससे योरोपियनों में अर्थात शासक जाति में जो तीव्र घबराहट फैली हुई थी वह व्यक्त होती है। कांग्रेस का आतंकवाद नष्ट करना होगा, बंगाल का हिंसा काण्ड, जो मार डाले गए! लोमैन, सिम्पसन, पैड्डी, मुखर्जी, गारलिक, अहसानुल्ला। जो

हुए, हडसन नेल्सन, कैसिलस । डोनोवन को सुरक्षा की दृष्टि से इङ्गलैंड भेजना पड़ा । वल डुरनो आज प्रात काल विलियस । हम चाहते हैं कि कड़ी कार्यवाही की जावे यह विज्ञप्ति राजभक्तों के लिए गन्जीज प्रिंटिंग कम्पनी लिमिटेड म डब्लू यच प्ररमर द्वारा मुद्रित हुई ।

नशयित का भाग्य

कभी जो 'कांग्रेस डिकटेटर' के नाम से प्रसिद्ध हो चुका था वही शिशुपाल दत्त भूमिगत क्रान्तिकारियो मे पुलिस के भेदिए क रूप में बहुत अधिक कुख्यात हो गया था । लगातार तीन या चार बार पत्रो द्वारा उसको चेतावनी दी जा चुकी थी कि क्यो कि वह पुलिस का गुप्तचर है उसको अपनी मत्यु के लिए तयार रहना चाहिए । ऐसा प्रतीत होता है शिशुपाल ने उन धमकियो को गम्भीर रूप मे नही लिया । १७ अक्टोबर १९३२ को खुलना में सल्पा बाहिरदिया में वह अपने मकान मे सो रहा था । सोते हुए उसको किसी अनजाने हत्यारे ने गोली मार दी जिससे उसकी तत्काल म यु हो गई । गोली उसके गले की हड्डी को भेद कर शरीर में घुस गई और बगल में से निकली उसके एक पैर में भी चोट लगी ।

तत्काल न्याय

कोमिल्ला के क्रान्तिकारी गुप्त सगठन के सदस्यों के लिए सरायल का अब्दुल खालिक पठान उपनाम माली पुलिस भेदिए के रूप मे एक खतरनाक कण्टक बन गया था । अस्तु क्रान्तिकारियो ने उससे शीघ्र प्रतिशोध लेने का निश्चय किया । २० नवम्बर, १९३२ को खालिक कलाई कच्छा म एक खतरा प्रदशन से रात्रि में वापस लौट रहा था जब कि किसी अनजाने आक्रमणकारी ने रिवाल्वर से उसकी छाती की बाईं ओर गोली मारी, उसके साथ पाच या ६ व्यक्ति और भी थे । खालिक क गोली लगने पर इतनी शक्ति नही रही कि वह उस दुघटना का बयान कर सकता और वह यही बतला सका कि उसने किसी आक्रमण कारी को पहचान लिया है । कुछ घ टो बाद उसकी मृत्यु हो गई ।

कोई बच नही सका

जब कि २० वष के एक तरुण को पुलिस ने माणिकतल्ला डकती अभियोग में साक्षी देने के लिए तयार कर लिया तब उसको इस बात का तनिक भी सदेह नही था कि ऐसा करके वह अपने जीवन को खतरे म डाल रहा है । ३० दिसम्बर १९३२ को आशुतोष नियोगी जब अद्ध रात्रि को प्रेस से लौट रहा था जहा वह अपने जीवन यापन के लिए काय करता था तो उसके घर की गली क सिरे से आक्रमणकारी ने उसका पीछा किया । जसे ही कि वह अपने मकान के दरवाजे क जीने पर खडा हुआ और दरवाजा खोलने के लिए पुकारा, किसी ने उसके गोली मारी जो उसकी कनपटी पर लगी । वह जोर से चिल्लाया और पथ्वी पर गिर पडा । जब तक कि मकान के अन्दर क लोग उसके पास पहुचे उसके प्राण पखेरु उड चुके थे । उसका जीवन समाप्त हो चुका था ।

मार्ग पर

८ नवम्बर १९३४ के नारायन गज के एक समाचार से ज्ञात हुआ कि हीरेन्द्र नाथ गुहा नामक पुलिस के एक भेदिए को किसी अनजाने व्यक्ति ने मार दिया । जैसा कि बहुधा होता है कुछ व्यक्ति जिन पर पुलिस को सदेह था उन्हे गिरफ्तार कर लिया

गया परन्तु साक्षी के अभाव में जांच करने वाले मजिस्ट्रेट ने उन्हें मुक्त कर दिया।

मोर के पंखों में

कभी कभी पुलिस अपने गुप्तचरों और भेदियों को काम करने की सुविधा प्रदान करने के लिए उनको राजनीतिक सदेहजनक व्यक्ति का रंग देने का प्रयत्न करती थी जो दिखावे के लिए ऐसा प्रदर्शन करते थे कि मानो उन पर सदेह है और वे सच्चे और वास्तविक राजनीतिक कार्यकर्त्ता हैं। उन पर पुलिस दिखते हुए कुछ प्रतिबंध लगा देती थी। (बंगाल सप्रेशन ऑफ टैरारिस्ट आउट रेजेज एक्ट) आतंकवादी हिंसात्मक कांडों को दबाने सम्बन्धी बंगाल के अधिनियम के अन्तर्गत २४ फरवरी १९३५ की एक आज्ञा द्वारा ढाका के एक क्षेत्र के कतिपय युवकों की गतिविधियों पर पुलिस ने प्रतिबन्ध लगा दिया था।

एक दूसरा व्यक्ति—हीरालाल चक्रवर्ती जो कि उसी स्थान का निवासी था और उसी राजनीतिक दल का सदस्य था उसे भी सभी लोग राजनीतिक दृष्टि से पुलिस द्वारा सशंकित व्यक्ति मानते थे। उसको प्रत्येक बुद्धवार सुत्रापुर पुलिस स्टेशन और जिला गुप्तचर कार्यालय में उपस्थित होना पड़ता था। प्रकट रूप में दिखता था वह पुलिस में रिपोर्ट करने अर्थात उपस्थिति लिखाने जाता था किन्तु वास्तव में वह वहां गुप्त उद्देश्य से आता था। हीरालाल रूपी कौवा जो मोर के पंखों से सज्जित होकर मोरों में विचरण करता था उसके मोर के पंख शीघ्र ही झड़ गए और उसका छद्म रूप प्रकट हो गया। क्रांतिकारी दल के सदस्यों ने यह निश्चय किया कि उसके इस जघन्य दुहरे खेल को स्थायी रूप से समाप्त कर दिया जावे। सदा की भांति हीरालाल ने पुलिस थाने में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई और अपने वक्तव्य बता वह गुप्तचर विभाग के कार्यालय में सप्ताह में क्रान्तिकारियों पर चौकसी रखने के अपने कार्य के परिणाम की सूचना देने जा रहा था जो कि थाने से दो मील की दूरी पर था। तीन जुलाई १९३५ को मध्यान्ह उपरान्त एक बजे का समय था। हीरालाल को उसके दो राजनीतिक सशंकित साथी जो कि उसके मित्र भी थे कम्पनी बाग में ले गए और उसको छुरे भोंक दिए। हीरालाल ने उन दोनों राजनीतिक सशंकित मित्रों को पहचान लिया। उसी दिन सायंकाल ६ बजे हास्पिटल में ही हीरालाल की मृत्यु हो गई।

दोनों सशंकित व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया और एक विशेष न्यायालय में उन पर हत्या का अभियोग चलाया गया। विशेष न्यायालय ने १० सितम्बर १९३५ को दोनों अभियुक्तों को मृत्यु दण्ड दे दिया। अपने निर्णय में उन्होंने इस बात का भी उल्लेख किया कि साक्षी से यह ज्ञात हुआ कि मृत व्यक्ति पुलिस के गुप्तचर के रूप काम कर रहा था। एक ऐसे गुप्तचर की हत्या जो कि राजनीतिक कार्यों के सम्बन्ध में पुलिस को सूचना देता था उसी प्रकार व्यवस्थित सरकार के संगठन के विरुद्ध एक गम्भीर आक्रमण है जिस प्रकार एक एक ऊंचे सरकारी अधिकारी का वध होता है। उनमें एक बालक केवल अठारह वर्ष का था और छोटी आयु का होने के कारण उसको कम सजा दी जानी चाहिए थी परन्तु उसको भी सर्वाधिक ऊंचा दण्ड (मृत्यु दण्ड) दिया गया क्योंकि वह दुस्साहसी आतंकवादी था। २७ नवम्बर को उच्च न्यायालय ने अपील की सुनवाई की और १२ दिसम्बर, १९३५ को उसने दोनों अभियुक्तों के प्राण दण्ड को घटा कर आजीवन काले पानी का दण्ड दे दिया।

अध्याय बारहवां

बलिदानों की प्रशस्ति

साधारण सैनिक—आजाद हिन्द सेना की युद्धरत इकाइयों ने वीर सैनिक शत्रु से युद्ध करते हुए शत्रु की बम वर्षा से क्षुधा तथा रोगों से वीर गति को प्राप्त हुए थे। उनके सर्वोच्च सेनापति ने उनसे उनके रुधिर की माग की थी और उन्हें रुधिर के बदले स्वतन्त्रता प्रदान करने का आश्वासन दिया था। उनके विश्वसनीय और वीर सैनिकों ने बिना कृपणता के अपना रुधिर बहाया कि जिससे दूसरों के लिए देहली का माग रुधिर से लथपथ और चिकना हो गया जिससे कि वे सरलता और दृढ़ता से अपने पग रखते हुए शत्रु के गढ़ के प्राचीर के द्वार तक पहुँच सकें और उसे नष्ट कर सकें। उस युद्ध में आजाद हिन्द सेना के उन वीर शहीदों की जिन्होंने मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए अपने को बलिदान कर दिया सूची बना सकना सम्भव नहीं है। यह तभी सम्भव हो सकता है कि जब कि सरकार और आजाद हिन्द सेना के वे सैनिक और अधिकारी जो आज भी जीवित हैं मिल कर यह दृढ़ इच्छा करें कि उन वीरों की जिन्होंने मातृ भूमि की स्वतन्त्रता के लिए अपने को बलिदान कर दिया जितनी सम्भव हो सके उतनी पूरी सूची बनाई जावे।

यह जानते हुए भी कि इतने दिनों के उपरान्त सूची बनाने पर वह अवश्य ही अपूर्ण रहेगी। ईमानदारी से एक प्रयत्न इस प्रकार की सूची बनाने का अवश्य ही होना चाहिए। उन स्वतन्त्रता के वीर सैनिकों ने सुदूर प्रदेशों में सघन वनों से आच्छादित भूभागों में भारत की ओर जाने वाले मार्ग पर कूच करते हुए अपने सिरों को भारत माता की बलिवेदी पर जब निछावर किया था तो उनको केवल एक मात्र संतोष यह था कि उन्होंने भारत की स्वतन्त्रता के लिए पृथ्वी पर सर्वाधिक वीरता का कार्य किया है अपने हृदय में उत्तम विचारों और उद्देश्य को पोषित किया है और अधिकतम उदारता [illegible] साथ अपने को त्याग और बलिदान की अग्नि में झोंक दिया है। उन वीरों को अनन्त गौरवश्री प्राप्त हो। भारत को, उन्होंने जो भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए सर्वोच्च बलिदान किया उसे सच्ची और गहरी कृतज्ञता से याद करना चाहिए। सुदूर मोर्चे पर जो उन वीरों ने युद्ध लड़ा था जिसमें उन्हें अस्थायी पराजय मिली परन्तु जिनके वीर कृत्यों ने भारत भूमि में स्वतन्त्रता का युद्ध लड़ने वालों के मन को वीर भावों से भर दिया उसके परिणाम स्वरूप ही भारत स्वतन्त्र हुआ। यद्यपि यह प्रयत्न अपूर्ण है परन्तु उन वीरों के नामों की एक सूची बनाने का प्रयत्न किया गया है—जिन्होंने मातृ भूमि की स्वतन्त्रता के लिए अपने को बलिदान कर दिया। अस्थायी आजाद हिन्द सरकार और आजाद हिन्द के २८ फरवरी, १९४५ के गजट में जो उन वीरों की सूची निकाली थी और जो प्रति किसी प्रकार भारत में आई उसमें जो नाम दिये गए हैं, उनको इस सूचि में सम्मिलित किया गया है। उन वीरों के नाम नीचे लिखे हैं—

शहीदे भारत—लफ्टीनेंट कुन्दनसिंह, वीरे हिन्द—द्वितीय लफ्टीनेन्ट अशरफी मण्डल, तमगये बहादुरी नं० ५४२०७ हवलदार रत्नसिंह

संख्या	पद/नाम	मृत्यु का दिन		मृत्यु का स्थान
१	दल्पति एम सी बाल—	२५ ५ ४४	—	ई-यू
२	जत्येदार भाई डी भाटिया—	३१ ५ ४४	—	मोराह
३	टोलीपति सेवकराम—	३ ६ ४४	—	मोराह
४	देवठा मणी—	५ ५ ४४	—	नाह्न
५	सं के यस सूरी—	१० ६ ४४	—	मोराह
६	टोलीपति पन [redacted] हलानी—	५ ६ ४४	—	नाह्न
७	श्री सम्पूरनसिंह—	११ ६ ४४	—	बरमा
८	श्री एस यन राय—	जुलाई के मध्य	—	बरमा
९	श्री जे यल मजूमन्दार—	१४ ७ ४४	—	कठा विलेज (गाव)
१०	श्री बी मए चटर्जी—	१६ ७ ४४	—	कलेवा
११	श्री ए मादेसन—	१६ ७ ४४	—	कलेवा
१२	नायक राम स्वरूप चौधरी—	१६ ७ ४४	—	कलेवा
१३	श्री प्रभू-हसन—	१६ ७ ४४	—	कलेवा
१४	श्री देवीबहादुर—	१६ ७ ४४	—	कलेवा
१५	श्री जत्यदार एन के नाई—	१८ ७ ४४	—	एम एम एस बरमा
१६	श्री मजुन दास—	१९ ७ ४४	—	कलेवा हास्पिटल
१७	श्री मगाराम—	१९ ७-४४	—	कलेवा हास्पिटल
१८	श्री बी के मुकर्जी—	१९ ७ ४४	—	कलेवा
१९	जत्येदार ए गोविन्दन—	२७ ७ ४४	—	इनाम बाग गाँव
२०	टोलीपति एन एस सुन्दरम—	१९ ७ ४४	—	हिटोक नदी
२१	न० १४२८ लस नायक सीतारीराम	२६ ७ ४४	—	एम एस एस बरमा
२२	श्री रामगोविन्द अहीर—	१ ८ ४४	—	एम एस एस बरमा
२३	श्री के मरिमूथू—	१ ८ ४४	—	एम एस एम बरमा
२४	जत्येदार एम एस हरी—	४ ८ ४४	—	माडले
२५	श्री करनालसिंह—	५ ८ ४४	—	एम एम एस बरमा
२६	टी पी बी अय्यर—	११ ८ ४४	—	एम एस एस बरमा
२७	टोलीपति टी के रामचन्दानी—	१४ ८ ४४	—	एम एस एस बरमा
२८	यल के सुन्दरम—	१४ ८ ४४	—	रगून के मार्ग पर
२९	सनिक रामराम नम्बर ६४२७५—	२६ ७ ४४	—	एम एस एस बरमा
३०	श्री के एम श्रीधरन—	२ ९ ४४	—	मायमेयो हास्पिटल
३१	एस सी ए एम चन्द्रा—	२ ९ ४४	—	मायमयो न २ हास्पिटल
३२	श्री तलराज कृष्णन—	१० ९ ४४	—	माडले हास्पिटल
३३	हवलदार लालखा—	११ ९ ४४	—	मयाग हास्पिटल
३४	श्री मोहिन्द्र कुमार मजूमदार—	१७ १० ४४	—	एम एस एस बरमा
३५	श्री पी यम काका—	११ १० ४४	—	एम एस एस बरमा
३६	श्री मूरजीमल हरचन्द—	१८ ८-४४	—	एम एस एस बरमा
३७	सिपाही यग बहादुर—	१० १० ४४	—	मयांग हास्पिटल
३८	श्री एस डी माहा—	६-९-४४	—	मोनयावा हास्पिटल

३९	श्री यन यन राय—	५ ६ ४४	—	मिथा क्षेत्र नुरून गांव मे मारे गए
४०	श्री यच सी दास—	१८ ६ ४४	—	एम एस एस बरमा
४१	श्री कबीर खा—	१४-११ ४४	—	एम एस एस बरमा
४२	श्री भिखारी जेना—	३ १२ ४४	—	मियांग हास्पिटल
४३	श्री जगतनारायण—	१८ ६ ४४	—	मोनयावा
४४	श्री वीरसिंह—	७ १२ ४४	—	मियांग हास्पिटल
४५	श्री प्रीतमसिंह—	१६ १२-४४	—	मियांग हास्पिटल
४६	श्री हाशिम—	६ ११-४४	—	क्यूबो
४७	श्री मजु—	६ ११-४४	—	क्यूबो
४८	श्री नागोली—	६ ११-४४	—	क्यूबो
४९	श्री यासूफ—	६ ११ ४४	—	क्यूबो
५०	श्री रामशकर—		—	इटागी के पास अगस्त के प्रथम सप्ताह मे मारे गए। (लापता)
५१	श्री पूरन बहादुर पुरी—	२७ ७ ४४	—	मिठा क्षेत्र (लापता)
५२	श्री राजपत पांडे—	अगस्त	—	मारे गए (लापता)
५३	श्री बाबूलाल—	ज्ञात नही	—	मारे गए
५४	श्री आर सी यादी—	ज्ञात नही	—	एक्साबवा के मार्ग में

निष्ठावान अनुयायी—कनल मिथा जि हु नेताजी ने ४ फरवरी, १९४४ को अकयाब क्षेत्र म वीरता पूर्ण युद्ध करन के उपलक्ष में शेरे हि द' मडल प्रदान किया था १४ अप्रैल, १९४५ को शत्रु की गोली वर्षा से मारे गए जब कि वे नेताजी के साथ बैंगकाक से रगून जा रहे थे।

वीर महिलाए—दो रानी झांसी रैजीमेंट की महिलाए लफ्टीनट जो सफाइन और हवलदार स्टला ३ अप्रैल, १९४५ को मारी गई जब कि वे बगकाक से रगून को वापस जा रही थी।

स्वय आत्म बलिदान—एयलप्पा जो कि आजाद हि द सरकार के परामर्श दाता थे और नेताजी काप समिति के अध्यक्ष थे माडले के समीप जब कि वे माडले हास्पिटल से रोगियो को हटान का प्रयत्न कर रह थे तब शत्रु से लडते हुए मारे गए।

जल समाधि—नवम्बर १९४३ मे श्री चटर्जी द्वारा घायल सनिको को चिंदविन नदी के द्वारा ल जाया जा रहा था जब कि शत्रुओ न उस नाव पर आकाश से बम वर्षा की। बम के लगने से नाव अपने सभी यात्रियो को लेकर जल में डूब गई।

जिसने मृत्यु का आलिगन किया—एक प्रशसक साथी जिसने अपना नाम नहीं लिखा एक लेख मे ५ जून १९४५, को श्री पी के सम्बन्ध मे लिखा है कि उन्होने भारत भूमि मे बरमा की सीमा के पार पट्रोल के एक भण्डार को नष्ट करने के प्रयास में जो कि शत्रु के काम आता अपने प्राण दे दिए।

जो लापता हो गए—आजाद हिन्द फौज के नीचे लिखे सनिक जो कि मोर्चे पर गए उनका आज तक कोई पता नही है वे लापता है :—(१) जमादार यू. एस.

चारलू (२) जयेदार ग्रार यन राहा (३) टोलीपति मूरजामा खूबचन्द, (४) टोलीपति श्री वासुदेव (५) टोलीपति वासुदेव पोहूमल, (६) टोलीपति तेजनारायन, (७) टोलीदास रामसूरत तिवारी और (८) श्री पी यन नेय्यर।

जरमनी के पश्चिमीय मार्चे पर शत्रु के आक्रमण के कारण बहुत से आजाद हिन्द सेना के वीर सनिक मारे गए। यह अत्यन्त खेद और दुख की बात है कि उन वीर सनिकों के नाम उपलब्ध नहीं है। जिन परिस्थितियो में भारतीय राष्ट्रीय सेना के वीर सनिक जरमनी की भूमि पर युद्ध म वीरगति को प्राप्त हुए उसका विवरण जो एस एम इशाक (आजाद हिन्द सेना में कर्नल) से ज्ञात हुआ, केवल उस सुदूर देश में जो कुछ घटित हुआ उसकी एक झलक मात्र देता है। पश्चिम मे नेताजी की भारतीय राष्ट्रीय सेना माव में अटलांटिक दीवार के समीप तटीय युद्ध का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए रक्खी गई थी। यह सेना बिस्के की खाडी पर बोरडियाक्स के समीप १९४३ से तैनात थी और जब कि मित्र राष्ट्रों की सेनाए १९४४ के अतिम भाग में जब फ्रास की भूमि पर उतरीं, तब भी वहीं थी। उस परिस्थिति मे भारतीय राष्ट्रीय सेना को भी जरमन सेना के साथ जरमनी की ओर वापस लौटना पडा। जब कि भारतीय राष्ट्रीय सेना लौट रही थी तो लगभग २०० वीर सनिक शत्रुओ से युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त हो गए। उन वीर बलिदानियों के नाम आज उपलब्ध नही हैं। केवल नीचे लिखे चार वीरो के नाम ही उपलब्ध हैं—(१) द्वितीय लफ्टीनट एस एम अली, (२) अडर आफिसर पहलाद सिंह, (३) सार्जेंट इन्दर बहादुर, (४) सिपाही गुरमुख सिंह ये सभी पंजाब के थे।

फ्रांस से वापस आकर भारतीय राष्ट्रीय सेना जरमनी में ह्यूबग की सैनिक छावनी जो स्टटगार्ट के समीप थी वहा मार्च १९४४ तक रही। अप्रेल १९४५ के आरम्भ में उसे वहा से हटना पडा क्योंकि मित्र राष्ट्र की सेनाए जरमनी की ओर बढ रही थी। अप्रेल के अतिम सप्ताह में भारतीय राष्ट्रीय सना को मित्र राष्ट्रों की सेनाओ ने घेर लिया। भारतीय राष्ट्रीय सेना को स्विट्जरलैड की सीमा के पास दक्षिण जरमनी में कान्स्टैंस झील के समीप द्वितीय फ्रेंच सेना ने घेरा था। भारतीय राष्ट्रीय सेना की एक कम्पनी को जिसमें १५० सनिक थे एक छोटे से सिनेमा म रात भर बिना भोजन और जल के रख कर प्रात काल गोली से उडा दिया गया। यह घटना अप्रेल के अन्तिम सप्ताह की थी। भारतीय राष्ट्रीय सेना के शेष सनिकों को युद्ध बन्दी बना लिया गया और उनम से कुछ को इङ्गलड म थप फोट में इन जो मारविच के समीप है ले जाया गया। वहा से पूछ-ताछ की गई और उन पर कडा पहरा लगा दिया गया। उनमें से कुछ उस कद म मारे गए।

अभी तक दुनिया को आधिक रूप मे भी सुदूर पूर्व और पश्चिम के योरोपीय मोर्चे पर आजाद हिन्द सेना की विपरीत परिस्थितियों, कठिनाइयो और बलिदानों की कथा नही बतलाई गई। जो भी थोडी बहुत जानकारी दी गई वह टुकडों में दी गई। इससे यह सिद्ध होता है इस उप महाद्वीप में धर्मो धर्मो सम्प्रदायों, जातियो, आदर्शों वाला स जो कि देश के विभिन्न भागो से आए थे और विभिन्न भाषाए बोलते थे जो कष्ट, त्याग और बलिदान की माग और अपेक्षा रखी गई जो कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए नितात आवश्यक है उतना त्याग और बलिदान आजाद हिंद सेना कि ऐतिहासिक संघर्ष के पूर्व भारतीयों ने पूरा नहीं किया था। नीचे गिरे हुए पद दलितों की मुक्ति देने [illegible]

वाली रूधिर की प्यासी था आजाद हिंद सेना में यथेष्ट मात्रा मे रूधिर बहाने से जिसमें सभी जातियों और धर्मों के मानने वाले भारतीयो ने रुधिर बहाया था और जो एक धारा मे होकर बहा था उससे तृप्त हो गई आजाद हिंद सेना के सनिको ने एक दिन और एक मुठभेड में जितने वीरो की बलि दी १८५७ के उस महान युद्ध के उपरांत हिंसा अथवा अहिंसा मे विश्वास करने वाले देश भक्तो ने कुल मिला कर उतनो का बलिदान नही दिया था।

बलिदानी शहीदो की सूची पर एक विहगम दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जावेगा कि किसी को भी इस बात की जानकारी नही थी कि युद्ध के पश्चिमी मार्चे पर इतनी बडी सख्या म भारतीय राष्ट्रीय सेना के सनिकों ने देश की स्वतन्त्रता के लिए बलिदान किया था। जब जापान तथा आजाद हिंद सेना ने हथियार डाल दिए और यह समाचार लोगो ने सुना तो बहुत से आजाद हिंद सेना के सनिको ने आत्मघात कर लिया। ब्रिटिश भारतीय सरकार ने कुछ आजाद हिंद सेना के सनिको को फासी दे दी थी। उनके नाम परिच्छेद दस में दिये जा चुके हैं। उनके अतिरिक्त अब अन्यों के नाम भी उपलब्ध हैं जि हे दिल्ली मुलतान, सियालकोट की जेलो मे फांसी दे दी गई। अधिक विस्तार में जान की आवश्यकता नही है। सहानुभूति पूवक सूची को देखने की लेखक सिफारिश करता हैं।

आई एन ए के कनल ढ़ाक, मेजर जनरल शाहनवाज खा तथा आजाद हिंद सेना की जांच तथा सहायता समिति के डाक्टर जगदेव सिंह (कनल) तथा श्री नानकचन्द (आई एन ए की उदारता पूवक दी गई सहायता के फल स्वरुप हम आगे दी गई आजाद हिंद सेना के बलिदानी वीरों (जो बडी सूची का एक भाग हैं) की सूची इस पुस्तक मे प्रकाशित कर सकें हैं जो इस पुस्तक के नाम 'बलिदानो की प्रशस्ति" को साथक करती है।

आजाद हिं सेना के बलिदानी वीर जि हें वीर गति मिली

नाम	पद	पता तथा विवरण
१- अजमेरसिंह —	मेजर —	गा धारवार, डा साबेवाल जि लुधियाना, पजाब
२ अशरफी मडल —	से लफ्टीनट —	गा मलखानपुर, डा शाहकुंड, जि भागलपुर, बिहार
३ अरजनसिंह —	एस ओ	— गां डा सिधावन कलां, जि लुधियाना, पजाब
४ अटलसिंह —	लफ्टीनट	— गां शाहपुरा जनपुर, डा जानी, जि मेरठ, उत्तरप्रदेश
५- अब्दुलअजीज —	सैनिक	— गा बिरोटी, जि बुलन्द शहर, उ प्र
६ अमरसिंह —	सनिक	— गां भारत, डा भाम जि मुरदासपुर पजाब
७ अमरसिंह —	सनिक	— गा डा टोथेपान वादला खुद जि अमृतसर, पजाब
८ अमीर हयात —	लॅस नायक —	गां पीरखाल डा मालाकद, जि मरदान, सीमाप्रांत
९- अब्दुल रज्जाक —	सनिक	— गां डा साम्पली जि रोहतक पजाब
१० अजायब सिंह —	गुप्तचर	— गां डा कलहा जि अमसर पजाब लालकिले मे फांसी
११- अली अस्घर —	एस ओ	— गां बजाटी खुद डा सराय आलमगीर जि गुजरात
१२- अलीमुहम्मद —	हवलदार —	चक नं २२६, मलखान वाला, जि लायलपुर, पजाब
१३ अमरसिंह —	हवलदार —	गां बहादुरपुर, डा घोरा कलां, जि गुरगांव पजाब

१४- अमीरसिंह — हवलदार—गां कानी भावला, जि दिल्ली बरमा म मारे गए
१५- अजीतसिंह — नायक —उनकी मृत्यु आवाग म हुई
१६- ओतारसिंह — लैंस नायक-उनकी मृत्यु मिया हाकिन मे हुई
१७- आलमसिंह — सैनिक —उनकी मृत्यु कलेवा में हुई
१८- आलमसिंह — सैनिक —उनकी मृत्यु आवाग में हुई
१९ अमरसिंह — सनिक —उनकी मृत्यु उखराल मे हुई।
२० आनसिंह — सनिक —उनकी मृत्यु ऐजोन मे हुई
२१ अमरिक सिंह— कप्टेन —आवाग के युद्ध में मारे गए शेरे हिंद पदक मिला।
२२ अग्रेपुन — नायक —बरमा के युद्ध म मारे गए।
२३ अली शान — सनिक —युद्ध मे वीर गति प्राप्त हुई (बरमा)
२४ आनन्दसिंह— एस ओ —बरमा के युद्ध में वीर गति प्राप्त हुई
२५ अता मुहम्मद— नायक —युद्ध में वीर गति प्राप्त हुई
२६ अरजनसिंह— नायक —युद्ध में वीर गति प्राप्त हुई
२७ अलताफहुसन— गा राजपुर खुद जि अमृतसर प बरमा के युद्ध मे वीर गति मिली
२८ अच्छारसिंह— सैनिक —गा पीपली, डा सरपाट, जि कांगड़ा पजाब
२९ अहमद खा — हवलदार —गा खुरलागामुम डा रतनपुर, जि देहरागाजी खा
३० आनन्दसिंह — नायक —अरकान के युद्ध में वीर गति को प्राप्त हुए
३१- अमरसिंह — लैंस नायक-गा खोरी डा-पुल्ली जि गुरगाव (अराकान में)
३२ अमीनलाल — सनिक —गा-कुहाड, डा-नोहर नामाराज्य (अराकान म)
३३ अत्तारसिंह — सैनिक —गां सहारनपुर डा रेवाड़ी, जि गुरगाव(अराकान मे)
३४ आवसिंह — सैनिक —वीर गति को प्राप्त हुए
३५ अनूपसिंह — लैंस नायक-वीर गति का प्राप्त हुए
३६ आत्मासिंह — हवलदार—गा डा सब कला जिला झेलम (युद्ध करते हुए)
३७ ओतारसिंह — लैंस नायक-युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए
३८ अमरनाथ — नायक —वीर गति को प्राप्त हुए
३९- आनन्दसिंह — नायक —लड़ाई में हवाई आक्रमण में मारे गए
४० अल्लाह दाद— नायक —युद्ध में वीर गति को प्राप्त हुए।
४१- अमरसिंह — × —गा डा तिकरी जि मेरठ (उप्र) इम्फाल मे मारे गए
४२- अजीतसिंह — सनिक —मिया हाका में घावों के कारण मरे।
४३ अमीर अली— सनिक —बरमा म युद्ध म मारे गए।
४४ अमरसिंह — सनिक —कलेवा के युद्ध में मारे गए
४५- अमीनलाल — सनिक —कलेवा के युद्ध म मारे गए
४६ ए बी मिर्जा— कप्टन —गोलो से मारे गए
४७ अरजनसिंह —जीयफमार—गा-डा जादेव कलां जि अमृतसर (फ्रांस में)
४८ अमरसिंह —जीयफमार— फ्रास में युद्ध करते हुए मारे गए
४९- अयूब खा — लपटीनट—गां नहुर डा रावलाकाट पुन्छ (इम्फाल में)
५० अजरनसिंह — एसओ —लुधियाना (पजाब) जिगर गाल्ला शिविर में मारे गए
५१ अमरसिंह — सनिक —गा मिसरी दालमिया दादरी, जीन्द राज्य।
५२ अजीतसिंह — सैनिक —गां पाणी, डा रुद्र प्रयाग, जि गढ़वाल, (उप्र)

५३- प्रातमसिंह — नायक —गां खोजेवाला, डा काप, जि जालंधर-पंजाब
५४ अरजनराम — एसपी —गां भादरा, डा खानीर, बीकानेर (राज)
५५- अवाड जराराधन-हवलदार-युद्ध म वीर गति को प्राप्त हुए।
५६ अमरसिंह —लंस नायक—गा डा रेवाड़ी, जि गुरगांव पंजाब
५७ अमरसिंह —लैंस नायक—गां नया गांव, डा नहर, दुजाना
५८ ए मजूमदार — डाक्टर —कुंसडेन में अमवर्षा म मारे गए १९४५
५९ ए ए के तोदी— सै कर्नल—कपूथला – लापता
६० एस असगरअली—कप्टेन —मुहल्ला डाक्टर सादिक अली-कपूथला।
६१ अमद उल्ला —हवल्दार—युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए
६२- अब्दुल रहमान खां—हवलदार—गा मायेरा, डा भाउन, जि झेलम, पंजाब
६३ अब्दुल रशीद खां—एस ओ —युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए
६४ अली मुहम्मद — नायक —इम्फाल के युद्ध मे मारे गए
६५ अब्दुल अजीज — हवल्दार—गा धुनी घूरिया डा खारियान गुजरात
६६ अहमद खां — हवल्दार—गा डा-कुंजाह, गुजरात
६७ आपा लएनके — सनिक —युद्ध करते हुए मारे गए
६८ अमरसिंह — सैनिक — युद्ध म मारे गए।
६९ अल्लाह दित्ता — × —हावा के मार्चे पर मारे गए
७० अन तराम — × —गा नयाला, डा बसना जि बुलन्द शहर (उप्र)
७१ अरजन सिंह — सनिक —गा धावनसिंह चक १३ जि शेखूपुरा (पंजाब)
७२ अप्पा इनालाई — सनिक —वीर गति को प्राप्त हुए
७३ अमरसिंह — × —गा सरदार डा कानिना जि मेरठ (उप्र)
७४ अब्दुल खालिक — × —युद्ध म वीर गति प्राप्त हुए।
७५ अली खां — लफ्टीनट—फ्रांस मे मारे गए
७६ अख्तर महमूद — हवलदार—इटली मे मारे गए
७७ अली शेर — सैनिक —हास्पिटल मे मृत्यु हुई
७८ अमर सिंह — नायक —पटियाला राज्य – अस्पताल मे मरे
७९ अगाधू छाम त — नायक —कोरापात अस्पताल मे मरे
८० अन्नू के — सनिक —अस्पताल में मत्यु हुई
८१ अ नु भूलाई — सनिक —अस्पताल में मत्यु हुई
८२ अ चलसिंह — सनिक —गा डा-राजाल जि कांगड़ा पंजाब
८३ एस सी बरधान— × —गां डा बितघर जि तिपरा बगाल - १०६४३
को मदरास में फांसी।
८४ बलवानसिंह — नायक —गां डा जाओरा जि होशियारपुर युद्ध में मारे गए
८५ बच्चनसिंह — × —गां डा लटाला जि लुधियाना १९४२ मे भारत मे
हवाई जहाज से उतारे गए पता नहीं।
८६ भुल्लनसिंह — हवलदार—गा धाघर डा मुरादनगर जि मे ठ (उप्र)
८७ बलवतसिंह — सनिक —गा मानीजासा डा धानला, नामा राज्य
८८ भोजाराम — लसनायक—गा कबराला, डा ब्यानिना नामा राज्य
८९ बनतासिंह — सनिक —गां कोटला हिरान, डा उगरी जि जालंधर

९० बूटासिंह — लफ्टीनेंट–गा डा-कोटखेरा, जि अमृतसर, पंजाब
९१ बख्शीशसिंह — × —गा डा गोरय्या, जि जालन्धर पंजाब
९२ बिश्म्भरदास — लफ्टीनेंट–गा राधुमाजरा डा तेलीवाड़ा, पटियाला राज्य
९३ बूटासिंह — × —गा-खानपुर, डा शेलार जि सियालकोट, पंजाब
९४ बारासिंह — एस ओ —गां-छोटे वाउधान, डा दिचकोट जि लायलपुर
९५ बनतासिंह — हवलदार—गा-लखीमपुर, डा रूपर, जि अम्बाला पंजाब
९६ बहादुरसिंह कोटियाल-सैनिक—डा मुहरा, पट्टी सिला, डा-लक्षान, जि गढवाल
९७ बालेराम — सैनिक —गा पेरिया डा दुआजखना, जि रोहतक, पंजाब
९८ बैजनाथ बासडे — लफ्टीनेंट—गां कुमारी ग्राम डा महाराजपुर, सयाल परगना
९९- भल्लाराम — सैनिक —गा गोराना, डा बरवाला, जि हिसार पंजाब
१००- बदलूराम — सैनिक —गा डा दियाल, जि रोहतक, रंगून में मारे गए
१०१- बिश्म्भरसिंह — लैंस नायक–गा धा मनकियाला जि रावलपिंडी, पंजाब
१०२ भगवानसिंह — से लफ्टीनेंट–गा डा कनवाली जि गुरगांव पंजाब
१०३ बजलाल श्रीवास्तव –सम्पादक—जिला जबलपुर मध्य प्रदेश
१०४ बहादुरसिंह — कैप्टेन — × युद्ध करते मारे गए।
१०५ बच्चनसिंह — नायक — गा नावानपिंड दोना, डा सोहान जि जलधर
१०६- भगतसिंह — सैनिक —होशियारपुर जिमरगाछा के अस्पताल में मरे
१०७ बख्शीसिंह — एस ओ —गा चामीहाट, डा मारेंज जि कांगड़ा
१०८ बनारसीलाल — स्वयसेवक–गा डा-चुहरखाना मंडी, जि दौलपुर
१०९ बाबूराम पिल्ले — सैनिक —३१२ देतालियो बिल्डिंग किरकी पूना।
११० भरतसिंह — हवलदार—गां खेरी असरा, डा झज्जर, जि रोहतक
१११ बहादुरसिंह — नायक —गा कोट ढडाल, डा कोट टोडरमल, गुरदासपुर
११२- एस बी भट्टाचार्य– ग्रेड सी —गां बरहामपुर, डा बेरियाडाला चौटागाव
११३ भूपालसिंह — से लफ्टीनेंट–कलेवा में हवाई आक्रमण में मारे गए
११४ बख्तावरसिंह — एस ओ — × खुदमोन मे मारे गए
११५ बलवन्तसिंह — एस ओ — × पकाबान म मारे गए
११६ बीरसिंह — नायक — × आवाग में मारे गए
११७ बिसरामसिंह — हवलदार — पन में युद्ध करते मारे गए।
११८ बाघनसिंह — हवलदार — आवग में मरे
११९ बिशनसिंह — ल नायक— ऐजोल में मरे
१२० बहादुरसिंह — नायक — अवाग मे मरे
१२१- बख्तावरसिंह — सैनिक — तामू मे मरे
१२२ भवानीसिंह — सैनिक — आवांग में मरे
१२३ बलवानसिंह — सैनिक — पन में मरे
१२४ बाछीसिंह — लैंस नायक— अवग में मरे
१२५ बाछीसिंह भंडारी— लैंस नायक—आवग मे मरे
१२६ भजनसिंह — सैनिक —बिन्दात म मरे
१२७ बालकसिंह — सैनिक —गान पोल में मरे
१२८ बचित्तरसिंह — से-लफ्टीनेंट—जापानियो ने बरमा में मरने की सूचना दी

१२९ भीमसिंह राना — से लेफ्टीनट—मोडसे ग्रस्पताल में मरे
१३० बहादुरसिंह — × —जलने से मरे
१३१- बालकराम — कप्टेन —सिंगापुर म मरे
१३२- बुद्धीसिंह — लफ्टीनट —बरमा में युद्ध करते मरे
१३३ भीमसेन — लेफ्टीनेंट —बरमा म युद्ध करते मरे
१३४ बगासिंह — से-लफ्टीनेंट—ग्रकयाब में युद्ध करते मरे।
१३५ भीमसन — हवलदार —तांग योंग म हवाई आक्रमण म मरे
१३६ भास्कर येरवी — सैनिक —चमोल मे युद्ध करते हुए मर।
१३७ भवानसिंह — से लफ्टीनेन्ट—बरमा मे युद्ध करते हुए मरे
१३८ बशीर महमद — लफ्टीनेन्ट —गा-चलियाली जि रोहतक पजाब
१३९- भूपेन्द्रसिंह — नायक —गां बुरमाह डा बनोत जि मुजफ्फरनगर
१४० भगत बहादुर — × —युद्ध करत वीर गति मिली
१४१ विक्रम राय — × —बरमा में मारे गए
१४२ बापूराय मोडे — × —बरमा में मरे
१४३- भगवान सिंह — एस ओ —गां डा-दाहिरा जि गुरगाव
१४४ बग्गा खाँ — सैनिक —जिपावादी में मृत्यु हुई
१४५ बहादुरसिंह — सनिक —ग्रराकान के युद्ध मे मारे गए।
१४६ बसी — सनिक — ×
१४७ बल्देवसिंह — सनिक —बरमा में मृत्यु हुई
१४८ ब्रहम दत्त — सनिक —रणभूमि मे युद्ध करते मरे
१४९- विजयसिंह — सनिक —युद्ध करते मरे
१५० भवानी दत्त शर्मा — सनिक —युद्ध करते मरे
१५१ बहादुरसिंह — लन नायक—डा लोहार खेत पट्टी मल्लादाम पाव ग्रल्मोडा
१५२- भोलादत्त जोशी — हवलदार —गा-तालीमोर, डा रानी खेत जि ग्रल्मोड़ा
१५३ बहादुरसिंह — सनिक —शत्रु की बमवर्षा मे वन मे मारे गए
१५४ बलवन्तसिंह — × —इंजिन मे मरे
१५५- विधानसिंह — × —हवाई आक्रमण मे हववा में मरे
१५६ भीमसिंह — से लेफ्टीनेन्ट— ×
१५७ भट्टाचार्य वे — नायक —रगून में मृत्यु हुई
१५८- बूरसिंह — हवलदार —युद्ध करते मरे
१५९- विजयसिंह — सनिक —कलेवा मे मारे गए
१६०- बेगसिंह — सनिक —कलेवा में मारे गए
१६१ बहादुरसिंह — सनिक —इम्फाल मे मरे
१६२- बल्देव — हवलदार —कलेवा म मरे
१६३ बीरबल — सनिक —कलेवा में वीर गति को प्राप्त हुए
१६४ बुद्धाराम — सनिक —गा कुमहारया, डा बिनाराज जि हिसार
१६५ भिलासिंह — नायक —नामू में मृत्यु हुई
१६६ बागासिंह — सनिक —कलेवा के समीप बम वर्षा में मरे।
१६७ बलवन्तसिंह — हवलदार —गा सदावत कपूरथला राज्य

१६८ बलवन्तसिंह	— ×	—जरमनी में आत्म हत्या करली
१६६ बन्नेसिंह	—जी यफ टी आर	—फास में मृत्यु हुई
१७० बग्गासिंह	— लफ्टीनेन्ट	—अराकान युद्ध मे वीर गति मिली
१७१ बद्दोरिया राम	— सनिक	—ग्राम मु डिया, हिन्डौन, जयपुर-भरतपुर
१७२ बद्रीराम	— सनिक	—मेहान्दपुर जयपुर
१७३- बाकरसिंह	— नायक	—गां करवारी-हिन्डौन, जयपुर भरतपुर
१७४- भौदूराम	— नायक	—पावटा महुआ जयपुर
१७५- बिहारी राम	— सैनिक	—पावटा, महुआ जयपुर
१७६ बाद्रराम	— लैंस नायक	—तेसगाव, हिन्डौन, जयपुर
१७७- बलवन्तसिंह	— नायक	—गा पुर शामूली-मेरठ
१७८ बस्तीराम	— सैनिक	—कन्डोली लदराल, शिमला
१७६ फौवालसिंह गोरखा	— नायक	—युद्ध करते वीर गति प्राप्त हुई
१८० भगवान सिंह	— हवलदार	—गा डा-दाहिना गुरगांव (युद्ध)
१८१ भीमसिंह थापा	— कप्टेन	—युद्ध करते हुए वीर गति पाई
१८२ बशीर अहमद	— सैनिक	—गा डा थारोह सियालकोट (युद्ध)
१८३ बिशनसिंह	— सैनिक	—गा-साउनयारा डा बेरीनाग, अलमोड़ा
१८४ बद्रीदत्त	— सैनिक	—गा कोटेश्वर, डा बेरीनाग, अलमोडा
१८५ बचनसिंह	— सैनिक	—गा हरिवाल, डा देरा बाबा नानक, जि गुरदासपुर
१८६ बस्तीराम	— हवलदार	—गां रिठोह, डा सोहना, जि गुरगांव
१८७ बल्लाराम	— सैनिक	—गा-रिठोह डा सोहाना, जि गुरगाव
१८८ विशम्भरसिंह	— सैनिक	—गां मिसरी डा डालम दादरी, झींद राज्य
१८६ भोगीराम	— सैनिक	—बिस जसपुर, हिन्डौन भरतपुर
१६० बच्चनसिंह (शहीदे भारत)	— नायक	—गा तिव्वा, डा-ससवडी चदीराम, जि जलधर
१६१ बनतासिंह	— नायक	—गा इब्बन डा कपूथला (५ ६ ४४) को मरे)
१६२ बूटासिंह	— सैनिक	—पबैटवा में युद्ध करते वीर गति मिली।
१६३ बावासिंह	— सैनिक	—गा माना तालवन्डी डा भोगाठ, जलधर
१६४ बिशनसिंह	— सैनिक	—गा-नैसरपुर, डा कपूथला
१६५ बट्टनसिंह	— नायक	—युद्ध मे वीर गति को प्राप्त हुए
१६६ बाबेरसिंह	— हवलदार	—जननी का नगल, डा सादाबाद जि मथुरा
१६७ बलवीरसिंह	— सैनिक	—गा घनोरा, डा दावा, जि मेरठ
१६८ बकशाराम	— नायक	—गा पाराघा, डा मोहिन्दरगढ, पटियाला राज्य
१६६ भवानीसिंह	— सैनिक	—गां मटसाना डालमिया दादरी, झींद राज्य
२०० बख्तावर	— सैनिक	—गा करोरी, डा-नाहर, जि दुजाना
२०१ बालमुकन्द	— नायक	—देहली
२०२- भूपालसिंह	— एन/सिपाही	—वीर गति को प्राप्त हुए
२०३ बदरुद्दीन	— हवलदार	—वीर गति को प्राप्त हुए
२०४ बलकू पोवार	— सैनिक	—इम्फाल में मारे गए

२०५ वापू सावन्त — सैनिक —इम्फाल मे मारे गए
२०६- बावनसिंह — सैनिक —वीर गति को प्राप्त हुए
२०७ बावनसिंह — सैनिक —पटियाला के युद्ध में मारे गए
२०८ बनतासिंह — सैनिक —वीर गति को प्राप्त हुए
२०९- बाबू दारेकर — सैनिक —वीर गति को प्राप्त हुए
२१० रतनसिंह — हवलदार—गा मन्दोरा, डा होमेल, जि होशियारपुर
२११ बाबूसिंह — सैनिक —शाहान शिविर में मरे
२१२ बारासिंह — नायक —गा छोटी बानशान, डा दिचकोट लायलपुर
२१३ बिशनसिंह — सैनिक —बामू के निकट युद्ध मे मारे गए
२१४ बागासिंह — नायक —गा बामरपुर, डा बेरखुद, जि लुधियाना
२१५- बशम्भर लाल — सेलफ्टीनेन्ट—वीर गति को प्राप्त हुए
२१६ बोल्लूराम — सैनिक —गा खेरसी डा बलभगढ, जि गुरगाव
२१७ बागा — × —गां दवोटा, डा मालागढ, शिमला
२१८ बिशनसिंह — लेफ्टीनेन्ट—गां सरवाल डा करलेपुर, जि जलधर
२१९- बख्शीशसिंह — सैनिक —इटली मे मृत्यु हुई
२२० भगतसिंह — सैनिक —गां मावना डा बदरी जि फिरोजपुर
२२१ बरक्त — लैन्स नायक—गां भोराम, डा लोधभारत, जि कागड़ा
२२२ बिद्दीसिंह — नायक —गा दारुन डा सदरानी जि कागडा
२२३- बावू खां — सैनिक —गा मद्दोकुलार डा मएनकी जि जलधर
२२४ बिकारसिंह — सैनिक —गा राजपुर, जि होशियारपुर
२२५ बीरसिंह — सैनिक —जिलालपुर, जलशान जि होशियारपुर
२२६ बचनसिंह — हवलदार —गा डा नरली जि लाहौर
२२७ भालसिंह — लास नायक—गा डाल डा खेर, जि लाहौर
२२८ बहादुरसिंह — सनिक —गा दरादी, डा बिसा, जि अमृतसर
२२९ बिजसिंह — सनिक —गा मालेडा डा-इलान, जि मुजफ्फरनगर
२३० बिजसिंह — सनिक —गा लुल सरहा डा कुचेसर, जि मेरठ
२३१- बिशनसिंह — नायक —युद्ध करते वीर गति को प्राप्त हुए
२३२ बलवन्तसिंह — सनिक —गुरगाव
२३३- भगवाना राम — नायक —गा दादौत, डा चिरावा जि जयपुर
२३४- बख्शीराम — नायक —युद्ध करते वीर गति को प्राप्त हुए
२३५- बलवन्तसिंह — एस ओ —मुजफ्फरनगर
२३६ बनवारी — लास नायक—गा कुलेरवर जि रोहतक
२३७- बद्री — सनिक —गा खारोला, डा सेतरी जि अलवर
२३८ भोमन — सनिक —अलवर
२३९ भेराम — सनिक —गाव डा बरसाना फ़रीद राज्य
२४०- विशम्भर दयाल — लफ्टीनेन्ट—गा डा-मनदौदा जि गुरगाव
२४१- बलवन्तसिंह — हवलदार —गा डा दुबाल धान जि रोहतक
२४२ बिशनसिंह — × —वीर गति मिली
२४३ बख्तावरसिंह — × —वीर गति मिली

२४४	बरकतराम	— ×	—वीर गति मिली
२४५	छज्जूराम	— सैनिक	—गा डा अचिना झींद राज्य
२४६-	चन्दरलाल वर्मा	— एस ओ	—गगोला मुहल्ला अलमोडा
२४७	चाननसिंह	— नायक	—गा-डा तिब्बा-कपूथला राज्य
२४८-	चाननसिंह	— सनिक	—मजारा दिनमिरियान, होशियारपुर
२४९-	चन्दगीराम	— सनिक	—गा डा-ढाकला, जि रोहतक
२५०	चिरागदीन	— सैनिक	—गां वरदेची, डा हौसा जि लुधियाना
२५१	छोटेराम	— सैनिक	—गा लाडो सराय, डा महरोली देहली
२५२-	छज्जासिंह	— ×	—गा होशियारपुर डा सियालवा मजरी, अम्बाला
२५३	चिरंजीतलाल	— सैनिक	—गा डा-नानगल कालिया जि नारनौल
२५४	बी यन चटर्जी	—प्रशासक विहाग	—१२/बी कुञ्जलाल बनर्जी रोड, कलकत्ता
२५५-	चाननसिंह	— सैनिक	—गा बुकानवाला डा मोगा जि फिरोजपुर
२५६-	विमल चक्रवर्ती	— ×	—बरमा से लापता । गा डा शारातोली चीटागाव
२५७	चन्दगीराम	— नायक	—गा डा बहू अकबर पुर, जि रोहतक
२५८	छत्तासिंह	— नायक	—नावंग में मरे
२५९-	चन्दसिंह	— नायक	—आवाग म मरे
२६०-	चेरियान	— लैफ्टीनट	—क्लेवा मे मरे
२६१	चाको एम आई	— से लैफ्टीनैंट	—युद्ध मे वीर गति मिली
२६२-	चन्दरसिंह	— नायक	—युद्ध में वीर गति मिली
२६३	चाद बहादुर	— नायक	—युद्ध में वीर गति मिली
२६४	चन्दरसिंह	— सैनिक	—गा कनिरी डा हिंडोनी-जयपुर(बम वर्षा)
२६५-	चन्द्र दत्त	— सैनिक	—पाइमाना में बम वर्षा से मरे
२६५	चन्दासिंह	— सैनिक	—मायम्यो में मरे
२६७	चाननसिंह	— हवलदार	—क्लेवा के युद्ध में
२६८	चन्द्रमान	— एस ओ	—गा हसनपुर गुरगान क्लेवा युद्ध में
२६८	छतरसिंह	— सैनिक	—भरतपुर-क्लेवा युद्ध में
२७०-	छैनसिंह	— नायक सैनिक	—बरमा में मरे
२७१-	चहिरसिंह	— सनिक	—क्लेवा के समीप बम वर्षा में
२७२-	एम एन दे चौधरी	— कैप्टेन	—मनेवा के युद्ध में वीर गति
२७३	चन्नासिंह	— एस ओ	—फाम म युद्ध करते वीर गति मिली
२७४	चाननसिंह	— सनिक	—युद्ध मे वीर गति मिली
२७५	जी चैलाह	— ×	—फांस से लापता
२७६	चहिलू	— ×	—गा-तेहरा कला डा-सोनपत जि रोहतक
२७७	चिनाप्पा	— ×	—जरमनी में मृत्यु हुई
२७८	चन्दगीराम	— सनिक	—गा निमोरियाली डा छापर झींद
२७९-	चन्दनराम	— सनिक	—गा खिनारी, डा-उचैन जि भरतपुर
२८०	चरनसिंह	— एस ओ	—गां वाघोली, डा हिंडौन जयपुर

२८१-	चरनसिंह	— ×	—गा मोरानपुर डा जहेराबाद बुल दशहर
२८२	चाननसिंह	— सनिक	—गा कुकरावा कपूथला राज्य
२८३	चाननसिंह	— ×	—पकड़े गए और फांसी दे दी गई
२८४	च दनसिंह	— सैनिक	—गा छा द, डा-चौकुलिया जि अल्मोड़ा
२८५-	च दगीराम	— सनिक	—गा घोनी बिलोर वाला, सोवारी, हिसार
२८६	चामनसिंह	— सनिक	—गा तिम्वा, डा बनव दी, जल धर
२८७	चरनसिंह	— लैंस नायक	—गा डा ढाकली जि मेरठ
२८८	छब्रेश्वर तिवारी	—एन स निक	—युद्ध में वीर गति मिली
२८९	च धीराम	— नायक	—युद्ध मे वीर गति मिली
२९०	च दगीराम	—हवलदार	—गा गोपी डा बापरा, भींद राज्य
२९१-	चरनसिंह	—लैंस नायक	—गा डा छरवन जलधर मुलतान जेल में फासी ।
२९२	चादसिंह	— ×	—युद्ध में वीर गति मिली
२९३	चु नीलाल	— सनिक	—गा कुलवाला डा दातारपुर, होशियारपुर
२९४	चाननसिंह	— सनिक	—गा कुलियान, डा साने जि अम्बाला
२९५	चेराग खा	— सनिक	—गां काहता डा तलव दी, कपूथला
२९६	चरनसिंह	—लस नायक	—गा डा राजपुर माया, जि होशियारपुर
२९७	छज्जूराम	— ×	—गां डा नखाना, जि रोहतक
२९८	च दूलाल	— ×	—गा भागपुर डा खेरला, जि बुल द शहर
२९९	चमनसिंह	— एस ओ	—गा पहाड़ी डा हि डोली, जयपुर
३ ०	चादरसिंह	— सनिक	—गां खारियान, डा मातेर, हिसार
३०१	च दनसिंह	— सैनिक	—हि डोनी जयपुर
३०२	च दू कु वर	— ×	—लापता मारे गए
३०३	छोटू	— ×	—गा बाले, डा निसाग जि करनाल
३०४-	चुहारसिंह	— ×	—वीर गति मिली
३०५	दलावर खा	—हवलदार	—गां डा जाहली जि झेलम
३०६	दलबहादुर थापा	— केप्टेन	—बड़ा कोठे, धरमशाला छावनी, कांगड़ा
३०७	दुरगामन	— केप्टेन	—गा मोरीखाना,डा धरमशाला, कांगड़ा
३०८	देव सिंह	—लैंस नायक	—गा डल्लो, डा भोगपुर सिरवाल, जलधर
३०९	डी एल दास	—एस ओ	—गां राम कटोरा बनारस छावनी
३१०	दलीपसिंह	— सनिक	—गा डा-रयपाना, जि रोहतक
३११-	धज्जाराम	— सैनिक	—गा-डा मदोना जि रोहतक
३१२	डेनियल परान जोती	— ब्राडकास्ट	—मदरास (सिंगापुर में मरे)
३१३	धारासिंह	—लस नायक	—गां अटखोर डा हलालपुर, देहली
३१४	धरमसिंह	— नायक	—गां केर डा बहादुरगढ जि देहली
३१५	दास यच सी	— दलपति	—गा पुरान पल्टन, डा रमना, जि ढाका
३१६-	देवसिंह	— एस ओ	—१९४४ मे एकानाबो मे मारे गए
३१७	धूर्मसिंह	— नायक	—ब्रावरा मे युद्ध करते मरे
३१८	धार्मसिंह	— सैनिक	—मिवा हाका मे १९४४ में मरे

३१६- दरवानसिंह	— सैनिक	—श्रावग में मृत्यु हुई
३२० धरमसिंह	— सैनिक	—श्रावग में मृत्यु हुई
३२१ देबसागर राय	— नायक	—१९४५ मे बरमा में बम वर्षा मे मरे
३२२ डामर बहादुर	— लैंस नायक	—युद्ध मे वीर गति मिली
३२३ दातू चोहान	— नायक	—गा-कुरानडवाडो, बम्बई
३२४ धरमसिंह	— लफ्टीनेट	—युद्ध में वीर गति मिली
३२५ दयाराम	— नायक	—युद्ध मे वीर गति मिली
३२६ दुनीचन्द	— नायक	—युद्ध मे मारे गए
३२७ पानबहादुर गुरग	— नायक	—गा क्लू लैन (देहरादून)
३२८- दारको जीराव	— ×	—युद्ध मे मारे गए
३२९- दीवानसिंह	— एस ओ	—गा रसूलपुर, डा शालुहसनपुर-बुल दशहर
३३०- दीवानसिंह	— नायक	—गुरदासपुर
३३१ दमोल्ताराम	— सनिक	—गा रिठोल, डा शाना, जि गुरगाव
३३२- दयानन्द	— सनिक	—युद्ध में वीर गति प्राप्त हुई
३३३ डूगरसिंह	— सनिक	—युद्ध मे मरे
३३४ दिलीपसिंह	— सैनिक	—युद्ध करते हुए मारे गए
३३५ दानसिंह	— लैंस नायक	—बम वर्षा म मरे
३३६ दीवानसिंह	— सनिक	—बम वर्षा मे मारे गए
३३७ दामोदर सिंह	— सनिक	—मिया हाका मे मत्यु हुई
३३८ दीवानसिंह	— सनिक	—पार्बो में बम वर्षा से
३३९ दीवानसिंह	— सैनिक	—यन मे बम बर्षा से
३४०- दानीचन्द	— सनिक	—हाका में मत्यु हुई
३४१- दामूचन्द	— सनिक	—डागू मे बम वर्षा से
३४२ दलीपसिंह	— ×	—कलेवा म मत्यु हुई
३४३- दरबानसिंह	—लस नायक	—कोहिमा मे युद्ध करते हुए
३४४- देव कालीप्रसाद	— नायक	—झाडले मे मत्यु हुई
३४५- धूमसिंह	— ×	—मुजफ्फरनगर (युद्ध करते मरे)
३४६ दीक्षित जी यस	— नायक	—
३४७ दलेलसिंह	— सैनिक	—मेरट इम्फाल में बम वर्षा से मरे
३४८ दलीपसिंह	— सैनिक	—कलेवा में बम वर्षा से मरे
३४९- देबीसिंह	— हवलदार	—कलेवा में बम वर्षा से
३५०- दुर्गादास	— एस ओ	—मत्यु हुई
३५१ दीवानसिंह	— सनिक	—गा-डा मिथोवल जि शेखूपुरा
३५२ दरियावसिंह	— एस ओ	—फास में मारे गए
३५३ धाना पाल	— ×	—फ्रास म युद्ध म मारे गए
३५४ दलीपसिंह	— सनिक	—फ्रांस मे गोली स मरे।
३५५- दावा दानम	— ×	—जुलाई १९४३ में हालैंड में बम फटने से मरे
३५६ दलीपसिंह	— सनिक	—गां रिठाला, डा सांपला, जि रोहतक
३५७- धुरू	— ×	—मेरठ बरसा में मृत्यु

३५८ दीवानसिंह —लैंस नायक—गा सिरी डा नाम्रोली, जि गढ़वाल
३५९- ढौंडू रावत — × —जरमनी में मृत्यु हुई
३६० दीपचन्द —लैंस नायक—गा बिजाना करनाल
३६१ धान बहादुर —हवलदार —नेपाल युद्ध में वीर गति
३६२ धान बहादुर —हवलदार —नेपाल युद्ध मे
३६३- देवसिंह — सनिक —गा भीमपुरा, डा साये ती जि अल्मोड़ा
३६४ धानसिंह — सनिक —डा लोहार हाट, जि अल्मोड़ा
३६५ धानसिंह — हवलदार —गा जमीलयान जि अल्मोड़ा
३६६- धानीचन्द — × —युद्ध में वीर गति मिली
३६७ दरवानसिंह — × —गा डा शाप कोट जि अल्मोड़ा
३६८ धानसिंह — सनिक — पतलीमाला दानपुर, डा लुहार खेत अल्मोड़ा
३६९ दशनसिंह —लफ्टीनेन्ट —गा सरा, कपूरथला
३७० दयाचन्द —लैंस नायक —गा धनासन, डा बोधिया झींद राज्य
३७१ धरमसिंह —लैंस नायक —गा देवली डा मेराखुर जि आगरा
३७२ दरावसिंह —लैंस नायक —गा बसरी चोहार, डा कुली, आगरा
३७३ देवकरन — सनिक —गा डा डालमिया जि गुरगांव
३७४ दीन मुहम्मद — सनिक —इम्फाल के निकट मारे गए
३७५ दरियावसिंह — लफ्टीनट —गा जाखडा डा बहादुरगढ़ गुरगांव
३७६ देवीदास निकाम — सनिक —युद्ध मे वीर गति प्राप्त हुई।
३७७ धौंडू रहावान कर — सैनिक —युद्ध मे वीर गति मिली।
३७८ ढोहीराम जयदेव — सनिक —युद्ध करते वीर गति को प्राप्त हुए
३७९ दातू काडिटकर — सैनिक —युद्ध म मारे गए
३८० दलवारा सिंह — कप्तेन —३ ५ ४५ को देहली जेल मे फांसी लगी
३८१ दीदारसिंह — × —फ्रांस में मृत्यु हुई
३८२ दयालसिंह — × —युद्ध में मारे गए
३८३ दशनसिंह — सनिक —१९४४ में युद्ध में मारे गए
३८४ दिलीपसिंह — सपोीट —गा डा मु डा बाथ चक ५४ लायलपुर
३८५ दिलूराम — हवलदार —गा डा दुबालधन जि रोहतक
३८६ दीपसिंह — एन/सैनिक —गा खारसी, डा बोरीमादा, जोधपुर
३८७ दीवानसिंह — हवलदार —गा सायगा डा औरंगाबाद, जि बुलन्दशहर
३८८ डोगरु किशन — लंस-नायक—युद्ध मे मारे गए
३८९ दिगोपाल — × —युद्ध में मारे गए
३९० देदलाराम — × —गा पाचरियो भरतपुर राज्य
३९१ दीपसिंह — × —गा तारागढ युद्ध में मारे गए
३९२ धनीराम — सनिक —युद्ध मे मारे गए
३९३ दुनीचन्द — × —युद्ध में मारे गए
३९४ देवीराम — × —युद्ध म मारे गए
३९५ फतेहखां — हवलदार —गा डा धारूकाना जि झेलम
३९६ फजलखां — हवलदार—गा शक्कर पारिया, डा सैन्पुर, जि रावलपिंडी

३९८ फतेहसिंह — नायक —युद्ध मे मारे गए
३९८ फतेहसिंह — लपनेंटे ट—युद्ध मे मारे गए
३९९- फिरोज खा — लैंस नायक—गा हजियाल, डा करियाला झेलम
४००- फतह खा — हवलदार —हावा युद्ध में मारे गए
४०१ फतहअली — नफरटर —काम मे मारे गए
४०२ फतहसिंह — X —गा चिमनी जि रोहतक
४०३ फजल करीम — नाई —हस्पताल मे मारे गए
४०४ फकीरसिंह — सनिक —युद्ध में मारे गए
४०५ फजल मोहम्मद — सैनिक —जोहार बारू अस्पताल में मरे
४०६ फतह मुहम्मद — X —गा शेरपुर जि होशियारपुर
४०७ फतह खा — नायक —गा सरोव डा जिलोव जि झेलम
४०८ फतह अली — नायक —गा डा मूचाल खुद, जि झेलम
४०९ फजल दाद — सनिक —गा हस्ताल डा पोवाबहादुर झेलम
४१० फरजन्द अली — सनिक —युद्ध में मारे गए
४११ फजलदाद — सनिक —इटली म जुलाई १९४४ में मरे
४१२ फतहसिंह — सनिक —गा शायपुर डा समनराग, जि अम्बाला
४१३- फत्ताराम — सनिक —भरतपुर युद्ध में मारे गए
४१४ फौजासिंह — X —युद्ध में मारे गये
४१५ फतहसिंह — सैनिक —युद्ध में मारे गए
४१६ फतह मुहम्मद — X —रोहतक जिगरगच्छा म मरे
४१७ गब्बरसिंह — सैनिक —गा चकेर गाव, डा मिलाग जि गढवाल
४१८- गुरुबचनसिंह — लैफ्टीनेन्ट —मुंगेर के युद्ध में मारे गए
४१९ ग्यासीराम —लस नायक—गा बियान, डा बरवाला हिसार
४२० गोपालचन्द्र गगोली — X —३ डी गोपी बोस लेन बाऊ बाजार, कलकत्ता
४२१- गुलाब नूर — सैनिक —गा बाजार वाले डा रुस्तम जि मादान
४२२- गुरनामसिंह — सैनिक —गा कोट करोर कला, डा दरोली भाई फिरोजपुर
४२३ गुलाम खां — सनिक —अकजाई डा शोर कोट, जि कोहाट
४२४ गुरनामसिंह — सैनिक —गा च ाक खुद डा-क गनवाल जि मलेर कोटला
४२५- गुरु स्वामी — नायक —गा प॰शपायु, डा विक्षाम बरम, जि उत्तर आरकट
४२६ गगासागर दीक्षित — हवलदार—गा डा सिकन्दरपुर जि फर्रुखाबाद
४२७ गोविंद स्वामी — सनिक —गा डा सारमपयाल जि तजौर
४२८- गुरदयाल — X —जब मित्र राष्ट्रो को आत्म समपण की आज्ञा मिली तो तो आत्म हत्या करली
४२९- गमलसिंह — हवलदार—१९४४ में मृत्यु हुई
४३० गजपालसिंह — हवलदार—१९४४ में मृत्यु हुई
४३१ ग्यानसिंह — नायक —१९४४ में मृत्यु हुई

४३२ ब्रजपालसिंह	— नायक	—१९४४ में मृत्यु हुई
४३३- गोविन्द सिंह	— लैंस-नायक	—१९४४ मे मृत्यु हुई
४३४- गबरसिंह	— लैंस नायक	—१९४४ में मृत्यु हुई
४३५ गोपालसिंह	— सनिक	—१९४४ मे युद्ध करते हुए मारे गए
४३६ गुमानसिंह	— सैनिक	—१९४४ मे युद्ध करते मारे गए
४३७ गबरसिंह	— सनिक	—बैंगकाक में १९४५ मे मृत्यु हुई
४३८ गोपालसिंह	— एस ओ	—बरमा में युद्ध करते मारे गए (१९४५)
४३९- गुरबख्शसिंह	— हवलदार	—बरमा में युद्ध मे मारे गए (१९४५)
४४०- गुलामहैदर शाह (तमगए बहादुरी)	— हवलदार	—८-३-४४ को युद्ध मे मारे गए
४४१- गोबाराम	— एस ओ	—सितम्बर १९ में मेम्यो हास्पिटल मे मरे
४४२- गुलाम मुहम्मद	— लफ्टीनेन्ट	—१९४४ म कलेवा के युद्ध में मारे गए
४४३ गनेश गोपाल	— नायक	—१९४४ मे मोराग में युद्ध मे मारे गए
४४४ गिरराज सिंह	— हवलदार	—फरवरी १९४४ मे कालादान नदी म डूब गए
४४५ गुलाम मुहम्मद	— नायक	— २६ ५ ४४ को तामू में मृत्यु हुई
४४६- गुलाम पजतन	— सनिक	—मृत्यु हुई
४४७- गोपाल सिंह	— ×	—गा सलगढी, डा-धरमशाला, जि कांगडा
४४८ गोविन्दसिंह रावत	— नायक	—वीर गति को प्राप्त हुए
४४९- गोदा बी जी	— कप्तेन	—बरमा के युद्ध मे अगस्त १९४४ में मारे गए
४५० गुमानसिंह	— सनिक	—युद्ध में वीर गति मिली
४५१ गोविन्दसिंह	— सनिक	—युद्ध में वीर गति मिली
४५२- गोपालमल	— लैफ्टीनेन्ट	—युद्ध में वीर गति मिली
४५३ गोरे खा	— लफ्टीनेन्ट	—युद्ध में वीर गति मिली
४५४- गोपालसिंह	— हवलदार	—बम वर्षा मे तामू में मई १९४४ में मरे
४५५ गोपालसिंह	— सैनिक	—गा पाफोन डा डुग बागेश्वर
४५६- गजेन्द्रसिंह	— सनिक	—गा प्रसकोट थामू डा-प्रसकोट, अल्मोडा
४५७ गजेन्द्रसिंह गुरग	— नायक	—लापता
४५८- घोमाम	— लफ्टीनेन्ट	—गा हुसनपुर, जि गुरगाव
४५९ गोरधन	— सनिक	—बम वर्षा मे मारे गए
४६० गगासिंह	— ×	—कलेवा के निकट मृत्यु हुई
४६१ गुरुमुखसिंह	— ×	—जि अमृतसर, फास के मोर्चे पर मरे।
४६२ गुरमानसिंह	— लैंस नायक	—४ ६ ४४ को ढाका में बम वर्षा से मरे
४६३ गुरबख्श सिंह	—एल एम एम	—इटली के युद्ध मे मारे गए
४६४- गुरमुखसिंह	— गफेन्टर	—जरमनी युद्ध मे मारे गए
४६५ गुलाम ईसाजां	— गफ्टर	—सितम्बर १९४४ मे फ्रास में मारे गए
४६६- गुरदयालसिंह	— ×	—जि फिरोजपुर
४६७ गोपीराम	— नायक	—गा बुधपुरा, डा दादरी, बुलन्दशहर
४६८ गोविन्दसिंह	— श्री गफ्टर	—जरमनी मे बम वर्षा में मारे गए
४६९ गोविन्द राजू	— ×	—युद्ध में मारे गए

४७०	गुरबचनसिंह	— सैनिक	—गा सलोर, डा नवा शहर, जलधर
४७१	गजाधरसिंह	— सैनिक	—युद्ध करते मारे गए
४७२	गुरदेव सिंह	— ×	—गा डा तपो तेह जगराव, लुधियाना
४७३	गुलजार खा	— सैनिक	—सिंगापुर में मृत्यु हुई
४७४	गिरधारीलाल	— सैनिक	—गा धावना डा दाहमा, गुरगाव
४७५	गनेशीलाल	— सैनिक	—गा कोलप्री, डा बिरार, रोहतक
४७६	गुलाम रसूल	— सैनिक	—चिताग नदी के पास युद्ध मे मारे गए
४७७	गुलाबसिंह	— सैनिक	—गा पागो, डा रुद्रप्रयाग गढवाल
४७८	गोकलराम	— सैनिक	—गा बावा, डा शाही झोलराही-नाहन राज्य
४७९	गुरबख्श सिंह	— सैनिक	—युद्ध में वीर गति मिली
४८०-	गुरदयाल सिंह	— लैं नायक	—गा डा पवासी जि लुधियाना
४८१	गुलवन्तसिंह	— हवलदार	—गा सादुकला डा पदौर पटियाला राज्य
४८२	गुरबख्शसिंह	— सैनिक	—गा डा वेगियाल तेह कसूर लाहौर
४८३	गुलाम नबी	— लैं-नायक	—धरमाबाद, जि गुरदासपुर
४८४	गुरदयाल सिंह	— ×	—तरहान शिविर में मृत्यु हुई
४८५	ज्ञानसिंह	— ×	—युद्ध में वीर गति मिली
४८६-	गोपीनाथ	— ×	—युद्ध में वीर गति मिली
४८७-	गु दयालसिंह	— ल नायक	—गा सेवावाला डा जतो, नाभा राज्य
४८८-	गुरचरनसिंह	— हवलदार	—दिल्ली मे फासी दी गई
४८९	गुरदासिंह	— सैनिक	—गा डा वलतोहा लाहौर
४९०	गुलाम कादिर	— हवलदार	—गा डा मलाहबाद भावलपुर राज्य
४९१	ग्रदित्तसिंह	— हवलदार	—गा डा सरहाली, जि अमृतसर
४९२	गुरदयालसिंह	— सैनिक	—गा भोजी डा चमकुर जि अमृतसर
४९३	गुरदयालसिंह	— लफ्टीनेंट	—युद्ध में वीर गति प्राप्त हुई
४९४	गोपालाराम	— सैनिक	— युद्ध मे वीर गति मिली
४९५	गजाकर सिंह	— ×	—गा डा महुमा, जि मुराना
४९६	गोविन्द राजू	— सैनिक	—मदरास युद्ध में मारे गए
४९७	गिल्लीराम (शहीदे भारत)	— सैनिक	—गा चन्दन, डा हिन्डौन, जयपुर
४९८	गिराजसिंह	— सैनिक	—गा जेसगांव, डा हिन्डौन, जयपुर
४९९	गजनसिंह	— हवलदार	—गा बांदा होरी, डा मुवाल, हिसार
५००-	गनपतराम	— सैनिक	—गा मुलुकाना गल डा नारनौल पटियाला
५०१	गगासहाय	— सैनिक	—गा निमदाजी वाला, डा मानद भींद राज्य
५०२-	गोपालाराम	— सैनिक	—गा म्योलाम हराजपुर, डा फरीदाबाद गुरगांव
५०३-	गुरसहाय	— सैनिक	—डा रेवाडी जि गुरगांव
५०४-	गुर स्वामी	— सैनिक	—युद्ध में वीर गति मिली
५०५	गनपत हलगार	— सैनिक	—युद्ध करते मारे गए
५०६	गुरदयालसिंह	— सैनिक	—युद्ध करते हुए मरे
५०७-	गुलजोराम	— सैनिक	—गां खोरा, डा खोराल प्रलवर राज्य

५०८- गोपाल — लै नायक —गा बु डाया, डा भभर, जि रोहतक
५०९ गगाराम — × —जि गढवाल
५१०- गोपालसिंह — × —कागडा
५११- हरीदास — ले कनल—जरगार बाजार, कोहाट
५१२ हरीसिंह — कप्तेन —गा डा "ाखा जि लुधियाना
५१३ होशियारसिंह —एस ओ —गां डा खादा जि रोहतक
५१४ हजारी — सनिक —गां सेलाग, डा-कानौना, नाभा राज्य
५१५ हरीसिंह — ल-नायक—गा शाहपुर, डा मेहरौल, जि देहली
५१६ हजारासिंह — हवलदार—गा काम सिलयाना, जि होशियारपुर
२५ १० ४४ को लाल किले मे फासी
५१७ हकूमत राय — सपटीनेन्ट—मु सेठिया सेलाराग, जि केम्बलपुर
५१८ हरनारायन — सनिक —गां डा मदीना, जि रोहतक
५१९ हातम अली — × —गां डा धरेकन कला, जि गुजरात
५२० हरीसिंह — सनिक —गा-पपराला, डा रुपर जि अम्बाला
५२१- हरकाराम — नायक —गा डा बमला जि हिसार
५२२ हाकमसिंह — एस ओ —गां खायला, डा मौसी, पटियाला राज्य
५२३ हरिसिंह रावत — एस ओ —गा थाला दिमार डा सिमली, जि गढवाल
५२४ हजूरासिंह —केडट आफि —गां भवकानवाली, डा बाहा, पटियाला
५२५- हरदोवसिंह — रोहतक —मृत्यु हुई
५२६ हेमराज — × —आत्म समपण की आज्ञा मिलने पर
सिंगला डाऊन मे आत्म हत्या करली।
५२७ हिम्मतसिंह — एस ओ —दिसम्बर ४३ में जौसून में डूब गए
५२८- हरिसिंह — लै नायक —मृत्यु १९४४ मे
५२९- हरवसिंह — सैनिक —१९४४ मे मृत्यु हुई
५३० हसासिंह — एस ओ —मृत्यु
५३१ हरवससिंह — नायक —मृत्यु
५३२ हरबन्दसिंह — हवलदार —कोहिमा म युद्ध करते मरे
५३३ हिम्मतसिंह — एस ओ —फरवरी १९४५ मे बम वर्षा से मरे
५३४ हिम्मतसिंह — एस ओ —अस्पताल में जलने से मृत्यु
५३५ हामिद आर ए — लफ.नेिन्ट—रगून मे मार्च ४५ में मृत्यु
५३६ हरिसिंह — सनिक —गां डा दलचोर, जि फीरोजपुर
५३७ हमीरसिंह — सैनिक —युद्ध में मरे
५३८- हीरालाल — सनिक —सिंगापुर म मृत्यु हुई
५३९ हाकिमसिंह — सानक —जुलाई १९४४ म कलेवा म मरे
५४० हीरासिंह — सनिक —जुलाई १९४४ में तागू म बम वर्षा मे मरे
५४१ हरदत्त — सनिक —अगस्त १९४४ मे मृत्यु हुई
५४२ हसराम — सनिक —कलेवा के पास युद्ध म मारे गए
५४३- हरफूलसिंह — नायक —डा कालानेर जि राहतक
५४४ हाकमसिंह — सनिक —३१ ८ ४४ को हाका के युद्ध मे मरे

५४५- हजूरासिंह — सैनिक —कलेवा में अगस्त १९४४ में मृत्यु हुई
५४६- हजारासिंह — लैं नायक —गा जगनिवाला, डा बिदोला, जि होशियारपुर
५४७ हरसासिंह — X —ताम् मे अगस्त १९४४ में मृत्यु हुई
५४८- हफीजउल्ला —लैफ्टीनेंट—गा गुलमा पडा, डा हरीपुर हजारा
५४९- हरीसिंह — X —जरमनी में सितम्बर १९४२ म आत्म हत्या कर ली
५५०- हरीचन्द — हवलदार—गा डा चुकली जि होशियारपुर
५५१ हरप्यान — X —गाँ राजपुर कराली
५५२ हरमोहन सिंह — हवलदार —परतापगढ कालाढोंग मोर्चे पर मारे गए
५५३ हरबंससिंह —औ एफ टी आर—फ्रांस मे मारे गए
५५४ हरसराम — सैनिक —अलवर कलेवा म युद्ध म मारे गए
५५५ हरिदत्त — सैनिक —अलवर मेम्यो अस्पताल में मृत्यु हुई
५५६- हरीसिंह — सैनिक —गा मिसरी डा इन्दलमिया दादरी, झींद राज्य
५५७ हरबंससिंह — सैनिक —गा छापाई, डा हपुपला, जलधर
५५८ हजारासिंह — लै नायक—लापता
५५९ हदायतउल्ला — लैं नायक —युद्ध मे मारे गए
५६० हरीसिंह — लफ्टीनेन्ट—जेल में मृत्यु हुई
५६१ हुसनअली — लैं-नायक —गा डा चाहा सैदानशाह, जि झेलम
५६२ हरजीतसिंह — सैनिक —इम्फाल के मोर्चे पर मारे गए
५६३ हाकमसिंह — एस ओ—इम्फाल के मोर्चे पर मारे गए
५६४ हिरो राम — सैनिक —युद्ध म वीर गति मिली
५६५ हारोहरन सिंह — हवलदार— युद्ध में वीर गति मिली
५६६ हरीसिंह — सैनिक —गा-गाधोन, डा सरकाघाट जि कांगड़ा
५६७ हजारीलाल — X —गा दुलाछिका, डा चपोके, जि सियालकोट
५६८ हरलाल — सैनिक —मामा राज्य
५६९ हरनामसिंह — सैनिक —गा मनहजीतपुरा, जि भिंड
५७० हवराज — ल नायक —गा १ आरपुर जि बुलन्दशहर
५७१- हरीराम — लैं नायक —गा बदपुरा, डा दादरी बुलन्दशहर
५७२- हरमोहन — सैनिक —युद्ध म वीर गति मिली
५७३ हनुमान — ल नायक —गा-डा पचहारी, जयपुर
५७४ हरदेव — सैनिक —युद्ध में वीर गति मिली
५७५ हरीसिंह — सैनिक —युद्ध मे वीर गति मिली
५७६ हीराम — ल नायक —गा डा तिगाव जि गुरगाँव
५७७ हसाराम — सैनिक —गा खानपुर खारला डा वांहू जि रोहतक
५७८ हीरालाल — सैनिक —जि गुरगाव युद्ध में मारे गए
५७९- हरबंससिंह — X —गा बादरपुर डा मामोली, जि अम्बाला
५८० इनायत उल्ला (वीरे हिंद) — लैफ्टीनेन्ट —तालोजाई, डा पब्बी जि पेशावर
५८१- ईश्वरदास भाटिया— X —गां डा काला बाग, जि मियांवाली

५८२ इन्दरसिंह — सनिक —गा उदोहाल, डा मेहतपुर, जि जालधर
५८३- इन्दरसिंह — नायक —१९४४ में मृत्यु हुई
५८४- इन्दरसिंह — सनिक —१९४४ म मृत्यु हुई
५८५ इन्दरसिंह —लैंस नायक —१९४४ मे मृत्यु हुई
५८६ इन्दरसिंह — लफ्टीनेन्ट —मृत्यु हुई
५८७ इन्दरसिंह — से-लैफ्टीनेन्ट—सितम्बर १९४४ मे मेरयो हास्पिटल म मृत्यु
५८८- इस्मतउल्ला —को/जी यफ टी आर —फ्रांस मे मारे गए
५८९ इन्दरसिंह — × —क्लेवा मे मृत्यु हुई
५९०- इलामचन्द — × —गा डा- सारसपुर, जि मरठ
५९१ इन्द्रराज — लेफ्टीनेन्ट – गा नौमरियाती, डा छप्पर, झींद
५९२ इब्राहीम — सनिक —इम्फाल के युद्ध में मारे गए
५९३- इमामुद्दीन — सनिक —इम्फाल के युद्ध मे मारे गए
५९४ इब्राहीम — सनिक —इम्फाल के युद्ध म मारे गए
५९५ इस्माइल — × —मृत्यु हुई
५९६ इमानदीन — × —म क्बूलगढ डा जि मीरपुर
५९७ ईश्वरसिंह — सनिक —गा खरोरा डा-खरताल अलवर
५९८- इरशाद — ल-नायक —गा निगाना जि रोहतक
५९९ इन्दरसिंह — × —गा कूबियान, ब्रहिमर्न दयान, डा रामगढ़ जम्मू
६०० जगतसिंह — हवलदार —अराकान म १९४४ में युद्ध मे मारे गए
६०१- जय लाल — सनिक —गा डा मदीना जि रोहतक
६०२- जयमलसिंह — सनिक – गा पडुवान, डा डालमिया दादरी, झींद
६०३ जरनेलसिंह — नायक —गा डा बडी देहली जि होशियारपुर
६०४ जीवनसिंह — मेजर —गा डा मायो पथ जि जलधर
६०५ जगतसिंह — हवलदार—गा कुन्दनपुर डा प्रादमपुर जि जलधर
६०६- जोवन्दसिंह — मेजर —गा-डा उग्गेन गल जि अमृतसर
६०७- जागीरसिंह — × —गा-कलिमान सिम्बले, डा रुपर अम्बाला
६०८ जगराम — नायक —गा देवावाश डा भूनपा, जि हिसार
६०९- जगराम — लैफ्टीनेन्ट—गा तुगलकाबाद डा मेहरौली, देहली
६१० जरनेलसिंह — सनिक —गा बुज राका, डा सरहाली जि अमृतसर
६११ जहानदाद — न यक —गा शकर पासिया, डा सदान, रावलपिण्डी
६१२ झमटमल सुखरामदार हुसराजनी — × —मुख्य बाजार सराफ चौक, हैदराबाद-सिंध
६१३- जागीरसिंह — एम पुलिस—गा डा भाबाल, जि अमृतसर
६१४- जोगेन्द्रसिंह — सनिक —गा जोहाल, डा जादूसिंह जि जलन्धर
६१५- जुगतीराम — हवलदार —गा दहामान, डा उकलाना हिसार
६१६ जागीसिंह — × —गा मनीपुर, डा सामोगढ़, जि गोरखपुर
६१७ जगतसिंह — नायक —गा डा-मीरपुर जि गुरगांव
६१८- जीतसिंह — × —गां मलेना, डा रायजाम, जि करनाल

६१६-	जगतसिंह	— सैनिक	—गा सरितापुर, डा मानक चेरी, होशियारपुर
६२०-	जसवन्तसिंह	— सैनिक	—मृत्यु हुई
६२१	जगतसिंह	— हवलदार	—१६४४ मे युद्ध में वीर गति मिली
६२२	जोगासिंह	—लस नायक	—१६४४ मे युद्ध में वीर गति मिली
६२३-	जितारसिंह	—लैंस नायक	—१६४४ में मृत्यु हुई
६२४-	जवाहरसिंह	— सैनिक	—१६४४ में मृत्यु हुई
६२५	झनकारसिंह	— सनिक	—१६४४ म मृत्यु हुई
६२६	जगतराम	— सनिक	—युद्ध म मारे गए
६२७	लोगेन्द्रसिंह	— हवलदार	—वारो में १६४४ म मृत्यु हुई
६२८	जर्यसिंह	— ×	—जलने से मृत्यु हुई
६२६-	जयकरन सिंह	— हवलदार	—बरमा युद्ध मे मारे गए
६३०	झूटाराम	— सनिक	—इम्फाल के मोर्चे पर जून १६४४ मे घावो से मरे
६३१	जलालसिंह	— सनिक	—गा डा हस्तल जि झेलम
६३२	जगदेवसिंह सूरी	— लफ्टीनेन्ट	—गां डा ढोलटोला, जि रावलपिंडी
६३३	जगासिंह	—लस नायक	—मियाग अस्पताल मे मृत्यु हुई
६३४	झडासिंह	— नायक	—बरमा म युद्ध में मारे गए
६३५	जयचन्द	— सनिक	—कलेवा के समीप युद्ध मे मार गए
६३६	जीवनसिंह	—लैंस नायक	—कलेवा के समीप युद्ध में मारे गए
६३७	जागीरसिंह	— सैनिक	—ऐश्रीन के निकट युद्ध मे मारे गए
६३८	जीतसिंह	— सनिक	—तामू म अगस्त १६४४ म मृत्यु हुई
६३६	जगत दत	— सनिक	—१६४४ को युद्ध म बरमा मे मारे गए
६४०-	जगतसिंह	— ×	—फास मे मृत्यु हुई
६४१-	जमनादास	— ×	—जरमनी मे हवाई आक्रमण म मृत्यु
६४२	जीतराम	— सनिक	—डा बियास, जयपुर राज्य
६४३	जगमेलसिंह	— सैनिक	—गा तोवना, डा छपरोली, जि मेरठ
६४४	जगताराम	— सनिक	—कागड़ा युद्ध म मारे गए
६४५	जोगाचन्द	— सनिक	—गा कुमाला डा बड़ा, जि-ग्रल्मोड़ा
६४६	जोगिन्दरसिंह	— नायक	—गा डा सिधवान जि जालधर
६४७	जगतसिंह	— सनिक	—गा टिब्बा डा-सलवन्डो जि जालन्धर
६४८	जाटराम	— सनिक	—गा छोपाई, डा कपूथला, जि जालन्धर
६४६-	जाटराम	— हवलदार	—गा ऊघाम, डा-मुरसान, जि अलीगढ
६५०	जगमल	—लैस नायक	—गा खरखरो, डा फरुखनगर, जि गुरगाव
६५१	झूमार	— सनिक	—गा खोमानेशार डा बादशाहपुर, गुरगाव
६५२	जगराम	— सैनिक	—गा डा-मोटा जि गुरगाव
६५३-	जल्लूराम	— सैनिक	—युद्ध म मारे गए
६५४	जयनारायन	— सैनिक	—गा पायघा, डा-डा मोहिन्द्रगढ-पटियाला
६५५	जमाल उद्दीन	— नायक	—गा मेनवान, डा जि कपूथला
६५६	जयसिंह मोरे	—लैस-नायक	—इम्फाल के युद्ध मे मारे गए

७३२ कल्लू (गुरखा) — सैनिक —नवम्बर मे डूब गए
७३३ कुम्वराज (गुरखा) — नायक —मृत्यु हो गई
७३४ केसरसिंह — सनिक —रंगून में अक्टोबर १६४४ मे मृत्यु हुई
७३५- केसरदास — नायक —अगस्त १६४४ में मृत्यु हुई
७३६ कविराज धी के — नायक —अगस्त १६४४ मे मृत्यु हुई
७३७ खान बेग — ही नायक—अराकान पहाडियो म युद्ध मे मारे गए
७३८- खुशहालसिंह — कैप्टेन —गां जुलियान वाला, डा ममावा, जि मोरपुर
७३९- कुल बहादुर — सनिक —श्याम राज्य-बरमा म मृत्यु हुई
७४० केदारसिंह — सनिक —मार्च १६४५ में हवाई आक्रमण मे पोपा म मरे
७४१- कुन्नो मनी — नायक —ई यू में ४ ४ ४४ को अमवर्षा में मरे
७४२ केशरसिंह — नायक —चम्पोल म जून ४४ म मृत्यु हुई
७४३ कृपासिंह —मी हवलदार-हवाई आक्रमण मे दिसम्बर ४३ मे मारे गए
७४४ कालीराम — ल नायक —कलेवा के समीप मृत्यु हुई
७४५ मालासिंह — सनिक —कलेवा के समीप मृत्यु हुई
७४६ खान बाज — सनिक —जुलाई १६४४ म फ्रांस मे मारे गए
७४७ करनसिंह — हवलदार —गां डा बिलासपुर, जि बुलन्दशहर
७४८ करमसिंह — सैनिक —मार्च १६४५ म यजीन मे हवाई आक्रमण मे मारे गए
७४९ मेहरसिंह — सैनिक —ताप्रू मे अगस्त १६४४ म मृत्यु हुई
७५०- किशरसिंह — सैनिक —कलेवा के निकट युद्ध मे (जुलाई ४४) मारे गए
७५१ कलयाराम — सनिक —गा कटेसरा डा-जि भरतपुर
७५२- खान मुहम्मद — हवलदार —२१६४५ (फरवरी) बम वर्षा म मरे
७५३- कालूराम —यू आफिसर —फ्रांस मे मारे गए
७५४ खोदे र — × —कदाविल हाउस, डा अच्छीगोर, नावकुर भारत सरकार ने फांसी दी।
७५५- कल्लूराम — × —फ्रांस में युद्ध मे वीर गति मिली
७५६- करतारसिंह — × —फ्रांस म गोली से अगस्त ४४ में मार दिया गया
७५७ करतारसिंह — × —फ्रांस मे गोली से नवम्बर ४४ म मार दिया गया
७५८ कोटियाह — × —हालैण्ड में बम विस्फोट से जुलाई ४३ मे मरे
७५९- कुमारेन कुट्टी — × —जरमनी मे मृत्यु हुई
७६०- कामेकरसिंह — × —अक्टोबर ४४ म सिंगापुर मे मृत्यु हुई
७६१ कन्नूलामा — एस ओ —३१ १२ ४३ को चिंदविन नदी के युद्ध में मारे गए
७६२ करमसिंह 'ई' — सनिक —गा मसचाक डा कोटा खटाई जि शेखूपुरा
७६३ कानोसिंह — × —गा किला जफरगढ़ डा जोलाना, झींद राज्य
७६४ करतारसिंह — सनिक —गा डा बिलासपुर जि लुधियाना
७६५ करमसिंह ई — सनिक —गा डा लटलियान, जि जलन्धर
७६६- केसरदास — हवलदार —मृत्यु हुई

७६७- खान बास — ओ/जीयफटी–जि कम्पबेलपुर–फ्रांस म मारे गए
७६८ कुवरसिंह — सनिक —गा डा गमाई गगोली, जि अल्मोडा
७६६ केदारसिंह — सनिक —गरीगाव डा पियोरागढ, जि अल्मोडा
७७० काशीराम — सनिक —युद्ध में वीर गति मिली
७७१- धुन्दनलाल — सनिक —गा कोहारार, डा नाहर जि रोहतक
७७२- कृष्णराम — हवलदार —सिताग नदी पर युद्ध मे मारे गए
७७३- कानीराम — सनिक —इम्फाल के समीप युद्ध में मारे गए
७७४ खियालीराम — एस ओ —गा तोख, डा बादशाहपुर
७७५ कन्हैया — ल नायक —गा-डा दिपाल जि रोहतक
७७६ कन्हाईराम — लै नायक —गा घोके, डा-जादुसाना, जि गुरगाव
७७७- कुराराम — नायक —युद्ध मे मारे गए
७७८ खान मुहम्मद — हवलदार —गा डा बहाली, जि हिसार
७७६- खेमसिंह — हवलदार — युद्ध मे मारे गए
७८० खुशीराम — हेड क्लक —युद्ध मे मारे गए
७८१ कुन्दनलाल — लफटीनेन्ट—इम्फाल के पास युद्ध में मारे गए
७८२- करनेलसिंह — × —गा थापी, डा-नुगालाका जि लुधियाना
७८३- खवास खा — सैनिक —गा बलाइन, डा नूरपुर जि झेलम
७८४- करमसिंह — यम सैनिक—इम्फाल के समीप मृत्यु हुई
७८५- करतारसिंह — × —गा बिलासपुर जि पटियाला
७८६ करनेलसिंह — सनिक —युद्ध से मारे गए
७८७- करतारसिंह — सैनिक —शेखपुर-अग्रेजो ने सियाल कोट जेल मे फांसी दी
७८८- कपूरसिंह — सनिक —गा गिदपुर, डा-उगोकी जि सियालकोट
७८६ कशमीरसिंह — लै-नायक —गा डा राइविद, जि लाहौर
७६० कापूसिंह — लैफटीनेन्ट —जि लुधियाना ।
७६१- कालासिंह — लैं नायक —गा डा टाडा, जि गजरात
७६२- कौरसिंह — सनिक —ग माकारने काला स्पोर, अम्बाला
७६३- किशोरीलाल — हवलदार —गा मुकेरी, डा खरार, जि अम्बाला
७६४- कानशीराम — एस ओ —गा थाना, डा हमीरपुर जि कागडा
७६५- कालेराम — नायक —गां खोरि दो, डा मालागढ जि बुलन्दशहर
७६६- करनीसिंह — × —गां बडा गाव, खोरला, जि जयपुर
७६७ कृष्ण बदम — लैं नायक —युद्ध म वीर गति प्राप्त की
७६८- कांशीनाथ कदोरा— सैनिक —युद्ध म मारे गए
७६६ कबी तालप — × —रण क्षेत्र मे मारे गए
८०० कनाइया — लैं नायक —युद्ध करते मरे
८०१- खाजीन शाह — सैनिक —रण क्षेत्र मे मारे गए
८०२ करतारसिंह — सैनिक —गा डा घावनसिंह चक १३ जि शेखूपुरा
८०३ करतारसिंह — लैं-नायक —गा बामपुर, डा-वेरखुद जि लुधियाना
८०४ खेमसिंह — × डा मासी जि अल्मोडा
८०५- खजानराम — नायक —गा मोटाचा, डा-रेगाव, जि गुरगाव

८८१- माधोसिंह — एस ओ — गा - कोयरा, डा चोपता जि गढवाल
८८२ मदनसिंह —लै नायक—गा बनहोली, डा बागेश्वर जि अल्मोड़ा
८८३ मुहम्मद शफी —हवलदार—गा महूवाल डा नकोदर, जि जलधर
८८४ मोहिन्दरसिंह —कप्टेन —गा घूत खुद, डा पिंडोसी बावादास होशियारपुर
८८५ मतवरसिंह —नायक —युद्ध मारे गए
८८६ महीपाल सिंह —१ल नायक—युद्ध मे मारे गए
८८७ महीपालसिंह —२ल नायक—युद्ध म मारे गए
८८८ मोहिन्द्र सिंह — सनिक — मृत्यु हुई
८८९० मानसिंह — सनिक — मृत्यु हुई
८९०- महीपाल सिंह — लें नायक— मृत्यु हुई
८९१ मानसिंह — लै-नायक— मृत्यु हुई
८९२ मदन सिंह — सनिक — मृत्यु हुई
८९३ माधो सिंह — सैनिक — मृत्यु हुई
८९४ मानबहादुरथापा—एस ओ — गा तोतुरानी डा धरमशाला, जि कागडा
८९५ मानीलाल गुरग—एस ओ — युद्ध मे मारे गए
८९६- मोहनसिंह थापा—एस ओ — युद्ध में मारे गए
८९७ महताब सिंह —लैफ्टिनट— ई यू में मारे गए
८९८- मोहर सिंह —हवलदार— मृत्यु हुई
८९९ मिश्रा मार के —हवलदार — बरमा में युद्ध मे मारे गए
९०० महताबसिंह गुमेन—लैफ्टिनैंट—बैंकाक में मृत्यु हुई
९०१- मुहम्मद अफजल—हवलदार—रगून के अस्पताल म मृत्यु हुई
९०२ मोहन सिंह —लफ्टिनट —गा पधाई, डा कपूथला जलधर
९०३ मोहिन्दर सिंह—से-लफ्टिनट—मृत्यु हुई
९०४- मुहम्मद यूसफ भाटी—एस ओ—बरमा में युद्ध मे मारे गए
९०५ मोहरसिंह जाट—स लफ्टिनट—मायम्यो हास्पिटल मे मृत्यु हुई
९०६ मुहम्मद खा — सनिक —बरमा में युद्ध मे मारे गए
९०७ मान सिंह — हवल्दार —मृत्यु हुई
९०८ मानबहादुर दवाई—सनिक —बैंकाक में जुलाई १९४५ में मृत्यु हुई
९०९ मोलार सिंह — नायक —गा डा कानवाली जि गुरगाव
९१०- मूसा खा — × —१९४३ मे युद्ध में मारे गए
९११ मोहनसिंह गुरखा—हवलदार —बरमा युद्ध में अप्रैल १९४४ मारे गए
९१२ मजू पठान — सैनिक —युद्ध में मारे गए
९१३ मुहम्मद गुलाम — सनिक —१९४४ में मारे गए
९१४ मुहम्मद अनवर — लैफ्टिनट—डा नूरपुर, जि झेलम
९१५ मुहम्मद शफी —ल फ्-नट —अराकन मे युद्ध में मारे गए(१९४५)
९१६ मुहम्मद हुसेन —ल नायक —अराकन म युद्ध में मारे गए
९१७ मागेराम — नायक —गा डा दिवाल, जि रोहतक
९१८ मगलसिंह — सै-नायक —युद्ध मे मारे गए
९१९- मगल सिंह — सनिक —युद्ध मे मारे गए

९२० माघ सिंह — सैनिक —युद्ध मे मारे गए
९२१- मोहन सिंह —हवलदार —गा डा याकोट जि अल्मोड़ा
९२२- मोहिन्दरसिंह — सैनिक —गाँ वडाला-कपूरथला जि जलन्धर
९२३ मोहिन्दरसिंह —लाँ नायक — गा पानगाव डा डो थाल जि- अल्मोड़ा
९२४- मदनसिंह —लॉ नायक —अल्मोड़ा-पेगू म बम वर्षा में मरे (४५)
९२५- मुहम्मद शफी — सनिक —अराकान म जलप्रपात से गिर कर मृत्यु हुई
९२६ माल खा — सैनिक —कलेवा के निकट युद्ध में मारे गए (जुलाई ४४)
९२७- मानीराम — सनिक —कलेवा के युद्ध म मारे गए
९२८ मनसानसिंह — सनिक —कलेवा के निकट युद्ध में मारे गए
९२९ मागीराम — हवलदार—गा डा दिघाला जि रोहतक
९३० मगतसिंह —लैंस नायक—गा-कटेसरा, डा कमौन जि रोहतक
९३१ मोहनसिंह — हवलदार—गा डा महन्त, धरमशाला जि कांगडा
९३२ मानसिंह — सनिक —यजीन के युद्ध म मारे गए (३ ४ ४५)
९३३- मगलसिंह — × —बर्मा मे हवाई आक्रमण मे मई १९४५ में मारे गए
९३४ मानचन्द — हवलदार—अस्पताल में मृत्यु हुई
९३५ मुहम्मद फजल — हवल्दार—बरमा में युद्ध में मारा गया
९३६ मागीराम — सैनिक —रगून अस्पताल में बमवर्षा में मारे गए (माच ४५)
९३७ मोहम्मद असलम— एस ओ —फ्रास में युद्ध में मारे गए २४ १२ ४४
९३८ मुहम्मद युसुफ —लैंस नायक—फ्रास में युद्ध म मारे गए
९३९ मार अली खा —यू आफिसर—फ्रास में युद्ध में मारे गए
९४०- मेलाराम — मफरेटर —फ्रास मे युद्ध में सितम्बर ४४ में मारे गए।
९४१- मोहरसिंह — सनिक —गा-लाके, जि फीरोजपुर
९४२- मोजीराम — सनिक —गा खडक, झीद राज्य।
९४३ मसखानसिंह — सैनिक —मारे गए।
९४४ मुहम्मद अमान —यू आफिसर—जरमनी में बम वर्षा मे मारे गए
९४५- मनसाछन्दर — सनिक —गा-बहर, डा रावलकोट पुञ्छ।
९४६- मालिकराम सावने— लेफ्टीनेन्ट—१९४४ में युद्ध मे मारे गए
९४७ महबूब अली — नायक —१९४४ में युद्ध म मारे गए
९४८ मदन बल्लभ — सैनिक —अल्मोड़ा १९४४ में मारे गए
९४९ मोहनसिंह — हवलदार—गा सिमरोली डा चौकूट देघाट अल्मोड़ा
९५०- मानबहादुर थापा—लैंस नायक—गा दनरोर, डा-धुलाघाट- अल्मोड़ा
९५१ मानसिंह — सनिक —गा रनिया तल्ला बाल्दा अल्मोड़ा
९५२- मानसिंह — सनिक —गा-बगाली गांव डा बगाली हाट अल्मोड़ा
९५३- मंगलसिंह — सनिक —गा-नागल, डा मोर्ा दरगढ पटियाला
९५४ मलूकसिंह — × —डा-सम्पुर बुलन्दशहर
९५५- मेवासिंह — एस ओ —गा-डा-स्मालूरी जि जालन्धर
९५६- मस्सासिंह — लैंस-नायक—गा देसारपुर, डा कपूरथला जालन्धर
९५७ मुखासिंह — नायक —गां-वनहुना, डा तलवडी जालन्धर
९५८- मुहम्मद इलाही —लैंस नायक—सिताग नदी के युद्ध में मारे गए

९५९- मोहरसिंह	— ×	—गा पलासुर घर २८७ डा जानीवाली-जाल घर
९६० मेहरबान खा	—लस नायक	—गां डा राम्बा, जि करनाल
९६१ मक्खन	— सैनिक	—गा-जाते, डा सेगरा, क रनाल
९६२ मगलसिंह	— नायक	—गां डा घमिया जि गुरगाव
९६३- मुमताज अली	— सनिक	—गा डा बाबली जि हिसार
९६४- मगहरसिंह	— मजर	— कपूथला लाल किले म प्राण त्याग
९६५ मुबारक अली	— नायक	—इम्फाल म मृत्यु हुई
९६६ मु शी	— नायक	—इम्फाल मे मृत्यु हुई
९६७ मगतराम	— एस ग्रो	—कागडा मागडा माडले अस्पताल में मृत्यु
९६८ अच डी मिया	— ×	—२६ ७ ४४ को युद्ध मारे गए
९६९ मु शीराम	—लैस नायक	—गां निमका डा तिगांव गुरगाव
९७०- मुहम्मद शफी	— सैनिक	—गा डा पट्टी लाहौर
९७१ मुख्तारसिंह	— सनिक	—युद्ध म वीर गति प्राप्त हुई
९७२ मल्लसिंह	— सनिक	—युद्ध म वीर गति मिली
९७३ मायासिंह	— एस श्रो	—कपूथला
९७४ मजनून हुसेन	— सैनिक	—गा डा अशरजाई जि कोहाट
९७५ मुहम्मद खा	—लस नायक	—गा सेठी डा नुरपुर झेलम
९७६ मुहम्मद यासीन	— सनिक	—गा डा गोलरीसारी जि रावलपिंडी
९७७- मुहम्मद अकबर	— सैनिक	—गा डा बसारत, जि झेलम
९७८ महबूब बख्श	— ल नायक	—गा खाई डा-भाऊन, जि झेलम
९७९ मोहनसिंह	— सनिक	—इम्फाल के समीप मृत्यु हुई
९८० मु शीराम	— नायक	—गा-चम्बोली, डा मारेरी, जि कागडा
९८१ मेलाराम	— सनिक	—गां डा चनारी चम्बा राज्य (फ्रांस)
९८२ मिरायत	— नायक	—फ्रास म युद्ध करते मारे गए
९८३ मुहम्मद अयूब	— लफ्टीनेट	—गा नेहर डा रावल कोट, पू छ
९८४ मेहरसिंह	— हवलदार	—गां मेघमानसिंह वाला लुधियाना
९८५ मुहम्मद याकूब	— सनिक	—गा कसीर डा मनसेहरा जि हजारा
९८६ मुहम्मदीन	— सनिक	—गां कालाकालान, डा बुढा सियालकोट
९८७ महगासिंह	— सैनिक	—गा डा सरावन जि जाल घर
९८८- मुहम्मद शफी	— सैनिक	—गा हुराफवाला नई आबादी, कपूथला
९८९ मदनलाल	— नायक	—गा तेही, डा टालागज, कपबलपुर
९९०- मुशीराम	— डाक्टर	—गां दुलेहिके, डा उगोक सियालकोट
९९१ मक्खनसिंह	— सैनिक	—गा डा ग्रावरा जि गुरगाव
९९२ मागेराम	— सैनिक	—गा-चलाहिना डा बेहूर, रोहतक
९९३ माधूसिंह	— हवलदार	—गुरगांव युद्ध म मारे गए
९९४- माधूराम	— एस ग्रो	—रोहतक-युद्ध में मारे गए
९९५ मामराज	— नायक	—मुंजिरी डा तेगाव, रोहतक
९९६ मोहनराम	— सैनिक	—गोयिया, डा लोने, मेरठ
९९७ मोहरसिंह	— सैनिक	—गा मोरोली, डा हिण्डोन, जयपुर

९९८- माधो — सैनिक —गा मोरोली डा हिण्डोन, जयपुर
९९९- मांगूराम — सैनिक —गाँ मोरोली, डा हिण्डोन जयपुर
१०००- मोहरसिंह —लस-नायक—गा रिंडो डा हिण्डोन, जयपुर
१००१ मलखानसिंह — नायक —गा नगला हुकुमसिंह डा रामपुरा, बुलन्दशहर
१००२- मेघसिंह — सैनिक —गा जूनियोपुर, डा दानकोर, बुलन्दशहर
१००३ मेनन — कप्टन —युद्ध म मारे गए
१००४- मोहरसिंह — हवलदार —गा जसवा, समावास, रोहतक
१००५ मेहरसिंह — स नक —गाँ वराना, डा-खाखोला रोहतक
१००६- मीरसिंह — सनिक —गां डा साम्पला, रोहतक
१००७- मरुती गाडवे — नायक —गा-गोमा मण्डी, सतारा
१००८ मेहरचन्द — सनिक —गा छेवेरा डा दादरी, बुलन्दशहर
१००९- मुड्डूराम — सनिक —गा कटसर डा कुमार, रोहतक
१०१० मोहरसिंह — सैनिक —गा मोरारी डा हिण्डोन, जयपुर राज्य
१०११- मोनसिंह — सनिक —गा डा किरावली, आगरा
१० २ मेटसिंह — सनिक —गा डा-वगाना, सवयपुर
१०१३- माघोमोरे — सनिक —युद्ध क्षेत्र में म र गए
१०१४ मकबी जादू — सनिक —युद्ध भूमि म मारे गए
१०१५- माघो सावत — सनिक —रण क्षेत्र में वीर गति प्राप्त की
१०१६ मुहम्मद सरवर — सैनिक —युद्ध म मारे गए
१०१७- मुहम्मद शफी — सनिक —युद्ध म मारे गए
१०१८- मीर गुल — नायक —युद्ध म मारे गए
१०१९- मस्कू वूमल — सनिक —लापता विश्वास किया जाता है कि मारे गए
१०२०- माघू सोलके — सनिक —लापता विश्वास किया जाता है कि मारे गए
१०२१ मोहरचन्द — सैनिक —गा छापरगढ डा दानकर, बुलन्दशहर
१०२२- मागेराम — सनिक —गां-कटेसरा, मनारियर, रोहतक
१०२३ मदान कुही — सनिक —युद्ध म मारे गए
१०२४- मुलाराम —लन नायक—युद्ध म मारे गए
१०२५ मामनराम — सनिक —गा-डा माधवपुर गुरगाव
१०२६ मगलाराम — सनिक —गा निरीवाय देहरिया, गुरगांव
१०२७ मेहतावसिंह — सनिक —कांगड़ा, युद्ध म मारे गए
१०२८ माखनसिंह — × —कांगड़ा, युद्ध म मारे गए
१०२९ माखनसिंह — × —घात कांगड़ा, युद्ध म मारे गए
१०३०- नसीबसिंह — लफ्टीनेन्ट—गा चक ा ९२ डा चक ा ९१ लायलपुर
१०३१ नेकीराम — लफ्टीने ट—गा किरोहली, डा खरखण्डा, रोहतक
१०३२ निरजनसिंह — सनिक —गा डा माखन वं ीडी रोहतक
१०३३ नायडू ए पी — एस ओ —गा डा ढोबटन रोड बोलारम सिकन्दराबाद
१०३४ नगेन्द्रसिंह — हवलदार —गा रामगढ डा सिद्धवाल, लुधियाना
१ ३५ नसीबसिंह —लस-नायक—गा भट्टा डा बारापिंड जाल धर
१०३६ नारगसिंह — × —गाँ खारियान खुकरान, डा [illegible], भावलपुर

१०३७ नन्दो के —लैंस नायक—गा डा कुनोरिला हाउस कल्लान कोरम, वरकाला
१०३८ नागनाथन — लफ्टीनेन्ट—१६७/४२ यू स्ट्रीट, थी गगा, रामनद
१०३९ मक्षीबसिंह — लैफ्टीनेन्ट—गा डा माहिलपुर, जि होशियारपुर
१०४०- नन्दा सिंहबिश्त— सनिक —गा दुतरा, डा घाट, गढवाल
१०४१ नाहरसिंह — सनिक —गां मालिकपुर, डा नजफगढ, देहली
१०४२- निक्काराम — लैफ्टीनेन्ट—गा डा भालमपुर कांगडा
१०४३ नछित्तरसिंह —लस नायक—गा मलालीखुद डा शेरपाकला लुधियाना
१०४४ नामबियर पी एम — हवलदार—गा थावाथ, डा चेरुकुनु मालाबार
१०४५ नागनायन एस —लेखा अधिकारी—७७४ पेरुमल कोयल स्ट्रीट, पुदु कोटा राज्य
१०४६ निखिलमायराय
चौधरी— × —१८ ए यव के टगोर स्कवर तालटोला, कलकत्ता
१०४७ नारायणसिंह बिश्त—स लफ्टीनन्ट—गा मुसासू मवालीसियम, डा पिपाली, गढ़वाल
१०४८ नानकसिंह — नायक —गां डा परामो महला, फीरो॰ पुर
१०४९ नेयर एम एन — स्टनो —गा डा नेम्मोना थाया कोर्लें गोडे।
१०५०- नारायणसिंह — हवलदार—मृत्यु हुई बीमारी से
१०५१ नारायणसिंह — नायक —बीमारी से मृत्यु हुई
१०५२ नारायणसिंह — नायक —बीमारी से मृत्यु हुई
१०५३ नाथीसिंह —लस नायक—बीमारी स मृत्यु हुई
१०५४- नरजनसिंह — नायक —कोहिमा मे युद्ध में मारे गए
१०५५- नरवासिंह —लैंस नायक—कोहिमा मे युद्ध म मारे गए
१०५६ नाथासिंह मिनशा— कप्टन —मृत्यु हुई
१०५७ नानकसिंह भरद्वाज— लफ्टीनन्ट —टिड्डम अस्पताल में ५ ८-४४ को मरे
१०५८ नारायणसिंह — हवलदार—इनफआल म १९४४ मे मृत्यु हुई
१०५९- नारायणसिंह — नायक —यजीन म १९४४ में मृत्यु हुई
१०६० नाथूसिंह — सनिक —ईयू म १९४४ मे मृत्यु हुई
१०६१- नानकसिंह — सनिक —युद्ध म ३१ ३ ४४ को मारे गए
१०६२- नूरमुहम्मद — लफ्टीनन्ट—कलवा म हवाई आक्रमण म मारे गए
१०६३ नौबतराम — सनिक —मृत्यु हो गई
१०६४ निरजनसिंह —सनिक रसोइया—बरमा म मृत्यु हुई
१०६५ नसीर अहमद —स-लैफ्टीनन्ट—शत्रु के युद्ध मे मारे गए
१०६६- नजरसिंह — लफ्टीनेन्ट —मृत्यु हुई
१०६७- नसीबसिंह — सनिक —गा डा बुदच्छवाल, होशियारपुर
१०६८ निहालसिंह — नायक —बरमा म युद्ध म मारे गए
१०६९- नकोराम — सनिक —गा डा पालरा, रोहतक
१०७० नवतसिंह — सनिक —बरमा मे युद्ध म मारे गए
१०७१ निहालसिंह — एम ओ —गा-नरसिंहपुर, डा-शहपुर पुरगांव
१०७२- नौशाराम — सनिक —गां बाढ़ डा मालपुरा, आगरा
१०७३ नरायनन —प्रचार विभाग—१९४५ म अस्पताल में मृत्यु हुई
१०७४ नाथूसिंह — सनिक —गां बावा, डा कोथू, जींद राज्य

१०७५ नन्दकिशोर — × —ईयू म ३ ३-४४ के हवाई आक्रमण में मारे गए
१०७६- नाहरसिंह — सनिक —कलेवा म १६४४ म मृत्यु हुई
१०७७ नतराम — सनिक —कलेवा में १६४४ म मृत्यु हुई
१०७८ नाथासिंह — सनिक —येजोन के हवाई आक्रमण मे १६४५ म मारे गए
१०७६- नेटासन — सनिक —ढाका के हवाई आक्रमण में मारे गए
१०८०- नन्दसिंह — सनिक —कलेवा में १६४४ म मृत्यु हुई
१०८१- नरासिमन — × —हालड म माइन के फटने से मृत्यु हुई
१०८२ नाथूरामसिंह — सनिक —हालैंड म मृत्यु हुई
१०८३- नन्हे खां — गफरेटर —जरमनी मे मारे गए
१०८४ निरंजनसिंह — × —माइन के फटने से हालड मे जुलाई ४३ म मृत्यु हुई
१०८५ नरासिमना रड्डी — × —माइन फटने से हालड म मृत्यु हुई
१०८६ नरासिमहन — × —हालड म माइन के विस्फोट से मारे गए
१०८७ नरासिमकालू — × —जरमनी युद्ध में मारे गए
१०८८ के नागियाह — सनिक —कालादान के मोर्चे पर मारे गए
१०८६ निहालसिंह —लैंस नायक —गा गोरखपुर गुड़गाव
१०६० नन्दराम — सनिक —रणभूमि मे मारे गए
१०६१ नरसिंह — सैनिक —गा जरमल, डा जनगुली अल्मोडा
१०६२ नजरसिंह — सैनिक —गां अलवडी डा कपूथला, जालन्धर
१०६३ नरजनसिंह — सनिक —गा-वडाला, डा-कपूथला, जालन्धर
१०६४ नेकमुहम्मद — एस ओ —गा डा-बव ली हिसार
१०६५ नबी बक्श — एस ओ —गां मेनवाल डा कपूथला, जालन्धर
१०६६ निजामदीन — सनिक —सिंगापुर के अस्पताल में मृत्यु हुई
१०६७ नारायणदास — × —इम्फाल के निकट मृत्यु हुई
१०६८ नानकसिंह —लैंस नायक—गा-डा मिना, फीरोजपुर
१०६६ नसीबसिंह —लस नायक —इम्फाल के समीप मृत्यु हुई
११००- नूर मुहम्मद — सनिक —गा कवस, डा-सिल्ले झेलम
११०१ नन्दसिंह —लैंस-नायक—इम्फाल के समीप मृत्यु हुई
११०२ नजरसिंह — × —देहली में फांसी दी गई
११०३ नजरसिंह — हवल्दार—युद्ध म मारे गए
११०४ नानकचन्द — हवलदार—युद्ध म मार गए
११०५- नरजनसिंह — सनिक —गा मखन बेला, डा उशरफ
११०६- नूर मुहम्मद — × —युद्ध म मारे गए
११०७ नूर हसन — सैनिक —गा काजी डा वुलास दारफ, कम्पबलपुर
११०८ नरजनसिंह —लैंस नायक — कलेवा के निकट युद्ध म मारे गये
११०६- नाथुराम — सैनिक —गा मजेरी डा तेगाव, गु गाव
१११० नन्दकिशोर — सनिक —युद्ध में मारे गए
११११ ननवानराम — सनिक —गा माजपुर डा फकवाजा, मेरठ
१११२ नाथीसिंह —लैंस नायक—गुरगाव युद्ध में मारे गए

११११३ नायाराम — नायक —युद्ध म मारे गए
१११४ नारायण पतरोव — नायक —गा डा जयपुर, जि कोरापुर
१११५ नाथूराम — सनिक —गा यादलपुर, डा घुन, बुलन्दशहर
१११६- नन्दा — सनिक —युद्ध म मारे गए
१११७ नारायण बदे — × —युद्ध में मारे गए
१११८- नगेन्द्रसिंह — नायक —लुधियाना युद्ध में मारे गऐ
१११९- नाथीराम — नायक —गा छटगा, डा जेवर बुल दशहर
११२०- नारायणराम — सनिक —गा खरोरा डा खेतरी, अल्मोड़ा
११२१ नखामराम — सैनिक —गा घाटा भरतपुर
११२२ नारायण के — सैनिक —युद्ध म मारे गए
११२३ न दराजन वी — सनिक —युद्ध में मारे गए
११२४ न दलाल — सनिक —युद्ध में मारे गए
११२५ निहालराम — हवलदार —गा नरसिंहपुर डा बादशाहपुर, गुरगाव
११२६- निहालाराम — हवलदार —गा मातन रोहतक
११२७ मरोत्तमसिंह — × —गा खानूर जम्मू
११२८ मोगादू सावत — सनिक —मृत्यु हुई
११२९ प्रभराम — सनिक —इम्फाल के मार्चे पर मृत्यु हुई
११३० प्रतापच द मोहता—यन/सनिक—गा डा कसियाला जि झेलम
११३१ फूलसिंह — सनिक —गा देवला, डा राजोद करनाल
११३२- प्यारेलाल — हवलदार—गा डा धाकला-रोहतक
११३३ प्रभूसिंह — सनिक —गा पडवान, डा डालमिया दादरी, मोहिन्द्रगढ़
११३४ प्रीतमसिंह — सनिक —गा डा महुरा फीरोजपुर
११३५ पेहलादसिंह — सनिक —गा डा बडौदा, रोहतक
११३६ परसासिंह — सनिक —गा डा साडोर लुधियाना
११३७- प्रहलादसिंह — नायक —गा डा बदरपुर देहली
११३८ पनाद्याह, जी एम — एम ओ —गा डा १,४१ कचहरी रोड मलापुर मदरास
११३९ पल्टूराम — सनिक —गा मजरी, डा तिजारा अलवर (राज)
११४०- पानसिंह बिश्त — सनिक —गा जुखानी तलवारी, डा ग्वालदम गढ़वाल
११४१ प्रीतमसिंह — सनिक —गा डा हिरन जि लुधियाना
११४२ पसुलान — सनिक —गा नेरकुपाई, रामनद (मदरास)
११४३ प्रभुदास छेलभाई — × —गा भगवन्तपुर, डा महुरिया, नरासारी
११४४ प्रीतमसिंह — सैनिक —गा होशियारपुर, डा सियास वास अम्बाला
११४५- प्रेमलाल — सनिक —गा दिहीपुरा, डा पारपा नेपाल
११४६- पाखरसिंह — सनिक —गा डा समरारी जि जालन्धर
११४७ पक्किरमी सामी — सैनिक —गां इद्दावक, डा-सेठी त जोर (मदरास)
११४८ पिल्ले जी आर —स लफ्टीनेन्ट—गा कन्डीयुर, डा तिरवाडी तजोर
११४९ प्रतापसिंह — सैनिक —बीमारी से मृत्यु हुई
११५०- पदमसिंह — सैनिक —बीमारी से मृत्यु हुई
११५१ पचमू —सह-नायक—बीमारी से मृत्यु हुई

११५२	पुरनसिंह	—लैंस-नायक—	गां खरो डा रुद्रप्रयाग गढवाल
११५३	पहलादसिंह	—लफ्टीनेन्ट—	तरवान के युद्ध मे मारे गए
११५४	पदमसिंह गुसाइ	—लैफ्टीनेन्ट—	लापता विश्वास किया जाता है मारे गए
११५५	परानसिंह	—से लफ्टीनेन्ट—	...ाका के युद्ध में मारे गए १६४४
११५६	प्रीतमसिंह	—लैफ्टीनेन्ट—	गा खेराकाट, डा-तरसिक्का, अमृतसर
११५७	पानसिंह	— नायक	—बरमा में मरे
११५८	प्रेमदत्त	— सनिक	—ई यू में १६४४ मे मरे
११५९	पानसिंह बिस्त	— से लफ्टीनेन्ट—	गा घोने, डा गानात, अल्मोडा
११६०	प्रतापसिंह	—लैंस नायक—	बम वर्षा में जून १६४४ म मारे गए
११६१	प्रेम बहादुर	— हवलदार—	बीमारी से मत्यु हुई।
११६२-	पानदेव	— हवलदार—	मेम्यो हास्पिटल मे मृत्यु हुई
११६३	परशोत्तम रानाडे	— सनिक	—दुघटना से अराकान में मत्यु हुई
११६४	पुरनसिंह	—लैस नायक	—कलेवा म जुलाई १६४४ में मृत्यु हुई।
११६५	प्रीतमसिंह	— सनिक	—मेम्यो हास्पिटल म मत्यु हुई
११६६	परवारसिंह	— नायक	—पजीव के हवाई आक्रमण मे मरे
११६७	प्रीतमसिंह	— लैस नायक—	हाका के समीप नदी में डूब गए
११६८	प्रेमच द	— एस ओ	—बरमा मे युद्ध मे मारे गए
११६९	के पम पटेल	— नायक	—बरमा म युद्ध म मारे गए
११७०	प्यारासिंह	— सनिक	—कलेवा में मत्यु हुई
११७१-	पार एन पटरो—	सैनिक	—मत्यु हुई
११७२-	पिरथीसिंह	— सैनिक	—कलेवा मे म यु हुई।
११७३	पाडू मेमारे	— ×	—फ्रास म युद्ध म सितम्बर ४४ में मारे गए
११७४-	फूलसिंह	— ×	—कलेवा के समीप युद्ध मे मारे गए
११७५	पीटर	— ×	—बरकनी में युद्ध करते मारे गए
११७६	प्रीतमसिंह	— सनिक	—गा कारियान वाला चक, डा वागसर फीरोजपुर
११७७	प्रीतमसिंह	— सनिक	—गा बजोन वाला।
११७८-	पोल हो	— ×	—गां नदेनी झींद राज्य
११७९	पजतान	— सनिक	—हैदराबाद युद्ध म मारे गए
११८०	प्रम बल्लभ	— हवलदार	—गा चातल गाउ माली डा देवलथाल, अल्मोडा
११८१	पानदव	— हवलदार	—अल्मोडा तवाय के युद्ध म मारे गए
११८२	प्रभूसिंह	— सनिक	—गा पसरी, डा मोजू कला झींद राज्य
११८३	प्रभूसिंह	— हवलदार	—गां लहावाना डा डालमिया गुरगाव
११८४	परबारसिंह	— सनिक	—गां तलवान, डा कपूथला, जाल धर
११८५	प्रेमसिंह	— सनिक	—गा खेरी खुम्मार डा बाजजार, रोहतक
११८६-	प्रतापचन्द	—लम नायक—	गा शिवकूज अल्मोडा
११८७	पावन	— सनिक	—युद्ध मे मारे गए।
११८८	प्रमराज	— ×	—युद्ध मे मारे गए
११८९	पूरनसिंह	— सनिक	—गा-कसूल, डा जि कपूथला
११९०	प्यारासिंह	—लस नायक—	गा रानीवाला, डा बरहामपुर

११६१ प्यारासिंह	— सैनिक	—इम्फाल के निकट मृत्यु हुई
११६२ प्रीतमसिंह	— सैनिक	—इम्फाल के निकट मृत्यु हुई
११६३ पूनू राम	— ×	—कांगड़ा युद्ध में मारे गए
११६४- फूरेसिंह	— सैनिक	—मोलमीन मे मृत्यु हुई
११६५ पुन्नू राम	— सैनिक	—गां निविकियान, मीरपुर, लायलपुर
११६६ पीतमसिंह	— सैनिक	—गा विटावड़ा, मुजफ्फरनगर
११६७ पिरकूसिंह	— सैनिक	—गा तिकली जि गुरगांव
११६८ पूरनसिंह	— सैनिक	—गा चौसी, बुलन्दशहर
११६९- परतापसिंह	— सैनिक	—गां मुहमदपुर डा सादपुर, बुलन्दशहर
१२०० प्रभूराम	— सैनिक	—गा कैमरी डा हिण्डोन, जयपुर
१२०१- पियारसिंह	— सैनिक	—गा बडागाव, डा हिण्डोन जयपुर
१२०२ पियारसिंह	— सैनिक	—गा लोपोली डा हिण्डोन जयपुर
१२०३ पेहलादसिंह	— कप्तेन	—गा सरिया डा-दोबाना, रोहतक
१२०४- परमाती बराते	— हवलदार	—गां सूरजपुर, डा उदतारा सतारा
१२०५- पेहलादसिंह	— सैनिक	—गा बिसनोली, डा दादरी, बुलन्दशहर
१२०६- पेहलादराम	— सैनिक	—गा कोटा, गुरगाव
१२०७ पियाया स्वामी	— सैनिक	—रणभूमि में युद्ध करते मारे गए
१२०८ प्रीतमसिंह	— नायक	—युद्ध करते मारे गए
१२०९ परमल	— सैनिक	—गां जवाली डा चिरोई मेरठ
१२१० पूरनराम	— सैनिक	—गा चासी, डा शहर बुलन्दशहर
१२११- पेलानी पान	— सैनिक	—युद्ध में वीर गति मिली
१२१२ पूरनसिंह	— सैनिक	—युद्ध म मारे गए
१२१३- पांडिया	— सैनिक	—युद्ध करते मरे
१२१४ पिलाई	— सैनिक	—युद्ध म मारे गए
१२१५ पेरियानान	— सैनिक	—अस्पताल मे मृत्यु हुई
१२१६ पिर्थीराम	— सैनिक	—गा प्रलीगज डा भोगल, देहली
१२१७ परसूराम	— सैनिक	—गा नेमपारा गुरगाव
१२१८ प्यारेलाल	— सैनिक	—जि रोहतक – मृत्यु हुई
१२१९ कतल अहमद बख्शी	— नायक	—मृत्यु हुई
१२२० रामसरप	— सैनिक	—गा मालिकपुर, डा मरूदि हिसार
१२२१- रिछपालसिंह	— हवलदार	—गा-जोनावास, डा न दरामपुर गुरगाव
१२२२ समपत सिंह	— कप्तेन	—गां सुनारी कला डा जि रोहतक
१२२३ म शकर राय	— लफ्टीनेन्ट	—गा तिहामोहदपुर, डा बरहाल गज गोरखपुर
१२२४ रामचन्द्र	— सैनिक	—गा रताकल्ला डा ऐय्यू मण्डी मोहिन्द्रगढ
१२२५ एस के राय	— सैनिक	—पी ४० ए, राजावसन्त राय रोड कलकत्ता
१२२६ रणजीतसिंह	— नायक	—गा-बडोदा, डा उछाना मण्डी, पटियाला
१२२७ रामू यादव	— ×	—गा थुम्पादासी कोट्टाई डा राजासिगसम
१२२८ रतीराम	— लफ्टीनेन्ट	—गा-डा भापरोदा, जि रोहतक
१२२९ रघबीरसिंह	— सैनिक	—गां जाहर, डा नाहर, रोहतक

१२३०- रघुवीरसिंह वदी— कैप्टेन —दस म टी /१६ मालोरा बाजार, रावलपिंडी
१२३१ रिसालसिंह — सनिक —गा-दहकारा, डा सापला, रोहतक
१२३२ रत्तनसिंह —लैंस नायक—गा केर डा बहादुरगढ, रोहतक
१२३३ रामचन्द्र — सनिक —गा वदलावास डा सडाखेरी, रोहतक
१२३४ रामस्वरुप — सनिक —गा डा खाडा, जि रोहतक
१२३५ रामसिंह — सनिक —गा डा मदीना जि रोहतक
१२३६- रामकण — सनिक —भूरावास, डा सलहावास, रोहतक
१२३७ रामसरूप — सनिक —गां सुनहरी कला, डा जि रोहतक
१२३८ रवीन्द्रनाथ राहा- पुनर्निर्माणवि -गोपाल बोस लेन कलकत्ता
१२३९- करसिंह — सनिक —गा मालमवाला डा वाघा पुराना फीरोजपुर
१२४० रावेलसिंह — एस ओ —गा झिगरन कला डा दसूया होशियारपुर
१२४१ रामसिंह — × —गा-झालिया डा रुवर अम्बाला
१२४१ रत्तनसिंह — सनिक गा जिन्दोवाल डा-वागा जल धर
१२४३ रणसिंह — सनिक —गां कर, डा बहादुरगढ रोहतक
१२४४ रामसरूप — सनिक —गा डा नरेला जि देहली
१२४५- यस राजागोपालन- सनिक —मदरास म अस्पताल मे मृत्यु हुई
१२४६ के मार रामानायन
उरनाम-मोनाल- सनिक —मृत्यु हुई
१२४७ रखासिंह — सनिक —गां माजरी डा रुपन, अम्बाला
१२४८ रिसालसिंह — सैनिक —गां मिलकपुर, डा नजफगढ देहली
१२४९ रघवीरसिंह — सनिक —गां-डा म डोथी, रोहतक
१२५० मार रामनायन— सनिक —गा पुमायरम, डा इलानगुडी, तजौर
१२५१- रघवीरसिंह — लैफ्टीनेट—गा सिदपुर घर डा भरमार कागडा
१२५२ रलीराम — सनिक —गा डा रियाल रोहतक
१२५३ रामसिंह — × —अराकान मोर्चे पर मर
१२५४ राम कवर — सनिक —चूली बगारिया, माहू कला, हिसार
१२५५ रामासामी मोडियार- × —गा ति मु गलक कोट्टा बिडायल, डा बदासेरी मन्नुगुडी, तजौर
१२५६ रिछपालसिंह — हवल्दार—गा कराम, डा धरमशाली कांगडा
१२५८ रामसरूप — सनिक —गा निन्दाना, डा मेहम, रोहतक
१२५९ रामसुन्दरसिंह — सनिक —गा सतराव डा बराहोज गोरखपुर
१२६० रेवतसिंह — लैफ्टीनेट—जुलाई १९४४ मे युद्ध म मारे गए
१२६१- रणजीतसिंह —लस नायक—१९४४ मे युद्ध में मारे गए
१२६२ रायसिंह —लस नायक—बीमारी से मृत्यु हुई
१२६३ रणजीतसिंह —लस नायक—बीमारी से मृत्यु हुई
१२६४- रघवीरसिंह — सनिक —बीमारी से मृत्यु हुई
१२६५ रूद्रसिंह — सनिक —बीमारी से मृत्यु हुई
१२६६ रामचन्द — सनिक —बीमारी से मृत्यु हुई
१२६७ एम ए रहीम — लैफ्टीनेट—मृत्यु हुई

१२६८- रामसिंह — हवलदार—युद्ध करते वीर गति मिली
१२६६ रगाराव बावेर —लस-नायक—युद्ध करते मारे गए
१२७०- रामहे नायडू — हवलदार—मियाम अस्पताल में मृत्यु हुई
१२७१- राजिन्दरसिंह — हवलदार—माडले मे मृत्यु हुई
१२७२ रतीराम — सनिक —बरमा म मृत्यु हुई
१२७३ रग इलाही — हवलदार—गा डा घुरकाना, जि मेनम
१२७४ राम खेलावन — हवलदार—उत्तर प्रदेश-बरमा में मृत्यु हुई
१२७५- रामसिंह — नायक —बरमा में मृत्यु हुई
१२७६- रणीलसिंह — सैनिक —बरमा में मृत्यु हुई
१२७७- दाम रक्खा — हवलदार —बरमा में मृत्यु हुई
१२७८ यन एस रहमान— हवलदार —बरमा म मृत्यु हुई
१२७६ राना डे —लस नायक—मणिपुर पहाड़ियों में युद्ध में मारे गए
१२८०- रामदत्त सिंह — सैनिक —डा सोहावल जि फैजाबाद
१२८१ रतीराम — सनिक —बरमा में युद्ध में मारे गए
१२८२ रिछपालसिंह — सैनिक —मृत्यु हुई
१२८३- रामपटट — सैनिक —मृत्यु हुई
१२८४- रूपसिंह — सनिक —मृत्यु हुई
१२८५ रामसिंह — सनिक —मृत्यु हुई
१२८६ रामरखा — सनिक —मृत्यु हुई
१२८७- रतनसिंह — सनिक —गा डा रन्वा जि अलमोडा
१२८८ रामसिंह — सनिक —गा रिद हिन्डौन, जयपुर
१२८६- रामसिंह — सनिक —गा बाबर, डा सेपाव, अलमोडा
१२६०- रामसिंह — सनिक —गा-डा मसकत जि अल्मोड़ा
१२६१ रवीदत्त — सैनिक —ई-यू मे मारे गए
१२६२- रतनसिंह — लफ्टीनन्ट—लापता
१२६३- रामसिंह — सनिक —ई यू की बम वर्षा म मारे गए
१२६४ रामसिंह — सैनिक —मई १६४४ से तामू स लापता
१२६५- रणजीतसिंह — सैनिक —कलेवा मे युद्ध में मारे गए
१२६६- रणबीरसिंह — नायक —कलेवा क युद्ध मे मारे गए
१२६७- रिसालसिंह — सैनिक —कलेवा के युद्ध में मारे गए
१२६८- रामकरन — सैनिक —गा डा-कुमारिया जि हिसार
१२६६ रामगोपाल — नायक —गा डा दाहिना जि गुरगाव
१३०० राममदन — सनिक —इटली म युद्ध मे मारे गए
१३०१- रवनवाज खा —यू आफिसर—फ्रास में युद्ध मे मारे गए
१३०२ रामस्वरूप — सनिक —कलेवा के निकट युद्ध मे मारे गए
१३०३ रमेश — × —जरमनी मे युद्ध मे मारे गए
१३०४ रामचन्द्र — सनिक —गा बिलोन, डा कामा, भरतपुर
१३०५ रामबहादुर थापा— × —चिंदविन नदी के युद्ध म मारे गए
१३०६ रामा स्वामी — सनिक —कालादन क्षेत्र के युद्ध मे मारे गए

१३०७- रार्मसिंह — सनिक —गा डा दियाल, जि रोहतक
१३०८ रिसालसिंह — × —गा बिला जफरगढ जि रोहतक
१३०९- रुपसिंह — हवलदार —गा बारीवाला चौक लडराल शिमला
१३१० रार्मसिंह — हवलदार—अराकान की पहाडियों मे मरे
१३११ रामरखा — हवलदार—होशियारपुर, युद्ध में मारे गए
१३१२- रार्मसिंह — हवलदार—हिसार, युद्ध में मारे गए
१३१३ रतनसिंह — × —गा चनकोर, डा बेन, अल्मोडा
१३१४ रतनसिंह — सैनिक —गा काना, डा-बागेश्वर, अल्मोड़ा
१३१५- रामपाल — हवल्दार —गा रियोद, [डा सहाना, गुरगाव
१३१६ रामबिलास — सैनिक —गा बेमपुर, डा अविलु, अल्मोडा
१३१७ रासनसिंह — एस ओ —गा सेरा, डा कपूथला, जलधर
१३१८ रणधीर सिंह — नायक —युद्ध में मारे गए
१३१९ रामभोज —लैंस-नायक—गा माडिल डा सालावास, रोहतक
१३२० राजेन्द्रसिंह — × —युद्ध में मारे गए
१३२१ रफी मुहम्मद — × —गा डा वालियाह, जि हिसार
१३२२ राधोर्सिंह — × —कपूथला, अस्पताल में मृत्यु
१३२३ रामदास — नायक —इटली मे १९४४ में मृत्यु हुई
१३२४ रतीराम — × —गा घोलापानेर, डा नालागढ़, शिमला
१३२५ राबेलसिंह — लफ्टीनें ट—गा डा झिंगर, जि होशियारपुर
१३२६ रार्मसिंह — × —सरकाला, डा सुनार वाल, अल्मोडा
१३२७ रामदित्ता — सनिक —गा खिदरा, डा बियहारी, कांगडा
१३२८ रघुबीरसिंह — हवलदार—गा कोट फतहसिंह, सियालकोट
१३२९ एस रियाद्द्या — सैनिक —युद्ध में मारे गए
१३३० रामसरूप — सनिक —गा दिरोली मागल डा-लोहि इगढ, पटियाला
१३३१- रामकरण — सनिक —गुरगाव युद्ध में मारे गए
१३३२ रामधाम — सनिक —गा गपली डा हिण्डौन, जयपुर
१३३३ रामहठ —लेस नायक—गा देवरान, युद्ध मे मारे गए
१३३४ रामकुमार —लस-नायक—गा पचाला डा हि डोन जयपुर
१३३५ रघुबीरसिंह —लैंस नायक—गा रिंद, डा हिण्डोन, जयपुर
१३३६- रघुबीरसिंह —लेंस-नायक—गा नांगला डा धोलाश बुलन्दशहर
१३३७ रणधीरसिंह —से लफ्टीनेन्ट—रोहतक, युद्ध में मारे गए
१३३८ रामसु दर — सनिक —गा भरतपुर जि फजाबाद
१३३९ रघुबीरसिंह — सैनिक —युद्ध मे मारे गए
१३४० पी यस रानाडे— सैनिक —बरार, युद्ध म मारे गए
१३४१ रामसरूप — लैंफ्टीनन्ट—गा-खाडा सरवालू रोहतक
१३४२ रामकाला — सनिक —मेरठ, युद्ध में मारे गए
१३४३ रार्नसिंह — एस ओ —गा खरमान, डा मडोधी रोहतक
१३४४ रार्मसिंह — सनिक —गा कैर डा बहादुरगढ
१३४५- रघुनाथराम पटेल — एस ओ —गां-पटवाल, डा माहेरू, पूना

१३४६ रुकमाजी गोविन्द पराग— सैनिक —आत्महत्या करली
१३४७- रूमानराम — हवलदार—गां फतेहपुर, डा तेवाव, गुरगाव
१३४८ राम राम — सैनिक —गां जाल, डा सिकन्दराबाद बुलन्दशहर
१३४९ रामू सहकार — सनिक —युद्ध मे मारे गए
१३५० रामचन्द्र मोर — सनिक —युद्ध में मारे गए
१३५१ रामा रेड्डी — सनिक —युद्ध में मारे गए
१३५२- एम राजू — सनिक —युद्ध मे मारे गए
१३५३- रामा राव — सैनिक —युद्ध में मारे गए
१३५४ करसिंह — लँस नायक—युद्ध म मारे गए
१३५५- रामाराव भोंसले— सनिक —लापता विश्वास किया जाता है कि मारे गए
१३५६- रामचन्द्र चौधरी— सनिक —लापता विश्वास है मारे गए
१३५७ रामा — लँस-नायक—गां-ताली डा सिकन्दराबाद बुलन्दशहर
१३५८ रघुवीरसिंह — नायक —गां डा गुजरू, जि रावलपिंडी
१३५९ रामसिंह — नायक —मरठ युद्ध में मारे गए
१३६० रिछपाल — सैनिक —युद्ध म मारे गए
१३६१ रामचन्द — × —गां सिदोद, जि भरतपुर
१३६२- शरबती लाल — सफ्टीनेन्ट—गां-देवली, अजमेर
१३६३ शेरबहादुर भंडारी— कैप्टन —गां बल्लूपुर जि देहरादून
१३६४ शेरसिंह — हवलदार—कुमायू, युद्ध में मारे गए
१३६५- शोद्दरन — × —मुरक्कर जिला, मल्लापद, मद्रास
१३६६- शंकर अल्वी — हवलदार—बुफेडाव के समीप युद्ध में मारे गए
१३६७ सुलतानसिंह — सनिक —गां मरखा डा-नजफगढ, देहली
१३६८ सुरजनसिंह — सनिक —गां भराठा कलां, नजफगढ देहली
१३६९ सम्पूरनचन्द — हवलदार—पानपुर, डा-बराड़ अम्बाला
१३७०- सोहनसिंह — सनिक —गां-कोट करोर कलां डा-दरोली भाई, फीरोजपुर
१३७१- शिवसिंह — सनिक —गां सारोली, डा-दादा मण्डी, गडवाल
१३७२ सुरजासिंह — कप्टन —गां-कर डा-बहादुरगढ़ देहली
१३७३ सुखबीरसिंह — सैनिक —गां पटनी माफी, डा बाऊली मेरठ
१३७४ शाहीराम — लांस-नायक—गां-डाबसी डा कोल्हो गुरगांव
१३७५ साधु सिंह — सार्जेन्ट —अन्ध महासागर के टापू में मरे
१३७६- साहीराम — सनिक —गां किरारा, डा-नापासर बीकानेर
१३७७- सोबनसिंह रावत— सनिक —गां-बमथार डा-नैनतालो, टहरी गढ़वाल
१३७८ शिवलाल — सैकन्डलेफ्टिनेंट—गां मा मढोली रोहतक
१३७९ सम्पूर्णसिंह — सनिक —गां ५८ डा-पगवाड़ा जलन्धर
१३८०- सम्पूरनसिंह — हवलदार —गां अजोली, डा किलारपुर लुधियाना
१३८१- हन्स बेन — फ्लाइट लेफ्टिनेन्ट—१०२/ए बालीगंज कलकत्ता
पुनर्निर्माण
१३८२ हरदासिंह — × —गां डा धनोवाल बाला जि सियालकोट
१३८३ हरदयालसिंह — मार्शल ट—२२/२४ सम्पी कुंड वाराणसी

१३८४ सुदर्शसिंह — सनिक —गां डा भवानीसिंह, शेखुपुरा
१३८५- शियो करन — सनिक —गा मूतपुर, डा-बानसुर, अलवर
१३८६- सरदारसिंह —लस-नायक—गां डा मारवाल गुजरात
१३८७ सवणसिंह — × —गां चोहवाल, डा बागीवला, होशियारपुर
१३८८- सुखमानराम —लैंस-नायक—मीतीकिना बाजार, बरमा
१३८९- सईदुर रहमान — हवलदार—गां डा तितावर, असम
१३९० सरदारसिंह — सैनिक —गां मढो मोरों, डा अपरा, जलन्धर
१३९१ सरदारासिंह — नायक —गा फिगरम डा मुकन्दपुर, जलन्धर
१३९२ सन्तासिंह — सैनिक —धुल्लोही जोन न ३० पट्टोकी लाहोर
१३९३ सत्येन्द्रनाथ राय— लैफ्टीनेन्ट—जि तिपरा, बगाल, गा डा गोकरना
१३९४ शिवनाथ कपूर — लफ्टीनेन्ट—गुजरात बरमा मे मरे
१३९५ सायुल्ला खा —से लैफ्टीनेन्ट—इब्राहीम जाई कोहाट
१३९६ टी सुपेह — सनिक —कलगापुरी दक्षिण देवाकट्टी रामनद
१३९७ शरबत खाँ — हवलदार—गां डा जियारत काका साहब, पेशावर
१३९८ सुचासिंह — सैनिक —गा सादूलपुर, डा लोरियान खास जलन्धर
१३९९- शियोलाल — सनिक —गाँ जयपुर डा सुबाना, रोहतक
१४०० शाहीराम —लस-नायक—गां-भाक्ली, डा कोसली, रोहतक
१४०१ सरदारासिंह — सनिक —मारी मुस्तफा डा बाघा पुराना फीरोजपुर
१४०२ शीताराम शवाले— सनिक —गां धोमांव जेलगांव, डा कराद, सतारा, पेशावर
१४०३ सादानू कोयरी— × —गां तिहामाहमेदपुर, डा-बरहालगंज, गोरखपुर
१४०४ शिवराम — मेजर —गा मागरा चक, डा रनबीरसिंहपुरा, काश्मीर
१४०५ सजावलखा — सनिक —गा ढोकमेरा, डा सिहाला रावलपिंडी
१४०६ सय्यद गफूर — हवलदार—६ साऊथ कुवाम रोड मदरास
१४०७ शेरसिंह नेगी — लफ्टीनेन्ट—गा कालोन, डा खिपास घाट, गढ़वाल
१४०८ सरजीतसिंह — सनिक —जियावादी के युद्ध मे मारे गए
१४०९ शेरसिंह — हवलदार—युद्ध में मारे गए
१४१० सुन्दरसिंह —लैंस-नायक—बीमारी से मृत्यु हुई
१४११- शिवसिंह — सनिक —मृत्यु हुई
१४१२ सातेहसिंह — सनिक —हवाई आक्रमण मे मारे गए
१४१३ शिवसिंह — सैनिक —१९४४ में मृत्यु हुई
१४१४ शेरसिंह —लस नायक—बीमारी से मृत्यु
१४१५- श्यामसिंह —लैंस नायक—बीमारी से मृत्यु
१४१६ सातेहसिंह —लस नायक—बीमारी से मृत्यु
१४१७ सुदामा —लस-नायक—बीमारी से मृत्यु
१४१८ श्यामसिंह —लैंस नायक—बीमारी से मृत्यु
१४१९ सुन्दरम —से लफ्टीनेन्ट—कोहिमा के युद्ध में मारे गए
१४२० सोहनलाल — मेजर —गां मातन, डा मनहूथी रोहतक
(वीरे हिंद)
१४२१ ससारसिंह — हवलदार—मृत्यु हुई

१४२२- सन्तानसिंह — एस ओ —तामू के निकट मृत्यु हुई
१४२३ धर्म्बूसिंह — एस ओ —पाडे में बम वर्षा म मारे गए
१४२४- सुरजनसिंह — लफ्टीनेन्ट—ई यू मे युद्ध मे मारे गए
१४२५ सगरसिंह — लैफ्टीने ट—चक न ३८, डा- पटटोकी, लाहौर
१४२६- एस जी सेन — हवलदार—हवाई आक्रमण मे मारे गए
१४२७- सिंघाडासिंह — नायक —बरमा में मृत्यु हुई
१४२८- साहिबजान — सनिक —बरमा मे १२ ३ ४५ को मृत्यु हुई
१४२९- शकरराम — सैनिक —बरमा म मृत्यु हुई
१४३०- शेरसिंह कुमोनी— नायक —तामू मे हवाई आक्रमण मे मारे गए
१४३१- चैलोराम डोगरा- नायक —बरमा म युद्ध में मारे गए
१४३२ सूबाराम — हवलदार —गां काकर, डा हमीरपुर
१४३३- सावाद बख्श — नायक —मृत्यु हुई
१४३४- शाह अमीर — एस ओ —बरमा मे एप्रिल, ४४ मे मृत्यु हुई
१४३५- सबलसिंह — × —बरमा मे युद्ध में मारे गए
१४३६ साधूराम — सनिक —मृत्यु हुई
१४३७- शेर मुहम्मद — हवलदार —मेम्यो अस्पताल में मृत्यु हुई
१४३८- सरगदअली — सनिक —गा-डा असी जाई कोहाट
१४३९ सद्दुल्ला खां —स-लैफ्टीनेट— बरमा मे मृत्यु हुई
१४४०- सुरामसिंह — सनिक —गा बालीवास डा-देवर, होशियारपुर
१४४१- श्रीराम — सनिक —बरमा में युद्ध करते मारे गए
१४४२ सिंहराम — सैनिक —बरमा म युद्ध करत मारे गए
१४४३ सरवारसिंह — हवलदार —बरमा के युद्ध मे मारे गए
१४४४- सर्गसिंह — सैनिक —बरमा के युद्ध म मारेगए
१४४५ सगतसिंह — सैनिक —बरमा मे युद्ध करते मरे
१४४६ शिम्भूसिंह —से लफ्टीने ट—बरमा म युद्ध करते मरे
१४४७- सग्रामसिंह — सनिक —बरमा म युद्ध में मारे गए
१४४८ शीतल बहादुर — हवलदार—बरमा म आमने सामने के युद्ध में लड़ते हुए मरे
१४४९- सुखदेव सिंह — हवलदार—मृत्यु हुई
१४५० शेरसिंह — सनिक —पीन माना में हवाई आक्रमण मे मरे
१४५१ शेरसिंह — सनिक —पीनमाना म हवाई आक्रमण मे मरे
१४५२- शेरसिंह — सनिक —ई यू में हवाई आक्रमण में मारे गए
१४५३ शोबनसिंह — सैनिक —गा गरगांव डा दिघतार, अल्मोड़ा
१४५४ सोवानसिंह — सनिक —गां-नानकुरी, डा-डिडीहाल अल्मोड़ा
१४५५- सुरजासिंह — नाई —कलेवा में मृत्यु हुई
१४५६ सूबेसिंह —लैंस नायक—कलवा म मृत्यु हुई
१४५७ सूरतसिंह — सनिक —कलवा म मृत्यु हुई
१४५८- सोनाराम सिं, — सैनिक —कलवा म मृत्यु हुई
१४५९ [illegible]सिंह — सैनिक —कलवा में मृत्यु हुई

१४६०- सरदारसिंह — सैनिक —बरमा में घावों से मर गए
१४६१ सरदारसिंह — सनिक —ढाका में हवाई आक्रमण में मारे गए
१४६२ शेरसिंह — सनिक —बरमा में बीमारी से मृत्यु हुई
१४६३- ससारीराम — सैनिक —बरमा में युद्ध में मारे गए
१४६४ श्रीचन्द — सैनिक —गा बुआना, डा मारेला देहली
१४६५ सुन्दरसिंह — सनिक —इम्फाल के पास हवाई आक्रमण मे मारे गए
१४६६- एम आर साउन्ने— लफ्टीनेन्ट—बरमा म युद्ध में मारे गए
१४६७ शेख दस्तगीर — नायक —मेजिठा में हवाई आक्रमण में मारे गए
१४६८- ए ए शाह — मेजर —ताम्रू में युद्ध करते मारे गए
१४६९ शेरसिंह — नायक —ताम्रू म युद्ध करते मारे गए
१४७०- सब्बसिवान — सैनिक —जरमनी में अस्पताल म मृत्यु हुई
१४७१- सलाहुद्दीन — × —जरमनी के ग्रेस्टन नगर में आत्महत्या करली।
१४७२ शेर बहादुर — × —जरमनी के ग्रेस्टन नगर में आत्महत्या करली।
१४७३ श्रीराम — सनिक —गा अरसी, डा नगर, भरतपुर
१४७४ श्रीफूल — सनिक —गां सलेमपुर, जयपुर
१४७५ सूरजमल — सनिक —गां डा दियाल, जि रोहतक
१४७६ श्रीचन्द — सनिक —माडले में मृत्यु हुई
१४७७ सोवणसिंह — नायक —गा-बदियासान होशियारपुर
१४७८ सुन्दरसिंह —लस नायक—बारीवाला चौक, शिमला
१४७९- सूरजमल — × —मृत्यु हुई
१४८० सरदारसिंह — सनिक —गा डा पाटला, मेरठ
१४८१- शेरसिंह — सनिक —गा टाली डा पिथौरागढ अल्मोडा
१४८२ शकरदत्त — सनिक —अल्मोडा युद्ध म मारे गए
१४८३ शेरसिंह — सनिक —गा वक्साल डा रुनालीछिया
१४८४- शेरसिंह — सनिक —गा कालियानी, डा दादा, अल्मोडा
१४८५ निबकरन सिंह — हवलदार—पट्टी रुवारवान, डा सोहाघाट, अल्मोडा
१४८६- सुरेला — सनिक —इम्फाल के निकट युद्ध म मारे गए
१४८७ एस आर मोधाम — सैनिक —गा मगलम, रामनाथपुर म
१४८८- शोभाचन्द — हवलदार —गा धनसरी डा बाघरा, झींद
१४८९ शंकरसिंह — कप्तेन —गां डा पचता जलन्धर
१४९०- सम्पतसिंह —से लैफ्टीनेन्ट—गा टिब्बा डा तलवडी, जलधर
१४९१ सोहनसिंह — सनिक —युद्ध मे मारे गए
१४९२- सुखबीर सिंह —लैंस नायक—गा लालपुर, डा बन्त मुजफ्फरनगर
१४९३ शिवसिंह — हवलदार—हरिमन का नगला, डा किरावली, आगरा
१४९४ सोहनसिंह — सनिक —युद्ध म मारे गए
१४९५ सादाराम —लस नायक—गा-कोहमा नेशार डा फराखनगर गुरगांव
१४९६ सुखीराम — सनिक —गा च बेरा, मोहिन्द्रगढ पटियाला
१४९७ सुख दर्शन सिंह — × —युद्ध म मारे गए
१४९८ सूरज भान — सैनिक —गा नानगल जतूसना, गुरगांव

१४९९- सुन नानसिंह — सनिक —गां सगा, डा नारनौल, खेतरी
१५०० सिंगोराम — सैनिक —युद्ध में मारे गए
१५०१- सुलेमान — नायक —इम्फाल मे युद्ध में मारे गए
१५०२ शाह मुहम्मद — सनिक —युद्ध म मारे गए
१५०३ शाहदीन — नायक —युद्ध में मारे गए
१५०४ शाहदीन — हवलदार —लापता
१५०५ शाह मुहम्मद —लैंस नायक—लापता-विश्वास है कि मारे गए
१५०६- सौदागरसिंह — हवलदार—सिंगापुर अस्पताल मे मरे
१५०७- शामसिंह —स-लफ्टीनेन्ट—माइनगीन में बम वर्षा मे मारे गए
१५०८- सय्यद — हवलदार —मलाया में युद्ध म मारे गए
१५०९ सूरतसिंह — लफ्टीनेन्ट—मटन जेल में अनशन करके मरे
१५१० सय्यद अमान — सनिक —ढाका के युद्ध में मारे गए
१५११ सुरजनसिंह — एस ओ —कपूरथला
१५१२ सादिक मुहम्मद — हवलदार —मुहल्ला जौनहो भरतपुर
१५१३- सूरी नारायन — सनिक —युद्ध म मारे गए
१५१४- शेरसिंह — सनिक —गा मोहिम जि रोहतक
१५१५- सूबासिंह — सैनिक —हास्पिटल म मृत्यु हुई
१५१६- शेरसिंह — सनिक —गा छातर डा असीमपुर, कागडा
१५१७- साधूसिंह — सनिक —गा अभला, कपूथला
१५१८ सूरतसिंह — सैनिक —अमृतसर ताम्र के युद्ध मे मारे गए
१५१९ ससारसिंह —लस नायक—गा हरसारीदारी डा-अवाली, कागडा
१५२० शामसिंह — लैफ्टीनेन्ट—युद्ध में मारे गए
१५२१ सुल्तानअली — एस ओ —युद्ध म मारे गए
१५२२- शिवराम गुरजारा — सनिक —युद्ध म मारे गए
१५२३ सरदारसिंह — × —फीरोजपुर, युद्ध म मारे गए
१५२४- सादाऊ सिंह — लफ्टीनट—जुलाई १९४४ में युद्ध म मारे गए
१५२५- शिवसिंह —लस नायक—गा राजपुर रहोटे, डा चमर, होशियारपुर
१५२६- सतासिंह — सनिक —गा-करहियान डा टाडा होशियारपुर
१५२७ सौदागरसिंह — सनिक —गा डा मिलोवाली जि शेखूपुरा
१५२८ सतासिंह — सनिक —गा माध, डा धारकपूर शेखूपुरा
१५२९ साधूसिंह — सैनिक —गा मजराकलां, डा जोघला
१५३० सुरामचद — सैनिक —गा डा-बिनवाल, होशियारपुर
१५३१ सूरसिंह — सनिक —युद्ध म मारे गए
१५३२ सुलतान शाह — सनिक —गा आरा डा शाह सुलतान, मुजफ्फरगढ
१५३३ सरदारासिंह — सनिक —गा काजी मजरा डा मारिक मजरा अबाला
१५३४ शकरसिंह — सनिक —गा कुथार, डा पल्ली, कागडा
१५३५ सु दरसिंह — सनिक —गा गारियो, डा-सेकाघाट, कांगडा
१५३६ सुल्तान — × —गा होसा डा बरहा, जींद राज्य
१५३७ साहिब जाहरी — × —सिंगा ग म मृत्यु हुई

१५३८ सुल्तान मुहम्मद — सनिक —गा डा शालिजर, जि हजारा
१५३९- सुरेन सिंह —लैंस नायक—गाँ डा ठाठिया जि गुरदासपुर
१५४० सोहनसिंह — सनिक —गा-डा मनाक्ला, जि लाहोर
१५४१- समारीराम — सैनिक —गाँ विहारी फरगट डा ग्राम चौरासी होशियारपुर
१५४२ दयोतार्जसिंह —लैंस न यक—गा आलिया को पहार डा-न दरामपुर गुरगाव
१५४३- श्रीराम — सनिक —गा डा भरतपुर
१५४४ शिवदयालसिंह — सनिक —गाँ रीद, डा हिण्डोन जयपुर
१५४५ सूरजमल — नायक —गाँ-चमरो, डा हिण्डोन जयपुर
१५४६ सुल्त नसिंह — सनिक —गा मोक, जि रोहतक
१५४७- सोहनसिंह — हवलदार—सुरजनवास, डा मोहिद्रगढ, पटियाला
१५४८ सुनहरीसिंह — सनिक —गुरगाव, युद्ध म मारे गए
१५४९ जे के सूल्व — सनिक — युद्ध म लडते मारे गए
१५५०- के यच स्वामी — सनिक —युद्ध म मारे गए
१५५१- शुभराम — × —गुरगाव, युद्ध म मारे गए
१५५२- सुरजाराम — सनिक —युद्ध में वीर गति मिली
१५५३ सूबेसिंह — सैनिक —गा रसोई डा खेरी माहरी, रोहतक
१५५४ शिवराम भोंसले —लैंस-नायक—युद्ध म वीर गति हुई
१५५५ साधू गायकवाड —लैंस नायक—युद्ध म वीर गति मिली
१५५६ सावाराम चावान — × —युद्ध म वीर गति प्राप्त हुई
१५५७ शिवराम सपकाल — × —युद्ध म वीर गति मिली
१५५८- सीदू सेवाले — × —युद्ध मे वीर गति मिली
१५५९ सेवासिंह — सनिक — गा डा गोधि वयड शेखूपुर
१५६० सोहन खा — सनिक —युद्ध मे लडते हुए मारे गए
१५६१- शिंगारासिंह — सनिक —युद्ध करते हुए मृत्यु हुई
१५६२ सीताराम जगपत — सनिक —लापता-विश्वास है कि मारे गए
१५६३- श्रीचन्द — सैनिक —युद्ध म म रे गए
१५६४- श्रीचन्द — सनिक —गा डा मज्जर रोहतक
१५६५ श्योराम — सनिक —गाँ मिरोणा नि मेरठ
१५६६ सिमरू — सनिक —गुरगाव युद्ध म मारे गए
१५६७ शिवमूर्ति — सनिक —गा प्रनवाली, डा बिलारनगढ परतापगढ
१५६८ शादान्दन — सैनिक —युद्ध मे वीर गति मिली
१५६९ एम सुपजा — सनिक —युद्ध मे वीर गति मिली
१५७० गेत पांडे — सनिक —युद्ध करते धराशायी हुए
१५७१- सूरजभान — सनिक —युद्ध म मारे गए
१५७२- समसोदान — सनिक —युद्ध में वीर गति प्राप्त हुई
१५७३ सोहनसिंह — सैनिक —कोट करोर डा दुरलीवू, फीरोजपुर
१५७४ सरदारसिंह — सनिक —युद्ध में मारे गए
१५७५ सायासिंह — लफ्टीनेन्ट—गा कर, डा बहादुरगढ, रोहतक
१५७६ सतराम — × —गा चानोर डा देसरा

१५७७ शेलोसिंह — × —गा-बटाला, डा भेनोवार जि मीरपुर
१५७८ तेजसिंह — सैनिक —गा नोरग, डा हमदागढ़ बुल दशहर
१५७९- ठाकुरसिंह — सनिक —गा डा छागालदादी, अमृतसर
१५८०- तिरखाराम —लस-नायक—मोलियोक म, मृत्यु हुई
१५८१ तुलजाराम — सैनिक —गा छोछो, डा दिघान, रोहतक
१५८२ थम थैयाल — सैनिक —गा नालोव डा कल्लापन तजोर
१५८३ ताज मुहम्मद —सेकंड लेफ्टिनेंट—गा गाजरगट नुरासेस जि मरदान
१५८४ तेजनारायण —दुभाषिया —गां भूलेपुर डा बरहज, गोरखपुर
१५८५ तिलोकसिंह — सनिक —बीमारी से मृत्यु हुई
१५८६ ताराशिंह — सनिक —ग्रोम में युद्ध म मारे गए
१५८७- तेजसिंह — लफ्टोनेन्ट—पापून म युद्ध म वीर गति मिली
१५८८- त्रिलोकनाथसिंह— नायक —अराकान पहाड़ियों मे युद्ध करते मरे
१५८९- टेकचन्द — सनिक —बरमा मे युद्ध करते मारे गए
१५९०- तकतसिंह — नायक —बरमा के युद्ध मे मारे गए
१५९१ ताराचन्द — सैनिक —क्लेवा के निकट मृत्यु हुई
१५९२- तुलसराम — सैनिक —मोरे के समीप युद्ध म मारे गए
१५९३ तेहलसिंह — सैनिक —यजेन के युद्ध म मारे गए
१५९४ ठाकुरसिंह — सनिक —बरमा मे बीमारी से मृत्यु हुई
१५९५ तेजासिंह — सैनिक —बरमा में एप्रिल १९४४ मे मरे
१५९६ तेजपालसिंह — × —पालेल मे युद्ध करते मारे गए
१५९७- तुफादा — × —जरमनी म युद्ध म मारे गए
१५९८ त्रिवेणीकिशोरसिंह—एस ओ —गा डा खोरोर, जि आरा
१५९९ तेगसिंह —जी एफ दी आर—फ्रांस मे मारे गए
१६०० तारासिंह — सनिक —गा झूलाघाट अल्मोड़ा
१६०१- तेजासिंह — सनिक —गा तिब्बान डा कपूथला जल धर
१६०२ ठालासिंह — हवलदार —गा माधरी बुलद्वारा डा मण्डी
१६०३ ठाकुरसिंह — सनिक —गा डा गादोविंड जि अमृतसर
१६०४- तारासिंह — × —सियालकोट युद्ध में मारे गए
१६०५ तेजासिंह — सनिक —गा डा कोशेरा पुनवा अमृतसर
१६०६ ठाकुरसिंह — × —गा छग्गलवाडी अमृतसर
१६०७ तिलकनाथ — नायक —आजमगढ, युद्ध म मारे गए
१६०८ तुलसाराम — कैप्टेन —जयपुर युद्ध में मारे गए
१६०९ टेकराम — नायक —गा नौरण डा डांकेर बुलन्दशहर
१६१० धनाज पोवार— सनिक —युद्ध मे मारे गए
१६११ तेजासिंह — सनिक —युद्ध में मारे गए
१६१२ ठाकुरसिंह — सनिक —गा डा घाबासिंह शेखूपुर
१६१३ तेजपाल —लस नायक—गा तिलसा, डा दादरी, बुलन्दशहर
१६१४ तेजाराम — सनिक —गा छित्तर, डा दादरी बुलन्दशहर
१६१५ [illegible]

१६१६ तुलसीराम — × —युद्ध मे मारे गए
१६१७ ताराचन्द — सैनिक —मृत्यु हुई
१६१८ उजागाराम — नायक —गा डा बहरौना रोहतक
१६१९ उमरावसिंह — सैनिक —यजीन म मरे
१६२० उजागरसिंह — हवलदार —गा डा नानगल, होशियारपुर
१६२१ उजागरसिंह — सैनिक —मृत्यु हुई
१६२२ उजागरसिंह —जो सी एफ टी आर —गोली लगने से मृत्यु हुई
१६२३ उम्मेदसिंह —जो एफ टी आर —फ्रास में म रे गए
१६२४ उदयसिंह — सैनिक —अल्मोडा, जियावादी के युद्धो म मारे गए
१६२५- उजागरसिंह — नायक —गाँ तुर्री चन्दसिंह, डा वेगावाल सियालकोट
१६२६ उदयराम — सैनिक —नया गाँव डा दोजारिया, नाहन राज्य
१६२७- उजागरसिंह— सैनिक —गा हूबूवाल, डा वेनीवाल, होशियारपुर
१६२८ उजागरसिंह— सैनिक —गा थापी डा नुगरवाला लुधियाना
१६२९ उदमीराम — सैनिक —गा सेखूपुरा, डा हासी हिसार
१६३० उदमीराम — सैनिक —गा डा सिकंदराबाद, रोहतक
१६३१ उमर मुहम्मद— नायक —गा झमका, डा सेकता
१६३२ उमरावसिंह— सैनिक —गा डागर, गुरगाव
१६३३- उदयचन्द — × —कागडा, युद्ध मे मारे गए
१६३४ उजागरसिंह— सैनिक —गा डालीवाल, डा-कपूरथला, जलधर
१६३५ उमरावसिंह— नायक —जयपुर, युद्ध मे मारे गए
१६३६ उदयराम — सैनिक —गा गाझोटा, डा चिराया जयपुर
१६३७ ऊदमीराम — सैनिक —गाँ कोटा, डा-तवारू गुरगांव
१६३८ सी मल वर्मा— एस ओ —गा-डा गगोला मुहल्ला, अल्मोड़ा
१६३९- बासुदेव पोहूमल
हसरा जानी — × —मुख्य बाजार सराफ चौक, हैदराबाद, सिंध
१६४०- च बलू कुट्टी — सैनिक —गा विरलाइल बीट्ट, डा ओडायम बरकाला
१६४१ वीराप्पन — सैनिक —गाँ इडायर काडू डा वहाकू सेफो माछूर तजौर
१६४२ वी वीरायन — सैनिक —गा-राथागीपुलम, काविल, कुयागाई डा सोमसोदाई
१६४३ विरोटसिंह — एस ओ —मोलमीन अस्पताल मे मृत्यु हुई
१६४४ एस वैल्लू — × —बबकाक मे मृत्यु हुई
१६४५ विट्ठ पवार —लैंस नायक—युद्ध मे मारे गए
१६४६ वासु जाधो — सैनिक —युद्ध में मारे गए
१६४७ विश्वानाथ खादरे— सैनिक —युद्ध म मारे गए
१६४८ वीरसिंह — सैनिक —युद्ध म मारे गए
१६४९ वरयामसिंह — सैनिक —गा डा नाहनसिंह चक नं० १३ अबपुर
१६५० वारिस खा — सैनिक —युद्ध म म र ग ए
१६५१- बालेव शाह — सैनिक —जरमनी क युद्ध म मारे गए
१६५२ वी मसप्पा —आजाद हिंद सर
कार के मंत्री —सिली मेडी गाडन,

१६५३- यारवानकर —लैंस नायक —लापता—विश्वास है कि मारे गए
१६५४ जहूर ग्रहमद — सैनिक —ग्रा जहूर मुखलियान, डा सांगला पहाड़ी शेखूपुरा फासी दी गई २३ ८ ४३ को

नोट — बलिदानों की प्रशस्ति में आजाद हिन्द सेना के जिन बलिदानी वीरों के सामने यह नहीं लिखा गया है कि उनकी मृत्यु किस प्रकार हुई वे सब के सब भारत माता की स्वतन्त्रता के लिए रण भूमि में युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए। जो बीमारी से मरे वास्तव में वे जख्मी होकर अथवा अत्यन्त कष्टमय जीवन व्यतीत करने तथा अत्यन्त श्रान्त और क्लान्त अवस्था में मरे। स्वतन्त्रता के उपरान्त स्वतन्त्र भारत ने इन बलिदानी वीरों के आश्रितों की नितान्त उपेक्षा की।

अन्य मान्य—आज यह कह सकना अत्यन्त कठिन है कि आजाद हिन्द सेना के कितने व्यक्ति रण भूमि के बाहर मारे गए। ८ फरवरी, १९४६ को भारत सरकार के सैनिक सचिव ने कहा था कि—"आजाद हिन्द सेना के सत्ताइस सदस्य हिरासत में मर गए। अन्य दो कप्टेन मगहूर सिंह और लफ्टीनेंट अजमेर सिंह स्वयं अपने द्वारा गोली मारने से होने वाले घावों से मरे और नौ को फासी दे दी गई।"

इस बयान की पुष्टि कर सकना सम्भव नहीं है। जिन वीरों को फासी दी गई उनमे से कुछ के नाम ऊपर दी हुई बलिदानी की प्रशस्ति में मिलेंगे। उनकी क्रम संख्या इस प्रकार है—(i) ८२, (ii) २८४, (iii) ९९२, (iv) ३०६, (v) ३०७, (vi) ३८०, (vii) ४८८, (viii) ५१६ (ix) १०३४, (x) ११०२, (xi) ११४१, (xii) १३८२ और (xiii) १६५४

इनके अतिरिक्त यह निश्चय पूर्वक ज्ञात है कि संख्या १८६६२ सैनिक छतरसिंह (५/८ पंजाब रजीमेंट) और (२८८९६ आई ओ) जमादार केसरी चन्द शर्मा (आर आई ए एस सी) को देहली में २९ जुलाई, १९४४ तथा ३ मई, १९४५ को फांसी दे दी गई।

कतिपय नागरिकों को भी आजाद हिन्द सेना की कार्यवाहियों में भाग लेने के कारण फांसी दी गई थी उनमे से कुछ के नाम ऊपर दी हुई सूची में हैं। उनकी क्रम संख्या इस प्रकार है—७१८, ७५४, ७८७ ८७६, १२२७ १२५५ तीन अन्य व्यक्ति जिनमें से दो के नामों का उल्लेख सूची के बाहर किया जा चुका है, के अतिरिक्त एक तीसरे व्यक्ति बोरीफल वी परीरा को अलीपुर जेल में फांसी दे दी गई।

नागरिक जन संख्या के कुछ अन्य नाम भी हैं जिनके सम्बन्ध कहा जाता है कि उन्हें फांसी दे दी गई परन्तु उनकी पुष्टि के अभाव में उनके नाम छोड़ दिए गए हैं।

आत्म हत्या करने वालों की क्रम संख्या इस प्रकार है—२४, ५२६, ५४६, ६०६, ८८४ ६६४, १३४६, १४७१ और १४७२

सफलता

आजाद हिन्द सेना के तीन शीर्षस्थ वीरों का अभियोग पांच नवम्बर, १९४५ को प्रारम्भ हुआ अभियोग के फल स्वरूप प्रथम बार संसार को यह विदित हुआ कि नेताजी और आजाद हिन्द सेना ने भारत की स्वतन्त्रता के लिए कैसा अद्भुत कार्य किया। आजाद हिन्द सेना के उन तीन वीरों के अभियोग ने भारत वासियों में मनोवैज्ञानिक चेतना जागृति करदी। समस्त भारत में मनोवैज्ञानिक क्रान्ति उत्पन्न हो गई।

सभी वर्गों और विचारों के भारतीयों ने आजाद हिन्द सेना के उन तीनों वीरों को दण्डित किए जाने के विरुद्ध आवाज उठाई और उनको मुक्त करने लिए एक प्रबल जनमत उत्पन्न हो गया। आजाद हिन्द सेना के उन तीन कीपरस्थ वीरों को दण्डित किए जाने के विरुद्ध आन्दोलन और उनको मुक्त करने की मांग इतनी प्रबल और सशक्त थी कि प्रधान सेनापति को उस प्रबल जनमत के सामने झुकना पड़ा और उसने उन्हें ३ जनवरी १९४६ को मुक्त कर दिया।

आजाद हिन्द सेना के सर्वोच्च सेनापति (नेताजी) तथा उन महान वीरों के उद्देश्यों की प्रारम्भ से ही भारत के कतिपय राजनीतिज्ञों तथा राजनीतिक दलों ने भर्त्सना की थी। १३ अप्रैल १९४२ को कलकत्ते में एक प्रश्न के उत्तर में पंडित श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा—'श्री सुभाषचन्द्र बोस से भूतकाल में मेरी मित्रता होने के बावजूद मैं यह घोषणा करने से नहीं हिचकूंगा कि उन्होंने जो मार्ग अपनाया वह नितान्त गलत है जिसे मैं केवल स्वीकार या अपना ही नहीं सकता वरन मैं उसका विरोध करता हूं। भारत के साम्यवादी दल ने नेताजी को पंचमांगी कह कर बदनाम किया। २ जनवरी, १९४६ को मिदनापुर जिले के कौनटाई नामक स्थान पर महात्मा गांधी ने कहा—'भारतीय तलवार की शक्ति से स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सकते' भारत सरकार के राजनीतिक विभाग ने जो सरदार वल्लभ भाई के आधीन था एक आदेश निकाला कि भारत की सभी सैनिक छावनियों की बरकों तथा मैसों जहां भी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के चित्र हों हटा दिए जावें।

अंतिम-प्रहार

आजाद हिन्द सेना के वीरों के चिरस्मरणीय अभियोग के परिणाम स्वरूप भारत में ऐसी घटनाएं घटीं जिनके परिणाम अत्यन्त गम्भीर और महत्व पूर्ण तथा दूरगामी थे। तब तक भारत को भारतीय सैनिकों की सहायता से अपने अधिकार में परतन्त्र बनाए रखने की जो कुछ भी सम्भावनाएं थीं वे आजाद हिन्द सेना के अभियोग के फल स्वरूप नौ सेना वायु सेना में विद्रोह उठ खड़ा होने के कारण ध्वस्त हो गई।

बात यह थी कि आजाद हिन्द सेना के अभियोग के फल स्वरूप मनोवैज्ञानिक क्रान्ति पूर्ण हो चुकी थी केवल एक चिनगारी की आवश्यकता थी जो उन सुलगते हुए कोयलों को दहका देती। बम्बई में सकेत देने वाला नौ सेना का जहाज एच एम आई एस तलवार के एक हजार नौ सैनिकों ने १८ फरवरी १९४६ को काम छोड़ कर धरना तथा भूख हड़ताल आरम्भ कर दी। वे भूख हड़ताल के द्वारा सरकार का ध्यान अपनी शिकायतों और दिलाना चाहते थे। उनके अभाव अभियोगों की सूची बहुत लम्बी थी परन्तु उनमें एक प्रमुख मांग यह थी कि आजाद हिन्द सैनिकों के विरुद्ध चलने वाले अभियोग को सरकार वापस ले।

नौ सेना के जहाज तलवार के एक हजार नौ सैनिकों का प्रथम विद्रोही कार्य था १८ फरवरी, १९४६ को प्रातः काल भोजन करना अस्वीकार कर देना। १९ फरवरी को प्रातः काल किले के क्षेत्र में गम्भीर गड़बड़ हुई जिसकी सूचना मिलने पर नौ सैनिक विद्रोहियों में उत्तेजना फैल गई। उन्होंने कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग के झण्डों को एक साथ अपने आधीन जहाज पर फहराया। कतिपय नौ सैनिकों ने अपने अपने स्थानों को छोड़ दिया और बम्बई के विभिन्न मार्गों में नारे लगाते हुए घूमने लगे। हड़तालों नौ सैनिकों के झुंड झुंड जो कि तटीय छोटे जहाजों तथा नौ सेना सम्बन्धी तटीय विभागों को छोड़

कर निकल आए ये पैदल अथवा लारियों में शहर में नारे लगाते हुए फिरने लगे। दो घंटे तक फ्लोरा गार्डन के समीप उन्होंने समस्त यातायात को रोक दिया और गम्भीर गड़बड़ मचा दी। पुलिस तथा वर्दीधारी कर्मचारियों और साधारण अधिकारी व्यक्तियों का उन्होंने पीछा किया और उनके साथ दुर्व्यवहार किया। पैट्रोल की टंकियों को सड़क पर खाली कर दिया और उसमें आग लगा दी। डाक के थैलों को लूट लिया और ब्रिटिश बेस पोस्ट आफिस को तहस नहस कर दिया वहां की डाक लूट ली।

इस नौ सेना के प्रदर्शन ने एच आई एम एस फीरोज एच आई एम एस मच्छलीमार और सिगनल-स्टेशन डाक यार्ड को भी प्रभावित कर दिया। नौ सेना के कोलाबा स्थित वायरलैस स्टेशन भी इस प्रदर्शन से गम्भीर रूप से प्रभावित हो गया।

विद्रोही नौ सैनिकों की संख्या शीघ्र ही और अधिक बढ़ गई जब कि एच एम आई एस अकबर के तीन हजार सैनिक भी उनके साथ सम्मिलित हो गए। तलवार तथा अकबर युद्ध पोतों के नौ सैनिकों को मध्याह्नोपरान्त तीन बजे तक अपने जहाजों पर लौट आने की आज्ञा दी गई। भारतीय नौ सेना के फ्लैग आफिसर कमांडिंग मध्याह्नोपरान्त दो बजे विद्रोहियों को एक चेतावनी आकाशवाणी से प्रसारित की कि किसी भी प्रकार की अनुशासन हीनता को सहन नहीं किया जावेगा और हड़ताल को तत्काल ही समाप्त कर देना चाहिए। उन्हें सावधान किया गया—

कि सरकार के पास बहुत बड़ी सेना है उसका उनके विरुद्ध पूरा उपयोग किया जावेगा फिर चाहे उसका परिणाम यही क्यों न हो कि हमारे सभी नौ सेना के जहाज तथा नौ सेना पूर्ण रूप से नष्ट हो जावे जिस नौ सेना पर हमें गर्व है।

चेतावनी तथा जोखिम के सभी शब्दों की मजाक उड़ाई गई और उनकी पूरी तरह अवहेलना की गई। विद्रोही नौ सैनिकों ने अपनी टोपियों को उतार कर फेंक दिया और उन बन्द खाने की कोठरियों (सेल्स) में चले गए जहां अनुशासन हीनता तथा आज्ञा का उल्लंघन करने वाले अपराधियों को बन्दी बनाकर रक्खा जाता था। एक कोठरी में आग लगा दी गई पर तु उसको शीघ्र ही बुझा दिया गया।

भारतीय सेना ने बम्बई नगर की पुलिस की सहायता से रायल इण्डियन नेवी के चालीस सैनिकों को पकड़ लिया। इस धर पकड़ में झगड़ा हो गया जिसमें कुछ जीवन हानि हुई। सायंकाल को विद्रोही नौ सैनिक अपनी बरकों को आगे की योजना तयार करने के लिए वापस लौट आए।

मध्याह्नोपरान्त अपेक्षाकृत थोड़े समय तक शांति रहने के उपरान्त कैसल बरक के पार आई एन डिपो जो एच एम आई एस के डाक यार्ड के समीप स्थित था उसके नौ सैनिकों ने रात्रि के ६ बजे तोपखाने के पहरेदारों पर धावा कर दिया। पुलिस तथा सेना जो मार्गों को रखवाली कर रही थी उसने गोलियां चलाईं और विद्रोही नौ सैनिकों को पीछे वापस हटने पर विवश कर दिया। विद्रोही नौ सैनिकों के बाहर निकल जाने के प्रयत्नों में गोली चलने के कारण कुछ को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा।

फरवरी २१ को प्रातः काल विद्रोही सैनिकों ने उन फाटकों को तोड़ना आरम्भ कर दिया जो कि बरक से अवरुद्ध थे सैनिक पहरेदारों जो फाटकों पर तनात थे गोली चलाना प्रारम्भ कर दिया। लगभग ३० मिनट तक गोली चलती रही और आक्रमण का तेजी और दृढ़ता से उत्तर दिया गया। ग्यारह बजे कर तीस मिनट पर रायल इण्डियन नेवी के फ्लैग आफिसर कमांडिंग की अनुमति से एक संकेत (सिगनल)

दिया गया। सभी अधिकारियों को आदेश दिया गया कि वे अपने अपने जहाजों को एक बजे मध्याह्नोपरान्त छोड़ दें। एक विज्ञप्ति इस आशय की निकाली गई कि कैसिल बरकों की केन्टीन तथा एच एम आई एस 'तलवार' की केन्टीनों को आज २१ २ ४६ को [illegible] बजे प्रातः काल तोड़ दिया गया।

सैनिक पहरेदारों ने मशीनों के बल पर कुछ प्रदर्शनकारियों को बरकों के अन्दर ढकेलने में आंशिक सफलता प्राप्त करली थी। नौसैनिकों ने पीछे हट कर केन्द्र पर पूरा अधिकार कर लिया। पीछे लौटने पर उन्होंने शस्त्रागार के फाटकों को बल पूर्वक खोल लिया और उन्होंने जो भी अस्त्र शस्त्र मिले जैसे राइफिलें, हल्की मशीन गनें, रिवाल्वर, हथगोला तथा कारतूस और गोलियां जो भी वहां मिली उनको लेकर वे अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित हो गए।

भयानक मार करने वाले उन अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर उन्होंने दीवार के पीछे प्राचीर पर सभी युद्ध की दृष्टि से सामरिक महत्व के स्थानों पर अधिकार कर लिया तथा ऊंचे पहरे के स्तूप (वाच टावर) पर जो कि टाऊन हाल के समीप तथा बरकों की पूर्वी सीमा स्थित था पहरा लगा दिया। सभी प्रवेश द्वार बन्द कर दिए गए उन पर पहरा लगा दिया और भीतर आने के सभी मार्गों को अवरुद्ध कर दिया गया।

दोनों ओर से कभी कभी जो गोली चलती थी उसके कारण विस्तृत क्षेत्र में घबड़ाहट और भगदड़ फैल गई। बैलार्ड पियर' से अजायब घर तक एक ओर, और दूसरी ओर क्राफोर्ड मार्केट तक आतंक और घबराहट फैल गई। इसी के मध्य में बैरकों से कुछ लोग एच एम आई एस 'जमना' पर गए और उनसे कहा कि जैसे ही विद्रोही नौसैनिक बैरकों को खाली कर दें बरकों पर गोलियां चलाई जावें।

दोपहर बारह बजे से लगा कर साढ़े बारह बजे तक घोर गर्जन के तथा गोली चलने की तेज आवाजें आती रहीं उससे यह सिद्ध होता था कि भारतीय नौसैनिकों और ब्रिटिश सैनिकों के बीच भयंकर गोली विनिमय हुआ वास्तव में वह एक युद्ध था जो कैसिल बैरकों के अन्दर हुआ था। जिस प्रकार की दोनों ओर से भयंकर गोली बारी उससे यह प्रत्यक्ष था कि दोनों ओर बड़ी संख्या में सैनिक हताहत हुए। लगातार राइफिलों तथा मशीन गनों के चलने से भयंकर आवाज होती थी वह तीन चार मील की दूरी तक सुनाई पड़ती थी। टाइम्स आफ इण्डिया ने २१ फरवरी, को स्थिति का नीचे लिखे शब्दों में ब्यौरा प्रकाशित किया था—

'बम्बई का नगर अपनी ही रायल इण्डियन नेवी की तोपों और मशीन गनों के सघन और खतरे की छाया में रह रहा है जब कि हजारों नौसैनिक खुले रूप में विद्रोही हो गए और उन्होंने सभी तटीय स्थापनाओं तथा बन्दरगाह में खड़े जहाजों पर अपना असंदिग्ध आधिपत्य स्थापित कर लिया।"

आगे —भारतीय नौ सेना के स्लूपों (छोटे जहाज) तथा माइन स्वीपरों पर जो कि विद्रोही नौसैनिकों के अधिकार में हैं चार इंच वाली तोपें चढ़ी हैं इनके अतिरिक्त अन्य छोटे शस्त्र भी प्रचुर मात्रा में हैं। उन जहाजों ने प्रातः काल से सायंकाल तक तट के किनारे स्थित ताज महल होटल और याट क्लब बिल्डिंग पर अपने अस्त्र शस्त्र की परीक्षा की है। इस गड़बड़ी और आतंक के कारण बलार्ड ऐस्टेट बम्बई नगर से पूर्ण रूप से पृथक हो गया उसका नगर से सम्बन्ध टूट गया। जिस समय कि इस बात के प्रयत्न किए जा रहे थे कि विद्रोहियों को कैसल बैरकों में ही रोक कर सीमित कर

शाही वायु सेना में (रायल एअर फोर्स) में विद्रोह

भारत में सैनिक अधिकारी एक गम्भीर संकट का सामना कर रहे थे उन संकटों की शृंखला को पूरा करने के लिए २१ फरवरी १९४६ को प्रात काल शाही वायु सेना के सैनिकों ने काम करना छोड़ दिया और हड़ताल कर दी। सभी सैनिकों ने एक जुलूस निकाला और 'योरल' तक गए वहां एक सभा की। सुदूर हावड़ा (कलकत्ता) स्थित 'बैंगाढी' में स्थित वायु सेना के १५० भारतीय सैनिकों ने बम्बई की हड़ताल की सहानुभूति में काय करना अस्वीकार कर दिया। देहली में शाही भारतीय वायु से की एक टुकड़ी ने २० फरवरी को काम करने से इनकार कर दिया। बहुत समझ बुझाने पर दूसरे दिन प्रात काल वे काम पर आए।

* आजाद हिन्द सेना का भारतीय सेना पर प्रभाव

आज द हिन्द सेना का भारतीय सेना पर गहरा प्रभाव पड़ा था। भारतीय से की स्वामी भक्ति और राजनिष्ठा को समाप्त कर देना भी नेताजी सुभाष च द्र बोस युद्ध नीति थी। रण क्षेत्र में परास्त हो जाने पर भी नेताजी की यह मान्यता थी आजाद हिन्द सेना भारतीय सेना की राज निष्ठा और भक्ति को प्रभावित करेगी उनका विश्वास था कि युद्ध समाप्त होने पर जब आजाद हिन्द सेना के सैनिक भा वापस जावगे तब उनके सम्पर्क में आकर भारतीय सेना की निष्ठा और भक्ति प्रभावि होगी। १९४५ में नेताजी ने अपने सेनाध्यक्षों से कहा था कि आजाद हिन्द सेना। भारतीय सेना को आत्म समपण करना अथवा उसका मित्र राष्ट्रों की सेना द्वारा पक जाना स्वतन्त्रता के युद्ध में व्यूहरचना का केवल परिवतन मात्र होगा। आगे घटनाओं ने नेताजी की भविष्य वाणी को सत्य सिद्ध कर दिया। १९४५ ४६ में आज हि द सेना के सनिक अदालत के समक्ष अभियोगों से देश में ऐसी भयकर क्रांतिका हलचल उत्पन्न हुई भारतीय सेना को उससे बचा कर रख सकना असम्भव था।

भारतीय सेना के सैनिकों ने दक्षिण पूर्व के युद्धों में आजाद हि द सेना को ए स्वतन्त्र और पृथक सेना के रूप में लड़ते देखा था। और जब आजाद हिंद सेना ने आत्म समपण किया तो भी एक स्वतन्त्र और पृथक सेना के रूप में ही उसने आत्म समप किया था। युद्ध काल में उन्होंने आजाद हि द सेना के शौय और अनुशासन के बहु से उदाहरण स्वय देखे थे। जब जापानी सेनाएं रंगून से हट गई तो ६ हजार आजा हि द सैनिकों ने करनल भरद्वज के नेतृत्व में रंगून में पूर्ण शान्ति और व्यवस्था काय रखी थी और नगर की लूट और विनाश से रक्षा की थी। जब ब्रिगेडियर के एम त्रिमैय्या के नेतृत्व में भारतीय ब्रिगेड सब प्रथम रंगून में घुसा तो आजाद हि द सेन द्वारा जो वहां व्यवस्था और अनुशासन स्थापित था उसे देख कर चकित रह गया इसके अतिरिक्त भारतीय सेना और आजाद हि द सेना के सनिक बन्धु था एक ही क्षेत्र थे और कोई कोई तो एक ही परिवार के थे। अत एव जब आजाद हि द सेना आत्म समपण किया तो उनसे निकट सम्ब व स्थापित करने में रोकना सभव नहीं था भारतीय सेना के सैनिकों ने जब दक्षिण पूव क्षेत्र पर पुन अधिकार कर लिया तो वहां के भारतीयों के सम्पक में आए जि हें नेताजी ने देश भक्ति और राष्ट्रीयता के म से दीक्षित कर दिया था। भारतीय समुदाय में नेताजी के चमत्कारी व्यक्तित्व के

* यह मूल पुस्तक "रोल आफ आनर" में नहीं है। अनुवादक ने इसको स्वयं जोड़ा है। इसका दायित्व अनुवादक पर है।

कारण प्रमुनरूप गहन राष्ट्रीय भावना जागृत हो गई थी। जापान के आत्म समर्पण और मित्र राष्ट्रों की सेनाओं द्वारा मलाया, थाईलैंड और सिंगापुर पर प्रभावकारी पुनः अधिकार स्थापित होने के बीच थोड़े समय तक घोर अस्थिरता और अस्त व्यस्तता रही। उस काल में इंडियन इंडिपेंडेंस लीग के नेता गिरफ्तार नहीं किए गए। इनके निर्देशन में भूमिगत राष्ट्रवादी प्रचार ब्रिटिश सेना के भारतीय सैनिकों में तेजी से किया गया। भारतीय सेनाएं वहां एक वर्ष तक पड़ी रहीं। उस काल में वहां के भारतीयों से इनका मेल जोल हो गया। और जब उन्होंने वहां के भारतीयों से नेताजी और आजाद हिन्द सेना की गौरव गाथा सुनी तो उनके मन में नेताजी और आजाद हिन्द सेना के लिए श्रद्धा उत्पन्न हुई और गहरा राष्ट्रीय भाव व उदय हुआ जो भारतीय सेना में पहले कभी नहीं हुआ था। वहां रह कर उन्होंने अनुभव किया कि सभी लोग उन्हें घृणा की दृष्टि से देखते थे। उन्हें दक्षिण पूर्व एशिया के लोग अंग्रेजों के भाड़े के सैनिक मानते थे जो एशिया को परतन्त्र और पदाक्रान्त करने के लिए रक्खे गए थे। इसके विपरीत उन्होंने देखा कि भारत और विदेशों में सभी जगह आजाद हिन्द सैनिकों को लोग आदर और श्रद्धा से याद करते थे। इस सबका भारतीय सेना पर गहरा प्रभाव पड़ा और उनकी राज्य निष्ठा और भक्ति ढीली हो गई। उनमें राष्ट्रीय विचार धारा पनप उठी।

जब आजाद हिन्द सेना का पहला मुकदमा लाल किले में होने वाला था तो भारतीय सेना की आजाद हिन्द सेना के पक्ष में भावना प्रकट होने लगी। कलकत्ते में स्थित भारतीय वायु सेना (रायल एअर फोर्स) के सैनिकों ने तो स्पष्ट रूप से आजाद हिन्द सेना का समर्थन किया और कोर्ट मार्शल का खुला विरोध किया। उस अभियोग में वायु सेना के सैनिकों ने आजाद हिन्द सैनिकों के बचाव के लिए चन्दा भेजते हुए उन्हें 'भारत के और देश भक्त पुत्र' कह कर सम्बोधित किया। रायल एअर फोर्स के सैनिकों ने बंगाल कांग्रेस कमेटी को जो इस सम्बन्ध में सन्देश भेजा था उसमें न केवल उन्होंने आजाद हिन्द सेना के महान आदर्श की प्रशंसा ही की वरन उन्होंने जो तरीका अपनाया उसका भी समर्थन किया। उस सन्देश में रायल एअर फोर्स ने भारत के "अत्यन्त प्रतिभावान हीरो" (आजाद हिन्द सैनिकों) के कोर्ट मार्शल के विरुद्ध अपना रोष प्रकट किया था। क्रमशः आजाद हिन्द सेना के प्रति सहानुभूति की भावना समस्त भारतीय सेना में प्रवेश कर गई और वे उसके विरुद्ध चलाए जाने वाले अभियोगों का विरोध करने लगे। भारतीय सेना की इस भावना से तथा भारत में आजाद हिन्द सेना के पक्ष में जो प्रबल जनमत उभर पड़ा उसके कारण ही ब्रिटिश सरकार को आजाद हिन्द सेना के प्रति अपनी नीति को बदलना पड़ा। प्रधान सेनापति आचिनलेक ने वरिष्ठ सैनिक अधिकारियों को लिखा था भारतीय सेना के सभी भारतीय सैनिक आजाद हिन्द सेना के सैनिकों को छोड़ देने के पक्ष में थे और उनको छोड़ दिए जाने से वे प्रसन्न हैं। यदि सैनिक अदालत ने जो उनको दण्ड दिया था उसको लागू करने का प्रयत्न किया जाता तो देश भर में भयंकर अराजकता फैल जाती और बहुत सम्भव था कि सेना में विद्रोह फैल जाता और उसका विघटन हो जाता।

वास्तव में उस समय स्थिति ऐसी ही विस्फोटक हो गई थी। रायल एअर फोर्स की हड़ताल के उपरान्त १९४६ में इंडियन एअर फोर्स ने हड़ताल कर दी। उन्होंने अन्य शिकायतों के साथ आजाद हिन्द सेना से सहानुभूति प्रदर्शित की और उनको छोड़ देने

की माग थी। फरवरी १९४६ मे रायल इण्डियन नेवी (नौ सेना) विद्रोही हो उठी। बम्बई कराँची मद्रास, कलकत्ता कोचीन विजगापट्टम (अब विशाखा पट्टनम) मडापाम, और ग्रदमन सभी जगह के नौ सेना के सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। नौ सेना के केवल दस जहाज इस विद्रोह की लपट से बच सके।

सेना के इस विद्रोह ने ब्रिटिश सरकार और भारत सरकार को झकझोर दिया उसका आत्म विश्वास समाप्त हो गया। वह भयंकर रूप से भयभीत हो उठी। उसने समझ लिया कि देश में इतना क्षोभ और रोष है कि यदि अंग्रेजों ने शीघ्र ही भारत नहीं छोड़ा तो उनके विरुद्ध देश व्यापी विद्रोह फूट पड़ेगा और उन्हें बलपूर्वक भारत से निकाल दिया जायेगा वे जान गए कि ब्रिटिश शासन की आधार शिला भारतीय सेना की निष्ठा समाप्त हो गई नेताजी के प्रताप से उनमें राष्ट्रीय चैतन्य और ब्रिटिश विरोधी भावना जागृत हो गई है और विद्रोह को दबाने के लिए उस पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। वे यह भी समझ गए कि यदि भारत को शीघ्र नहीं छोड़ दिया गया तो नेताजी तथा आजाद हिन्द सेना द्वारा प्रवाहित वेगवती राष्ट्रीयता की धारा अंग्रेजों द्वारा मुस्लिम साम्प्रदायिक जो दीवार खड़ी हो गई है वह भी ढह जायेगी और देश के विभाजन की दुरभि संधि भी सफल न हो सकेगी अतएव ब्रिटिश सरकार घबड़ा गई और उसने भारत को शीघ्र तिशीघ्र छोड़ देने का निश्चय कर लिया।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस तथा उनकी आजाद हिन्द सेना का ही यह चमत्कार था कि अंग्रेज भारत छोड़ने पर विवश हो गए। (अनुवादक का लेख समाप्त)

लेखक ने इस सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है कि वास्तव में अंग्रेजों द्वारा भारत को स्वयं भारतीयों के हाथ में छोड़ कर चले जाने की रजामंदी की यह पृष्ठभूमि और अन्तिम कहानी है। यह कोई उनकी कोई महती उदारता अथवा परोपकार की भावना नहीं थी यह उनके लिए अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए नितान्त और अनिवार्य आवश्यकता थी।

आगे लेखक ने लिखा है कि किसी दिन इतिहास इस सत्य को भावी पीढ़ियों के बोध के लिए प्रकाश में लायेगा कि नेताजी और आजाद हिन्द सेना के कारण देश में जो अभूतपूर्व राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न हुई उसने अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर विवश कर दिया। यह सर्वविदित है कि २६ नवम्बर, १९४५ को भारतीय सेनाओं के प्रधान सेनापति सर सी आचिनलेक ने वायसराय को लिखा —

" मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि उनमें से (आजाद हिन्द सैनिको) अधिकांश और विशेषकर नेताओं का विश्वास था कि सुभाषचन्द्र बोस एक सच्चे देश भक्त है और उनके नेतृत्व का अनुसरण कर वे उचित कार्य कर रहे हैं। जो विपुल सामग्री हमारे सामने है उसको देखने से इसमें किंचित मात्र भी संदेह नहीं रह जाता कि सुभाषचन्द्र बोस का उन पर अत्याधिक प्रभाव हो गया था और यह कि उनका (नेताजी का) व्यक्तित्व अत्यन्त दृढ और प्रभावकारी था। प्रधान सेनापति ने केवल इतना कह कर ही अपने वक्तव्य को समाप्त नहीं कर दिया। उन्होंने २२ फरवरी, १९४६ के अपने प्रेषणापत्र (डिस्पैच) में इसका स्पष्टीकरण करते हुए लिखा —

' भारतीय सैनिकों के अपने दीर्घकालीन अनुभव से मैं यह जानता हूँ कि भारतीय सैनिकों की आन्तरिक भावनाओं का जान सकना सब अंग्रेज सैनिक

कारी जो भारतीय सैनिकों के प्रति गहरी सहानुभूति रखता हो उनके लिए भी बहुत न्त है। इतिहास मेरे इस विचार धारा की पुष्टि करता है। मैं नहीं समझता कि ने एक भी वरिष्ठ ब्रटिश सैनिक अधिकारी हैं जो कि आजाद हिन्द सेना के प्रति भारतीय सनिकों की वास्तविक आंतरिक भावना है उसे जानता हो। मैं बहुत कुछ अपनी नसर्गिक प्रवृत्ति से और जो जानकारी मुझे विभिन्न श्रोतो से प्राप्त हुई है उससे मैं यह अनुभव करता हू कि भारतीय सेना में आजाद हिंद सेना के प्रति गहरी सहानुभूति बढ रही है।

यह असम्भव है कि हम इस समस्या के सम्बन्ध में शीलाचार और नैतिकता के उन मान दण्डो को लागू करें। अथवा इस प्रकार की नीति को अपनायें जैसी कि हम उस समय अपनाते यदि आजाद हिन्द सेना के सैनिक हमारी जाति के होते।"
श्रोत— जयाश्री पत्र १३७१)

सम्पूर्ण परिस्थिति का यह सही चित्र था विद्रोह और राष्ट्रीय चेतना की भूमिगत धारा ने उस कठोर आधार शिला (सेना) को जजर कर दिया था जिस आधार पर ब्रटिश भारतीय साम्राज्य का बलशाली और महान् भवन पर ईट पर ईट रख कर खड़ा किया गया था।

माइकेल ऐडवड ने अपनी पुस्तक ब्रटिश भारत सरकार के अंतिम दिन (लास्ट डेयस आव ब्रटिश इंडिया) में पृष्ठ ९२ पर इस सम्बन्ध मे लिखा है—

"——क्रमश धीरे धीरे भारत सरकार को यह विदित हो गया कि ब्रटिश शासन की मेरुदण्ड प्रधान भारतीय सेना पर भविष्य में भरोसा नहीं किया जा सकता। हैमलेट के पिता की भांति सुभाषचन्द्र बोस की प्रतछाया लाल किले की प्राचीर पर चलती हुई दिखलाई दे रही थी और उसने उन सभी सम्मेलनों को आतंकित और भयभीत कर दिया था जिनके परिणाम स्वरूप भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई।"

महात्मा जी ने भारतीय शासन रूपी कागज के शेर की शान शौकत और शानदार प्रदर्शन तथा शक्ति प्रदर्शन की ओर से भारतीय जन मानस और मस्तिष्क को खींच लिया। भारतीय जनता ब्रटिश शासन की भक्त नहीं रही। जब दोनों अर्थात स्थल नभ और नौ सेना भारतीय जनता ने भविष्य मे उस सब का समर्थन करना अस्वीकार कर दिया जो सभी प्रकार से राष्ट्रीय हितों के लिए अहितकर था और एक नवोदित राष्ट्र के स्वाभिमान के लिए अपमान जनक था तब ब्रटिश राजनीतिज्ञो ने बुद्धिमानी की और भारत के तट को छोड दिया। ऐसा करने से उनके प्रति भारतीयो की उनके प्रति बढ़ती हुई कटुता और जन मानस के रोष को तो अपने साथ ले और पीछे एक कृतज्ञ राष्ट्र की उनकी ओर स्थाई सद्भावना छोड गए।

जो अपराधी थे

सेना और पुलिस की गोली चलाने वाली टुकड़ियों (फायरिंग स्क्वड) की बिना जांच हुए निरंतर निगरानी के मध्य से जिसे राउर न प्रकाश प्राप्त सघन वनस्पति से भरे वनों विशाल घाटों अमवर नहीं आकाश चुम्बी पर्वतों की भयानक गहरे गड्ढों हिंसक पशुओं और विषधर सांपों से भर देश की चोटी काम लिए खड़ा किया था— भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के देश भक्त वीर दृढ़ निश्चय से गिर कर आगे बढ़ गए।

निरन्तर समिटते हुए भूदृश्य मे चमकते हुए आकाश दीप के प्रकाश के दर्शन करते हुए (उन्होंने स्वतन्त्रता के वीरो ने) प्राचीन अमर ऋषियो की पुकार प्रतिध्वनि को ध्यान से कान लगा कर सुना । उस पावन और ओजभरी वाणी ने अपने स्नेहशील सम्बन्धियों और प्रेमियों की कठिनाइयों, कष्टों और चिन्ता की प न करने और देश के लिए आत्म बलिदान के यज्ञ में अपनी आहुति दे देने के लालायित और प्रेरित कर दिया —

उत्तिष्ठ जागृत प्राप्य वारान्निबोधत उठो ! जागो ! और तब तक न जब तक कि लक्ष्य की प्राप्ति न हो जावे !